मुद्रक और प्रकाशक- व० श्री० सातवलेकर, B. A.
स्वाध्याय-मण्डल, भारतमुद्रणालय, औंध (जि० सातारा)

मरुत् देवता का परिचय।

मरुतों के विषय में कोशोंमें (wind, air, breeze) वायु, हवा, पवन, (vital air or breath, life-wind) प्राण, (the god of wind) वायु का देवता, (a kind of plant) मरुवक, मरुत्तक, ग्रंथपर्णी वनस्पति, (storm-gods) आंधी, प्रचंड वायु, आंधी का देवता इतने अर्थ दिये हैं।

वैद्यक कोशों में ' मरुत् अथवा मरुतः ' का अर्थ ' घण्टापाटला, मरुवक वृक्ष, मरुत्तक वनस्पति, ग्रंथिपर्णी वनस्पति, पृक्का नामक साग (पिडिंग साग) [हिंदी भाषा में इस का नाम ' पुरी ' है] इतने अर्थ मरुत् के लिखे हैं। ' मरवा ' नामक सुगंध पौधा। मरुत् का यह अर्थ वैद्यकसंबंधी है।

मरुत् का अर्थ विश्व में ' वायु ' और शरीर में ' प्राण ' है और ये वनस्पतियां प्राणधारण में सहायक होती हैं, प्राण का बल बढाती हैं। इस तरह इनकी संगति होना संभव है।

निघण्टु में ' मरुत् ' शब्द का पाठ निम्नलिखित गणों में किया है-

१. ' मरुत् ' शब्दका पाठ ' हिरण्य ' नामोंमें (निघंटु० १।२ में) किया है, अतः ' मरुत् ' का अर्थ ' हिरण्य ' अर्थात् ' सुवर्ण ' है।

२. ' मरुत् ' पदका पाठ ' रूप ' नामों में (निघंटु० ३।७ में) किया है, इसलिये इस का अर्थ ' रूप ' अथवा ' सुन्दरता ' होता है।

३. ' मरुत् ' पद का पाठ ' ऋत्विक् ' नामों में (निघंटु. ३।१८ में) किया है, इसलिये इस का अर्थ ऋत्विज् अथवा याजक होता है।

४. ' मरुतः ' पदका पाठ ' पद नामों ' में (निघंटु. ५।५) में किया है।

निघंटुकार ' मरुत् ' के ये ही अर्थ देता है। निरुक्तकार श्री यास्काचार्य मरुत् के अर्थ निम्नलिखित प्रकार करते हैं-

> अथातो मध्यमस्थाना देवगणाः। तेषां मरुतः प्रथमगामिनो भवन्ति। मरुतो मितराविणो वा मितरोचिनो वा महद् द्रवन्तीति वा।
>
> (निरु. ११।१३)

' मध्यम स्थान में जो देवगण है, उन में मरुत् पहिले आते हैं। मरुत् का अर्थ (मित-राविण) मित-भाषी होता है, वे (मित-रोचनः) परिमित प्रकाश देते हैं, (महद्-द्रवन्ति) बडी गति से जाते हैं, अथवा बडे वेग से जलप्रवाह छोड देते हैं। '

ये इस के अर्थ निरुक्तकार ने दिये हैं। पर इस निरुक्त के वाक्य का इस से भिन्न पदच्छेद करने से निम्नलिखित अर्थ होता है-

> मरुतोऽमितराविणो वाऽमितरोचनो वा महद् रवन्तीति वा।
>
> (निरु० ११।१३)

' मरुत् (अ-मित-राविण.) अपरिमित शब्द करनेवाले, (अ-मित-रोचनः) अपरिमित प्रकाश देनेवाले, (महद् रवन्ति) बडा शब्द करते हैं, वे मरुत् हैं। '

पाठक यहां दो ही प्रकार के निरुक्त के एक ही वचन के परस्परविरोधी अर्थ देखेंगे, तो आश्चर्य से चकित होंगे। पर ऐसे ही [illegible] करते हैं। इसलिये इस [illegible]

मुद्रक और प्रकाशक- व० श्री० सातवळेकर, B. A.
स्वाध्याय-मण्डल, भारतमुद्रणालय, औंध (जि० सातारा)

मरुत् देवता का परिचय ।

मरुतों के विषय में कोशोंमें (wind, air, breeze) वायु, हवा, पवन, (vital air or breath, life-wind) प्राण, (the god of wind) वायु का देवता, (a kind of plant) मरुवक, मरुत्तक, ग्रंथपर्णी वनस्पति, (storm-gods) आंधी, प्रचंड वायु, आंधी का देवता इतने अर्थ दिये हैं ।

वैद्यक कोशों में ' मरुत् अथवा मरुतः ' का अर्थ ' घण्टापाटला, मरुवक वृक्ष, मरुत्तक वनस्पति, ग्रंथिपर्णा वनस्पति, पृक्का नामक साग (पिढिंग साग) [हिंदी भाषा में इस का नाम ' पुरी ' है] इतने अर्थ मरुत् के लिखे हैं । ' मरवा ' नामक सुगंध पौधा । मरुत् का यह अर्थ वैद्यकसंबंधी है ।

मरुत् का अर्थ विश्व में ' वायु ' और शरीर में ' प्राण ' है और ये वनस्पतियां प्राणधारण में सहायक होती हैं, प्राण का बल बढाती हैं । इस तरह इनकी संगति होना संभव है ।

निघण्टु में ' मरुत् ' शब्द का पाठ निम्नलिखित गणों में किया है-

१. ' मरुत् ' शब्दका पाठ ' हिरण्य ' नामोंमें (निघंटु० १।२ में) किया है, अतः ' मरुत् ' का अर्थ ' हिरण्य ' अर्थात् ' सुवर्ण ' है ।

२. ' मरुत् ' पदका पाठ ' रूप ' नामों में (निघंटु० ३।७ में) किया है, इसलिये इस का अर्थ ' रूप ' अथवा ' सुन्दरता ' होता है ।

३. ' मरुत् ' पद का पाठ ' ऋत्विक् ' नामों में (निघंटु. ३।१८ में) किया है, इसलिये इस का अर्थ ऋत्विज् अथवा याजक होता है ।

४. ' मरुतः ' पदका पाठ ' पद नामों ' में (निघंटु. ५।५) में किया है ।

निघंटुकार ' मरुत् ' के ये ही अर्थ देता है । निरुक्तकार श्री यास्काचार्य मरुत् के अर्थ निम्नलिखित प्रकार करते हैं-

> अथातो मध्यमस्थाना देवगणाः । तेषां मरुतः प्रथमगामिनो भवन्ति । मरुतो मितराविणो वा मितरोचनो वा महद् द्रवन्तीति वा ।
>
> (निरु. ११।२।१)

' मध्यम स्थान में जो देवगण हैं, उन में मरुत् पहिले आते हैं । मरुत् का अर्थ (मित-राविणः) मित-भाषी होता है, वे (मित-रोचनः) परिमित प्रकाश देते हैं, (महद्-द्रवन्ति) बडी गति से जाते हैं, अथवा बडे वेग से जलप्रवाह छोड देते हैं ।'

ये इस के अर्थ निरुक्तकार के दिये हैं । पर इस निरुक्त के वाक्य का इस से भिन्न पदच्छेद करने से निम्नलिखित अर्थ होता है-

> मरुतोऽमितराविणो वाऽमितरोचनो वा महद् रवन्तीति वा । (निरु० ११।२।१)

' मरुत् (अ-मित-राविणः) अपरिमित शब्द करनेवाले, (अ-मित-रोचनः) अपरिमित प्रकाश देनेवाले, (महत् रवन्ति) बडा शब्द करते हैं, वे मरुत् हैं ।'

पाठक यहां दो प्रकार से निरुक्त के एक ही वचन के परस्परविरोधी अर्थ देखेंगे, तो आश्चर्य से चकित होंगे । पर ऐसे ही टीकाकार करते आये हैं । इसलिये हम जिन

में हम कुछ नहीं कह सकते ।

इसी तरह और भी ' मरुत् ' पद के अर्थ किये गये हैं और हो सकते हैं-

१. मरुत् (मा-रुद्) = न रोनेवाले, अर्थात् युद्ध में न रोते हुए अपना कर्तव्य करनेवाले ।

२. मरुत् (मा-रुत्) = न बोलनेवाले, बकबक न करनेवाले, बहुत न बोलनेवाले ।

३. मरुत् (मर-उत्) = मरनेतक उठकर खडे होकर युद्ध करनेवाले ।

इस तरह विविध अर्थ मरुत् शब्द के किये जाते हैं । अब इस ' मरुत् ' के अर्थ ब्राह्मणग्रंथों में कैसे किये हैं, देखिये-

मरुतो रश्मयः । (तांड्य ब्रा० १४।१२।९)

ये ते मारुताः रश्मयस्ते । (श० ब्रा० ९।३।१।२५)

मरुतः...देवाः । (श० ब्रा० ५।१।४।२, अमरकोश १।१।५८)

गणशो हि मरुतः । (ताण्ड्य ब्रा० १९।१४।२)

मरुतो गणानां पतयः । (तै० ब्रा० ३।११।४।२)

सप्त हि मरुतो गणाः (श० ब्रा० ५।४।३।१७)

सप्त गणा वै मरुतः (तै० ब्रा० १।६।२।३,२।७।२।२)

सप्त सप्त हि मारुता गणाः । (वा० य० १७।८०-८५; ३९।७; श० ब्रा० ९।३।१।२५)

मारुत सप्तकपालः (पुरोडाशः) । (ताण्ड्य ब्रा० २१।१०।२३, श० ब्रा० २।५।१।१२; ५।३।१।६)

मरुतो ह वै देवविशोऽन्तरिक्षभाजना ईश्वराः । (कौ० ब्रा० ७।८)

विशो वै मरुतो देवविशः । (तां० ब्रा० २।५।१।१२)

मरुतो वै देवानां विशः । (ऐ० ब्रा० १।९; तां. ब्रा. ६।१०।१०; १८।१।१४)

अहुतादो वै देवानां मरुतो विट् । (श. ब्रा. ४।५।२।१६)

विट् वै मरुतः (तै. ब्रा. १।८।३।३; २।७।२।२)

विशो मरुतः । (श. ब्रा. २।५।२।६, २७; ४।३।३।६; ३।९।१।१७)

मारुतो वैश्यः । (तै. ब्रा. २।७।२।२)

कीनाशा आसन् मरुतः सुदानवः । (तै. ब्रा. २।४।८।७)

पशवो वै मरुतः । (ऐ. ब्रा. ३।१९)

अन्नं वै मरुतः । (तै. १।७।३।५, १।७।७।२; ३।७।७।३)

प्राणा वै मारुताः । (श. ब्रा. ९।३।१।७)

मारुता वै ग्रावाणः । (तां ब्रा. ९।९।१४)

मरुतो वै देवानामपराजितमायतनम् । (तै. ब्रा. १।४।६।२)

अप्सु वै मरुतः श्रिताः । गो. ब्रा. उ. १।२२, कौ. ब्रा. ५।४)

आपो वै मरुतः । (ऐ. ब्रा. ६।३०, कौ. ब्रा. १२।८)

मरुतो वै वर्षस्येशते । (श. ब्रा. ९।१।२।५)

इन्द्रस्य वै मरुतः । (कौ. ब्रा. ५।४।५)

मरुतो ह वै क्रीडिनो वृत्रं हनिष्यन्तमिन्द्रं आगतं तमभितः परिचिक्रीडुर्महयन्तः । (श. ब्रा. २।५।३।२०)

इन्द्रस्य वै मरुतः क्रीडिनः । (गो. ब्रा. उ. १।२३; कौ. ब्रा. ५।५)

" किरण मरुत् हैं, देव, समूह में रहनेवाले, सात मरुतों का एक गण है, मरुतों का पुरोडाश सात पात्रों में होता है, प्रजा ही मरुत् हैं, दैवी प्रजा मरुत् है, वैश्य मरुतों से उत्पन्न है, उत्तम दान देनेवाले किसान मरुत् हैं, अन्न ही मरुत् हैं, प्राण मरुत् हैं, पत्थर मरुत् हैं। देवों का पराजयरहित स्थान मरुत हैं । मरुत् जल के आश्रय से रहते हैं, जल ही मरुत् हैं । मरुत् वृष्टि के स्वामी हैं । मरुत् इन्द्र के (सैनिक) हैं । जब इन्द्र वृत्र का हनन करता था, तब मरुतों ने खेलते हुए उसका गौरव किया था । "

मरुतों के सम्बन्ध में ब्राह्मणग्रंथों के वचनों का यह तात्पर्य है । ये अर्थ पाठक मरुतों के सूक्तों में देख सकते हैं ।

पाठकों की सुविधा के लिये यहां मरुतों के वर्णनों के मन्त्रोंमेंसे कुछ विशेष मंत्र उद्धृत करके रखते हैं, उन्हें पाठक देखें और मरुद्देवता के मंत्रों के विज्ञान को जानें-

मरुतों के शस्त्र।

(कण्वो घौरः। गायत्री।)

ये पृषतीभिः ऋष्टिभिः साकं वाशीभिः अञ्जिभिः।
अजायन्त स्वभानवः ॥ २ ॥
इहेव शृण्व एषां कशा हस्तेषु यद्वदान्।
नि यामञ्चित्रमृञ्जते ॥ ३ ॥ (ऋ० १।३७)

"(ये) जो (पृषतीभिः) चित्रविचित्र (ऋष्टिभिः) भालों के साथ (वाशिभिः अञ्जिभिः) शस्त्रों और भूषणों के साथ (स्वभानवः) अपने ही प्रकाश से प्रकाशित होनेवाले मरुत् (अजायन्त) प्रकट हुए हैं। (एषां कशा) इनके चाबुक इनके (हस्तेषु वदान्) हाथों में आवाज करते हैं, (यत् इह एव शृण्वे) जो शब्द मैं यहीं सुनता हूं, (यामन् चित्रं नि ऋञ्जते) संग्राम में विचित्र रीतिसे यह चाबूक मरुतोंको शोभित करता है।"

इन मंत्रों में कहा है कि, मरुतोंके पास भाले, कुल्हाड कुठार, आभूषण और चाबूक हैं। इनसे ये मरुत शोभा-यान् हुए हैं।

(सोभरिः काण्वः। प्रगाथः = ककुप् + सतोबृहती।)

समानमञ्ज्येषां विभ्राजन्ते रुक्मासो अधि बाहुषु।
दविद्युतत्यृष्टयः ॥ ११ ॥
त उग्रासो वृषण उग्रबाहवो नकिष्टनूषु येतिरे।
स्थिरा धन्वान्यायुधा रथेषु वोऽनीकेष्वधि श्रियः ॥ १२ ॥ (ऋ० ८।२०)

"(एषां अञ्जि समानं) इन सबके आभूषण समान हैं। इनके (ऋष्टयः दविद्युतत्) भाले चमक रहे हैं, (बाहुषु अधि रुक्मासः विभ्राजन्ते) बाहुओं पर सोने के भूषण चमकते हैं। (ते) वे (उग्रासः) शूर वीर (उग्रबाहवः) बडे बाहुओंवाले (वृषणः) सुख की वर्षा करनेवाले, (तनूषु) अपने शरीर के विषय में (न किः येतिरे) कुछ भी यत्न नहीं करते। (वः रथेषु) आप के रथ पर (स्थिरा धन्वानि आयुधा) स्थिर धनुष्य और शस्त्र हैं तथा (अनीकेषु अधि श्रियः) सैन्य की धुरा में विजय निश्चित है।"

इन मंत्रों में मरुतों के शस्त्रों और आभूषणों का वर्णन देखनेयोग्य है। भाले, बाहुभूषण और कडे तो हैं, पर इनके (रथेषु स्थिरा धन्वानि आयुधा) रथों में स्थिर धनुष्य और स्थिर आयुध हैं। यह वर्णन विशेष महत्व का है। स्थिर धनुष्य और चल धनुष्य ऐसे धनुष्यों के दो भेद हैं। चल धनुष्यों को ही धनुष्य कहते हैं, जो हाथों में लेकर इधर उधर वीर ले जा सकते हैं। प्रायः धनुर्धारी वीर इसी धनुष्य का उपयोग करते हैं। इसको हम 'चल धनुष्य,' 'धनुष्य' अथवा 'छोटा धनुष्य' कहेंगे।

पर इस मंत्र में मरुतों के रथों पर 'स्थिर धनुष्य' रहते हैं, ऐसा कहा है। रथों पर ध्वजदण्ड खडा रहता है, उस दण्ड के साथ ये धनुष्य बांधे रहते हैं, ये हिलाये नहीं जाते, एक ही स्थान पर पक्के किये होते हैं। ये बडे प्रचण्ड धनुष्य होते हैं और इन पर से जो बाण फेंके जाते हैं, वे मामूली बाणों से दुगने तिगुने बडे भाले जैसे होते हैं। ये धनुष्य भी बहुत ही बडे होते हैं और इनकी रस्सी दोनों हाथों से खींची जाती है। इसलिये इनको रथ में ही सदा रहनेवाले 'स्थिर धनुष्य' कहा है। मरुतों के रथों की यह विशेषता है। रथों में 'चल धनुष्य' भी रहते हैं और स्थिर भी होते हैं। इसी तरह अन्यान्य आयुध भी रथ में स्थिर रहते हैं।

ये रथ चार घोडों से खींचे जानेवाले बडे मजबूत होते हैं। मरुतों के रथों को घोडे या हरिनियां जोती जाती थीं, ऐसा मंत्रों में लिखा है और ये घोडे या हरिनियां जिनके पीठपर श्वेत धब्बे होते हैं, ऐसी हैं, ऐसा वर्णन इन मंत्रों में पाठक देख सकते हैं।

ये मरुत् (तनूषु न किः येतिरे) अपने शरीरों की बिलकुल पर्वा न करते हुए युद्ध करते हैं। यह वर्णन भी यहां इन मंत्रों में देखनेयोग्य है।

(श्यावाश्व आत्रेयः। पुर उष्णिक्।)

ये अञ्जिषु ये वाशीषु स्वभानवः।
स्रक्षु रुक्मेषु खादिषु।
श्राया रथेषु धन्वसु ॥ ४ ॥
शर्धं शर्धं व एषां व्रातं व्रातं गणं गणं सुशस्तिभिः।
अनु क्रामेम धीतिभिः ॥ ११ ॥ (ऋ० ५।५३)

"हे मरुतो! (ये स्वभानवः) जो अपने के प्रकाश (अञ्जिषु) अलंकारों पर, (ये वाशीषु) जो कुल्हाडों पर, (स्रक्षु) मालाओं पर, (रुक्मेषु) छाती के भूषणों

वीर मरुत्।

पेपिशे) विराजमान हुई है। ''

इन मंत्रों में मरुतों के शरीरों पर कैसे शस्त्र और कपडे हते हैं, यह बताया है। बरछे, भाले, धनुष्य, बाण, र्कस, तलवार आदि शस्त्र इनके पास हैं। सिर पर साफे अथवा मुकुट हैं। इनके रथ, घोडे आदि सब उत्तम हैं। शरीर सुडौल हैं। बाहुओं में प्रचण्ड बल है और ये (पृश्निमातरः) मातृभूमि की उपासना स्वकर्म से करते रहते हैं, मातृभूमि के लिये आत्मसमर्पण करते रहते हैं।

(वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । त्रिष्टुप्।)

अंसेष्वा मरुतः खादयो वो
वक्षःसु रुक्मा उपशिश्रियाणाः।
वि विद्युतो न वृष्टिभी रुचाना
अनु स्वधामायुधैर्यच्छमानाः ॥१३॥ (ऋ० ७।५६)

" हे (मरुतः) मरुतो ! आप के (अंसेषु) कंधों पर आभूषण हैं, (वक्षःसु रुक्मा) छाती पर मालाएं (उप शिश्रियाणाः) शोभती हैं, (वृष्टिभिः) वृष्टि के साथ चमकती (विद्युतः न) बिजली के समान (विरुचानाः) आप चमक रहे हैं, (आयुधैः) और हथियारों के साथ (स्वधां अनुयच्छमानाः) अन्न को अनुकूलता के साथ आप देते हैं। "

यहां भी मरुतों के हथियारों और भूषणों का वर्णन है।

(श्यावाश्व आत्रेयः । जगती।)

अंसेषु व ऋष्टयः पत्सु खादयो वक्षःसु रुक्मा
मरुतो रथे शुभः। अग्निभ्राजसो विद्युतो
गभस्त्योः शिप्राः शीर्षसु वितता हिरण्ययीः ११
(ऋ० ५।५४)

" हे मरुतो ! (वः अंसेषु ऋष्टयः) आप के कंधों पर भाले हैं, (पत्सु खादयः) पावों में भूषण हैं, (वक्षःसु रुक्माः) छाती पर मालाएं हैं और (रथे शुभः) रथ में सब शुभ साधन हैं। (अग्निभ्राजसः) अग्नि के समान तेजस्वी (विद्युतः गभस्त्योः) चमकदार और किरणों से युक्त हैं और आप के (शीर्षसु) सिर पर (हिरण्ययी वितता शिप्राः) सोने के फैले हुए साफे हैं।

यहां भी मरुतों के शस्त्रों और अलंकारों का वर्णन है। इस समय तक मरुतों के शस्त्रों, अलंकारों और वस्त्रों का वर्णन आया है, इससे विदित होता है कि-

सिर में-

(१) शीर्षसु नृम्णा (ऋ. ५।५७।६); शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः (ऋ. ८।७।२५); हिरण्यशिप्राः (ऋ. २-३४-३),

सिर पर साफे या मुकुट धारण किये हैं। ये सोनेके हैं, अर्थात् साफे होंगे, तो कलाबतू के होंगे।

कंधों पर-

(२) अंसेषु ऋष्टयः (ऋ. १-६४-४; ५-५४-११); ऋष्टयो... अंसयोरधि (ऋ. ५-५७-६); ऋष्टिमन्तः (ऋ. ५-५७-२); अंसेषु खादयः (ऋ. ७-५६-१३);

ंसेषु प्रपथेषु खादयः (१-१६६-९); ऋष्टिविद्युतः (ऋ. १-१६८-५; ५-५२-१३); भ्राजदृ-ऋष्टयः (ऋ. -८७-३).

मरुतों के कंधों पर भाले रहते हैं, इन कंधों पर बाहु-षण होते हैं। ये भूषण भी बडे चमकवाले होते हैं और ाले भी बडे तेजस्वी और चमकनेवाले होते हैं। ऋष्टि- माले जैसा लंबा होता है, भाले के फाल विविध कार के होते हैं। बडे तीक्ष्ण नोकवाले, अनेक मुख- ाले, कांटोंवाले तथा अन्यान्य छेदक नोकवाले होते हैं ीर इस कारण इनके नाम भी बहुत होते हैं। 'खादी' ामक एक आभूषण है, जो पावों में तथा बाहुओं में रखे ाते हैं।

हाथों में—

(३) हस्तेषु कशा वदान् (ऋ. १।२७।३) हाथों में ाबूक जो आवाज करता है। चाबूक का आवाज छिटकने े होता है, यह पाठक जान सकते हैं।

छाती पर—

(४) वक्षःसु रुक्मा (ऋ. १-६४-४; ७-५६-१३; -५४), रुक्मासः अधि बाहुषु (ऋ. ८-२०-११); नूषु शुभ्रा दधिरे विरुक्मतः (ऋ. १ ८५-३)

छाती पर और बाहुओं पर तथा शरीरों पर रुक्म नामक ुवर्ण के भूषण धारण करते हैं। रुक्म मोहरों जैसे ूषण होते हैं, जिनकी माला बना कर कण्ठ में छाती पर खते हैं और अन्यान्य अवयवों पर उस स्थान के योग्य अलंकार किया होता है।

इस तरह का वर्णन मंत्रों में देखनेयोग्य है।

बल से विजय।

(कण्वो घौरः । सतोबृहती।)

स्थिरा वः सन्त्वायुधा पराणुदे वीळू उत प्रतिष्कभे । युष्माकमस्तु तविषी पनीयसी मा मर्त्यस्य मायिनः ॥ २ ॥ (ऋ. १-३९)

" (वः आयुधा स्थिरा सन्तु) आप के शस्त्र सुदृढ हों, (पराणुदे) शत्रु को दूर भगाने के लिये और (प्रति-स्कभे) शत्रु का प्रतिकार करने के लिये आप के शस्त्र (वीळू) सामर्थ्यवान् अर्थात् शत्रु के शस्त्रों से अधिक प्रभावी हों। (युष्माकं तविषी) आप का बल (पनीयसी अस्तु) प्रशंसनीय रहे, वैसा (मायिनः मर्त्यस्य मा) आप के कपटी शत्रु का बल न हो, अर्थात् शत्रु से आप का बल अधिक रहे।"

विजय तभी होगा, जब शत्रु से अपने साधन अधिक प्रभावी होंगे। अपने शस्त्रास्त्र शत्रु से प्रभाव में, परिणाम में, संख्या में, तथा अन्य सब प्रकारों से अधिक अच्छे रहेंगे, तभी विजय होगा, इसलिये विजय की इच्छा करनेवाले वीर अपना ऐसा उत्तम प्रबन्ध रखें।

जनता की सेवा।

(नोधा गौतमः । जगती।)

रोदसी आ वदता गणश्रियो नृषाचः शूराः शवसाऽहिमन्यवः।
आ वन्धुरेष्वमतिर्न दर्शता विद्युन्न तस्थौ मरुतो रथेषु वः ॥ ९ ॥ (ऋ. १।६४)

" हे (गणश्रियः) समुदाय की शोभा से युक्त मरुतो ! हे (नृ-षाचः शूराः) मानवोंकी सेवा करनेवाले शूर, (शवसा अ-हि-मन्यवः) बल के कारण प्रबल कोप से युक्त मरुतो ! (रोदसी) द्युलोक और पृथ्वी में (आवदत) अपनी घोषणा करो। हे मरुतो ! (वः रथेषु) आप के रथों में (वन्धुरेषु) बैठकों में (दर्शता अमतिः न) दर्शनीय रूप के समान अथवा (विद्युत् न) बिजली के समान (आ तस्थौ) आप का तेजस्वी रूप ठहरा है।"

अर्थात् आप जनता की सेवा करनेवाले स्वयंसेवक वीर जब रथों में बैठकर जाते हैं, उस समय बडी शोभा दीखती है।

साम्यवाद।

(श्यावाश्व आत्रेयः। जगती।)

अज्येष्ठास अकनिष्ठास उद्भिदोऽमध्यमासो महसा वि वावृधुः । सुजातासो जनुषा पृश्निमातरो दिवो मर्या आ नो अच्छा जिगातन ॥६॥ (ऋ. ५-५९)

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय । युवा पिता स्वपा रुद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः ॥ ५ ॥ (ऋ० ५-६०)

" मरुतों में कोई श्रेष्ठ नहीं और कोई कनिष्ठ नहीं और कोई मध्यम भी नहीं । ये सब समान हैं । ये अपनी शक्ति से बढते हैं । ये (सुजातासः) कुलीन हैं और (पृश्निमातरः) भूमि को माता माननेवाले हैं । ये दिव्य नरवीर हैं । "

" ये अपने आप को (भ्रातरः) भाई कहते हैं और (सौभगाय सं वावृधुः) सौभाग्य के लिये मिलकर यत्न करते हैं । इनकी माता (पृश्निः सुदुघा) मातृभूमि इनके लिये उत्तम पोषण करनेवाली है । "

इन मंत्रों में मरुतों का साम्यवाद अच्छी तरह कहा है। ये अपने आपको भाई मानते हैं । यह भी साम्यवादियों के लिये योग्य ही है ।

ये सैनिक हैं । सेना में कोई लडका नहीं भरती होता, कोई वृद्ध भी नहीं भरती होता । प्रायः सब तरुण ही भरती होते हैं । इसलिये न इन में कोई बडा है और न छोटा है, सब समान ही रहते हैं । ये सभी मातृभूमि के लिये प्राणों का अर्पण करनेवाले होनेके कारण सब समानतया सन्मान्य होते हैं ।

इस समय तक के वर्णन से मरुत् ये सैनिक हैं, यह बात पाठकों के ध्यान में आ चुकी होगी । सैनिकों के पास शस्त्र होते हैं, उन के शरीर सुडौल होते हैं, सब प्रायः समान ऊंचाई के होने के कारण समान होते हैं । सब के सिरों पर साफे, मुकुट या शिरस्त्राण समान होते हैं, सब का रहनासहना समान होता है । सब सैनिक उक्त कारण अपने आप को भाई कहते हैं। सब मातृभूमि के लिये प्राणों का अर्पण करते हैं, अपने शरीरों की पर्वाह न करते हुए, देश के लिये लडते हैं, सब ही शत्रु को रुलानेवाले होते हैं, सब सैनिक सांघिक जीवन में ही रहते हैं, संघ के विना ये कभी रहते नहीं, कतार में चलते हैं, सब के शस्त्र समान होते हैं । यह सब वर्णन सैनिकों का है और मरुतों का भी है । अतः पाठक मरुतों को सैनिक समझें और मंत्रों का आशय जान लें ।

मरुतों की शोभा ।

(गोतमो राहूगणः । जगती ।)

प्र ये शुम्भन्ते जनयो न सप्तयो
यामन् रुद्रस्य सूनवः सुदंससः ।
रोदसी हि मरुतश्चक्रिरे वृधे
मदन्ति वीरा विदथेषु घृष्वयः ॥ २ ॥
गोमातरो यच्छुभयन्ते अंजिभिः
तनूषु शुभ्रा दधिरे विरुक्मतः ।
बाधन्ते विश्वं अभिमातिनं अप
वर्त्मान्येषामनु रीयते घृतम् ॥ ३ ॥
वि ये भ्राजन्ते सुमखास ऋष्टिभिः
प्रच्यावयन्तो अच्युता चिदोजसा ।
मनोजुवो यन्मरुतो रथेष्वा
वृषव्रातासः पृषतीरयुग्ध्वम् ॥ ४ ॥
(ऋ० १।८५)

" (ये मरुतः) जो मरुत् (जनयः न) स्त्रियोंके समान (यामन्) बाहर जाने के समय (प्र शुम्भन्ते) विशेष अलंकार धारण करते हैं । ये मरुत् (रुद्रस्य सूनवः) रुद्र के अर्थात शत्रु को रुलानेवाले वीर के पुत्र (सु-दंससः) उत्तम कर्म करनेवाले और (सप्तयः) शीघ्रगामी हैं । मरुतों ने (रोदसी) द्युलोक और पृथ्वी को (वृधे) अपनी वृद्धि के लिये साधन (चक्रिरे) बनाया, ये (घृष्वयः) शत्रु का घर्षण करनेवाले (वीराः) वीर (विदथेषु) युद्धों में (मदन्ति) आनन्दित होते हैं । "

" (गो-मातरः) गौको अथवा पृथ्वीको माता माननेवाले मरुत् (यत्) जब (अञ्जिभिः शुभयन्ते) अलंकारों से शोभित होते हैं, तब (तनूषु) वे अपने शरीरों पर (शुभ्राः विरुक्मतः) तेजस्वी और चमकनेवाले शस्त्र (दधिरे) धारण करते हैं । वे (विश्वं अभिमातिनं) सब शत्रु को (अप बाधन्ते) पराभूत करते हैं, प्रतिबन्ध करते हैं । (एषां वर्त्मानि) इनके गमन के मार्ग पर (घृतं अनु रीयते) घी आदि भोग्य पदार्थ (अनुरीयते) अनुकूलता के साथ मिलते हैं । "

" (ये सुमखासः) जो उत्तम यज्ञ करनेवाले मरुत् (ऋष्टिभिः वि भ्राजन्ते) अपने भालों से शोभते हैं । जो (ओजसा) अपने बल के साथ (अच्युता) न हिलनेवालों को भी (प्रच्यावयन्ते चित्) निश्चयपूर्वक हिला देते हैं । हे मरुतो ! (यत्) जब आप अपने (रथेषु पृषतीः) रथों को विचित्र रंगोंवाली हरिणों या घोडियों

को सेंकते हैं तब (नृर-साचाः) वीर्यवान् समूह करनेवाले आप (मनो-जुवः) मन जैसे वेगवान् होते हैं।"

इन मंत्रों में कहा है कि मरुत् वीर स्त्रियों के समान अलंकारोंसे सजते हैं, मधुर भाषण करते हैं, युद्धों से आनंदित होते हैं, मातृभूमि को माता मानते हैं, माले-बिंदियों को धारण करते हैं, सब शत्रुओं को स्थानभ्रष्ट करते हैं, समूहोंमें रहनेसे इनका बल बढा रहता है। शत्रु पर ये समूह से ही हमला करते हैं।

मरुत् वीर स्त्रियों के समान अपने आप को सजाते हैं। पाठक यहां सैनिकों की सजावट की ओर देखें। सैनिक अपनी वेषभूषा, शस्त्र, बूटसूट, साफे आदि सब जितना सुंदर रखा जा सकता है, उतना सुंदर, स्वच्छ और सुडौल रखते हैं। सैनिक जितने अच्छे सजते हैं और जितना सजावट का ख्याल करते हैं, उतना कोई और नहीं करता। इस सजा-वट में ही उनका प्रभाव रहता है। इसलिये यह सजावट बुरी नहीं है।

यहां के 'गो-मातरः, पृश्नि-मातरः' ये शब्द मातृ-भूमि और गौ को माता मानने का भाव बताते हैं। गोरक्षा करना इस तरह मरुतों का कर्तव्य दीखता है। गोरक्षण, मातृभूमिरक्षण, स्वभाषारक्षण आदि भाव 'गोमातरः' में स्पष्ट दीखते हैं।

(अगस्त्यो मैत्रावरुणः । जगती ।)

विश्वानि भद्रा मरुतो रथेषु वो
मिथस्पृध्येव तविषाण्याहिता।
अंसेष्वा वः प्रपथेषु खादयो-
ऽक्षो वश्चक्रा समया वि वावृते ॥ ९ ॥

(ऋ. १-१६६)

"हे मरुतों! (वः रथेषु) आप के रथों में (विश्वानि भद्रा) सब कल्याणकारक पदार्थ रहते हैं। (मिथ-स्पृध्या इव) परस्पर स्पर्धा के (तविषाणि आहिता) सब शस्त्र रखे हैं। (अंसेषु) बाहुओं में तथा (वः प्रप-थेषु) आप के पांवों में (खादयः) आभूषण रहते हैं और आप के चक्र का (अक्षः) अक्ष (चक्रा समया) चक्रों के समीप साथ साथ (वि वावृते) रहता है।"

मरुतों के रथों पर भरपूर अन्नादि पदार्थ और शस्त्र रहते हैं।

(गोतमो राहूगणः । जगती ।)

शूरा इवेद् युयुधयो न जग्मयः।
श्रवस्यवो न पृतनासु येतिरे।
भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यो
राजान इव त्वेषसंदृशो नरः॥ ८॥

(ऋ. १।८५)

"(शूरा इव इत्) ये शूरों के समान (जग्मयः युयुधयः न) शत्रु पर दौडनेवाले योद्धाओं के समान (श्रवस्यवः न) यश की इच्छा करनेवालों के समान (पृतनासु येतिरे) लडाइयों में युद्ध करते हैं। (मरुद्भ्यः) मरुतों से (विश्वा भुवनानि) सब भुवन (भयन्ते) डरते हैं। ये मरुत् (राजानः इव) राजाओं के समान (त्वेष-संदृशः) क्रोधित दीखनेवाले (नरः) ये नेता हैं।"

युद्ध में मरुतों को आनन्द होता है। ये ऐसा पराक्रम करते हैं कि, जिससे सब विश्व इनसे डरता है। ऐसे पराक्रमी ये वीर हैं।

(अगस्त्यो मैत्रावरुणः । जगती ।)

को वोऽन्तर्मरुतो ऋष्टिविद्युतो
रेजति त्मना हन्वेव जिह्वया।
धन्वच्युत इषां न यामनि
पुरुप्रैषा अहन्यो नैतशः॥ (ऋ. १-१६८-५)

"हे (ऋष्टिविद्युतः) विद्युत् का शस्त्र बर्तनेवाले मरुतो! (वः अन्तः कः) आप के अन्दर कौन (रेजति) प्रेरणा करता है? अथवा (जिह्वया हन्वा इव) जिह्वा से हनु को प्रेरणा मिलती है, वैसी (त्मना) स्वयं हि तुम प्रेरित होते हो? अथवा तुम्हारे अन्दर रहकर कोई दूसरा तुम्हें प्रेरणा देता है? (इषां यामनि) अन्नों की प्राप्ति के लिये (धन्वच्युतः न) अन्तरिक्ष से चूनेवाले उदक की जैसी इच्छा करते हैं अथवा (अ-हन्यः एतशः न) शिक्षित घोडे के समान (पुरु-प्रैषाः) बहुत दान देनेवाला याजक तुम्हें बुलाता है।"

(अगस्त्यो मैत्रावरुणः । गायत्री ।)

आरे सा वः सुदानवो मरुत ऋञ्जती शरुः
आरे अश्मा यमस्यथ॥ (ऋ. १।१७२।२)

"हे (सुदानवः मरुतः) हे दानशील मरुतो! (वः सा ऋञ्जती शरुः) आप का वह तेजस्वी भाला (आरे)

हम से दूर रहे, तथा (यं अस्यथ) जिस को तुम फेंकते हो, वह (अश्मा) पत्थर भी हमसे (आरे) दूर रहे।"

अर्थात् तुम्हारा शस्त्र और तुम्हारा पत्थर शत्रु पर गिरे, हम उस से दूर रहें। यहां पत्थर भी एक मरुतों का शस्त्र कहा है। ये पत्थर हाथ से, पांव से और रस्सी से फेंके जाते हैं। हाथ से आगे, पांव से पीछे और 'क्षेपणी' नामक पत्थर फेंकनेवाली रस्सी से बडी दूरी पर फेंका जाता है। इस रस्सी को 'गोफन' (क्षेपणी) बोलते हैं, इस से आध सेर वजन का पत्थर सौ गज पर ऐसे वेगसे फेंका जाता है कि, जिससे शत्रुका हाथ भी टूट जाय।

प्रतिबंधरहित गति !

(श्यावाश्व आत्रेयः । जगती ।)

न पर्वता न नद्यो वरन्त वो
यत्राचिध्वं मरुतो गच्छथेदु तत्।
उत द्यावापृथिवी याथना परि
शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥७॥ (ऋ. ५।५५)

" हे मरुतो ! (न पर्वता) न पर्वत और (न नद्यः) न नदियां (वः वरन्त) आप के मार्ग को प्रतिबन्ध कर सकते हैं, (यत्र आचिध्वं) जहां जाना चाहते हैं, (तत् गच्छथ इत् उ) वहां तुम पहुंचते ही हो। तुम द्युलोक और पृथ्वी पर पहुंचते हो और (शुभं यातां) शुभ स्थान को पहुंचनेवाले आप के रथ आगे बढते हैं।"

यहां लिखा है कि, नदी और पर्वत से मरुत् वीरों को किसी तरह का प्रतिबन्ध नहीं होता है। वे जहां जहां पहुंचना चाहते हैं, पहुंचते ही हैं और वहां यश भी कमाते हैं।

बीच में पर्वत आ जाय, नदियाँ आ जायँ, बीच में जलाशय हों अथवा रेतीले मैदान हों, इन सब प्रतिबंधों को ये गिनते नहीं। इन के रथ ऐसे होते हैं कि, वे जहां चाहे वहां जाते और शत्रु को घेर लेते हैं।

जहां मरुत् जाना चाहते हैं, वहां वे पहुंचते हैं और जिस शत्रु को पराजित करना चाहते हैं, उस को पराजित कर छोडते हैं।

इनकी गति को रोकनेवाला पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक में कोई नहीं है। शत्रु पर विजय प्राप्त करना हो, तो ऐसा ही सामर्थ्य प्राप्त करना चाहिये। अपना हरएक शस्त्र शत्रुसे अधिक प्रभावी रहना चाहिये, हरएक वीर शत्रु से अधिक सामर्थ्यशाली रहना चाहिये और अपना हरएक वीर शत्रुसे शक्ति, बुद्धि और युक्ति में श्रेष्ठ रहना चाहिये। तब विजय मिलता है। यह बात मरुतोंके वर्णनमें पाठक देख सकते हैं।

(कण्वो घौरः । सतोबृहती ।)

असाम्योजो बिभृथा सुदानवोऽसामि धूतयः
शवः। ऋषिद्विषे मरुतः परिमन्यव इषुं न
सृजत द्विषम्॥ (ऋ. १-३९-१०)

"हे (सुदानवः) उत्तम दान देनेवाले मरुतो ! (असामि ओजः बिभृथ) अतुल बल आप धारण करते हैं। हे (धूतयः) शत्रुको कंपानेवाले मरुतो ! (असामि शवः) अतुल सामर्थ्य आप के पास है। (ऋषिद्विषे) ऋषियों का द्वेष करनेवाले (परिमन्यवे) क्रोधकारी शत्रु के वध के लिये (द्विषं) विनाशक शस्त्र (इषुं न) बाण के समान (सृजत) छोड दो।

मरुतों का बल बहुत है, उस की तुलना किसी के साथ नहीं हो सकती। ज्ञानियों का द्वेष करनेवाले का नाश करने के लिये आप ऐसा शस्त्र छोडिए कि, जिस से उस शत्रु का पूर्ण नाश हो जाये।

धूम्रास्त्रप्रयोग।

(ब्रह्मा । त्रिष्टुप् ।)

असौ या सेना मरुतः परेषां
अस्मानैत्योजसा स्पर्धमाना।
तां विध्यत तमसापव्रतेन
यथैषामन्यो अन्यं न जानात् ॥६॥ (अथर्व० ३।२)

" हे मरुतो ! यह जो (परेषां) शत्रुओंकी सेना है, जो (अस्मान्) हम पर स्पर्धा करती हुई, (ओजसा एति) वेग से आ रही है, (तां) उस सेना को (अपव्रतेन तमसा) घबराहट करनेवाले तमसास्त्र से (विध्यत) वेध लो (यथा) जिस से इन में से कोई किसी को (न जानात्) न जान सके।"

यहां अंधेरा उत्पन्न करनेवाला धूवांरूप शस्त्र का वर्णन है। इस से एक दूसरे को जान नहीं सकता।

यहां 'अपव्रत तम' नामक अस्त्र का प्रयोग शत्रु की

पर करने को कहा है। ' अपव्रत ' का अर्थ जिस से कर्तव्य और अकर्तव्य का ज्ञान नहीं शुसैन्य घबरा जाता है और जो नहीं करना ही करने लगता है। इस घबराहट के कारण ना का निश्चय से पराभव होता है।

तु ' नामक अस्त्र अन्धेरा उत्पन्न करनेवाला है। जैसा ही होगा। आजकल इस को ' गैस ' कहते हैं। धूवें का पर्दा जैसा खडा करते हैं की ओड में रह कर शत्रु को सताते हैं।

तु ' और ' अपव्रत तमस् ' ये दो विभिन्न। अधिक घबराहट करनेवाला तम ही अपव्रत न्द हो सकता है। यह मरुतों का अस्त्र यहां पूर्वोक्त अन्यान्य आयुधों के साथ पाठक इस का र करें।

(गृत्समदः शौनकः। जगती।)

ो अश्वाँ अत्याँ इवाजिषु
य कर्णैस्तुरयन्त आशुभिः।
यशिप्रा मरुतो दविध्वतः
याथ पृषतीभिः समन्यवः ॥२॥
वभिर्धेनुभी रप्शदूधभिः
स्मभिः पथिभिर्भ्राजदृष्टयः।
ंसासो न स्वसराणि गन्तन
र्मदाय मरुतः समन्यवः ॥५॥
ोणीभिररुणेभिर्नाञ्जिभी
ऋतस्य सदनेषु वावृधुः।
घमाना अत्येन पाजसा
न्द्रं वर्णं दधिरे सुपेशसम् ॥१३॥

(ऋ. २-३४)

(हिरण्यशिप्राः) सोने के मुकुट धारण करनेवाले ः) शत्रुको कंपानेवाले मरुतों ! (आजिषु) संग्रामों वान् अश्वान्) चपल घोडों को (इयन्ते इव) जैसे राते हैं वैसे जो स्नान करते हैं और (नद्स्य कर्णैः ःः) हिनहिनानेवाले घोडों के कानों के समान चपट साथ (तुरयन्त) दौडते हैं, और (समन्यवः) उत्साह पतीभिः) बिंदुवाली हरिणियों के साथ (पृक्षं याथ) न के पास, यज्ञ के पास, जाओ। "

" हे (भ्राजद्-ऋष्टयः) चमकनेवाले भालों को धारण करनेवाले (समन्यवः) उत्साह से परिपूर्ण मरुतो ! (इन्धन्वभिः) प्रदीप्त, तेजस्वी (रप्शद्-ऊधभिः) भरपूर दुग्धाशयवाली (धेनुभिः) धेनुओं के साथ रहते हुए (अध्वस्मभिः पथिभिः) अविनाशी मार्गों से (हंसासः न) हंसों के समान (मधोः मदाय) मधुर सोमरसपान के आनन्द के लिये (स्वसराणि गन्तन) यज्ञस्थानों के पास जाओ। "

" (रुद्राः) शत्रुको रुलानेवाले मरुत (ऋतस्य सदने) यज्ञ के मण्डप में (क्षोणीभिः अरुणेभिः न अञ्जिभिः) शब्द करनेवाले, चमकनेवाले अलंकारों के समान (वावृधुः) बढते हैं। (निमेघमानाः) मेघके समान (अत्येन पाजसा) गमनशील बल से युक्त (सुश्चंद्रं वर्णं सुपेशसं) चमकने-वाला आनन्ददायक वर्ण (दधिरे) धारण करते हैं। "

विवरमार्ग।

(श्यावाश्व आत्रेयः। अनुष्टुप्। १७ पंक्तिः।)

आपथयो विपथयोऽन्तस्पथा अनुपथाः।
एतेभिर्मह्यं नामभिः यज्ञं विष्टार ओहते ॥१०॥
य ऋष्वा ऋष्टिविद्युतः कवयः सन्ति वेधसः।
तमृषे मारुतं गणं नमस्या रमया गिरा ॥१३॥
सप्त मे सप्त शाकिन एकमेका शता ददुः।
यमुनायामधि श्रुतमुद्राधो गव्यं मृजे निराधो
अश्व्यं मृजे ॥ १७ ॥ (ऋ. ५।५२)

" (आपथयः) सीधे मार्गसे, (विपथयः) प्रतिकूल मार्ग से, (अन्तस्पथा) अन्दर के गुप्त मार्ग से, विवर के मार्ग से, (अनुपथाः) साथवाले अनुकूल मार्ग से अर्थात् (एतेभिः नामभिः) इन सब प्रसिद्ध मार्गोंसे (विष्टारः) यज्ञों का विस्तार करते हुए (यज्ञं ओहते) यज्ञ के पास जाते हैं। "

" जो (ऋष्वा) दर्शनीय (ऋष्टिविद्युतः) शस्त्रों से विशेष प्रकाशित, (कवयः) ज्ञानी और (वेधसः) वेद जाननेवाले (सन्ति) हैं, हे ऋषे ! (तं मारुतं गणं) उन मरुतों के गणों को (नमस्या गिरा) नमन करने की वाणी से (रमय) आनंदित कर। "

हम से दूर रहे, तथा (यं अस्यथ) जिस को तुम फेंकते हो, वह (अश्मा) पत्थर भी हमसे (आरे) दूर रहे।"

अर्थात् तुम्हारा शस्त्र और तुम्हारा पत्थर शत्रु पर गिरे, हम उस से दूर रहें। यहां पत्थर भी एक मरुतों का शस्त्र कहा है। ये पत्थर हाथ से, पांव से और रस्सी से फेंके जाते हैं। हाथ से आगे, पांव से पीछे और 'क्षेपणी' नामक पत्थर फेंकनेवाली रस्सी से बडी दूरी पर फेंका जाता है। इस रस्सी को 'गोफन' (क्षेपणी) बोलते हैं, इस से आध सेर वजन का पत्थर सौ गज पर ऐसे वेगसे फेंका जाता है कि, जिससे शत्रुका हाथ भी टूट जाय।

प्रतिबंधरहित गति !

(श्यावाश्व आत्रेयः। जगती।)

न पर्वता न नद्यो वरन्त वो
यत्राचिध्वं मरुतो गच्छथेदु तत्।
उत द्यावापृथिवी याथना परि
शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥७॥ (ऋ. ५।५५)

"हे मरुतो ! (न पर्वता) न पर्वत और (न नद्यः) न नदियां (वः वरन्त) आप के मार्ग को प्रतिबन्ध कर सकते हैं, (यत्र आचिध्वं) जहां जाना चाहते हैं, (तत् गच्छथ इत् उ) वहां तुम पहुंचते ही हो। तुम द्युलोक और पृथ्वी पर पहुंचते हो और (शुभं यातां) शुभ स्थान को पहुंचनेवाले आप के रथ आगे बढते हैं।"

यहां लिखा है कि, नदी और पर्वत से मरुत् वीरों को किसी तरह का प्रतिबन्ध नहीं होता है। वे जहां जहां पहुंचना चाहते हैं, पहुंचते ही हैं और वहां यश भी कमाते हैं।

बीच में पर्वत आ जाय, नदियाँ आ जायँ, बीच में जंगल हों अथवा रेतीले मैदान हों, इन सब प्रतिबंधों को वे गिनते नहीं। इन के रथ ऐसे होते हैं कि, वे जहां चाहे वहां जाते और शत्रु को घेर लेते हैं।

जहां मरुत् जाना चाहते हैं, वहां वे पहुंचते हैं और जिस शत्रु को पराजित करना चाहते हैं, उस को पराजित कर छोडते हैं।

इन की गति को रोकनेवाला पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक में कोई नहीं है। शत्रु पर विजय प्राप्त करना हो, तो ऐसा ही सामर्थ्य प्राप्त करना चाहिये। अपना हरएक शस्त्र शत्रुसे अधिक प्रभावी रहना चाहिये, हरएक रथ शत्रु से अधिक सामर्थ्यशाली रहना चाहिये और अपना हरएक वीर शत्रुसे शक्ति, बुद्धि और युक्ति में श्रेष्ठ रहना चाहिये। तब विजय मिलता है। यह बात मरुतोंके वर्णनमें पाठक देख सकते हैं।

(कण्वो घौरः। सतोबृहती।)

असाम्योजो बिभृथा सुदानवोऽसामि धूतयः शवः। ऋषिद्विषे मरुतः परिमन्यव इषुं न सृजत द्विषम् ॥ (ऋ. १-३९-१०)

"हे (सुदानवः) उत्तम दान देनेवाले मरुतो ! (असामि ओजः बिभृथः) अतुल बल आप धारण करते हैं। हे (धूतयः) शत्रुको कंपानेवाले मरुतो ! (असामि शवः) अतुल सामर्थ्य आप के पास है। (ऋषिद्विषे) ऋषियों का द्वेष करनेवाले (परिमन्यवे) कोपकारी शत्रु के वध के लिये (द्विषं) विनाशक शस्त्र (इषुं न) बाण के समान (सृजत) छोड दो।

मरुतों का बल बहुत है, उस की तुलना किसी के साथ नहीं हो सकती। ज्ञानियों का द्वेष करनेवाले का नाश करने के लिये आप ऐसा शस्त्र छोडिए कि, जिस से उस शत्रु का पूर्ण नाश हो जावे।

धूम्रास्त्रप्रयोग।

(ब्रह्मा। त्रिष्टुप्।)

असौ या सेना मरुतः परेषा-
मस्मानैत्योजसा स्पर्धमाना।
तां विध्यत तमसापव्रतेन
यथैषामन्यो अन्यं न जानात् ॥८॥ (अथर्व० ३।२)

"हे मरुतो ! यह जो (परेषां) शत्रुओंकी सेना है, जो (अस्मान्) हम पर स्पर्धा करती हुई, (ओजसा एति) वेग से आ रही है, (तां) उस सेना को (अपव्रतेन तमसा) घबराहट करनेवाले तमसास्त्र से (विध्यत) वेध लो (यथा) जिस से इन में से कोई किसी को (न जानात्) न जान सके।"

यहां अंधेरा उत्पन्न करनेवाला धूवांरूप शस्त्र का वर्णन है। इस से एक दूसरे को जान नहीं सकता।

यहां 'अपव्रत तम' नामक अस्त्र का प्रयोग शत्रु की

ापर करने को कहा है। 'अपव्रत' का अर्थ ,जिस से कर्तव्य और अकर्तव्य का ज्ञान नहीं ाुसैन्य घबरा जाता है और जो नहीं करना ाही करने लगता है। इस घबराहट के कारण ाना का निश्चय से पराभव होता है।

स्' नामक अस्त्र अन्धेरा उत्पन्न करनेवाला है। जैसा ही होगा। आजकल इस को 'गैस') कहते हैं। धूवें का पर्दा जैसा खडा करते हैं की ओट में रह कर शत्रु को सताते हैं।

स्' और 'अपव्रत तमस्' ये दो विभिन्न ।। अधिक घबराहट करनेवाला तम ही अपव्रत ोग्य हो सकता है। यह मरुतों का अस्त्र यहां पूर्वोक्त अन्यान्य आयुधों के साथ पाठक इस का ार करें।

(गृत्समदः शौनकः। जगती।)

ते अश्वाँ अत्याँ इवाजिषु
ाय कर्णैस्तुरयन्त आशुभिः।
ण्यशिप्रा मरुतो दविध्वतः
याथ पृषतीभिः समन्यवः ॥१॥
न्वभिर्धेनुभी रप्शदूधभिः
रस्मभिः पथिभिर्भ्राजदृष्टयः।
हंसासो न स्वसराणि गन्तन
र्मदाय मरुतः समन्यवः ॥५॥
ोणीभिररुणेभिर्नाञ्जिभी
ऋतस्य सदनेषु वावृधुः।
ेघमाना अत्येन पाजसा
न्द्रं वर्णं दधिरे सुपेशसम् ॥३॥
(ऋ. २-३४)

"(हिरण्यशिप्राः) सोने के मुकुट धारण करनेवाले ।तः) शत्रुको कंपानेवाले मरुतो! (आजिषु) संग्राममें ।त्यान् अश्वान्) चपल घोडों को (उक्षन्ते इव) जैसे कराते हैं वैसे जो स्नान करते हैं और (नदस्य कर्णैः ः) हिनहिनानेवाले घोडों के कानों के समान चपल साथ (तुरयन्त) दौडते हैं, आप (समन्यवः) उत्साह ृषतीभिः) बिंदुवाली हरिणियों के साथ (इषं याथ) ाज के पास, यज्ञ के पास, जाओ।"

"हे (भ्राजद्-ऋष्टयः) चमकनेवाले भालों को धारण करनेवाले (समन्यवः) उत्साह से परिपूर्ण मरुतो! (इन्धन्वभिः) प्रदीप्त, तेजस्वी (रप्शद्-ऊधभिः) भरपूर दुग्धाशयवाली (धेनुभिः) धेनुओं के साथ रहते हुए (अध्वस्मभिः पथिभिः) अविनाशी मार्गों से (हंसासः न) हंसों के समान (मधोः मदाय) मधुर सोमरसपान के आनन्द के लिये (स्वसराणि गन्तन) यज्ञस्थानों के पास जाओ।"

"(रुद्राः) शत्रुको रुलानेवाले मरुत (ऋतस्य सदने) यज्ञ के मण्डप में (क्षोणीभिः अरुणेभिः न अञ्जिभिः) शब्द करनेवाले, चमकनेवाले अलंकारों के समान (वावृधुः) बढते हैं। (निमेघमानाः) मेघके समान (अत्येन पाजसा) गमनशील बल से युक्त (सुश्चंद्रं वर्णं सुपेशसं) चमकनेवाला आनन्ददायक वर्ण (दधिरे) धारण करते हैं।"

विवरमार्ग।

(श्यावाश्व आत्रेयः। अनुष्टुप्। १७ पंक्तिः।)

आपथयो विपथयोऽन्तस्पथा अनुपथाः।
एतेभिर्मह्यं नामभिः यज्ञं विष्टार ओहते ॥१०॥
य ऋष्वा ऋष्टिविद्युतः कवयः सन्ति वेधसः।
तमृषे मारुतं गणं नमस्या रमया गिरा ॥१३॥
सप्त मे सप्त शाकिन एकमेका शता ददुः।
यमुनायामधि श्रुतमुद्राधो गव्यं मृजे निराधो
अश्व्यं मृजे ॥ १७ ॥ (ऋ. ५।५२)

"(आपथयः) सीधे मार्गसे, (विपथयः) प्रतिकूल मार्ग से, (अन्तस्पथा) अन्दर के गुप्त मार्ग से, विवर के मार्ग से, (अनुपथाः) साथवाले अनुकूल मार्ग से अर्थात् (एतेभिः नामभिः) इन सब प्रसिद्ध मार्गोंसे (विष्टारः) यज्ञों का विस्तार करते हुए (यज्ञं ओहते) यज्ञ के पास आते हैं।"

"जो (ऋष्वाः) दर्शनीय (ऋष्टिविद्युतः) शस्त्रों से विशेष प्रकाशित, (कवयः) ज्ञानी और (वेधसः) वेध करनेवाले (सन्ति) हैं, हे ऋषे! (तं मारुतं गणं) उन मरुतों के गणों को (नमस्या गिरा) नमन करने की वाणी से (रमय) आनंदित कर।"

" (ते शाकिनः सप्त सप्ताः) वे समर्थ सातसातों के संघ (एकं एका शता ददुः) एक एक सौ दान देते रहे। (यमुनायां अधिश्रुतं) यमुना के तीर पर यह प्रसिद्ध है कि, (गव्यं राधः उद्मृजे) गौओं का धन दान में दिया और (अश्व्यं राधः निमृजे) घोडोंका धन दानमें दिया।"

इस में चार मार्गों का वर्णन है। मरुत् चारों मार्गों से यज्ञ के प्रति आते हैं, इन मार्गों में अन्तस्पथ अर्थात् भूमि के अन्दर का विवरमार्ग भी है। ये मरुत् गौओं और घोडों का दान देते हैं, इत्यादि बातें इन मंत्रों में मननीय हैं।

मरुतों का सामर्थ्य।

(श्यावाश्व आत्रेयः। जगती।)

विद्युन्महसो नरो अश्मदिद्यवो
वातत्विषो मरुतः पर्वतच्युतः।
अब्दया चिन्मुहुरा ह्रादुनीवृतः
स्तनयदमा रभसा उदोजसः॥ ३॥

न स जीयते मरुतो न हन्यते
न स्रेधति न व्यथते न रिष्यति।
नास्य राय उपदस्यन्ति नोतय
ऋषिं वा यं राजानं वा सुपूदथ॥ ७॥

नियुत्वतो ग्रामजितो यथा नरो-
ऽर्यमणो न मरुतः कबन्धिनः।
पिन्वन्त्युत्सं यदिनासो अस्वरन्
व्युन्दन्ति पृथिवीं मध्वो अन्धसा॥ ८॥

(ऋ. ५-५४)

" ये (नरः मरुतः) नेता मरुत् (विद्युन्महसः) बिजुली के समान महातेजस्वी, (अश्म-दिद्यवः) उल्का के समान प्रकाशमान, (वात-त्विषः) वायु के समान वेगवान्, (पर्वतच्युतः) पर्वतों को भी स्थान से भ्रष्ट करनेवाले, (अब्दया चित् मुहुः आ) पानी देने की अर्थात् वृष्टि की इच्छा वारंवार करनेवाले, (ह्रादुनीवृतः) बिजुली को प्रेरित करनेवाले, (स्तनयद्-अमाः) गर्जना में भी जिन की शक्ति प्रकट होती है, ऐसे ये मरुत् (रभसा उत् ओजसः) वेग और सामर्थ्य से युक्त हैं।"

"हे मरुतो ! जिस (ऋषिं) ऋषिको (वा यं राजानं वा) वा जिस राजा को तुम (सुपूदथ) प्रेरित करते हो, वह (न सः जीयते) पराजित नहीं होता, (न हन्यते) न मारा जाता, (न स्रेधति) न पीछे हटता है, (न व्यथते) पीडित नहीं होता और (न रिष्यति) नाश को प्राप्त नहीं होता। (अस्य रायः न उपदस्यन्ति) इसके धन क्षीण नहीं होते, (न ऊतयः) न उसकी रक्षाएं कम होती हैं।"

" (यथा ग्रामजितः नरः) जैसे नगर को जीतनेवाले नेतालोग गर्व से चलते हैं, वैसे (नियुत्वतः) घोडों पर सवार हुए ये मरुत् (अर्यमणः कबन्धिनः) सूर्य के समान तेजस्वी होकर जल देने लगते हैं। (इनासः) ये स्वामी (यत् अस्वरन्) जब शब्द करते हुए (उत्सं पिन्वन्ति) हौज को जल से भर देते हैं, तब (मध्वः अन्धसा) मधुर जल से (पृथिवीं व्युंदन्ति) पृथ्वी को भर देते हैं।"

मरुत् विजयी वीर हैं। सर्वत्र (क-बन्धिनः) ये पानी का प्रबन्ध सुरक्षित रखते हैं। (मध्वः अन्धसा) मधुर अन्न का प्रबन्ध भी सुरक्षित रखते हैं। अन्न और जल का प्रबन्ध सुरक्षित रखने के कारण इनका विजय होता है। सैनिकों का विजय पेट की पूर्ति से होता है। पाठक विजय का यह कारण अवश्य देखें और अपने सैनिकों के प्रबंध में ऐसी सुव्यवस्था रखें।

(कण्वो घौरः। बृहती।)

परा ह यत् स्थिरं हथ नरो वर्तयथा गुरु।
वि याथन वनिनः पृथिव्याः व्याशा पर्वतानाम्॥

(ऋ. १।३९)

"हे (नरः) शूर नेताओ ! (यत् स्थिरं परा हथ) जो स्थावर पदार्थ है, उसको तुम तोड देते हो, और (गुरु वर्तयथाः) जो बडा भारी पदार्थ हो, उसको तुम हिलाते हो, (पृथिव्याः वनिनः वि याथन) पृथ्वी पर के बडे वृक्षों को तुम उखाड देते हो और (पर्वतानां आशाः वि) पर्वतों को फाडते हो।"

शूर सैनिक स्थिर पदार्थों को अपने मार्ग से हटा देते हैं, बडे भारी पदार्थों को तोडकर चूर्ण करते हैं, वनों में बडे बडे वृक्षों को तोडकर वहां उत्तम मार्ग बनाते हैं और पर्वतों को भी फाडकर बीच में से मार्ग निकालते हैं। अर्थात् शूरों को किसी का प्रतिबंध नहीं होता। शूरों को सब मार्ग खुले रहते हैं।

(कण्वो घौरः । सतोबृहती ।)

नहि वः शत्रुर्विविदे अधि द्यवि न भूम्यां रिशादसः । युष्माकमस्तु तविषी तना युजा रुद्रासो नू चिदाधृषे ॥ ४ ॥ (ऋ. १।३९)

" हे (रिशादसः) शत्रु का नाश करनेवाले मरुतो ! (अधि द्यवि) द्युलोक में (वः शत्रुः न विविदे) आप के लिये कोई शत्रु नहीं है, (न भूम्यां) पृथ्वी पर भी आप के लिये कोई शत्रु नहीं है। हे (रुद्रासः) शत्रु को रुलानेवाले मरुतो ! (युष्माकं युजा) आप की संघटना से (आधृषे) शत्रु पर आक्रमण करने के लिये (तना तविषी अस्तु) विस्तृत सामर्थ्य आपके पास हो। "

आप के सामने ठहरनेवाला कोई शत्रु नहीं है और आप का परस्पर आपस का संगठन ऐसा है कि, आप शत्रु पर हमला करते हैं और शत्रु को रुला देते हैं।

(पुनर्वत्सः काण्वः । गायत्री ।)

वि वृत्रं पर्वशो ययुः वि पर्वताँ अराजिनः ।
चक्राणा वृष्णि पौंस्यम् ॥ २३ ॥
अनु त्रितस्य युध्यतः शुष्ममावन्नुत क्रतुम् ।
अन्विन्द्रं वृत्रतूर्ये ॥ २४ ॥
विद्युद्धस्ता अभिद्यवः शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः ।
शुभ्रा व्यञ्जत श्रिये ॥ २५ ॥
आ नो मखस्य दावनेऽश्वैर्हिरण्यपाणिभिः ।
देवास उप गन्तन ॥ २६ ॥
सहो षु णो वज्रहस्तैः कण्वासो अग्निं मरुद्भिः ।
स्तुषे हिरण्यवाशीभिः ॥ ३२ ॥ (ऋ. ८-७)

" (अ-राजिनः) राजाको न माननेवाले, अराजक (वृष्णि पौंस्यं चक्राणा) बल के साथ पराक्रम करनेवाले मरुत् (वृत्रं पर्वशः वि ययुः) वृत्र को जोडजोड में काटते रहे ॥ (युध्यतः त्रितस्य) युद्ध करनेवाले त्रितका (शुष्मं अनु आवन्) बल बढाया (उत क्रतुं) और कर्म की शक्ति भी बढायी और (वृत्रतूर्ये इंद्रं अनु) वृत्र के युद्ध में इन्द्र की रक्षा की ॥ (अभिद्यवः विद्युत्-हस्ताः) तेजस्वी बिजली जैसा शस्त्र हाथ में लेकर लडते हुए मरुत् (हिरण्ययीः शिप्राः) सोनेके शिरस्त्राण (शीर्षन्) सिर पर धारण करते हैं, (शुभ्राः श्रिये व्यंजत) वो (शुभ्राः) शोभासे चमकते हैं। हे (देवासः) देव मरुतो ! (नः मखस्य दावने) हमारे यज्ञ के प्रति तुम (हिरण्यपाणिभिः अश्वैः) सोने के आभूषणों से युक्त घोडों के साथ (उप आगन्तन) आओ। (वज्रं हस्तैः) वज्र हाथ में धारण करनेवाले (हिरण्य-वाशिभिः) सोने की कुठार हाथ में लिये (मरुद्भिः) मरुतों के साथ अग्नि को (सहः) बल के लिये (कण्वासः) हे ज्ञानियो ! (स्तुषे) प्रशंसा करो। "

इन मंत्रों में मरुतों के शस्त्र बिजुली जैसे चमकनेवाले, सोनेकी नकशी किये कुठार और भाले हैं। मरुतोंके सिर पर सोने के मुकुट हैं, श्वेत पोषाख किये हैं। और ये शक्ति के कामों के लिये प्रसिद्ध हैं. ऐसा वर्णन है।

सिर पर सोने के मुकुट, अथवा जरतारी के साफे हैं, सोने के भूषण हाथों में धारण किये हैं, सोने की नकशी के कुठार हाथों में धारण किये हैं। यह वर्णन मरुतों का है। इन्द्र के ये सैनिक हैं।

(सोभरिः काण्वः । सतो बृहती ।)

गोभिर्वाणो अज्यते सोभरीणां रथे कोशे हिरण्यये । गोबन्धवः सुजातास इषे भुजे महान्तो नः स्परसे नु ॥ (ऋ. ८-२०-८)

" (हिरण्यये रथे कोशे) सोनेके रथके बीचमें (सोभरीणां गीर्भिः) सोभरीयों की प्रशंसा के साथ (वाणः अज्यते) वाद्यात्मक बाद बजने लगा। (गो-बन्धवः) गौओं के भाई (सुजातासः) उत्तम जन्मे हुए, उत्तम कुल में जन्म जिन का हुआ है। अतः (महान्तः) बडे मरुत् (नः इषे भुजे) हमारे अन्न का भोग करने के लिये (स्परसे नु) शीघ्र आ जांय। "

यहां मरुतों को गौओं के भाई कहा है। गौओं के साथ इन का इतना सम्बन्ध है। इन की बहिनें गौवें हैं। ये मरुत् अपने रथ में वाद्यात्मक बाद बजाते हैं। वाण वाद्य १०० तारों का है और छोटे बीन जैसा बजाने का भी होता है।

औषधी ज्ञान।

(सोभरिः काण्वः । सतोबृहती ।)

विश्वं पश्यन्तो बिभृथा तनूष्वा तेना नो अधि वोचत । क्षमा रपो मरुत आतुरस्य न इष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥ (ऋ. ८।२०।२६)

" हे मरुतो ! [illegible] विश्वं पश्यन्तः [illegible]

" (ते शाकिनः सप्त सप्ताः) वे समर्थ सातसातों के संघ (एकं एकां शता ददुः) एक एक सौ दान देते रहे। (यमुनायां अधिश्रुतं) यमुना के तीर पर यह प्रसिद्ध है कि, (गव्यं राधः उद्मृजे) गौओं का धन दान में दिया और (अश्व्यं राधः निमृजे) घोडोंका धन दानमें दिया। "

इस में चार मार्गों का वर्णन है। मरुत् चारों मार्गों से यज्ञ के प्रति आते हैं, इन मार्गों में अन्तस्पथ अर्थात् भूमि के अन्दर का विवरमार्ग भी है। ये मरुत् गौओं और घोडों का दान देते हैं, इत्यादि बातें इन मंत्रों में मननीय हैं।

मरुतों का सामर्थ्य।

(श्यावाश्व आत्रेयः । जगती ।)

विद्युन्महसो नरो अश्मदिद्यवो
वातत्विषो मरुतः पर्वतच्युतः ।
अब्दया चिन्मुहुरा ह्रादुनीवृतः
स्तनयदमा रभसा उदोजसः ॥ ३ ॥

न स जीयते मरुतो न हन्यते
न स्रेधति न व्यथते न रिष्यति ।
नास्य राय उपदस्यन्ति नोतय
ऋषिं वा यं राजानं वा सुषूदथ ॥ ७ ॥

नियुत्वन्तो ग्रामजितो यथा नरो-
ऽर्यमणो न मरुतः कबन्धिनः ।
पिन्वन्त्युत्सं यदिनासो अस्वरन्
व्युन्दन्ति पृथिवीं मध्वो अन्धसा ॥ ८ ॥

(ऋ. ५।५४)

" हे (नरः मरुतः) नेता मरुत् (विद्युन्महसः) बिजुली के [illegible], (अश्म-दिद्यवः) पत्थर के समान [illegible], (वात-त्विषः) वायु के समान वेगवान, (पर्वत-च्युतः) पर्वतों को भी स्थान से भ्रष्ट करनेवाले, (अब्दया चित् मुहुः आ) पानी देने की अर्थात् वृष्टि [illegible] करनेवाले, (ह्रादुनीवृतः) बिजुली को [illegible], (स्तनयद्-अमाः) गर्जना में भी जिन [illegible] होते हैं ऐसे वे मरुत् (रभसा उद् [illegible]) [illegible] से युक्त हैं। "

" हे मरुतो ! ([illegible]) ऋषिको वा यं राजानं वा [illegible] जिस [illegible] को तुम सुरक्षित [illegible] करते हो, वह (न सः जीयते) पराजित नहीं होता, (न हन्यते) न मारा जाता, (न स्रेधति) न पीछे हटता है, (न व्यथते) पीडित नहीं होता और (न रिष्यति) नाश को प्राप्त नहीं होता। (अस्य रायः न उपदस्यन्ति) इसके धन क्षीण नहीं होते, (न ऊतयः) न उसकी रक्षाएं कम होती हैं। "

" (यथा ग्रामजितः नरः) जैसे नगर को जीतनेवाले नेतालोग गर्व से चलते हैं, वैसे (नियुत्वतः) घोडों पर सवार हुए ये मरुत् (अर्यमणः कबन्धिनः) सूर्य के समान तेजस्वी होकर जल देने लगते हैं। (इनासः) ये स्वामी (यत् अस्वरन्) जब शब्द करते हुए (उत्सं पिन्वन्ति) हौज को जल से भर देते हैं, तब (मध्वः अन्धसा) मधुर जल से (पृथिवीं व्युंदन्ति) पृथ्वी को भर देते हैं। "

मरुत् विजयी वीर हैं। सर्वत्र (क-बन्धिनः) ये पानी का प्रबन्ध सुरक्षित रखते हैं। (मध्वः अन्धसा) मधुर अन्न का प्रबन्ध भी सुरक्षित रखते हैं। अन्न और जल का प्रबन्ध सुरक्षित रखने के कारण इनका विजय होता है। सैनिकों का विजय पेट की पूर्ति से होता है। पाठक विजय का यह कारण अवश्य देखें और अपने सैनिकों के प्रबंध में ऐसी सुव्यवस्था रखें।

(कण्वो घौरः । बृहती ।)

परा ह यत् स्थिरं हथ नरो वर्तयथा गुरु।
वि याथन वनिनः पृथिव्याः व्याशा पर्वतानाम् ॥
(ऋ. १।३९)

" हे (नरः) शूर नेताओ ! (यत् स्थिरं परा हथ) जो स्थावर पदार्थ है, उसको तुम तोड देते हो, और (गुरु वर्तयथाः) जो बडा भारी पदार्थ हो, उसको तुम हिलाते हो, (पृथिव्याः वनिनः वि याथन) पृथ्वी पर के बडे वृक्षों को तुम उखाड देते हो और (पर्वतानां आशाः वि) पर्वतों को फाडते हो। "

शूर सैनिक स्थिर पदार्थों को अपने मार्ग से हटा देते हैं, बडे भारी पदार्थों को तोडकर चूर्ण करते हैं, वनों में बडे बडे वृक्षों को तोडकर वहां उत्तम मार्ग बनाते हैं और पर्वतों को भी फाडकर बीच में से मार्ग निकालते हैं। अर्थात् शूरों को किसी का प्रतिबंध नहीं होता। शूरों को सब मार्ग खुले रहते हैं।

(कण्वो घौरः। सतोबृहती।)

नहि वः शत्रुर्विविदे अधि द्यवि न भूम्यां रिशादसः। युष्माकमस्तु तविषी तना युजा रुद्रासो नू चिदाधृषे ॥ ४ ॥ (ऋ. १।३९)

" हे (रिशादसः) शत्रु का नाश करनेवाले मरुतो ! (अधि द्यवि) द्युलोक में (वः शत्रुः न विविदे) आप के लिये कोई शत्रु नहीं है, (न भूम्यां) पृथ्वी पर भी आप के लिये कोई शत्रु नहीं है। हे (रुद्रासः) शत्रु को रुलानेवाले मरुतो ! (युष्माकं युजा) आप की संघटना से (आधृषे) शत्रु पर आक्रमण करने के लिये (तना तविषी अस्तु) विस्तृत सामर्थ्य आपके पास हो। "

आप के सामने ठहरनेवाला कोई शत्रु नहीं है और आप का परस्पर आपस का संगठन ऐसा है कि, आप शत्रु पर हमला करते हैं और शत्रु को रुला देते हैं।

(पुनर्वत्सः काण्वः। गायत्री।)

वि वृत्रं पर्वशो ययुः वि पर्वताँ अराजिनः।
चक्राणा वृष्णि पौंस्यम् ॥ २३ ॥
अनु त्रितस्य युध्यतः शुष्ममावन्नुत क्रतुम्।
अन्विन्द्रं वृत्रतूर्ये ॥ २४ ॥
विद्युद्धस्ता अभिद्यवः शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः।
शुभ्रा व्यञ्जत श्रिये ॥ २५ ॥
आ नो मखस्य दावनेऽश्वैर्हिरण्यपाणिभिः।
देवास उप गन्तन ॥ २६ ॥
सहो षु णो वज्रहस्तैः कण्वासो अग्निं मरुद्भिः।
स्तुषे हिरण्यवाशीभिः ॥ ३२ ॥ (ऋ. ८-७)

" (अ-राजिनः) राजाको न माननेवाले, अराजक (वृष्णि पौंस्यं चक्राणा) बल के साथ पराक्रम करनेवाले मरुत् (वृत्रं पर्वशः विययुः) वृत्र को जोडजोड में काटते रहे॥ (युध्यतः त्रितस्य) युद्ध करनेवाले त्रितका (शुष्मं अनु आवन्) बल बढाया (उत क्रतुं) और कर्म की शक्ति भी बढायी और (वृत्रतूर्ये इंद्रं अनु) वृत्र के युद्ध में इन्द्र की रक्षा की॥ (अभिद्यवः विद्युद्-हस्ताः) तेजस्वी बिजली जैसा शस्त्र हाथ में लेकर खडे हुए मरुत् (हिरण्ययीः शिप्राः) सोनेके शिरस्त्राण (शीर्षन्) सिर पर धारण करते हैं, (शुभ्राः श्रिये व्यंजते) जो (शुभ्राः) शोभासे चमकते हैं। हे (देवासः) देव मरुतो ! (नः मखस्य दावने) हमारे यज्ञ के प्रति तुम (हिरण्यपाणिभिः अश्वैः) सोने के आभूषणों से युक्त घोडों के साथ (उप आगन्तन) आओ। (वज्रहस्तैः) वज्र हाथ में धारण करनेवाले (हिरण्यवाशीभिः) सोने की कुठार हाथ में लिये (मरुद्भिः) मरुतों के साथ अग्नि की भी (सहः) बल के लिये (कण्वासः) हे ज्ञानियो ! (स्तुषे) प्रशंसा करो। "

इन मंत्रों में मरुतों के शस्त्र बिजुली जैसे चमकनेवाले, सोनेकी नकशी किये कुठार और भाले हैं। मरुतोंके सिर पर सोने के मुकुट हैं, श्वेत पोषाख किये हैं। और ये शान्ति के कामों के लिये प्रसिद्ध हैं, ऐसा वर्णन है।

सिर पर सोने के मुकुट, अथवा जरतारी के साफे हैं, सोने के भूषण हाथों में धारण किये हैं, सोने की नकशी के कुठार हाथों में धारण किये हैं। यह वर्णन मरुतों का है। इन्द्र के ये सैनिक हैं।

(सोभरिः काण्वः। सतो बृहती।)

गोभिर्वाणो अज्यते सोभरीणां रथे कोशे हिरण्यये। गोबन्धवः सुजातास इषे भुजे महान्तो नः स्परसे नु ॥ (ऋ. ८-२०-८)

"(हिरण्यये रथे कोशे) सोनेके रथके बीचमें (सोभरीणां गीर्भिः) सोभरीयों की प्रशंसा के साथ (वाणः अज्यते) वाणनामक वाद्य बजने लगा। (गो-बन्धवः) गौओं के भाई (सुजातासः) उत्तम जन्मे हुए, उत्तम कुल में जन्म जिन का हुआ है। अतः (महान्तः) बडे मरुत् (नः इषे भुजे) हमारे अन्न का भोग करने के लिये (स्परसे नु) शीघ्र आ जांय। "

यहां मरुतों को गौओं के भाई कहा है। गौओं के साथ इन का इतना सम्बन्ध है। इन की बहिनें गौवें हैं। ये मरुत् अपने रथ में वाण नामक वाद्य बजाते हैं। वाण वाद्य १०० तारों का है और छोटे ढोल जैसा चमडे का भी होता है।

औषधी ज्ञान।

(सोभरिः काण्वः। सतोबृहती।)

विश्वं पश्यन्तो बिभृथा तनूष्वा तेना नो अधि वोचत। क्षमा रपो मरुत आतुरस्य न इष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥ (ऋ. ८।२०।२६)

" हे मरुतो ! (विश्वं पश्यन्तः) सब कुछ जाननेवाले

आप (नः तनूषु) हमारे शरीरों के पास (भिषजः) औषध ले आओ और (तेन अधि वोचत) उस से हमें नीरोग होने का उपदेश करो। (नः आतुरस्य) हमारे में जो रोगी हो, उस के पास से (रपः क्षमा) रोग दूर करो और (विह्रुतं पुनः इष्कर्त) टूटे हुए अवयवों को फिर निर्दोष करो।"

मरुत् सैनिक हैं, पर वे औषधिविद्या को जानते हैं, जखमियों की सेवा करना उन को मालूम है, सैनिकों को नीरोग रहने के लिये जो सावधानी रखनी चाहिये, वह भी उन को मालूम है। सैनिकों को दवाइयों का थोडा ज्ञान चाहिये।

(गोतमो राहूगणः। जगती।)

उपह्वरेषु यदचिध्वं ययिं
वय इव मरुतः केनचित् पथा।
श्चोतन्ति कोशा उप वो रथेष्वा
घृतमुक्षता मधुवर्णमर्चते॥२॥
प्रैषामज्मेषु विथुरेव रेजते
भूमिर्यामेषु यद्ध युञ्जते शुभे।
ते क्रीळयो धुनयो भ्राजदृष्टयः
स्वयं महित्वं पनयंत धूतयः॥३॥ (१।८७)

"हे (मरुतः) मरुतो! (वयः इव) पक्षियोंके समान (केन चित् पथा) जिस चाहे उस मार्ग से (उपह्वरेषु) आकाश में (यत्) जब (ययिं अचिध्वं) गमनमार्ग निश्चित करते हैं, तब (वः रथेषु) आप के रथों में (कोशाः उप आ श्चोतन्ति) खजाने खुले होते हैं और आप (अर्चते) उपासक के लिये (मधुवर्णं घृतं) शुद्ध घी (उक्षता) सींचते हैं।"

"(यत् ह) जब मरुत (शुभे युञ्जते) शोभाके लिये रथ जोतते हैं, तब (एषां) इन के (अज्मेषु यामेषु) घुडदौड के गमनों से (भूमिः) भूमि (विथुरा इव) पति से वियुक्त स्त्री के समान (रेजते) कांपती रहती है। ये मरुत् (क्रीळयः) खेलों में प्रवीण (धुनयः) हिलानेवाले (भ्राजत्-ऋष्टयः) चमकनेवाले भाले धारण करनेवाले (धूतयः) चलानेवाले (स्वयं महित्वं) अपना ही महत्व स्वयं (पनयन्त) व्यवहार से बताते हैं।"

इन मंत्रों के वर्णन से स्पष्ट है कि, आकाश में जिस राह से उस मार्ग से जानेवाले मरुतों के विमान पक्षियों जैसे भ्रमण करते हैं। तथा इन के वाहन जब भूमि पर से घूमने लगते हैं, तब भूमि कांपने लगती है। यह वर्णन नदी मार्गों का है और निःसंदेह विमानों का है, पक्षी जैसे जो आकाश में घूमते हैं। ये निःसंदेह विमान ही हैं।

वीरता और धन।

(गृत्समदः शौनकः। जगती।)

तं वः शर्धं मारुतं सुम्नयुर्गिरा
उपब्रुवे नमसा दैव्यं जनम्।
यथा रयिं सर्ववीरं नशामहा
अपत्यसाचं श्रुत्यं दिवेदिवे॥ (ऋ. २।३०।११)

"हे मरुतो! मैं (सुम्नयुः) सुख की इच्छा करनेवाला उपासक (तं वः मारुतं शर्धं) उस आप के मरुत्समूह-रूपी बल को तथा (दैव्यं जनं) दिव्य जनों को (नमसा गिरा) प्रणाम से और वाणी से (उप ब्रुवे) प्रशंसित करते हैं। हमें (दिवे दिवे) प्रतिदिन (सर्ववीरं) सब वीरों से युक्त (अपत्यसाचं) संतानों से युक्त और (श्रुत्यं) यश से युक्त (रयिं) धन (नशामहै) प्राप्त हो।"

धन ऐसा चाहिये कि, जिस के साथ हमें वीरता, संतान और यश मिले। वीरता के बिना धन मिलना असंभव है और सुरक्षित रखना भी असंभवही है।

मरुतों के विशेषणों का विचार।

अब मरुत्सूक्तों में जो विशेषण प्रयुक्त हुए हैं, उन का विचार करते हैं, यहां विचारार्थ थोडेसे ही विशेषण लिये हैं और इन के स्थान के निर्देश पाठक सूची में देख सकते हैं, इस लिये यहां दिये नहीं हैं—

भाई मरुत्।

ये मरुत् आपस में समान भाई हैं, न इन में (अज्येष्ठासः) कोई बडा है, न इनमें कोई (अमध्यमासः) मध्यम है और न इनमें कोई (अकनिष्ठासः) कनिष्ठ है, (अचरमाः) नीच भी इन में कोई नहीं है, तथापि गुणों से ये (ज्येष्ठासः) श्रेष्ठ हैं, और (वृद्धाः) गुणों से ये बडे भी हैं। ये (अन्-आनताः) किसीके सामने नमते भी नहीं, उग्र वृत्ति से रहते हैं, ये (सु जातासः) कुलीन हैं और ये सब मरुत् आपसमें (भ्रातरः) भाई भाई हैं। ये आपस में परस्पर भाई ही अपने आप को कहते हैं।

जनता के सेवक।

मरुत् (नृ-साचः) जनता की सेवा करनेवाले हैं, (नरः, वीराः) ये नेता हैं, वीर हैं, जनता की (त्रातारः) रक्षा करनेवाले हैं। ये (मानुषासः, विश्वकृष्टयः) मनुष्य हैं, सब मानव ही मरुत हैं। ये (अद्वेषः) किसी का द्वेष नहीं करते, (अमवन्तः) ये बलवान् होते हैं। ये (घोरवर्पसः) बडे शरीरवाले होते हैं और (पूत-दक्षसः) पवित्र कार्यों में अपने बल का अर्पण करनेवाले होते हैं।

ये (प्रक्रीडिनः) विनोद खेलनेवाले अथवा खेलों में प्रेम रखनेवाले हैं, (अदाभ्याः) ये कभी दबे नहीं जाते और (अधृष्टासः) कोई इनको डर भी नहीं बता सकता।

ये मरुत् (अच्युता ओजसा प्रच्यावयंतः) स्वयं अपने स्थान से भ्रष्ट नहीं होते, पर अपनी शक्ति से सब शत्रुओं को स्थानभ्रष्ट करते हैं।

गोसेवा करनेवाले।

मरुत् (गो-मातरः, पृश्निमातरः, पृश्नेः पुत्राः) गौ को माता माननेवाले, भूमि को माता माननेवाले, मातृभूमि की सेवा करनेवाले हैं, (गो-बंधवः) गौ के भाई जैसे ये वर्तते हैं।

घोडे पास रखते हैं।

मरुत् वीर (अश्वयुजः) घोडों को अपने रथों को जोतनेवाले होते हैं, तथा (स्वश्वाः) उत्तम घोडोंवाले, (अरुणाश्वाः रोहितः) लाल रंगोवाले घोडों को पास रखनेवाले, (पृषतीः) धब्बोंवाले घोडोंसे युक्त, (आशवः) त्वरा से दौडनेवाले घोडों से युक्त, ([illegible]) भिन्न भिन्न घोडोंवाले ऐसे मरुतों के घोडों का वर्णन है। इसलिये मरुतों को (अनश्वाः) कहा है, यहां घोडों को अपने पास न रखनेवाले ऐसा अर्थ नहीं हो सकता, क्योंकि पूर्वोक्त विशेषणों से यह अर्थ सिद्ध है। इसलिये (अन-श्वासः) का अर्थ [illegible] घोडों को अपने पास न रखनेवाले, [illegible] पृथिवी से [illegible] अर्थ इस स्थान का करना योग्य है।

मरुतों का रथ।

मरुतों का रथ (हिरण्यरथाः, हिरण्ययाः) सोने का है, रथ के पहिये भी (हिरण्यचक्राः) सोने के हैं। ये रथ बडे (सुरथाः) सुंदर हैं, (सुखाः) अन्दर बैठने से सुख होता है, (विद्युन्मन्तः) बिजली की युक्ति इनके रथों में है। (ऋष्टिमंतः) शस्त्र इनके रथों पर होते हैं। (अश्वपर्णाः) घोडे ही इनके रथों के पंख हैं, अर्थात् अश्वशक्ति से ही ये रथ दौडते हैं। इस तरह इन के रथों का वर्णन है।

शत्रुनाश।

मरुतों के पास तेजस्वी शस्त्रास्त्र भरपूर हैं, इस के वर्णन पूर्वस्थान में आ गये हैं। इन शस्त्रों से ये (रिशादसः) शत्रु का नाश करते हैं और जनता की रक्षा करते हैं।

मरुतों के विशेषणों का विचार करने से इस तरह ज्ञात होता है।

स्वरूप।

मरुतों का स्वरूप अध्यात्म में 'प्राण' है, अधिदैवत में 'वायु' है और अधिभूत अर्थात् मानवों में 'वीर' हैं अतः मरुतों के मंत्रों में 'प्राण, वीर, और वायु' के वर्णन हम देखते हैं।

प्रचण्ड वायु, आंधी, तूफान, मेघ, बिजली, वृष्टि आदि का वर्णन मरुतों के सूक्तों में है, पर वह इस तरह से है कि, जिसके वीरों का ही वह है, ऐसा प्रतीत होता है। अध्यात्म, अधिभूत और अधिदैवत में [illegible] मरुतों का वर्णन इन सूक्तों में है [illegible], वीर और वायु का वर्णन इन सूक्तों में [illegible] प्रतीत होता है [illegible] इन सूक्तों का विचार करें और [illegible] लाभ उठावें।

औंध (जि॰ सातारा) [illegible] } श्रीपाद दामोदर सातवळेकर
[illegible] } [illegible] स्वाध्याय मण्डल,

मरुद्देवता की विषयसूची ।

[illegible]

सिन्धुः पृश्नी वा आङ्गिरसः ।	३९५–४०६	२६
स्यूमरश्मिर्भार्गवः ।	४०७–४२२	२७
[illegible] ।	४२३–४२८	२८
श्यावाश्व आत्रेयः ।	४२९	,,
तथा ।	४३०–४३३	,,
अगस्त्यः ।	४३४–४३६	२९
[illegible] ।	४३७–४३९	,,
[illegible] ।	४४०–४४६	,,
[illegible] ।	४४७	३०

मरुत्सहचारी देवगणः ।

(१) मरुद्भिर्विष्णुः । वसुश्रुत आत्रेयः ।	४४८	,,
(२) मरुतोऽग्नामरुतौ वा । श्यावाश्व आत्रेय	४४९–४५६	,,
(३) सोमो मरुतः । अगस्त्यः ।	४५७	३१
(४) [illegible] । अगस्त्यः ।	४५८	,,
(५) [illegible] । अगस्त्यः ।	४५९–४६४	३१

मरुद्देवता की सूचियाँ ।

१ पुनरुक्त-मन्त्रभागाः ।	पृ० ३५–३६
[illegible]	[illegible]

—[illegible]—

दैवत-संहिता ।

[ऋग्यजुःसामाथर्वणां संहितानां सर्वान् मन्त्रान् दैवतानुसारेण संगृह्य निर्मिता ।]

४ मरुद्देवता ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।६।४,६,८,९)

(१-४) मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । गायत्री ।

आदह स्वधामनु पुनर्गर्भत्वमेरिरे । दधाना नाम यज्ञियम् ४
देवयन्तो यथा मतिमच्छा विदद्वसुं गिरः । महामनूषत श्रुतम् ६
अनवद्यैरभिद्युभिर्मखः सहस्वदर्चति । गणैरिन्द्रस्य काम्यैः ८
अतः परिज्मन्ना गहि दिवो वा रोचनादधि । समस्मिन्नृञ्जते गिरः ९

॥ २ ॥ (ऋ० १।१५।२)

(५) मेधातिथिः काण्वः । गायत्री ।

मरुतः पिबत ऋतुना पोत्राद्यज्ञं पुनीतन । यूयं हि ष्ठा सुदानवः २

॥ ३ ॥ (ऋ० १।३७।१-१५)

(६-२०) कण्वो घौरः । गायत्री ।

क्रीळं वः शर्धो मारुतमनर्वाणं रथेशुभम् । कण्वा अभि प्र गायत १
ये पृषतीभिरृष्टिभिः साकं वाशीभिरञ्जिभिः । अजायन्त स्वभानवः २
इहेव शृण्व एषां कशा हस्तेषु यद्वदान् । नि यामञ्चित्रमृञ्जते ३
प्र वः शर्धाय घृष्वये त्वेषद्युम्नाय शुष्मिणे । देवत्तं ब्रह्म गायत ४
प्र शंसा गोष्वघ्न्यं क्रीळं यच्छर्धो मारुतम् । जम्भे रसस्य वावृधे ५
को वो वर्षिष्ठ आ नरो दिवश्च ग्मश्च धूतयः । यत्सीमन्तं न धूनुथ ६
नि वो यामाय मानुषो दध्र उग्राय मन्यवे । जिहीत पर्वतो गिरिः ७
येषामज्मेषु पृथिवी जुजुर्वाँ इव विश्पतिः । भिया यामेषु रेजते ८

स्थिरं हि जानमेषां वयो मातुर्निरेतवे । यत् सीमनु द्विता शवः ९
उदु त्ये सूनवो गिरः काष्ठा अज्मेष्वत्नत । वाश्रा अभिज्ञु यातवे १०
त्यं चिद् घा दीर्घं पृथुं मिहो नपातममृध्रम् । प्र च्यावयन्ति यामभिः ११
मरुतो यद्ध वो बलं जनाँ अचुच्यवीतन । गिरीँरचुच्यवीतन १२
यद्ध यान्ति मरुतः सं ह ब्रुवतेऽध्वन्ना । शृणोति कश्चिदेषाम् १३
प्र यात शीभमाशुभिः सन्ति कण्वेषु वो दुवः । तत्रो षु मादयाध्वै १४
अस्ति हि ष्मा मदाय वः स्मसि ष्मा वयमेषाम् । विश्वं चिदायुर्जीवसे १५

॥ ४ ॥ (ऋ० १।३८।१-१५)

कद्ध नूनं कधप्रियः पिता पुत्रं न हस्तयोः । दधिध्वे वृक्तबर्हिषः १
क्व नूनं कद् वो अर्थं गन्ता दिवो न पृथिव्याः । क्व वो गावो न रण्यन्ति २
क्व वः सुम्ना नव्यांसि मरुतः क्व सुविता । क्वो३ विश्वानि सौभगा ३
यद् यूयं पृश्निमातरो मर्तासः स्यातन । स्तोता वो अमृतः स्यात् ४
मा वो मृगो न यवसे जरिता भूदजोष्यः । पथा यमस्य गादुप ५
मो षु णः परापरा निर्ऋतिर्दुर्हणा वधीत् । पदीष्ट तृष्णया सह ६
सत्यं त्वेषा अमवन्तो धन्वञ्चिदा रुद्रियासः । मिहं कृण्वन्त्यवाताम् ७
वाश्रेव विद्युन्मिमाति वत्सं न माता सिषक्ति । यदेषां वृष्टिरसर्जि ८
दिवा चित् तमः कृण्वन्ति पर्जन्येनोदवाहेन । यत् पृथिवीं व्युन्दन्ति ९
अध स्वनान्मरुतां विश्वमा सद्म पार्थिवम् । अरेजन्त प्र मानुषाः १०
मरुतो वीळुपाणिभिश्चित्रा रोधस्वतीरनु । यातेमखिद्रयामभिः ११
स्थिरा वः सन्तु नेमयो रथा अश्वास एषाम् । सुसंस्कृता अभीशवः १२
अच्छा वदा तना गिरा जरायै ब्रह्मणस्पतिम् । अग्निं मित्रं न दर्शतम् १३
मिमीहि श्लोकमास्ये पर्जन्य इव ततनः । गाय गायत्रमुक्थ्यम् १४
वन्दस्व मारुतं गणं त्वेषं पनस्युमर्किणम् । अस्मे वृद्धा असन्निह १५

॥ ५ ॥ (ऋ० १।३९।१-१०)

[illegible] विषमा बृहती, (समा) सतो बृहती)।

प्र यदित्था परावतः शोचिर्न मानमस्यथ ।
कस्य क्रत्वा मरुतः कस्य वर्पसा कं याथ कं ह धूतयः १
स्थिरा वः सन्त्वायुधा पराणुदे वीळू उत प्रतिष्कभे ।
युष्माकमस्तु तविषी पनीयसी मा मर्त्यस्य मायिनः २

परा ह यत् स्थिरं हथ नरो वर्तयथा गुरु ।
वि याथन वनिनः पृथिव्या व्याशाः पर्वतानाम् ३
नहि वः शत्रुर्विविदे अधि द्यवि न भूम्यां रिशादसः ।
युष्माकमस्तु तविषी तना युजा रुद्रासो नू चिदाधृषे ४
प्र वेपयन्ति पर्वतान् वि विञ्चन्ति वनस्पतीन् ।
प्रो आरत मरुतो दुर्मदा इव देवासः सर्वया विशा ५ ४०
उपो रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं प्रष्टिर्वहति रोहितः ।
आ वो यामाय पृथिवी चिदश्रो दबीभयन्त मानुषाः ६
आ वो मक्षू तनाय कं रुद्रा अवो वृणीमहे ।
गन्ता नूनं नोऽवसा यथा पुरे त्था कण्वाय बिभ्युषे ७
युष्मेषितो मरुतो मर्त्येषित आ यो नो अभ्व ईषते ।
वि तं युयोत शवसा व्योजसा वि युष्माकाभिरूतिभिः ८
असामि हि प्रयज्यवः कण्वं दद प्रचेतसः ।
असामिभिर्मरुत आ न ऊतिभि र्गन्ता वृष्टिं न विद्युतः ९
असाम्योजो बिभृथा सुदानवो ऽसामि धूतयः शवः ।
ऋषिद्विषे मरुतः परिमन्यव इषुं न सृजत द्विषम् १० ४५

॥ ६ ॥ (ऋ० ८।७।१-३६)
(४६-८१) पुनर्वत्सः काण्वः । गायत्री ।

प्र यद् वस्त्रिष्टुभमिषं मरुतो विप्रो अक्षरत् । वि पर्वतेषु राजथ १
यदङ्ग तविषीयवो यामं शुभ्रा अचिध्वम् । नि पर्वता अहासत २
उदीरयन्त वायुभि र्वाश्रासः पृश्निमातरः । धुक्षन्त पिप्युषीमिषम् ३
वपन्ति मरुतो मिहं प्र वेपयन्ति पर्वतान् । यद् यामं यान्ति वायुभिः ४
नि यद् यामाय वो गिरि र्नि सिन्धवो विधर्मणे । महे शुष्माय येमिरे ५ ५०
युष्माँ उ नक्तमूतये युष्मान् दिवा हवामहे । युष्मान् प्रयत्यध्वरे ६
उदु त्ये अरुणप्सव श्चित्रा यामेभिरीरते । वाश्रा अधि ष्णुना दिवः ७
सृजन्ति रश्मिमोजसा पन्थां सूर्याय यातवे । ते भानुभिर्वि तस्थिरे ८
इमां मे मरुतो गिर मिमं स्तोममृभुक्षणः । इमं मे वनता हवम् ९
त्रीणि सरांसि पृश्नयो दुदुह्रे वज्रिणे मधु । उत्सं कवन्धमुद्रिणम् १० ५५
मरुतो यद्ध वो दिवः सुम्नायन्तो हवामहे । आ तू न उप गन्तन ११ ५६

[illegible] । उत प्रवेनसो मही १२
[illegible] । इर्वेतो मरुतो दिवः १३
[illegible] । मुद्रानिमेन्द्रस्य इन्दुभिः १४
[illegible] । आ शीभ्यस्मु मन्मभिः १५
[illegible] । तस्मै सुरन्तो आक्षितम् १६
[illegible] । उत स्तोभिः पृश्निमातरः १७
[illegible] । [illegible] भीमति १८
[illegible] । [illegible] मन्मभिः १९
[illegible] । [illegible] सपर्यति २०
[illegible] । [illegible] जिनोष २१
[illegible] २२
[illegible] २३
[illegible] २४
[illegible] २५
[illegible] २६
[illegible] २७
[illegible] २८
[illegible] २९
[illegible] ३०
[illegible] ३१
[illegible] ३२
[illegible] ३३
[illegible] ३४
[illegible] ३५
[illegible] ३६

वीळुपविभिर्मरुत ऋभुक्षण आ रुद्रासः सुदीतिभिः।
इषा नो अद्या गता पुरुस्पृहो यज्ञमा सोभरीयवः २
विद्मा हि रुद्रियाणां शुष्ममुग्रं मरुतां शिमीवताम्। विष्णोरेषस्य मीळ्हुषाम् ३
वि द्वीपानि पापतन् तिष्ठद् दुच्छुनो-भे युजन्त रोदसी।
प्र धन्वान्यैरत शुभ्रखादयो यदेजथ स्वभानवः ४ ८५
अच्युता चिद् वो अज्मन्ना नानदति पर्वतासो वनस्पतिः। भूमिर्यामेषु रेजते ५
अमाय वो मरुतो यातवे द्यौ-र्जिहीत उत्तरा बृहत्।
यत्रा नरो देदिशते तनू-ष्वा त्वक्षांसि बाह्वोजसः ६
स्वधामनु श्रियं नरो महि त्वेषा अमवन्तो वृषप्सवः। वहन्ते अह्रुतप्सवः ७
गोभिर्वाणो अज्यते सोभरीणां रथे कोशे हिरण्यये।
गोबन्धवः सुजातास इषे भुजे महान्तो नः स्परसे नु ८
प्रति वो वृषदञ्जयो वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वम्। हव्या वृषप्रयाव्णे ९ ९०
वृषणश्वेन मरुतो वृषप्सुना रथेन वृषनाभिना।
आ श्येनासो न पक्षिणो वृथा नरो हव्या नो वीतये गत १०
समानमञ्ज्येषां वि भ्राजन्ते रुक्मासो अधि बाहुषु। दविद्युतत्यृष्टयः ११
त उग्रासो वृषण उग्रबाहवो नकिष्टनूषु येतिरे।
स्थिरा धन्वान्यायुधा रथेषु वो ऽनीकेष्वधि श्रियः १२
येषामर्णो न सप्रथो नाम त्वेषं शश्वतामेकमिद् भुजे। वयो न पित्र्यं सहः १३
तान् वन्दस्व मरुतस्ताँ उप स्तुहि तेषां हि धुनीनाम्।
अराणां न चरमस्तदेषां दाना मह्ना तदेषाम् १४ ९५
सुभगः स व ऊति-ष्वास पूर्वासु मरुतो व्युष्टिषु। यो वा नूनमुतासति १५
यस्य वा यूयं प्रति वाजिनो नर आ हव्या वीतये गथ
अभि ष द्युम्नैरुत वाजसातिभिः सुम्ना वो धूतयो नशत् १६
यथा रुद्रस्य सूनवो दिवो वशन्त्यसुरस्य वेधसः। युवानस्तथेदसत् १७
ये चार्हन्ति मरुतः सुदानवः स्मन्मीळ्हुषश्चरन्ति ये।
अतश्चिदा न उप वस्यसा हृदा युवान आ ववृध्वम् १८
यून ऊ षु नविष्ठया वृष्णः पावकाँ अभि सोभरे गिरा। गाय गा इव चर्कृषत् १९ १००
साहा ये सन्ति मुष्टिहेव हव्यो विश्वासु पृत्सु होतृषु।
वृष्णश्चन्द्रान्न सुश्रवस्तमान् गिरा वन्दस्व मरुतो अह २० १०१

गावश्चिद् घा समन्यवः सजात्येन मरुतः सबन्धवः । रिहते ककुभो मिथः २१
मर्तश्चिद् वो नृतवो रुक्मवक्षस उप भ्रातृत्वमायति ।
अधि नो गात मरुतः सदा हि व आपित्वमस्ति निध्रुवि २२
मरुतो मारुतस्य न आ भेषजस्य वहता सुदानवः । यूयं सखायः सप्तयः २३
याभिः सिन्धुमवथ याभिस्तूर्वथ याभिर्दशस्यथा क्रिविम् ।
मयो नो भूतोतिभिर्मयोभुवः शिवाभिरसचद्विषः २४ १०५
यत् सिन्धौ यदसिक्न्यां यत् समुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः । यत् पर्वतेषु भेषजम् २५
विश्वं पश्यन्तो बिभृथा तनूष्वा तेना नो अधि वोचत ।
क्षमा रपो मरुत आतुरस्य न इष्कर्ता विह्रुतं पुनः २६ १०७

॥ ८ ॥ (ऋ० १।६४।१-१५)

(१०८-१२२) नोधा गौतमः । जगती, १५ त्रिष्टुप् ।

वृष्णे शर्धाय सुमखाय वेधसे नोधः सुवृक्तिं प्र भरा मरुद्भ्यः ।
अपो न धीरो मनसा सुहस्त्यो गिरः समञ्जे विदथेष्वाभुवः १
ते जज्ञिरे दिव ऋष्वास उक्षणो रुद्रस्य मर्या असुरा अरेपसः
पावकासः शुचयः सूर्या इव सत्वानो न द्रप्सिनो घोरवर्पसः २
युवानो रुद्रा अजरा अभोग्घनो ववक्षुरध्रिगावः पर्वता इव ।
दृळ्हा चिद् विश्वा भुवनानि पार्थिवा प्र च्यावयन्ति दिव्यानि मज्मना ३ ११०
चित्रैरञ्जिभिर्वपुषे व्यञ्जते वक्षःसु रुक्माँ अधि येतिरे शुभे ।
अंसेष्वेषां नि मिमृक्षुरृष्टयः साकं जज्ञिरे स्वधया दिवो नरः ४
ईशानकृतो धुनयो रिशादसो वातान् विद्युतस्तविषीभिरक्रत ।
दुहन्त्यूधर्दिव्यानि धूतयो भूमिं पिन्वन्ति पयसा परिज्रयः ५
पिन्वन्त्यपो मरुतः सुदानवः पयो घृतवद् विदथेष्वाभुवः ।
अत्यं न मिहे वि नयन्ति वाजिनमुत्सं दुहन्ति स्तनयन्तमक्षितम् ६
महिषासो मायिनश्चित्रभानवो गिरयो न स्वतवसो रघुष्यदः ।
मृगा इव हस्तिनः खादथा वना यदारुणीषु तविषीरयुग्ध्वम् ७
सिंहा इव नानदति प्रचेतसः पिशा इव सुपिशो विश्ववेदसः ।
क्षपो जिन्वन्तः पृषतीभिरृष्टिभिः समित् सबाधः शवसाहिमन्यवः ८ ११५
रोदसी आ वदता गणश्रियो नृषाचः शूराः शवसाहिमन्यवः ।
आ वन्धुरेष्वमतिर्न दर्शता विद्युन्न तस्थौ मरुतो रथेषु वः ९ ११६

विश्ववेदसो रयिभिः समोकसः　संमिश्लासस्तविषीभिर्विरप्शिनः ।
अस्तार इषुं दधिरे गभस्त्यो रनन्तशुष्मा वृषखादयो नरः　१०
हिरण्ययेभिः पविभिः पयोवृध　उज्जिघ्नन्त आपथ्यो न पर्वतान् ।
मखा अयासः स्वसृतो ध्रुवच्युतो　दुध्रकृतो मरुतो भ्राजदृष्टयः　११
घृषुं पावकं वनिनं विचर्षणिं　रुद्रस्य सूनुं हवसा गृणीमसि ।
रजस्तुरं तवसं मारुतं गण मृजीषिणं वृषणं सश्चत श्रिये　१२
प्र नू स मर्तः शवसा जनाँ अति　तस्थौ व ऊती मरुतो यमावत ।
अर्वद्भिर्वाजं भरते धना नृभि रापृच्छ्यं क्रतुमा क्षेति पुष्यति　१३　१२०
चर्कृत्यं मरुतः पृत्सु दुष्टरं　द्युमन्तं शुष्मं मघवत्सु धत्तन ।
धनस्पृतमुक्थ्यं विश्वचर्षणिं　तोकं पुष्येम तनयं शतं हिमाः　१४
नू ष्ठिरं मरुतो वीरवन्त मृतीषाहं रयिमस्मासु धत्त ।
सहस्रिणं शतिनं शूशुवांसं　प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात्　१५　१२२

१३॥ (ऋ० १।८५।१-१२)

(१२३-१३४) गोतमो राहूगणः । जगती; ५,१२ त्रिष्टुप् ।

प्र ये शुम्भन्ते जनयो न सप्तयो　यामन् रुद्रस्य सूनवः सुदंससः ।
रोदसी हि मरुतश्चक्रिरे वृधे　मदन्ति वीरा विदथेषु घृष्वयः　१
त उक्षितासो महिमानमाशत　दिवि रुद्रासो अधि चक्रिरे सदः ।
अर्चन्तो अर्कं जनयन्त इन्द्रिय मधि श्रियो दधिरे पृश्निमातरः　२
गोमातरो यच्छुभयन्ते अञ्जिभि स्तनूषु शुभ्रा दधिरे विरुक्मतः ।
बाधन्ते विश्वमभिमातिनमप　वर्त्मान्येषामनु रीयते घृतम्　३　१२५
वि ये भ्राजन्ते सुमखास ऋष्टिभिः　प्रच्यावयन्तो अच्युता चिदोजसा ।
मनोजुवो यन्मरुतो रथेष्वा　वृषव्रातासः पृषतीरयुग्ध्वम्　४
प्र यद्रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं　वाजे अद्रिं मरुतो रंहयन्तः ।
उतारुषस्य वि ष्यन्ति धारा श्चर्मेवोदभिर्व्युन्दन्ति भूम　५
आ वो वहन्तु सप्तयो रघुष्यदो　रघुपत्वानः प्र जिगात बाहुभिः ।
सीदता बर्हिरुरु वः सदस्कृतं　मादयध्वं मरुतो मध्वो अन्धसः　६
तेऽवर्धन्त स्वतवसो महित्वना　नाकं तस्थुरुरु चक्रिरे सदः ।
विष्णुर्यद्धावद्वृषणं मदच्युतं　वयो न सीदन्नधि बर्हिषि प्रिये　७　१२९

शूरा इवेद् युयुधयो न जग्मयः श्रवस्यवो न पृतनासु येतिरे ।
भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यो राजान इव त्वेषसंदृशो नरः ८ १३०
त्वष्टा यद् वज्रं सुकृतं हिरण्ययं सहस्रभृष्टिं स्वपा अवर्तयत् ।
धत्त इन्द्रो नर्यपांसि कर्तवे ऽहन् वृत्रं निरपामौब्जदर्णवम् ९
ऊर्ध्वं नुनुद्रेऽवतं त ओजसा दादृहाणं चिद् बिभिदुर्वि पर्वतम् ।
धमन्तो वाणं मरुतः सुदानवो मदे सोमस्य रण्यानि चक्रिरे १०
जिह्मं नुनुद्रेऽवतं तया दिशा ऽसिञ्चन्नुत्सं गोतमाय तृष्णजे ।
आ गच्छन्तीमवसा चित्रभानवः कामं विप्रस्य तर्पयन्त धामभिः ११
या वः शर्म शशमानाय सन्ति त्रिधातूनि दाशुषे यच्छताधि ।
अस्मभ्यं तानि मरुतो वि यन्त रयिं नो धत्त वृषणः सुवीरम् १२

॥ १० ॥ (ऋ० १।८६।१-१०) गायत्री ।

मरुतो यस्य हि क्षये पाथा दिवो विमहसः । स सुगोपातमो जनः १ १३५
यज्ञैर्वा यज्ञवाहसो विप्रस्य वा मतीनाम् । मरुतः शृणुता हवम् २
उत वा यस्य वाजिनो ऽनु विप्रमतक्षत । स गन्ता गोमति व्रजे ३
अस्य वीरस्य बर्हिषि सुतः सोमो दिविष्टिषु । उक्थं मदश्च शस्यते ४
अस्य श्रोषन्त्वा भुवो विश्वा यश्चर्षणीरभि । सूरं चित् सस्रुषीरिषः ५
पूर्वीभिर्हि ददाशिम शरद्भिर्मरुतो वयम् । अवोभिश्चर्षणीनाम् ६ १४०
सुभगः स प्रयज्यवो मरुतो अस्तु मर्त्यः । यस्य प्रयांसि पर्षथ ७
शशमानस्य वा नरः स्वेदस्य सत्यशवसः । विदा कामस्य वेनतः ८
यूयं तत् सत्यशवस आविष्कर्त महित्वना । विध्यता विद्युता रक्षः ९
गूहता गुह्यं तमो वि यात विश्वमत्रिणम् । ज्योतिष्कर्ता यदुश्मसि १०

॥ ११ ॥ (ऋ० १।८७।१-३) जगती ।

प्रत्वक्षसः प्रतवसो विरप्शिनो ऽनानता अविथुरा ऋजीषिणः ।
जुष्टतमासो नृतमासो अञ्जिभिर्व्यानज्रे के चिदुस्रा इव स्तृभिः १ १४५
उपह्वरेषु यदचिध्वं ययिं वय इव मरुतः केन चित् पथा ।
श्चोतन्ति कोशा उप वो रथेष्वा घृतमुक्षता मधुवर्णमर्चते २
प्रैषामज्मेषु विथुरेव रेजते भूमिर्यामेषु यद्ध युञ्जते शुभे ।
ते क्रीळयो धुनयो भ्राजदृष्टयः स्वयं महित्वं पनयन्त धूतयः ३ १४७

स हि स्वसृत् पृषदश्वो युवा गणो३ँ ऽया ईशानस्तविषीभिरावृतः ।
असि सत्य ऋणयावानेद्यो ऽस्या धियः प्राविताथा वृषा गणः ४
पितुः प्रत्नस्य जन्मना वदामसि सोमस्य जिह्वा प्र जिगाति चक्षसा ।
यदीमिन्द्रं शम्यृक्वाण आशता दिन्नामानि यज्ञियानि दधिरे ५
श्रियसे कं भानुभिः सं मिमिक्षिरे ते रश्मिभिस्त ऋक्वभिः सुखादयः ।
ते वाशीमन्त इष्मिणो अभीरवो विद्रे प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः ६ १५०

॥ १२ ॥ (ऋ० १।८८।१-६)-
(त्रिष्टुप्; १,६ प्रस्तारपंक्तिः, ५ विराड्रूपा)।

आ विद्युन्मद्भिर्मरुतः स्वर्कै रथेभिर्यात ऋष्टिमद्भिरश्वपर्णैः ।
आ वर्षिष्ठया न इषा वयो न पप्तता सुमायाः १
तेऽरुणेभिर्वरमा पिशङ्गैः शुभे कं यान्ति रथतूर्भिरश्वैः ।
रुक्मो न चित्रः स्वधितीवान् पव्या रथस्य जङ्घनन्त भूम २
श्रिये कं वो अधि तनूषु वाशीर्मेधा वना न कृणवन्त ऊर्ध्वा ।
युष्मभ्यं कं मरुतः सुजातास्तुविद्युम्नासो धनयन्ते अद्रिम् ३
अहानि गृध्राः पर्या व आगुरिमां धियं वार्कार्यां च देवीम् ।
ब्रह्म कृण्वन्तो गोतमासो अर्कैरूर्ध्वं नुनुद्र उत्सधिं पिबध्यै ४
एतत् त्यन्न योजनमचेति सस्वर्ह यन्मरुतो गोतमो वः ।
पश्यन् हिरण्यचक्रानयोदंष्ट्रान् विधावतो वराहून् ५ १५५
एषा स्या वो मरुतोऽनुभर्त्री प्रति ष्टोभति वाघतो न वाणी ।
अस्तोभयद् वृथासामनु स्वधां गभस्त्योः ६ १५६

॥ १३ ॥ (ऋ० १।१३९।८)
(१५७) परुच्छेपो दैवोदासिः । अत्यष्टिः ।

मो षु वो अस्मदभि तानि पौंस्या सना भूवन् द्युम्नानि मोत जारिषुरस्मत् पुरोत जारिषुः ।
यद् वश्चित्रं युगेयुगे नव्यं घोषादमर्त्यम् ।
अस्मासु तन्मरुतो यच्च दुष्टरं दिधृता यच्च दुष्टरम् ८ १५७

॥ १४ ॥ (ऋ० १।१६६।१-१५)
(१५८-१६७) अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । जगती; १४-१५ त्रिष्टुप् ।

तन्नु वोचाम रभसाय जन्मने पूर्वं महित्वं वृषभस्य केतवे ।
ऐधेव यामन् मरुतस्तुविष्वणो युधेव शक्रास्तविषाणि कर्तन १ १५८

नित्यं न सूनुं मधु बिभ्रत उप क्रीळन्ति क्रीळा विदथेषु घृष्वयः ।
नक्षन्ति रुद्रा अवसा नमस्विनं न मर्धन्ति स्वतवसो हविष्कृतम् २
[illegible]स्मा ऊमासो अमृता अरासत रायस्पोषं च हविषा ददाशुषे ।
उक्षन्त्यस्मै मरुतो हिता इव पुरू रजांसि पयसा मयोभुवः ३ १६०
आ ये रजांसि तविषीभिरव्यत प्र व एवासः स्वयतासो अध्रजन् ।
भयन्ते विश्वा भुवनानि हर्म्या चित्रो वो यामः प्रयतास्वृष्टिषु ४
[illegible] नदयन्त पर्वतान् दिवो वा पृष्ठं नर्या अचुच्यवुः ।
[illegible] अज्मन् भयते वनस्पती रथीयन्तीव प्र जिहीत ओषधिः ५
[illegible] अरिष्टग्रामाः सुमतिं पिपर्तन ।
[illegible] रिणाति पश्वः सुधितेव बर्हणा ६
[illegible] अलातृणासो विदथेषु सुष्टुताः ।
[illegible] विदुर्वीरस्य प्रथमानि पौंस्या ७
[illegible] पूर्भी रक्षता मरुतो यमावत ।
[illegible] पायथा शंसात् तनयस्य पुष्टिषु ८ १६५
[illegible] ।
[illegible] ९
[illegible] ।
[illegible] १०
[illegible] ।
[illegible] ११
[illegible] ।
[illegible] १२
[illegible] ।
[illegible] १३ १७०
[illegible] ।
[illegible] १४
[illegible] ।
[illegible] १५ १७२

॥ १५ ॥ (ऋ० १।१६७।२-११) त्रिष्टुभः (१० पुरस्ताज्ज्योतिः)।

आ नोऽवोभिर्मरुतो यान्त्वच्छा ज्येष्ठेभिर्वा बृहद्दिवैः सुमायाः ।
अध यदेषां नियुतः परमाः समुद्रस्य चिद् धनयन्त पारे २
मिम्यक्ष येषु सुधिता घृताची हिरण्यनिर्णिगुपरा न ऋष्टिः ।
गुहा चरन्ती मनुषो न योषा सभावती विदथ्येव सं वाक् ३
परा शुभ्रा अयासो यव्या साधारण्येव मरुतो मिमिक्षुः ।
न रोदसी अप नुदन्त घोरा जुषन्त वृधं सख्याय देवाः ४ १७९
जोषद् यदीमसुर्या सचध्यै विषितस्तुका रोदसी नृमणाः ।
आ सूर्येव विधतो रथं गात् त्वेषप्रतीका नभसो नेत्या ५
आस्थापयन्त युवतिं युवानः शुभे निमिश्लां विदथेषु पज्राम् ।
अर्को यद् वो मरुतो हविष्मान् गायद् गाथं सुतसोमो दुवस्यन् ६
प्र तं विविक्मि वक्म्यो य एषां मरुतां महिमा सत्यो अस्ति ।
सचा यदीं वृषमणा अहंयुः स्थिरा चिज्जनीर्वहते सुभागाः ७
पान्ति मित्रावरुणाववद्याच्चयत ईमर्यमो अप्रशस्तान् ।
उत च्यवन्ते अच्युता ध्रुवाणि वावृध ईं मरुतो दातिवारः ८
नही नु वो मरुतो अन्त्यस्मे आरात्ताच्चिच्छवसो अन्तमापुः ।
ते धृष्णुना शवसा शूशुवांसो ऽर्णो न द्वेषो धृषता परि ष्ठुः ९ १८०
वयमद्येन्द्रस्य प्रेष्ठा वयं श्वो वोचेमहि समर्ये ।
वयं पुरा महि च नो अनु द्यून् तन्न ऋभुक्षा नरामनु ष्यात् १०
एष वः स्तोमो मरुत इयं गीर्मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः ।
एषा यासीष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ११

॥ १६ ॥ (ऋ० १।१६८।१-१०) जगती: ८-१० त्रिष्टुप् ।

यज्ञायज्ञा वः समना तुतुर्वणिर्धियंधियं वो देवया उ दधिध्वे ।
आ वोऽर्वाचः सुविताय रोदस्योर्महे ववृत्यामवसे सुवृक्तिभिः १
वव्रासो न ये स्वजाः स्वतवस इषं स्वरभिजायन्त धूतयः ।
सहस्रियासो अपां नोर्मय आसा गावो वन्द्यासो नोक्षणः २
सोमासो न ये सुतास्तृप्तांशवो हृत्सु पीतासो दुवसो नासते ।
एषामंसेषु रम्भिणीव रारभे हस्तेषु खादिश्च कृतिश्च सं दधे ३ १८१
अव स्वयुक्ता दिव आ वृथा ययुरमर्त्याः कशया चोदत त्मना ।
अरेणवस्तुविजाता अचुच्यवुर्दृळ्हानि चिन्मरुतो भ्राजदृष्टयः ४ १८२

को वोऽन्तर्मरुत ऋष्टिविद्युतो रेजति त्मना हन्वेव जिह्वया ।
धन्वच्युत इषां न यामनि पुरुप्रैषा अहन्यो३ नैतशः ५
क्व स्विदस्य रजसो महस्परं क्वावरं मरुतो यस्मिन्नायय ।
यच्च्यावयथ विथुरेव संहितं व्यद्रिणा पतथ त्वेषमर्णवम् ६
सातिर्न वोऽमवती स्वर्वती त्वेषा विपाका मरुतः पिपिष्वती ।
भद्रा वो रातिः पृणतो न दक्षिणा पृथुज्रयी असुर्येव जञ्जती ७
प्रति ष्टोभन्ति सिन्धवः पविभ्यो यदभ्रियां वाचमुदीरयन्ति ।
अव स्मयन्त विद्युतः पृथिव्यां यदी घृतं मरुतः प्रुष्णुवन्ति ८ १९०
असूत पृश्निर्महते रणाय त्वेषमयासां मरुतामनीकम् ।
ते सप्सरासोऽजनयन्ताभ्व-मादित् स्वधामिषिरां पर्यपश्यन् ९
एष वः स्तोमो मरुत इयं गी-र्मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः ।
एषा यासीष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् १०

॥ १७ ॥ (ऋ० १।१७१।१-२) त्रिष्टुप् ।

प्रति व एना नमसाहमेमि सूक्तेन भिक्षे सुमतिं तुराणाम् ।
रराणता मरुतो वेद्याभि-र्नि हेळो धत्त वि मुचध्वमश्वान् १
एष वः स्तोमो मरुतो नमस्वान् हृदा तष्टो मनसा धायि देवाः ।
उपेमा यात मनसा जुषाणा यूयं हि ष्ठा नमस इद् वृधासः २

॥ १८ ॥ (१।१७२।१-३) गायत्री ।

चित्रो वोऽस्तु याम-श्चित्र ऊती सुदानवः । मरुतो अहिभानवः १ १९५
आरे सा वः सुदानवो मरुत ऋञ्जती शरुः । आरे अश्मा यमस्यथ २
तृणस्कन्दस्य नु विशः परि वृङ्क्त सुदानवः । ऊर्ध्वान् नः कर्त जीवसे ३

॥ १९ ॥ (ऋ० २।३०।११)

(१९८-२१३) गृत्समदः (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद् भार्गवः) शौनकः । जगती ।

तं वः शर्धं मारुतं सुम्नयुर्गिरो-प ब्रुवे नमसा दैव्यं जनम् ।
यथा रयिं सर्ववीरं नशामहा अपत्यसाचं श्रुत्यं दिवेदिवे ११

॥ २० ॥ (ऋ० २।३४।१-१५) जगती; १५ त्रिष्टुप् ।

धारावरा मरुतो धृष्ण्वोजसो मृगा न भीमास्तविषीभिरर्चिनः ।
अग्नयो न शुशुचाना ऋजीषिणो भृमिं धमन्तो अप गा अवृण्वत १ १९९

द्यावो न स्तृभिश्चितयन्त खादिनो व्यभ्रिया न द्युतयन्त वृष्टयः ।
रुद्रो यद्वो मरुतो रुक्मवक्षसो वृषाजनि पृश्न्याः शुक्र ऊधनि २ २००
उक्षन्ते अश्वाँ अत्याँ इवाजिषु नदस्य कर्णैस्तुरयन्त आशुभिः ।
हिरण्यशिप्रा मरुतो दविध्वतः पृक्षं याथ पृषतीभिः समन्यवः ३
पृक्षे ता विश्वा भुवना ववक्षिरे मित्राय वा सदमा जीरदानवः ।
पृषदश्वासो अनवभ्रराधस ऋजिप्यासो न वयुनेषु धूर्षदः ४
इन्धन्वभिर्धेनुभी रप्शदूधभिरध्वस्मभिः पथिभिर्भ्राजदृष्टयः ।
आ हंसासो न स्वसराणि गन्तन मधोर्मदाय मरुतः समन्यवः ५
आ नो ब्रह्माणि मरुतः समन्यवो नरां न शंसः सवनानि गन्तन ।
अश्वामिव पिप्यत धेनुमूधनि कर्ता धियं जरित्रे वाजपेशसम् ६
तं नो दात मरुतो वाजिनं रथ आपानं ब्रह्म चितयद्दिवेदिवे ।
इषं स्तोतृभ्यो वृजनेषु कारवे सनिं मेधामरिष्टं दुष्टरं सहः ७ २०५
यद्युञ्जते मरुतो रुक्मवक्षसोऽश्वान्रथेषु भग आ सुदानवः ।
धेनुर्न शिश्वे स्वसरेषु पिन्वते जनाय रातहविषे महीमिषम् ८
यो नो मरुतो वृकताति मर्त्यो रिपुर्दधे वसवो रक्षता रिषः ।
वर्तयत तपुषा चक्रियाभि तमव रुद्रा अशसो हन्तना वधः ९
चित्रं तद्वो मरुतो याम चेकिते पृश्न्या यदूधरप्यापयो दुहुः ।
यद्वा निदे नवमानस्य रुद्रियास्त्रितं जराय जुरतामदाभ्याः १०
तान्वो महो मरुत एवयाव्नो विष्णोरेषस्य प्रभृथे हवामहे ।
हिरण्यवर्णान्ककुहान्यतस्रुचो ब्रह्मण्यन्तः शंस्यं राध ईमहे ११
ते दशग्वाः प्रथमा यज्ञमूहिरे ते नो हिन्वन्तूषसो व्युष्टिषु ।
उषा न रामीररुणैरपोर्णुते महो ज्योतिषा शुचता गोअर्णसा १२ २१०
ते क्षोणीभिररुणेभिर्नाञ्जिभी रुद्रा ऋतस्य सदनेषु वावृधुः ।
निमेघमाना अत्येन पाजसा सुश्चन्द्रं वर्णं दधिरे सुपेशसम् १३
ताँ इयानो महि वरूथमूतय उप घेदेना नमसा गृणीमसि ।
त्रितो न यान्पञ्च होतॄनभिष्टय आववर्तदवराञ्चक्रियावसे १४
यया रध्रं पारयथात्यंहो यया निदो मुञ्चथ वन्दितारम् ।
अर्वाची सा मरुतो या व ऊतिरो षु वाश्रेव सुमतिर्जिगातु १५ २१३

को वोऽन्तर्मरुत ऋष्टिविद्युतो रेजति त्मना हन्वेव जिह्वया ।
धन्वच्युत इषां न यामनि पुरुप्रैषा अहन्यो३ नैतशः ५
क्व स्विदस्य रजसो महस्परं क्वावरं मरुतो यस्मिन्नायय ।
यच्च्यावयथ विथुरेव संहितं व्यद्रिणा पतथ त्वेषमर्णवम् ६
सातिर्न वोऽमवती स्वर्वती त्वेषा विपाका मरुतः पिपिष्वती ।
भद्रा वो रातिः पृणतो न दक्षिणा पृथुज्रयी असुर्येव जञ्जती ७
प्रति ष्टोभन्ति सिन्धवः पविभ्यो यदभ्रियां वाचमुदीरयन्ति ।
अव स्मयन्त विद्युतः पृथिव्यां यदी घृतं मरुतः प्रुष्णुवन्ति ८ १९०
असूत पृश्निर्महते रणाय त्वेषमयासां मरुतामनीकम् ।
ते सप्सरासोऽजनयन्ताभ्व—मादित् स्वधामिषिरां पर्यपश्यन् ९
एष वः स्तोमो मरुत इयं गी—र्मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः ।
एषा यासीष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् १०

॥ १७ ॥ (ऋ० १।१७१।१-२) त्रिष्टुप् ।

प्रति व एना नमसाहमेमि सूक्तेन भिक्षे सुमतिं तुराणाम् ।
रराणता मरुतो वेद्याभि—र्नि हेळो धत्त वि मुचध्वमश्वान् १
एष वः स्तोमो मरुतो नमस्वान् हृदा तष्टो मनसा धायि देवाः ।
उपेमा यात मनसा जुषाणा यूयं हि ष्ठा नमस इद् वृधासः २

॥ १८ ॥ (१।१७२।१-३) गायत्री ।

चित्रो वोऽस्तु याम—श्चित्र ऊती सुदानवः । मरुतो अहिभानवः १ १९५
आरे सा वः सुदानवो मरुत ऋञ्जती शरुः । आरे अश्मा यमस्यथ २
तृणस्कन्दस्य नु विशः परि वृङ्क्त सुदानवः । ऊर्ध्वान् नः कर्त जीवसे ३

॥ १९ ॥ (ऋ० २।३०।११)

(१९८-२१३) गृत्समदः (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद् भार्गवः) शौनकः । जगती ।

तं वः शर्धं मारुतं सुम्नयुर्गिरो—प ब्रुवे नमसा दैव्यं जनम् ।
यथा रयिं सर्ववीरं नशामहा अपत्यसाचं श्रुत्यं दिवेदिवे ११

॥ २० ॥ (ऋ० २।३४।१-१५) जगती; १५ त्रिष्टुप् ।

धारावरा मरुतो धृष्ण्वोजसो मृगा न भीमास्तविषीभिरर्चिनः ।
अग्नयो न शुशुचाना ऋजीषिणो भृमिं धमन्तो अप गा अवृण्वत १ १९९

द्यावो न स्तृभिश्चितयन्त खादिनो व्य१भ्रिया न द्युतयन्त वृष्टयः ।
रुद्रो यद् वो मरुतो रुक्मवक्षसो वृषाजनि पृश्न्याः शुक्र ऊधनि २ २००
उक्षन्ते अश्वाँ अत्याँ इवाजिषु नदस्य कर्णैस्तुरयन्त आशुभिः ।
हिरण्यशिप्रा मरुतो दविध्वतः पृक्षं याथ पृषतीभिः समन्यवः ३
पृक्षे ता विश्वा भुवना ववक्षिरे मित्राय वा सदमा जीरदानवः ।
पृषदश्वासो अनवभ्रराधस ऋजिप्यासो न वयुनेषु धूर्षदः ४
इन्धन्वभिर्धेनुभी रप्शदूधभिरध्वस्मभिः पथिभिर्भ्राजदृष्टयः ।
आ हंसासो न स्वसराणि गन्तन मधोर्मदाय मरुतः समन्यवः ५
आ नो ब्रह्माणि मरुतः समन्यवो नरां न शंसः सवनानि गन्तन ।
अश्वामिव पिप्यत धेनुमूधनि कर्ता धियं जरित्रे वाजपेशसम् ६
तं नो दात मरुतो वाजिनं रथ आपानं ब्रह्म चितयद् दिवेदिवे ।
इषं स्तोतृभ्यो वृजनेषु कारवे सनिं मेधामरिष्टं दुष्टरं सहः ७ २०५
यद् युञ्जते मरुतो रुक्मवक्षसोऽश्वान् रथेषु भग आ सुदानवः ।
धेनुर्न शिश्वे स्वसरेषु पिन्वते जनाय रातहविषे महीमिषम् ८
यो नो मरुतो वृकताति मर्त्यो रिपुर्दधे वसवो रक्षता रिषः ।
वर्तयत तपुषा चक्रियाभि तमव रुद्रा अशसो हन्तना वधः ९
चित्रं तद् वो मरुतो याम चेकिते पृश्न्या यदूधरप्यापयो दुहुः ।
यद् वा निदे नवमानस्य रुद्रियास्त्रितं जराय जुरतामदाभ्याः १०
तान् वो महो मरुत एवयाव्नो विष्णोरेषस्य प्रभृथे हवामहे ।
हिरण्यवर्णान् ककुहान् यतस्रुचो ब्रह्मण्यन्तः शंस्यं राध ईमहे ११
ते दशग्वाः प्रथमा यज्ञमूहिरे ते नो हिन्वन्तूषसो व्युष्टिषु ।
उषा न रामीररुणैरपोर्णुते महो ज्योतिषा शुचता गोअर्णसा १२ २१०
ते क्षोणीभिररुणेभिर्नाञ्जिभी रुद्रा ऋतस्य सदनेषु वावृधुः ।
निमेघमाना अत्येन पाजसा सुश्चन्द्रं वर्णं दधिरे सुपेशसम् १३
ताँ इयानो महि वरूथमूतय उप घेदेना नमसा गृणीमसि ।
त्रितो न यान् पञ्च होतॄनभिष्टय आववर्तदवराञ्चक्रियावसे १४
यया रध्रं पारयथात्यंहो यया निदो मुञ्चथ वन्दितारम् ।
अर्वाची सा मरुतो या व ऊतिरो षु वाश्रेव सुमतिर्जिगातु १५ २१३

॥ २१ ॥ (ऋ० ३।२६।४-६)

(२१४-२१६) गाथिनो विश्वामित्रः । जगती ।

प्र यन्तु वाजास्तविषीभिरग्नयः शुभे संमिश्लाः पृषतीरयुक्षत ।
बृहदुक्षो मरुतो विश्ववेदसः प्र वेपयन्ति पर्वताँ अदाभ्याः ४
अग्निश्रियो मरुतो विश्वकृष्टय आ त्वेषमुग्रमव ईमहे वयम् ।
ते स्वानिनो रुद्रिया वर्षनिर्णिजः सिंहा न हेषक्रतवः सुदानवः ५ २१५
व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिरग्नेर्भामं मरुतामोज ईमहे ।
पृषदश्वासो अनवभ्रराधसो गन्तारो यज्ञं विदथेषु धीराः ६ २१६

॥ २२ ॥ (ऋ० ५।५२।१-१७)

(२१७-२३३) श्यावाश्व आत्रेयः । अनुष्टुप्; ६,१६,१७ पङ्क्तिः ।

प्र श्यावाश्व धृष्णुया ऽर्चा मरुद्भिर्ऋक्वभिः ।
ये अद्रोघमनुष्वधं श्रवो मदन्ति यज्ञियाः १
ते हि स्थिरस्य शवसः सखायः सन्ति धृष्णुया ।
ते यामन्ना धृषद्विनस्त्मना पान्ति शश्वतः २
ते स्पन्द्रासो नोक्षणो ऽति ष्कन्दन्ति शर्वरीः ।
मरुतामधा महो दिवि क्षमा च मन्महे ३
मरुत्सु वो दधीमहि स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया ।
विश्वे ये मानुषा युगा पान्ति मर्त्यं रिषः ४ २२०
अर्हन्तो ये सुदानवो नरो असामिशवसः ।
प्र यज्ञं यज्ञियेभ्यो दिवो अर्चा मरुद्भ्यः ५
आ रुक्मैरा युधा नर ऋष्वा ऋष्टीरसृक्षत ।
अन्वेनाँ अह विद्युतो मरुतो जज्झतीरिव भानुरर्त त्मना दिवः ६
ये वावृधन्त पार्थिवा य उरावन्तरिक्ष आ ।
वृजने वा नदीनां सधस्थे वा महो दिवः ७
शर्धो मारुतमुच्छंस सत्यशवसमृभ्वसम् ।
उत स्म ते शुभे नरः प्र स्पन्द्रा युजत त्मना ८
उत स्म ते परुष्ण्यामूर्णा वसत शुन्ध्यवः ।
उत पव्या रथानामद्रिं भिन्दन्त्योजसा ९ २२५
आपथयो विपथयो ऽन्तस्पथा अनुपथाः ।
एतेभिर्मह्यं नामभिर्यज्ञं विष्टार ओहते १० २२६

अधा नरो न्योहते ऽधा नियुत ओहते ।
अधा पारावता इति चित्रा रूपाणि दर्श्या
छन्दःस्तुभः कुभन्यव उत्समा कीरिणो नृतुः ।
ते मे के चिन्न तायव ऊमा आसन् दृशि त्विषे
य ऋष्वा ऋष्टिविद्युतः कवयः सन्ति वेधसः ।
तमृषे मारुतं गणं नमस्या रमया गिरा
अच्छ ऋषे मारुतं गणं दाना मित्रं न योषणा ।
दिवो वा धृष्णव ओजसा स्तुता धीभिरिषण्यत
नू मन्वान एषां देवाँ अच्छा न वक्षणा ।
दाना सचेत सूरिभिर्यामश्रुतेभिरञ्जिभिः
प्र ये मे बन्ध्वेषे गां वोचन्त सूरयः पृश्निं वोचन्त मातरम् ।
अधा पितरमिष्मिणं रुद्रं वोचन्त शिक्वसः
सप्त मे सप्त शाकिन एकमेका शता ददुः ।
यमुनायामधि श्रुतमुद्राधो गव्यं मृजे नि राधो अश्व्यं मृजे १७

॥ २३ ॥ (ऋ० ५।५३।१-१६)

१,५,१०-११,१५ ककुप्; २ बृहती; ३ अनुष्टुप्; ४ पुरउष्णिक्; ६,७,९,१३,१४,१६ सतो बृहती;

को वेद जानमेषां को वा पुरा सुम्नेष्वास मरुताम् ।
यद्युयुज्रे किलास्यः १
एतान् रथेषु तस्थुषः कः शुश्राव कथा ययुः ।
कस्मै सस्रुः सुदासे अन्वापय इळाभिर्वृष्टयः सह २
ते म आहुर्य आययुरुप द्युभिर्विभिर्मदे ।
नरो मर्या अरेपस इमान् पश्यन्निति ष्टुहि ३
ये अञ्जिषु ये वाशीषु स्वभानवः स्रक्षु रुक्मेषु खादिषु ।
श्राया रथेषु धन्वसु ४
युष्माकं स्मा रथाँ अनु मुदे दधे मरुतो जीरदानवः ।
वृष्टी द्यावो यतीरिव ५
आ यं नरः सुदानवो ददाशुषे दिवः कोशमचुच्यवुः ।
वि पर्जन्यं सृजन्ति रोदसी अनु धन्वना यन्ति वृष्टयः ६

॥ २१ ॥ (ऋ० ३।२६।४-६)

(२१४-२१६) गाथिनो विश्वामित्रः । जगती ।

प्र यन्तु वाजास्तविषीभिरग्नयः शुभे संमिश्लाः पृषतीरयुक्षत ।
बृहदुक्षो मरुतो विश्ववेदसः प्र वेपयन्ति पर्वताँ अदाभ्याः ४
अग्निश्रियो मरुतो विश्वकृष्टय आ त्वेषमुग्रमव ईमहे वयम् ।
ते स्वानिनो रुद्रिया वर्षनिर्णिजः सिंहा न हेषक्रतवः सुदानवः ५ २१५
व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभि- रग्नेर्भामं मरुतामोज ईमहे ।
पृषदश्वासो अनवभ्रराधसो गन्तारो यज्ञं विदथेषु धीराः ६ २१६

॥ २२ ॥ (ऋ० ५।५२।१-१७)

(२१७-२१७) श्यावाश्व आत्रेयः । अनुष्टुप्; ६,१६,१७ पङ्क्तिः ।

प्र श्यावाश्व धृष्णुया ऽर्चा मरुद्भिर्ऋक्वभिः ।
ये अद्रोघमनुष्वधं श्रवो मदन्ति यज्ञियाः १
ते हि स्थिरस्य शवसः सखायः सन्ति धृष्णुया ।
ते यामन्ना धृषद्विन- स्त्मना पान्ति शश्वतः २
ते स्पन्द्रासो नोक्षणो ऽति ष्कन्दन्ति शर्वरीः ।
मरुतामधा महो दिवि क्षमा च मन्महे ३
मरुत्सु वो दधीमहि स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया ।
विश्वे ये मानुषा युगा पान्ति मर्त्यं रिषः ४ २२०
अर्हन्तो ये सुदानवो नरो असामिशवसः ।
प्र यज्ञं यज्ञियेभ्यो दिवो अर्चा मरुद्भ्यः ५
आ रुक्मैरा युधा नर ऋष्वा ऋष्टीरसृक्षत ।
अन्वेनाँ अह विद्युतो मरुतो जज्झतीरिव भानुरर्त त्मना दिवः ६
ये वावृधन्त पार्थिवा य उरावन्तरिक्ष आ ।
वृजने वा नदीनां सधस्थे वा महो दिवः ७
शर्धो मारुतमुच्छंस सत्यशवसमृभ्वसम् ।
उत स्म ते शुभे नरः प्र स्पन्द्रा युजत त्मना ८
उत स्म ते परुष्ण्या- मूर्णा वसत शुन्ध्यवः ।
उत पव्या रथाना- मद्रिं भिन्दन्त्योजसा ९ २२५
आपथयो विपथयो ऽन्तस्पथा अनुपथाः ।
एतेभिर्मह्यं नामभि- र्यज्ञं विष्टार ओहते १० २२६

तद् वीर्यं वो मरुतो महित्वनं दीर्घं ततान सूर्यो न योजनम् ।
२५० एता न यामे अगृभीतशोचिषो ऽनश्वदां यन्न्ययातना गिरिम्
अभ्राजि शर्धो मरुतो यदर्णसं मोषथा वृक्षं कपनेव वेधसः ।
अध स्मा नो अरमतिं सजोषस— श्चक्षुरिव यन्तमनु नेषथा सुग
न स जीयते मरुतो न हन्यते न स्रेधति न व्यथते न रिष्यति
नास्य राय उप दस्यन्ति नोतय ऋषिं वा यं राजानं वा सुषूद
नियुत्वन्तो ग्रामजितो यथा नरो ऽर्यमणो न मरुतः कबन्धिनः
पिन्वन्त्युत्सं यदिनासो अस्वरन् व्युन्दन्ति पृथिवीं मध्वो अन
प्रवत्वतीयं पृथिवी मरुद्भ्यः प्रवत्वती द्यौर्भवति प्रयद्भ्यः ।
प्रवत्वतीः पथ्या अन्तरिक्ष्याः प्रवत्वन्तः पर्वता जीरदानवः
यन्मरुतः सभरसः स्वर्णरः सूर्य उदिते मदथा दिवो नरः ।
२५५ न वोऽश्वाः श्रथयन्ताह सिस्रतः सद्यो अस्याध्वनः पारमश्नुथ
अंसेषु व ऋष्टयः पत्सु खादयो वक्षःसु रुक्मा मरुतो रथे शुभ
अग्निभ्राजसो विद्युतो गभस्त्योः शिप्राः शीर्षसु वितता हिरण्
तं नाकमर्यो अगृभीतशोचिषं रुशत् पिप्पलं मरुतो वि धूनुथ
समच्यन्त वृजनातित्विषन्त यत् स्वरन्ति घोषं विततमृतायवः
युष्मादत्तस्य मरुतो विचेतसो रायः स्याम रथ्यो३ वयस्वतः
न यो युच्छति तिष्यो३ यथा दिवो३ ऽस्मे रारन्त मरुतः सह
यूयं रयिं मरुतः स्पार्हवीरं यूयमृषिमवथ सामविप्रम् ।
यूयमर्वन्तं भरताय वाजं यूयं धत्थ राजानं श्रुष्टिमन्तम्
तद् वो यामि द्रविणं सद्यऊतयो येना स्व१र्ण ततनाम नॄँरभि
इदं सु मे मरुतो हर्यता वचो यस्य तरेम तरसा शतं हिमाः

२६० ॥ २५ ॥ (ऋ० ५।५५।१-१०) जगती, १०

प्रयज्यवो मरुतो भ्राजदृष्टयो बृहद् वयो दधिरे रुक्मवक्षसः ।
ईयन्ते अश्वैः सुयमेभिराशुभिः शुभं यातामनु रथा अवृत्सत
स्वयं दधिध्वे तविषीं यथा विद बृहन्महान्त उर्विया वि राजथ
उतान्तरिक्षं ममिरे व्योजसा शुभं यातामनु रथा अवृत्सत
साकं जाताः सुभ्वः साकमुक्षिताः श्रिये चिदा प्रतरं वावृधुर्नरः

आभूषेण्यं वो मरुतो महित्वनं दिदृक्षेण्यं सूर्यस्येव चक्षणम् ।
उतो अस्माँ अमृतत्वे दधातन शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ४
उदीरयथा मरुतः समुद्रतो यूयं वृष्टिं वर्षयथा पुरीषिणः ।
न वो दस्रा उप दस्यन्ति धेनवः शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५
यदश्वान् धूर्षु पृषतीरयुग्ध्वं हिरण्ययान् प्रत्यत्काँ अमुग्ध्वम् ।
विश्वा इत् स्पृधो मरुतो व्यस्यथ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ६ २७०
न पर्वता न नद्यो वरन्त वो यत्राचिध्वं मरुतो गच्छथेदु तत् ।
उत द्यावापृथिवी याथना परि शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ७
यत् पूर्व्यं मरुतो यच्च नूतनं यदुद्यते वसवो यच्च शस्यते ।
विश्वस्य तस्य भवथा नवेदसः शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ८
मृळत नो मरुतो मा वधिष्टना ऽस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्तन ।
अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गातन शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ९
यूयमस्मान् नयत वस्यो अच्छा निरंहतिभ्यो मरुतो गृणानाः ।
जुषध्वं नो हव्यदातिं यजत्रा वयं स्याम पतयो रयीणाम् १०

॥ २६ ॥ (ऋ० ५।५६।१-९) बृहती; ३, ७ सतो बृहती ।

अग्ने शर्धन्तमा गणं पिष्टं रुक्मेभिरञ्जिभिः ।
विशो अद्य मरुतामव ह्वये दिवश्चित् रोचनादधि १ २७५
यथा चिन्मन्यसे हृदा तदिन्मे जग्मुराशसः ।
ये ते नेदिष्ठं हवनान्यागमन् तान् वर्ध भीमसंदृशः २
मीळ्हुष्मतीव पृथिवी पराहता मदन्त्येत्यस्मदा ।
ऋक्षो न वो मरुतः शिमीवाँ अमो दुध्रो गौरिव भीमयुः ३
नि ये रिणन्त्योजसा वृथा गावो न दुर्धुरः ।
अश्मानं चित् स्वर्यं पर्वतं गिरिं प्र च्यावयन्ति यामभिः ४
उत् तिष्ठ नूनमेषां स्तोमैः समुक्षितानाम् ।
मरुतां पुरुतममपूर्व्यं गवां सर्गमिव ह्वये ५
युङ्ग्ध्वं ह्यरुषी रथे युङ्ग्ध्वं रथेषु रोहितः ।
युङ्ग्ध्वं हरी अजिरा धुरि वोळ्हवे वहिष्ठा धुरि वोळ्हवे ६ २८०
उत स्य वाज्यरुषस्तुविष्वणि रिह स्म धायि दर्शतः ।
मा वो यामेषु मरुतश्चिरं करत् प्र तं रथेषु चोदत ७ २८१

रथं नु मारुतं वयं　श्रवस्युमा हुवामहे ।
आ यस्मिन् तस्थौ सुरणानि बिभ्रती　सचा मरुत्सु रोदसी
तं वः शर्धं रथेशुभं　त्वेषं पनस्युमा हुवे ।
यस्मिन्त्सुजाता सुभगा महीयते　सचा मरुत्सु मीळ्हुषी

॥ २७ ॥ (ऋ० ५।५७।१-८) जगती, ७

आ रुद्रास इन्द्रवन्तः सजोषसो　हिरण्यरथाः सुविताय गन्त
इयं वो अस्मत् प्रति हर्यते मति-　स्तृष्णजे न दिव उत्सा उदु
वाशीमन्त ऋष्टिमन्तो मनीषिणः　सुधन्वान इषुमन्तो निषु
स्वश्वाः स्थ सुरथाः पृश्निमातरः　स्वायुधा मरुतो याथना
धूनुथ द्यां पर्वतान् दाशुषे वसु　नि वो वना जिहते यामनो
कोपयथ पृथिवीं पृश्निमातरः　शुभे यदुग्राः पृषतीरयुग्ध्वम्
वातत्विषो मरुतो वर्षनिर्णिजो　यमा इव सुसदृशः सुपेशसः
पिशङ्गाश्वा अरुणाश्वा अरेपसः　प्रत्वक्षसो महिना द्यौरिवो
पुरुद्रप्सा अञ्जिमन्तः सुदानव-　स्त्वेषसंदृशो अनवभ्रराधसः
सुजातासो जनुषा रुक्मवक्षसो　दिवो अर्का अमृतं नाम भे
ऋष्टयो वो मरुतो अंसयोरधि　सह ओजो बाह्वोर्वो बलं हि
नृम्णा शीर्षस्वायुधा रथेषु वो　विश्वा वः श्रीरधि तनूषु पि
गोमदश्वावद् रथवत् सुवीरं　चन्द्रवद् राधो मरुतो ददा नः
प्रशस्तिं नः कृणुत रुद्रियासो　भक्षीय वोऽवसो दैव्यस्य
हये नरो मरुतो मृळता न-　स्तुवीमघासो अमृता ऋतज्ञाः ।
सत्यश्रुतः कवयो युवानो　बृहद्गिरयो बृहदुक्षमाणाः

॥ २८ ॥ (ऋ० ५।५८।१-८) त्रि

तमु नूनं तविषीमन्तमेषां　स्तुषे गणं मारुतं नव्यसीनाम् ।
य आश्वश्वा अमवद् वहन्त　उतेशिरे अमृतस्य स्वराजः
त्वेषं गणं तवसं खादिहस्तं　धुनिव्रतं मायिनं दातिवारम् ।
मयोभुवो ये अमिता महित्वा　वन्दस्व विप्र तुविराधसो नृन
आ वो यन्तूदवाहासो अद्य　वृष्टिं ये विश्वे मरुतो जुनन्ति
अयं यो अग्निर्मरुतः समिद्ध　एतं जुषध्वं कवयो युवानः
यूयं राजानमिर्यं जनाय　विभ्वतष्टं जनयथा यजत्राः ।

॥ ३२ ॥ (ऋ० ६।४८।११-१५,२०-२१)

(३२७-३३३) शंयुर्बार्हस्पत्यः (तृणपाणिः) [१३-१५ लिङ्गोक्ता वा]। ११ ककुप्, १२ सतो बृहती, १३ पुरउष्णिक्, १४ बृहती, १५ अतिजगती, २० बृहती, २१ महाबृहती यवमध्या।

आ सखायः सबर्दुघां धेनुमजध्वमुप नव्यसा वचः । सृजध्वमनपस्फुराम् ११
या शर्धाय मारुताय स्वभानवे श्रवोऽमृत्यु धुक्षत ।
या मृळीके मरुतां तुराणां या सुम्नैरेवयावरी १२
भरद्वाजायाव धुक्षत द्विता । धेनुं च विश्वदोहस मिषं च विश्वभोजसम् १३
तं व इन्द्रं न सुक्रतुं वरुणमिव मायिनम् ।
अर्यमणं न मन्द्रं सृप्रभोजसं विष्णुं न स्तुष आदिशे १४ ३३०
त्वेषं शर्धो न मारुतं तुविष्व ण्यनर्वाणं पूषणं सं यथा शता ।
सं सहस्रा कारिषच्चर्षणिभ्य आँ आविर्गूळ्हा वसू करत् सुवेदा नो वसू करत् १५
वामी वामस्य धूतयः प्रणीतिरस्तु सूनृता ।
देवस्य वा मरुतो मर्त्यस्य वे जानस्य प्रयज्यवः २०
सद्यश्चिद् यस्य चर्कृतिः परि द्यां देवो नैति सूर्यः ।
त्वेषं शवो दधिरे नाम यज्ञियं मरुतो वृत्रहं शवो ज्येष्ठं वृत्रहं शवः २१ ३३३

॥ ३३ ॥ (ऋ० ६।६६।१-११)

(३३४-३४४) बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । त्रिष्टुप् ।

वपुर्नु तच्चिकितुषे चिदस्तु समानं नाम धेनु पत्यमानम् ।
मर्तेष्वन्यद् दोहसे पीपाय सकृच्छुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः १
ये अग्नयो न शोशुचन्निधाना द्विर्यत् त्रिर्मरुतो वावृधन्त ।
अरेणवो हिरण्ययास एषां साकं नृम्णैः पौंस्येभिश्च भूवन् २ ३३५
रुद्रस्य ये मीळ्हुषः सन्ति पुत्रा यांश्चो नु दाधृविर्भरध्यै ।
विदे हि माता महो मही षा सेत् पृश्निः सुभ्वे३ गर्भमाधात् ३
न य ईषन्ते जनुषोऽया न्व१ न्तः सन्तोऽवद्यानि पुनानाः ।
निर्यद् दुह्रे शुचयोऽनु जोष मनु श्रिया तन्वमुक्षमाणाः ४
मक्षू न येषु दोहसे चिदया आ नाम धृष्णु मारुतं दधानाः ।
न ये स्तौना अयासो मह्ना नू चित् सुदानुरव यासदुग्रान् ५
त इदुग्राः शवसा धृष्णुषेणा उभे युजन्त रोदसी सुमेके ।
अध स्मैषु रोदसी स्वशोचि रामवत्सु तस्थौ न रोकः ६ ३३९

अनेनो वो मरुतो यामो अस्त्व॒नश्वश्चिद्यमजत्यरथीः ।
अनवसो अनभीशू रजस्तूर्वि रोदसी पथ्या याति साधन् ७ ३४०
नास्य वर्ता न तरुता न्वस्ति मरुतो यमवथ वाजसातौ ।
तोके वा गोषु तनये यमप्सु स व्रजं दर्ता पार्ये अध द्योः ८
प्र चित्रमर्कं गृणते तुराय मारुताय स्वतवसे भरध्वम् ।
ये सहांसि सहसा सहन्ते रेजते अग्ने पृथिवी मखेभ्यः ९
त्विषीमन्तो अध्वरस्येव दिद्युत् तृषुच्यवसो जुह्वो३ नाग्नेः ।
अर्चत्रयो धुनयो न वीरा भ्राजज्जन्मानो मरुतो अधृष्टाः १०
तं वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिं रुद्रस्य सूनुं हवसा विवासे ।
दिवः शर्धाय शुचयो मनीषा गिरयो नाप उग्रा अस्पृध्रन् ११ ३४४

॥ ३४ ॥ (ऋ० ७।५६।१-२५)

(३४५-३९४) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । त्रिष्टुप्, १-११ द्विपदा विराट् ।

क ईं व्यक्ता नरः सनीळा रुद्रस्य मर्या अधा स्वश्वाः १ ३४५
नकिर्ह्येषां जनूंषि वेद ते अङ्ग विद्रे मिथो जनित्रम् २
अभि स्वपूभिर्मिथो वपन्त वातस्वनसः श्येना अस्पृध्रन् ३
एतानि धीरो निण्या चिकेत पृश्निर्यदूधो मही जभार ४
सा विट् सुवीरा मरुद्भिरस्तु सनात् सहन्ती पुष्यन्ती नृम्णम् ५
यामं येष्ठाः शुभा शोभिष्ठाः श्रिया संमिश्ला ओजोभिरुग्राः ६ ३५०
उग्रं व ओजः स्थिरा शवांस्यधा मरुद्भिर्गणस्तुविष्मान् ७
शुभ्रो वः शुष्मः क्रुध्मी मनांसि धुनिर्मुनिरिव शर्धस्य धृष्णोः ८
सनेम्यस्मद् युयोत दिद्युं मा वो दुर्मतिरिह प्रणङ्नः ९
प्रिया वो नाम हुवे तुराणामा यत् तृपन्मरुतो वावशानाः १०
स्वायुधास इष्मिणः सुनिष्का उत स्वयं तन्वः१ शुम्भमानाः ११ ३५५
शुची वो हव्या मरुतः शुचीनां शुचिं हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः ।
ऋतेन सत्यमृतसाप आयञ्छुचिजन्मानः शुचयः पावकाः १२
अंसेष्वा मरुतः खादयो वो वक्षःसु रुक्मा उपशिश्रियाणाः ।
वि विद्युतो न वृष्टिभी रुचाना अनु स्वधामायुधैर्यच्छमानाः १३
प्र बुध्न्या व ईरते महांसि प्र नामानि प्रयज्यवस्तिरध्वम् ।
सहस्रियं दम्यं भागमेतं गृहमेधीयं मरुतो जुषध्वम् १४ ३५८

यदि स्तुतस्य मरुतो अधीथे—त्था विप्रस्य वाजिनो हवीमन् ।
मक्षू रायः सुवीर्यस्य दात नू चिद् यमन्य आदभदरावा १५
अत्यासो न ये मरुतः स्वञ्चो यक्षदृशो न शुभयन्त मर्याः ।
ते हर्म्येष्ठाः शिशवो न शुभ्रा वत्सासो न प्रक्रीळिनः पयोधाः १६ ३६०
दशस्यन्तो नो मरुतो मृळन्तु वरिवस्यन्तो रोदसी सुमेके ।
आरे गोहा नृहा वधो वो अस्तु सुम्नेभिरस्मे वसवो नमध्वम् १७
आ वो होता जोहवीति सत्तः सत्राचीं रातिं मरुतो गृणानः ।
य ईवतो वृषणो अस्ति गोपाः सो अद्वयावी हवते व उक्थैः १८
इमे तुरं मरुतो रामयन्ती—मे सहः सहस आ नमन्ति ।
इमे शंसं वनुष्यतो नि पान्ति गुरु द्वेषो अररुषे दधन्ति १९
इमे रध्रं चिन्मरुतो जुनन्ति भृमिं चिद् यथा वसवो जुषन्त ।
अप बाधध्वं वृषणस्तमांसि धत्त विश्वं तनयं तोकमस्मे २०
मा वो दात्रान्मरुतो निरराम मा पश्चाद् दघ्म रथ्यो विभागे ।
आ नः स्पार्हे भजतना वसव्ये३ यदीं सुजातं वृषणो वो अस्ति २१ ३६५
सं यद्धनन्त मन्युभिर्जनासः शूरा यह्वीष्वोषधीषु विक्षु ।
अध स्मा नो मरुतो रुद्रियास—स्त्रातारो भूत पृतनास्वर्यः २२
भूरि चक्र मरुतः पित्र्याण्यु—क्थानि या वः शस्यन्ते पुरा चित् ।
मरुद्भिरुग्रः पृतनासु साळ्हा मरुद्भिरित् सनिता वाजमर्वा २३
अस्मे वीरो मरुतः शुष्म्यस्तु जनानां यो असुरो विधर्ता ।
अपो येन सुक्षितये तरेमा—ऽध स्वमोको अभि वः स्याम २४
तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्नि—राप ओषधीर्वनिनो जुषन्त ।
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः २५

॥ ३५ ॥ (ऋ० ७।५७।१-७) त्रिष्टुप् ।

मध्वो वो नाम मारुतं यजत्राः प्र यज्ञेषु शवसा मदन्ति ।
ये रेजयन्ति रोदसी चिदुर्वी पिन्वन्त्युत्सं यदयासुरुग्राः १ ३७०
निचेतारो हि मरुतो गृणन्तं प्रणेतारो यजमानस्य मन्म ।
अस्माकमद्य विदथेषु बर्हि—रा वीतये सदत पिप्रियाणाः २
नैतावदन्ये मरुतो यथेमे भ्राजन्ते रुक्मैरायुधैस्तनूभिः ।
आ रोदसी विश्वपिशः पिशानाः समानमञ्ज्यञ्जते शुभे कम् ३ ३७१

ऋधक् सा वो मरुतो दिद्युदस्तु   यद् व आगः पुरुषता कराम।
मा वस्तस्यामपि भूमा यजत्रा   अस्मे वो अस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ४
कृते चिदत्र मरुतो रणन्ता ऽनवद्यासः शुचयः पावकाः।
प्र णोऽवत सुमतिभिर्यजत्राः   प्र वाजेभिस्तिरत पुष्यसे नः ५
उत स्तुतासो मरुतो व्यन्तु   विश्वेभिर्नामभिर्नरो हवींषि।
ददात नो अमृतस्य प्रजायै   जिगृत रायः सूनृता मघानि ६ ९७५
आ स्तुतासो मरुतो विश्वे ऊती   अच्छा सूरीन्त्सर्वताता जिगात।
ये नस्त्मना शतिनो वर्धयन्ति   यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ७

॥ ३६ ॥ (ऋ० ७।५८।१-६)

प्र साकमुक्षे अर्चता गणाय   यो दैव्यस्य धाम्नस्तुविष्मान्।
उत क्षोदन्ति रोदसी महित्वा   नक्षन्ते नाकं निर्ऋतेरवंशात् १
जनूश्चिद् वो मरुतस्त्वेष्येण   भीमासस्तुविमन्यवोऽयासः।
प्र ये महोभिरोजसोत सन्ति   विश्वो वो यामन् भयते स्वर्दृक् २
बृहद् वयो मघवद्भ्यो दधात   जुजोषन्निन्मरुतः सुष्टुतिं नः।
गतो नाध्वा वि तिराति जन्तुं   प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेत ३
युष्मोतो विप्रो मरुतः शतस्वी   युष्मोतो अर्वा सहुरिः सहस्री।
युष्मोतः सम्राळुत हन्ति वृत्रं   प्र तद् वो अस्तु धूतयो देष्णम् ४ ९८०
ताँ आ रुद्रस्य मीळ्हुषो विवासे   कुविन्नंसन्ते मरुतः पुनर्नः।
यत् सस्वर्ता जिहीळिरे यदाविर्   अव तदेन ईमहे तुराणाम् ५
प्र सा वाचि सुष्टुतिर्मघोना मिदं सूक्तं मरुतो जुषन्त।
आराच्चिद् द्वेषो वृषणो युयोत   यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ६

॥ ३७ ॥ (ऋ० ७।५९।१-१२)

(प्रगाथः= (विषमा बृहती, समा सतोबृहती), ७-८ त्रिष्टुप्, ९-११ गायत्री, ...)

यं त्रायध्व इदमिदं   देवासो यं च नयथ।
तस्मा अग्ने वरुण मित्रार्यमन्   मरुतः शर्म यच्छत १
युष्माकं देवा अवसाहनि प्रिय   ईजानस्तरति द्विषः।
प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो   यो वो वराय दाशति २
नहि वश्चरमं चन   वसिष्ठः परिमंसते।
अस्माकमद्य मरुतः सुते सचा   विश्वे पिबत कामिनः ३ ९८५

नहि व ऊतिः पृतनासु मर्धति यस्मा अराध्वं नरः ।
अभि व आवर्त् सुमतिर्नवीयसी तूयं यात पिपीषवः ४
ओ षु घृष्विराधसो यातनान्धांसि पीतये ।
इमा वो हव्या मरुतो ररे हि कं मो ष्व१न्यत्र गन्तन ५
आ च नो बर्हिः सदताविता च नः स्पार्हाणि दातवे वसु ।
अस्रेधन्तो मरुतः सोम्ये मधौ स्वाहेह मादयाध्वै ६
सस्वश्चिद्धि तन्व१ः शुम्भमाना आ हंसासो नीलपृष्ठा अपप्तन् ।
विश्वं शर्धो अभितो मा नि षेद नरो न रण्वाः सवने मदन्तः ७
यो नो मरुतो अभि दुर्हृणायुस्तिरश्चित्तानि वसवो जिघांसति ।
द्रुहः पाशान् प्रति स मुचीष्ट तपिष्ठेन हन्मना हन्तना तम् ८ ३९०
सान्तपना इदं हविर्मरुतस्तज्जुजुष्टन । युष्माकोती रिशादसः ९
गृहमेधास आ गत मरुतो माप भूतन । युष्माकोती सुदानवः १०
इहेह वः स्वतवसः कवयः सूर्यत्वचः । यज्ञं मरुत आ वृणे ११

॥ ३८ ॥ (ऋ० ७।१०४।१८) जगती ।

वि तिष्ठध्वं मरुतो विक्ष्वि१च्छत गृभायत रक्षसः सं पिनष्टन ।
वयो ये भूत्वी पतयन्ति नक्तभिर्ये वा रिपो दधिरे देवे अध्वरे १८ ३९४

॥ ३९ ॥ (ऋ० ८।९४।१-१२)

(३९५-४०६) बिन्दुः पूतदक्षो वा आङ्गिरसः । गायत्री ।

गौर्धयति मरुतां श्रवस्युर्माता मघोनाम् । युक्ता वह्नी रथानाम् १ ३९५
यस्या देवा उपस्थे व्रता विश्वे धारयन्ते । सूर्यामासा दृशे कम् २
तत्सु नो विश्वे अर्य आ सदा गृणन्ति कारवः । मरुतः सोमपीतये ३
अस्ति सोमो अयं सुतः पिबन्त्यस्य मरुतः । उत स्वराजो अश्विना ४
पिबन्ति मित्रो अर्यमा तना पूतस्य वरुणः । त्रिषधस्थस्य जावतः ५
उतो न्वस्य जोषमाँ इन्द्रः सुतस्य गोमतः । प्रातर्होतेव मत्सति ६ ४००
कदत्विषन्त सूरयस्तिर आप इव स्रिधः । अर्षन्ति पूतदक्षसः ७
कद्वो अद्य महानां देवानामवो वृणे । त्मना च दस्मवर्चसाम् ८
आ ये विश्वा पार्थिवानि पप्रथन् रोचना दिवः । मरुतः सोमपीतये ९
त्यान्नु पूतदक्षसो दिवो वो मरुतो हुवे । अस्य सोमस्य पीतये १०
त्यान्नु ये वि रोदसी तस्तभुर्मरुतो हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ११ ४०५
त्यं नु मारुतं गणं गिरिष्ठां वृषणं हुवे । अस्य सोमस्य पीतये १२ ४०६

॥ ४० ॥ (ऋ० १०।७७।१-८)

४२६-४३३ स्यूमरश्मिर्भार्गवः । त्रिष्टुप्, १-५ जगती ।

अभ्रप्रुषो न वाचा प्रुषा वसु हविष्मन्तो न यज्ञा विजानुषः
सुमारुतं न ब्रह्माणमर्हसे गणमस्तोष्येषां न शोभसे १
श्रिये मर्यासो अञ्जीँरकृण्वत सुमारुतं न पूर्वीरति क्षपः ।
दिवस्पुत्रास एता न येतिर आदित्यासस्ते अक्रा न वावृधुः २
प्र ये दिवः पृथिव्या न बर्हणा त्मना रिरिच्रे अभ्रान्न सूर्यः ।
पाजस्वन्तो न वीराः पनस्यवो रिशादसो न मर्या अभिद्यवः ३
युष्माकं बुध्ने अपां न यामनि विथुर्यति न मही श्रथर्यति ।
विश्वप्सुर्यज्ञो अर्वागयं सु वः प्रयस्वन्तो न सत्राच आ गत ४ ४२९
यूयं धूर्षु प्रयुजो न रश्मिभि—र्ज्योतिष्मन्तो न भासा व्युष्टिषु ।
श्येनासो न स्वयशसो रिशादसः प्रवासो न प्रसितासः परिप्रुषः ५
प्र यद्वहध्वे मरुतः पराकाद् यूयं महः संवरणस्य वस्वः ।
विदानासो वसवो राध्यस्या—ऽऽराच्चिद्द्वेषः सनुतर्युयोत ६
य उदृचि यज्ञे अध्वरेष्ठा मरुद्भ्यो न मानुषो ददाशत् ।
रेवत्स वयो दधते सुवीरं स देवानामपि गोपीथे अस्तु ७
ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमा आदित्येन नाम्ना शंभविष्ठाः ।
ते नोऽवन्तु रथतूर्मनीषां महश्च यामन्नध्वरे चकानाः ८

॥ ४१ ॥ (ऋ० १०।७८।१-८) त्रिष्टुप्, २,५-८ जगती ।

विप्रासो न मन्मभिः स्वाध्यो देवाव्यो न यज्ञैः स्वप्नसः ।
राजानो न चित्राः सुसंदृशः क्षितीनां न मर्या अरेपसः १ ४३४
अग्निर्न ये भ्राजसा रुक्मवक्षसो वातासो न स्वयुजः सद्यऊतयः ।
प्रज्ञातारो न ज्येष्ठाः सुनीतयः सुशर्माणो न सोमा ऋतं यते २
वातासो न ये धुनयो जिगत्नवो ऽग्नीनां न जिह्वा विरोकिणः ।
वर्मण्वन्तो न योधाः शिमीवन्तः पितॄणां न शंसाः सुरातयः ३
रथानां न येऽराः सनाभयो जिगीवांसो न शूरा अभिद्यवः ।
वरेयवो न मर्या घृतप्रुषो ऽभिस्वर्तारो अर्कं न सुष्टुभः ४
अश्वासो न ये ज्येष्ठास आशवो दिधिषवो न रथ्यः सुदानवः ।
आपो न निम्नैरुदभिर्जिगत्नवो विश्वरूपा अङ्गिरसो न सामभिः ५ ४३८

ग्रावाणो न सूरयः सिन्धुमातर आदर्दिरासो अद्रयो न विश्वहा ।
शिशूला न क्रीळयः सुमातरो महाग्रामो न यामन्नुत त्विषा ६ ४२०
उषसां न केतवोऽध्वरश्रियः शुभंयवो नाञ्जिभिर्व्यश्वितन् ।
सिन्धवो न ययियो भ्राजदृष्टयः परावतो न योजनानि ममिरे ७
सुभागान्नो देवाः कृणुता सुरत्नानस्मान्त्स्तोतॄन् मरुतो वावृधानाः ।
अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गात सनाद्धि वो रत्नधेयानि सन्ति ८ ४२१

॥ ४२ ॥ (य० ३।४४)

प्रघासिनो हवामहे मरुतश्च रिशादसः । करम्भेण सजोषसः ४४ ४२३

॥ ४३ ॥ (य० ७।३६)

उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा मरुत्वत एष ते योनिरिन्द्राय त्वा मरुत्वते ।
उपयामगृहीतोऽसि मरुतां त्वौजसे ३६ ४२४

॥ ४४ ॥ (४२५-४२७) (य० १७।८४-८६)

ईदृक्षास एतादृक्षास ऊ षु णः सदृक्षासः प्रतिसदृक्षास एतन ।
मितासश्च सम्मितासो नो अद्य सभरसो मरुतो यज्ञे अस्मिन् ८४ ४२५
स्वतवाँश्च प्रघासी च सान्तपनश्च गृहमेधी च । क्रीडी च शाकी चोज्जेषी ८५
इन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोऽनुवर्त्मानोऽभवन् यथेन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोऽनुवर्त्मानोऽभवन् ।
एवमिमं यजमानं दैवीश्च विशो मानुषीश्चानुवर्त्मानो भवन्तु ८६ ४२७

॥ ४५ ॥ (य० २५।२०)

पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभंयावानो विदथेषु जग्मयः ।
अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसागमन्निह २० ४२८

॥ ४६ ॥ (साम० ३५६) श्यावाश्व आत्रेयः । अनुष्टुप् ।

२ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ १ २ ३२उ ३ २ ३ १ २
यदी वहन्त्याशवो भ्राजमाना रथेष्वा । पिबन्तो मदिरं मधु तत्र श्रवांसि कृण्वते ५ ४२९

॥ ४७ ॥ (अथर्व० १।२६।३-४)

(४३०-४३१) ब्रह्मा । ३ गायत्री, ४ एकावसाना पादनिचृत् ।

यूयं नः प्रवतो नपान्मरुतः सूर्यत्वचसः । शर्म यच्छाथ सप्रथाः ३ ४३०
सुषूदत मृडत मृडया नस्तनूभ्यो मयस्तोकेभ्यस्कृधि ४

॥ ४८ ॥ (अथर्व० ५।२६।५) द्विपदार्षी उष्णिक् ।

छन्दांसि यज्ञे मरुतः स्वाहा मातेव पुत्रं पिपृतेह युक्ताः ५ ४३२

॥६९॥ (अथर्व० १३।१।३) जगती।

यूयमुग्रा मरुतः पृश्निमातर इन्द्रेण युजा प्र मृणीत शत्रून्।
आ वो रोहितः शृणवत् सुदानवस्त्रिषप्तासो मरुतः स्वादुसंमुदः ३ ४३३

॥७०॥ (अथर्व० ३।१।२)
(४३४-४३६) अथर्वा। विराड्गर्भा भुरिक्।

यूयमुग्रा मरुत ईदृशे स्थाभि प्रेत मृणत सहध्वम्।
अमीमृणन् वसवो नाथिता इमे अग्निर्ह्येषां दूतः प्रत्येतु विद्वान् २

॥७१॥ (अथर्व० ३।१।६) त्रिष्टुप्।

असौ या सेना मरुतः परेषामस्मानैत्यभ्योजसा स्पर्धमाना।
तां विध्यत तमसापव्रतेन यथैषामन्यो अन्यं न जानात् ६ ४३५

॥७२॥ (अथर्व० ५।२४।६) चतुष्पदातिशक्वरी।

मरुतः पर्वतानामधिपतयस्ते मावन्तु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायामस्यां
प्रतिष्ठायामस्यां चित्त्यामस्यामाकूत्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहूत्यां स्वाहा ६ ४३६

॥७३॥ (अथर्व० ४।१३।४) (४३७-४३९) शंतातिः। अनुष्टुप्।

त्रायन्तामिमं देवास्त्रायन्तां मरुतां गणाः। त्रायन्तां विश्वा भूतानि यथायमरपा असत् ४

॥७४॥ (अथर्व० ४।१५।२-३) २ चतुष्पदा भुरिग्जगती, ३ त्रिष्टुप्।

पयस्वतीः कृणुथाप ओषधीः शिवा यदेजथा मरुतो रुक्मवक्षसः।
ऊर्जं च तत्र सुमतिं च पिन्वत यत्रा नरो मरुतः सिञ्चथा मधु २
उदप्रुतो मरुतस्ताँ इयर्त वृष्टिर्या विश्वा निवतस्पृणाति।
एजाति ग्लहा कन्येव तुन्नैरुं तुन्दाना पत्येव जाया ३ ४३९

॥७५॥ (अथर्व० ४।२७।१-७) (४४०-४४६) १-७ मृगारः। त्रिष्टुप्।

मरुतां मन्वे अधि मे ब्रुवन्तु प्रेमं वाजं वाजसाते अवन्तु।
आशूनिव सुयमानह्व ऊतये ते नो मुञ्चन्त्वंहसः १ ४४०
उत्समक्षितं व्यचन्ति ये सदा य आसिञ्चन्ति रसमोषधीषु।
पुरो दधे मरुतः पृश्निमातॄंस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः २
पयो धेनूनां रसमोषधीनां जवमर्वतां कवयो य इन्वथ।
शग्मा भवन्तु मरुतो नः स्योनास्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ३
अपः समुद्राद्दिवमुद्वहन्ति दिवस्पृथिवीमभि ये सृजन्ति।
ये अद्भिरीशाना मरुतश्चरन्ति ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ४
ये कीलालेन तर्पयन्ति ये घृतेन ये वा वयो मेदसा संसृजन्ति।
ये अद्भिरीशाना मरुतो वर्षयन्ति ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ५ ४४४

ग्रावाणो न सूरयः सिन्धुमातर आदर्दिरासो अद्रयो न विश्वहा ।
शिशूला न क्रीळयः सुमातरो महाग्रामो न यामन्नुत त्विषा ६ ४२०
उषसां न केतवोऽध्वरश्रियः शुभंयवो नाञ्जिभिर्व्यश्वितन् ।
सिन्धवो न ययियो भ्राजदृष्टयः परावतो न योजनानि ममिरे ७
सुभागान्नो देवाः कृणुता सुरत्नानस्मान्त्स्तोतॄन् मरुतो वावृधानाः ।
अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गात सनाद्धि वो रत्नधेयानि सन्ति ८ ४२१

॥ ४२ ॥ (य० ३।४४)

प्रघासिनो हवामहे मरुतश्च रिशादसः । करम्भेण सजोषसः ४४ ४२३

॥ ४३ ॥ (य० ७।३६)

उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा मरुत्वत एष ते योनिरिन्द्राय त्वा मरुत्वते ।
उपयामगृहीतोऽसि मरुतां त्वौजसे ३६ ४२४

॥ ४४ ॥ (४२५-४२७) (य० १७।८४-८६)

ईदृक्षास एतादृक्षास ऊ षु णः सदृक्षासः प्रतिसदृक्षास एतन ।
मितासश्च सम्मितासो नो अद्य सभरसो मरुतो यज्ञे अस्मिन् ८४ ४२५
स्वतवाँश्च प्रघासी च सान्तपनश्च गृहमेधी च । क्रीडी च शाकी चोज्जेषी ८५
इन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोऽनुवर्त्मानोऽभवन् यथेन्द्रं दैवीर्विशो मरुतोऽनुवर्त्मानोऽभवन् ।
एवमिमं यजमानं दैवीश्च विशो मानुषीश्चानुवर्त्मानो भवन्तु ८६ ४२७

॥ ४५ ॥ (य० २५।२०)

पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभंयावानो विदथेषु जग्मयः ।
अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसागमन्निह २० ४२८

॥ ४६ ॥ (साम० ३५६) श्यावाश्व आत्रेयः । अनुष्टुप् ।

२ ३ १ २ ३ २ ३ १ २ ३ २ ३ २ १ २ ३२३ ३ २ ३ १ २
यदी वहन्त्याशवो भ्राजमाना रथेष्वा । पिबन्तो मदिरं मधु तत्र श्रवांसि कृण्वते ५ ४२९

॥ ४७ ॥ (अथर्व० १।२६।३-४)

(४३०-४३३) ब्रह्मा । ३ गायत्री, ४ एकावसाना पादनिचृत् ।
यूयं नः प्रवतो नपान्मरुतः सूर्यत्वचसः । शर्म यच्छाथ सप्रथाः ३ ४३०
सुषूदत मृडत मृडया नस्तनूभ्यो मयस्तोकेभ्यस्कृधि ४

॥ ४८ ॥ (अथर्व० ५।२६।५) द्विपदार्षी उष्णिक् ।

छन्दांसि यज्ञे मरुतः स्वाहा मातेव पुत्रं पिपृतेह युक्ताः ५ ४३१

॥ ४९ ॥ (अथर्व० १३।१।३) जगती।

यूयमुग्रा मरुतः पृश्निमातर इन्द्रेण युजा प्र मृणीत शत्रून्।
आ वो रोहितः शृणवत् सुदानवस्त्रिषप्तासो मरुतः स्वादुसंमुदः ३ ४३३

॥ ५० ॥ (अथर्व० ३।१।२)

(४३४-४३५) अथर्वा। विराड्गर्भा भुरिक्।

यूयमुग्रा मरुत ईदृशे स्थाभि प्रेत मृणत सहध्वम्।
अमीमृणन् वसवो नाथिता इमे अग्निर्ह्येषां दूतः प्रत्येतु विद्वान् २

॥ ५१ ॥ (अथर्व० ३।२।६) त्रिष्टुप्।

असौ या सेना मरुतः परेषामस्मानैत्यभ्योजसा स्पर्धमाना।
तां विध्यत तमसापव्रतेन यथैषामन्यो अन्यं न जानात् ६ ४३५

॥ ५२ ॥ (अथर्व० ५।२४।६) चतुष्पदातिशक्वरी।

मरुतः पर्वतानामधिपतयस्ते मावन्तु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायामस्यां
प्रतिष्ठायामस्यां चित्त्यामस्यामाकूत्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहूत्यां स्वाहा ६ ४३६

॥ ५३ ॥ (अथर्व० ४।१३।४) (४३७-४३९) शंतातिः। अनुष्टुप्।

त्रायन्तामिमं देवास्त्रायन्तां मरुतां गणाः। त्रायन्तां विश्वा भूतानि यथायमरपा असत् ४

॥ ५४ ॥ (अथर्व० ६।२२।२-३) २ चतुष्पदा भुरिग्जगती, ३ त्रिष्टुप्।

पयस्वतीः कृणुथाप ओषधीः शिवा यदेजथा मरुतो रुक्मवक्षसः।
ऊर्जं च तत्र सुमतिं च पिन्वत यत्रा नरो मरुतः सिञ्चथा मधु २
उदप्रुतो मरुतस्ताँ इयर्त वृष्टिर्या विश्वा निवतस्पृणाति।
एजाति ग्लहा कन्येव तुन्नैरुं तुन्दाना पत्येव जाया ३ ४३९

॥ ५५ ॥ (अथर्व० ४।२७।१-७) ४४०-४४६ १-७ मृगारः। त्रिष्टुप्।

मरुतां मन्वे अधि मे ब्रुवन्तु प्रेमं वाजं वाजसाते अवन्तु।
आशूनिव सुयमानह्व ऊतये ते नो मुञ्चन्त्वंहसः १ ४४०
उत्समक्षितं व्यचन्ति ये सदा य आसिञ्चन्ति रसमोषधीषु।
पुरो दधे मरुतः पृश्निमातॄंस्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः २
पयो धेनूनां रसमोषधीनां जवमर्वतां कवयो य इन्वथ।
शग्मा भवन्तु मरुतो नः स्योनास्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ३
अपः समुद्राद्दिवमुद्वहन्ति दिवस्पृथिवीमभि ये सृजन्ति।
ये अद्भिरीशाना मरुतश्चरन्ति ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ४
ये कीलालेन तर्पयन्ति ये घृतेन ये वा वयो मेदसा संसृजन्ति।
ये अद्भिरीशाना मरुतो वर्षयन्ति ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ५ ४४४

यदीदिदं मरुतो मारुतेन यदि देवा दैव्येनेदृगार ।
यूयमीशिध्वे वसवस्तस्य निष्कृते—स्ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ६
तिग्ममनीकं विदितं सहस्व—न्मारुतं शर्धः पृतनासूग्रम् ।
स्तौमि मरुतो नाथितो जोहवीमि ते नो मुञ्चन्त्वंहसः ७ ४४६

॥ ५६ ॥ (अथर्व० ७।७७[८२] ।३)(४४७) अङ्गिराः । जगती ।

संवत्सरीणा मरुतः स्वर्का उरुक्षयाः सगणा मानुषासः ।
ते अस्मत् पाशान् प्र मुञ्चन्त्वेनसः सांतपना मत्सरा मादयिष्णवः ३ ४४७

मरुत्सहचारी देवगणः ।

(१) मरुद्रुद्रविष्णवः ।

॥ ५७ ॥ (ऋ० ५।३।३) (४४८) वसुश्रुत आत्रेयः । त्रिष्टुप् ।

तव श्रिये मरुतो मर्जयन्त रुद्र यत् ते जनिम चारु चित्रम् ।
पदं यद् विष्णोरुपमं निधायि तेन पासि गुह्यं नाम गोनाम् ३ ४४८

(२) मरुतोऽग्निमरुतौ वा ।

॥ ५८ ॥ (ऋ० ५।६०।१-८)

(४४९-४५६) श्यावाश्व आत्रेयः । त्रिष्टुप्, ७-८ जगती ।

ईळे अग्निं स्ववसं नमोभि—रिह प्रसत्तो वि चयत् कृतं नः ।
रथैरिव प्र भरे वाजयद्भिः प्रदक्षिणिन्मरुतां स्तोममृध्याम् १
आ ये तस्थुः पृषतीषु श्रुतासु सुखेषु रुद्रा मरुतो रथेषु ।
वना चिदुग्रा जिहते नि वो भिया पृथिवी चिद् रेजते पर्वतश्चित् २ ४५०
पर्वतश्चिन्महि वृद्धो बिभाय दिवश्चित् सानु रेजत स्वने वः ।
यत् क्रीळथ मरुत ऋष्टिमन्त आप इव सध्र्यञ्चो धवध्वे ३
वरा इवेद् रैवतासो हिरण्यै—रभि स्वधाभिस्तन्वः पिपिश्रे ।
श्रिये श्रेयांसस्तवसो रथेषु सत्रा महांसि चक्रिरे तनूषु ४
अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय ।
युवा पिता स्वपा रुद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः ५
यदुत्तमे मरुतो मध्यमे वा यद् वावमे सुभगासो दिवि ष्ठ ।
अतो नो रुद्रा उत वा न्वस्या—ऽग्ने वित्ताद्धविषो यद् यजाम ६
अग्निश्च यन्मरुतो विश्ववेदसो दिवो वहध्व उत्तरादधि ष्णुभिः ।
ते मन्दसाना धुनयो रिशादसो वामं धत्त यजमानाय सुन्वते ७ ४५५

अग्ने मरुद्भिः शुभयद्भिर्ऋक्वभिः　सोमं पिब मन्दसानो गणश्रिभिः ।
पावकेभिर्विश्वमिन्वेभिरायुभि- वैश्वानर प्रदिवा केतुना सजूः　८　४५६

(३) सोमः मरुतः ।

॥ ५९ ॥ (अथर्व० १।२०।१) अथर्वा। त्रिष्टुप्।

अदारसृद् भवतु देव सोमा- ऽस्मिन् यज्ञे मरुतो मृडता नः ।
मा नो विददभिभा मो अशस्ति- र्मा नो विदद् वृजिना द्वेष्या या　१　४५७

(४) मरुत्पर्जन्यौ ।

॥ ६० ॥ (अथर्व० ४।१५।४) विराट्पुरस्ताद्बृहती।

गणास्त्वोप गायन्तु मारुताः　पर्जन्य घोषिणः पृथक् ।
सर्गा वर्षस्य वर्षतो　वर्षन्तु पृथिवीमनु　४　४५८

(५) मरुत आपः ।

॥ ६१ ॥ (४५९-४६४) (अथर्व ४।१५।५-१०)
(५ विराड् जगती, ७ अनुष्टुप्, ६, ८ त्रिष्टुप्, ९ पथ्या पंक्तिः, १० भुरिक्।)

उदीरयत मरुतः समुद्रत- स्त्वेषो अर्को नभ उत्पातयाथ ।
महऋषभस्य नदतो नभस्वतो　वाश्रा आपः पृथिवीं तर्पयन्तु　५
अभि क्रन्द स्तनयार्दयोदधिं　भूमिं पर्जन्य पयसा समङ्धि ।
त्वया सृष्टं बहुलमैतु वर्ष- माशारैषी कृशगुरेत्वस्तम्　६　४६०
सं वोऽवन्तु सुदानव　उत्सा अजगरा उत ।
मरुद्भिः प्रच्युता मेघा　वर्षन्तु पृथिवीमनु　७
आशामाशां वि द्योततां　वाता वान्तु दिशोदिशः ।
मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः　सं यन्तु पृथिवीमनु　८
आपो विद्युदभ्रं वर्षं　सं वोऽवन्तु सुदानव　उत्सा अजगरा उत ।
मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः　प्रावन्तु पृथिवीमनु　९
अपामग्निस्तनूभिः संविदानो　य ओषधीनामधिपा बभूव ।
स नो वर्षं वनुतां जातवेदाः　प्राणं प्रजाभ्यो अमृतं दिवस्परि　१०　४६४

मरुद्देवता-पुनरुक्त-मन्त्रभागाः।

ऋग्वेदस्य प्रथमं मण्डलम् ।

[४] १।६।९ (मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । मरुतः)

दिवो वा रोचनादधि ।

१।४९।१ (प्रस्कण्वः काण्वः । उषा)

दिवश्चिद् रोचनादधि ।

[illegible] ५।५६।१ (श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः)

८।८।७ (सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ)

दिवश्चिद् रोचनादधि ।

[illegible] १।१९।[illegible] (मेधातिथिः काण्वः । मरुतः)

[illegible] हि ष्मा सुदानवः ।

[illegible] (... । विश्वेदेवाः)

[illegible] (पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः)

[illegible] (... काण्वः । विश्वेदेवाः)

[९] १।३७।[illegible] (कण्वो घौरः । मरुतः)

[illegible] ... ।

[illegible]

[illegible] ८।३७।१९ (... काण्वः । इन्द्रः)

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

प्रो आरत मरुतो दुर्मदा इव देवासः सर्वया विशा।

५।२६।९ (वसूयव आत्रेयाः । विश्वे देवाः)

एदं मरुतो ।

देवासः सर्वया विशा ।

(४९) ८।७।४ (पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः)

वपन्ति मरुतो मिहं प्र वेपयन्ति पर्वतान् ।

[४१] १।३९।६ (कण्वो घौरः । मरुतः)

उपो रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं ।

(१०७) १।८५।५ (गोतमो राहूगणः । मरुतः)

प्र यद् रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं ।

["] १।३९।६ (कण्वो घौरः । मरुतः)

उपो रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं प्रष्टिर्वहति रोहितः ।

(७३) ७।७।२८ (पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः)

यदेषां पृषती रथे प्रष्टिर्वहति रोहितः ।

[४१] १।३९।७ रुद्रा अवो वृणीमहे ।

१।४२।५ (कण्वो घौरः । पूषा)

पूषन्नवो वृणीमहे ।

[१११] १।६४।४ (नोधा गोतमः । मरुतः)

वक्षःसु रुक्माँ अधि येतिरे शुभे ।

(१६०) ५।५४।११ (श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः)

वक्षःसु रुक्मा मरुतो रथे शुभः ।

[११३] १।६४।६ उत्सं दुहन्ति स्तनयन्तमक्षितम् ।

९।७२।६ (हरिमन्त आङ्गिरसः । पवमानः सोमः)

अंशुं दुहन्ति— ।

[११९] (नोधा गोतमः । मरुतः)

रुद्रस्य सूनुं हवसा गृणीमसि ।

[illegible] मारुतं ।

(२४४) ६।६६।११ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । मरुतः)

तं वृषन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिं रुद्रस्य सूनुं हवसा विवासे ।

[१२०] १।६४।१३ (नोधा गोतमः । मरुतः)

[illegible] मरुतो यमावत ।

(२६०) १।१६६।८ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । मरुतः)

[illegible] मरुतो यमावत ।

[१२०] १।६४।१३ (नोधा गौतमः । मरुतः)
मरुतो...... ।
अर्वद्भिर्वाजं भरते धना नृभिः ।
२।२६।३ (गृत्समदः शौनकः । ब्रह्मणस्पतिः)
स इज्जनेन स विशा स जन्मना स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः ।
(इन्द्रः २८०७) १०।१४७।४ (सुवेदाः शैरीषिः । इन्द्रः)
स इन्नु ... ।
मक्षू स वाजं भरते धना नृभिः ।
[१२४] १।८५।२ त उक्षितासो महिमानमाशत ।
(इन्द्रः ३२०३) ८।५९ (वाल० ११)।२
(सुपर्णः काण्वः । इन्द्रावरुणौ)
इन्द्रावरुणा महिमानमाशत ।
[१२७] १।८५।५ प्र यद्रू रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं ।
(४१) १।३९।६ (कण्वो घौरः । मरुतः)
उपो रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं ।
[१३०] १।८५।८ (गोतमो राहूगणः । मरुतः)
भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यो ।
(१६१) १।१६६।४ (अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । मरुतः)
... भुवनानि हर्म्या ।
[१३१] १।८५।९ अहन् वृत्रं निरपामौब्जदर्णवम् ।
(इन्द्रः ८०९) १।५६।५ (सव्य आङ्गिरसः । इन्द्रः)
[१३७] १।८६।३ स गन्ता गोमति व्रजे ।
(इन्द्रः २२४४) ७।३२।१० गमत्स गोमति व्रजे ।
(इन्द्रः १८२५) ८।४६।९ (वशोऽश्व्यः । इन्द्रः)
(इन्द्रः ५०९) ८।५१ (वाल० ३)।५ गमेम गोमति व्रजे
[१३८] १।८६।४ (गोतमो राहूगणः । मरुतः)
सुतः सोमो दिविष्टिषु ।
उक्थं मदश्च शस्यते ।
(इन्द्रः ६३६) ८।७६।९ (कुरुसुतिः काण्वः । इन्द्रः)
सुतं सोमं दिविष्टिषु ।
[इन्द्रः ३३१७] ४।४९।१ [वामदेवो गौतमः । इन्द्राबृहस्पती]
उक्थं मदश्च शस्यते ।
[१३९] १।८६।५ [गोतमो राहूगणः । मरुतः]
विश्वा यश्चर्षणीरभि ।
[अग्निः ६९६] ४।७।४ [वामदेवो गौतमः । अग्निः]
[अग्निः ९०३] ५।२३।१ [द्युम्नो विश्वचर्षणिरात्रेयः । अग्निः]
[१४८] १।८७।४ [गोतमो राहूगणः । मरुतः]
असि सत्य ऋणयावानेद्यो ।
२।२३।११ [गृत्समदः शौनकः । ब्रह्मणस्पतिः]
...ऋणया ब्रह्मणस्पत ।
[१९१] १।१६८।९ [अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । मरुतः]
आदित् स्वधामिषिरां पर्यपश्यन् ।
१०।१५७।५ [भुवन आप्त्यः साधनो वा भौवनः । विश्वे देवाः]
[१९२] १।१६८।१०= [इन्द्रः ३२६४] १।१६५।१५
=[१७२] १।१६६।१५=[१८२] १।१६७।११
[अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । मरुत्वानिन्द्रः]
एष वः स्तोमो०.....कारोः ।
एषा यासीष्ट०.....जीरदानुम् ॥

ऋग्वेदस्य द्वितीयं मण्डलम् ।

[१९८] २।३०।११ तं वः शर्धं मारुतं ।
(२४३) ५।५३।१० तं वः शर्धं रथानां ।
[२०२] २।३४।४ (गृत्समदः शौनकः । मरुतः)
पृषदश्वासो अनवभ्रराधसः ।
(२१६) ३।२६।६ (गाथिनो विश्वामित्रः । मरुतः)

ऋग्वेदस्य तृतीयं मण्डलम् ।

[२१६] ३।२६।६ = (२०२) २।३४।४

ऋग्वेदस्य पञ्चमं मण्डलम् ।

[२३०] ५।५२।४ [श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः]
वो......स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया ।
[अग्निः १०६३] ६।१६।२२ [भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । अग्निः]
वः ...... स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया ।
[२४३] ५।५३।१० तं वः शर्धं मारुतं सुम्नयुर्गिरा ।
[२५२] ५।५८।१ स्तुषे गणं ... ।
[२४९] ५।५३।१६ [श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः]
रणन् गावो न यवसे ।

१०।२५।१ [विमद ऐन्द्रः प्राजापत्यो वा वसुकृद्वा वासुक्रः । सोमः]
रणन् गावो न यवसे विवक्षसे ।
[२६०] ५।५४।११ [श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः]
विद्युतो गभस्त्योः शिप्राः शीर्षसु वितता हिरण्ययीः ।
[७०] ८।७।२५ [पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः]
विद्युद्धस्ता......शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः ।
[२६५-७३] ५।५५।१-९ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ।
[२६७] ५।५५।३ विरोकिणः सूर्यस्येव रश्मयः ।
(अग्निः १६५४) १०।९१।४ (अरुणो वैतहव्यः । अग्निः)
अरेपसः सूर्यस्येव रश्मयः ।
[२७३] ५।५५।९ (श्यावाश्व आत्रेयः मरुतः)
अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्तन ।
अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गातन ।
६।५१।५ (ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः)
अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्त ।
(४२२) १०।७८।८ (स्यूमरश्मिर्भार्गवः । मरुतः)
अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गात ।
[२७४] ५।५५।१०=४।५०।६ [वामदेवो गौतमः । बृहस्पतिः]
वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।
[२७५] ५।५६।१=१।४९।१ [प्रस्कण्वः काण्वः । उषा]
दिवश्चिद् रोचनादधि ।
[२७८] ५।५६।४=[१६] १।३७।११
प्र च्यावयन्ति यामभिः ।
[२८०] ५।५६।६ युङ्ग्ध्वं ह्यरुषी रथे ।
१।१४।१२ [मेधातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः]
युक्ष्वा ह्यरुषी रथे ।
["] ५।५६।६ [श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः]
रथे... ।
अजिरा धुरि वोळ्हवे वहिष्ठा धुरि वोळ्हवे ।
१।१३४।३ [परुच्छेपो दैवोदासिः । वायुः]
[२९०] ५।५७।७ [श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः]
भक्षीय वो ऽवसो दैव्यस्य ।
[इन्द्रः १५२३] ४।२१।१० [वामदेवो गौतमः । इन्द्रः]
भक्षीय ते ऽवसो दैव्यस्य ।
[२९१] ५।५७।८=[२९९] ५।५८।८ [श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः]
हये नरो मरुतो मृळता नस्तुवीमघासो अमृता ऋतज्ञाः ।
सत्यश्रुतः कवयो युवानो बृहद्गिरयो बृहदुक्षमाणाः ।
[२९२] ५।५८।१=[२४३] ५।५३।१०
[३१९] ५।८७।२ (एवयामरुदात्रेयः । मरुतः)
स्वना महा तदेषाम् ।
(९५) ८।२०।१४ (सोभरिः काण्वः । मरुतः)
[३२२] ५।८७।५ (एवयामरुदात्रेयः । मरुतः)
स्वायुधास इष्मिणः ।
(३५५) ७।५६।११ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । मरुतः)
स्वायुधास इष्मिणः सुनिष्का ।

ऋग्वेदस्य षष्ठं मण्डलम् ।

[३३४] ६।६६।१ (बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । मरुतः)
शुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः ।
(अग्निः ६७५) ४।३।१० (वामदेवो गौतमः । अग्निः)
[३४१] ६।६६।८ नास्य वर्ता न तरुता न्वस्ति ।
१।४०।८ (कण्वो घौरः । ब्रह्मणस्पतिः)
नास्य वर्ता न तरुता महाधने ।
["] ६।६६।८ मरुतो यमवथ वाजसातौ ।
१०।३५।१४ (लुशो धानाकः । विश्वे देवाः)
यं देवासोऽवथ वाजसातौ ।
१०।६३।१४ (गयः प्लातः । विश्वे देवाः)
["] ६।६६।८ तोके वा गोषु तनये यमप्सु ।
(इन्द्रः १९४१) ६।२५।४ (भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । इन्द्रः)
......यदप्सु ।
[३४४] ६।६६।११=(११९) १।६४।११

ऋग्वेदस्य सप्तमं मण्डलम् ।

[३५५] ७।५६।११=(३२२) ५।८७।५
[३६७] ७।५६।२३ इत सनिता वाजमर्वा ।
(इन्द्रः २०१७) ६।३३।२ (शुनहोत्रो भारद्वाजः । इन्द्रः)
[३६९] ७।५६।२५=७।३४।२५ यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ।
["] ७।५६।२५ आप ओषधीर्वनिनो जुषन्त ।
१०।६६।९ (वसुकर्णो वासुक्रः । विश्वे देवाः)
आप ओषधीर्वनिनानि यज्ञिया ।
७।३४।२५ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । विश्वे देवाः)
[३७३] ७।५७।४ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । मरुतः)
यद्व आगः पुरुषता कराम ।
अस्मे वो अस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ।

१०।१५।६ (शङ्खो यामायनः । पितरः)
यद्द...... ।
७।७०।५ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । आश्विनौ)
अस्मे वामस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ।
[३७३] ७।५७।७ आ स्तुतासो मरुतो विश्व ऊती ।
५।४३।१० (अत्रिर्भौमः । विश्वे देवाः)
विश्वे गन्त मरुतो विश्व ऊती ।
[३७६] ७।५८।३ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । मरुतः)
प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेत ।

(इन्द्रः ३१९४) ७।८४।३ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । इन्द्रावरुणौ)
... रेतम् ।
[३८०] ७।५८।६ आराच्चिद् द्वेषो वृषणो युयोत ।
(इन्द्रः ३१११) ६।४७।१३ (गर्गो भारद्वाजः । इन्द्रः)
आराच्चिद् द्वेषः सनुत युयोतु ।
[३८४] ७।५९।१ युष्माकं देवा अवसाहनि ।
१।११०।७ (कुत्स आंगिरसः । ऋभवः)
["] ७।५९।१ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । मरुतः)
प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ।
८।२७।१६ (मनुर्वैवस्वतः । विश्वे देवाः)

ऋग्वेदस्याष्टमं मण्डलम् ।

[४६] ८।७।१ प्र यद् वस्त्रिष्टुभमिषं ।
(इन्द्रः २३०४) ८।६९।१ (प्रियमेध आंगिरसः । इन्द्रः)
प्रप्र वस्त्रिष्टुभमिषं ।
[४७] ८।७।२ यदङ्ग तविषीयवो ।
(इन्द्रः २६८) ८।६।२६ (वत्सः काण्वः । इन्द्रः)
यदङ्ग तविषीयस ।
[४७,५९] ८।७।२,१४ यामं शुभ्रा अचिध्वम् ।
[४८] ८।७।३ (पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः)
धुक्षन्त पिप्युषीमिषम् ।
(इन्द्रः ३४५) ८।१३।२५ (नारदः काण्वः । इन्द्रः)
धुक्षस्व पिप्युषीमिषमवा च नः ।
(इन्द्रः५३७) ८।५४, वाल० ३।७ (मातरिश्वा काण्वः । इन्द्रः)
धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ।
९।६१।१५ (अमहीयुराङ्गिरसः । पवमानः सोमः)
धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ।
[४९] ८।७।४ = (४०) १।३९।५
प्र वेपयन्ति पर्वतान् ।
[५३,८३] ८।७।८,३३ ते भानुभिर्वि तस्थिरे ।
[५५] ८।७।१० (पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः)
दुदुह्रे वज्रिणे मधु ।
(इन्द्रः २३०९) ८।६९।६ (प्रियमेध आंगिरसः । इन्द्रः)
[५६] ८।७।११ = (१७) १।३७।१२
मरुतो यद्ध वो दिवः [बलं] ।
[५७] ८।७।१२ = (५) १।१५।२
यूयं हि ष्ठा सुदानवः [रुद्र] ।
[५८] ८।७।१३ दुरश्रुं विश्वादनम् ।
८।५।१५ (ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
6

[६०] ८।७।१५ (पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः)
एषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ।
८।१८।१ (इरिम्बिठिः काण्वः । आदित्याः)
[६५] ८।७।२० (पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः)
मह्मा को वः सपर्यति ।
(इन्द्रः ५९५) ८।६४।७ (प्रगाथः काण्वः । इन्द्रः)
मह्मा कस्त सपर्यति ।
[६७] ८।७।२२ (पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः)
सम् ... सं क्षोणी समु सूर्यम् । सम् ... ।
(इन्द्रः ५२४) ८।५२ (वाल० ४)।१०
(आयुः काण्वः । इन्द्रः)
सम् ... सं क्षोणी समु सूर्यम् ।
सम् ... सम् ।
[६८] ८।७।२३ = (इन्द्रः २५५) ८।६।१३
वि वृत्रं पर्वशो ययुः (रुजन्) ।
[७०] ८।७।२५ = (३६०) ५।५४।११
[७१] ८।७।२६ = (इन्द्रः १०१९) १।१३०।९
उशना यत् परावतः ।
[७३] ८।७।२८ = (४१) १।३९।३
[७६] ८।७।३१ = (२१) १।३८।१
[८०] ८।७।३५ (पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः)
यद्धन्वन्तरिक्षेण पततः ।
१।३५।७ (कुत्सः ... आङ्गिरसः । मरुतः)
पदन्तरिक्षेण पततात् ।
[८३] ८।७।३० = (१३) १।३७।८
नूनं (मित्र) यमिन्नु रेजते ।

[८९] ८।२०।८ (सोभरिः काण्वः । मरुतः)
रथे कोशे हिरण्यये ।
८।२२।९ (सोभरिः काण्वः । अश्विनौ)
रथे कोशे हिरण्यये वृषण्वसू ।
[९५] ८।२०।१४ = (३१९) ५।८७।२
[१०७] ८।२०।२६ (सोभरिः काण्वः । मरुतः)
तेना नो अधि वोचत ।
८।६७।६ (मत्स्यः साम्मदः मान्यो मैत्रावरुणिः बहवो वा मत्स्या जालनद्धाः । आदित्याः)
["] ८।२०।२६ इष्कर्ता विहुतं पुनः ।
(इन्द्रः ९८) ८।१।१२ (मेधातिथि-मेध्यातिथी काण्वौ । इन्द्रः)
[३९७] ८।९४।३ तत् सु नो विश्वे अर्य आ सदा गृणन्ति कारवः ।
६।४५।३३ (शंयुर्बार्हस्पत्यः । बृबुस्तक्षा)
["] ८।९४।३ मरुतः सोमपीतये ।
१।२३।१० (मेधातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः)
[३९८] ८।९४।४ अस्ति सोमो अयं सुतः ।
(इन्द्रः १७६६) ५।४०।२ वृषा सोमो अयं सुतः ।
[४०२] ८।९४।८ = १।२८।१०
[४०३] ८।९४।९= १।२३।१०(मेधातिथिः काण्वः । विश्वे देवाः)
[४०४-६] ८।९४।१०-१२ अस्य सोमस्य पीतये ।
= १।२२।१ (मेधातिथिः काण्वः । अश्विनौ)
(इन्द्रः ३२१३) १।२३।२ (मेधातिथिः काण्वः । इन्द्रवायू)
(इन्द्रः ३३२१)४।४९।५(वामदेवो गौतमः। इन्द्राबृहस्पती)
(इन्द्रः ३०५५)६।५९।१०(बार्हस्पत्यो भरद्वाजः। इन्द्राग्नी)
(इन्द्रः ६३३) ८।७६।६ (कुरुसुतिः काण्वः । इन्द्रः)
५।७१।३ (बाहुवृक्त आत्रेयः । मित्रावरुणौ)

ऋग्वेदस्य दशमं मण्डलम् ।

[४१२] १०।७७।६ = (इन्द्रः २१११) ६।४७।१३ (गर्गो भारद्वाजः । इन्द्रः)
[४१४] १०।७७।८ ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमाः ।
७।३९।४ (वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । विश्वे देवाः)
[४२२] १०।७८।८ = (२७३) ५।५५।९

दैवत-संहितान्तर्गत

मरुद्देवता-मन्त्राणां उपमासूची ।

अग्नयः न इधानाः ६,६६,२; ३३५ मरुतः शोशुचन् ।
अग्नयः न २,३४,१; १९९ शुशुचानाः ।
" " ५,८७,३; ३२० स्वविद्युतः ।
" " ५,८७,६; ३२३ शुशुक्वांसः ।
अग्निः न १०,७८,२; ४१६ भ्राजसा रुक्मवक्षसः ।
अग्नीनां न जिह्वाः १०,७८,३; ४१७ विरोकिणः ।
अग्नितपः यथा ५,६१,४; ३११ [तद्वत् प्रदीप्ताः] ।
अङ्गिरसः न १०,७८,५; ४१९ सामभिः विश्वरूपाः ।
अत्यम् न १,६४,६; ११३ वाजिनं मिहे वि नयन्ति ।
अत्यासः न ७,५६,१६; ३६० स्वञ्चः ।
अत्याः इव ५,५९,३; ५०२ शुभ्वः चारवः ।
अत्यान् इव वाजिषु २,३४,३; २०१ अश्वान् उक्षन्ते ।
अदितेः इव व्रतम् १,१६६,१२; १६९ दीर्घं दात्रम् ।
अद्रयः न ५,८७,२; ३२१ अदृष्टासः ।
" " आदद्रिरासः १०,७८,६; ४२० विश्वहा ।
अध्वरस्य इव ६,६६,१०; ३४३ मरुतः विद्युत् ।
अन्वम् न १,३७,३; ११ सीम् धनुय ।
अपः न १,६४,१; १०८ मनसा गिरः समञ्जे ।
आपः इव ८,९६,७; ४०१ सूरयः गिरः ह्वयन्त ।
" " ५,६०,३; ४५१ सध्र्यञ्चः धवध्वे ।
" " न १०,७८,५; ४१९ निम्नैः उदभिः जिगत्नवः ।
अपां न ऊर्मयः १,१६८,२; १८२ सहस्रियासः मरुतः ।
अपां न यामनि १०,७७,४; ४१० युष्माकं बुध्ने अपां न ।
अभ्रप्रुषः न १०,७७,१; ४०७ वाचा वसुप्रुषा ।
अभ्रात् न सूर्यः १०,७७,३; ४०९ त्मना प्र रिरिच्रे ।
अभ्रियाः न २,३४,२; २०० वृष्टयः वि द्युतयन्त ।
अमतिः न १,६४,९; ११६ [स्थितः] रथेषु आ तस्थौ ।
अराः इव ५,५८,५; २९६ अचरमाः ।
अराणां न चरमः ८,२०,१४; ९५ एषां दाना मह्ना ।
अर्कम् न अभिस्वतरिः १०,७८,४; ४१८ सुदुनः ।
अर्णः न ८,२०,१३; ९४ अप्यः स्वेदम् ।
" " १,१६७,९; १८० मरुतः द्वेषः परि स्थुः ।
अर्दनम् न ६,४८,१४; ३६० मन्द्रम् ।
अर्वन्तः न ५,५४,८; २५६ [तीव्राः] ।
अश्वाः इव ५,५९,५; ३०४ [शीघ्रगन्तारः] ।
अश्वासः न १०,७८,५; ४१९ ज्येष्ठासः आशवः ।
अश्वाः इव अध्वनः ५,५३,७; २४० क्षोदसा रजः प्र सस्रुः ।
अश्वाम् इव ऊधनि २,३४,६; २०४ धेनुं पिप्यत ।
असुर्यां इव १,१६८,७; १८९ रातिः जञ्जती ।
अह्ना इव ५,५८,५; २९६ अचरमाः ।
आयुन् इव अथ० ४,२७,१; ४४१ सुयमान् अह्व ऊतये ।
इत्था न नमसः १,१६७,३; १७३ स्वेव प्रतीका विधतः ।
इन्द्रम् न ६,४८,१४; ३३० सुक्रतुं मारुतं गणम् ।
इन्द्रम् देवी यथा वा०य० १७,८६; ४२७ यजमानं विशः ।
इषुम् न १,३९,१०; ४५ द्विषं ऋषिद्विषे सृजत ।
उपरा न १,१६७,३; १७३ ऋष्टिः ।
उषा न रामीः अरुणैः २,३४,१२; २१० महः ज्योतिषा ।
उषसां न केतवः १०,७८,७; ४२१ अध्वरश्रियः ।
उस्राः इव केचित् १,८७,१; १४५ अञ्जिभिः व्यानज्रे ।
ऊर्मः न ५,५३,३; २३६ अमः गिरिवान् ।
ऋजिप्यासः न २,३४,४; २०२ वयुनेषु धूर्षदः ।
ऋष्टिषु प्रदेवासु १,१६६,४; १६१ विश्वा हर्म्या भुवनानि
एतवाः न अह्नयः १,१६८,५; १८७ पुरुप्रैषा [लोकैः] ।
एताः न यामे ५,५४,५; २५४ योजनं दीर्घं ततान ।
एधा इव १,१६६,१; १५८ तविषाणि कर्तना ।
क्रिविम् न ५,५९,३; ३०४ भूमिं रेजथ ।
क्षितीनां न मर्याः १०,७८,१; ४१५ अरेपसः ।
गर्भम् इव भर्ता ५,५८,७; २९८ स्तनिद् गवः धुः ।
गवां सर्गम् इव ५,५३,५; २७१ [गवां सर्गं] हवे
गवाम् इव शृङ्गम् ५,५९,३; ३०२ उत्तमं श्रियसे [धारयथ] ।
गावः न १०,३८,२; ३३३ [illegible]
गावः न १,१६८,२; १८२ वन्द्यासः ।
गावः न वन्द्यासः १,१६८,२; १८२ उक्षणः ।
गावः न यवसे ५,५३,१६; २४९ [मरुतः] रणन् ।
गावः न दुर्धुरः ५,५६,४; २६८ ओजसा धृषता निनाति
गावः इव [illegible] ८,२०,११; १०० [illegible]
गिरयः न १,६४,७; ११४ स्वतवसः ।

[illegible] ३९३ [परिशुद्ध:] [illegible]

[illegible] धाराः [illegible]

[illegible]

राजानः न चित्राः १०,७८,१; ४१५ चित्राः सुसंदृशः ।
रिशादसः न मर्याः १०,७७,३; ४०९ अभिद्यवः ।
रुक्मः न १,८८,२; १५२ चित्रः मरुद्गणः ।
रुक्मः इव उपरि दिवि ५,६१,१२; ३१३ मरुतः रथेषु ।
वत्सम् न मातरम् १,३८,८; २८ विद्युत् मरुतः सिषक्ति ।
वत्सासः न ७,५६,१६; ३६०; प्रक्रीळिनः ।
वना न १,८८,३; १५३ मेधा ऊर्ध्वा कृणवन्ते ।
वयः न १,८५,७; १२९ मरुतः बर्हिषि अधि सीदन् ।
वयः इव १,८७,२; १४३ केनचित् पथा मरुतः यामि अचिध्वम्
वयः न १,८८,१; १५१ नः आपप्तत् ।
वयः न ५,५९,७; ३०३ मरुतः श्रेणीः परि पप्तुः ।
वयः न पक्षान् १,१६६,१०; १६७ मरुतः श्रियः अनु वि धिरे ।
वयः न पित्र्यं सहः ८,२०,१३; ९४ येषां एकमित् नाम भुजे ।
वराः इव ५,६०,४; ४५२ रैवतासः हिरण्यैः तन्वः पिपिश्रे ।
वरुणम् इव ६,४८,१४; ३३० मायिनम् ।
वरेयवः न मर्याः १०,७८,४; ४१८ घृतप्रुषः ।
वर्मण्वन्तः न योधाः १०,७८,३; ४१७ शिमीवन्तः ।
वव्रासः न १,१६८,२; १८४ मरुतः स्वजाः स्वतवसः ।
वाजासः न १०,७८,२; ४१६ स्वयुजः सद्य ऊतयः च ।
वातासः न १०,७८,३, ४१७ धुनयः जिगत्नवः ।
वाश्रा इव १,३८,८; २८ विद्युत् मिमाति ।
वाश्रा इव २,३४,१५; २१३ सुमतिः आ जिगातु ।
विधुरा इव १,८७,३ १४७ एषां अज्मेषु भूमिः प्ररेजते ।
विधुरा इव १,१६८,६; १८८ संहितं च्यावयथ ।
विदथ्या इव वाक् १,१६७,३; १७४ सभावती ।
विद्युत् न दर्शता १,१६६,९; १६६ रथेषु वः(तेजः)आ तस्थौ ।
विद्युतः न वृष्टिभिः ७,५६,१३; ३५७ रुचानाः ।
विप्रासः न १०,७८,१; ४१५ मन्मभिः स्वाध्यः मरुतः ।
विष्णुम् न ३,४८,१४; ३३० स्तुमोजसम् ।
वृष्टिम् न विद्युतः १,३९,९; ४४ ऊतिभिः नः आ गन्त ।
शंसः नरां न २,३४,६; २०४ नः सवनानि आ गन्तन ।
शिशवः न हर्म्येष्ठाः ७,५६,१६; ३६० शुभ्राः ।
शिशूलाः न क्रीळयः १०,७८,६; ४२० क्रीळयः ।

शुभंयवः न १०,७८,७; ४२१ अञ्जिभिः व्यश्वितन् ।
शूराः इव १,८५,८; १३० जग्मयः ।
शूराः इव ५,५९,५; ३०४ प्रयुधः ।
शोचिः न १,३९,१; ३६ मानम् परावतः प्र अस्यथ ।
श्येनासः न पक्षिणः ८,२०,१०; ९१ नः हव्यानि आ गत ।
श्येनासः न १०,७७,५; ४११ स्वयशसः रिशादसः ।
श्रवस्यवः न १,८५,८; १३० मरुतः पृतनासु येमिरे ।

सखीन् इव पूर्वान् ५,५३,१६; २४९ मरुतः अनु ह्वय ।
सत्वानः न १,६४,२; १०९ घोरवर्पसः ।
सातिः न १,१६८,७; १८९ वः रातिः अमवती ।
साधारण्या इव १,१६७,४; १७५ यव्या परा मिमिक्षुः ।
सिंहाः इव १,६४,८; ११५ प्रचेतसः नानदति ।
सिंहाः न हेषक्रतवः ३,२६,५; २१५ स्वानिनः रुद्रियाः ।
सिन्धवः न १०,७८,७; ४२१ मरुतः ययियः ।
सुधिता इव बर्हणा १,१६६,६; १६३ क्रिविर्दती दिद्युत् ।
सूरः न छन्दः ८,७,३६; ३२१ अग्निः पूर्व्यः जानि ।
सूर्यः न योजनम् ५,५४,५; २५४ तद्वीर्यं दीर्घं ततान ।
सूर्यः न ५,५९,३; ३०२ रजसः विसर्जने चक्षुः ।
सूर्याः इव १,६४,२; १०९ शुचयः ।
सूर्याः इव १,१६७,५; १७६ विषितस्तुका विधवः रथं ।
सूर्यस्य इव चक्षणम् ५,५५,४; २६८ दिदृक्षेण्यं वः महत्त्वम् ।
सूर्यस्य इव रश्मयः ५,५५,३; २६७ विरोकिणः ।
सोमासः न सुताः तृप्तांशवः १,१६८,३; १८५ पीतासः हृत्सु ।
सोमाः न १०,७८,२; ४१६ सुशर्माणः ।
स्तृभिः इव दिव्याः १,१६६,११; १६८ दूरेदृशः ।
स्वर् न ५,५४,१५; २६४ नॄन् अभि ततनाम ।

हंसासः आ नीळपृष्ठाः ७,५९,७; ३८९ मरुतः अपप्तन् ।
हंसासः न स्वसराणि २,३४,५; २०३ मधोः मदाय ।
हन्वा इव जिह्वया १,१६८,५; १८७ त्मना कः रेजति ।
हविष्मन्तः न यज्ञाः १०,७७,१; ४०७ मरुतः वि जानुषः ।
हिताः इव १,१६६,३; १६० मयोभुवः ।
होता इव ८,९३,६; ४०० इन्द्रः प्रातः अस्य मत्सति ।

दैवत-संहितान्तर्गत

मरुद्देवता–मन्त्राणां सूची ।

अंसेषु व ऋष्टयः	२६०
अंसेष्वा मरुतः खादयो	३५७
अग्निर्न ये भ्राजसा	४१६
अग्निर्हि जानि पूर्व्य	८१
अग्निश्च यन्मरुतो	४५५
अग्निश्रियो मरुतो	२१५
अग्ने मरुद्भिः शुभ	४५६
अग्ने शर्धन्तमा गणं	२७५
अच्छ ऋषे मारुतं	२३०
अच्छा वदा तना गिरा	३३
अच्युता चिद् वो	८६
अज्येष्ठासो अकनिष्ठास	४५३
अतः परिज्मन्ना गहि	४
अतीयाम निदस्तिरः	२४७
अत्यासो न ये मरुतः	३६०
अद्वारसृद् भवतु देव	४५७
अद्वेषो नो मरुतो	३२५
अध स्वनान्मरुतां	३०
अधा नरो न्योहते	२२७
अधीव यद् गिरीणां	५९
अनवद्यैरभिद्युभिः	३
अनु त्रितस्य युध्यतः	६९
अनेनो वो मरुतो	३४०
अन्तः समुद्राद् दिवं	४४३
अपामग्निस्तनूभिः	४६४
अपारो वो महिमा	३२३
अभि क्रन्द स्तनया	४६०
अभि स्वपूभिर्मिथो	३४७
अभ्रप्रुषो न वाचा	४०७
अभ्राजि शर्धो मरुतो	२५५
अमादेषां भियसा	३०१
अमाय वो मरुतो	८७
अया इवेदचरमा	२९६
अर्हन्तो ये सुदानवो	२२१
अव स्वयुक्ता दिव	१८६
अश्वा इवेदरुषासः	३०४
अश्वासो न ये ज्येष्ठास	४१९
असामि हि प्रयज्यवः	४४
असाम्योजो बिभृथा	४५
असूत पृश्निर्महते	१९१
असौ या सेना	४३५
अस्ति सोमो अयं सुतः	३९८
अस्ति हि ष्मा मदाय	२०
असे वीरो मरुतः	३६८
अस्य वीरस्य बर्हिषि	१३८
अस्य श्रोषन्त्वा भुवो	१३९
अहानि गृध्राः पर्या	१५४
आक्ष्णयावानो वहन्ति	८०
आ गन्ता मा रिषण्यत	८२
आ च नो बर्हिः	३८८
आदह स्वधामनु	१
आ नोऽवोभिर्मरुतो	१७३
आ नो ब्रह्माणि	२०४
आ नो मखस्य दावने	७९
आ नो रयिं मदच्युतं	५८
आपथयो विपथयो	२२६
आपो विद्युदभ्रं वर्षं	४६३
आभूषेण्यं वो मरुतो	२६८
आ यं नरः सुदानवो	२३९
आ यात मरुतो	२४१
आ ये तस्थुः पृषतीषु	४५०
आ ये रजांसि	१६१
आ ये विश्वा पार्थिवानि	४०३
आ रुक्मैरा युधा	२१२
आ रुद्रास इन्द्रवन्तः	२८४
आरे सा वः सुदानवो	१९६
आ विद्युन्मद्भिः	१५१
आ वो मक्षू तनाय	४२
आ वो यन्तूदवाहासो	२९४
आ वो वहन्तु	१२८
आ वो होता जोहवीति	३६२
आशामाशां वि द्योतता	४६२
आ सखायः सबर्दुघां	३२७
आ स्तुतासो मरुतो	३७६
आस्थापयन्त युवतिं	१७७
इन्द्रं दैवीर्विशो	४२७
इन्धन्वभिर्धेनुभी	२०३
इमा उ वः सुदानवो	६४
इमां मे मरुतो	५४
इमे तुरं मरुतो	३६३
इमे रध्रं चिन्मरुतो	३६४
इहेव शृण्व एषां	८
इहेह वः स्वतवसः	३९३
ईदृक्षास एतादृक्षास	४२५
ईळे अग्निं स्ववसं	४४९
ईशानकृतो धुनयो	११२
उक्षन्ते अश्वाँ अत्याँ	२०१
उग्रं व ओजः स्थिरा	३५१
उत वा यस्य वाजिनो	१३७
उत स्तुतासो मरुतो	३७५
उत स्म ते परुष्ण्याम्	२२५
उत स्य वाज्यरुषः	२८१
उतो न्वस्य जोषमाँ	४००
उत् तिष्ठ नूनमेषां	२७९
उत्समक्षितं व्यचन्ति	४४१
उदप्रुतो मरुतस्ताँ	४३१
उदीरयत मरुतः	४५९
उदीरयथा मरुतः	२६९
उदीरयन्त वायुभिः	४८

उदु त्ये अरुणप्सव	५१
उदु त्ये सूनवो गिरः	१५
उदु स्वानेभिरीरत	३१
उपयामगृहीतोऽसि	४३४
उपह्वरेषु यदचिध्वं	१४३
उपो रथेषु पृषती	४१
उशना यत् परावत	७१
उषसां न केतवोऽध्वर	४११
ऊर्ध्वं नुनुद्रेऽवतं	१३१
ऋधक् सा वो मरुतो	३७३
ऋष्टयो वो मरुतो	२८९
एतद् स्त योजन	१५५
एतानि धीरो निण्या	३४८
एतावतश्चिदेषां	६०
एष वः स्तोमो मरुत	१७१,१८९,१९२
एष वः स्तोमो मरुतो	१९४
एषा स्या वो मरुतो	१५३
ऐतान् रथेषु तस्थुषः	२३५
ओ षु घृष्विराधसो	३८७
ओ षु वृष्णः प्रयज्यून्	७८
क ईं व्यक्ता नरः	२४५
कद्वाविदन्त सूरयः	४०१
कद्धा गच्छाथ मरुत	७५
कद्ध नूनं कधप्रियः	२१,७३
कद्धो अद्य महानां	४०१
कस्मा अद्य सुजाताय	२४५
कृते चिदत्र मरुतो	३७४
के ष्ठा नरः श्रेष्ठतमा	३०८
को वेद जानमेषां	३३४
को वेद नूनमेषां	३३५
को वोऽन्तर्मरुत	१८७
को वो महान्ति महतां	३०३
को वो वर्षिष्ठ आ	११
क्रीळं वः शर्धो मारुतं	३
क्व नूनं कद् वो	२२
क्व नूनं सुदानवो	३७
क्व वः सुम्ना नव्यांसि	२३
क्व वोऽश्वाः क्वाभीशवः	३०९
क्व स्विदस्य रजसो	१८८
गन्ता नो यज्ञं यज्ञियाः	३३३
गमास्त्वोप गादन्तु	४५८
गवामिव श्रियसे	३०१
गावश्चिद् घा समन्यवः	२०१
गिरयश्चिन्नि जिहते	७९
गुहता गुह्यं तमो	१४४
गृहमेधास आ गत	३३३
गोभिर्वाणो अज्यते	८३
गोमदश्वावद् रथवत्	३९०
गोमातरो यच्छुभयन्ते	२२५
गौर्धयति मरुतां	३९५
ग्रावाणो न सूरयः	४३०
घृतं पावकं वनिनं	११९
चर्कृत्यं मरुतः पृत्सु	१११
चित्रं तद् वो मरुतो	३०८
चित्रैरञ्जिभिर्वपुषे	१११
चित्रो वोऽस्तु यामश्चित्र	१६५
छन्दःस्तुभः कुभन्यव	३१८
छन्दांसि यज्ञे मरुतः	४३१
जवने चोद एषां	३१०
जनूश्चिद् वो मरुतस्त्वे	३७८
जिह्मं नुनुद्रेऽवतं	११३
जोषद् यदीमसुर्या	१९३
तं न इन्द्रं न सुक्रतुं	३३०
तं वः शर्धं मारुतं	१९८
तं वः शर्धं रथानां	२४३
तं वः शर्धं रथेशुभं	२८३
तं वृधन्तं मारुतं	३४६
त उग्रासो वृषणः	३३६
त उक्षितासो महिमानं	१२४
[illegible]	६३
[illegible]	३६९
तद् वः सुजाता	१३१
तद् वीर्यं वो मरुतो	२४६
तद् वो जामित्वं	१९०
[illegible]	२३६
[illegible]	२३१
[illegible]	२३१
[illegible]	१४८
तं नो दात मरुतो	२०५
तदु नूनं तविषीं	२९२
तव श्रिये मरुतो	४४८
तनूदानाः सिन्धवः	२४०
तां आ रुद्रस्य मीळ्हुषो	३८१
तां इयानो महि	२१२
तान् वन्दस्व मरुतस्तां	९५
तान् वो महो मरुत	२०६
तिग्ममनीकं विदितं	४४३
तुविस्कन्दस्य नु विशः	१३७
ते अज्येष्ठा अकनिष्ठास	३२५
तेऽरुणेभिर्वरमा	१५२
तेऽवर्धन्त स्वतवसो	१९३
ते क्षोणीभिररुणेभिः	२११
ते जज्ञिरे दिव ऋष्वास	१०९
ते दशग्वाः प्रथमा	३१०
ते नो वसूनि काम्या	३१७
ते म आहुर्ये	३३३
ते रुद्रासः सुमखा	३३४
ते स्यन्द्रासो नोक्षणो	३१९
ते हि यज्ञेषु यज्ञियास	४१४
ते हि स्थिरस्य	३१८
त्यं चिद् घा दीर्घं	६३
त्ये नु मारुतं गणं	४०३
[illegible]	४०४
[illegible]	३०४
[illegible]	४०७
[illegible]	[illegible]
[illegible]	१३२
[illegible]	३४३
[illegible]	३३३
[illegible]	३३१
[illegible]	३३१
[illegible]	६१
[illegible]	३
[illegible]	[illegible]
[illegible]	१३१
[illegible]	३८३
[illegible]	३३३

[illegible]

सोमासो न ये सुताः	१८५	स्थिरा वः सन्त्वायुधा	३७	स्मरं दुधिरे तविषीं	२३६
स्तुहि भोजान्त्स्तुवतो	२४९	स्वनर्वोश्च प्रघासी न	४०३	स्वायुधास इष्मिणः	३४५
स्थिरं हि जानमेषां	१४	स्वधामनु श्रियं नरो	८८	हये नरो मरुतो	२९१,२९९
स्थिरा वः सन्तु नेमयो	३९	स्वनो न वोऽमवान्	३०२	हिरण्ययेभिः पविभिः	११८

दैवत-संहितान्तर्गत-मरुद्देवतायाः

गुणबोधक–पदानां सूची ।

['मरुतः' इति बहुत्वम्, 'मरुतां गणः' इति एकवचनम् । अतः गुणबोधकपदानि उभयवचनान्तानि संहितायां संदृश्यन्ते ।]

अकनिष्ठासः ५,५९,६; ३०५ । ६०,५; ४१३
अकवाः ५,५८,५; २९६
अक्राः १०,७७,२; ४०८
अखिद्रयामानः १,३८,११; ३१
अगृभीतशोचिषः ५,५४,५; २५४
अग्निजिह्वाः वा० य० २५,२०; ४९८
अग्निश्रियः ३,२६,५; २१५
अघ्न्यः १,३७,५; १०
अचरमाः ५,५८,५; २९६
अच्युताचित्–ओजसा प्रच्यावयन्तः १,८५,४; १२६
अजगराः अथ० ४,१५.७,९; ४६१,४६३
अजराः १,६४,३; ११०
अज्येष्ठाः ५,५९,६; ३०५ । ६०,५; ४१३
अञ्जिमन्तः ५,६७,५; २८८
अद्राभ्याः २,३४,१०; २०८ । ३,२६,४; २१४
अक्रुतैनसः ५,८७,७; ३२४
अद्रिं रंहयन्तः १,८५,५; १२७
अद्वेषः ५,८७,८; ३२५
अधिपतयः पर्वतानाम् अथ० ५,२४.६; ४३६
अधृष्टाः–ष्टासः ५,८७,२; ३१९ । ६,६६,१०; ३४३
अध्रिगावः १,६४,३; ११०
अध्वरश्रियः १०,७८,७; ४२१
अनन्तशुष्माः १,६४,१०; ११७
अनर्वा १,३७,१; ६ । ६,४८,१५; ३३१
अनवद्याः १,६,८; ३ । ७,५७,५; ३७४
अनवभ्रराधसः १,१६६,७; १६४ । २,३४,४; २०२ । ३,२६,६; २१६ । ५,५७,५; २८८
अनानताः १,८७,१; १४५
अनीकं तिग्मम् अथ० ४,२७,७; ४४६
अनुपथाः ५,५२,१०; २२३
अनुवर्त्मानः इन्द्रं दैवीः विशः वा० य० १७,८६; ४९७
अनेद्यः १,८७,४; १४८ । ५,६१,१३; ३१४
अन्तरिक्षेण पततः ८,७,३५; ८०
अन्तस्पथाः ५,५२,१०; २२६
अप्रतिष्कु–स्कु–तः ५,६१,१३; ३१४
अप्स्या सुहुः ५,५४,३; २५२
अभिद्यु:-द्यवः १,६,८; ३ । ८,७,२५; ७० । १०,७७,३; ४०९ । ७८,४; ४१८
अभिस्वर्तारः १०,७८,४; ४१८
अभीरवः १,८७,६; १५०
अभोग्घनः १,६४,३; ११०
अमध्यमासः ५,५९,६; ३०५
अमर्त्याः १,१६८,४; १८६
अमवन्तः १,३८,७; २७ । ८,२०,७; ८८
अमिताः ५,५८,२; २९३
अमृताः-तासः १,१६६,३,१३; १६०,१७० । ५,५७,६; २९१ । ५८,८; २९९
अयासः १,६४,११; ११८ । १६७,४; १७५ । १६८,९; १९१ । ७,५८,२; ३७८
अयोदंष्ट्राः १,८८,५; १५५

अराजिनः ८,७,२३; ६८
अरिष्टग्रामाः १,१६६,६; १६३
अरुणप्सवः ८,७,७; ५२
अरुणाश्वाः ५,५७,४; २८७

मरुतां अश्वाः।

अजिरा ५,५६,६; २८०
अरुणाः १,८२,२; १५२
अरुषः ५,५६,७; २८१
अरुषी ५,५५,६; २७०
आशवः २,३४,३; २०१। ५,६१,११: ३१२
एतासः १,१६६,४; १६१
तुविष्वणिः ५,५६,७; २८१
दर्शतः ५,५६,७; २८१
नियुतः ५,५४,८; २५७
पिशंगा १,८८,२; १५२
पृषती: १,३९,६; ४१। ५,५५,६; २७०। ५७,३; २८६। ५८,६; २९७
प्रष्टिः १,८५,४-५; १२३,१२७
रथतुरः १,८८,२; १५२
रोहितः १,३९,६; ४१। ५,५६,६; २८०
वहिष्ठाः ५,५६,६; २८०
वाताः ५,५८,७; २९८
सुयमाः ५,५५,१; २६५
स्वयतासः १,१६६,४; १६१
हरी ५,५६,६; २८०

अरुपासः ५,५९,५; ३०४
अरेणवः १,१६८,४; १८३
अरेपसः १,६४,२; १०९। ५,५३,३; २३३। ५७,४; २८७। ६१,१४; ३१९। १०,७८,१; ४१५
अर्काः ५,५७,५; २८८
अर्क अर्चन्तः १,८५,२; १२४
अर्की १,३८,१५; ३५
अर्चत्रयः ६,६६,१०; ३४३
अर्चिनः तविषीभिः २,३४,१; १९९
अर्यः ५,५४,१२; २६१
अर्हन्तः ५,५२,५; २२१
अलातृणासः १,१६६,७; १६४
अविथुराः १,८७,१; १४५
अश्मदिद्यवः ५,५४,३; २५२
अश्वयुजः ५,५४,२; २५१
असश्चद्विषः ८,२०,२४; १०५
असामिशवसः ५,५२,५; २२१
असुराः १,६४,२; १०९
अस्तारः १,६४,१०; ११७
अस्रेधन्तः ७,५९,६; ३८८
अहिभानवः १,१७२,१; १९५
अहिमन्यवः शवसा १,६४,८-९; ११५,११६
अहुताप्सवः ८,२०,७; ८८
आदित्यासः १०,७७,२; ४०८
आपथयः ५,५२,१०; २२६
आपयः ५,५३,२; २३५
आयुधः ५,६०,८; ४५६
आशवः १०,७८,५; ४१९। साम० ३५६, ४२९
आसासः ५,५६,२; २७६
आश्वश्वाः ५,५८,१; २९७
आसभिः स्वरितारः १,१६६,११; १६८
इनासः ५,५४,८; २५७
इन्द्रवन्तः ५,५७,१; २८४
इन्द्रियं जनयन्तः १,८५,२; १२४
इषुमन्तः ५,५७,२; २८५
इष्मिणः १,८७,६; १५०। ५,८७,५; ३२२। ७,५६, ११; ३५५
ईदृक्षासः वा० य० १७,८४; ४२५
ईशानः--नाः १,८७,४; १४८। अथ० ४,२७,४-५; ४४३,४४४
ईशानकृतः १,६४,५; ११२
उक्षणः १,६४,२; १०९
उक्षमाणाः तन्वम् ६,६६,४; ३३७
उक्षितासः १,८५,२; १२४
उक्षिताः साकम् ५,५५,३; २६७
उग्राः-ग्रासः ८,२०,१२; ९३। १,१६६,६,८; १६३,१६५। ५,५७,३; २८६। ६,६६,५-६; ३३८,३३९। ७,५८,१; ३७०। अथ० १३,१,३; ४३३। ३,१,२; ४३४
उग्रं पृतनासु अथ० ४,२७,७; ४४६
उग्राः ओजोभिः ७,५६,६; ३५०
उग्रवाहनः ८,२०,१२; ९३
उग्रेशी वा० य० १७,८५; ४२६
उत्साः अथ० ४,१५,७,९; ४३१,४३३
उदन्यवः ५,५४,२; २५१
उद्भुतः अथ० ६,२२,३; ४३९

[illegible]

गणः-णाः १,६,८:३ । ८७,४:१४८ । ५,५६,१:२७१ ।
५,५८,२: २९३ । ७,५८,१: ३७७
गणाः मरुताम् अथ० ४,१३,४: ४३७
गणाः मारुताः अथ० ४,१५,४: ४५८
गणः मारुतः १,३८,१५,३५ । ६४,१२;११९ । ५,५३,१०;
२४३ । ५,६१.१३: ३१४ । ८,९४,१२; ४०६
गणश्रियः १,६४,९: ११६ । ५.६०,८; ४५६
गन्तारः यज्ञम् ३,२६,६; २१६
गिरः सुतः १,३७,१०; १५
गिरिष्ठाः ८,९४.१२; ४०६
गृणानाः ५,५५,१०; २७४ । ५९,८; ३०७
गृहमेधासः ७,५९,१०; ३९९
गृहमेधी वा०य० १७,८५; ४९६
गोबन्धवः ८,२०,८; ८९
गोमातरः १,८५,३; १९५

मरुतां माता ।

[illegible] ६,४८,१२; ३२७
[illegible] ६,४८,२२; ३२८
[illegible] ८,९४,१; ३९५
[illegible] ६,४८,२२; ३२७
[illegible] ५,५७,२२; ३३२
[illegible] ८,९४,२,३९१
[illegible] ८,९४,१; ३९५
[illegible] ८,९४,१; ३९५
[illegible] ६,४८,१३; ३२९
[illegible] ६,४८,१३; ३२९
[illegible] ८,९४,१; ३९५
[illegible] ६,४८,२२; ३२७
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

चक्राणाः वृष्णि पौंस्यम् ८,७,२३; ९८
चन्द्राः ८,१० १०, १०१
चारवः ५,५७,३; ३०२
चित्राः ८,७.७; ५२
चित्रभानवः १,२४,७; ११४ । ८५,११; १२२
चित्रवाजाः ८,७,३३; ७८
छन्दस्तुभः ५,५२,१२; २२८
जग्मयः १,८५,८; १२०
जग्मयः विदथेषु वा० य० २५,२०; ४२८
जनः दैव्यः २,३०,११; १९८
जाताः साकम् ५,५५,३; २३७
जिगत्नवः १०,७८,३,५; ४१७,४१९
जिन्वन्तः १,६४,८; ११५
जीरदानवः २,३४,४; २०२ । ५,५३,५; २३८
जुषाणाः मनसा १,१७१,२; १९४
जुह्वानाः १,८७,१; १४५
ज्योतिर्व्यानः १०,७८ २,५, ४१६,४१९
तदृदानाः ५,५३,७; २४०
तवसः १,६४ १२; ११९ । १६६,८; १५५ । ५,५८,२; २९३ । ६०,४; ४५२
तविषीभिः आवृताः १,८७,४; १४८
तविषीभिः [तृतीया] २,२६,४; २१४
तविषीवान् ५,५८,१; २९२
तविषीयवः ८,७,२; ६७
तरिषवांसः रथेषु ५,५३,२; २३५
तिरं स्तीवम् ऋग्० ४,२७,७; ४७३
तुरः ६,६६,९; ३४२
तुराणः १,१६६,१४; १६१ । १७१,१; १९३ । ७,५८,११; २१० । ७,५६,१०; ३५४ । ५८,५; ३८१
दुविलाहाः १,१६८,४; १८३
दुविद्युतः ५,८७,७; ३३७
दुहितरदवः ७,५८,२; ३९८
दुविराधनः ५,५८,२; २९३
दुहिमान् नरः ७,५६,७ ३५१
दुहिमान् देवदव ष्मासः ७,५८,१; ३९९
दुहिरग्नेः स्तनि: ६,६८,१५; ३३१
दुदीधितमानाः ५,५६,८; २९१ । ५८८; ३९१
हृतुरवतनः १,६६,१०; ३६६
हृगगासः ७,५६,२२; ३६६
[illegible]: ऋग्० ६,६,६; ६३३

[illegible]: ६,६६,१०; ३४३
त्वेषाः १,२८,७,१५; २७,२५ । ८,२०,७; ८८ । २,४८, १५; ३३१
त्वेषः ५,५३,१०; २४३ । ५८,२; २९३
त्वेषद्युम्नः १,३७,४; ९
त्वेषयामा १,१६६,५; १५२
त्वेषरथः ५,६१,१३; ३१४
त्वेषसंदृशः ५,५७,५; २८८
दधानाः नाम यज्ञियम् १,६,४; ६
दविध्वतः २,३४,३; २०१
दशस्वाः २,३४,१२; २१०
दशस्यन्तः ७,५३,१७; ३६१
दस्मवर्चसः ८,६४,२; ४०२
दस्माः ५,५५,५; २३९
दातिवाराः ५,५८,२; २९३
दिवः नरः ५,५४,१०; २५९
दिवः पुत्रासः १०,७७,२; ४०८
दुध्रकृतः १,६४,११; ११८
दुर्धर्तवः ५,८७,९; ३३३
दुर्मदाः १,३९,५; ४०
[illegible] ८,३,११, ६१
[illegible]: १,१६६,११; १५८ । ५,५६,२ ३०१
[illegible] १,३९,५; ४० । ८,३,२३, ७० । १,१७१,१; १९४ । ५,५४,१४; २६२ । ७,५७,२,३; ३८३,३८४ । ८,६४,८; ४०५ । १०,७७,८ ४१२ । [illegible] ४,२३,५; ४३७ । १,७,२; ४५०
[illegible] २,३०,११; १९८
[illegible] ५,५४,३; २४२
[illegible] १,६४,८; ११५
[illegible] १,३४,३; १,६
[illegible] १,८५ १०, १३३
[illegible] १,३६,२; १११
[illegible] १,३६,१४; १२२
[illegible] १,७६,३ २१३
[illegible] [illegible]
[illegible]
[illegible] ५,६०,२; २९९ । ८७ १ ३३८
[illegible]
[illegible]
[illegible]

बृहदुक्षमाणाः ५,५७,८; २९१ । ५८,८; २९९
बृहद्गिरयः ५,५७,८; २९१ । ५८,८; २९९
ब्रह्मणस्पतिः १,३८,१३; ३३
भद्रजानयः ५,६१,४; ३११
भन्द्दिष्टिः ५.८७,१; ३१८
भीमाः० ... मासः २,३४,१; १९९ । ७,५८,२; २७८
भीमसंदृशः ५,५६,२; २७३
भूमिं धमन्तः २,३४,१; १९९
भोजाः ५,५३,१६; २४९
भ्राजमानाः साम० ३५६; ४२९
भ्राजज्जन्मानः ६,६६,१०; ३४२
भ्राजदृष्टयः १,६४,११; ११८ । ८७,३; १४७ । १६८ ४; १८६ । २,३४,५; २०३ । ५,५५,१; २६५ । १०,७८, ७; ४२१
भ्रातरः ५,६०,५; ४५३
मखाः १,६४,११; ११८
मघवानः ८,९४,१; ३९५
मत्सराः अथ० ७,७७,३; ४४७
मधु बिभ्रतः १,१६६,२; १५९
मनवः वा० य० २५,२०; ४२८
मनीषिणः ५,५७.२; २८५
मनोजुवः १,८५,४; १२६
मन्दसानाः ५,६०,७; ४५१
मन्द्राः १,१६६,११; १६८
मन्द्रः [अर्यमा] ६,४८,१४; ३२०
मयोभुवः ८.२०,२४; ३०५ । १,१६६,३; १६० । ५,५८, २; २९३
मरुतः ५,६१,१-४,११-१६; ३०८-३१७
मरुतां गणाः अथ० ४,१३,४; ४३७
मरुतां सर्गः ५,५६,५; २७९
मरुत्वान् ५,८७,१; ३१८
मर्ताः-मासः ५,५३,३; २३६ । ५९,६; ३०५ । ६१,४, ३११ । ७,५६,१; ३४५ । १०,७७,२; ४०८
महान्तः १,६,६; २ । ८,२०,८; ८९ । ५,५५,२; २६६ । ८,९४,८; ४०२
महान्तः महा- १,१६६,११; १६८
महिषासः १,६४,७; ११४
मातृदिष्टाः अथ० ७,७७,३; ४४७
मातृपासः अथ० ७,७७,३; ४४७
मादी-दिनः १.६४,७; ११४ । ५,५८,२; २९३
मायी [वरुणः] ६,४८,१४; ३२०
मारुतम् ८,२०,९; ९०
मारुतः गणः १,३८,१५; ३५ । ६४,१२; ११९ । ५,५२, १३-१४; २२९,२३० । ५३,१०; २४३ । ५८,२; २९२ । ६१,१३; ३१४ । ८,९४,१२; ४०३
मारुतं शर्धः १,३७,१५; ३,१० । ८.२०,९; ९० । २,३०.११; १९८ । ५,५२,८; २२४ । ५४,१; २५० । अथ० ४,२७,७; ४४३
मितासः वा य० १७,८४; ४२०
मीळ्हुषः ८,२०,३,१८; ८४,९९
यच्छमानाः स्वधाम् ७,५६,१३; २५७
यजत्राः ५,५५,१०; २७४ । ५८.४; २९५ । ७,५७,१,४, ५; ३७०,३७३,३७४
यज्ञवाहसः १,८६,२; १३६
यज्ञियाः-यासः ५,५२,१; २१७ । ६१,१६; ३१७ । ८७, ९; ३२६ । १०,७७,८; ४१४
यतस्रुचः २,३४,११; २०९
ययियः १०,७८,७; ४२१
यामं येष्ठाः ७,५६,६; ३५०
युक्ताः इह अथ० ४,२३,४; ४३२
युधा ५,५२,६; २२२
युवा-वानः ८,२०,१७-१९; ९८-१०० । १,६४, ३; ११० । ५,५७,८; २९१ । ५८,३,८; २९४,२९९ । ६१,१३; ३१४ । १,८७,४; १४८
रंहयन्तः अद्रिम्- १,८५,५; १२७
रघुष्यदानः १,८५,६; १२८
रघुष्यद-स्य-दः १,६४,७; ११४
रजस्तुरः १,६४,१२; ११९
रथेशुभः १,३७,१; ३
रथेषु तस्थिवांसः ५,५३,२; २३५

मरुतां रथः ।

[illegible] १,८८,१; १५१
[illegible] १,८८,१; १५१
[illegible] ५,६०,२; २५०
[illegible] १,८८,१; १५१
[illegible] ५,५८,३; २९४
[illegible] ५,५५,८; २९४
[illegible] ५,६०,२; २५०
[illegible] ५,६०,२; २५०

[illegible]
[illegible] सुम्नम् [illegible] विश्वे मना मन्तु रोदसी
[illegible]
[illegible]

वसवः २,३४,६; २०७ । ५,५५,८; २७२ । ७,५६,१७; ३३२ । ५९,८; ३६० । १०,७७,६; ४१९ । अग्र० ३, २,२; ४३४ । ४,२७,६; ४५५
वार्यं भमन्तः १,८५,१०; १३२
वासविनः ५,५४,३; २५२ । ५७,४; २८७
वाशश्रवसः ७,५६,३; ३४७
वावशानाः ७,५६,१०; ३५४
वाशुधानाः मोगूर्- १०,७८,८; ४११
वाशीमन्तः २,८७,६; १५० । ५,५७,२; २८५
वाताः-आपः ८,७,३,७; ४८,५१
विजयन् नः कृतम्- [अग्नि:] ५,६०,१; ४४१
विद्युम्नाः २,३४,११; ११६
विचेतसः ५,५४,१३; २६२
वि ताथुः १०,७७,१; ४०७
विदथम् १,६,३; ९
विदितम् अग्र० ४,१७,७; ४४२
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

वृद्धाः १,३८,१५; ३५
वृद्धशवसः ५,८७,६; ३२३
वृषन् ६,६६,११; ३४४
वृधासः तमसः हुत् १,१७२,२; १९४
वृषा-षाणः ८,७,३३; ७८। २०,९,१२,१९,२०। ९०,९३, १००,१०१ । १,६४,१,१२; १०८,११९ । ७,५४,८ १४८।७,५८,६। ३८२।८,९४,१२; ४०६
वृषखादयः १,६४,१०; ११७
वृषप्रयावा ८,२०,९; ९०
वृषप्सवः ८,२०,७; ८८
वृषव्रातासः १,८५,४; १२६
वृष्टयः २,३४,२; २००।५,५३,६। २३९
वेधाः १,६४,१; १०८।५,५२,१३; २२९।५४,६; २५५
वेधसः असुरस्य ८,२०,१७; ९८
व्यक्ताः ७,५६,१; ३४५
शग्माः अथ० ४,२७,३; ४४२
शम्भविष्ठाः आदित्येन नाम्ना- १०,७७,८; ४१४
शर्धः १,३७,४; ९।८,२०,९; ९०।१,६४,१ १०८। ५,८७,१। ३१८।७,५६,८; ३५२
शर्धः मारुतम् १,३७,१,५। ६, १०।८,२०,९; ९०। २,३०,११; १९८।८ ५,५२; २२४ । ५४,१; २५०। अथ० ४,२७,७; ४४६
शर्धन् ५,५६,१; २७५
शर्धमारुतः ६,४८,१२,१५; ३२८,३३१
शवस् ५,८७,१; ३१८
शवसा आहिमन्यवः १,६४,८,९; ११५,११६
शाश्वतः ५,५२,२; २१८
शाकी वा० य० १७,८५; ४२३
शाकिनः ५,५२,१७; २३३
शिक्वसः ५,५२,१६; २३२ । ५४,४; २५३
शिमीवन्तः ८,२०,३; ८४ । १०.७८,३; ४१७
शुचयः १,६४,२; १०९ । ६,६६,४; ३३७। ७,५६,१२; ३५६ । ५७,५; ३७४
शुचिजन्मानः ७,५६,१२; ३५६
शुभं यान्तः ५,५५,१-९; २६५-२७३
शुभंयावा-वानः ५,६१,१३;३१४ । वा० य० २५,२०;४२८
शुभयन्तः ५,६०,८; ४५६
शुभा शोभिष्ठाः ७,५६,६; ३५०
शुभ्राः ८,७,२,१४,२५,२८; ४७,५९,७०,७३ । १,८५,३; १२५ । १६७,४; १७५ । ७,५६,१६; ३६०
शुभ्रखादयः ८,२०,४; ८५
शुम्भमानाः तन्वः ७,५६,११, ३५५ । ५९,७; ३८१
शुशुक्वांसः ५,८७,६; ३२३
शुशुचानाः २,३४,१; १९९
शुष्मी १,३७,४; ९
शूराः १,६४,९, ११६
शूशुवांसः धृष्णुना शवसा १,१६७,९; १८०
शेवृधः ५,८७,४; ३२१
श्रायाः ५,५३,४; २२७
श्रुतः १,६,६; २
श्रेयांसः धिये ५,६०,४; ४५२
श्रेष्ठतमाः ५,६१,१; ३०८
श्रोतारः यामहूतिषु ५,६१,१५; ३१६
संवत्सरीणाः अथ० ७,७७,३; ४४७
सखायः ८,२०,२३; १०४ ६,६६,११; ३२७
सखायः स्थिरस्य शवसः-५,५२,२; २१८
सगणाः अथ० ७,८७,३; ४४८
सजोषसः ५,५७,१; २८४
सजोषसः क्षरम्भेण वा० य० ३,४४; ४२३
सत्यः १,८७,४; १४८
सत्यशवसः १,८६,८,९; १४२,१४३ । ५,५२,८; २२४
सत्यश्रुतः ५,५७,८; २९१ । ५८,८; २९९
सदस्रासः वा० य० १७,८४; ४२५
सद्यऊतयः १०,७८,२; ४१६
सद्यदक्षः ५,६०,२; ४५१
सनाभयः १०,७८,४; ४१८
सनीळाः ७,५६,१; ३४५
सप्तसप्त ५,५२,१७; २३३
सप्तयः ८,२०,२३; १०४ । १,८५,१; १२३
सबधाः अथ० १,२६,३; ४३०
सप्तरामः १,१६८,९; १९१
समन्धरः ८,२०,२१; १०२ । ५,५६,५; ३०४
समाधः १,३४,८; ११५
समरसः ५,५४,१०; २५९ । वा० य० १७,८४; ४२५
समन्ययः ८,२०,१,२१; ८२,१०२ । २,३४,३,५,६; २०१, २०३,२०४ । ५,८७,८; ३२५
समुक्षिताः क्षोणीः ५,५६,५; २७९
समोकसः १,६४,१०; ११७
सम्मितासः वा० य० १७,८४; ४२५
संमिश्राः इन्द्रे १,१६६,११; १३८

संमिश्लासः तविषीभिः १,६४,१०; ११७
संमिश्लाः श्रिया ७,५६,६; ३५०
सर्गाः मरुताम् ५,५६,५; २७९
सर्गाः वर्षस्य अथ० ४,१५,४; ४५८
सस्वः ७,५९,७; ३८९
सहन्तः ५,८७,५; ३२२
साकम् उक्षिताः ५,५५,३; २६७
साकंजाताः ५,५५,३; २६७
सान्तपनाः ७,५९,९;३९ । वा० य० १७,८५;४२६ । अथ० ७,७७,३; ४४७
सा (म) हाः ८,२०,२०; १०१
सिन्धवः ५,५३,७; २४०
सिन्धुमातरः १०,७८,६; ४२०
सुक्रतुः [इन्द्रः] ६,४८,१४; ३३०
सुखादिः ५,८७,१; ३१८
सुजाताः-- तासः ८,२०,८; ८९ । १,८८,३; १५३ । १६६,१२, १६९ । ५,५७,८; २८८ । ५९,६; ३०५
सुजिह्वाः १,१६६,११; १६८
सुदंससः १,८५,१; १२३
सुदानवः १,१५,२; ५ । ३९,१०; ४५ । ८,७,१२,१९, २०; ५७,६४,६५ । ८,२०,१८,२३; ९९,१०४ । १,६४,२; ११३ । ८५,१०; १३२ । १७२,१,२,३; १९५,१९६,१९७ । २,३४,८; २०६ । ३,२६,५; २१५। ५,५२,५; २२१ । ५३,६; २३९ । ५७,५; २८८ । ७,५९,१०; ३९२ । १०,७८,५; ४१९ । अथ० १३, १,३; ४३३ । ४,१५,७; ४६१
सुधन्वानः ५,५७,२; २८५
सुनिष्काः ७,५६,११; ३५५
सुनीतयः १०,७८,२; ४१६
सुपिशः १,६४,८; ११५
सुपेशसः ५,५७,४; २८७
सुबर्हिषः ८,२०,१५; १०६
सु[illegible] ५,६०,३; ४०४
सुभ्वः ५,५५,३; २६७ । ५९,३; ३०२ । ८७,३; ३२०
सुमखाः-- खाः १,६४,१; १०८ । ८५,४; १२६ । ५,८७,७; ३२४
सुमायाः १०,७८,६; ४२०
सुमायाः १,८८,१; १५१
सुमारुतं न १०,७७,१,२; ४०७,४०८
सु[illegible] ५,५७,३; २८०
सुरातयः १०,७८,३; ४१७
सुवृधः ५,५९,५; ३०४
सुशर्माणः १०,७८,२; ४१६
सुशुक्वानः ५,८७,३; ३२०
सुश्रवस्तमाः ८,२०,२०; १०१
सुष्टुताः विदथेषु १,१६६,७; १६४
सुष्टुभः १०,७८,४; ४१८
सुसदृशः ५,५७,४; २८७
सुसंदृशः १०,७८,१, ४१५
सूरयः ८,९४,७; ४०१ । १०,७८,६; ४२०
सूरचक्षसः वा० य० २५,२०; ४२८
सूर्यत्वचः--चसः ७,५९,११; ३९३ । अथ० १,२६,३; ४३०
स्त्रप्रभोजाः [विष्णुः] ६,४८,१४; ३३०
सोभरीयवः ८,२०,२; ८३
स्कम्भदेष्णाः१ १,१६६,७; १६४
स्तनयदमाः ५,५४,३; २५२
स्तुतासः ७,५७,६,७; ३७५,३७६
स्थातारः ५,८७,६; ३२३
स्थारश्मानः ५,८७,५; ३२२
स्थिराः ८,२०,१; ८२
स्यन्द्रासः ५,५२,३; २१९
स्यन्द्रासः धुनीनाम्- ५,८७,३०; ३२०
स्योनाः अथ० ४,२७,३; ४४१
स्रजाः १,१६८,२; १८४
स्वक्षाः ७,५६,१६; ३६०
स्वतवसः १,१६६,२; १५९ । १६८,२; १८४ । ६,६६,९; ३४२ । ७,५९,११; ३९३
स्वतवान् वा०य० १७,८५; ४२६
स्वभानवः १,३७,२; ७ । ८,२०,४; ८५ । ५,५३,४; २३७। ५४,१; २५० । ६,४८,१२; ३२७
स्वयुक्ताः १,१६८,४; १८६
स्वयुजः १०,७८,२, ४१६
स्वराजः ५,५८,१; २९७ । ८,९४,४; ३९८
स्वरितारः आमभिः १,१६६,११; १६८
स्वरोचिषः ५,८७,५; ३२२
स्वर्काः अथ० ७,७७,३; ४४७
स्वर्णरः ५,५४,१०; २५९
स्ववसः [अग्निः] ५,६०,१; ४४९
स्वविद्युतः ५,८७,३, ३२०
स्वधाः ५,५५,७; २८१ । ७,५७,१; ३८१

मरुद्देवता-संहितान्तर्गत-निपातदेवतानां

सूची ।

ऋत्विजः । १,६,६ ऋग्वेद

इन्द्रः । १,६,८

ऋतुः । १,१५,२

मरुतः क्रीळिनः । १,३७, १-१५

निर्ऋतिः । १,३८,६

मरुत्स्तोता ऋत्विग्गणः । १,३८,१३-१५

ब्रह्मणस्पतिः, अग्निः, मित्रः । १,३८,१३

वज्री [इन्द्रः] । ८,७,१०

अग्निः । ८,७,३६

[illegible] । १,६४,३

[illegible] । [पि० भा० १२,७] १,६४,६

[illegible] । १,८५,६

[illegible] [पि० भा० २८,४] १,६४,६

[illegible], [illegible] । १,८५,९

[illegible] [पि० भा० २८,७] १,८६,१

[illegible] [पि० भा० ३४,८] १,८६,१

[illegible] । १,११६,४

[illegible] [illegible, विद्युत्] १,१६७,५

[illegible] । १,१६८,६

[illegible] । १,१६८,९

[illegible] । ५,५३,१

[illegible] । ५,५३,८

[illegible] [illegible] ५,५३,९

रुद्राः । ५,५७,१

अग्निः । ५,५८,३

द्यौः, अदितिः, उषसः । ५,५९,८

विष्णुः मरुत्वान् । ५,८७,१

रुद्राः । ५,८७,७

धेनुः । ६,४८,११-१३

धेनुः, इट् । ६,४८,१३

इन्द्रः, वरुणः, अर्यमा, विष्णुः । ६,४८,१४

पृश्निः । ६,६६,१-३

अग्निः । ६,६६,९

मरुतः क्रीळिनः । ७,५६,१६

इन्द्रः, मित्रः, वरुणः, अग्निः,
आपः, ओषधीः, वनिनः,
मरुतः च । ७,५६,२५

देवाः, अग्निः, वरुणः, मित्रः,
अर्यमा, मरुतः च । ७,५९,१

देवाः । ७,५९,२

सान्तपनाः मरुतः । ७,५९,९

गृहमेधासः मरुतः । ७,५९,१०

स्वतवसः मरुतः । ७,५९,११

गौः [मरुतां माता] ८,९४,१-२

मित्रः, अर्यमा, वरुणः । ८,९४,५

इन्द्रः । ८,९४,६

मरुतः, देवाः च । १०,७७,७

मरुद्देवता-संहितान्तर्गत

निपात—देवतानां वर्णानुक्रमसूची।

अग्निः ऋ० १,३८,१३; ८,७,३६; ५,५६,१; ५८,३; ६,६६, ९; ७,५६,२५; ७,५०,१

अदितिः ५,५९,८

अर्यमा ६,४८,१४; ७,५९,१; ८,९४,५

आपः ७,५६,२५

इट् ६,४८,१३

इन्द्रः २,६,८; ८,७,१०; १,८५,९; ६,४८,१४; ७,५६,२५; ८,९४,६

उषासः ५,५९,८

ऋतुः १,१५,२

ऋत्विजः १,६,६

ऋषिगणः [मरुत्स्तोता] १,३८,१३--१५

ओषधीः ७,५६,२५

क्रीळिनः मरुतः १,३७,१--१५; ७,५६,१६

गौः ८,९४,१-२

गृहमेधासः मरुतः ७,५९,१०

त्वष्टा १,८५,९

देवाः ७,५९,१-२; १०,७७,७

द्यौः ५,५९,८

धेनुः ६,४८,११--१३

निर्ऋतिः १,३८,६

पृश्निः १,१६८,९; ६,६६,१-३

ब्रह्मणस्पतिः १,३८,१३

मरुतः पश्य- 'क्रीळिनः,' 'गृहमेधासः,' 'सान्तपनाः,' 'स्वतवसः'

मित्रः १,३८,१३; ७,५६,२५; ७,५९,१; ८,९४,५

मीळ्हुषी ५,५६,९

रथः मारुतः ५,५६,८

रुद्राः १,६४,३; ८५,२; १६६,२; ५,५७,१; ५,८७,७

रोदसी १,१६७,५; १,१६८,१

वज्री [इन्द्रः] ८,७,१०

वनिनः ७,५६,२५

वरुणः ६,४८,१४; ७,५६,२५; ७,५९,१; ८,९४,५

विष्णुः ५,८७,१; ६,४८,१४

सान्तपनाः मरुतः ७,५९,९

स्वतवसः मरुतः ७,५९,११

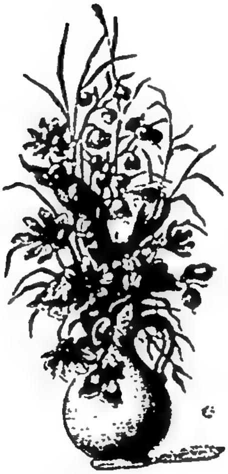

ॐ

दैवत-संहितान्तर्गत

मरुद्देवताका मंत्र-संग्रह ।

हिन्दी अनुवाद ।

(टीका, टिप्पणी और स्पष्टीकरण के साथ)

लेखक

पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

स्वाध्याय-मण्डल, औंध (जि० सातारा)

शके १८६५, संवत् २०००, सन १९४३

संपादक

पं० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

सहसंपादक

पं० दयानन्द गणेश धारेश्वर, B. A.

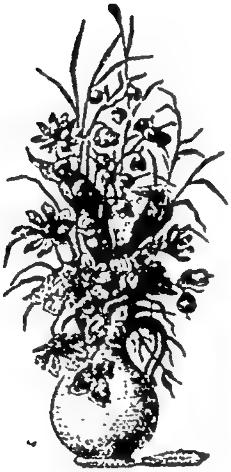

मुद्रक व प्रकाशक

वसंत श्रीपाद सातवळेकर, B. A.

भारत-मुद्रणालय, स्वाध्याय-मंडल,

औंध (जि० सातारा)

वीर मरुतोंका काव्य।

वीररसपूर्ण काव्यके मनन से उपलब्ध बोध।

हम पहले ही मरुत्‌-देवता के मन्त्रों का अन्वय, अर्थ और टिप्पणी यहाँपर दे चुके हैं। पदों के अर्थका विचार, सुभाषितों का निर्देश एवं पुनरुक्त मन्त्रों का समन्वय भी ध्यानपूर्वक हो चुका है। अब हमें संक्षेप में देखना है कि उन सब का ध्यानपूर्वक अध्ययन कर लेनेसे हमें कौनसा बोध मिल सकता है। इस मरुत्‌-काव्य में अन्य काव्योंकी अपेक्षा जो एक अनूठी विभिन्नता दीख पडती है, वह यों है कि इस काव्य में-

महिलाओंका वर्णन नहीं पाया जाता है।

किसी भी वीर-गाथा में नारियों का उल्लेख एक न एक ढंग से अवश्य ही उपलब्ध होता है। पंचमहाकाव्य या अन्य काव्यों का निरीक्षण करनेपर ज्ञात होता है कि उन में वीरों के वर्णन के साथ ही साथ उनकी प्रेयसियों का बखान अवश्य ही किया है। स्त्रियों का वर्णन न किया हो ऐसा शायद एक भी वीर-काव्य नहीं पाया जाता है। यदि इस नियम का कोई अपवाद भी हो, तो उससे इस नियमकी ही सिद्धता होती है, ऐसा कहना पडेगा। लगभग २७ ऋषियोंने इस मरुद्देवता-विषयक काव्य का सृजन किया है ऐसा जान पडता है (देखो पृष्ठ १९४); और अगर इस संख्या में सप्तर्षियों का भी अन्तर्भाव किया जाय तो समूचे ऋषियों की संख्या ३४ हो जाती है। यह बडे ही आश्चर्य की बात है कि इतने इन ३४ ऋषियों के निर्मित काव्य में एक भी जगह मरुतों के स्त्रैणत्व का निर्देश नहीं किया है। ऐसा तो नहीं कहा जा सकता कि ऋषि स्त्रैणत्व का वर्णन ही न करते थे, क्योंकि इन्हीं ऋषियों ने इन्द्रका वर्णन करते समय किन्हीं अंशोंमें उस पर स्त्रैणत्वका आरोप किया है। जिन ऋषियों ने इन्द्र का स्त्रैणत्व बतलाने में आनाकानी नहीं की, वे ही मरुतों का वर्णन करनेमें उसका लेश मात्र भी उल्लेख नहीं करते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि मरुतों के अनुशासनपूर्ण बर्ताव में स्त्रैणत्व के लिए बिलकुल जगह नहीं थी। ध्यान में रहे कि मरुत्‌ इन्द्र के सैनिक हैं और ये अपने सैनिकीय जीवन में स्त्रैणत्व से कोसों दूर रहते थे। आज हम योरप के तथा आस्ट्रेलिया सदृश सभ्य गिने जानेवाले राष्ट्रों के सैनिकों का अवलोकन करते हैं, तो पता चलता है कि यदि वे नगरों में घूमने-फिरने लगें और कहीं महिलाओं पर उनकी निगाह पड जाए तो असभ्य एवं उच्छृंखलतापूर्ण बर्ताव करने में हिचकिचाते नहीं। यह बात सबको ज्ञात है, अतः इस सम्बन्ध

में अधिक लिखना उचित नहीं जँचता। हाँ, इतना तो निस्सन्देह कहा जा सकता है कि इन सभ्य पाश्चात्यों को अपने सैनिकों के महिला-विषयक संयम के बारे में अभिमानपूर्वक कहना दूभर ही है।

लेकिन मरुतों के वैदिक काव्य में स्त्रैणत्व के वर्णन का पूर्णतया अभाव है। यह तो विशुद्ध वीरकाव्य है। ऐसा कहे बिना नहीं रहा जाता कि हम भारतीयों के लिए यह बडे ही गौरव एवं आत्मसंमान की बात है। यूं कहने में कोई आपत्ति नहीं प्रतीत होती है कि, जो संयमपूर्ण जीवन बिताना सुसभ्य योरपीय सैनिकों के लिए असंभव तथा दूभर हुआ, वही इन मरुतों के लिए एक साधारणसी बात थी।

इस समूचे काव्यमें नारियोंके सम्बन्धमें सिर्फ १६ उल्लेख पाये जाते हैं, जिनका यहाँपर विचार करना उचित जान पडता है।

नारीके तुल्य तलवार।

गुहा चरन्ती मनुषो न योषा। (ऋ० १।१६७।३)

' वीरों की तलवार (परदेमें रहनेवाली) मानव-स्त्री के तुल्य लुक छिपकर मियान में रहती है। ' यहाँ निर्देश है कि कुछ मानव-नारियाँ घर में गुप्त रूप से निवास करती थीं। बेशक, यह वर्णन तो परदा-प्रथा के समकक्ष दीख पडता है। तलवार तो हमेशा मियान में पडी रहती है, लेकिन केवल लडाई के मौकेपर ही बाहर आ जाती है, ठीक उसी प्रकार घरों में अदृश्य एवं गुप्त रूप से रहनेवाली महिलाएं धार्मिक अवसरों पर ही सभासमाजों में चली आती थीं; यही इस उपमा का आशय दिखाई देता है। प्रतीत होता है कि उस काल में ऐसी प्रथा प्रचलित रही हो कि किन्हीं खास अवसरों पर जैसे धर्मकृत्य या सम्मेलन आदि के समय स्त्रियोंको उपस्थित होने में कुछ भी रुकावट नहीं थी, परन्तु अन्यथा देवियाँ घरों के भीतर ही काल-यापन करती थीं।

उपर्युक्त वर्णन तो सती साध्वी महिला के लिए लागू पडता है और इसके अतिरिक्त अन्य प्रकार की स्त्री को ' साधारण स्त्री ' कहा गया है। जिसने सतीत्व से मुँह मोड लिया हो वह ' साधारण स्त्री ' कहलाती थी।

साधारण स्त्री।

साधारण्येव मरुतः सं मिमिक्षुः।

(ऋ० १।१६७।४)

' वायुगण चाहे जिस भूमि पर जल की वर्षा करते छूटते हैं, जिस प्रकार साधारण कोटि का पुरुष साधारण स्त्री से यथेच्छ बर्ताव करता है। ' इस उपमा में साधारण स्त्री का उल्लेख आया है। व्यभिचारकर्म में प्रवृत्त पुरुष किसी भी साधारण स्त्री से समागम करता है; उसी तरह मेघ चाहे जिस तरह की भूमि हो, उसपर वर्षा करता है। परन्तु जो सदाचरणी मानव है, वह अपनी कुलशीलसंपन्न नारी से ही नियमित ढंगसे व्यवहार करता है। इस वर्णनके बूतेपर स्त्रियों एवं पुरुषों के दो तरह के विभेद हमारे सामने उठ खडे होते हैं—

१. एक विभाग में उन स्त्रियों का वर्णन है, जो हमेशा घर के अन्दर अन्तःपुर में निवास करती हैं और एकाध मौके पर धार्मिक समारंभों में ही समाजों में प्रकट होती हैं। ऐसी स्त्रियों से सदाचरणी पति धर्मानुकूल व्यवहार प्रचलित रखते हैं।

२. दूसरी श्रेणी में साधारण स्त्रियों का अन्तर्भाव हुआ करता है, जो कि हमेशा बाहर घूमा करतीं तथा पुरुषों से अनियमित बर्ताव रख लेतीं।

वेदने प्रथम विभाग में आनेवाली (**गुहा चरन्ती योषा**) अन्तःपुर में निवास करनेवाली महिलाओं की प्रशंसा की है और अन्य साधारण स्त्रियों की निन्दा की है। पहिले प्रकार की सती साध्वी महिलाएँ जब सभासमाजों में आ दाखिल होती हों, तब (**मा ते कशप्लकौ दृशन्** । ऋ. ८।३३।१९) उन की टाँगें तथा पिंडलियाँ दृष्टिगोचर न रहने पायँ, ऐसी आज्ञा वेदने दी है। वेद में ऐसे भी आदेश पाये जाते हैं कि जनता के मध्य संचार करते समय नारियों को सतर्क रहना चाहिये कि कहीं उन का अंगोपांग दीख न पडे इसलिये अपना समूचा शरीर भलीभाँति वस्त्रों से ढँकना चाहिये।

उत्तम माताओंके खिलाडी पुत्र।

शिशूलाः न क्रीळाः सुमातरः (ऋ. १०।७८।६)

' उत्तम श्रेणी के माताओं के पुत्र खिलाडी होते हैं। '

ये उत्तम माताएँ अर्थात् ही ऊपर बतलायी हुई साध्वी महिलाओं में पाई जाती हैं। इन्हें 'सुमाता' कहा है। दूसरी जो साधारण महिलाएँ होती हैं, वे सुमाता नहीं बन सकतीं। इस से स्पष्ट है कि, उत्तम सन्तान होने के लिये संयमशील बर्ताव की आवश्यकता है।

महिलाओं के समान वीर अलंकृत तथा विभूषित होते हैं।

मरुतों के वर्णन में अनेक बार ऐसा वर्णन आया है कि, ये वीर सैनिक अपने आपको स्त्रियों के समान विभूषित करते हैं—(प्र ये शुम्भन्ते जनयो न। ऋ. १।८५।१) 'स्त्रियों की नाईं ये वीर अपने शरीरों की सजावट खूब कर लेते हैं।' हम देखते हैं कि आधुनिक युगमें योरपीय प्रणालीके अनुसार सुसज्ज होनेवाले सैनिक भी महिलाओं की तरह ही खूब बनावसिंगार करते हैं। प्रत्येक आभूषण हर किस्मका हथियार, हरएक तरह का कपडा साफ सुथरे, खूब झाडपोंछ कर रखे हुए, व्यवस्थित तथा चमकीले बनाकर ही खूब अच्छी तरह दीख पडे इस ढंग से धारण कर लेने चाहिए। इस अनुशासनका पालन वर्तमानकालीन सेना में स्पष्ट दिखाई देता है। महिलाएँ जिस प्रकार आईने में बारंबार अपनी आकृति देखकर वेशभूषा कर लेती हैं और सतर्कतापूर्वक साजसिंगार कर चुकनेपर ही खूब बनठनकर बाहर चली जाती हैं, ठीक वैसे ही ये वीर सिपाई यथेष्ट अलंकृत हो खूब ठाठ-बाट या सजधजसे जगमगानेवाले हथियारों को तथा आभूषणों को धारण कर यात्रा करने निकल पडते हैं।

यहाँपर, आधुनिक योरपीय सैनिकों के वर्णन में तथा वेद में दर्शाये ढंग से मरुतों के वर्णन में विलक्षण समानता दिखाई देती है जो कि सचमुच प्रेक्षणीय है। मरुतोंके इस सिंगारके संबंधमें और भी उल्लेख पाये जाते हैं जिनमें से कुछ एक उद्धृत किये जाते हैं, सो देखिए—

यक्षदृशः न शुभयन्त मर्याः।
(ऋ. ७।५६।१६) (३६०)

गोमातरः यत् शुभयन्ते अञ्जिभिः।
(ऋ. १।८५।३) (२२५)

'यज्ञ-समारंभ देखने के लिये आये हुए लोग जिस प्रकार अलंकृत होकर अच्छी वेशभूषा से सुसज्ज बनकर आया करते हैं, उसी प्रकार मातृभूमि को माता माननेवाले वीर अपने गणवेश से सजे हुए रहते हैं।' मरुत् जो वेशभूषा करते हैं तथा अपनी जो शोभा बढाते हैं, वह सारी उनके अपने गणवेशपर ही निर्भर है। मरुतों का गणवेश उन सब के लिये समान (अर्थात् युनिफॉर्म के तौरपर बनाया हुआ) रहता है। उन के जो शस्त्रास्त्र एवं वीरभूषण हैं, उन से ही उनकी वेशभूषा एवं सजावट सिद्ध हो जाती है। ये वीर मरुत् चाहे जैसी भूषा नहीं कर सकते, अपितु उन का जो गणवेश निर्धारित हो चुका हो उसी से यह अलंकृति करनी पडती है। इस वर्णन से स्पष्ट है कि, आधुनिक सैनिकों के तुल्य ही इन्हें अपना गणवेश साफसुथरा एवं जगमगानेवाला बनाकर रखना पडता था। इसी वर्णन को और भी देखिए—

स्वायुधासः इष्मिणः सुनिष्काः।
उत स्वयं तन्वः शुम्भमानाः॥
(ऋ. ७।५६।११) (३५५)

सस्वः चित् हि तन्वः शुम्भमानाः।
(ऋ. ७।५९।७) (३८९)

स्वक्षत्रेभिः तन्वः शुम्भमानाः।
(ऋ. १।१६५।५) (४८४)

'उत्कृष्ट हथियार धारण करनेहारे, श्रेष्ठ मालाएँ पहननेवाले तथा वेगपूर्वक आगे बढनेवाले ये वीर खुद ही अपने शरीरोंको सुशोभित करते हैं। यद्यपि ये सुगुप्त जगह रहते हैं, तथापि अपनी शरीरभूषा बराबर अक्षुण्ण बनाये रखते हैं। अपने अन्दर विद्यमान क्षात्रतेजसे शरीरशोभा को ये वृद्धिंगत करते हैं।'

इस प्रकार इन सूक्तों में हम इन वीरों के निजी बाह्य शारीरिक भूषा तथा अलंकृति के संबंधमें उल्लेख पाते हैं।

पिशा इव सुपिशः। (ऋ. १।६४।८) (१२५)
अनु श्रियः धिरे। (ऋ. १।१६६।१०) (२३७)
सुचन्द्रं सुपेशसं वर्णं दधिरे।
(ऋ. २।३४।१३) (३११)
महान्तः वि राजथ। (ऋ. ५।५५।२) (३३३)
रूपाणि चित्रा ददृशे। (ऋ. ५।५२।११) (३२७)

'ये वीर बडे ही शोभायमान दिखाई देते हैं, बडी भारी शोभा इन में है, ये खिलनेवाली सुन्दर कांतिवाल

करते हैं। ये बहुत सुहाते हैं, बडे सुन्दर दीख पडते हैं।' इस भाँति इन का वर्णन किया है। इन वर्णनों से इन वीरों की चारुता पर स्पष्ट आलोकरेखा पडती है। इस से एक बात स्पष्ट होती है कि ये वीर मरुत् भद्देपन से कोसों दूर रहा करते थे, सदैव अपने सुन्दर गणवेश से विभूषित हो व्यवस्थित ढंग से रहा करते थे, अतएव उनका प्रभाव चतुर्दिक् फैल जाता था।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट दिखाई देता है कि, आधुनिक सैनिकों के समान ही वीर मरुतों का रहन-सहन था। इस सम्बन्ध में और भी कौनसी जानकारी प्राप्त होती है, सो देख लेना चाहिये।

एक ही घर में रहनेवाले वीर।

सभी मरुतों के निवास के लिए एक ही घर बनाया जाता था, या एक बडे विशाल घर में ये समूचे वीर रहा करते थे। इस सम्बन्ध के उल्लेख देखिए—

समोकसः इषुं दधिरे। (ऋ. १।६४।१०) (११७)
उरुक्षयाः सगणा मानुषासः।
(अथर्व. ७।७७।३) (४४७)
घः उरु सदः कृतम्। (ऋ. १।८५।६) (१२८)
उरु सदः चक्रिरे। (ऋ. १।८५।७) (१२९)
समानस्मात्सदसः। (ऋ. ५।८७।४) (३२१)

'एक घर में रहनेवाले ये वीर बाण धारण करते हैं। इन के लिए बहुत बडा विस्तृत मकान तैयार किया जाता था।' उसी प्रकार—

सनीळाः मर्याः स्वश्वाः नरः।
(ऋ. ७।५६।१) (३४५)
सवयसः सनीळाः समान्याः। (ऋ. १।१६५।१)
(इन्द्रः ३२५०)

'(स-नीळाः) एक घर में रहनेवाले (मर्याः) ये मरने के लिए तैयार वीर अच्छे घोडोंपर बैठते हैं। वे सभी समान सम्मान के योग्य हैं और समान अवस्थावाले हैं।' यह समूचा वर्णन आधुनिक सैनिकों के वर्णन से मेल खाता है। आज दिन भी सैनिक एक मकान में (एक बैरक में) रहते हैं, सब की अवस्था भी लगभग एकसी रहती है, सब एक ही श्रेणी के होने के कारण अविषम रूप से सम्मान के योग्य समझे जाते हैं, उन में ऊँच-नीच के भाव नहीं के बराबर होते हैं, क्योंकि उन की समानता सर्वमान्य होती है।

संघ बनाकर रहनेवाले वीर।

ये वीर मरुत् सांघिक जीवन बिताने के आदी थे। सात सात की कतार में चलते हुए, चढाई करते समय सब मिलकर एक कतार में शत्रुदलपर टूट पडनेवाले थे। इस के उल्लेख देखिए—

मारुताय शर्धाय हव्या भरध्वम्।
(ऋ. ८।२०।९) (९०)
मारुतं शर्धं अभि प्र गायत। (ऋ. १।३७।१) (६)
मारुतं शर्धः उत् शंस। (ऋ. ५।५२।८) (२२४)
वन्दस्व मारुतं गणम्। (ऋ. १।३८।१) (३५)
मारुतं गणं नमस्य। (ऋ. ५।५२।१३) (२२९)
सप्तयः मरुतः। (ऋ. ८।२०।२३) (१०४)
गणश्रियः मरुतः। (ऋ. १।६४।९) (११६)

'मरुतों के संघ के लिए अन्न का संग्रह करो, मरुतों के संघका वर्णन करो, मरुतों के समुदाय के लिए अभिवादन करो, सात सात की पंक्ति बनाकर ये चलते हैं और समुदाय में ये सुहाते हैं।' उसी प्रकार—

मारुतं गणं सश्चत। (ऋ. १।६४।१२) (११९)
वृष-व्रातासः पृषतीः अयुग्ध्वम्।
(ऋ. १।८५।४) (१२६)
स हि गणः युवा। (ऋ. १।८७।४) (१४८)
वृषा गणः अविता। (ऋ. १।८७।४) (१४८)
व्रातं व्रातं अनुक्रामेम। (ऋ. ५।५३।११) (२४४)

'मरुतों के समुदाय को प्राप्त करो। यह संघ (वृष-व्रातासः) बलिष्ठों का है। वह अपने रथ को धब्बेवाली घोडियाँ या हरिनियाँ जोतता है। यह युवकों का समुदाय है जो हमारी रक्षा करता है। इस समुदाय के साथ अनुक्रम से हम चलते रहें।'

उपर्युक्त मंत्रांशोंमें दर्शाया है कि ये वीर सांघिक जीवन बितानेवाले और सामुदायिक ढंगपर कार्य करनेवाले हैं। संघ बनाकर रहना, तुल्य वेश धारण करना, सात सातकी कतार में चलना, सब के सब युवक होना या समान अवस्थावाले होना अर्थात् इनमें छोटे बालक एवं वृद्ध मनुष्यों का अभाव तथा समूची जनता की रक्षा करने का

गुरुतर कार्यभार कंधे पर ले लेना, यह सारा का सारा वर्णन वर्तमानकालीन सैनिकों के वर्णन के तुल्य ही है।

(१) शर्ध, (२) व्रात और (३) गण, इस प्रकार इनके समुदाय के तीन प्रकार हैं। गण में ८०० या ९०० सैनिकों की संख्या का अन्तर्भाव होता होगा, ऐसा पृष्ठ ९६ पर दर्शाने की चेष्टा की है। पाठक इधर उसे देख लें। उसी प्रकार पृष्ठ १६४-१६६ पर एक चित्रद्वारा यह बतलाने का प्रयत्न किया है कि इन गणों में मरुत् किस ढंग से खडे रहा करते थे। पाठक उस समूचे वर्णनको अवश्य देख लें। हमारा अनुमान है कि शर्ध और व्रात में संख्या कुछ अंश तक अपेक्षा कृत न्यून हो। कुछ भी हो, अधिक निश्चित प्रमाण मिलने तक इस संबंधमें निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता है।

इससे एक बात सुनिश्चित ठहरी कि मरुत् संघ बनाकर रहा करते थे। इतना जान लेने से यह सहज ही में ज्ञात हो सकता है कि वे एक ही घर में रहा करते थे और एक पंक्ति में सात सात वीर खडे हुआ करते थे।

सभी सदृश वीर।

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते।
सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय। (ऋ. ५।६०।५)
ते अज्येष्ठा अकनिष्ठास उद्भिदो-
ऽमध्यमासो महसा विवावृधुः। (ऋ. ५।५९।६)

' ये सभी वीर मरुत् साम्यवादी हैं क्योंकि इनमें कोई भी (अज्येष्ठास:) उच्चपद पर बैठनेवाला नहीं तथा (अकनिष्ठास:) न कोई निम्नश्रेणी में गिना जाता है और (अमध्यमासः) कोई मँझले दर्जेका भी नहीं पाया जाता है। ये सब (भ्रातरः) आपस में भ्रातृवत् बर्ताव करते हैं, ये साम्यावस्था का उपभोग लेनेवाले बन्धुगण हैं। ये सभी इकट्ठे होकर (सौभगाय सं वावृधुः) अपने उत्तम भाग्य के लिए अविरोध-भाव से भली भाँति चेष्टा करते हैं।'

मतलब यही है कि, ये सभी वीर समान योग्यतावाले हैं। समान आयुवाले, समान डीलडौलवाले तथा एक ही अभ्युदय के कार्य के लिए आत्मसमर्पण करनेवाले ये वीर हैं। पाठक अवश्य देख लें कि, यह समूचा वर्णन आधुनिक सैनिकों के वर्णन से कितना अभिन्न है। सब का गणवेश समान, सब का रहनसहन समान, सबके हथियार समान, रहने के लिये सब को एक ही घर, एक ही उद्देश्य की पूर्ति के लिये सब वीरों का एक कार्य में सतर्कतापूर्वक जुट जाना, इस भाँति यह मरुतोंका वर्णन यथार्थ ही आधुनिक सैनिकों के वर्णन से आश्चर्यजनक साम्य रखता है। दोनोंमें किसी तरह की विभिन्नता दृष्टिगोचर नहीं होती है। अपितु अनूठी समता दिखाई देती है।

मरुतों का गणवेश (या युनिफार्म)।

मरुत् देवराष्ट्र के सैनिक हैं। देखना चाहिए कि, इनका गणवेश किस तरह का हुआ करता था।

सरपर शिरस्त्राण।

ये वीर अपने मस्तकपर शिरस्त्राण या साफा रख लेते थे। शिरस्त्राण लोहे का बनाया हुआ तथा सुनहली बेल-बुटी से सुशोभित रहता और अगर साफा पहना जाता तो वह रेशमी होता तथा पीठपर उस का कुछ अंश छूटा रहता था। इस विषय में देखिए—

शीर्षन् हिरण्ययीः शिप्राः व्यञ्जत।
(ऋ. ८।७।२५) (७०)
हिरण्यशिप्राः याथ। (ऋ. २।३४।३) (२०१)
शीर्षसु नृम्णा। (ऋ. ५।५७।६) (२८९)
शीर्षसु वितता हिरण्ययीः शिप्राः।
(ऋ. ५।५४।११) (२६०)

'सरपर रखा हुआ शिरस्त्राण सुनहली बेलबूटीसे सुशोभित हुआ करता और रेशमी साफे भी पहने जाते थे।' इस से ज्ञात होता है कि, उन के गणवेश में शिरोभूषण किस ढंग का रहा करता था।

सबका सदृश गणवेश।

ये अञ्जिभिः अजायन्त। (ऋ. १।३७।२) (७)
एषां अञ्जि समानं रुक्मासः विभ्राजन्ते।
(ऋ. ८।२०।११) (९२)
वपुषे चित्रैः अञ्जिभिः व्यञ्जते।
(ऋ. १।१६४।४) (१११)
गोमातरः अञ्जिभिः शुभयन्ते।
(ऋ. १।८५।३) (१२५)
वक्षःसु रुक्मा अंसेषु एताः रभसासः अञ्जयः।
(ऋ. १।१६६।१०) (१३७)

ते क्षोणीभिः अरुणेभिः अञ्जिभिः ववृधुः।
(ऋ. २।३४।१३) (२११)
अञ्जिभिः सचेत। (ऋ. ५।५२।१५) (२३१)
ये अञ्जिषु रुक्मेषु खादिषु स्रक्षु श्रायाः।
(ऋ. ५।५३।४) (२३७)

'ये वीर अपने अपने वीरभूषणोंके साथ प्रकट होते हैं। इनके गणवेश सब के लिए सदृश बनाये दीख पडते हैं और इनके गले में सुवर्णहार सुहाते हैं। भाँति भाँति के आभूषणोंसे वे अपने शरीरों को सुशोभित करते हैं। भूमि को माता समझनेवाले ये वीर अपने गणवेशों से स्वयं सुशोभित होते हैं। इनके वक्षःस्थल पर मालाएं तथा कंधों पर गणवेश दिखाई देते हैं। वे केसरिया वर्ण के गणवेशों से युक्त होकर अपनी शक्ति बढाते हैं। वे सदा गणवेशों से युक्त होते हैं और वे वस्त्रालंकार, स्वर्णमुद्राओं के हार, वलयकटक एवं मालाएं पहनते हैं।'

उपर्युक्त अवतरणों से उनके गणवेश की कल्पना आ सकती है। 'अञ्जि' पदसे गणवेशका बोध होता है। उनके कपडे केसरिया वर्ण के तथा तनिक रक्तिम आभावाले होते थे। 'अरुणेभिः क्षोणीभिः' इन पदों से स्पष्ट सूचना मिलती है कि उनका पहनावा अरुण-केसरिया वर्णवाला हुआ करता था। वे वक्षःस्थलों पर स्वर्णमुद्रा सदृश अलंकारों के गहने पहनते जो उनके केसरिया कपडों पर खूब सुहाने लगते थे। हाथोंमें तथा पैरोंमें वलयसदृश आभूषण सुहाते थे। शायद ये विशेष कार्यवाही करनेके निमित्त मिले हुए वीरत्वदर्शक आभूषण हों। इनके अतिरिक्त ये पुष्पमालाएं भी धारण कर लेते। इनके इस गणवेश के बारे में निम्न मन्त्र देखनेयोग्य हैं।

शुभ्रखादयः ... एजथ। (ऋ. ८।२०।४) (८५)
रुक्मवक्षसः। (ऋ. ८।२०।२१) (२००)
(ऋ. २।३४।२)
वक्षःसु शुभे रुक्मान् अधियेतिरे।
(ऋ. १।६४।४) (१११)
वक्षःसु विरुक्मतः दधिरे।
(ऋ. १।८५।३) (१२५)
रुक्मैः आ विद्युतः असृक्षत।
(ऋ. ५।५२।६) (२२२)

परसु खादयः वक्षःसु रुक्माः।
(ऋ. ५।५४।११) (२६०)
रुक्मवक्षसः वयः दधिरे। (ऋ. ५।५५।१) (२६५)
रुक्मवक्षसः अश्वान् आ युञ्जते।
(ऋ. २।३४।८) (२०३)

'इनके वक्षःस्थल पर स्वर्णमुद्राओं के हार रहते हैं; पैरों पर नूपुर और उरोभाग में मालाएं रहती हैं जो कि जगमगाती हैं। ये आभूषण बिलकुल स्वच्छ एवं शुभ्र होते हैं और बिजली के तुल्य चमकते हैं। गले में हार धारण करनेहारे ये वीर अपने रथों में घोडे जोतते हैं।'

इस वर्णन से इनके गणवेश की कल्पना की जा सकती है। शरीरपर केसरिया रंग के कपडे, वक्षःस्थलपर स्वर्णमुद्राहार, हाथपैरों में वीरत्वनिदर्शक वलयकटक या कंगन सभी साफ सुथरे, चमकीले एवं दामिनी के तुल्य जगमगानेवाले रहा करते। ये सातसातकी पंक्ति बनाकर खडे रहा करते और दोनों ओर दो पार्श्वरक्षक अवस्थित रहते। इस भाँति सात कतारोंका सृजन हो जाता और जब बडी सजधज एवं ठाटबाट से ये वीर सज्ज हो जाते तो (गणश्रियः) संघ के कारण ये बहुत सुहाने लगते। उनकी शोभा आधुनिक सुसज्ज सेनाके समकक्ष हो जाती है।

हथियार।

भाले।

ये ऋष्टिभिः अजायन्त। (ऋ० १।३७।२) (७)
बाहुषु अधि ऋष्टयः दविद्युतति।
(ऋ. ८।२०।११) (९२)
अंसेषु ऋष्टयः नि मिमृक्षुः। (ऋ. १।६४।४) (१११)
भ्राजदृष्टयः उज्जिघ्नते। (ऋ. १।६४।११) (११८)
भ्राजदृष्टयः स्वयं महित्वं पनयन्त।
(ऋ. १।८७।३) (१४७)
भ्राजदृष्टयः दृळ्हानि चित् अचुच्यवुः
(ऋ. १।१६८।४) (१८६)
भ्राजदृष्टयः मरुतः आगन्तन।
(ऋ. २।३४।५) (२०३)
भ्राजदृष्टयः वयः दधिरे। (ऋ. ५।५५।१) (२६५)
ये ऋष्टिभिः विभ्राजन्ते। (ऋ. १।८५।४) (१२६)

ऋष्टिमद्भिः रथेभिः आयात ।
(ऋ. १।८८।१) (१५१)
सुधिता घृताची हिरण्यनिर्णिक्
ऋष्टिः येषु सं मिम्यक्ष । (ऋ. १।१६७।३) (१७४)
ऋष्टिविद्युतः मरुतः । (ऋ. १।१६८।५) (१८७)
ये ऋष्टिविद्युतः नमस्य । (ऋ. ५।५२।१३) (२२९)
युधा आ ऋष्टीः असृक्षत । (ऋ. ५।५२।६) (२२२)
वः अंसेषु ऋष्टयः, गभस्त्योः अग्निभ्राजसः विद्युतः ।
(ऋ. ५।५४।११) (२६०)

'ये वीर अपने भाले लेकर प्रकट होते हैं । इनकी भुजाओंपर तथा कंधोंपर भाले द्योतमान हो उठे हैं । तेजःपुञ्ज हथियारों से युक्त होकर ये वीर अपने महत्त्व को बढाते हैं । चमकनेवाले हथियार लेकर ये वीर रथपरसे आते हैं । इन के हथियार बढिया, सुदृढ, सुतीक्ष्ण, सोने के तुल्य चमकनेवाले होते हैं । चमकीले भालों से युक्त ये वीर स्थिर शत्रुको भी विकम्पित कर देते हैं । कंधोंपर भाले रखे हुए हैं और इनके हाथों में तलवार रहती है ।'

ऋष्टि का अर्थ है भाला, कुल्हाडी, परशु या तत्सम मुष्टि में पकडनेयोग्य हथियार । जब सैनिक भाले लेकर खडे होते हैं तब कंधों पर अपने भालों को रख लेते हैं । उस समय का वर्णन इन मंत्रों में है ।

कुठार या परशु ।

ये वाशीभिः अजायन्त । (ऋ. १।२०।२) (७)
हिरण्यवाशीभिः अग्निं स्तुषे । (ऋ. ८।७।३२) (७१)
ते वाशीमन्तः । (ऋ. १।८७।५) (१५०)
वः तनूषु अधि वाशीः । (ऋ. १।८८।३३) (१५३)
ये वाशीषु धन्वसु आयाः । (ऋ. ५।५३।४) (२६७)

'वाशी का अर्थ है कुल्हाडी या परशु । यह मरुतों का एक शस्त्र है । परशुसहित ये वीर प्रकट होते हैं । इन कुल्हाडियों पर सुनहली पच्चीकारी की जाती थी । ये वीर हमेशा अपने पास कुठार रख लेते हैं । मनोहर तीक्ष्ण कुठार एवं बढिया धनुष्य रखते हैं ।

इन वर्णनों से पाठकों को इनके कुठारों की कल्पना आजायगी । इनके हथियारों में भाले, कुठार एवं धनुष्यों का अन्तर्भाव हुआ करता था । साथ ही तलवार भी रहा करती थी ।

तलवार, वज्र ।

वज्रहस्तैः अग्निं स्तुषे । (ऋ. ८।७।३२) (७१)
विद्युद्धस्ताः । (ऋ. ८।७।२५) (७०)
हस्तेषु कृतिः च सं दधे । (ऋ. १।१६८।३) (१८५)
स्वधितिवान् । (ऋ. १।८८।२) (१५२)

' ये वीर हाथ में तलवार या वज्र धारण करनेवाले हैं । बिजली के तुल्य हथियार इन के हाथ में पाया जाता है । तेज धारवाली, तुरन्त काट देनेवाली तलवार ये वीर धारण करते हैं । '

' कृति ' का अर्थ है. तीक्ष्ण धारवाली तलवार । वज्र भी एक हथियार है जो पहिये के आकारवाला होता हुआ तेज दन्दानेदार बनता है । पर कई स्थानोंपर अत्यन्त सुतीक्ष्ण तलवार को भी वज्र कहा है ।

हथियार ।

ऋभुक्षणः ! इदं वनत । (ऋ. ८।७।९) (५४)
ऋभुक्षणः ! प्रचेतसः स्थ । (ऋ. ८।७।१२) (५७)
ऋभुक्षणः ! सुदीतिभिः वीळुपविभिः आगत ।
(ऋ. ८।२०।२) (८३)
गभस्त्योः इषुं दधिरे । (ऋ. १।६४।१०) (११७)
हिरण्यचक्रान् अयोदंष्ट्रान् पश्यन् ।
(ऋ. १।८८।५) (१५५)
वः क्रिविर्दती दिद्युत् रदति ।
(ऋ. १।१६६।६) (१६३)
वः अंसेषु तविषाणि आहिता ।
(ऋ. १।१६६।९) (१६६)
पविषु अधि क्षुराः । (ऋ. १।१६६।१०) (१६७)
वः ऋञ्जती शरुः । (ऋ. १।१७२।२) (१९३)
चक्रिया अवसे आववर्तत् । (ऋ. २।३४।१४) (२१२)
धन्वना अनु यन्ति । (ऋ. ५।५३।६) (२६९)
विद्युता सं दधाति । (ऋ. ५।५४।२) (२५१)
वः हस्तेषु कशाः । (ऋ. १।३७।३) (८)

' ये शस्त्रधारी वीर हैं । बढिया, तीक्ष्ण धारवाले शस्त्र लेकर तुम इधर आओ । तुम हाथ में बाण धारण करते हो । तुम्हारे हथियार सुवर्णविभूषित फौलाद की बनी दंष्ट्रायुक्त विभागों से अलंकृत हैं । तुम्हारा दन्दानेदार बिजली की

तरह तेजस्वी शस्त्र शत्रुके टुकडे कर रहा है। तुम्हारे कंधों पर हथियार लटक रहे हैं। तुम्हारे हथियार तीक्ष्ण धाराओं से युक्त हैं। तुम्हारा हथियार वेगपूर्वक शत्रुदल पर जा गिरता है। तुम्हारे पहिये जैसे दिखाई देनेवाले आयुध से तुम जनता की रक्षा करते हो। धनुर्धारी बन कर तुम यात्रा करते हो। तुम्हारा संघ तेजस्वी वज्रों से सुसज्ज होता है। तुम्हारे हाथों में चाबूक है।'

इन मंत्रांशों में मरुतों के अनेक हथियारों का निर्देश देखने मिलता है। दन्दानेदार वज्र और पहिये, बाण, शर, धनुष्य, तलवार, छोटेमोटे लंबी या छोटी मूठवाले हथियारों का उल्लेख है। इस से मरुतों के हथियारों एवं उन के गणवेश की अच्छी कल्पना की जा सकती है।

सुदृढ मजबूत हथियार।

घः आयुधा स्थिरा। (ऋ. १।३९।२) (३७)

घः रथेषु स्थिरा धन्वानि आयुधा।

(ऋ. ८।२०।१२) (९३)

'मरुतों के हथियार बडे ही सुदृढ हुआ करते और उन के रथों पर स्थिर याने न हिलनेवाले धनुष्य बहुतसे रखे जाते थे।' यहाँपर चल तथा स्थिर दो प्रकार के धनुष्य हुआ करते ऐसा जान पडता है। ध्वजस्तंभों से बाँधे धनुष्य स्थिर और वीरोंने अपने साथ रखे हुए धनुष्य चल कहे जा सकते हैं। स्थिर धनुष्योंपर दूरतक फेंकनेके लिए बडे बाण एवं धडाके से टूट गिरनेवाले गोलक भी लगाये जाते। चल धनुष्यों से प्रायः सभी परिचित होंगे। ऐसा जान पडता है कि, केवल महारथी या अतिमहारथी ही स्थिर धनुष्यों को काम में ला सकते थे।

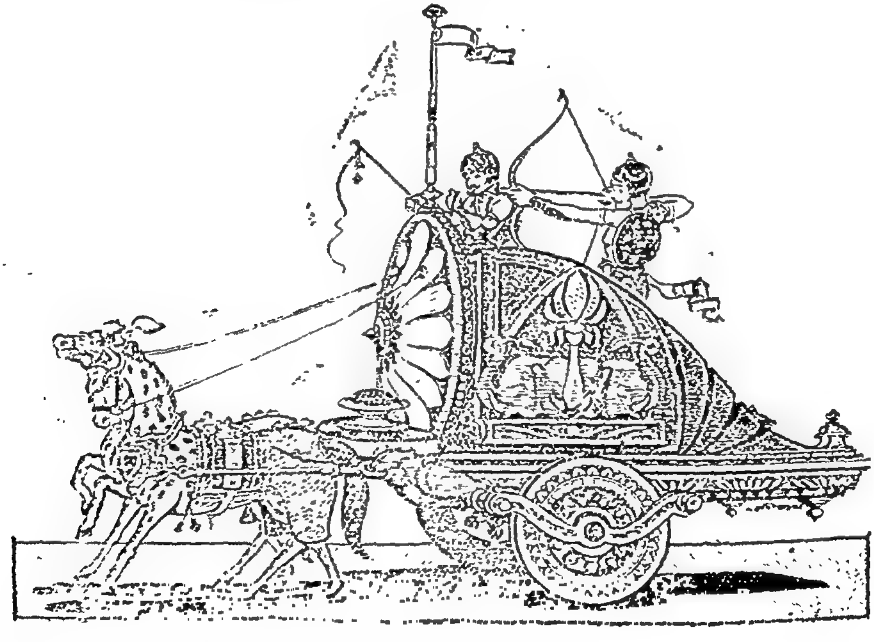

मरुतों का घोडे जोता हुआ रथ।

मरुतों का रथ।

मरुतां रथे शुभं शर्धः अभि प्रगायत।

(ऋ. १।३७।१) (६)

'मरुतों का बल रथों में सुहानेवाला है।' वह सच-मुच वर्णन करनेयोग्य है। ये वीर रथों में बैठकर अपना बल प्रकट करते हैं।

एषां रथाः स्थिराः सुसंस्कृताः।

(ऋ. १।३८।१२) (३१)

मरुतः वृषणश्वेन वृषप्सुना वृषनाभिना रथेन आगत। (ऋ. ८।२०।१०) (९१)

बन्धुरेषु रथेषु वः आ तस्थौ।
(ऋ. १।६४।९) (११६)

विद्युन्मद्भिः स्वर्कैः ऋष्टिमद्भिः अश्वपर्णैः रथेभिः आ यात। (ऋ. १।८८।१) (१५१)

वः रथेषु विश्वानि भद्रा। (ऋ. १।१६६।९) (१६६)
वः अक्षः चक्रा समया वि ववृते। ,, ,, ,,
मरुतः रथेषु अश्वान् आ युंजते।
(ऋ. २।३४।८) (२०६)

रथेषु तस्थुषः एतान् कथा ययुः।
(ऋ. ५।५३।२) (२३५)

युष्माकं रथान् अनु दधे। (ऋ. ५।५३।५) (२३८)
शुभं यातां रथाः अनु अवृत्सत।
(ऋ. ५।५५।१-९) (२६५-२७३)

इन वीरों के रथ बड़े ही सुदृढ हुआ करते हैं। इनके रथों के घोड़े बलिष्ठ और उनके पहिये मजबूत ढंगके बनाये होते हैं। इनके रथों में बैठने की जगहें कई होती हैं। इनके रथों में तेजस्वी तथा बढिया हथियार रखे जाते हैं और घोड़े भी जोते जाते हैं। इनके रथों में सब कुछ अच्छा ही होता है। इनके रथों का धुरा एवं उसके पहिये ठीक समय पर घूमते रहते हैं। ऐसे रथों में बैठनेवाले इन वीरों के समीप भला कौन जा सकता है? हम तुम्हारे रथों के पीछे चले आते हैं। भलाई करने के लिए जानेवाले तुम्हारे रथों को देखकर जनता उनके पश्चात् चलने लगती है।'

इस वर्णन से मरुतों के रथ की कल्पना की जा सकती है। बैठने के लिए मरुतों के रथों में कई स्थान रहते हैं, जिन पर रथारोही वीर बैठ जाते हैं। मरुतों के रथ बड़े सुदृढ ढंग से तैयार किए जाते हैं अर्थात् उनका छोटासा हिस्सा भी त्रुटिमय नहीं रहता है चाहे पहिया, धुरा या अन्य कोई कीलपुर्जा हो। युद्धभूमि में भीषण संघर्ष तथा मार काट में वे टिक सकें इस हेतु को ध्यान में रखकर वे अत्यन्त स्थायी स्वरूप के बनाये जाते हैं। इन रथों में घोड़े तथा कभी कभी हरिणियाँ भी जोती जाती थीं। देखिए ये उल्लेख–

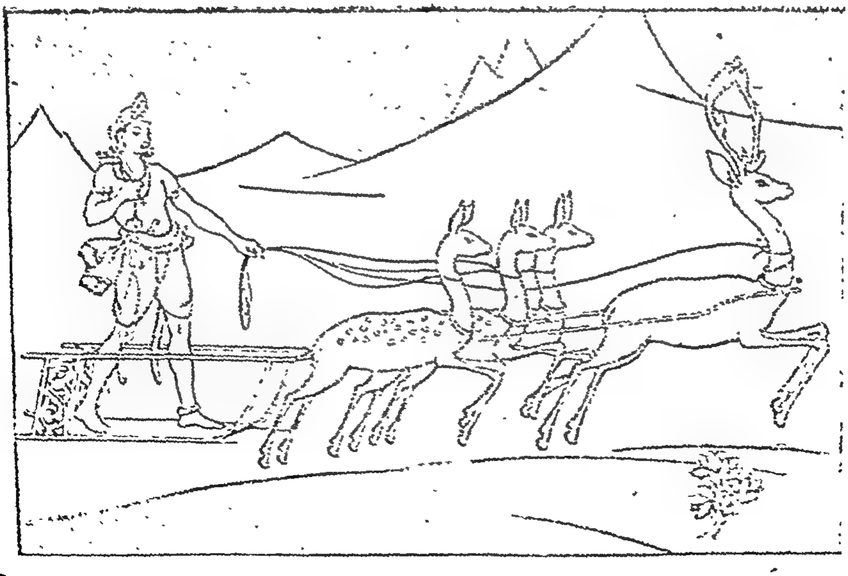

मरुतों का चक्ररहित और हरिणयुक्त रथ।

हरिणों से खींचे जानेवाले रथ।

मरुतोंके रथ हरिनियों एवं बारहसींगोंसे खींचे जाते थे ऐसा वर्णन निम्न मंत्रांशोंमें है। पाठक उनका विचार करें।

ये पृषतीभिः अजायन्त। (ऋ. १।३७।२) (७)
रथेषु पृषतीः अयुग्ध्वं। (ऋ. १।३९।६) (४१)
एषां रथे पृषतीः। (ऋ. १।८५।५) (७३)
रथेषु पृषतीः प्र अयुग्ध्वम्। (ऋ. ८।७।२८) (११७)
रथेषु पृषतीः आ अयुग्ध्वम्।
(ऋ. १।८५।४) (१२६)
पृषतीभिः पृक्षं याथ। (ऋ. २।३४।३) (२०१)
संमिश्लाः पृषतीः अयुक्षत। (ऋ. ३।२६।४) (२१४)
रोहितः प्रष्टीः वहति। (ऋ. १।३९।६) (४१)
प्रष्टीः रोहितः वहति। (ऋ. ८।७।२८) (७३)

'रथ में धब्बेवाली हरनियाँ जोती हुई हैं और उनके आगे एक बारह सींगा रखा हुआ है। यह एक इस भाँति हरिणयुक्त मरुतों का रथ है जो पहियों से रहित होता है। देखो—

सुषोमे शर्यणावति आर्जीके पस्त्यावति।
ययुः निचक्रया नरः। (ऋ. ८।७।२९) (७४)

'चक्ररहित रथपर से बढिया सोम जहाँपर होता हो, ऐसे स्थानपर शर्यणा नदी के समीप ऋजीक के प्रदेश में मरुत् जाते हैं।'

जिस स्थानपर बढिया सोम मिलता है वह समुद्र की सतहसे १६००० फीट ऊँचाईपर रहता है। यहाँ का सोम अत्युत्कृष्ट माना जाता है। चूँकि यहाँ 'सु-सोम' कहा है इसलिये ऐसे स्थानों का विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं रहती है जहाँपर घटिया दर्जे का सोम मिलता हो। इतने अत्युच्च भूविभाग में ये मरुत् पहियों से रहित रथपर से संचार करते हैं। कोई आश्चर्य की बात नहीं अगर यह स्थान बर्फ से पूर्णतया ढका हो। ऐसे हिमाच्छादित भूभागों में चक्रहीन वाहनों को कृष्णसारमृग या हरिनियाँ खींचती हैं और आज दिन भी यह दृश्य देखा जा सकता है। रूस के उत्तर में जहाँपर खूब बर्फ जमी रहती है इस तरह की गाडियाँ, जिन्हें आंग्ल भाषा में (Sledge) 'स्लेज' कहते हैं, आज भी प्रचलित हैं जिन्हें बारह सींगे या हरिनियाँ खींचती हैं।

इस से प्रतीत होता है कि, मरुत् बर्फीले स्थानों में रहते हों। मरुतों के रथों में घोडों तथा घोडियों को भी जोतते थे। शायद, बर्फ का अभाव जहाँपर हो ऐसे स्थानों में पहुँचनेपर इस ढंग के रथोंका उपयोग किया जाता हो और हिमाच्छादित, निबिड हिमस्तरों की जहाँ प्रचुरता हो ऐसे प्रदेशों में ऊपर बतलाये हुए हरिणोंद्वारा खींचे जानेवाले रथों का उपयोग होता हो।

अश्वरहित रथ।

इस के सिवा मरुतों के समीप ऐसा भी रथ विद्यमान था जो बिना घोडों के चलता था, अतः चाबूक की आवश्यकता नहीं हुआ करती थी। देखिये, वह मन्त्र यूं है-

अनेनो वो मरुतो यामो अस्त्वनश्वश्चिद् यमजत्यरथीः। अनवसो अनभीशू रजस्तूर्वि रोदसी पथ्या याति साधन्॥
(ऋ. ६।६६।७) (३४०)

'हे वीर मरुतो! यह तुम्हारा रथ (अनू-एनः) बिलकुल निर्दोष है और (अन्-अश्वः) इस में घोडे जोते नहीं हैं तिसपर भी वह (अजति) चलता है, संचार करता है तथा उसे (अ-रथीः) रथ में बैठनेवाला वीर न हो तो भी अर्थात् एक साधारण सा मनुष्य भी चला सकता है। (अन्-अवसः) इसे किसी पृष्ठ-रक्षक की आवश्यकता नहीं रहती है, (अन् अभीशुः) यह लगाम, कशा आदि से रहित है, ऐसा यह रथ (रजस्तूः) बडे वेग से गर्द उडाता हुआ (रोदसी पथ्या) आकाश एवं पृथ्वी के मध्य विद्यमान मार्गों से (साधन् याति) अपना अभीष्ट सिद्ध करता हुआ चला जाता है।

यह मरुतों का रथ आधुनिक 'मोटर' के तुल्य कोई वाहन हो ऐसा दीख पडता है जो घोडे, लगाम तथा पृष्ठरक्षक के अभाव में भी धूल उडाता हुआ वेगपूर्वक आगे बढता है। अश्वों के न रहने से साथ लगाम रखने की कोई आवश्यकता नहीं है और खींचनेवाले न रहनेपर भी भीतर रखे हुए यांत्रिक साधनों से धूलिमय नभ करता हुआ यह रथ तेज दौडता है। धूल उडाते जाने का मत-

तथ्य यही है कि, उस का वेग बडा ही प्रचंड है। क्योंकि तीव्र वेग के न होनेपर धूलि का उडाया जाना संभव नहीं है।

(रजस्तुः) का दूसरा अर्थ योंभी हो सकता है कि अंतरिक्षमें से त्वरापूर्वक जानेवाला। ऐसा अर्थ कर लेने से, (रजस्-तुः रोदसी पथ्या याति) द्युलोक एवं भूलोक के मध्य अन्तरिक्ष की राहसे यह रथ चला जाता है, ऐसा अर्थ हो सकता है। ऐसी दशामें इस रथ को आकाशयान, 'एअरोप्लेन' मानना आवश्यक है। अगर इसे हम कविकल्पना मानें, तो भी विमानों की सूचना स्पष्टतया विद्यमान है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। इस मन्त्र में निर्दिष्ट यह रथ भले ही विमान हो, या मोटर हो, पर स्पष्ट तो यही है कि बिना अश्वों की सहायता के यह बडी शीघ्रता से गतिमान हुआ करता है।

कई मंत्रों में 'बाज पंछी की तरह वीर मरुत आते हैं' ऐसा वर्णन किया है। यह निर्देश भी मरुतों के आकाशसंचार को और अधिक स्पष्ट करता है।

अब तक के वर्णन से पाठकों को स्पष्ट विदित हुआ ही होगा कि मरुतों के समीप चार प्रकार के वाहन थे; [१] अश्वसंचालित रथ, [२] हरिणियों तथा कृष्णसार मृग से खींचा हुआ, घनीभूत हिम के स्तरपर से घसीटते जानेवाला रथ, [३] बिना अश्वोंके परन्तु बडे वेगसे चतुर्दिक् धूलि उडाते हुए जानेवाले रथ और [४] आसमानमें उडते जानेवाले वायुयान।

शत्रु पर किया जानेवाला आक्रमण।

मरुत् शत्रुसेना पर हमले करने में बडे ही प्रवीण थे और उनकी इस भाँति चढाई के बारेमें किया हुआ विविध वर्णन देखनेयोग्य है। बानगी के तौर पर देख लीजिए–

यः यामः चित्रः । (ऋ. १।१६६।४; ५।५६।१)
(१६१;१६५)

यः चित्रं याम चेकिते। (ऋ. ५।५४।१०) (२०८)

'तुम्हारा हमला बडा ही अचम्भे में डालनेवाला होता है।' जिससे जनता आश्चर्यचकित हो दाँतोंतले उँगली दबाये बैठी रहे, ऐसे आक्रमण या हमला ये वीर मरुत करते हैं। इसी प्रकार-

वः उग्राय यामाय मन्यवे मानुषः नि दध्रे।
(ऋ. १।३७।७) (१२)

येषां यामेषु पृथिवी भिया रेजते।
(ऋ. १।३७।८) (१३)

वः यामेषु भूमिः रेजते। (ऋ. ८।२०।५) (८३)

वः यामाय गिरिः नि येमे। (ऋ. ८।७।५) (५०)

वः यामाय मानुषा अबीभयन्त।
(ऋ. १।३९।६) (४२)

'तुम्हारी चढाई के मौकेपर मानव कहीं न कहीं किसी के सहारे रहने लगते हैं। तुम्हारे हमले से पृथ्वीतक काँपने लगती है। तुम्हारे आक्रमण से पहाडतक चुपचाप हो जाते हैं ताकि वे न गिर पडें। तुम जब धावा पुकारते हो तब मानव भयभीत हो उठते हैं।'

इन वीरों का ऐसा प्रबल आक्रमण हुआ करता है। इस विद्युदाक्रमण के सम्मुख बलिष्ठ शत्रु भी तूफान में तिनके के समान कहीं के कहीं उड जाते हैं और अ-पदस्थ हो जाते हैं। देखिए न-

दीर्घं पृथुं यामभिः प्रच्यावयन्ति।
(ऋ. १।३७।११) (१६)

यत् यामं अचिध्वं पर्वता नि अहासत।
(ऋ. ८।७।२) (४७)

यत् यामं अचिध्वं इन्दुभिः मन्दध्वे।
(ऋ. ८।७।१४) (५९)

'तुम्हारी चढाइयों के फलस्वरूप बडे तथा सुदृढ शत्रु को भी तुम पदभ्रष्ट करते हो और पहाड भी विकम्पित हो उठते हैं। जब तुम आक्रमणार्थ बाहर निकल पडते हो तो पहले सोमपान करके हर्षित होते हो और पश्चात् शत्रु पर टूट पडते हो।'

इससे विदित होता है कि एक बार यदि मरुतों का आक्रमण हो जाए तो शत्रु का संपूर्ण विनाश होना ही चाहिए. दुश्मन पूरी तरह नेस्तनाबूद होगा इतना प्रभावशाली वह होता है।

मरुत् मानव ही थे।

पहले मरुत् सर्व, मानवकोटि के थे, परन्तु उन्हों ने अपनी तपस्या से नाना भाँति के कर्म कर दिखलाये, अतः

वे अमरपन को पाने में सफल हो गये। देखिए—

यूयं मर्तासः स्यातन; वः स्तोता अमृतः स्यात्।
(ऋ. १।३८।४) (२४)

रुद्रस्य मर्या: दिवः जज्ञिरे। (ऋ. १।६४।२) (१०९)

'तुम मर्त्य हो लेकिन तुम्हारा स्तोता अमर होता है। तुम रुद्र के याने वीरभद्र के मानव हो, मरणधर्मा हो, पर तुम कार्य इस तरह करते कि मानों तुम्हारा जन्म स्वर्गमें-द्युलोक में हुआ हो।' उसी प्रकार—

मरुतः सगणाः मानुषासः।
(अथर्व. ७।७७।३) (४४७)

मरुतः विश्वकृष्टयः। (ऋ. ३।२६।५) (२१५)

सभी गणों के साथ समवेत ये मरुत् मानव ही हैं और सभी कृषिकर्म करनेवाले काश्तकार हैं। ये गृहस्थाश्रमी भी हैं। देखिए—

गृहमेधास आ गत मरुतः। (ऋ. ७।५९।१०) (३९२)

'ये मरुत् गृहस्थाश्रम में प्रवेश करनेवाले हैं, वे हमारी ओर आ जायँ।' निस्सन्देह, ये विवाहित हैं अतएव इन्हें पत्नीयुक्त कहा गया है।

युवानः निमिश्लां पज्रां युवतीं शुभे अस्थापयन्त।
(ऋ १।१६७।६) (१७७)

स्थिरा चित् वृषमनाः अहंयुः सुभागाः जनीः वहते। (ऋ. १।१६७।७) (१७८)

तुम युवक वीर नित्य सहवास में रहनेवाली, पत्नीपद पर आरूढ युवती को शुभयज्ञकर्म में साथ ले चलते हो और उसे अच्छे कर्म में लगाते हो। तुम्हारी पत्नी अच्छी भाग्यशालिनी है और वह अच्छी सन्तान से युक्त है।'

इससे स्पष्ट है कि ये विवाहित हैं।

मरुतों की विद्याविलासिता।

वीर मरुत् ज्ञानी और कवि थे ऐसा वर्णन उपलब्ध होता है। देखिए—

ज्ञानी।

प्रचेतसः मरुतः नः आ गन्त।
(ऋ. १।२१।९) (४४)

प्रचेतसः नानदति। (ऋ. १।६४।८) (११५)

ते ऋष्वासः दिवः जज्ञिरे। (ऋ. १।६४।२) (१०९)

'वीर मरुतो! तुम विद्वान् हो, तुम हमारे निकट चले आओ, तुम उच्चकोटि के ज्ञानी हो।' विद्वान् होने के कारण ये मरुत् दूरदर्शी भी हैं।

दूरदर्शी।

दूरे दृशः परिस्तुभः। (ऋ. १।१६६।११) (१६८)

'ये वीर दूरदर्शिता से संपन्न होने के कारण पूर्णतया सराहनीय हैं।' विद्वता तथा दूरदर्शिता से अलंकृत होने के कारण ये अच्छी प्रभावशाली वक्तृता देने की क्षमता रखनेवाले हैं।

धुवाँधार वक्तृता देनेवाले।

सुजिह्वाः आसभिः स्वरितारः।
(ऋ. १।१६६।११) (१६८)

'उन वीर मरुतों की वाणी बडी अच्छी है अतः इनके मुँहसे मधुर एवं धुरंधर वक्तृता धाराप्रवाहरूप से निकलती है। इन मरुतों में कवित्वशक्ति पाई जाती है।

कवि।

ये ऋष्टिविद्युतः कवयः सन्ति वेधसः।
(ऋ. ५।५२।१३) (२११)

नरो मरुतः सत्यश्रुतः कवयो युवानः।
(ऋ. ५।५७।८) (२९१)

मरुतः कवयो युवानः। (ऋ. ५।५८।३) (२९४)
(ऋ. ५।५८।८) (२९९)

स्वतवसः कवयः...मरुतः। (ऋ. ७।५९।११) (३९३)

कवयो य इन्वथ। (अथर्व. ४।२७।३) (४४२)

ऋतज्ञाः (२०१) वेधसः (२५५) विचेतसः (२६२)

'ये मरुत् ज्ञानी, कवि एवं अपनी सत्यनिष्ठाके लिये विख्यात हैं। ये युवक तथा बलिष्ठ हैं। बुद्धिमत्ता भी इन में कूटकूटकर भरी होती है, उदाहरणार्थ—

बुद्धिमानी।

यूयं सुचेतुना सुमतिं पिपर्तन।
(ऋ. १।१६६।६) (१६३)

धियं धियं देधयाः दधिध्वे।
(ऋ. १।१६८।१) (१८३)

वः सुमतिः ओ सु जिगातु ।
(ऋ. २।३४।१५) (२२३)

सूरयः मे प्रवोचन्त । (ऋ. ५।५२।१६) (२३२)

'ये अपनी अच्छी बुद्धिमत्ता के कारण जनता में सुबुद्धिका प्रचार एवं वृद्धि करते हैं, इन में हरएक में दिव्य-भावयुक्त बुद्धि निवास करती है। ये अच्छे विद्वान्, उच्च-कोटिके वक्ता और सुबुद्धि देनेवाले भी हैं।' बुद्धिमानीके साथ इन में साहसिकता भी पर्याप्त मात्रामें विद्यमान है।

साहसीपन।

धृष्णुया पान्ति। (ऋ. ५।५२।२) (२१८)

'ये अपने धैर्ययुक्त धर्षणसामर्थ्य से सब का संरक्षण करते हैं।' ये बडे सामर्थ्यवान् हैं–

सामर्थ्यवत्ता।

शाकिनः मे शतं ददुः। (ऋ. ५।५२।१७) (२३३)

'इन सामर्थ्यशाली वीरोंने मुझे सौ गायों का दान दिया।' इस प्रकार इन की शक्तिमत्ता का वर्णन है। ये बडे उत्साही वीर हैं।

उत्साह तथा उमंग से लबालब भरे।

सम-मन्यवः! मापस्थात। (ऋ. ८।२०।१) (८२)

समन्यवः मरुतः! गावः मिथः रिहते।
(ऋ. ८।२०।२१) (१०२)

समन्यवः! पृक्षं याथ। (ऋ. २।३४।३) (२०१)

समन्यवः! मरुतः नः सवनानि आगन्तन।
(ऋ. २।३४।६) (२०४)

'(स-मन्यवः) हे उत्साही वीरो! तुम हम से दूर न रहो। तुम्हारी गौएं प्यारसे एक दूसरेको चाट रही हैं। तुम अन्न का संग्रह करने जाओ। 'स-मन्यवः' का मतलब है उत्साही, क्रोधपूर्ण, जोशीला याने जो दूसरों के किए अपमान को बरदाश्त नहीं कर सकते ऐसे वीर। इन वीरोंमें उग्रता भरी पडी है।

उग्र वीर।

उग्रासः तनूषु नकिः येतिरे।
(ऋ. ८।२०।१२) (९३)

उग्राः मरुतः! तं रक्षत।
(ऋ. १।१६६।८) (१६५)

'ये उग्रस्वरूपवाले वीर अपने शरीरों की कुछ भी पर्वाह नहीं करते। हे उग्र प्रकृति के वीरो! तुम उस की रक्षा करो। ये वीर बडे उद्योगी भी हैं।

उद्यम में निरत।

शिमीवतां शुष्मं विद्म हि। (ऋ. ८।२०।३) (८४)

'इन उद्योग में लगे वीरों का बल हमें विदित है।' परिश्रमी जीवन बिताने के कारण इन का बल बडा-चढा होता है। निरलस उद्यम करने से जो बल बढता है वह मरुतों में पाया जाता है। ये बडे कुशल भी हैं।

कुशल वीर।

ये वेधसः नमस्य। (ऋ. ५।५२।१४) (२२९)

वेधसः! वः शर्धः अभ्राजि (ऋ. ५।५४।६) (२५५)

सुमायाः मरुतः नः आ यांतु।
(ऋ. १।१६७।२) (१७३)

मायिनः तविषीः अयुग्ध्वम्।
(ऋ. १।६४।७) (११४)

'ये वीर ज्ञानी हैं, इसलिये इन्हें प्रणाम करो। हे ज्ञानी वीरो! तुम्हारा संघ बहुत सुहाता है। ये अच्छे कुशल मरुत् हमारी ओर आजायँ। ये कारीगर अपनी शक्तियों से युक्त हैं।' इस प्रकार उनकी कुशलताका वर्णन किया हुआ है। ये बडे कथाप्रिय भी हैं अर्थात् कहानियाँ सुनना इन्हें बहुत भाता है।

कथाप्रिय।

[हे] कधप्रियः! वः सखित्वे कः ओहते।
(ऋ. ८।७।३१) (७३)

'हे प्यार से कहानी सुननेवाले वीरो! कौनसा मित्र भला तुम्हें प्रिय है।' कथाप्रिय पद का आशय है भाँति भाँति की वीरों की कथाएं या वीरगाथाएं सुन लेना जिन्हें अच्छा लगता हो। इस कथाप्रियता में ही इन की शूरता का आदिस्रोत रखा हुआ है। बीमारों के उपचार करने में भी ये प्रवीण हैं।

रोगियों की सेवा करने में प्रवीणता ।

मारुतस्य भेषजस्य आ वहत ।

(ऋ. ८।२०।२३) (१०४)

यत् सिन्धौ भेषजं, यत् असिक्न्यां, यत् समुद्रेषु यत्पर्वतेषु विश्वं पश्यन्तो बिभृथा तनूषु । नः आतुरस्य रपः क्षमा विन्हुतं पुनः इष्कर्त ।

(ऋ. ८।२०।२६) (१०७)

' पवनमें जो औषधिगुण है उसे यहाँ ले आओ। सिन्धु, समुद्र, पर्वत, असिक्नी नामक स्थलों में जो कुछ दवाई मिल जाए उसे तुम देख लो तथा प्राप्त करो। वह समूचा निरख कर अपने समीप संग्रह कर रखो। हममें जो बीमार पडा हो उस के देह में जो त्रुटि हो उसे इन औषधों से दूर करो और कुछ टूटाफूटा हो तो उसकी मरम्मत कर दो।

खिलाडी ।

इन वीरों में खिलाडीपन की कुछ भी न्यूनता नहीं है। इस संबंध में कुछ प्रमाण देखिए—

क्रीळं मारुतं शर्धं अभि प्रगायत ।

(ऋ. १।३७।१) (६)

यत् शर्धं क्रीळं प्रशंस । (ऋ. १।३७।५) (१०)

ते क्रीळयः स्वयं महित्वं पनयन्त ।

(ऋ. १।८७।३) (१४७)

क्रीळा विदथेषु उपक्रीळन्ति ।

(ऋ. १।१६६।२) (१५९)

' क्रीडा में व्यक्त होनेवाला मरुतों का सामर्थ्य सचमुच वर्णनीय है । वे क्रीडासक्त मनोवृत्तिवाले हैं इससे उनकी महनीयता प्रकट होती है । युद्ध में भी ये इस तरह जूझते हैं कि मानों ये खेल ही रहे हों। वीर हमेशा खिलाडी बने रहते हैं। इनके खिलाडीपनमें भी वीरता एवं शौर्यका ही आविर्भाव हुआ करता है।'

नृत्यप्रियता ।

नृतवः मरुतः ! मर्तः वः भ्रातृत्वं आ अयति ।

(ऋ. ८।२०।२२) (१०३)

' मरुत् नृत्य में बडे कुशल हैं। मानव तक इनसे इसी कारण मित्रता सम्पादित करना चाहते हैं।' साधारण मनुष्य भी ऐसे उच्च कोटि के वीरों के संपर्क में सिर्फ उनकी नृत्यचातुरी के कारण आना चाहता है। इससे ज्ञात होता है कि इनकी कुशलता में आकर्षणशक्ति कितनी बडी होगी।

गानेबजाने में प्रावीण्य ।

ऐसा दीख पडता है कि ये वीर बाजा बजाने में भी कुशल थे, देखिए—

हिरण्यये रथे कोशे वाणः अज्यते ।

(ऋ. ८।२०।८) (८९)

वाणं धमन्तः रण्यानि चक्रिरे ।

(ऋ. १।८५-१०) (१३१)

' सोने से मढे हुए रथ में बैठकर ये वाण नामक बाजा बजाने लगते हैं और चेतोहारी गायन का प्रारंभ करते हैं। इस भाँति वीर मरुत् गायनवादन-पटुता के कारण बडाही खुशहाल जीवन बिताते हैं और दुःख या उदासीनता इनके पास फटकने नहीं पाती।

ऊपर वीर मरुतोंमें विद्यमान सद्गुणोंका दिग्दर्शन किया जा चुका है। आशा है कि पाठकवृन्द के सम्मुख मरुतोंका व्यक्तिमत्व स्पष्टतया व्यक्त हुआ होगा। पाठकों से प्रार्थना है कि वे स्वयं भी इस संबंध में अधिक सोच लें।

प्रबल शत्रु को जडमूल से उखाड फेंक देनेवाले वीर ।

ये वीर मरुत् इतने प्रभावशाली हैं कि स्थिरीभूत शत्रु को भी अपनी जगह परसे समूल उखाड देते हैं। देखिए-

(हे) नरः ! यत् स्थिरं पराहत ।

(ऋ. १।३९।३) (३८)

गुरु वर्तयथा । (ऋ. १।३९।३) (३८)

स्थिरा चित् नमयिष्णवः । (ऋ. ८।२०।१) (८२)

यत् एजथ, द्विपानि वि पापतन् ।

(ऋ. ८।२०।४) (८५)

अच्युता चित् ओजसा प्रच्यवयन्तः ।

(ऋ. १।८५।४) (१२५)

एषां अज्मेषु भूमिः रेजते । (ऋ. १।८७।३) (१४७)

' हे नेता वीरो। तुम स्थिर दुश्मन को भी दूर हटाते

हो, बड़े प्रबल शत्रु को भी हिला देते हो, स्थिर शत्रु को भी झुकाते हो। जब तुम चढ़ाई करते हो, तब टापूतक गिर पड़ते हैं। अविचलित शत्रु को अपनी शक्ति से विकंपित करा देते हो। इनके आक्रमण के समय जमीन तक हिल उठती है।'

इस प्रकार ये वीर अपने प्रभाव से समूचे शत्रु को तहसनहस कर डालते हैं।

भव्य आकृतिवाले वीर।

मरुतों की आकृति बड़ी भव्य हुआ करती थी, इस विषय के वर्णन देखिये।

ये शुभ्राः घोरवर्पसः सुक्षत्रासो रिशादसः।
ऋ. ८।१०३।१४ (अग्निः २४४७)
सत्वानः घोरवर्पसः। (१०९) ऋ. १।६४।२
मृगाः न भीमाः। (१९९) ऋ. २।३४।१

'ये वीर गौरवर्णवाले एवं भव्य शरीरों से युक्त हैं। वे अच्छे क्षत्रिय हैं और शत्रु का पूर्ण विनाश करनेवाले हैं। वे बलिष्ठ तथा बृहदाकार शरीरवाले हैं। सिंह की न्याईं वे भीषण दिखाई देते हैं।'

पीछे कहा जा चुका है कि, ये सभी युवकदशा में विद्यमान हैं। यह बात सबको विदित है कि, सेनाओं में युवक ही भर्ती किये जाते हैं।

रक्तिमामय गौरवर्ण।

मरुतों के वर्णन से जान पड़ता है कि, ये गोरे बदनवाले पर तनिक लालिमामय आभासे युक्त थे। देखिये–

शुभ्राः। (७०), ऋ. ८।७।२५; (७३), ८।७।२८; (५९), ८।७।१४; (२२५), १।८५।३; (१६५), १।१६७।४
अरुणप्सवः। (५२) ८।७।७

स्पष्ट हुआ कि, मरुत् गौरकाय थे, एवं लालिमापूर्ण छवि उन के शरीरों से फूट निकलती थी।

अपने तेज से चमकनेहारे वीर।

ये सदा अपने तेज से द्योतमान हो रहते थे, ऐसा वर्णन उपलब्ध है।

ये स्वभानवः अजायन्त। (७), ऋ. १।३७।२
स्वभानवः धन्वतु धायाः। (२३७), ऋ. ५।५३।४

स्वभानवे वाचं प्र अनज। (२५०), ५।५४।१
स्वेषं मारुतं गणं वन्दस्व। (३५) १।३८।१५
ते भानुभिः वि तस्थिरे। (५३), ८।७।८
चित्रभानवः तविषीः अयुग्ध्वम्।
(११४) ऋ. १।६४।७
चित्रभानवः अवसा आगच्छन्ति।
(१३३) ऋ. १।८५।११
अहिभानवः मरुतः। (१९५) १।१७२।१
अग्निश्रियः मरुतः। (२२५) ३।२६।५

'ये वीर मरुत अपने निजी तेज से प्रकट होते हैं। वे धनुष्यों का आश्रय लेकर पराक्रम कर दिखलाते हैं। उन तेजस्वी वीरों का वर्णन करो। समूचे मरुतों का संघ तेजस्वी है। वे अपने तेज से विशेष ढंग से चमकते हैं। उन का तेज अनोखे ढंग से चमकता है। वे अग्नितुल्य तेजस्वी हैं और उन का तेज कभी न्यून नहीं होता।'

यह सारा वर्णन उन की तेजस्विता को ठीक तरह बतलाता है।

अन्न उत्पन्न करनेहारे वीर।

पहले कहा जा चुका है कि, [मरुतः विश्व-कृष्टयः। (२२५) ऋ. ३।२६।५] मरुत् सभी किसान हैं। अतः स्पष्ट है कि धान्य का उत्पादन करना उन के अनेकविध कार्यों में अन्तर्भूत था। निम्न मंत्रांश देखनेयोग्य हैं—

वयः धातारः। (८०) ऋ. ८।७।३५
पिप्युषीं इषं धुक्षन्त। (४८) ऋ. ८।७।३
ते इषं अभि जायन्त। (१८८) ऋ. १।१६८।२
नमसः इत् वृधासः। (१९४) ऋ. १।१७१।२
वयोवृधः परिज्रयः। ऋ. ५।५४।२

'मरुत् अन्न का धारण करते हैं, पुष्टिकारक अन्न का उत्पादन करते हैं। वे अन्न का उत्पादन करने के लिए ही उत्पन्न हुए हैं। वे अन्न की वृद्धि करनेवाले होते हुए वीर मरुत् चारों ओर घूमते रहते हैं।'

ऐसे वर्णन पाये जाते हैं, जिन से वीर-मरुतों का अन्नोत्पादन निर्दिष्ट होता है, अतः स्पष्ट है, वे सभी (कृष्टयः) याने कृषिकर्म में निरत रहनेवाले हैं।

गायोंका पालन करते हैं।

कृषक होने के कारण मरुत् खेती करते हैं, धान्य की उपज बढाते हैं, अन्नदान करते हैं, तथा गोपालन भी करते हैं। इस सम्बन्ध में देखिए-

वः गावः क्व न रण्यन्ति ? (२२) ऋ. १।३८।२

'तुम्हारी गौएँ भला किधर नहीं रँभाती हैं ?' अर्थात् मरुतों की गौएँ हर जगह घूमती हैं और सहर्ष रँभाती हैं। उसी प्रकार-

इन्धन्वभिः रप्शदूधभिः धेनुभिः आगन्तन।
(२०३) ऋ. २।३४।५

धेनुं ऊधनि पिप्यत। (२०४) ऋ. २।३४।६
पृश्न्याः ऊधः दुदुहुः। (२०८) ऋ. २।३४।१०

'तेजस्वी एवं प्रशंसनीय बडे बडे थनों से युक्त गौओं के साथ हमारे समीप आओ। गौके थन को दूधभरा कर डालो। उन्होंने गौके थन का दोहन किया।' ऐसे वर्णन मरुत्सूक्तों में पाये जाते हैं। ये वीर गायको मातृवत् पूज्य समझते हैं। देखिए—

गां मातरं वोचन्त। (२३२) ऋ. ५।५२।१६

'गौ हमारी माता है,' ऐसा वे कह चुके। गौ का दोहन कर के वे दूध पीते हैं और पुष्ट होते हैं।

पृश्निमातरः ! वः स्तोता अमृतः स्यात्।
(२४) ऋ. १।३८।४
पृश्निमातरः इषं धुक्षन्त। (४८) ऋ. ८।७।३
पृश्निमातरः उदीरते (६२) ऋ. ८।७।१७
पृश्निमातरः श्रियः दधिरे। (१२४) ऋ. १।८५।२
गोमातरः अञ्जिभिः शुभयन्ते। (१२५) ऋ. १।८५।३

'गोमातरः' तथा 'पृश्निमातरः' दोनों पदों का अर्थ गौ को माता माननेहारे और भूमि को माता समझनेवाले ऐसा हो सकता है। यहाँ दोनों अर्थ लिए जा सकते हैं। क्योंकि वे वीर गोभक्त तो थे ही, लेकिन मातृभूमि की उपासना भी बडी लगन से किया करते थे। मातृभूमि की सेवा करने के लिए वे हमेशा अपना प्राण निछावर करने को तैयार रहा करते थे। इनके वर्णन पढने से साफ साफ प्रतीत होता है कि, शत्रु को दूर हटाकर मातृभूमि को सुखी एवं संपन्न करने के लिए ही इनकी समूची शूरता, वीरता तथा धैर्य का उपयोग हुआ करता।

चूँकि ये कृषक, खेती करनेवाले एवं अन्न की उपज बढानेहारे थे, इसलिये गौ की रक्षा करना इन के लिए अनिवार्य था, क्योंकि गौओं की उन्नति होने से कृषिकार्य के लिए आवश्यक, उपयुक्त बैलों की सृष्टि हुआ करती है।

मरुतों के घोडे।

मरुतोंके समीप बढिया, भली भाँति सिखाये हुए अच्छे घोडे थे। हमने देख लिया कि, वे गायों को रख लेते थे और गो-पालनविद्या में निष्णात थे। अब उन के अश्वों का विचार कर लेना चाहिए।

वः अश्वाः स्थिराः सुसंस्कृताः। (३२) ऋ. १।३८।१२
हिरण्यपाणिभिः अश्वैः उपागन्तन।
(७२) ऋ. ८।७।२७
वृषणश्वेन रथेन आ गत। (९१) ऋ. ८।२०।१०
आरुणीषु तविषीः अयुग्ध्वम्। (११४) ऋ. १।६४।७
वः रघुष्यदः सप्तयः आ वहन्तु। ऋ. १।८५।६
सः गणः पृषदश्वः। (१५१) ऋ. १।८८।१
ते अरुणेभिः पिशंगैः रथतूर्भिः अश्वैः आ यान्ति।
(१५२) ऋ. १।८८।२

अत्यान् इव अश्वान् उक्षन्ते
आशुभिः आजिषु तुरयन्ते। (२०१) ऋ. २।३४।३

'तुम्हारे घोडे सुदृढ तथा सुसंस्कृत हैं। जिन घोडों के पैरों में सुवर्णजटित अलंकार डाले गये हों, ऐसे घोडों पर बैठकर इधर आओ। जिस में बलिष्ठ घोडे लगाये हों, ऐसे रथ से इधर आओ। लाल रंगवाली घोडियों में जो बलिष्ठ घोडियाँ हों, उन्हें ही रथ में जोतो। शीघ्र गतिवाले घोडे तुम्हें इधर ले आएँ। इस मरुत्संघके समीप धब्बेवाले घोडे हैं। रक्तिम आभावाले तथा भूरे रंगवाले घोडों से रथ शीघ्र चलाकर तुम इधर आओ। घुडदौड में घोडे जैसे बलिष्ठ बनाये जाते हैं, वैसे ही तुम अपने घोडों को पुष्ट रखो। त्वरित जानेवाले घोडों से ये वीर लडाई में जल्दबाजी करते हैं, बहुत शीघ्र युद्ध में जाते हैं।'

इन वचनों में मरुतों के घोडों का पर्याप्त वर्णन है। ये घोडे लाल रंगवाले, भूरे, धब्बेवाले और बहुत बलवान होते हुए घुडदौड के घोडों के समान खूब चपल होते हैं।

वे ठीक ठीक सिखाये हुए अतः सभी अच्छे गुणों से युक्त होते हैं। युद्धों में इन घोड़ों की चपलता दृष्टिगोचर हुआ करती है। इन वर्णनों से मरुतों के घोड़ों के सम्बन्ध में अनुमान करना कठिन नहीं है। और भी देखिए-

पृषदश्वासः आ ववक्षिरे। (२०२) ऋ. २।३४।४
पृषदश्वासः विदथेषु गन्तारः।(२१६) ऋ. ३।२६।६
अश्वयुजः परिज्रयः। (२९१) ऋ. ५।५४।२
वः अश्वाः न श्रथयन्त। (२५९) ऋ. ५।५४।१०
सुयमेभिः आशुभिः अश्वैः ईयन्ते।
(२६५) ऋ. ५।५५।१
मरुतः रथेषु अश्वान् आ युञ्जते।(२०६) ऋ.२।३४।८

'धब्बेवाले घोड़े जोतकर ये वीर यज्ञों में या युद्धों में चले जाते हैं। घोड़े तैयार रख ये चहूँ ओर घूमते हैं। तुम्हारे घोड़े थक नहीं जाते। स्वाधीन रहनेवाले एवं त्वरापूर्वक जानेवाले घोड़ों से वे यात्रा करते हैं। मरुत् वीर रथों में घोड़े जोत लिया करते हैं।' इसी प्रकार-

वः अभीशवः स्थिराः। (३२) ऋ. १।३८।१२

'तुम्हारे लगाम स्थिर यानें न टूटनेवाले होते हैं।' इन वचनोंसे पाठकवृन्द भली भाँति कल्पना कर सकते हैं कि, वीर मरुतों के घोड़े किस ढंग के हुआ करते थे।

इन वीरों का बल।

मरुतों के सूक्तों में मरुतों के बल का उल्लेख अनेक बार पाया जाता है। कुछ मंत्रांश देखिए-

मारुतं बलं अभि प्र गायत। (६) ऋ. १।३७।१
मारुतं शर्धं उप ब्रुवे। (१९८) ऋ. २।३०।११
युष्माकं तविषी पनीयसी। (२७) ऋ. १।३९।२
वः बलं जनान् अचुच्यवीतन। गिरीन् अचुच्यवीतन। (१७) ऋ. १।३७।१२
उग्रबाहवः तनूषु नकिः देतिरे।
(९३) ऋ. ८।२०।१२

'मरुतों के बल का वर्णन करो; इन का सामर्थ्य सराहनीय है; इन का बल सारे शत्रुओं को हिला देता है; पहाड़ों को भी विकंपित करा देता है; इन का बाहुबल बड़ा भारी है और लड़ते समय वे अपने शरीरों की तनिक भी पर्वाह नहीं करते हैं।'

इस भाँति ये वीर बलिष्ठ और अपनी शरीररक्षा की तनिक भी पर्वाह न करते हुए लड़नेवाले थे, अतएव बड़ा ही प्रभावोत्पादक युद्ध प्रवर्तित कर लेते थे। भय तो उन्हें कभी प्रतीत ही नहीं हुआ करता। निर्भयताके वे मूर्तिमान अवतार ही थे। निम्न मंत्रांश मरुतों के, मन को स्तिमित करनेवाले तथा दिलपर गहरा प्रभाव डालनेवाले, सामर्थ्य का स्पष्ट निर्देश करते हैं-

मरुतां उग्रं शुष्मं विद्म हि। (८४) ऋ. ८।२०।३
अमवन्तः महि श्रियं वहन्ति।
(८८) ऋ. ८।२०।७
शूराः शवसा अहिमन्यवः।
(११६) ऋ. १।६४।९
अनन्तशुष्माः तविषीभिः संमिश्लाः।
(११७) ऋ. १।६४।१०
ते स्वतवसः अवर्धन्त। (१२९) ऋ. १।८५।७
वः तानि सना पौंस्या। (१५७) ऋ १।१३९।८
वीरस्य प्रथमानि पौंस्या विदुः।
(१६४) ऋ. १।१६६।७
नर्येषु बाहुषु भूरीणि भद्रा।
(१६७) ऋ. १।१६६।१०
वः शवसः अन्तं अन्ति आरात्ताच्चित् नहि नु आपुः। (१८०) ऋ. १।१६७।९
तुविजाता दृळ्हानि अचुच्यवुः।
(१८६) ऋ. १।१६८।४
धृष्णु-ओजसः गाः अपावृण्वत।
(१९९) ऋ. २।३४।१
ओजसा अद्रिं भिन्दन्ति। (२२२) ऋ. ५।५२।९
वः वीर्यं दीर्घं ततान। (२५४) ऋ. ५।५४।५

" मरुतोंके उग्र सामर्थ्यसे हम परिचित हैं; वे सामर्थ्यशाली होनेके कारण बड़ा भारी बन जाते हैं; वे शूर हैं और अपने अन्दर विद्यमान सामर्थ्य से वे क्रोधोन्माद कभी नहीं करते हैं; इनके सामर्थ्यों की कोई सीमा या अन्त नहीं, तथा इनकी शक्तियाँ भी बहुतसी हैं; अपने सामर्थ्य से वे बढ़ते हैं; वे तो इनके स्नेहा के वे सम्पूर्ण कार्यकारक हैं; वीरों के ये मार्गिक दर्शक हैं। इन वीरों के बाहुओं में बहुत से हितकारक सामर्थ्य छिपे पड़े हैं; तुम्हारे बल का

अन्त समझ लेना, चाहे दूर से हो या समीप से, असंभव ही है; बल के लिए विख्यात ये वीर प्रबल दुश्मनों को भी विचलित कर देते हैं, डगमग हिला देते हैं; अपनी शक्तिसे ही तो इन्होंने शत्रुओं के बंधन से गौओं को छुडा दिया और ओजस्विता के कारण पहाडों को भी तोड डालते हैं; तुम्हारा सामर्थ्य बहुत दूर तक फैला है।"

इन मंत्रभागोंमें इन वीर मरुतों के प्रभावोत्पादक बल एवं सामर्थ्यका बखान किया हुआ पाठकों को दिखाई देगा, जो कि सचमुच मननीय है।

मरुतों की संरक्षणशक्ति।

वीर मरुत् बलवान एवं चतुर होते हुए जनताका संरक्षण करने का भार अपने ऊपर ले लेनेमें तत्परता दर्शाते हैं। इस संबंध में आगे दिये हुये वाक्य देखने योग्य हैं-

(हे) मरुतः! अस्माभिः ऊतिभिः नः आगन्त। (४४) ऋ. १।३९।९ .
ऊतये युष्मान् नक्तं दिवा हवामहे। (५१) ऋ. ८।७।६
वृत्रतूर्ये इन्द्रं अनु आवन्। (६९) ऋ. ८।७।२४
सः वः ऊतिषु सुभगः आस। (९६) ऋ. ८।२०।१५
ऊमासः रायः पोषं अरासत। (१६०) ऋ. १।१६६।३
यं अभिह्रुतेः अघात् आवत, यं जनं तनयस्य पुष्टिषु पाथन, तं शतभुजिभिः पूर्भिः रक्षत। (१६५) ऋ. १।१६६।८
मरुतः अवोभिः आ यान्तु। (१७३) ऋ. १।१६७।२
वः ऊती चित्रः। (१९५) ऋ. १।१७२।१
नः रिषः रक्षत। (२०७) ऋ. २।३४।९
त्वेषं अवः ईमहे। (२१५) ३।२६।५
ते यामन् त्मना आ पान्ति (२१८) ५।५२।२
ये मानुषा युगा रिषः आ पान्ति। (२२०) ५।५२।४
(हे) सद्य ऊतयः! द्रविणं यामि। (२६४) ५।५४।१५
यं त्रायध्वे सः सुवीरः असति। (२४८) ५।५३।१५

"हे वीर मरुतो! अपनी समूची संरक्षणशक्तियों से युक्त होकर तुम हमारे पास आओ; हमारे संरक्षण हों, इसलिए हम तुम्हें रातदिन बुलाते हैं; वृत्र का वध करते समय इन्द्र को तुमने मदद दी; वह तुम्हारी संरक्षण-छत्र-छाया में सौभाग्यशाली हो गया; संरक्षण करनेहारे इन वीरोंने धन की पुष्टि कर डाली; जिसे, तुमने विनाश और पाप से बचाया था और जिसे तुमने इस हेतु से बचाया था कि वह अपने पुत्रपौत्रों का संरक्षण भली भाँति कर ले उसे तुम सैंकडों उपभोगसाधनों से परिपूर्ण गढों से सुरक्षित रख लेते; अपने संरक्षक साधनों से युक्त होकर मरुत् हमारे निकट आ जायँ; तुम्हारा संरक्षण बडा अनूठा है हिंसकों से हमें बचाओ, हमें तुम्हारे तेजस्वी संरक्षण की आवश्यता है; वे हमला करते समय स्वयं ही रक्षा का प्रबंध कर लेते हैं; वे वीर सभी मानवी युगों में हिंसकों से बचाते हैं, हे तुरन्त बचानेवाले वीरों! मैं द्रव्य पाना चाहता हूँ; जिस की तुम रक्षा करते हो, वह उत्कृष्ट वीर बनता है।"

इस से स्पष्ट होता है कि, इन्द्र को भी मरुतों की मदद मिल चुकी थी और उसी तरह अन्य लोग भी मरुतों की सहायता से लाभ उठाते आये हैं। ध्यान में रहे कि, ये वीर अपनी शक्तियोंसे और संरक्षण की आयोजना-ओंसे अविषमभाव से सब को सहायता देते हैं। कभी दुर्ग में रहते हुए तो कभी रथारूढ होकर यात्रा करते हुए स्वयं घटनास्थलपर उपस्थित रहकर ये रक्षार्थियोंको संरक्षण देते हैं। इन सूक्तों में निर्देश मिलता है कि, कइयोंको मरुतों की मदद मिल चुकी थी, जो कि इस दृष्टिकोण से देखनेयोग्य है। यहाँपर प्रमुख बात यही है कि, रक्षार्थी चाहे नरेश हो या साधारण मानव पर सभी समान रूपसे मरुतों की सहायता से लाभान्वित हो चुके हैं।

मरुतों की सेना।

मरुत् तो खुद ही सैनिक हैं। वे सातसात की पंक्ति बनाकर चला करते हैं और उनकी ऐसी कतारें ७ रहा करती हैं। सब मिलाकर ४९ सैनिकों का एक छोटा विभाग बन जाता। हर कतार में दोनों पार्श्वभागों के लिए दो पार्श्वरक्षक नियुक्त होते थे। सात पंक्तियों के १४ पार्श्व-रक्षक रहते। सैनिक ४९ और १४ पार्श्वरक्षक मिलाकर ६३ मरुत् एक छोटे से संघ में पाये जाते। ६३ मरुतोंके

इस संघ को 'शर्ध' नाम दिया गया है। (६३ × ७) = ४४१ सैनिकों का अथवा ७ शर्धोंका एक 'व्रात' और (६३ × १४) = ८८२ सैनिकों या १४ शर्धों का या दो व्रातों का एक 'गण' हुआ करता। इस प्रकार इन सैनिकों की यह संघसंख्या है, जो ऐसी बनी हुई है कि, इस में क्या न्यून या अधिक है, सो अन्य प्रमाणों से ही निर्धारित करना ठीक होगा। इस दृष्टि से मंत्रोंमें पाये जानेवाले इन शब्दों का मर्म जानना चाहिये। अस्तु, मरुतों की सेना के बारे में निम्नलिखित वचन देखिये-

रथानां शर्धं प्रयन्ति। (२४३) ऋ. ५।५३।१०

'तुम्हारे सत्य के लिये लडनेवाले सैनिकों को प्राप्त करें; तुम्हारे शर्ध और गणविभागों के पीछे हम खुद ही चलते हैं; वे वीर रथों के विभाग को पहुंचते हैं।'

इस स्थानपर सिपाहियों के विभाग को सूचित करनेवाले 'शर्ध तथा गण' दो पद पाये जाते हैं। इन सैनिकों का प्रभाव किस ढंग का बना रहता है, सो देख लीजिए-

यः अज्माय यातवे द्यौः उत्तरा जिहीते।

(८७) ऋ. ८।२०।६

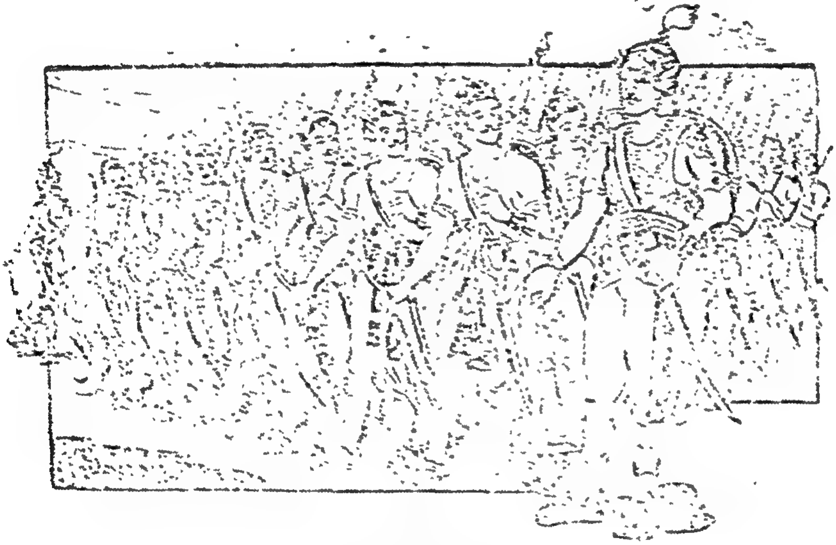

मरुतों का एक संघ।

पृश्निः मरुतां त्वेषं अनीकं असूत।

(१९६) ऋ. १।१६८।९

'मातृभूमिने मरुतों के इन तेजस्वी सैन्य को उत्पन्न किया' अर्थात् यह सेना मातृभूमि के लिये ही अखाड़े में आती है और इन सेनाद्वारा भली भाँति संरक्षण हो चुकने पर मातृभूमि तथा उस के सभी पुत्रों यानी समूची जनता का संरक्षण करने का गुरुतर कार्यभार इन के हाथोंमें सौंप दिया जाता है। देखिए-

यः ऋतस्य शर्धान् जिन्वत। (३३) ऋ. ८।[illegible]

यः शर्धंशर्धं गणंगणं अनुक्रामेम

(१४८) ऋ. ५।५३।११

'तुम्हारे सैनिक आगे बढ चलें, इस हेतु आकाश ऊँचा ऊँचा हो जाता है।' इस तरह खुद आकाश ही इन सेना को आगे निकल जाने के लिये कुछ मार्ग बना देता है। मरुत् सेनाका प्रभाव इतना सर्वत्र और प्रभावी है। जिस किसी दिशा में यह सेना चली जाए, उधर इसे रुकावट नहीं महसूस होती पडती है और प्रगति के लिये मार्ग खुला हीन रहता है। यह सब कुछ प्रभावशाली शौर्य का ही द्योतक है।

विजयी वीर।

ये वीर सदैव विजयी बनते हैं, तथा इनका प्रभाव भी बडा ही प्रखर है। इन विजय के साथ इनकी सेना के

एक तरह की अनोखी शोभा फैलती है-

अनीकेषु अधि श्रियः । (९३) ऋ. ८।२०।१२

' इन के सैनिकों के मोर्चेपर विशेष शोभा या विजयश्री रहती ही है ' अर्थात् इनकी सेनामें इतना प्रभाव विद्यमान रहता है कि, निश्चय से विजयश्री मिलेगी, ऐसा कहा जा सकता है ।

धारावराः गाः अपावृण्वत । (१९९) ऋ. २।३४।१

' इन के मोर्चेपर-अग्रभाग पर-अवस्थित हो श्रेष्ठ ठहरे हुए वीर शत्रु के कारागृह से गौओंको छुडा देते हैं । ' ये वीर—

[illegible]जितः अस्तनयन् । (२५७) ऋ. ५।५४।८

' [illegible] वीर [illegible] लेनेपर बडी भारी गर्जना करते हैं । ' यह [illegible] विजय पाने की गर्जना या दहाड है ।

(हे) [illegible]दानवः ! युष्माकं रथान् अनुदधे ।

(२३८) ऋ. ५।५३।५

[illegible]दानवः ! पृथिवी मरुद्भ्यः प्रवत्वती ।

(२५७) ऋ. ५।५४।८

[illegible]दानवः ! आ वक्षिणे । (२०२) ऋ. २।३४।४

' [illegible] विजय [illegible] वीरो ! तुम्हारे रथों के पीछे मैं [illegible] अनुगमन करता हूँ, पृथिवी मरुतों [illegible] देती है । '

[illegible] यदि जायँ, उन्हें कहीं भी विघ्न [illegible] नहीं रहती । इन के मार्ग पर के [illegible], [illegible] या टीला दूर हुआ [illegible] इनको आसानी से [illegible] सकती [illegible] गहराइ से जा [illegible]

शत्रुओं का विध्वंस ।

[illegible] शत्रुओं का [illegible] सूक्तों में इस का [illegible] है । [illegible] मंत्रांश अब [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

' ये शत्रु को समूल विध्वस्त करनेहारे वीर सैनिक हैं, अतः इन्हें ' शत्रुभक्षक = (रिश-अदस्)' कहा है। ये शत्रु को मानों खा जाते हैं, अतः कोई शत्रु शेष नहीं रहने पाता । ये कहीं भी गमन करें, पर शायद ही इन्हें किसी एकाध जगह दुश्मन मिले ।

विश्वं अभिमातिनं अपबाधन्ते ।

(१२५) ऋ. १।८५।३

तं तपुषा चक्रिया अभिवर्तयत, अशसः वधः आ हन्तन । (२०७) ऋ. २।३४।९

' ये वीर समूचे दुश्मनों को मार भगाते हैं, हे वीरो ! तुम दुश्मन को परिताप देनेहारे पहियेदार हथियार से घेर लो और पेटू शत्रु का विध्वंस करो । '

इस भाँति, पूरी तरह शत्रु को मटियामेट कर देने की जो क्षमता वीर मरुतों में है, उस का जिक्र वेदके सूक्तों में पाया जाता है ।

दुश्मनों को रुलानेवाले वीर ।

मरुतों को रुद्र भी कहा है, जिसका आशय है, (रोदयति इति) रुलानेवाला याने दुरात्मा एवं दुर्जन शत्रुओं को रुलानेवाला । चूँकि ये शूर तथा शत्रुदल का संपूर्ण विध्वंस करनेवाले हैं, इसलिए यह नाम बिलकुल सार्थक जान पडता है । देखिए—

(हे) रुद्राः ! तविषी तना अस्तु ।

(३९) ऋ. १।३९।४

इस के अतिरिक्त (४२) ऋ. १।३९।७, (५७) ऋ. ८।७।१२ (८३) ऋ. ८।२०।२, (१५९) ऋ. १।१६६।२, (२०७) ऋ. २।३४।९ इन में तथा इसी भाँति के अनेक मंत्रों में मरुतों को ' रुद्र ' नाम से पुकारा है । बेशक, यह शब्द उन की प्रचंड वीरता को व्यक्त करता है ।

मरुतों की सहनशक्ति ।

ध्यान में रहे कि, दो प्रकार का सामर्थ्य वीरों में पाया जाता है । जब वीर सैनिक शत्रुदल पर आक्रमण का सूत्रपात कर दें, तो उस तीव्र हमले को बरदाश्त न कर सकने के कारण शत्रुसेना विनष्ट हो जाए । इसे ' अग्रगा ' सामर्थ्य कहना चाहिए और दूसरा भी एक सामर्थ्य इन [illegible] का होता है कि, दुश्मन चाहे कितना ही प्रब

हमला चढाना शुरु करें, लेकिन अपनी जगह अटल एवं अडिग रूप से रहना और अपना स्थान किसी तरह न छोड देना, सम्भव होता है। यह सामर्थ्य 'सह या सह-मान' पदों से सूचित किया जाता है। यह भी मरुतोंमें पूर्णरूपेण विद्यमान है। देखिए–

मुष्टिहा इव सहाः सन्ति। (१०१) ऋ. ८।२०।२०

'मुष्टियुद्ध खेलनेवाले वीरकी तरह ये सभी वीर सहनशक्ति से युक्त हैं।' यह सुतरां आवश्यक है कि, वीरों में सहिष्णुता पर्याप्त मात्रा में रहे, क्योंकि उन्हें विभिन्न तथा प्रतिकूल दशाओं में भी अविचल रूप से डटे रहकर कार्य करना पडता है। शीतोष्ण सहिष्णुता याने कडाके का जाडा और झुलसानेवाली धूप बरदाश्त करना पडता, वैसे ही शत्रु के तीव्रतम आघातोंकी पर्वाह न करते हुए डटे रहने की भी जरूरत होती है। इस तरह कई ढंग से सहनशक्ति काम में लाई जा सकती है।

ये वीर पर्वतों में घूमा करते।

पहाडों में संचार करने, बीहड जंगलों में घूमने आदि कार्यों से और व्यायाम से शरीर सुदृढ तथा कष्टसहिष्णु बनता है। इसीलिए वीर सैनिक पार्वतीय भूविभागों में चलते फिरते हैं, इस विषय में निम्न निर्देश देखिए–

पर्वतेषु वि राजथ। (४६) ऋ. ८।७।१

वनिनं हवसा गृणीमसि। (१६९) ऋ. १।६४।१२

'वीर मरुत् पहाडों में जाते हैं और वहाँ सुहाते हैं, वनों में गये हुए मरुद्गणों का वर्णन करता हूँ।' ऐसे इन के वर्णन देखने पर यह स्पष्ट होता है कि, ये वीर पर्वतों तथा सघन वनों में संचार किया करते थे। वीरों को और विशेषतया सैनिकों को इस प्रकार का पर्वतसंचार करना बहुत हितकारक तथा आवश्यक होता है। क्योंकि ऐसा करने से कष्टसहिष्णुता बढ जाती है।

स्वयंशासक वीर।

ये वीर स्वयं ही अपना शासन करनेवाले हैं। इन पर अन्य किसी का शासन प्रस्थापित नहीं हुआ था। इस बात का निर्देश करनेवाले मंत्रांश नीचे दिये हैं।

अराजिनः वृष्णि पौंस्यं चक्राणाः
वृत्रं पर्वशः वि ययुः। (६८) ऋ. ८।७।२३

'के अराजक वीर बडा भारी पौरुष करते हुए वृत्र के टुकडे टुकडे कर चुके।' मरुतों के लिए यहाँ पर 'अ-राजिनः' पद आया है। जिन में राजा का अभाव हो, वे 'अ-राजिनः' कहलाते हैं। आज भी भारत में राज-विहीन जातियाँ पाई जाती हैं, जिन में एक प्रमुख शासक नहीं रहता, अपितु समूची जाति ही अपने शासन का प्रबन्ध आप कर लेती है, जिसे महाराष्ट्र में 'दैव' कहते हैं। अर्थात् सारी जाति ही जाति का शासन करती है। जिन गिरोहों में ऐसा प्रबन्ध नहीं रहता उन में कोई न कोई एक नियन्ता या शासक के पद पर अधिष्ठित रहता है और ऐसे मानवसमूहों को 'राजिक' याने राजा से युक्त कहते हैं। जिन मानवसमुदायों में राजसंस्था का अभाव हो, वे स्वयंशासित हुआ करते, इसीलिए इन्हें 'स्व-राजः' ऐसा भी कहते हैं।

ये आश्वश्वाः अमवत् वहन्ते
उत ईशिरे अमृतस्य स्वराजः॥
(२९२) ऋ. ५।५८।१

अस्य स्वराजः मरुतः पिबन्ति॥
(३९८) ऋ. ८।९४।४

'ये खुद ही अपना शासन करनेवाले मरुत् जल्द जानेवाले घोडों पर बैठकर जाते हैं और अमृतत्व के अधि-पति हैं, ये स्वयंशासक मरुत् इस सोम के रसका आस्वाद लेते हैं।' यहाँ पर 'स्वराज' पद का अर्थ है, स्वयंशासक या अपने निजी प्रकाश से द्योतमान। ये स्वयं ही अपने ऊपर शासन चला लेते थे, इस विषय में दूसरे वचन देखिए–

स हि स्वसृत् युवा गणः।
तविषीभिः आवृतः अया ईशानः॥
(१४८) ऋ. १।८७।४

ईशानकृतः। (११२) ऋ. १।६४।५

'वह युवक मरुतोंका संघ अपनी निजी प्रेरणासे चलने-वाला और विविध शक्तियों से युक्त है, इसीलिये वह समूह (ईशानः) स्वयं अपना ईश है, अर्थात् खुद ही शासक बना हुआ है; वे वीर शासकों का सृजन करनेवाले हैं।' यह बडे ही महत्व की बात है कि, जो विविध सामर्थ्यों से युक्त तथा स्वयंप्रेरक होता है, वह स्वयं ही अपना प्रभु

बनता है और शासकों का सृजन करता है; मतलब यही कि, उस पर अन्य कोई प्रभुत्व नहीं रख सकता, क्योंकि उसमें इतनी क्षमता विद्यमान है कि राजा का निर्माण कर ले। ये वीर अपना नियंत्रण स्वयं ही कर लेते हैं।

स्वयतासः प्र अध्रजन् (१६१) ऋ. १।१६६।९

' ये खुद ही अपना नियमन करते हैं और दुश्मनोंपर वेगपूर्वक हमला चढाते हैं। '

इस भाँति यह सिद्ध हुआ कि, मरुत् गणदेव हैं याने इन में गणशासन प्रचलित है और कोई एक व्यक्ति इन का शासन नहीं करता है, लेकिन ये सभी मिलकर इन्द्र को सहायता पहुंचाते हैं। वैदिक साहित्यमें मरुतोंके सिवा अन्य कई गणदेव पाये जाते हैं, उदाहरणार्थ, वसु, रुद्र, आदित्य आदि जिन का विचार उस उस देवताके प्रसंग में किया जायगा। यहाँपर तो हमें सिर्फ मरुतों का ही विचार करना है।

मरुत्-गण का महत्त्व।

वैदिक वाङ्मय में मरुद्गण का महत्त्व बताने के लिये खूब बढा चढा वर्णन किया है। देखिए-

ते महिमानं आशत। (१२४) ऋ. १।८५।२

ते स्वयं महित्वं पनयन्त। (१४७) ऋ. १।८७।३

ये मह्ना महान्तः। (१६८) ऋ. १।१६६।११

एषां मरुतां सत्यः महिमा अस्ति।

(१७८) ऋ. १।१६७।७

महान्तः विराजथ। (२६६) ऋ. ५।५२।२

' ये वीर मरुत् बडप्पन को प्राप्त होते हैं; वे स्वयं ही अपने कार्य से बडप्पन पाते हैं; वे अपने निजी बडप्पनसे महान हो चुके हैं, इन मरुतों का बडप्पन सत्य है; बडे होकर वे महामहान हुए हैं। '

ध्यान में रहे कि वैदिक सूक्तों में इनके महत्त्व की जो कल्पना मिल चुकी है, वह केवल इनके शूरतापूर्ण विविध साहसी कार्यकलाप के कारण ही है।

अच्छे कार्य करते हैं।

यह निर्विवाद सत्य है कि, ये वीर मरुत् हमेशा शुभ कार्य करने के लिए बडे तत्पर रहा करते; देखिए—

यत् शुभे युञ्जते । (१९५) ऋ. १।८५।३

शुभे यन्तं कं आयान्ति। (१५१) ऋ. १।८८।२

शुभे संमिश्लाः। (२१४) ऋ. ३।२६।४

शुभे त्मना प्रयुञ्जत। (२२४) ऋ. ५।५२।८

शुभं यातां रथा अन्ववृत्सत। (२५७) ऋ. ५।५५।८

' ये वीर शुभ कार्य करने के लिए सज्ज होते हैं; ये वीर शुभ कृत्य तथा श्रेष्ठ कल्याण करने के लिए ही आते हैं; शुभ कार्य पूरा करने के लिए ये इकट्ठे हुए हैं; ये खुद ही अच्छे कार्य के लिए जुट जाते हैं; शुभ कार्यसमाप्ति के लिए जब ये जाते हैं, तब इनके रथ पीछे चल पडते हैं। '

शुभ कार्यसे तात्पर्य है, जनताका कल्याण हो ऐसा कार्य जिसे कर्तव्य समझ कर ये वीर करने लगते हैं, देखिए—

तृणस्कन्दस्य विशः परिवृङ्क्त, नः ऊर्ध्वान् कर्त।

(१९७) ऋ. १।१७२।३

' तिनके की नाई यूंही विनष्ट होनेवाले प्रजाजनों की रक्षा चारों ओरसे कीजिये और हमारी प्रगति कीजिए। ' साधारणतया बात तो ऐसी है कि, जनता तिनके के समान बिखरी हुई होने से आसानी से विनष्ट हो सकती है, पर जिस तरह बिखरे तिनकों को एक जगह बाँध लेनेसे एक रस्सा बनता है, जो हाथी को भी जकडता है; वैसे ही प्रजा में भी ऐसी शक्ति है, परन्तु अगर वह बिखर जाए, तो विनष्ट होती है। इन प्रजाजनों का विनाश न हो, इसलिए उन्हें पूर्णतया वेष्टित कर एकता के सूत्र में पिरोने से उनकी प्रगति करना सुगम होता है और यही शुभ कार्य है। उसी प्रकार-

नृषाचः मरुतः। (११६) ऋ. १।६४।९

' मानवों के साथ रहकर उनकी सहायता करनेवाले वीर मरुत् हैं। ' शूर वीरों का यही श्रेष्ठ कर्तव्य है कि वे मानवों के निकटतम संपर्क में रहे और उन्हें प्रगति का मार्ग दर्शाये। चूँकि ये वीर मरुत् अपना कर्तव्य पूर्ण करते हैं, इसीलिए इनके महत्त्व का वर्णन वेद में हुआ है।

शत्रुदल से युद्ध।

मरुत् (मर्-उत्) मरनेतक, मौतके मुँह में समाने जानेतक डटकर शत्रुसेना से जूझते हैं अथवा (मा-रुत्=मरुत्) रोने बिलखने के बजाय प्रतिकार करने में अपनी सारी शक्ति लगा देते हैं। इसी कारण से ये मार्

शूरता के लिए विख्यात हो चुके हैं। इन का युद्ध-कौशल बडा ही विस्मयजनक है। निम्ननिर्देश देखिए—

अग्निगावः पर्वता इव मज्मना प्रच्यावयन्ति।
(११०) ऋ. ११६४१३

युवानः मज्मना प्रच्यावयन्ति।
(११०) ऋ. ११६४१३

'आगे बढनेवाले ये वीर अपनी जगह पहाड की नाईं स्थिर रहकर अपने सामर्थ्य से दुश्मन को हिला देते हैं।' ये वीर—

पर्वतान् प्र वेपयन्ति। (४०) ऋ. ११३९१५

'पहाड की तरह सुस्थिर एवं अडिग शत्रुको भी थरथर कंपायमान बना देते हैं।' इन का पराक्रम इतना प्रचंड है और उसी प्रकार—

(हे) तविषीयवः! यत् यामं अचिध्वं
पर्वताः नि अहासत। (४७) ऋ. ८।७।२

'हे बलिष्ठ वीरो! जब तुम हमले चढाते हो, तब पहाड के तुल्य स्थिर प्रतीत होनेवाले प्रबल शत्रुओं को भी डगडग हिला देते हो।'

वृष्णि पौंस्यं चक्राणा पर्वतान् वि ययुः।
(८८) ऋ. ८।७।२३

'बडा भारी पौरुष करनेहारे तुम वीर सैनिक पहाडों को भी तोडकर आगे निकल जाते हो।'

अयासः स्वसृतः ध्रुवच्युतः दुध्रकृतः भ्राजदृष्टयः आपथ्यः न पर्वतान् हिरण्ययेभिः पविभिः उज्जिघ्नन्ते॥ (११८) १।६४।११

'हमला करनेवाले, अपनी आयोजना के अनुसार प्रगति करनेवाले, स्थायी दुश्मनों को भी उखाड फेंकनेवाले, जिनके आगे जाना दूसरों के लिए असंभव है ऐसे, तेजःपुञ्ज हथियार धारण करनेवाले, राहपर पडा हुआ तिनका जिस तरह हटाया जाता है, वैसे ही पर्वतों को, सुवर्णविभूषित रथ के पहियों से या वज्राकारवाले हथियारों से उडा देते हैं।' इन का पराक्रम ऐसा ही विलक्षण है।

(हे) धूतयः! मानं परावतः इथा प्र अस्यथ।
(३६) ऋ. ११३९११

'हे शत्रुदल को विकंपित करनेवाले वीरो! तुम अपना हथियार बहुत दूर से भी इधर फेंक देते हो। इस तरह तुम्हारा अस्त्र फेंक देने का सामर्थ्य है।'

(हे) धूतयः! परिमन्यवे इषुं न द्विषं सृजत।
(४५) ऋ. ११३९११०

'हे शत्रुदलको हिला देनेवाले वीरो! चारों ओरसे घेरनेवाले शत्रु पर जिस तरह बाण छोडे जाते हैं, वैसे ही तुम तुम्हारे शत्रुको ही दूसरे शत्रुपर छोड दो। अर्थात् तुम्हारा एक दुश्मन उस दूसरे शत्रुसे लडने लगेगा, जिस के फलस्वरूप दोनों आपसमें जूझकर हतबल हो जायँगे और उनके क्षीण होनेपर तुम्हारी विजय आसानी से होगी।' शत्रुको शत्रुसे भिडन्त करने का यह उपाय सचमुच बहुत विचारणीय है। युद्धका यह एक बडा ही महत्त्वपूर्ण दाँव-पेच है।

एषां यामेषु पृथिवी भिया रेजते।
(२३) ऋ. ११३७१८

'इन वीरोंके आक्रमण के समय समूची पृथ्वी मारे डर के काँप उठती है।' इन का हमला इतना तीव्र हुआ करता है।

शूरा इव युयुधयः न जग्मयः, श्रवस्यवः न पृतनासु येतिरे। राजानः इव त्वेषसंदृशः नरः, मरुद्भयः विश्वा भुवना भयन्ते॥
(१३०) ऋ. ११८५१८

'शूरों के समान और युद्धोत्सुक यशोकांक्षी सिपाहियों के तुल्य शत्रुसेना पर टूट पडनेवाले तथा यश की इच्छा करनेवाले वीरों के जैसे ये वीर मरुत् समरभूमि में बडी भारी शूरता दिखाते हैं। नरेशों के तुल्य तेजस्वी दिखाई देनेवाले ये वीर हैं, इसीलिए सारे भुवन इन वीर मरुतों से भयभीत हो उठते हैं।'

इस भाँति इन वीरोंकी युद्धचेष्टाओं के वर्णन वेदमंत्रों में पाये जाते हैं, जो कि सभी ध्यानपूर्वक देखनेयोग्य हैं।

मरुत् वीरों का दातृत्व।

वीर मरुद् बडे ही उदार प्रकृतिवाले हैं, उन्हें खुले दिल से दान देने के कारण 'सु-दानवः' पद से इन्हें सम्बोधित किया है, जिस का कि अर्थ है 'बडे अच्छे दानी।' मरुतों के सूक्तों में यह विशेषण इन्हें कई बार दिया गया है।

सुदानवः। (५) ऋ. १।१५।२, (४५) ऋ. १।३९।१०; (५७) ऋ. ८।७।१२, (६४) ऋ. ८।७।१९ आदि। इस तरह यह पद मरुतों के लिए अनेक वार सूक्तों में प्रयुक्त हुआ है। उसी प्रकार—

एषां दाना मह्ना। (९५) ८।२०।१४

वः दात्रं व्रतं दीर्घम्। (१६९) ऋ. १।१६६।१२

' इन वीरों का दान बहुत बडा है और देन देने का व्रत बडा प्रचंड है। ' इन के दातृत्व का वर्णन मरुत्-सूक्तों में इस तरह पाया जाता है। वीर पुरुष हमेशा उदारचेता बने रहते हैं। जिस अनुपात में शूरता अधिक, उतने अनुपात में उदारता भी ज्यादह पाई जाती है। यह स्पष्ट है कि, मरुतों की शूरता उच्च कोटिकी थी और दातृत्व भी बहुत बढाचढा था।

मानवों का हित करनेहारे वीर।

' नर्य ' पद, (नराणां हिते रतः) मानवों के हित करने में तत्पर, इस अर्थ में वेद में अनेक बार पाया जाता है। मरुतों के लिए भी इस पद का प्रयोग किया है। देखो (१६२) ऋ. १।१६६।५ और उसी प्रकार—

नर्येषु बाहुषु भूरीणि भद्रा। (१६७) ऋ. १।१६६।१०

' मानवों के हितार्थ कार्यनिमग्न इन वीरों की भुजाओं में बहुतसे हितकारक सामर्थ्य विद्यमान हैं। ' ये वीर मानवों को सुख देते हैं, इस संबंध में यह मंत्र-भाग देखिए—

(हे) मयोभुवः ! शिवाभिः नः मयः भूत।
(१०५) ऋ. ८।२०।२४

' सब को सुख देनेवाले हे मरुतो ! अपनी कल्याण-कारक शक्तियों से हमें सुख देनेवाले बनो। '

अस्मे इत् वः सुम्नं अस्तु। (२४२) ऋ. ५।५३।९

' हम सभी को तुम्हारा सुख प्राप्त होवे। ' मरुत् समूची मानवजाति को सुख देते हैं और वह हमें उन से मिल जाय। सुख देना मरुतोंका धर्म ही है और वे हमेशा इस कार्य को निभाते ही रहेंगे; परन्तु ठीक समयपर उनके साथ रह कर यह उन से प्राप्त करना चाहिए। ये सदैव सत्कर्म करते रहते हैं।

सुदंससः प्र शुम्भन्ते। (१२३) ऋ. १।८५।१

' ये शुभ कार्य करनेवाले वीर अपने शुभ कार्योंसे ही सुहाते हैं। ' मानवों के हित जिनसे हों, वे ही शुभ कार्य हैं।

कुलीन वीर।

वीर मरुत् उत्कृष्ट परिवार में जन्म लेते हैं, इसलिये वेदने उन्हें ' सुजाताः ' उपाधि से विभूषित किया है।

सुजातासः नः भुजे नु। (८९) ऋ. ८।२०।८

सुजाताः मरुतः तुविद्युम्नासः अद्रिं धनयन्ते।
(१५३) ऋ. १।८८।३

सुजाताः मरुतः ! वः तत् महित्वनम्।
(१६९) ऋ. १।१६६।१२

' उत्कृष्ट परिवार में उत्पन्न ये वीर बहुत बडे हैं। वे स्वयं तेजस्वी होने के कारण पर्वत को भी धन्य करते हैं। ये कुलीन वीर अपनी शक्ति से महत्त्व को प्राप्त होते हैं। ' इस प्रकार इनकी कुलीनताका बखान वेदने किया है।

ऋण चुकानेवाले।

ध्यानमें रहे, ये वीर ऋण करते नहीं रहते, अपितु तुरन्त उसे चुकाते हैं। इनकी मनोवृत्ति ऐसी है कि किसी के भी ऋणी न रहें, इसलिए उऋण होनेकी चेष्टा करते हैं। देखिए—

ऋण-यावा गणः अविता। (१४८) ऋ. १।८७।४

' ऋण को चुकानेवाला यह वीरों का संघ सब का संरक्षण करनेवाला है। ' यहाँपर बतलाया है कि ऋण चुकाना महत्त्वपूर्ण गुण है, जो इनके वीरत्व के लिए बडाही भूषणास्पद है। निस्सन्देह, ऋण चुकाना नागरिक लोगोंके लिए बडा भारी गुण है।

निर्दोष वीर।

अबतक का मरुतोंका वर्णन देखा जाय, तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि वे पूर्ण रूपसे दोषरहित हैं। किसी भी प्रकार की त्रुटि या न्यूनता उन में नहीं पाई जाती है। इस संबंध में निम्नलिखित वेदमन्त्र देखिए—

अनवद्यैः गणैः। (३) ऋ. १।६।८

स हि गणः अनेद्यः। (१४८) ऋ. १।८७।४

ते अरेपसः। (१०९) ऋ. १।६४।२

अरेपसः स्तुहि। (२३६) ऋ. ५।५३।३

' मरुतों का यह संघ नितान्त निर्दोष एवं अनिन्दनीय

है। पाप से कोसों दूर तथा अपवादरहित हैं। ऐसे निरागस वीरों की सराहना करो।'

जो दोषों से बिलकुल अछूते हों, उन की ही स्तुति करनी चाहिए। यूंही किसी की खुशामद या चापलूसी करना ठीक नहीं। जैसे ये वीर निर्दोष आचरणवाले होते हैं, वैसे ही वे निर्मल या साफसुथरे भी रहा करते। उदाहरणार्थ—

अरेणवः हुल्हानि अचुच्यवुः।
(१८६) ऋ. १।१६८।४

'ये साफसुथरे वीर सुदृढ विरोधियों को भी पदच्युत कर देते हैं।' यहाँपर 'अ-रेणवः' पदका अर्थ है वे, जिन के शरीरपर धूल न हो; देहपर, कपडोंपर, हथियारोंपर धूलिकण नहीं दिखाई पडे। ऐसे वीर जो अत्यन्त सफाई तथा अलबेलापन अक्षुण्ण बनाये रहते हैं। उसी तरह-

ते परुष्ण्यां शुन्ध्युवः ऊर्णा वसत।
(२२५) ऋ. ५।५२।९

'वे वीर परुष्णी नदी में नहा धोकर साफसुथरे बनकर ऊनी कपडे पहन लेते हैं।' इस ऊनी वस्त्रावरण के प्रमाण से स्पष्ट होता है कि ये वीर शीत कटिबन्ध में निवास करते थे। परुष्णी नदी शीतप्रधान भूविभाग में बहती है, सो स्पष्ट ही है। पहले रथों का बखान करते हुए हम बतला चुके कि हरिणोंद्वारा खींचे जानेवाले तथा पहियों से रहित वाहनों का उपयोग वीर मरुत् कर लिया करते थे। ऐसे वाहन बर्फीले भूभागोंपर ही अधिक उपयुक्त हुआ करते, अतः यह भी एक प्रमाण है कि ये वीर शीत-कटिबन्ध के निवासी थे।

मरुतों का संपर्क।

चूँकि मरुतोंमें इतने विविध सद्गुण विद्यमान हैं, अतः उनके सहवास में रहने से सभी लाभ उठा सकते हैं, यह दर्शाने के लिये निम्न वचन उद्धृत किये जाते हैं।

यः आपित्वं सदा निधुवि अस्ति।
(१०३) ऋ. ८।२०।२२

यस्य क्षये पाथ स सुगोपातमो जनः।
(१३५) ऋ. १।८६।१

स मर्त्यः सुभगः अस्तु, यस्य प्रयांसि पर्षथ।
(१४१) ऋ. १।८६।७

'इन वीरों की मित्रता स्थिर स्वरूप की है, इनकी मित्रता चिरंतन स्वरूप की है। जिस के घर में ये सोमरस का पान करते हैं, वह पुरुष अत्यन्त सुरक्षित रहता है; जिसके घर जाकर ये वीर अन्नग्रहण करते हैं, वह सचमुच भाग्यवान बने।'

यः वा नूनं असति, सः वः ऊतिषु सुभगः आस।
(९६) ऋ. ८।२०।१५

'जो इन वीरों का ही बनकर रहता है, वह इनके संरक्षणों से अकुतोभय होकर भाग्यशाली बन जाता है।' उसी तरह-

युष्माकं युजा आधृषे तविषी तना अस्तु।
(३९) ऋ. १।३९।४

'जो तुम्हारे साथ रहता है, उस का बल दुश्मनों की धज्जियाँ उडाने के लिये बढता ही रहता है।'

यस्य वा हव्या वीतये आगथ, सः द्युम्नैः
वाजसातिभिः वः सुम्ना अभि नशत्।
(५७) ऋ. ८।२०।१६

'हे वीरो! जिस के घर में तुम हविष्यान्न या प्रसादका सेवन करने के लिये जाते हो, वह रत्नों से और अन्नों से तुम्हारे दान किये हुए विविध सुखों का उपभोग करता है।'

इस प्रकार, मरुतों के अनुयायी होने से लाभान्वित बन जाने की सूचना वेदने दी है।

मरुतों का धन।

ध्यान में रहे कि मरुत् विजयी वीर हैं, जिन के शब्द-संग्रह में पराभव के लिये स्थान नहीं है और बडे भारी उदार होते हुए अनुपम दानशूरता व्यक्त करते हैं, अतः ऐसा अनुमान करने में कोई आपत्ति नहीं कि असीम धनवैभव उन के निकट हो। देखना चाहिए कि मरुत्सूक्तों में उनकी धनिकता के बारे में क्या कहा है-

मरुद्-धनसंग्रह (ऋ. १।६४ में 'विद्वद्वसु' ऐसा गुणबोधक पद इन वीरों के लिए प्रयुक्त हुआ है। इस पद का अर्थ धन की योग्यता भली भाँति जाननेवाला वाले धन पाना और उसकी योग्यता पहचानना भी स्पष्टतः सूचित होता है। मरुतों में यह गुण विद्यमान है, जो उनके धन-संग्रह करने तथा धन का वितरण करने से स्पष्ट होता है।

धन किस भाँति का हो, इस संबंधमें निम्न मन्त्र बडा अच्छा बोध देता है।

(हे) मरुतः! मदच्युतं पुरुक्षुं विश्वधायसं रयिं आ इयर्त। (५८) ऋ. ८।७।१३

'हे वीर मरुतों! शत्रु के घमंड को हटानेवाले, हमें पर्याप्त प्रतीत होनेवाले, सब का धारणपोषण करनेहारे धन का दान करो।' यहाँ पर ठीक तौर से बताया है कि धन किस तरह का हो। जिस धन से शत्रु का घमंड या वृथाभिमान उतर जाए, इस ढंग की शूरता हममें बढानेवाला पर हम में घमंड न पैदा करनेवाला धन हमें चाहिए। सभी तरह की धारणशक्ति को वृद्धिंगत करनेवाला, हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति भली भाँति करनेवाला धनवैभव प्राप्त हो। अर्थात् ही जिस धनको पाने से गर्व, अभिमान बढकर भाँति भाँति के प्रमाद हों, जो अपर्याप्त होता है, तथा जिस से अपनी शक्ति क्षीण होती रहे, ऐसा धन हम से कोसों दूर रहे। हर कोई धन के इन गुणों को सोचकर देखे। ऐसे उत्कृष्ट धनको मरुत् हमेशा साथ रख लेते हैं।

रयिभिः विश्ववेदसः। (११७) ऋ. १।६४।१०

ऐसे धन मरुतों के निकट पर्याप्त मात्रा में रहते हैं, इसीलिए कहा है कि 'मरुत् सर्वधनसम्पन्न हैं।' धन के गुणों एवं अवगुणोंको बतलानेवाला एक और मंत्र देखिए-

(हे) मरुतः! अस्मासु स्थिरं वीरवन्तं ऋतीषाहं शतिनं सहस्रिणं शूशुवांसं रयिं धत्त।
(१२२) ऋ. १।६४।१५

'हे वीर मरुतो! हमें वह धन दो, जो स्थायी स्वरूप का हो, वीरों से युक्त हो, शत्रु का पराभव करने के सामर्थ्य से पूर्ण तथा सैकडों और हजारों तरह का यश देनेवाला हो।' धन का स्वरूप कैसे रहे, सो यहाँपर बताया है। धन तो किसी तरह मिल गया, लेकिन तुरन्त खर्च होने से चला गया, ऐसा क्षणभंगुर न हो, वह पुश्तदरपुश्त विद्यमान हो और चिरकालतक उस का उपभोग लिया जा सके। वह वीरतापूर्ण भाव बढानेवाला हो, नकि कायरताके विचार। धन कमाने के बाद उस की रक्षा करने का सामर्थ्य भी बढता रहे और धनकी मात्रा बढने से अधिक वीर संतान उत्पन्न हो। नहीं तो ऐसी अवस्था होगी कि दूसरा धनवैभव बढता है, पर निपुत्रिक या सन्तानहीन हो जाने का डर है। विरोधियों का प्रतिकार करने की क्षमता भी बढती रहे और यशस्विता भी प्रतिपल वर्धिष्णु हो। जिस धन से ये सभी अभीष्ट बातें प्राप्त हों, वही धन हमें मिल जाए। यह धन सहस्रविध हुआ करता है, जिस की आवश्यकता सब को प्रतीत होती है। धन का तात्पर्य सिर्फ रुपया, आना, पाई से नहीं अपितु जिससे मानव धन्य हो जाए, वही सच्चा धन है। उसी तरह-

सर्ववीरं अपत्यसाचं श्रुत्यं रयिं दिवेदिवे नशामहै। (१९८) २।३०।११

'सभी वीरों से, पुत्रपौत्रों से अन्वित, यश देनेवाला धन प्रतिदिन हमें मिल जाए।' बहुधा देखा जाता है कि धन अधिक प्राप्त होने पर शूरता घट जाती है और सन्तान पैदा करने की शक्ति भी न्यून हो जाती है। यह दोष रहनसहन त्रुटिमय होने से हुआ करता है। ऐसा दोष न हो और धन पानेके साथ ही उसकी रक्षा करनेका बल भी तथा सुसन्तान उत्पन्न करने का सामर्थ्य भी वर्धिष्णु होता रहे, इस भाँति सामर्थ्यशाली धन का संग्रह किया जाय। और भी देखिए-

यत् राधः ईमहे तत् विश्वायु सौभगं अस्मभ्यं धत्तन। (२४६) ऋ. ५।५३।१३

'जिस धन की कामना हम करते हैं, वह दीर्घ जीवन देनेवाला एवं बढिया सौभाग्य बढानेवाला हो।' उसी तरह-

यूयं स्पार्हवीरं रयिं रक्षत। (२६२) ऋ. ५।५४।११

'तुम स्पृहणीय वीरों से युक्त धनका संरक्षण करो।'

अनवभ्रराधसः। (१६४) ऋ. १।१६६।७

अनवभ्रराधसः आ ववक्षिरे।
(२०२) ऋ. २।३४।४

'(अन्-अव-भ्र-राधसः) जिन का धन कोई छीन नहीं सकता, जो धन पतन की ओर नहीं ले जाता, वा धन प्राप्त हो।' धन जरूर समीप रहे, लेकिन वह इस तरह प्रगतिका पोषक रहे; धनके आधिक्यसे अपने प्रगतिपथपर रोडे नहीं उठ खडे होने चाहिए। धन के बारे में जो यह चेतावनी दी गयी है, वह सभी को ध्यानपूर्वक सोचनेयोग्य है और चूँकि ऐसा स्पृहणीय धन वीर मरुतों के निकट रहता है, इसलिए वैदिक सूक्तों में मरुतों का महत्त्व बतलाया है।

दौलैधा जैन पुस्तकालय,
बीकानेर।

मरुतों का स्वभाववर्णन।

उपर्युक्त वर्णन से इतना स्पष्ट हुआ है कि ये वीर सैनिक मरुत् एक घरमें- (Barrack) बैरक में निवास करते थे; महिलाओं की तरह विभूषित तथा अलंकृत हो, बडी सजधज से बाहर निकल पडते; अपने वस्त्रों, हथियारों तथा आयुधों को साफसुथरे एवं चमकीले रखते; संघ बना कर यात्रा करते और सांघिक या सामूहिक हमले चढाया करते। शत्रुदल पर सामूहिक चढाई करने के कारण इन वीरों के सम्मुख डटकर लडना शत्रु के लिए असंभव तथा दूभर हुआ करता। इसलिए शत्रुसेना जरूर नतमस्तक हो, टिकना असंभव होनेसे, आत्मसमर्पण करती या हट जाती। सभी मरुत् साम्यवाद को पूर्ण रूप से कार्यरूप में परिणत करते थे, अर्थात् किसी तरह की विषमता उन में नहीं पायी जाती थी। सभी युवावस्था में रहते थे और इनका स्वरूप उग्र तथा प्रेक्षकों के दिल में तनिक भीतियुक्त आदर का सृजन करनेवाला था। इन का डीलडौल भव्य था।

मस्तकों पर शिरस्त्राण रखे होते या कभी रेशमी साफे बाँधा करते। सब का पहनावा तुल्यरूप दीख पडता था। भाला, बरछी, कुठार, धनुष्यबाण, पर्शु, वज्र, खड्ग एवं चक्र आदि आयुध इन के निकट रहते। ये सारे शस्त्रास्त्र बडे ही सुदृढ एवं कार्यक्षम रहते। इन के रथों तथा वाहनों को कभी घोडे खींचते, तो कभी बारहसींगे या कृष्णसार-मृग खींच लेते। दलदलि प्रदेशों में चक्रहीन रथों का और कभी बिना घोडोंके यंत्रसंचालित एवं बडे वेगसे गढे उडाते जानेवाले वाहनों का भी उपयोग किया जाता था। शायद वे पंछी की मदद से आकाशमार्ग से जानेवाले वायुयान-सदृश रथों को काम में लाते। इन के वाहन इस प्रकार चार तरह के हुआ करते थे।

ये बडे ही विलक्षण वेग से शत्रुपर धावा करते और उन के इस झपटने में डालनेवाले वेग से शत्रु तो हक्का-बक्का रह जाता, पर अन्य संसार भी क्षणमात्र थर्रा उठता। यही कारण था कि इनके प्रचंड आक्रमणों के या विद्युद्-युद्ध (Blitz) के सम्मुख क्या मजाल कि कोई शत्रु टिक सके। इन का आघात इतना प्रखर हुआ करता कि विशाल से अटल आसन स्थिर किये हुए शत्रु को भी ये विचलित तथा धराशायी बना देते।

मरुत् मानवकोटि के ही थे, परन्तु अनूठा पराक्रम दर्शाने से इन्हें देवत्व का अधिकार प्राप्त हुआ था। वेद में ऋभुओं के बारे में भी ऐसे ही लेकिन ज्यादह स्पष्ट उल्लेख पाये जाते हैं, अर्थात् प्रारम्भ में ऋभु शिल्पविद्यानिष्णात कारीगर मानव थे, परन्तु आगे चलकर उन्हें देवों के राष्ट्र में नागरिकत्व के पूर्ण अधिकार प्राप्त हुए थे।

ऐसा दिखाई देता है कि मरुतों के बारे में भी बहुत कुछ ऐसी ही घटना हुई हो। देवों के संघ में जान पडता है कि विशेष अधिकार सब को समान रूप से नहीं प्राप्त हुआ करते; जैसे 'अश्विनौ' वैद्यकीय व्यवसाय में लगे रहते और वे दोनों सभी मानवों के घर जाकर चिकित्सा कर लेते, इसलिए उन्हें यज्ञमें हविर्भाग नहीं मिला करता था। लेकिन कुछ काल के उपरान्त च्यवन ऋषि को बुढापे के चंगुल से छुडाकर फिर युवा बनाने से उस के प्रयत्नों के फलस्वरूप अश्विनौ को वह अधिकार प्राप्त हुआ। पाठकों को अश्विनौ की प्रस्तावना में यह देखने मिलेगा। ठीक उसी प्रकार ऐसा प्रतीत होता है कि मरुत् मर्त्य, मानव या सभी काश्तकार थे, लेकिन जब उन्होंने वीरतापूर्ण कार्यकलाप कर दिखाये, तब अथवा विशेषतया इन्द्रके सैन्य में सम्मिलित होनेपर वे देवपदपर अधिष्ठित हुए।

मरुतों में विद्वत्ता, चतुराई, दूरदर्शिता, बुद्धिमत्ता एवं साहसिकता कूट कूट कर भरी थी और वे उद्यमी, उत्साही तथा पुरुषार्थी थे। वे वीरगाथाओं को दिलचस्पी से सुन लेते थे और साहसी कथाओंके सुननेमें तल्लीन हुआ करते।

बीमारों की चिकित्सा प्रथमोपचारप्रणाली से करने में ये प्रवीण थे और इस संबंध में उन्हें कुछ औषधियों का ज्ञान था।

विविध क्रीडाओं में ये कुशल थे, तथा नृत्यविद्यासे भी भली भाँति परिचित थे। बाजे बजाते हुए, नाचते गाते हुए और राहपरसे चलते हुए भी वाद्य बजाते, तथा गीत गाते हुए निकल पडते।

ये मरुत् अति भव्य आकृतिवाले तथा गौरवर्ण से युक्त एवं रुचिर [illegible] विभूषित थे। इनके अन्दर विद्यमान सामर्थ्य से इनका तेज बढा हुआ था। ये कृषि-कार्यमें मग्न होकर धान्य, घास एवं विविध खाद्य [illegible]

उपज बढाते थे। ये गोपालन के व्यवसाय को बडी अच्छी तरह निभा लेते थे, क्योंकि गोदुग्ध इनका बडा प्यारा पेय था। सोमरस में गायका दूध, गोदुग्ध का बना दही और सत्तू का आटा मिलाकर पी जाते थे। गाय तथा भूमि को मातृतुल्य आदर की निगाह से देख लिया करते और मौका आनेपर मातृवत् गौ एवं मातृभूमि के लिए भीषण समर भी छेड दिया करते, जिन के फलस्वरूप इनकी ये माताएँ शत्रु के चँगुल से मुक्त हो जातीं।

मरुतों के घोडे बहुधा धब्बेवाले हुआ करते और सुदृढ होते हुए पहाडों पर चढने में बडे कुशल होते थे। ये वीर अपने अश्वों को मजबूत बनाकर अच्छी तरह सिखाया करते थे। मरुत् वीर अश्वविद्या में तथा गोपालन-कलामें बडे ही निपुण थे। ये जानते थे कि किन उपायों से गाय अधिक दूध देने लगती है, अतः इनके निकट दुधारु गायों की कोई न्यूनता नहीं थी। ये वीर जिधर चले जाते, उधर अपने साथ ही आवश्यकतानुसार गायों के झुंड ले जाया करते। युद्धभूमि में भी इन के साथ गोयूथ विद्यमान होते, क्योंकि इन्हें ताजा गोदुग्ध पीनेके लिये अति आवश्यक था, ताकि इन वीरों की थकावट दूर हो बल एवं उत्साह बढ जाए।

ध्यानमें रहे कि वीर मरुतोंका बल बडा ही प्रचंड था, जिसका उपयोग वे केवल जनताके संरक्षणार्थ ही कर लिया करते थे। इसी कारन से मरुतों का सैन्य अत्यन्त प्रभावशाली माना जाता था और इस सैन्यका विभजन शर्ध, व्रात तथा गण नामक संघों में किया जाता था, जिन में क्रमशः ६३; ४४१ तथा ८४४ सैनिक संघटित किये जाते थे।

युद्ध में वीर शत्रु के मुँह बाँये खडे रहकर अपने जीवित की कुछ भी पर्वाह न करके दुश्मनपर टूट पडना मरुतों के बाँयें हाथका खेल था। अतः इनके भीषण वेगवान धावे के सम्मुख शत्रु की दशा बडी दयनीय हुआ करती। मरुत् अगर शत्रुओं पर हमले चढाते, तो शत्रु जान बचाकर भाग निकलते। पर यदि शत्रु ही स्वयं मरुतों पर आक्रमण करने का साहस कर ले, तो वीर मरुत् इन आक्रमणों को विफल बनाकर रहते। इस भाँति मरुतों में द्विविध शक्ति निवास करती।

ये वीर वनों एवं पर्वतों पर यथेच्छ विहार कर लेते, क्योंकि समूचे भूमंडल पर इनके लिए अगम्य या बीहड स्थान था ही नहीं। इनके दिल में किसी विशिष्ट स्थान में जाने की लालसा उठ खडी हुई कि तुरन्त ये उधर जा पहुंचते; कारण सिर्फ यही था कि इन्हें रोकनेवाला तो कोई था ही नहीं। इनका भय इस तरह चतुर्दिक् फैला हुआ था।

ये गणशासक थे। इनका सारा संघ ही इन पर शासन चला लेता था और इन में श्रेष्ठ, मध्यम अथवा कनिष्ठ इस तरह भेदभाव नहीं था। जो कोई इनके संघ में प्रवेश कर लेता, वह समान अधिकारों को पानेवाला सदस्य माना जाता था।

सभी मरुत् वीर समूची जनता का कल्याण करने का शुभ कार्य भली भाँति निभाते थे और इन्द्र के साथ रहकर वृत्रवधसदृश महासमर में इन्द्र को सहायता पहुंचाते। कभी कभी रुद्रदेव के अनुशासन में रहकर लडाई छेड देते, अतः इन्हें 'रुद्र के अनुयायी' नाम से विख्याति मिल चुकी थी।

सारे ही वीर मरुत् कुलीन याने अच्छे प्रतिष्ठित परिवार में उत्पन्न थे। ध्यान में रखना कि किसी भी हीन कुल में उत्पन्न साधारण व्यक्ति को इस संघ में स्थान ही नहीं मिलता था। ये सचाई के लिए लडनेवाले थे और कभी किसीसे ऋण लिया हो, तो ठीक समयपर उसे चुकाते थे, इस कारण उनका साख अच्छा बना रहता।

इन का बर्ताव दोषरहित हुआ करता, रहनसहन सुथरा साफसुथरा था। समूचा पहनावा अत्यन्त जगमगानेवाला था, इस कारण दर्शकोंपर इन का रोब-दाब बडाही अच्छा पडता था। मरुत् धन का उत्पादन करनेवाले एवं उसकी योग्यता समझनेवाले थे, अतः अतीव उदारचेता और दान देने में कभी पीछे नहीं रहा करते।

यद्यपि वीर मरुत् मर्त्य, मानवश्रेणी के थे, तो भी इन का चरित्र इतना दिव्य तथा उच्च कोटिका होता था कि जो कोई इनके काव्य का सृजन करता, वह अमर हो जाता। यह सारा इनका स्वरूप-वर्णन है और जो पाठक मरुतोंके सूक्तों का पठन ध्यानपूर्वक करेंगे, उन्हें यह बयान स्थान स्थानपर पढने मिलेगा। पाठक विविध मरुत्-सूक्तोंमें इसे

पढ़कर मरुतों की शूरता के वास्तविक महत्त्व को जान लें और वीरत्वपूर्ण क्षात्रकर्म में मरुतों के आदर्श को अपने सम्मुख रख लें।

मरुतों के सूक्तों में वीरों के काव्य का दर्शन।

जैसा कि हम ऊपर कह आये हैं, मरुत्-काव्य वीररसपूर्ण प्राचीनतम वीरगाथा है, जिसे पढ़ते समय वीरत्वपूर्ण तेजकी आलोकरेखा मानस-क्षितिजपर जगमगाने लगती है।

इस संबंध में कुछ मन्त्रों के आशय नीचे अवलोकनार्थ दिये जाते हैं।

१९. हे वीरो! तुम्हारे उत्साहपूर्ण आक्रमण से भयभीत होकर मानव तो किसी जगह आश्रय या पनाह पाने के लिये जाते ही हैं; लेकिन पहाड़तक थराने लगते हैं।

३३. जिस समय तुम शत्रुपर धावा करते हो, तब किसी जराजीर्ण वृद्ध की नाईं समूची पृथ्वी थरथर काँपने लगती है।

३९. शत्रुओं की धज्जियाँ उड़ानेवाले हे वीरो! द्युलोकमें, अन्तरिक्ष में या भूमंडलपर कहीं भी तुम्हारा शत्रु शेष नहीं रहा है। जो तुम्हारे साथ रहते हैं, उन में भी शत्रुविध्वंस करने की शक्ति पैदा हुआ करती है।

४५. हे दानी तथा शूर मरुतो! तुम अखंड सामर्थ्य एवं अविकल बल से पूर्ण हो। हे शत्रु को विकंपित करनेवाले वीरो! ज्ञानी पुरुषों-सज्जनोंका द्वेष करनेहारे दुष्ट शत्रुओं का वध हो इसलिए तुम दूसरे किसी दुश्मन को उन पर बाण की नाईं छोड़ दो, ताकि तुम्हारा एक शत्रु तुम्हारे दूसरे शत्रु से उध्वस्त हो जाए।

६८. बल से निष्पन्न होनेवाले पौरुषमय कार्य पूर्ण करनेवाले और स्वयंशासक इन वीरोंने वृत्र के टुकड़े टुकड़े करके पहाड़ों में से भी राह बना डाली।

७०. बिजली की तरह जगमगानेवाली शस्त्रसामग्री धारण करके लड़नेवाले ये वीर जो तेजस्वी और गौरवर्णवाले दिखाई देते हैं; अपने मस्तकोंपर सुनहली आभा से कांतिमान शिरस्त्राण धारण करते हैं।

८५. हे तेजस्वी तथा सोनहुले आभूषण धारण करनेहारे वीरो! जब तुम शत्रुपर चढ़ाई करते हो तब तुम्हारी राह में आनेवाले वृक्ष भी टूट गिरते हैं; रोड़े अटकानेके लिये कोई अगर खड़ा रहे, तो वह संकटग्रस्त हो जाते हैं; इस आक्रमण के मौकेपर आकाश तथा पृथ्वी काँप उठती हैं और गर्द भी बहुत जोर से उड़ा करती है।

८६. हे रणबाँकुरे मरुतो! वीरो! जिस वक्त तुम अपनी सारी शक्ति बटोरकर शत्रुपर आक्रमण करते हो, तब ऐसा जान पड़ता है कि उस ओरका आकाश ही खुद दूर होकर तुम्हें जाने के लिए मार्ग बना देता है।

९२. हे बहादुरो! तुम सब का गणवेश समान है, तुम्हारे गले में सुवर्णहार पड़े हैं और तुम्हारी भुजाओंपर हथियार द्योतमान हो उठे हैं।

९३. ये उग्र एवं बलिष्ठ वीर अपने शरीरोंके रक्षण की पर्वाह न करते हुए अपना युद्धकार्य प्रचलित रखते हैं। हे वीरो! तुम्हारे रथोंपर स्थिर धनुष्य सुसज्ज हैं और सेना के अग्रभाग में तुम विजयी बनते हो।

१११. अपने शरीरों की सुन्दरता बढ़ाने के लिए ये विविध वीरभूषण पहन लेते हैं; उन के वक्षःस्थलपर सुवर्ण-विरचित हार लटक रहे हैं, कंधोंपर भाले सुहाते हैं। इस ढंग के ये वीर मानो सचमुच अपने अनूठे दल के साथ स्वर्गसे इस भूतलपर उतर पड़े हों, ऐसा प्रतीत होता है।

११३. सामुदायिक शोभा से सुहानेवाले, लोकसेवा करनेहारे, शूर, बलिष्ठ होने से जिनका उन्माद कभी घटता ही नहीं ऐसे महान वीरो! तुम अपने पराक्रम की वजह से द्युलोक एवं भूमंडल सुशोभित तथा निनादित बना देते हो। जब तुम अपने रथोंमें निजी आसनोंपर बैठते हो, तब तुम, मेघमंडल में चौंधियाती हुई दामिनी की दमक के तुल्य, अतीव सुहाते हो।

११७. विविध ऐश्वर्यों से शोभायमान, एक घर में निवास करनेवाले, भाँति भाँति के बलों से सामर्थ्यवान प्रतीत होनेवाले, विशेष बलवान, शत्रुदलपर चतुराई से हथियार फेंकते हुए, असीम बल से पूर्ण, वीरोचित आभूषणों से अलंकृत इन नेताओंने अब अपने हाथों में शत्रु का विनाश करने के लिये बाण को धारण कर लिया है।

१६७. चमकीले हिरण्मय वर्ण में जुटे हुए इन वीरों के बाहुओं में बहुतसी कल्याणकारक शक्तियाँ छिपी पड़ी हैं। इनके वक्षःस्थलपर हार तथा कंधोंपर विविध वीरभूषण एवं हथियार हैं। इन के वज्र की बड़ी धाराएँ हैं और पंछियोंके डैनों के तुल्य इन की शोभा बड़ी भली जान पड़ती है।

[illegible]

हो प्रयत्न करते हो; रुद्र तुम्हारा पिता है और भूमि तुम्हारी माता है जो तुम्हें प्रकाशका मार्ग दिखलाती है।

इस प्रकार इस वीर-काव्य में विद्यमान ओजस्वी विचार यहाँ बानगी के तौरपर दिये हैं। यहाँपर इस काव्य का बिलकुल शब्दशः अर्थ दिया है, तथा साधारणतया स्पष्ट दिखाई पड़नेवाला भावार्थ भी दिया है। शब्दशः अनुवाद अभ्यासक लोगों के लिए अत्यंत आवश्यक है और भावार्थ भी उन्हीं के लिये उपयुक्त है। जो विशेष अध्ययन करना चाहते हों उनके लिए टिप्पणी सहायक प्रतीत होगी पर जो वेदमंत्रों का विशेष गहन अध्ययन करना नहीं चाहते या जिन के समीप इतना अध्ययन करने के लिये समय नहीं उन के लिये सरल अनुवाद आवश्यक है। ऐसे सरल अनुवाद में आगेपीछे के सन्दर्भके अनुसार अधिक लिखना पड़ता है और यथाशक्ति कवि के मन का आशय पाठकोंके दिल में पैठ जाय इस हेतु कुछ अधिक बातें सन्दर्भ के अनुसार लिखनी पड़ती हैं। हमने जानबूझकर यहाँ स्वतंत्र और लगातार लिखा हुआ अनुवाद नहीं दिया और इस प्रथम संस्करण में शब्दशः अनुवाद टिप्पणियों तथा अन्य साधनों के साथ स्वाध्यायशील पाठकों के लिये प्रस्तुत कर रखा है। द्वितीय संस्करण के अवसरपर संभव हुआ तो वैसा सीधा अनुवाद दिया जायगा।

वेद का अध्ययन।

आजकल सब लोगों की यह धारणा बनी हुई है कि, वैदिक संहिताओंके अध्ययन का अर्थ सिर्फ मन्त्र कंठस्थ कर लेने है और यह धारणा सहस्रों वर्षों से चली आ रही है। इस का नतीजा यूं हुआ है कि संहिताओं के अर्थ की ओर शिक्षित लोगों का ध्यान आकर्षित नहीं होता है। यद्यपि बहुत अंश में विद्वान ब्राह्मण इन संहिताओं को कंठस्थ करते आये हैं पर अर्थ के जाननेवाले व्यक्तियों का दौर्लभ्य ही दृष्टिगोचर होता है। वर्तमान काल में ऋग्वेद (शाकल), यजुर्वेद (तैत्तिरीय, वाजसनेयी एवं काण्व), सामवेद (कौथुमी) और अथर्ववेद (शौनक) संहिताओंका अध्ययन प्रचलित है। अर्थात् कुछ ब्राह्मण इन का पठन करते हैं लेकिन ऋग्वेद की शांखायन एवं बाष्कल संहिता, यजुर्वेदकी मैत्रायणी, कठ, कपिष्ठल, कठ संहिता, सामवेद की राणायनी एवं जैमिनीय संहिता तथा अथर्ववेदकी पिप्पलाद इन संहिताओंका अध्ययन लुप्तप्राय ही है। अच्छा, जिन संहिताओं का पठन प्रचलित है ऐसा ऊपर कहा गया है उन का अध्ययन भी बहुत से विद्वान करते हैं, ऐसी बात नहीं। समूचे भारतवर्ष में ऐसे अच्छे वेदपाठी चार या पाँच सौसे अधिक नहीं हैं और उच्चकोटि के घनपाठी तो पूरे सौ भी मिलना कठिन ही है। मतलब यही कि, आजदिन वेदाध्ययन का लोप यहाँतक हुआ है।

इस से स्पष्ट होगा कि, आधुनिक युग में वेदपठन का भविष्य या वर्तमानदशा तनिक भी उज्ज्वल नहीं है, क्योंकि वेदाध्ययन लुप्त होता जा रहा है। जनता में भी वेदपाठी ब्राह्मण के लिये तनिक आदर रहा हो तो भी वह नहीं के बराबर है क्योंकि उस ज्ञान का व्यवहार में तनिक भी उपयोग नहीं है, ऐसी ही सार्वत्रिक धारणा प्रचलित है।

अगर प्राचीन कालसे अर्थ वेदाध्ययनकी प्रथा जारी रह जाती तो बहुत कुछ संभव था कि, व्यवहार में उस का उपयोग स्पष्ट हुआ होता और आज जो यह गलतफहमी सर्वसाधारण में पायी जाती है कि, वेदाध्ययन नितांत निरुपयोगी है, निर्मूल ठहरती या उत्पन्न ही नहीं होती। इस प्रतिपादन को स्पष्ट करने के लिये हम मरुद्देवता के मन्त्रों का उदाहरण लेंगे। यदि मरुतों के सूक्तों का अर्थसहित अध्ययन करने की प्रणाली प्राचीन काल से [illegible] में रहती तो संभव था कि उन में सूचित ढंग से सैनिकों की सांघिक शिक्षा का प्रबंध करने की कल्पना किसी न किसी को सूझती और शायद भारतीय राजाओं के सेनाओं में आजकल की पंक्ति रचना, पद का निश्चित [illegible] कूच करना, सब का [illegible] होना और [illegible] सिपाहियों का समूह बनाकर उनसे कवायत आदि महत्त्वपूर्ण प्रयोगों का प्रचलन शुरु होता।

पर हाय रे! हिन्दुधर्म एवं हिन्दुत्व की रक्षा के लिये इतिहास में आये हुए [illegible] [illegible] [illegible] हुए [illegible] के [illegible] में [illegible] की सैनिक शिक्षा-प्रणाली [illegible] नहीं हो सकी; [illegible] [illegible] वेदाध्ययन केवल कंठस्थ ही सीमित रहा। इस [illegible]

भी वेदप्रदर्शित एवं अनूठे ढंग से सांघिक सामर्थ्य बढानेहारा मरुतों का यह सैनिकीय शिक्षा का अनुशासन प्रत्यक्ष व्यवहारमें नहीं आ सका, अथवा यूं कहें कि तब किसी के ध्यान में यह बात नहीं आयी कि वैदिक सिद्धांतों को व्यावहारिक स्वरूप दिया जा सकता है, तो यह प्रतिपादन सचाई से दूर नहीं होगा ।

हाँ, श्री छत्रपति शिवाजी महाराज के काल से लेकर अन्तिम स्वतंत्र सातारा-नरेशतक या प्रथम पेशवा से ले १८१८ तक के मराठी साम्राज्य के काल में वेदाध्ययन के लिए लक्षावधि रुपयोंका व्यय हुआ, वेद कंठस्थ रखनेवाले ब्राह्मणोंको खूब दक्षिणा मिली पर अन्तमें क्या हुआ? अचरभे की बात इतनी ही है कि, किसी को भी यह कल्पना नहीं सूझी कि, अर्थसहित वेदाध्ययन करनेवालों के लिये कुछ न कुछ प्रबंध करना चाहिये, या वैदिक साहित्य में लाभदायक एवं उपादेय कुछ हो तो ढूँढ लेना चाहिए और तुरन्त उसे व्यावहारिक स्वरूप दिया जाय । उस काल में वेद के बारे में बस यही धारणा प्रचलित थी कि, मन्त्र कंठाग्र रहें और यज्ञ के मौकेपर उन का उच्चार किया जाय; बहुत हुआ तो मन्त्र-जागर के अवसरपर मन्त्रपठन करना उचित है ।

ऐसी धारणा से प्रभावित होने के कारण, श्रीमत्सायणाचार्य के कालमें भी वेदभाष्य लिखा तो गया था तथापि उन वेदमें वर्णित सिद्धान्त व्यवहारमें नहीं आ सके; इतना नहीं किंतु अगर कोई उस काल में यह बतलानेका साहस करता कि वेदमंत्रों में निर्दिष्ट सिद्धांतों को कार्यरूप में परिणत करना चाहिये तो भी किसीका ध्यान उधर आकृष्ट नहीं होता, यहाँ तक उन दिनों केवल मात्र वेदपठन का शाब्दिक प्रचार था और उसे सार्वत्रिक मान्यता मिल चुकी थी । ऐसी दशा का भारी दुष्परिणाम यही हुआ कि भारतीय वीरों के सैन्य प्रभावशाली बनने के बजाय अव्यवस्थित एवं निरुपयोगी हुए ।

भारत में युरोपीय राष्ट्रों के लोगोंका पदार्पण हुआ जो अपने साथ निजी संघ-सैनिक-प्रणाली ले आये और वह भारत के असंगठित सैनिकों की अपेक्षा ज्यादह प्रभावशाली प्रतीत होनेके कारण श्री महादजी शिंदेने फ्रेंच सेनापतियों को अपने यहाँ लाकर उसे अपने सिपाहियोंमें प्रचलित करनेकी चेष्टा की, तो भी अन्य महाराष्ट्र सरदार इस शिक्षा में पिछडे रहे । इसका परिणाम यही हुआ कि अन्त तक शिंधिया को फ्रेंचों की पराधीनता सहनी पडी । यह बात सब को ज्ञात थी कि शिंदे की सेना अधिक प्रभावोत्पादक हुई थी लेकिन उस प्रणाली का प्रचार किसीने नहीं किया था । अगर लोगों को परंपरागत रूप से यह बात विदित होती कि वेद के मरुत्सूक्तों में यह संघ-सैनिक-प्रणाली वर्णित है तथा यह पूर्णतया भारतीय है तो शायद अनुभव से इसका अधिक प्रचार हो जाता जिस के परिणामस्वरूप योरपीयनों से लडते समय जो समस्या व्यस्त अनुपात में हल हुई वही बहुधा सम परिमाण में छूट गयी होती ।

सहस्रों वर्षों से मरुद्देवता के मंत्रों को कंठ करनेवाले ब्राह्मण भारत में चले आ रहे थे और उन्होंने शब्दों के उलट पुलट प्रयोग मुखोद्गत कर लिए पर मरुतोंकी सैनिक-प्रणाली के सिद्धान्त अज्ञातदशा में रखकर केवल मंत्रों का उच्चारण किया । लेकिन एकने भी इस संघ-सैनिक-शिक्षण सिद्धांत की ओर लेशमात्र भी ध्यान नहीं दिया । केवल मंत्रों को जबानी याद कर लेने से तथा ऊँची आवाज में पढलेनेमात्र से अपूर्व पुण्य की प्राप्ति होगी, ऐसे विश्वास के सहारे ये हजारों वर्षों तक संतुष्ट रहे । इस असावधानी का परिणाम यही हुआ कि भारतीयोंका क्षात्रबल न्यूनातिन्यून होने लगा । अगर यह संघ-सैनिक-शिक्षा भारतीयों को प्राप्त होती तो प्रति पीढी में प्राप्त होनेवाले अनुभवके सहारे उस में खूब उन्नति हो जाती । पर उन्नति के स्थान पर भारतीयों के अव्यवस्थित एवं असंगठित सैन्य को योरपीयनों के सिखाये हुए संघशासित सैन्य के सम्मुख टिकना असंभव हुआ, जिस से अंततोगत्वा भारतवर्ष पराधीनता के दलदल में फँस गया । अर्थज्ञानपूर्वक अगर वेद का अध्ययन प्रचलित रहता और यदि किसी के ध्यान में यह बात पैठ जाती कि वेद के ज्ञान से व्यावहारिक जीवन में लाभ उठाया जा सकता है तो उपर्युक्त बात सहजही में किसी का ध्यान आकर्षित कर लेती और ऐसा हो जाने पर संगठित सैन्य का सृजन भारत में हो जाता ।

मरुतों के मंत्रों का और इन्द्र देवता के मंत्रों का ज्ञानपूर्वक पठन करनेवाले को सैनिकों का संघशासन कैसे किया जाय, सेना का संघ में विभजन किस ढंगसे हो सकता है,

तथा सभी सैनिकों का तुल्य वेष कैसे हो, सब का प्रबंध किस तरह किया जा सकता और उनकी सामुदायिक शक्तियों का सांघिक उपयोग किस प्रकार करना ठीक है आदि महत्त्वपूर्ण बातों की कुछ न कुछ जानकारी अवश्य हो जाती। परन्तु दुर्भाग्य से, सहस्रों वर्षों से वेद केवल मुखोद्गत एवं जबानी याद कर लेनेकी वस्तु बन गयी और वेदनिर्दिष्ट सैनिक-विद्या सुतरां अपनी होनेपर भी हमारे लिए वह एक परकीयसी हुई तथा यदि हमें वह सीखनी हो तो दूसरों की कृपा से ही वह साध्य हो सकती है। कारण इतना ही है कि सजीव एवं स्फूर्तिमय वैदिक युगसे लेकर आज तक जो सहस्र सहस्र वर्षों की लंबी चौडी खाई हमारे एवं वेदकाल के बीच पडी हुई है उसके परिणाम-स्वरूप हमारे वे पुराने संस्कार लुप्तप्राय से हो गये हैं और परंपरागत ज्ञानसंचय से हम सर्वथैव वंचित हो गये हैं। आज हमारी यह वास्तविक हालत है।

पाठक देखें और सोचें कि वेद का वास्तविक अर्थ हमें ज्ञात नहीं हुआ इसलिये राष्ट्रिय दृष्टिसे हमारी कितनी बडी हानि हुई है तथा अब भी अपने ज्ञानभाण्डारमें इस वैदिक ज्ञान की वृद्धि करने का प्रयत्न करें।

वैदिक ज्ञानके विचार से वर्तमानकालमें भी एक अत्यन्त उत्तम 'जीवन का तत्त्वज्ञान' प्राप्त हो सकता है। मरुत् सूक्त में प्रदर्शित सैनिकीय शिक्षा उस विशाल तत्त्वज्ञानका एक अंशमात्र है और क्षात्र तत्त्वज्ञान में उसका स्थान बडा ऊँचा है।

हाँ, यह बात सच है कि कंठस्थ कर लेने से ही वेद-संहिताएँ अब तक सुरक्षित रहीं और इसका सारा श्रेय वेद-पाठ में समूचा जीवन बितानेहारे लोगों को मिलनाही चाहिए। यह सब बिलकुल ठीक है, क्योंकि अगर, वेदपाठ करने में महान् पुण्य है ऐसा विश्वास न बढाया जाता तो शायद ही कोई वेद पढने में प्रवृत्त होता और वेद सदा के लिए उपेक्षित रहते। परन्तु यदि कहीं वेद के जीवित तत्त्व-ज्ञान को अर्थज्ञानपूर्वक व्यवहारमें लानेमें सफलता मिलती तो अपने क्षत्रिय वीर समूचे विश्व में विजयी हो जाते और भारतीय संस्कृतिपर जो आघात हुए वे न होते। अतः स्पष्ट कहना चाहिए कि वेद के अर्थ की ओर भारतीयों ने जो ध्यान नहीं दिया उससे उन्हें महान् हानि एवं क्षति के सम्मुखीन होना पडा। भारतीयों के जीवन का सारा तत्त्वज्ञान ग्रन्थों में बंद पडा रहा और भारतवासी उस भारी बोझ को ढोते हुए भी तनिक अंश में भी उस तत्त्व-ज्ञान से लाभ नहीं उठा सके। क्या यह हानि अल्पसी है? कदापि नहीं। अस्तु।

जो प्राचीनकाल एवं मध्ययुग में हो चुका उसकी ज्यादह छानबीन करनेसे कोई विशेष लाभ नहीं हो सकता क्योंकि जो घटनाएँ हो चुकीं वे अन्यथा नहीं हो सकतीं। हाँ, अब भविष्य में तथा वर्तमानकालमें भी जीवित ज्ञान ज्योतिकी ओर हमारा ध्यान अधिकाधिक आकर्षित होना चाहिए।

वेदमंत्रों में जीवित संस्कृति का तत्त्वज्ञान है और वह केवल कंठस्थ करने के लिए ही सीमित रहे सो ठीक नहीं; वास्तव में इस वैदिक तत्त्वज्ञान की सुदृढ नींवपर अपनी समाज-रचना एवं राष्ट्र निर्माणका विशाल मन्दिर उठ खडा हो जाए तो चाहिए तथा इस प्रकार अपने वैदिक तत्त्वज्ञान के आधार से सामाजिक पुनर्घटना एवं राष्ट्रीय व्यवहार का संचलन होने लगे तो सचमुच आधुनिक युग की अनेक जटिल समस्याएँ बडी सुगमता से हल हो सकती हैं ऐसा हमारा दृढ विश्वास है। आज संसार में बलवाद, समाज-सत्तावाद, साम्यवाद, लोकतंत्रशासनवाद, साम्राज्यवाद आदि विविध वादोंकी धूम मच रही है। मानवजाति इतने वादों के मध्य अपना कोई निर्णय नहीं कर पाती, जिस से समूचा मानवसमाज बडा दुःखी हो उठा है। अब भारतीय जनता देख ले कि, क्या इन सभी पूर्वोक्त परस्पर कलहाय-मान वादों की अपेक्षा, आध्यात्मिक 'समत्ववाद' जो कि वेदों की बहुमूल्य देन है, यदि संसार के सामने रखा जाए तो इस तत्त्वज्ञानके सहारे संसारके सभी उलझन में डालने वाले पेचीदे सवालों को आसानी से हल नहीं किया जा सकता है? अवश्य हो सकता है, ऐसा दृढ विश्वास है।

चूँकि बहुत प्राचीन काल से यह सिलसिला हो चुका था कि वेद तो सिर्फ कंठाग्र करने के लिए ही हैं अतः यह वैदिक तत्त्वज्ञान बहुत ही पिछडा हुआ है। अब भारतीयों का यह प्रमुख कर्तव्य है कि इस अलौकिक तत्त्वज्ञान को समूचे विश्व के सम्मुख अधिक बलपूर्वक रखें और आगे बढना शुरु कर दें कि इस तत्त्वज्ञानके बलबूतेपर ही संसार के सभी विकट प्रश्न हल किये जा सकते हैं।

[illegible]

...पर बहुतसा साहित्य उपलब्ध है और ... आदि ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर विभिन्न निर्देश हैं। यदि इन सभी निर्देशों का सम्पूर्णतया विचार किया जाय, तो ... बोध मिल सकता है, पर यह सब ... स्थिति पर ही आधारित है।

विश्वमें मरुतों का स्थान।

[illegible]

परिवर्तित कर दिखलाया जा सकता है। मरुत् अधिदैवत में 'वर्षाकालीन वायुप्रवाह,' अधिभूत में 'वीर क्षत्रिय' और अध्यात्म में 'प्राण' हैं। इस दृष्टिकोण से एक क्षेत्र का वर्णन दूसरे क्षेत्र के लिए भी लागू हो सकता है। इस संबंध को देख लेने से ज्ञात होगा कि मरुतों के वर्णन में वीरों का बखान किस तरह समाया हुआ है।

पाठकों को स्पष्ट प्रतीत होगा कि 'मरुत्' मर्त्य, मानव, मनुष्य-श्रेणी के हैं ऐसा समझ कर उनका वर्णन इन मंत्रों में किया है। इस निश्चित वर्णन में वैदिक देवताओं का आविष्करण विशेष सरस्वरूप से होता है। ठीक वैसे ही मानवजातिमें मरुत् देवता सैनिक क्षत्रियों के रूप में प्रकट होती है। इन्द्र देवता नरेश एवं सरदार के स्वरूप में और ब्राह्मणों में अग्नि, ब्रह्मणस्पति आदि देवता व्यक्त स्वरूप धारण करते हैं। अतः उन उन देवताओं के वर्णन के अवसर पर उस उस वर्ण के लोगों के कर्तव्य विशेषतया वर्णित किये जाते हैं। इसी रीतिसे मरुतों के वर्णन में सैनिकों की हैसियत से कार्य करनेवाले क्षत्रियों के कर्तव्य-कर्मों का उल्लेख किया है और इन सूक्तों में क्षत्रियधर्म का स्पष्टीकरण हुआ है जिसका कि विचार पाठकों को अवश्य करना चाहिए। अस्तु।

अधिक विचार करने के लिए मरुद्देवता का मंत्रसंग्रह पाठकों के सम्मुख रखा है। आशा है कि इस तरह सोच-विचार करके निष्पन्न होनेवाले मानवी क्षात्रधर्म की जान-कारी प्राप्त करने का प्रयत्न होगा।

स्वाध्याय-मंडल, औंध, जि. (सातारा) दिनांक १५।८।४३	}	निवेदक श्री० दा० सातवलेकर

प्रस्तावनाकी अनुक्रमणिका।

वीर मरुतों का काव्य।	३
वीर काव्य के मनन से उपलब्ध बोध।	,,
महिलाओं का वर्णन नहीं पाया जाता है।	,,
नारी के तुल्य तलवार।	४
साधारण स्त्री।	,,
उत्तम माताओं के खिलाडी पुत्र।	,,
महिलाओं के समान वीर अलंकृत तथा विभूषित होते हैं।	५
एक ही घर में रहनेवाले वीर।	६
संघ बनाकर रहनेवाले वीर।	,,
सभी सदृश वीर।	७
मरुतों का गणवेश।	,,
सरपर शिरस्त्राण।	,,
सब का सदृश गणवेश।	,,
मरुतों के हथियार, कुठार, परशु, तलवार, वज्र।	८-९
सुदृढ मजबूत हथियार।	१०
मरुतों का रथ।	,,
चक्रहीन रथ का चित्र।	११
हरिणों से खींचे जानेवाले रथ।	१२
अश्वरहित रथ।	,,
शत्रु पर किया जानेवाला आक्रमण।	१३
मरुत् मानव ही थे।	,,
मरुतों की विद्याविलासिता।	१४
ज्ञानी, दूरदर्शी, वक्ता, कवि, बुद्धिमानी, साहसीपन, सामर्थ्य, उत्साह, उग्र वीर, उद्यमी, कुशल वीर, कथाप्रिय, रुग्णोपचारप्रवीण, खिलाडी, नृत्यप्रियता, वादनपटुत्व।	१४-१६
शत्रु को जडमूल से उखाडनेवाले वीर।	१६
भव्य आकृतिवाले वीर।	१७
रक्तिमामय गौरवर्ण।	,,
अपने तेजसे चमकनेहारे वीर।	,,
अन्न उत्पन्न करनेहारे वीर।	,,
गायोंका पालन करते हैं।	१८
मरुतोंके घोडे।	,,
इन वीरों का बल।	,,
मरुतों की संरक्षणशक्ति।	२०
मरुतों की सेना।	,,
विजयी वीर।	२१
शत्रुओं का विध्वंस।	२२
दुश्मनोंको रुलानेवाले वीर।	,,
मरुतों की सहनशक्ति।	,,
मरुतों का पर्वतसंचार।	२३
स्वयंशासक वीर।	,,
मरुत्-गणका महत्त्व।	२४
अच्छे कार्य करते हैं।	,,
शत्रुदलसे युद्ध।	,,
मरुत् वीरोंका दातृत्व।	२५
मानवों का हित करनेहारे वीर। कुलीन वीर।	२६
ऋण चुकानेहारे। निर्दोष वीर	,,
मरुतों का सम्पर्क। मरुतोंका धन।	२७
मरुतोंका स्वभाव-वर्णन।	२९
मरुतोंके सूक्तोंमें वीरकाव्य।	३१
वेदका अध्ययन।	३३
वैश्वानर यज्ञ। पुराणोंका समालोचन।	
मरुद्देवता और युद्धशास्त्र। निसर्गमें मरुतोंका स्थान।	३६

दैवत-संहितान्तर्गत

मरुद्देवता का मन्त्रसंग्रह ।

अनुक्रमणिका ।

मरुद्देवता		पृष्ठ
१ विश्वामित्रपुत्र मधुच्छंदा ऋषि	(मंत्र १-४)	१-२
२ कण्वपुत्र मेधातिथि ऋषि	(मं० ५)	३
३ घोरपुत्र कण्व ऋषि	,, (मं० ६-४५)	,,
४ कण्वपुत्र पुनर्वत्स	,, (मं० ४६-८१)	१६
५ कण्वपुत्र सोभरि	,, (मं० ८२-१०७)	२७
६ गोतमपुत्र नोधा	,, (१०८-१२२)	३७
७ रहूगणपुत्र गोतम	,, (१२३-१५६)	४४
८ दिवोदासपुत्र परुच्छेप	,, (१५७)	५९
९ मित्रावरुणपुत्र अगस्त्य	,, (१५८-१९७)	,,
१० शुनकपुत्र गृत्समद	,, (१९८-२१३)	७८
११ गाथीपुत्र विश्वामित्र	,, (२१४-२१६)	८६
१२ अत्रिपुत्र श्यावाश्व	,, (२१७-३१७)	८७
१३ अत्रिपुत्र एवयामरुत्	,, (३१८-३२६)	१२४
१४ बृहस्पतिपुत्र शंयुः	,, (३२७-३३३)	१२८
१५ बृहस्पतिपुत्र भरद्वाज	,, (३३४-३४५)	१३०
१६ मित्रावरुणपुत्र वसिष्ठ	,, (३४५-३९४)	१३४
१७ आङ्गिरसपुत्र पूतदक्ष	,, (३९५-४०६)	१५१
बिंदु	,, ,, ,,	,,
१८ भृगुपुत्र स्यूमरश्मि	,, (४०७-४२२)	१५४
वाजसनेयी यजुर्वेदमंत्र	,, (४२३-४२८)	१६१
प्रजापतिः	,, (४२३; ४२८)	
गाथीपुत्र विश्वामित्र	,, (४२४)	
सप्तर्षयः	,, (४२५-४२७)	
१९ अत्रिपुत्र श्यावाश्व	,, (४२९)	१६७
२० ब्रह्मा	,, (४३०-४३३)	,,
२१ अथर्वा	,, (४३४-४३६)	१६९
२२ सन्नतिः	,, (४३७-४३९)	१७०
२३ नृगार	,, (४४०-४४६)	१७१
२४ अङ्गिरा	,, (४४७)	१७३
२५ अत्रिपुत्र वसुश्रुत	,, (४४८)	१७४
,, श्यावाश्व	,, (४४९-४५६)	,,
अथर्वा	,, (४५७-४६४)	१७७
अग्निर्मरुतश्च ।		
कण्वपुत्र मेधातिथि	,, (४६५-४७३)	१७९
कण्वपुत्र सोभरि	,, (४७४)	१८२
इन्द्रो मरुतश्च ।		
विश्वामित्रपुत्र मधुच्छन्दा	,, (४७५-४७६)	,,
मरुत्वानिन्द्रः ।		
कण्वपुत्र मेधातिथि	,, (४७७-४७९)	१८३
मित्रावरुणपुत्र अगस्त्य	,, (४८०-४९७)	१८४
इन्द्रामरुतौ ।		
आंगिरसपुत्र तिरश्ची	,, (४९८)	१९३
मरुत्पुत्र द्युतान	,, ,,	,,
मरुतों के मंत्रों के ऋषि और उनकी मंत्रसंख्या		१९४
मरुतों का संदर्भ		
ऋग्वेदवचन		१९४
सामवेद ,,		१९७
अथर्ववेद ,,		,,
वाजसनेयी यजुर्वेद वचन		१९८
काठक संहिता ,,		१९९
ब्राह्मण-ग्रंथ-वचन		२००
आरण्यक ,, ,,		२०२
उपनिषद्वचन		,,
मरुतों के मंत्रों में पुनरुक्ति		२०३
मधुच्छंदाः, मेधातिथिः, कण्वः		,,

	पृष्ठ		पृष्ठ
[illegible]	२०६	श्यावाश्व	२१[illegible]
[illegible]	२०८	पुत्रयामरुत्, शंयुः	२१[illegible]
[illegible]	२०९	भरद्वाज	२१[illegible]
[illegible]	२१०	वसिष्ठ	२१[illegible]
[illegible]	२१३	भिन्दु, पूतदक्ष, स्यूमरश्मि	२१[illegible]
[illegible]	२१५	मरुद्देवता-मन्त्रों में स्त्रीविषयक उल्लेख	२१[illegible]
[illegible]	२१६	मरुद्देवता-पुनरुक्त-मंत्राः	११[illegible]

दैवत-संहितान्तर्गत

मरुत् देवता का मन्त्रसंग्रह ।

[अर्थ, भावार्थ और टिप्पणी के साथ]

विश्वामित्रपुत्र मधुच्छन्दा ऋषि। (ऋ० १।६।४,६,८,९)

(१) आत् । अह । स्वधाम् । अनु । पुनः । गर्भऽत्वम् । आऽइरिरे ।
दधानाः । नाम । यज्ञियम् ॥ ४ ॥

अन्वयः- १ आत् अह यज्ञियं नाम दधानाः (मरुतः) स्व-धां अनु पुनः गर्भत्वं एरिरे।

अर्थ- १ (आत् अह) तत्पश्चात् ही (यज्ञियं नाम) पूजनीय नाम तथा यश (दधानाः) धारण करनेवाले मरुत् (स्व-धां अनु) अपनी इच्छासे (पुनः) बार बार गर्भत्वं एरिरे) गर्भावस्थाको प्राप्त होते हैं ।

भावार्थ- १ यथेष्ट यश मिले इस लालसासे पूजनीय नामोंसे युक्त बननेकी तरह [illegible] गर्भावस्था [illegible] एए तैयार हुए ।

टिप्पणी- [१] मेघपक्षमें- भूमंडल पर जो जल विद्यमान है, वह भापके रूपमें [illegible] और वह वायु- की सहायता से मेघों में एकत्रित हुआ पाया जाता है । [illegible]
का गर्भ रहता है । वीरपक्ष में- कल्याण करनेयोग्य यश पानेवाले वीर पुरुष, [illegible]
भाँति भाँति के कार्य निष्पन्न कर देते हैं और मृत्यु के वशीभूत हुए [illegible]
करते हैं । अध्यात्ममें मरुत् 'प्राण' हैं, अधिभूतमें ' वीर सैनिक ' हैं [illegible]
[illegible] प्रमुखतया वीरोंका ही वर्णन [illegible] पाया जाता है और [illegible]
गया है। हाँ, प्राणविषयक निर्देश बहुतही कम है। (२) [illegible]
[illegible])= जो अपना धारण तथा पोषण करता हो वह । [illegible]
[illegible], सुख, आनंद, [illegible] । स्वधां अनु= [illegible]
= पूज्य नाम, यशोगान करनेयोग्य यश । [illegible]
[illegible] कहलाता है और इस तरह [illegible]
करनेवाली विविध उपाधियाँ हैं । देखिए [illegible] । (३) पुनः गर्भत्वं एरिरे = [illegible]
जिससे शरीर धारण करके [illegible]
[illegible] संचार करके जीवजंतुओंको जीवन प्रदान करता है । [illegible]
[illegible] हैं, तो भी फिर गर्भावस्था [illegible]
[illegible] 'वायुरूपवाद' [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

(२) देवऽयन्तः । यथा । मतिम् । अच्छ । विदत्ऽवसुम् । गिरः ।
महाम् । अनूषत । श्रुतम् ॥ ६ ॥

(३) अनवद्यैः । अभिद्युऽभिः । मखः । सहस्वत् । अर्चति । गणैः । इन्द्रस्य । काम्यैः ॥८॥

(४) अतः । परिऽज्मन् । आ । गहि । दिवः । वा । रोचनात् । अधि ।
सम् । अस्मिन् । ऋञ्जते । गिरः ॥ ९ ॥

अन्वयः— २ देवयन्तः गिरः महां विदत्-वसुं श्रुतं यथा मतिं, अच्छ अनूषत ।

३ मखः अन्-अवद्यैः अभि-द्युभिः काम्यैः गणैः इन्द्रस्य सहस्वत् अर्चति ।

४ (हे) परिज्मन् ! अतः वा दिवः रोचनात् अधि आ गहि, अस्मिन् गिरः समृञ्जते ।

अर्थ- २ (देवयन्तः) देवत्व पाने की लालसावाले उपासकों की (गिरः) वाणियाँ, (महां) बडे तथा (विदत्-वसुं) धन की योग्यता जाननेवाले (श्रुतं) विख्यात वीरों की (यथा) जैसे (मतिं) बुद्धिपूर्वक स्तुति करनी चाहिए, (अच्छ अनूषत) उसी प्रकार सराहना करती आई हैं ।

३ (मखः) यह यज्ञ (अन्-अवद्यैः) निर्दोष, (अभि-द्युभिः) तेजस्वी तथा (काम्यैः) वाञ्छनीय ऐसे (गणैः) मरुत्समुदायों से युक्त (इन्द्रस्य सहस्-वत्) इन्द्र के शत्रुओं को परास्त करने में क्षमता रखनेवाले बल की (अर्चति) पूजा करता है ।

४ हे (परि-ज्मन् !) सभी जगह गमन करनेवाले मरुत् गण ! (अतः) यहाँ से (वा) अथवा (दिवः) द्युलोकसे या (रोचनात् अधि) किसी दूसरे प्रकाशमान अंतरिक्षवर्ती स्थानमेंसे (आ गहि) यहाँपर आओ, क्योंकि [अस्मिन्] इस यज्ञमें [गिरः] हमारी वाणियाँ तुम्हारी ही [समृञ्जते] इच्छा कर रही हैं ।

भावार्थ— २ जो उपासक देवत्व पाना चाहते हैं, वे वीरों के समुदाय की सराहना करते हैं, क्योंकि यह संघ जानता है कि, जनता के उच्चतम निवास के लिए आवश्यक धनकी योग्यता कैसी है । अतएव यह इस तरहके धनको पाकर सबको उचित प्रमाण में प्रदान करता है (और यही बात अगले मन्त्र में दर्शायी है ।)

३ यज्ञ की सहायता से दोषरहित, तेजस्वी तथा सब के प्रिय वीरों के संघों में रहकर, शत्रु का नाश करनेवाले इन्द्र के महान् प्रभावी सामर्थ्य की ही महिमा गायी जाती है ।

४ चूँकि मरुत्संघों में पर्याप्त मात्रामें शूरता तथा वीरता विद्यमान् है, अतः उसके प्रभावसे (परि-ज्मन्) समूचे विश्व को व्याप्त कर लेते हैं । वीरों को चाहिए कि वे इन गुणों को स्वयं धारण करें । ऐसे वीरों का सत्कार करने के लिए सभी कवियों की वाणियाँ उत्सुक रहा करती हैं ।

टिप्पणी— [२] (१) ' देवयन्तः ' देवत्व हमें मिल जाय इसलिए निर्धारपूर्वक उपासना करनेवाले उपासक। (२) ये भक्तगण धनकी महत्ताको जाननेवाले बडे यशस्वी मरुत् नामधारी वीरों की ही प्रशंसा करते हैं । कारण इतनाही है कि, इस भाँति वर्णन करने से उनके गुण धीरेधीरे उपासकों में बढने लगेंगे । उपासक इस बातसे परिचित हैं । मनोविज्ञान का एक सिद्धान्त है कि, जिन विचारोंको हम मन में स्थान देंगे वे ही आगे चलकर हम में दृढमूल हो बैठते हैं और यही देवतास्तोत्र में है । उपासक जिसकी जैसी स्तुति करेगा वैसे ही वह बन जायेगा । ' विदत्-वसु ' पद यहाँपर है । ' वसु ' अर्थात् (वासयति इति) मानवों का निवास सुखदायक होने के लिए जो कुछ भी सहायक हो वह वसु है । अब ये वीर इस धनकी योग्यता और महत्ता से परिचित हैं, क्योंकि यह मानवों के सुखमय निवास बनाने में बडा भारी सहायक है । अन्य सभी वीर इन्हीं वीरोंका अनुकरण करें । [३] (१) मखः= (मख् गतौ)= पूज्य, कर्मण्य, आनंदी, यज्ञ, प्रशंसनीय कर्म। [४] (१)परि-ज्मा = सर्वत्र अभिगमन करनेवाला, सर्वव्यापक। (२) समृञ्ज्- (ऋञ्जतिः प्रसाधनकर्मा । निरुक्त. ६।२१) सुशोभित करना, सजावट करना, सुव्यवस्थित करना ।

कण्वपुत्र मेधातिथि ऋषि (ऋ० १।१५।२)

(५) मरुतः । पिबत । ऋतुना । पोत्रात् । यज्ञम् । पुनीतन ।
यूयम् । हि । स्थ । सुऽदानवः ॥ २ ॥

घोरपुत्र कण्व ऋषि (ऋ. १।३७।१-१५)

(६) क्रीळम् । वः । शर्धः । मारुतम् । अनर्वाणम् । रथेऽशुभम् ।
कण्वाः । अभि । प्र । गायत ॥ १ ॥

(७) ये । पृषतीभिः । ऋष्टिऽभिः । साकम् । वाशीभिः । अञ्जिऽभिः ।
अजायन्त । स्वऽभानवः ॥ २ ॥

अन्वयः- ५ (हे) मरुतः ! ऋतुना पोत्रात् पिबत, यज्ञं पुनीतन, (हे) सु-दानवः ! हि यूयं स्थ ।
६ (हे) कण्वाः ! वः मारुतं क्रीळं अन्-अर्वाणं रथे-शुभं शर्धं अभि प्र गायत ।
७ ये स्व-भानवः पृषतीभिः ऋष्टिभिः वाशीभिः अञ्जिभिः साकं अजायन्त ।

अर्थ- ५ हे [मरुतः !] वीर मरुतो ! [ऋतुना] उचित अवसरपर [पोत्रात्] पवित्रता करनेवाले याजक के बर्तन से [पिबत] सोमरस का सेवन करो और इस [यज्ञं पुनीतन] यज्ञ को पवित्र करो । हे [सु-दानवः !] उच्च कोटिका दान करनेवाले मरुतो ! [यूयं स्थ] तुम पवित्रता संपादन करनेवाले ही हो ।

६ हे [कण्वाः !] काव्यगायन करनेवाले ! [वः] तुम्हारे निजी कल्याणके लिए [मारुतं] मरुतों के समूहसे उत्पन्न हुआ, [क्रीळं] क्रीडनमय भावसे युक्त [अन्-अर्वाणं] भाइयोंमें पाये जानेवाली कलहप्रिय मनोवृत्ति से कोसों दूर याने जिसमें पारस्परिक मनोमालिन्य नहीं है, ऐसा [रथे-शुभं] रथमें सुहानेवाले अर्थात् रथी वीर को शोभादायक जो [शर्धं] बल है, उसी का [अभि प्र गायत] वर्णन करो ।

७ [ये स्व-भानवः] जो अपने निजी तेज से युक्त हैं, वे मरुत् [पृषतीभिः] धब्बों से अंकित हिरनियों या घोडियों के साथ [ऋष्टिभिः] भालोंसहित [वाशीभिः] कुठार एवं [अञ्जिभिः] वीरों के आभूषण या गणवेश के [साकं अजायन्त] संग प्रकट हुए ।

भावार्थ- ५ [१] मौसम के अनुकूल जो सोमरसरूप पेय है, वह पवित्र बर्तन में ही पीना चाहिए । [२] जो कर्म करना हो वह यथासंभव पवित्र करनेकी चेष्टा करनी चाहिए । उपेक्षा या उदासीनता नहीं करनी चाहिए ।

६ अपनी प्रगति हो इसलिए कण्वगण मरुतों के स्तोत्र का पठन करें; क्योंकि इन मरुतों में [illegible], खिलाडीपन, पारस्परिक मित्रता, अनुद्वेग तथा रथी बनने के लिए उचित गुण विद्यमान हैं

७ मरुतों के रथ में जो घोडियाँ या हिरनियाँ जोती जाती हैं वे धब्बेवाली [illegible] हैं । मरुतों के निकट भाले, कुठार, वीरभूषण या गणवेश पाये जाते हैं । कहने का अभिप्राय इतना ही है कि, मरुत जिस प्रकार सुसज्ज दीख पडते हैं वैसे ही अन्य सभी वीर सैनिक शस्त्रास्त्रों से लैस रहें ।

टिप्पणी [५] पोत्रं= पवित्रता करनेवाला याजक, पवित्र बर्तन । [illegible] रहित हैं । [६] खिलाडीपन में जो [illegible] पाये जाते हैं वे मरुतों में हैं । [illegible] ' अर्वा ' [illegible] ' आक्रमण ' अर्थ में आया है । ' अर्वा ' [illegible] आदि भावों से पारस्परिक [illegible] । ' अर्व- हिंसायां ' [illegible] ' हिंसा करना ' भी [illegible] । [illegible] अर्थात् [illegible] या हीन [Mean] है, [illegible] ही [illegible] आवश्यकता है । मरुतों में [illegible] का विद्यमान है । [illegible]

(८) इहऽइव । शृण्वे । एषाम् । कशाः । हस्तेषु । यत् । वदान् ।
नि । यामन् । चित्रम् । ऋञ्जते ॥ ३ ॥

(९) प्र । वः । शर्धाय । घृष्वये । त्वेषऽद्युम्नाय । शुष्मिणे । देवत्तम् । ब्रह्म । गायत ॥४॥

(१०) प्र । शंस । गोषु । अघ्न्यम् । क्रीळम् । यत् । शर्धः । मारुतम् ।
जम्भे । रसस्य । ववृधे ॥ ५ ॥

अन्वयः— ८ एषां हस्तेषु कशाः यत् वदान् इह इव शृण्वे, यामन् चित्रं नि ऋञ्जते ।

९ वः शर्धाय, घृष्वये, त्वेष-द्युम्नाय शुष्मिणे, देवत्तं ब्रह्म प्र गायत ।

१० यत् गोषु, क्रीळं मारुतं, रसस्य जम्भे ववृधे (तत्) अ-घ्न्यं शर्धः प्र शंस ।

अर्थ- ८ [एषां हस्तेषु] इन मरुतों के हाथों में विद्यमान [कशाः] कोडे [यत्] जब [वदान्] शब्द करने लगते हैं, तब उन ध्वनियों को मैं [इह इव] इसी जगह पर खडा रह कर [शृण्वे] सुन लेता हूँ। वह ध्वनि [यामन्] युद्धभूमि में [चित्रं] विलक्षण ढंग से [नि-ऋञ्जते] शूरता प्रकट करती है।

९ [वः शर्धाय] तुम्हारा बल बढाने के लिये, [घृष्वये] शत्रुदल का विनाश करने के हेतु और [त्वेष-द्युम्नाय] तेज से प्रकाशमान [शुष्मिणे] सामर्थ्य पाने के लिए [देवत्तं ब्रह्म] देवता-विषयक ज्ञान को बतलानेवाले काव्य का [प्र गायत] तुम यथेष्ट गायन करो।

१० (यत्) जो बल (गोषु) गौओं में पाया जाता है, जो (क्रीळं मारुतं) खिलाडीपन से परिपूर्ण मरुत् संघों में विद्यमान है, जो (रसस्य जम्भे) गोरस के यथेष्ट सेवनसे (ववृधे) बढ जाता है, उस (अ-घ्न्यं शर्धः) अविनाशनीय बल की (प्र शंस) स्तुति करो।

भावार्थ- ८ शूर मरुत् अपने हाथों में रखे हुए कोडों से जब आवाज निकालने लगते हैं तब उस शब्द को सुन-कर रणक्षेत्र में लडनेवाले वीरों में जोशीले भाव उठ खडे होते हैं।

९ अपना बल [शर्धः] बढाना चाहिए। शत्रुदल को तहसनहस करने के लिए उन से [घृष्विः] संघर्ष करने को पर्याप्त बल या शक्ति रहे, ताकि शत्रुओं पर टूट पडने पर अपने को मुँह की खाना न पडे और तेज का उजि-यारा फैलानेवाली सामर्थ्य प्राप्त हो, इसलिए [त्वेष-द्युम्नाय शुष्मिणे] जिसमें देवता की जानकारी व्यक्त की गयी हो, ऐसे स्तोत्र का [देवत्तं ब्रह्म] पठन एवं गायन करना उचित है, क्योंकि इस भाँति करने से तुम में यह शक्ति पैदा होगी। जो विचार बारबार मन में दुहराये जाते हैं वे कुछ समय के उपरान्त हम से अभिन्न हो जाते हैं।

१० गोरस के रूप में गौओं में बल तथा सामर्थ्य इकट्ठा किया जाता है. वीरों की क्रीडासक्त वृत्ति में वह बल प्रकट हो जाता है, जो हरएक में बढानेयोग्य है। गोरस का पर्याप्त सेवन करने से वह शक्ति अपने शरीर में बढ सकती है और इसकी सराहना करनी उचित है।

धीरे धीरे बढने लगता है, अतः वर्णन करनेवाला भी बलिष्ठ बनता है। 'अनर्वाणं' का अर्थ कइयोंके मतानुसार घोडोंसे शून्य, जिनके पास घोडे नहीं हैं ऐसा करना चाहिए, पर अन्य अनेक स्थानों पर मरुतों को 'अरुणाश्वः' 'पृषदश्वाः' 'अश्वयुजः' आदि विशेषण दिये गये हैं, अतः यही अनुमान ठीक है कि, मरुतोंके निकट घोडे विद्यमान थे। इसलिए 'अन्-अर्वा' का अर्थ 'हीन भावों से रहित, एक दूसरे से द्वेष न करनेवाला' यों करना उचित जँचता है। पाठक इस पर अधिक विचार करें। (५) कण्व= मंत्र ४२ पर की टिप्पणी देखिए। [७] (१) ऋष्टिः= [ऋष् हिंसायां] खड्ग या भाला। (२) वाशी [वाश् शब्दे] चिल्लाहट करनेवाला, तीक्ष्ण छोरवाला शस्त्र, परशु, कुल्हाडी। (३) अञ्जि= [अन्ज् व्यक्ति-म्रक्षण-कान्ति-गतिषु]= रंग लगाना, कुंकुम का लेप करके शोभामय बनाना, सुन्दर बनना, बोलना। अञ्जि= रंग, भूषण, वेशभूषा, गणवेश, चमकीला। [९] (१) शर्धः= संघका बल, धैर्य, निर्भयताकी सामर्थ्य, (२) घृष्विः [घृष्=संघर्षे]= शत्रुओंसे मुठभेड करनेवाला। (३) शुष्मिन्=सामर्थ्ययुक्त, धीरजसे परिपूर्ण, प्रभावशाली।

(११) कः । वः । वर्षिष्ठः । आ । नरः । दिवः । च । ग्मः । च । धूतयः ।
यत् । सीम् । अन्तम् । न । धूनुथ ॥ ६ ॥

(१२) नि । वः । यामाय । मानुषः । दध्रे । उग्राय । मन्यवे । जिहीत । पर्वतः । गिरिः ॥७॥

(१३) येषाम् । अज्मेषु । पृथिवी । जुजुर्वान्ऽइव । विश्पतिः । भिया । यामेषु । रेजते ॥८॥

अन्वयः- ११ (हे) नरः ! दिवः च ग्मः च धूतयः वः आ वर्षिष्ठः कः ? यत् सीं अन्तं न धूनुथ ?

१२ वः उग्राय मन्यवे यामाय मानुषः नि दध्रे पर्वतः गिरिः जिहीत ।

१३ येषां यामेषु अज्मेषु पृथिवी, जुजुर्वान्इव विश्पतिः भिया रेजते ।

अर्थ- ११ हे (नरः !) नेतृत्वगुण से सम्पन्न वीर मरुतो ! (दिवः) द्युलोक को एवं (ग्मः च) भूलोक को भी (धूतयः) तुम कंपित करनेवाले हो, ऐसे (वः) तुम में (आ) सब प्रकार से (वर्षिष्ठः) उच्च कोटि का भला (कः) कौन है ? (यत्) जो (सीं) सदैव (अन्तं न) पेडों के अग्रभाग को हिलाने के समान शत्रुदल को विचलित कर देता है, या तुम सभी (धूनुथ) विकंपित कर डालते हो।

१२ (वः उग्राय) तुम्हारे भयावह (मन्यवे) क्रोधयुक्त या आवेश एवं उत्साह से लबालब भरे हुए (यामाय) आक्रमण से डरकर (मानुषः) मानव तो किसी न किसी (निदध्रे) के सहारे ही रहता है, क्योंकि (पर्वतः) पहाड या (गिरिः) टीले को भी तुम (जिहीत) विकंपित बना देते हो।

१३ (येषां) जिन के (यामेषु) आक्रमणोंके अवसरपर और (अज्मेषु) चढाई करने के प्रसंग पर (पृथिवी) यह भूमि (जुजुर्वान्इव विश्पतिः) मानों क्षीण नृपति की नाईं (भिया रेजते) भय के मारे विकंपित तथा विचलित हो उठती है।

भावार्थ- ११ वीर मरुत् राष्ट्र के नेता हैं और वे शत्रुसंघको जडमूल से विचलित एवं कंपायमान कर देते हैं। ठीक उसी तरह जैसे आँधी या तूफान पृथ्वी या द्युलोक में विद्यमान पेडसदृश वस्तुजात को हिलाता है, अथवा वायु के झकोरे वृक्षों के ऊपर के हिस्से को चलायमान कर देते हैं। इन वायुप्रवाहों की न्याईं वीर मरुत् शत्रुओं को अपदस्थ कर डालते हैं। यहाँ पर प्रश्न उठाया है कि, क्या ये सभी मरुत् समान हैं अथवा इनमें कोई प्रमुख नेताके पद पर अधिष्ठित हो विराजमान है ? (आगे चलकर ३०५ तथा ४५३ संख्या के मंत्रों में बतलाया है कि, इन मरुतों में कोई भी श्रेष्ठ, मध्यम एवं निम्न श्रेणी का नहीं, अपितु सभी 'भाई' हैं। पाठक उन मंत्रों के ऊपर इस अवसर पर एक सरसरी निगाह डाल लें।)

१२ वीर मरुतों के भीषण आक्रमण के फलस्वरूप मानव के तो हाथपाँव फूल जाते हैं और वे कहीं न कहीं आश्रय पाने की चेष्टा में निरत रहते हैं, पर बडे बडे पर्वत भी आन्दोलित एवं स्पंदित हो उठते हैं। वीरों की शत्रुदल पर चढाइयाँ इसी भाँति प्रभावोत्पादक हों।

१३ वीर मरुत् जब शत्रुदल पर धावा करते हैं और बडे वेग से विद्युद्-युद्धप्रणाली से कार्य करते हैं, उस समय, आगे क्या होगा क्या नहीं, इस चिंता से तथा डर से आसन्नमरण नरेश की नाईं, यह समूची भूमि दहल उठती है। (इसी भाँति वीर सैनिकों को शत्रुदल पर आक्रमण का सूत्रपात करना चाहिए।)

टिप्पणी- [१०] (१) अघ्न्यं= (अ-घ्न्यं) जिसका हनन नहीं करना चाहिए, जिसका नाश कभी न करना चाहिए। [११] (१) नृ= नेता, अग्रगामी; (२) धूति (धू कम्पने = हिलानेवाला। [१२] (१) यान= आक्रमण, धावा मारना, शत्रु पर चढाई करना। [१३] (१) अज्म= आक्रमण, धावा।

(१४) स्थिरम् । हि । जानम् । एषाम् । वयः । मातुः । निःऽएतवे ।
यत् । सीम् । अनु । द्विता । शवः ॥ ९ ॥
(१५) उत् । ऊँ इति । त्ये । सूनवः । गिरः । काष्ठाः । अज्मेषु । अत्नत ।
वाश्राः । अभिऽज्ञु । यातवे ॥१०॥
(१६) त्यम् । चित् । घ । दीर्घम् । पृथुम् । मिहः । नपातम् । अमृध्रम् ।
प्र । च्यवयन्ति । यामऽभिः ॥ ११ ॥

अन्वयः— १४ एषां जानं स्थिरं हि, मातुः वयः निःएतवे यत् शवः सीं द्विता अनु ।
१५ त्ये गिरः सूनवः अज्मेषुः काष्ठाः वाश्राः अभि-ज्ञु यातवे उत् ऊ अत्नत ।
१६ त्यं चिद् घ दीर्घं पृथुं अ-मृध्रं मिहः न-पातं यामभिः प्र च्यवयन्ति ।

अर्थ- १४ [एषां] इन वीर मरुतों की [जानं] जन्मभूमि [स्थिरं हि] सचमुच दृढीभूत एवं अटल है। [मातुः] माता से जैसे [वयः] पंछी [निः- एतवे] बाहर जाने के लिए चेष्टा करते हैं, उसी तरह ये अपनी मातृभूमि से दूरवर्ती देशों में विजय पाने के लिए निकल जाते हैं, [यत्] तब इनका [शवः] बल [सीं] सदैव [द्विता अनु] दोनों ओर विभक्त रहता है।

१५ [त्ये] उन [गिरः सूनवः] वाणी के पुत्र, वक्ता मरुतोंने [अज्मेषु] अपने शत्रुओं पर किये जानेवाले आक्रमणों में अपने हलचलों की [काष्ठाः] सीमाएँ या परिधियाँ बढाई हैं, जैसे कि, [वाश्राः] गौओं को [अभि- ज्ञु] सभी जगह घुटने तक के पानी में से [यातवे] निकल जाना सुगम हो, इसलिए जैसे जल को [उत् उ अत्नत] दूर तक फैलाया जाय।

१६ (त्यं चित् घ) उस प्रसिद्ध, (दीर्घं) बहुतही लंबे, (पृथुं) फैले हुए (अ-मृध्रं) तथा जिसका कोई नाश नहीं कर सकता, ऐसे (मिहः न-पातं) जल की वृष्टि न करनेवाले मेघ को भी ये वीर मरुत् (यामभिः) अपनी गतियों से (प्र च्यवयंति) हिला देते हैं।

भावार्थ- १४ वीर मरुत् भूमि के पुत्र हैं। उनकी यह भूमि माता स्थिर है और इसी अटल मातृभूमि से ये वीर अतीव वेगशाली उत्पन्न हुए हैं। जिस भाँति पंछी अपनी माता से दूर निकलने के लिए छटपटाते हैं ठीक वैसे ही ये वीर अपनी मातृभूमि से सुदूरवर्ती स्थानों में जाकर असीम पराक्रम दर्शाने के लिए उत्सुक हैं और चले भी जाते हैं। ऐसे मौके पर इनका सारा ध्यान अपनी जन्मदात्री भूमि की ओर लगा रहता है, वैसे ही शत्रुओं से जूझते समय युद्ध पर भी इनका ध्यान केन्द्रित रहता है। इस प्रकार इनकी शक्ति दो भागोंमें विभक्त हो जाती है।

१५ ये मरुत् [गिरः सूनवः] वाणी के पुत्र हैं, वक्ता हैं। या ' गोमातरः ' नाम मरुतों का ही है। ' गो ' अर्थात् ' वाणी, गौ, भूमि ' का सूचक शब्द है। मातृभाषा, मातृभूमि तथा गौमाता के सुख के लिए अथक प्रयत्न करनेवाले ये मरुत् विख्यात हैं। अपने शत्रुदल को तितरबितर करने के लिए उन्होंने जिस भूमि पर हलचलें प्रवर्तित की, उस भूमि की सीमाएँ बहुत चौडी कर रखी हैं; अर्थात् अपने आक्रमण के क्षेत्र को अति विस्तृत करते हैं। अतः जैसे अगर गौओं को घुटने तक के जलसंचय में से जाना पडे, तो कुछ कष्टदायक नहीं प्रतीत होता है, वैसे उन्होंने भूमि पर पाये जानेवाले ऊबडखाबड स्थलों को न्यून कर दिया, भूमि समतल बना डाली, पानी इकट्ठा हो जाय, तो भी गौओं के लिए वह घुटनों से ऊपर न चढ जाए ऐसी सतर्कता दर्शायी। गौओं के लिए मरुतों ने भूमिपर इतना अच्छा प्रबन्ध कर डाला। उसी प्रकार शत्रु पर चढाई करने के लिए भी यातायात की सभी सुविधाएँ उपस्थित कर दीं, ताकि विरोधी दल पर धावा करते समय अत्यधिक कठिनाइयों का सामना न करना पडे।

१६ जिन मेघोंसे वर्षा नहीं होती हो ऐसे बडे बडे बादलोंको भी मरुत् (वायुप्रवाह) अपने प्रचण्ड वेगसे विकंपित कर डालते हैं। [वीरोंको भी यही उचित है कि, वे दान न देनेवाले कृपण शत्रुओंको जड मूलसे हिलाकर पदभ्रष्ट कर दें।]

(१७) मरुतः। यत्। ह। वः। बलम्। जनान्। अचुच्यवीतन। गिरीन्। अचुच्यवीतन॥ १२॥

(१८) यत्। ह। यान्ति। मरुतः। सम्। ह। ब्रुवते। अध्वन्। आ।
शृणोति। कः। चित्। एषाम्॥ १३॥

(१९) प्र। यात। शीभम्। आशुऽभिः। सन्ति। कण्वेषु। वः। दुवः।
तत्रो इति। सु। मादयाध्वै॥ १४॥

(२०) अस्ति। हि। स्म। मदाय। वः। स्मसि। स्म। वयम्। एषाम्।
विश्वम्। चित्। आयुः। जीवसे॥ १५॥

अन्वयः- १७ मरुतः यद् ह वः बलं जनान् अचुच्यवीतन गिरीन् अचुच्यवीतन।
१८ यत् ह मरुतः यान्ति अध्वन् आ सं ब्रुवते ह, एषां कः चित् शृणोति?
१९ आशुभिः शीभं प्र यात, कण्वेषु वः दुवः सन्ति, तत्रो सु मादयाध्वै।
२० वः मदाय अस्ति हि स्म, विश्वं चित् आयुः जीवसे, एषां वयं स्मसि स्म।

अर्थ- १७ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (यत् ह) जो सचमुच (वः बलं) तुम्हारा बल (जनान् अचुच्यवीतन) लोगों को हिला देता है, विकंपित या स्थानभ्रष्ट कर डालता है, वही (गिरीन्) पर्वतों को भी (अचुच्यवीतन) विचलित बना डालता है।

१८ (यत् ह) जिस समय सचमुच ही (मरुतः यान्ति) वीर मरुत् संचार करने लगते हैं, यात्रा का सूत्रपात करते हैं, तब वे (अध्वन्) सडक के बीचमेंही (आ सं ब्रुवते ह) सब मिल कर परस्पर वार्तालाप करना शुरु कर देते हैं। (एषां) इनका शब्द (कः चित्) भला कोई न कोई क्या (शृणोति) सुन लेता है?

१९ (आशुभिः) तीव्र गतियोंद्वारा और (शीभं) वेगपूर्वक (प्र यात) चलो, (कण्वेषु) कण्वोंके मध्य, याजकों के यज्ञों में (वः) तुम्हारे (दुवः सन्ति) सत्कार होनेवाले हैं। (तत्रो) उधर तुम (सु मादयाध्वै) भली भाँति तृप्त बनो।

२० (वः) तुम्हारी (मदाय) तृप्ति के लिए यह हमारा अर्पण (अस्ति हि स्म) तैयार है। (विश्वं चित् आयुः) समूचे जीवन भर सुखपूर्वक (जीवसे) दिन बिताने के लिए (वयं) हम (एषां स्मसि स्म) इनके ही अनुयायी बनकर रहनेवाले हैं।

भावार्थ- १७ मरुतों में इतना बल विद्यमान है कि, उसकी वजह से शत्रु के सैनिक तथा पार्वतीय दुर्ग या गढ भी दहल उठते हैं। वीर सदा इस भाँति बल बढाने में सचेष्ट हों।

१८ जिस समय वीर मरुत् सैनिक अभिगमन करते हैं, तबवे इकट्ठे हो सात (सात वीरों की पंक्ति बनाकर सडक परसे) चलने लगते हैं। इस प्रकार आगे बढते समय वे जो कुछ भी बातचीत करते हैं उसे सुन लेना बाहर के व्यक्ति को असंभव है; क्योंकि वह भाषण धीमी आवाज में प्रचलित रहता है।

१९ 'आशुभिः शीभं प्रयात' (Quick march) अत्यन्त वेगसे शीघ्रतापूर्वक चलो। सैनिक शीघ्रतया चलना प्रारंभ करें, इसलिए यह 'सैनिकीय आज्ञा' है। मरुत् यथासंभव शीघ्र यज्ञभूमि में पहुँच जायँ, क्योंकि उधर उनके सत्कार एवं आवभगत के लिए आयोजनाएँ प्रस्तुत कर रखी हैं। मरुत् उस आदरसत्कार का स्वीकार करें और तृप्त हों।

२० वीर मरुतों को हर्षित तथा प्रसन्न करने के लिए हम खानेपीने की वस्तुएँ दे रहे हैं। जब तक हमारे जीवन की अवधि प्रचलित होगी, तब तक यह हमारा निर्धार हो चुका है कि हम मरुतों के ही अनुयायी बनकर रहेंगे।

(ऋ. १।३८।१—१५)

(२१) कत् । ह । नूनम् । कधऽप्रियः । पिता । पुत्रम् । न । हस्तयोः ।
दधिध्वे । वृक्तऽबर्हिषः ॥ १ ॥

(२२) क्व । नूनम् । कत् । वः । अर्थम् । गन्त । दिवः । न । पृथिव्याः ।
क्व । वः । गावः । न । रण्यन्ति ॥ २ ॥

(२३) क्व । वः । सुम्ना । नव्यांसि । मरुतः । क्व । सुविता ।
क्वो३इति । विश्वानि । सौभगा ॥ ३ ॥

(२४) यत् । यूयं । पृश्निऽमातरः । मर्तासः । स्यातन । स्तोता । वः । अमृतः । स्यात् ॥४॥

अन्वयः- २१ कध-प्रियः वृक्त-बर्हिषः, पिता पुत्रं न, हस्तयोः कत् ह नूनं दधिध्वे ?
२२ नूनं क्व ? वः कत् अर्थं ? दिवो गन्त, न पृथिव्याः, वः गावः क्व न रण्यन्ति ?
२३ (हे) मरुतः ! वः नव्यांसि सुम्ना क्व ? सुविता क्व ? विश्वानि सौभगा क्वो ?
२४ (हे) पृश्नि-मातरः ! यूयं यद् मर्तासः स्यातन, वः स्तोता अ-मृतः स्यात् ।

अर्थ— २१ (कध-प्रियः) स्तुतिको बहुत चाहनेवाले (वृक्त-बर्हिषः) तथा आसनपर बैठनेवाले मरुतो! (पिता) बाप (पुत्रं न) पुत्रको जैसे (हस्तयोः) अपने हाथों से उठा लेता है, उसी प्रकार तुम भी हमें (कत् ह नूनं) सचमुच कब भला अपने करकमलों से (दधिध्वे) धारण करोगे ?

२२ (नूनं क्व) सचमुच तुम भला किधर जाओगे ? (वः कत्) तुम किस (अर्थं) उद्देश्यको लक्ष्य में रख जानेवाले हो ? (दिवः गन्त) तुम भले ही द्युलोक से प्रस्थान करो, लेकिन (न पृथिव्याः) इस भूलोकसे तुम कृपा करके न चले जाओ; भूमंडलपर ही अविरत निवास करो। (वः गावः) तुम्हारी गौएँ (क्व) भला कहाँ ? (न रण्यन्ति) नहीं रँभाती हैं ?

२३ हे (मरुतः !) वीर मरुद्गण ! (वः) तुम्हारी (नव्यांसि) नयी नयी (सुम्ना क्व ?) संरक्षणकी आयोजनाएँ कहाँ हैं ? तुम्हारे (सुविता क्व ?) उच्च कोटिके वैभव तथा सुखके साधन ऐश्वर्य किधर हैं ? और (विश्वानि) सभी प्रकार के (सौभगा क्वो ?) सौभाग्य कहाँ हैं ?

२४ हे (पृश्नि-मातरः !) मातृभूमि के सुपुत्र वीरो ! (यूयं) तुम (यद्) यद्यपि (मर्तासः) मर्त्य या मरणशील (स्यातन) हो, तो भी (वः) तुम्हारा (स्तोता) काव्यगायन करनेवाला बेशक (अमृतः स्यात्) अमर होगा ।

भावार्थ— २१ जिस भाँति पिता का आधार पाने से पुत्र निर्भय होकर रहता है, ठीक उसी प्रकार भला कब हमें इन वीरोंका सहारा मिलेगा ? एक बार यदि यह निश्चित हो जाए कि, हमें उनका आश्रय मिलेगा, तो हम अकुतोभय हो सुखपूर्वक कालक्रमणा करने लगेंगे और हमारी जीवनयात्रा निश्चित हो जायेगी ।

२२ वीर मरुत् कहाँ जा रहे हैं ? किस दिशा में वे गमन कर रहे हैं ? किस अभिप्राय से वे अभियान कर रहे हैं ? हमारी यह तीव्र लालसा है कि, वे द्युलोक से इधर पधारने की कृपा करें और इसी अवनीतलपर सदा के लिए निवास करें । कारण यही है कि उनकी छत्रछाया में हमारी रक्षा में कोई त्रुटि न रहने पायेगी, अतः वे इधर से अन्य किसी जगह न चले जाएँ । मरुतों की गौएँ सभी स्थानों में विद्यमान हैं और वे अत्यानन्दवश रँभाती हैं ।

२३ वीर मरुत् संरक्षणकार्य का बीडा उठाते हैं, अतः जनता की रक्षा भली भाँति हुआ करती है और वह श्रेष्ठ वैभव एवं सुख पाने में सफलता प्राप्त करती है । वीरों के लिए यह अतीव उचित कार्य है कि, वे जनता की यथोचित रक्षा कर उसे वैभवशाली तथा सुखी करें ।

२४ शूर वीर मरुत् (पृश्नि-मातरः, गो-मातरः) मातृभूमि, मातृभाषा तथा गोमाताकी सेवा करनेवाले हैं और यद्यपि ये स्वयं मर्त्य हैं, तो भी इनके अनुयायी अमरपन पाने में सफलता पायेंगे ।

(२५) मा । वः । मृगः । न । यवसे । जरिता । भूत् । अजोष्यः ।
पथा । यमस्य । गात् । उप ॥ ५ ॥

(२६) मो इति । सु । नः । पराऽपरा । निःऽऋतिः । दुःऽहना । वधीत् ।
पदीष्ट । तृष्णया । सह ॥ ६ ॥

अन्वयः- २५ मृगः यवसे न, वः जरिता अ-जोष्यः मा भूत्, यमस्य पथा (मा) उप गात् ।
२६ परा-परा दुर्-हना निर्-ऋतिः नः मो सु वधीत्, तृष्णया सह पदीष्ट।

अर्थ- २५ (मृगः) हिरन (यवसे न) जैसे तृण को असेवनीय नहीं समझता है, ठीक उसी प्रकार (वः जरिता) तुम्हारी स्तुति एवं सराहना करनेवाला तुम्हें (अ-जोष्यः) अ-सेव्य या अप्रिय (मा भूत्) न होने पाय और वैसे ही वह (यमस्य पथा) यमलोक की राहपर (मा उप गात्) न चले, अर्थात् उसकी मौत न होने पाय या दूर हट जाय ।

२६ (परा-परा) अत्यधिक मात्रा में बलिष्ठ तथा (दुर् हना) विनाश करने में बहुतही बीहड ऐसी (निर्-ऋतिः) बुरी दशा या दुर्दशा (नः) हमारा (मो सु वधीत्) विनाश न करे, (तृष्णया सह) प्यास के मारे उसी का (पदीष्ट) विनाश हो जाय ।

भावार्थ— २५ जैसे हिरन जौ के खेत को सेवनीय मानता है, उसी तरह तुम्हारा बखान करनेवाला कवि तुम्हें सदैव प्रिय लगे और वह मृत्यु के दायरे से कोसों दूर रहे । वह यमलोक को पहुँचानेवाली सडक पर संचार न करे, याने वह अमर बने ।

२६ विपदा, बुरी हालत एवं भाग्यचक्र के उलट फेर के फलस्वरूप होनेवाली परिस्थिति नुराहां बलवत्तर होती है और उसे हटाना तो कोई सुगम कार्य बिलकुल नहीं, ऐसी आपदा के कारन हमारा नाश न होने पाय; परन्तु सुख की प्यास या क्षुधा बढ जाए, जिससे वही विपत्ति विनष्ट होवे ।

टिप्पणी- [२४] 'यूयं मर्तासः स्यातन, वः स्तोता अमृतः स्यात्' में विरोधाभास अलंकारकी झलक देखने मिलती है । मरुतों की उपासना करने में निरत पुरुष भी अमर बन सकता है । 'ऋभु' देवताओं के बारे में भी इसी भाँति वर्णन उपलब्ध है । 'मर्तासः सन्तो अमृतत्वमानशुः ।' (ऋ. १।११०।४) ऋभु-देव पहले मर्त्य थे, पर आगे चलकर उन्हें अमरपन मिला । इससे तो यही प्रतीत होता है कि, मानवों में भी अमर बनने की क्षमता रहता है । इस मंत्र पर सायणाचार्यजीने इस भाँति भाष्य किया है- "एवं कर्माणि कृत्वा मर्तासः मनुष्या अपि सन्तोऽमृतत्वं देवत्वं आनशुः आनशिरे । कृतैः कर्मभिर्लेभिरे ।" ऋभु प्रारम्भमें मनुष्य ही थे, पर उन्होंने विशेष तथा अत्यधिक महत्त्वपूर्ण कार्यकलाप निभाये, इसलिए वे देवत्वपद अधिरूढ हो गये । स्पष्टतया समझना चाहिए कि अगर सभी मानव इसी भाँति उच्च कोटिके कार्य करने लगेंगे, तो वे निःसन्देह देवपद प्राप्त कर सकेंगे । [२५] अजोष्य= (जुष् प्रीतिसेवनयोः) जोष्य= प्रीतिपूर्वक सेवन करनेयोग्य, अजोष्य= सेवन करने के लिए अनुपयुक्त । [२६] धन सम्पत्ति, धन धान्य सभी को विपत्ति से सुरक्षित रखना अनिवार्य है । मानवजाति में जब तृष्णा अत्यधिक मात्रा में बढ जाती है, तब ऐसे संकटों के बादल मँडराने लगते हैं, व्यक्ति की तकदीर बदल जाती है । तृष्णा यदि लगातार बढती चली जाय, तो वही उसका विनाश करती है और वह भी नष्ट हो जाती है । 'निर्ऋतिः तृष्णया सह पदीष्ट' विपदा तृष्णा के साथ विनष्ट हो जाय, ऐसा जो यहाँ कहा है, इसका अभिप्राय केवल इतना ही है । क्योंकि [illegible], विपदा की जड में तृष्णा पाई जाती है, अतएव अगर तृष्णा के साथ ही साथ विपत्तियाँ भी दूर हो [illegible], तो [illegible] सुख की प्राप्ति होती इसमें तनिक भी सन्देह नहीं ।

मरुत् [टि.] २

(२७) सत्यम् । त्वेषाः । अमऽवन्तः । धन्वन् । चित् । आ । रुद्रियासः
मिहम् । कृण्वन्ति । अवाताम् ॥ ७ ॥

(२८) वाश्राऽइव । विऽद्युत् । मिमाति । वत्सम् । न । माता । सिसक्ति ।
यत् । एषाम् । वृष्टिः । असर्जि ॥ ८ ॥

(२९) दिवा । चित् । तमः । कृण्वन्ति । पर्जन्येन । उदऽवाहेन ।
यत् । पृथिवीम् । विऽउन्दन्ति ॥ ९ ॥

अन्वयः- २७ धन्वन् चित्, त्वेषाः अम-वन्तः रुद्रियासः, अ-वातां मिहं आ कृण्वन्ति, सत्यम्।
२८ यत् एषां वृष्टिः असर्जि, वाश्राऽइव, विद्युत् मिमाति, माता वत्सं न, सिसक्ति।
२९ यत् पृथिवीं व्युन्दन्ति उद-वाहेन पर्जन्येन दिवा चित् तमः कृण्वन्ति।

अर्थ- २७ (धन्वन् चित्) मरुभूमिमें भी (त्वेषाः) तेजयुक्त और (अम वन्तः) बलिष्ठ (रुद्रियासः) महान् वीर मरुत् (अ-वातां) वायुरहित (मिहं आ कृण्वन्ति) वर्षाको चहुं ओर कर डालते हैं, (सत्यं) यह सच बात है!

२८ (यत्) जब (एषां) इन मरुतों की सहायता से (वृष्टिः असर्जि) वर्षा का सृजन होता है, तब (वाश्राइव) रँभानेवाली गौ के समान (विद्युत) बिजली (मिमाति) बडा भारी शब्द करती है और (माता) माता (वत्सं न) जिस प्रकार बालक को अपने समीप रखती है, वैसे ही बिजली मेघों के समीप (सिषक्ति) रहती है।

२९ वे वीर मरुत् (यत्) जब (पृथिवीं भूमि को (व्युन्दन्ति गीली या आर्द्र कर डालते हैं, उस समय (उद-वाहेन पर्जन्येन) जल से भरे हुए मेघों से सूर्य को ढककर (दिवा चित्) दिन की वेला में भी (तमः कृण्वन्ति) अँधियारी फैलाते हैं।

भावार्थ— २७ मरुस्थल में वर्षा प्रायः नहीं होती है, परन्तु यदि मरुत् वैसा चाहें, तो वैसे ऊसर स्थान में भी वे धुआँधार बारिश कर सकते हैं। अभिप्राय यही है कि, बारिश होना या न होना मरुतों– वायुप्रवाहों– के अधीन है। यदि अनुकूल वायुप्रवाह बहने लग जायँ, तो वर्षा होने में देरी न लगेगी।

२८ जिस समय बडी भारी आँधी के पश्चात् वर्षा का प्रारम्भ होता है, उस समय बिजली की गर्जना सुनाई देती है और मेघवृन्दों में दामिनी की दमक दिखाई देती है। (यहाँ पर ऐसी कल्पना की है कि, बिजली मानो गाय है) वह जिस तरह अपने बछडे के लिए रँभाती है और अपने वत्स को समीप रखना चाहती है, उसी तरह बिजली मेघ का आलिंगन करती है।

२९ जिस वक्त मरुत् बारिश करने की तैयारीमें लगे रहते हैं, तब समूचा आकाश बादलोंसे आच्छादित हो जाता है, सूर्य का दर्शन नहीं होता है, अँधेरा फैल जाता है और तदुपरान्त वर्षा के फलस्वरूप भूमंडल गीला या पानी से तर हो जाता है।

टिप्पणी [२७] रुद्र= (रुद्-र) = रुलानेवाला। जो वीर होता है, वह शत्रुदलको रुलाता है, अतः वीरको रुद्र कहना उचित है। महारुद्र महावीर ही है। (रुत्-र) शब्द करनेवाला, वक्ता या उपदेशक। रुद्रिय= शत्रुदलको रुलानेवाले वीर से उत्पन्न वीर पुत्र, वीरों के अनुयायी। [२८] मिमाति= (मा=मापन करना, तुलना करना, सीमित करना, सन्दर रहना, तैयार करना, बनाना, दर्शाना, शब्द करना, गर्जना करना)=आवाज करती है। [२९] उदवाह=(उद-वाह) पानीको ढोनेवाला, मेघ।

(३०) अर्ध । स्वनात् । मरुताम् । विश्वम् । आ । सद्म । पार्थिवम् । अरेजन्त । प्र । मानुषाः ॥ १० ॥

(३१) मरुतः । वीळुपाणिऽभिः । चित्राः । रोधस्वतीः । अनु ।
यात । ईम् । अखिद्रयामऽभिः ॥ ११ ॥

(३२) स्थिराः । वः । सन्तु । नेमयः । रथाः । अश्वासः । एषाम् ।
सुऽसंस्कृताः । अभीशवः ॥ १२ ॥

अन्वयः- ३० मरुतां स्वनात् अधः पार्थिवं विश्वं सद्म आ (अरेजत). मानुषाः प्र अरेजन्त ।

३१ (हे) मरुतः ! वीळु-पाणिभिः चित्राः रोधस्वतीः अनु अ-खिद्र-यामभिः यात ईं ।

३२ एषां वः रथाः, नेमयः, अश्वासः, अभीशवः, स्थिराः सु संस्कृताः सन्तु ।

अर्थ- ३० (मरुतां स्वनात् अधः) मरुतों की दहाड या गर्जना के फलस्वरूप निम्न भागमें अवस्थित (पार्थिवं) पृथ्वी में पाये जानेवाला (विश्वं सद्म) समूचा स्थान (आ अरेजत) विचालित, विकंपित एवं स्पन्दमान हो उठता है और (मानुषाः प्र अरेजन्त) मानव भी काँप उठते हैं।

३१ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वीळु-पाणिभिः) बलयुक्त बाहुओं से युक्त तुम (चित्राः रोधस्वतीः अनु) सुंदर नदियों के तटोंपरसे (अ-खिद्र-यामभिः) बिना किसी थकावट के (यात ईं) गमन करो।

३२ (एषां वः रथाः) ये तुम्हारे रथ (नेमयः) रथ के आर तथा (अश्वासः) घोड़े एवं (अभीशवः) लगाम सभी (स्थिराः) दृढ तथा अटल और (सु संस्कृताः) ठीक प्रकार परिष्कृत हों।

भावार्थ- ३० तीव्र आँधी, बिजली की दहाड तथा चमकने से समूची पृथ्वी मानों विचलित हो उठती है और मनुष्य भी सहम जाते हैं, तनिक भयभीत से हो जाते हैं।

३१ इन वीरों के बाहुओं में बहुत भारी शक्ति है और इन बाहुबल से [illegible] हुए ये वीर नदियों के नयनमनोरम तट की राह से थकान की तनिक भी अनुभूति पाये बिना आगे बढ़ते जायें।

३२ वीरों के रथ, पहिये, आर, अश्व एवं लगाम सभी मज़बूत एवं सुसज्जित रहें। [illegible] सुशिक्षित हों तथा रथ जैसी चीजें भी सुहानेवाली एवं परिष्कृत हों।

टिप्पणी [३१] अ-खिद्र-यामन् = (खिद् दैन्ये, खिद् दैन्ये, [illegible]) खिन्न न होते हुए, अथक रूपसे, (अ-खिद्र-याम [illegible]। यहाँ पर वायु एवं वीर दोनों अर्थ सूचित हैं। (१) वायु के प्रवाह अपनी शक्तिसे गर्जना करते हुए [illegible] चले जाते बढ़ते हैं। [illegible] अर्थ है। (२) वीर पुरुष अपनेमें विद्यमान सामर्थ्यके कारण बिना [illegible] करते जाते हैं, अर्थात् शत्रुओं के प्रदेश में विद्यमान नदियों पर अपना प्रभुत्व [illegible] करते हैं। [illegible] चाहिए। ध्यानमें रहे कि तीन पक्ष इस प्रकार हैं- (१) [illegible] बुद्धि, मन, इन्द्रिय, प्राण तथा शरीर। (२) [illegible] समाजेद्वारा। (३) आधिदैवत = अग्नि, वायु, विद्युत, चन्द्र, सूर्य, [illegible] हैं।

(३३) अच्छ॑ । वद । तना॑ । गिरा । जरायै॑ । ब्रह्म॑णः । पति॑म् ।
अग्निम् । मित्रम् । न । दर्शतम् ॥ १३ ॥

(३४) मिमीहि । श्लोक॑म् । आस्ये॑ । पर्जन्यः॑ऽइव । ततनः॑ ।
गाय॑ । गायत्रम् । उक्थ्य॑म् ॥१४॥

(३५) वन्द॑स्व । मारु॑तम् । गणम् । त्वेषम् । पनस्युम् । अर्किण॑म् ।
अस्मे इति॑ । वृद्धाः । असन् । इह ॥ १५ ॥

अन्वयः- ३३ ब्रह्मणः पतिं अग्निं, दर्शतं मित्रं न, जरायै तना गिरा अच्छ वद ।
३४ आस्ये श्लोकं मिमीहि, पर्जन्यः इव ततनः, गायत्रं उक्थ्यं गाय ।
३५ त्वेषं पनस्युं अर्किणं मारुतं गणं वन्दस्व, इह अस्मे वृद्धाः असन् ।

अर्थ- ३३ (ब्रह्मणः पतिं) ज्ञान के अधिपति (अग्निं) अग्नि को अर्थात् नेता को (दर्शतं मित्रं न) [illegible] मित्र के समान (जरायै) स्तुति करने के लिए (तना) सातत्ययुक्त (गिरा) वाणी से [illegible] प्रमुखतया सराहते जाओ।

३४ [illegible] (आस्ये) मुँह के अन्दर ही (श्लोकं मिमीहि) श्लोक को भली भाँति नापजोखकर [illegible] (पर्जन्यः इव) मेघ के समान (ततनः) विस्तारित करो। वैसे ही (गायत्रं) गायत्री [illegible] (उक्थ्यं) काव्य का (गाय) गायन करो।

३५ [illegible] (त्वेषं) तेजयुक्त (पनस्युं) स्तुत्य अथवा सराहनीय तथा (अर्किणं) पूजनीय ऐसे (मारुतं [illegible]) [illegible] समुदायका (वन्दस्व) अभिवादन करो। (इह) यहाँपर (अस्मे) हमारे [illegible] (वृद्धाः असन्) [illegible] रहें।

[illegible] ३३ अग्नि [' [illegible] ' (ऋ. ८।१०३।१४) मरुतोंका मित्र है, तथा] ज्ञानका स्वामी है। इसलिए [illegible] करनी चाहिए।

[illegible] श्लोक तैयार कर रखे और वह कंठस्थ या मुखस्थ हो। यह आवश्यक है [illegible] पुरुष की महनीयता का बखान किया हो। जैसे वर्षा का प्रारंभ होने पर [illegible] का वायुमण्डल फैला रहता है, उसी प्रकार इस श्लोक का [illegible] और अर्थ की [illegible] सब को बतलाकर उन के [illegible] श्लोक बनाये जायँ, उन का गायन विभिन्न स्वरों में करो।

[illegible] प्रशंसा के योग्य तथा आदरसत्कार के अधिकारी जो [illegible] है। अतः तुम [illegible] करो, तथा तुम इन [illegible] वृद्ध, वीर्यवृद्ध, धनवृद्ध तथा कर्मवृद्ध महान पुरुष [illegible]

[illegible] ३३ [illegible] पद का अर्थ ' [illegible] ' किया है। (१) [illegible]

(ऋ. १।३९।१-१०)

(३६) प्र । यत् । इत्था । पराऽवतः । शोचिः । न । मानम् । अस्यथ ।
कस्य । क्रत्वा । मरुतः । कस्य । वर्पसा । कम् । याथ । कम् । ह । धूतयः ॥ १ ॥

(३७) स्थिरा । वः । सन्तु । आयुधा । पराऽनुदे । वीळु । उत । प्रतिऽस्कभे ।
युष्माकम् । अस्तु । तविषी । पनीयसी । मा । मर्त्यस्य । मायिनः ॥ २ ॥

अन्वयः- ३६ (हे) धूतयः मरुतः ! यत् मानं परावतः इत्था शोचिः न प्र अस्यथ, कस्य क्रत्वा, कस्य वर्पसा, कं याथ, कं ह ? ३७ वः आयुधा परा-नुदे स्थिरा, उत प्रतिष्कभे वीळु सन्तु, युष्माकं तविषी पनीयसी अस्तु, मायिनः मर्त्यस्य मा।

अर्थ- ३६ हे (धूतयः मरुतः !) शत्रुदल को विकंपित तथा विचलित करनेवाले वीर मरुतो ! (यत्) जब तुम अपना (मानं) बल (परावतः इत्था) अत्यन्त सुदूर स्थान से इस भाँति (शोचिः न) बिजली के समान (प्र अस्यस्थ) यहाँ पर फेंकते हो, तब यह (कस्य क्रत्वा) भला किस कार्य तथा उद्देश्य को लक्ष्य में रख, (कस्य वर्पसा) किस की आयोजना से अथवा (कं याथ) किसकी तरफ तुम चल रहे हो या (कं ह) तुम्हें किस के निकट पहुँच जाना है, अतः तुम ऐसा कर रहे हो ?

३७ (वः आयुधा) तुम्हारे हथियार (परा-नुदे) शत्रुदल को हटाने के लिए (स्थिरा) अटल तथा सुदृढ रहें, (उत) और (प्रतिष्कभे) उनकी राह में रुकावटें खडी करने के लिए प्रतिबंध करने के लिए (वीळु सन्तु) अत्यधिक बलयुक्त एवं शक्तिसंपन्न भी हों। (युष्माकं तविषी) तुम्हारी शक्ति या सामर्थ्य (पनीयसी अस्तु) अतीव प्रशंसार्ह और सराहनीय हो; (मायिनः) कपटी (मर्त्यस्य) लोगों का बल (मा) न बढे।

भावार्थ- ३६ (आधिदैवत) वायुके प्रवाह जब बहुत वेगसे संचार करना शुरु करते हैं, तब मनमें यह प्रश्न उठे बिना नहीं रहता है कि, भला ये कहाँ और किसके समीप चले जाना चाहते हैं, तथा उनके गन्तव्य स्थानमें क्या रखा होगा, कौनसी इन्हें कार्यरूपमें परिणत करनी होगी ? नहीं तो उनके ऐसे वेगसे बहते रहनेका अन्य प्रयोजन क्या हो सकता है ? (आधिभूतमें) जिस समय वीर पुरुष शत्रुदल को मटियामेट करनेके लिए उनपर धावा करना प्रारम्भ करते हैं, तब वे शूर मानव अपना सारा बल उसी कार्य पर पूर्णरूपेण केन्द्रित करते हैं। ऐसे अवसर पर यह अत्यन्त आवश्यक है कि, वे सर्वप्रथम यह पूरी तरह निश्चित कर लें कि, किस हेतु की पूर्ति के लिए यह चढाई करनी है, कितनी सफलता मिलनी चाहिए, किस स्थल पर पहुँचना है और बीच में किस की सहायता लेनी पडेगी। पश्चात् वह निर्धारित योजना फली-भूत हो जाए, इस ढंग से कार्यवाही प्रारम्भ कर दें। वीरों के लिए यह उचित है कि, वे निश्चयात्मक हेतु से प्रभावित हो, विशिष्ट कार्य को सफलतापूर्वक निष्पन्न करने के लिए ही अपना आंदोलन प्रवर्तित करें, व्यर्थ ही खटाटोप या गीदड भभकी न करें, क्योंकि उतावलापन एवं अविचारिता से सदैव हानि उठानी पडती है।

३७ वीर पुरुष अपने हथियारों एवं शस्त्रास्त्रों को बलयुक्त बीहड तथा शत्रुओंके शस्त्रोंसे भी अपेक्षाकृत अधिक कार्यक्षम बना दें। वे सदाके लिए सतर्क एवं सचेष्ट रहें कि, वे शत्रुदलसे मुठभेड या भिडंत करते समय यथेष्ट मात्रामें प्रभावशाली ठहरें। (ध्यान में रखना चाहिए कि, कदापि विरोधी तथा शत्रुसेनाके हथियार अपने हथियारों से बढकर प्रबल तथा प्रभावशाली न होने पाएँ) और कपटाचारमें न झिझकनेवाले शत्रुओंका बल कभी न वृद्धिगत हो।

टिप्पणी- [३६] (१) धूति= (धू कम्पने) = हिलानेवाला, कंपित करनेवाला। (२) मानं= (मन्-ज्ञाने) मनन करने के लिए उचित, प्रमाणबद्ध, बल। (३) वर्पस्= (वप्-रूप-आकार, रूप: आयोजना, युक्ति, कपटयोजना, कपटपूर्ण प्रयोग। [३७] (१) परा-नुदे = (परा-नुद्) शत्रुको दूर हटाना। (२) प्रतिष्कभ् = (प्रति-स्कम्भ्) = विरुद्ध खडे हो जाना, उसी दिशामें शक्तिको प्रचलित करना, शत्रुके खिलाफ अपना दल किसी निर्धारित आयोजनासे प्रयुक्त करना, शत्रुको

(३८) परा । ह । यत् । स्थिरम् । हथ । नरः । वर्तयथ । गुरु ।
वि । याथन । वनिनः । पृथिव्याः । वि । आशाः । पर्वतानाम् ॥ ३ ॥

(३९) नहि । वः । शत्रुः । विविदे । अधि । द्यवि । न । भूम्याम् । रिशादसः ।
युष्माकम् । अस्तु । तविषी । तना । युजा । रुद्रासः । नु । चित् । आऽधृषे ॥ ४ ॥

(४०) प्र । वेपयन्ति । पर्वतान् । वि । विञ्चन्ति । वनस्पतीन् ।
प्रो इति । आरत । मरुतः । दुर्मदाःऽइव । देवासः । सर्वया । विशा ॥ ५ ॥

अन्वयः- ३८ (हे) नरः ! यत् स्थिरं परा हत, गुरु वर्तयथ, पृथिव्याः वनिनः वि याथन, पर्वतानां आशाः वि (याथन) ह। ३९ (हे) रिश-अदसः ! अधि द्यवि वः शत्रुः नहि विविदे, भूम्यां न, (हे) रुद्रासः ! युष्माकं युजा आधृषे तविषी नु चित् तना अस्तु। ४० (हे) देवासः मरुतः ! दुर्मदाःइव, पर्वतान् प्र वेपयन्ति, वनस्पतीन् वि विञ्चन्ति, सर्वया विशा प्रो आरत।

अर्थ- ३८ हे (नरः !) नेता वीरो ! (यत्) जब तुम (स्थिरं) स्थिर रूप से अवस्थित शत्रु को (परा हत) अत्यधिक मात्रा में विनष्ट करते हो, (गुरु) बलिष्ठ शत्रु को भी (वर्तयथ) हिला देते हो, विकंपित कर डालते हो और (पृथिव्याः वनिनः) भूमंडलपर विद्यमान अरण्यों के वृक्षों को भी (वि याथन) जडमूल से उखाड फेंक देते हो, तब (पर्वतानां आशाः) पर्वतों के चतुर्दिक् (वि [याथन] ह) तुम सुगमता से निकल जाते हो।

३९ हे (रिश--अदसः !) शत्रु को नष्ट करनेवाले वीरो ! (अधि द्यवि) द्युलोक में तो (वः शत्रुः) तुम्हारा शत्रु (नहि विविदे) अस्तित्व में ही नहीं पाया जाता है और (भूम्यां न) भूमंडलपर भी नहीं विद्यमान है; हे (रुद्रासः !) शत्रु को रुलानेवाले वीरो ! (युष्माकं युजा) तुम्हारे साथ रहते हुए (आधृषे) शत्रुओं को तहसनहस करने के लिए मेरी (तविषी) शक्ति (नु चित् तना अस्तु) शीघ्रही विस्तारशील तथा बढनेवाली हो जाए।

४० हे (देवासः मरुतः !) वीर मरुतो ! (दुर्मदाः इव) बल के कारण मतवाले हुए लोगों के समान तुम्हारे वीर (पर्वतान् प्र वेपयन्ति) पर्वतों को भी प्रचलित कर देते हैं, हिला देते हैं और (वनस्पतीन् वि विञ्चन्ति) पेडों को उखाडकर दूर फेंक देते हैं, इसलिए तुम (सर्वया विशा) समूची जनता के साथ मिलजुलकर (प्रो आरत) प्रगति करते चलो।

भावार्थ- ३८ वीर पुरुष सदैव स्थिर एवं प्रबल शत्रुको भी विचलित करनेकी क्षमता रखते हैं, वनोंमेंसे सडकों का निर्माण करते हैं और पर्वतोंके मध्यसे भी लीलयैव दूसरी ओर चले जाते हैं, तथा शत्रुसंघ पर आक्रमणका सूत्रपात करते हैं।

३९ वीरों का यह अनिवार्य कर्तव्य है कि, वे अपने शत्रुओं का समूल विनाश करें, कहीं भी उन्हें रहने के लिए स्थान न दें और उनका आमूलचूल विध्वंस कर चुकने पर ही अपनी शक्ति को बढाते चलें।

४० बल अत्यधिक बढ जाने से तनिक मतवाले से बनकर वीर पुरुष शत्रुदल पर आक्रमण करते समय पर्वतों को भी विकंपित कर देते हैं और मार्ग पर पाये जानेवाले वृक्षों को भी उखाडकर हटा देते हैं। ऐसे बल की आवश्यकता रखनेवाले कार्यों की पूर्ति करना उनके लिए संभव है, अतः वे सारी जनता के सहयोग की सहायतासे ऐसी कार्यसिद्धि में अपना बल लगा देवें कि अन्तमें सबकी प्रगति हो। व्यर्थ ही उत्पात तथा विध्वंस-कार्यों में उलझे न रहें। (वायु जिस तरह वेगवान् बनने पर पेडों को तोडमरोड देती है, ठीक उसी प्रकार ये वीर भी शत्रुदल को विनष्ट कर देते हैं।)

राहमें रोडे अटकाना, उसे रोक देना। (३) मायिन् =(माया = चतुराई, कौशल्य, युक्ति, कपट) = कुशल, युक्तिमान्, कपटी। [३९] (१) आधृष् = धैर्य, आक्रमण, धावा करना, चढाई करना और शत्रुको जड मूल से उखाड देना।

(४१) उपो इति । रथेषु । पृषतीः । अयुग्ध्वम् । प्रष्टिः । वहति । रोहितः ।
आ । वः । यामाय । पृथिवी । चित् । अश्रोत् । अबीभयन्त । मानुषाः ॥ ६ ॥
(४२) आ । वः । मक्षु । तनाय । कम् । रुद्राः । अवः । वृणीमहे ।
गन्त । नूनम् । नः । अवसा । यथा । पुरा । इत्था । कण्वाय । बिभ्युषे ॥ ७ ॥
(४३) युष्माऽइषितः । मरुतः । मर्त्यऽइषितः । आ । यः । नः । अभ्वः । ईषते ।
वि । तम् । युयोत । शवसा । वि । ओजसा । वि । युष्माकाभिः । ऊतिऽभिः ॥ ८ ॥

अन्वयः— ४१ रथेषु पृषतीः उपो अयुग्ध्वं, रोहितः प्रष्टिः वहति, वः यामाय पृथिवी चित् आ अश्रोत्, मानुषाः अबीभयन्त । ४२ हे रुद्राः ! तनाय कं मक्षु वः अवः आ वृणीमहे, यथा पुरा बिभ्युषे कण्वाय नूनं गन्त इत्था अवसा नः [गन्त] । ४३ (हे) मरुतः ! यः अभ्वः युष्मा- इषितः मर्त्य-इषितः नः आ ईषते, तं शवसा वि युयोत, ओजसा वि (युयोत), युष्माकाभिः ऊतिभिः वि (युयोत) ।

अर्थ- ४१ तुम (रथेषु) अपने रथों में (पृषतीः) चित्रविचित्र बिन्दुओंसहित घोडियाँ या हरिनियाँ (उपो अयुग्ध्वं) जोड चुके हो और (रोहितः) लालवर्णवाला घोडा या हिरन (प्रष्टिः) धुरा को (वहति) खींच लेता है । (वः यामाय) तुम्हारे जानेका शब्द (पृथिवी चित्) भूमि (आ अश्रोत्) सुन लेती है, पर उस आवाज से (मानुषाः अबीभयन्त) सभी मानव भयभीत हो उठते हैं ।

४२ हे (रुद्राः !) शत्रु को रुलानेवाले वीर मरुद्गण ! (तनाय कं) हमारे बालबच्चों का कल्याण तथा हित होवे, इसलिए (मक्षु) बहुत ही शीघ्र हमें (वः अवः) तुम्हारा संरक्षण मिल जाए, ऐसा (आ वृणीमहे) हम चाहते हैं; (यथा पुरा) जैसे पहले तुम (बिभ्युषे कण्वाय) भयभीत कण्व की ओर (नूनं गन्त) शीघ्र जा चुके थे, (इत्था) इसी प्रकार (अवसा) रक्षा करने की शक्ति के साथ (नः) हमारी ओर जितना जल्द हो सके, उतना आ जाओ ।

४३ हे (मरुतः !) वीर मरुत्संघ ! (यः अभ्वः) जो [illegible] (युष्मा-इषितः) तुमसे फेंका हुआ या (मर्त्य-इषितः) किसी अन्य मानवसे प्रेरित होता हुआ, अगर (नः आ ईषते) हमारे ऊपर आ गिरता हो, तो (तं) उसे (शवसा वि युयोत) अपने बलसे हटा दो, (ओजसा वि) अपने तेजसे दूर कर दो और (युष्माकाभिः ऊतिभिः) तुम्हारी संरक्षण [illegible] (वि) विनष्ट करो ।

भावार्थ- ४१ मरुतों के रथ में जो घोडियाँ या हिरनियाँ जोती जाती हैं, वे [illegible] हैं, और उन के अग्रभाग में धुरी उठाने के लिए [illegible] जाता है [illegible] लगता है, तब सारी पृथ्वी उन के शब्द को [illegible] सुन लेती है । [illegible] ही लगन जाते हैं, उन के [illegible] [illegible] है कि, मरुतों के वाहन [illegible] होते हैं [illegible] । [illegible] है । इस से निश्चित रूप से प्रतीत होता है कि, वे वीर [illegible] ।]

४२ [illegible]
[illegible] ।

४३ [illegible]
[illegible]

टिप्पणी- [४१] [illegible] [४२] [illegible] [४३] [illegible]
[illegible]

(४४) असा॑मि । हि । प्र॒ऽय॒ज्य॒व॒: । कण्व॑म् । द॒द । प्र॒ऽचे॒त॒स॒: ।
असा॑मिऽभिः । म॒रु॒तः । आ । न॒: । ऊ॒तिऽभि॑: । गन्त॑ । वृ॒ष्टिम् । न । वि॒ऽद्युत॑: ॥ ९ ॥

(४५) असा॑मि । ओज॑: । वि॒भृ॒थ॒ । सु॒ऽदा॒न॒व॒: । असा॑मि । धू॒त॒य॒: । शव॑: ।
ऋ॒षि॒ऽद्वि॒षे॑ । म॒रु॒तः । प॒रि॒ऽम॒न्यवे॑ । इषु॑म् । न । सृ॒ज॒त॒ । द्वि॒ष॑म् ॥ १० ॥

कण्वपुत्र पुनर्वत्स ऋषि (ऋ० ८।७।१—३६)

(४६) प्र । यत् । व॒: । त्रि॒ऽस्तुभ॑म् । इष॑म् । मरु॑तः । विप्र॑: । अक्ष॑रत् ।
वि । पर्व॑तेषु । रा॒ज॒थ॒ ॥ १ ॥

अन्वयः– ४४ (हे) प्र-यज्यवः प्र-चेतसः मरुतः ! कण्वं अ-सामि हि दद, अ-सामिभिः ऊतिभिः, विद्युतः वृष्टिं न, नः आ गन्त । ४५ (हे) सु-दानवः ! अ-सामि ओजः अ-सामि शवः विभृथ, (हे) धूतयः मरुतः ! ऋषि-द्विषे परि-मन्यवे, इषुं न, द्विषं सृजत । ४६ (हे) मरुतः ! यद् विप्रः वः त्रिष्टुभं इषं प्र अक्षरत्, पर्वतेषु वि राजथ ।

अर्थ– ४४ हे (प्र-यज्यवः) अतीव पूज्य तथा (प्र-चेतसः) उत्कृष्ट ज्ञानी (मरुतः !) वीर मरुतो ! (कण्वं) कण्व को जैसे तुमने (अ-सामि हि) पूर्ण रूपसे (दद) आधार या आश्रय दे दिया था, वैसेही (अ-सामिभिः ऊतिभिः) संरक्षणकी संपूर्ण एवं अविकल आयोजनाओं तथा साधनों से युक्त होकर (विद्युतः वृष्टिं न) बिजलियाँ वर्षाकी ओर जैसे चली जाती हैं, वैसे ही तुम (नः आगन्त) हमारी ओर आ जाओ।

४५ हे (सु-दानवः !) अच्छे दान देनेवाले वीर मरुत् ! (अ-सामि ओजः) अधूरा नहीं, ऐसा समूचा बल एवं (अ-सामि शवः) अविकल शक्ति (विभृथ) तुम धारण करते हो, हे (धूतयः मरुतः !) शत्रुदल को विकंपित करनेवाले वीर मरुद्गण ! (ऋषि-द्विषे) ऋषियों से द्वेष करनेवाले (परि-मन्यवे) क्रोधी शत्रु को धराशायी करने के लिए (इषुं न) बाण के समान (द्विषं) द्वेष करनेवाले शत्रु को ही (सृजत) उस पर छोड दो।

४६ हे (मरुतः) वीर मरुत गण ! (यत् विप्रः) जब ज्ञानी पुरुष (वः) तुम्हारे लिए (त्रिष्टुभं) त्रिष्टुभ् छन्द के बनाया हुआ स्तोत्र पढकर (इषं प्र अक्षरत्) अन्न अर्पण कर चुका, तब तुम (पर्वतेषु विराजथ) पर्वतों में विराजमान होते हो।

भावार्थ– ४४ पूजाई तथा ज्ञानविज्ञान से युक्त एवं विभूषित वीर लोग हमें सब प्रकार से सुरक्षित रखें और हमारी मदद करें।

४५ वीर मरुतों के समीप अविकल रूप से शारीरिक बल तथा अन्य सामर्थ्य भी है, किसी प्रकार की त्रुटि नहीं है। वे इस असीम सामर्थ्य का प्रयोग करके उस शत्रु को दूर हटा दें, जो ऋषियों का अर्थात् विद्वान् तथा श्रेष्ठ ज्ञानियों से द्वेषपूर्ण भाव रखता हो; या उसी पर दूसरे शत्रु को छोडकर उसे विनष्ट कर डाले।

४६ एक समय जब ज्ञानी उपासक ने मरुतों को लक्ष्य में रखकर त्रिष्टुभ छन्द का सामगायन किया और, उन्हें अन्न प्रदान किया तब वे वीर पर्वत श्रेणियों में आनन्दपूर्वक दिन बिताने लगे थे।

टिप्पणी— [४४] (१) अ-सामि= आधा नहीं, पूर्ण, पूर्णरूपेण। (२) प्र-चेतस्= ध्यानपूर्वक कार्य करनेवाला, बुद्धिमान्, ज्ञानी, सुधी, [illegible], अच्छे विचारवाला। (३) कण्व- देखो मंत्र ४२। [४५] इस मंत्रभाग में (ऋषि-द्विषे, परि-मन्यवे द्विषं सृजत) एक मननीय राजनैतिक तत्त्वका प्रतिपादन किया है कि, एक शत्रुको दूसरे शत्रुसे लडाकर दोनोंको भी हतबल करके परास्त करना।

४७) यत् । अङ्ग । तविषीऽयवः । यामम् । शुभ्राः । अचिध्वम् ।
नि । पर्वताः । अहासत ॥२॥

४८) उत् । ईरयन्त । वायुऽभिः । वाश्रासः । पृश्निऽमातरः ।
धुक्षन्त । पिप्युषीम् । इषम् ॥ ३ ॥

४९) वपन्ति । मरुतः । मिहम् । प्र । वेपयन्ति । पर्वतान् ।
यत् । यामम् । यान्ति । वायुऽभिः ॥ ४ ॥

अन्वयः- ४७ (हे) तविषी-यवः शुभ्राः अङ्ग ! यद् यामं अचिध्वं, पर्वताः नि अहासत ।
४८ वाश्रासः पृश्नि-मातरः वायुभिः उद् ईरयन्त, पिप्युषीं इषं धुक्षन्त ।
४९ मरुतः यद् वायुभिः यामं यान्ति, मिहं वपन्ति, पर्वतान् प्र वेपयन्ति ।

अर्थ- ४७ हे (तविषी-यवः) बलवान् (शुभ्राः) सुहानेवाले (अङ्ग) प्रिय तथा वीर मरुतो ! (यत्) जब तुम अपना (यामं) गमनके लिए निश्चित किया हुआ रथ (अचिध्वं) सुसज्ज करते हो, तब (पर्वता नि अहासत) पर्वत भी चलायमान हो उठते हैं।

४८ (वाश्रासः) गर्जना करनेवाले (पृश्नि-मातरः) भूमि को माता माननेवाले वीर मरुत् (वायुभिः) वायु-प्रवाहों की सहायता से (उद् ईरयन्त) मेघों को इधर-उधर ले चलते हैं और तदनुसार (पिप्युषीं इषं धुक्षन्त) पुष्टिकारक अन्न का सृजन करते हैं।

४९ (मरुतः) वीर मरुतों का यह दल (यत् वायुभिः) जब वायुओं के साथ (यामं यान्ति) दौडने लगते हैं, तब (मिहं वपन्ति) वे वर्षा करने लगते हैं, और (पर्वतान् प्र वेपयन्ति) पर्वतश्रेणियोंको कंपायमान कर देते हैं।

भावार्थ- ४७ बल बढानेवाले वीर जब शत्रु पर चढाई करने की लालसा से अपना रथ सुसज्जित कर देते हैं, तब ऐसा प्रतीत होने लगता है कि, मानों पहाड भी हिलने लगते हैं।

४८ पवन की झकोरों से बादल इधर-उधर जाने लगते हैं और कुछ काल के उपरान्त उन से वर्षा होती है, तथा अन्न भी यथेष्ट मात्रा में उत्पन्न होता है। इसी अन्न से जीवसृष्टि का भरणपोषण होता है। निस्संदेह मरुतों का यह कार्य वर्णनीय है।

टिप्पणी [४७] (१) तविषी-द्यु = (तविष = शक्ति, धैर्य, बल, सामर्थ्य, बलिष्ठ, स्वर्गः) शक्तिमान्, धीरवीर, उत्साह एवं उमंगसे भरा हुआ। (२) शुभ्र। = चमकीला तेजस्वी, सुन्दर, साफ सुथरा, सफेद, चन्दन, स्वर्ण, चाँदी। (शुभ्राः = शरीर पर चन्दन का लेप करनेवाले ?) शोभायमान। [४८] चूँकि इस मंत्र में ऐसा कहा है, (पृश्निमातरः वायुभिः उदीरयन्ते) अर्थात् वायु की लहरियों से मरुत् मेघों को तितरबितर कर देते हैं, अस्तव्यस्त कर डालते हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि, मरुत् एवं वायु दो विभिन्न वस्तुओं की सूचना देते हैं। अगले मंत्र पर की हुई टिप्पणी देख लीजिए। [४९] यहाँ पर यों बतलाया है कि, (मरुतः वायुभिः यान्ति) मरुत् वायुओं के साथ भागने लगते हैं और वर्षा का प्रारम्भ करते हैं। इस से ऐसी कल्पना करनेमें क्या हर्ज कि, मरुत् तथा वायु दोनों विभिन्न अर्थवाले शब्द हैं। इस बारे में ऊपर के मंत्र में बतलाया हुआ वर्णन देखिए और २१६ तथा २१७ संख्यावाले मंत्र भी देखिए, क्योंकि वहाँपर 'वातासः न' (वायुओं के समान वे मरुत् हैं) ऐसा कहा है।

(५०) नि । यत् । यामाय । वः । गिरिः । नि । सिन्धवः । विऽधर्मणे ।
महे । शुष्माय । येमिरे ॥ ५ ॥

(५१) युष्मान् । ऊँ इति । नक्तम् । ऊतये । युष्मान् । दिवा । हवामहे ।
युष्मान् । प्रऽयति । अध्वरे ॥ ६ ॥

(५२) उत् । ऊँ इति । त्ये । अरुणऽप्सवः । चित्राः । यामेभिः । ईरते ।
वाश्राः । अधि । स्नुना । दिवः ॥ ७ ॥

(५३) सृजन्ति । रश्मिम् । ओजसा । पन्थाम् । सूर्याय । यातवे ।
ते । भानुऽभिः । वि । तस्थिरे ॥ ८ ॥

अन्वयः— ५० यद् वः यामाय गिरिः नि, सिन्धवः वि-धर्मणे महे शुष्माय नि येमिरे।
५१ ऊतये युष्मान् उ नक्तं हवामहे, दिवा युष्मान् प्रयति अ-ध्वरे युष्मान् हवामहे।
५२ त्ये अरुण-प्सवः चित्राः वाश्राः यामेभिः दिवः अधि स्नुना उत् ईरते उ।
५३ सूर्याय यातवे रश्मिं पन्थां ओजसा सृजन्ति, ते भानुभिः वि तस्थिरे।

अर्थ— ५० (यद्) जब (वः यामाय) तुम्हारी गतिशीलता एवं प्रगति से भयभीत होकर (गिरिः नि) पर्वत एवं (वि-धर्मणे) विशेष ढंग से अपना धारण करनेवाले तुम्हारे (महे) बडे एवं महनीय (शुष्माय) बल से डरकर (सिन्धवः) नदियाँ (नि येमिरे) अपने आप को नियंत्रित कर देती हैं, [अर्थात् रुक जाती हैं, तब तुम यथेष्ट वर्षा करते हो ।]

५१ हमारी (ऊतये) रक्षा के लिए (युष्मान् उ) तुम्हें ही हम (नक्तं) रात्री के समय (हवामहे) बुलाते हैं, (दिवा) दिन की वेला में भी (युष्मान्) तुम्हें ही हम पुकारते हैं (प्रयति अ-ध्वरे) प्रारंभित हिंसारहित कर्मों के समय भी हम (युष्मान्) तुम्हीं को बुलाते हैं ।

५२ (त्ये) वे (अरुण-प्सवः) लालिमायुक्त (चित्राः) आश्चर्यकारक (वाश्राः) गर्जना करनेवाले वीर मरुत् (यामेभिः) अपने रथों में से (दिवः अधि) द्युलोक के ऊपर (स्नुना) पर्वतों की ऊँची चोटियों पर से (उद् ईरते उ) उडान लेने लगते हैं।

५३ (सूर्याय यातवे) सूर्यके जानेके लिए (रश्मिं पन्थां) किरणरूपी मार्गको (ओजसा सृजन्ति) जो अपनी शक्तिसे बना देते हैं, (ते) वे (भानुभिः वि तस्थिरे) तेजद्वारा संसारको व्याप्त कर देते हैं।

भावार्थ- ५० मरुतोंमें विद्यमान वेग तथा बलसे भयभीत होकर पर्वत स्थिर हुए और नदियाँ धीमी चालसे बहने लगीं। ५१ कार्य करते समय, दिन एवं रात्रीकी वेलामें अपने संरक्षणके लिए परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करनी चाहिए। ५२ लाल वर्णवाला गणवेश पहनकर और रथ पर बैठकर ये वीर पर्वतों परसे भी संचार करने लगते हैं। ५३ मरुतोंमें यह शक्ति विद्यमान है कि, वे सूर्यको भी प्रकाशका मार्ग बतलाते हैं और सभी जगह तेजस्वी किरणों को फैला देते हैं।

टिप्पणी- [५२] अरुण-प्सु = (अरुण-भास्) = लालवर्ण से युक्त, रक्तिम आभा से युक्त गणवेश पहननेवाले। [५३] चूंकि यहाँ यों बतलाया है कि, सूर्यसे प्रकाश को जानेके लिए मरुत् राह बना देते हैं, अतः एक विचारनीय प्रश्न उपस्थित होता है, क्या मरुत् वायु से भिन्न पर सूक्ष्म वायु के समान कोई तत्त्व है, जिस में वायु-सदृश लहरियाँ उत्पन्न होती हों ? (मंत्र ४८-४९ तथा ४१६-४१७ में दी हुई उपमाओं से प्रतीत होता है कि, वायु तथा मरुत् विभिन्न हैं।)

(५४) इमाम् । मे । मरुतः । गिरम् । इमम् । स्तोमम् । ऋभुक्षणः ।
इमम् । मे । वनत । हवम् ॥ ९ ॥

(५५) त्रीणि । सरांसि । पृश्नयः । दुदुह्रे । वज्रिणे । मधु । उत्सम् । कवन्धम् । उद्रिणम् ॥१०॥

(५६) मरुतः । यत् । ह । वः । दिवः । सुम्नऽयन्तः । हवामहे ।
आ । तु । नः । उप । गन्तन ॥ ११ ॥

(५७) यूयम् । हि । स्थ । सुऽदानवः । रुद्राः । ऋभुक्षणः । दमे ।
उत । प्रऽचेतसः । मदे ॥ १२ ॥

अन्वयः— ५४ (हे) मरुतः ! इमां मे गिरं वनत, (हे) ऋभु-क्षणः ! इमं स्तोमं, मे इमं हवम् वनत ।
५५ पृश्नयः वज्रिणे त्रीणि सरांसि, मधु उत्सं, उद्रिणं कवन्धं, दुदुह्रे ।
५६ (हे) मरुतः ! यत् ह वः सुम्नायन्तः दिवः हवामहे, आ तु नः उप गन्तन ।
५७ (हे) सु-दानवः रुद्राः ऋभु-क्षणः ! यूयं उत दमे मदे प्र-चेतसः स्थ ।

अर्थ— ५४ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (इमां मे गिरं) इस मेरी स्तुतिपूर्ण वाणी को (वनत) स्वीकार करो; हे (ऋभु-क्षणः !) शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्ज वीरो ! तुम (इमं स्तोमं) इस मेरे स्तोत्र का और (मे इमं हवं) मेरी इस प्रार्थनाका स्वीकार करो । ५५ (पृश्नयः) मरुतोंकी माताओंने (वज्रिणे) इन्द्रके लिए (त्रीणि सरांसि) तीन झीलें, (मधु) मिठासभरा (उत्सं) जलपूर्ण कुंड और (उद्रिणं) पानी से भरा हुआ (कवन्धं) जल धारण करनेवाला बृहदाकारपात्र या मेघ (दुदुह्रे) दोहन कर भरा है । ५६ हे (मरुतः) वीर मरुद्गण ! (यत् ह) जब (वः) तुम्हें, (सुम्नायन्तः) सुखी होनेकी लालसा करनेवाले हम (दिवः हवामहे) द्युलोक से बुलाते हैं, उस समय (आ तु) तुरन्त ही तुम (नः उप गन्तन) हमारे समीप आ जाओ । ५७ हे (सु-दानवः !) भली प्रकार दान देनेवाले (रुद्राः) शत्रुसंघ को रुलानेवाले तथा (ऋभु-क्षणः) शस्त्र धारण करनेवाले वीरो ! (यूयं उत हि) तुम सचमुचही जब अपने (दमे) घर में या यज्ञ में (मदे) आनन्द में रहते हो, एवं सोमरस का सेवन करते हो, तब (प्र-चेतसः स्थ) तुम्हारी बुद्धि अधिक चेतनायुक्त बन जाती है ।

भावार्थ- ५५ भूमि, गौ तथा वाणी मरुतोंकी माताएँ हैं । भूमिसे अन्न तथा जल, गौ से दुग्ध और वाणीसे ज्ञान की प्राप्ति होती है । तीनोंके तीन सेवनीय तथा उपादेय वस्तुएँ हैं । मरुतोंकी माताओंने त्रिविध दुग्धसे तीन झीलें भरकर तैयार कर रखी हैं ताकि वीर मरुतोंका भरणपोषण सुचारु रूपसे एवं भली भाँति हो जाए । ५७ ये वीर बडे ही उदार, शत्रुओं का नाश करनेवाले सदैव शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्ज हैं और जिस समय ये अपने प्रासादों में तथा निवासस्थलोंमें सुख-पूर्वक दिन बिताते हैं अथवा यज्ञभूमि में सोमरस का सेवन करते हैं, तब इनकी बुद्धि अतीव चेतनाशील होती है ।

टिप्पणी- [५४] ऋभु = कारीगर, कुशल, शोधक, लुहार, रथकार, बाण, वज्र । ऋभु-क्ष = इन्द्रका वज्र, शस्त्र; ऋभुक्षणः = शस्त्रधारी, कारीगरोंको आश्रय देनेवाले (मंत्र ५७ और ८३ देखिए) । [५५] (१) क-बन्ध = पानी इकट्ठा करनेके लिए बडा भारी कुंड या मेघ । [५६] यहाँ पर 'सुम्नायन्तः' पद पाया जाता है, जिसका कि अर्थ है सुख पाने के लिए सचेष्ट रहनेवाले । ध्यान में रहे कि 'सु-मन' (सुम्न) मन को भली भाँति संस्कारसम्पन्न करने से ही यह सुख मिल सकता है । यह अतीव महत्त्वपूर्ण तत्त्व कभी न भूलना चाहिए । 'सु-मन' तथा 'सुम्न' वास्तव में एक ही है । इस पद से हमें यह सूचना मिलती है कि, उत्तम ढंग से परिष्कृत मन ही सुख का सच्चा साधन है । इसलिए मंत्र ६० एवं ९७ देख लीजिए । [५७] (१) दम = इन्द्रियदमन, संयम, मनकी स्थिरता, गृह । (२) मद = प्रेम, गर्व, आनन्द, मधु, सोम एवं वीर्य ।

(६४) इमाः । ऊँ इति । वः । सुऽदानवः । घृतम् । न । पिप्युषीः । इषः ।
वर्धान् । काण्वस्य । मन्मऽभिः ॥ १९ ॥
(६५) क्व । नूनम् । सुऽदानवः । मदथ । वृक्तऽबर्हिषः । ब्रह्मा । कः । वः । सपर्यति ॥२०॥
(६६) नहि । स्म । यत् । ह । वः । पुरा । स्तोमेभिः । वृक्तऽबर्हिषः ।
शर्धान् । ऋतस्य । जिन्वथ ॥ २१ ॥
(६७) सम् । ऊँ इति । त्ये । महतीः । अपः । सम् । क्षोणी इति । सम् । ऊँ इति । सूर्यम् ।
सम् । वज्रम् । पर्वऽशः । दधुः ॥ २२ ॥

अन्वयः- ६४ (हे) सु-दानवः ! घृतं न पिप्युषीः इमाः इषः काण्वस्य मन्मभिः वः वर्धान्।
६५ (हे) सु-दानवः वृक्त-बर्हिषः ! क नूनं मदथ ? कः ब्रह्मा वः सपर्यति ?
६६ (हे) वृक्त-बर्हिषः ! नहि स्म, पुरा वः यत् ह स्तोमेभिः ऋतस्य शर्धान् जिन्वथ।
६७ त्ये महतीःअपः उ सं दधुः, क्षोणी सं, सूर्यं उ सं, वज्रं पर्वशः सं (दधुः)।

अर्थ— ६४ हे (सु-दानवः!) उत्तम दानी वीरो! (घृतं न) घीके समान (इमाः पिप्युषीः इषः) ये पुष्टिकारक अन्न (कण्वस्य मन्मभिः) कण्वपुत्र के मनन करनेयोग्य काव्य या स्तोत्रद्वारा (वः वर्धान्) तुम्हारे यशकी वृद्धि करें। ६५ हे (सु-दानवः) सुचारु रूपसे दान देनेवाले तथा (वृक्त-बर्हिषः!) कुशासनोंपर बैठनेवाले वीरो ! (क नूनं मदथ ?) भला तुम किधर हर्षित हो रहे थे ? (कः ब्रह्मा) भला वह कौन ब्राह्मण है, जो (वः सपर्यति) तुम्हारी पूजा उपासना करता है ? ६६ (वृक्त-बर्हिषः!) हे दर्भासनपर बैठनेवाले वीरो ! (नहि स्म) क्या यह सच नहीं है कि (यत् ह) सचमुच यहाँपर (पुरा) पहले तुम (वः स्तोमेभिः) अपने प्रशंसा करनेवाले अभिभाषणों से (ऋतस्य शर्धान्) सत्यके सैनिकोंको अर्थात् धर्म के लिए लडनेवाले सिपाहियोंको (जिन्वथ) प्रोत्साहित कर चुके हो। ६७ (त्ये) उन वीरोंने (महतीः अपः) बहुतसा जल (उ सं दधुः) धारण किया, (क्षोणी सं [दधुः]) पृथ्वी को धर दिया और(सूर्यं उ सं [दधुः]) सूर्यको भी आधार दिया; उन्होंनेही (वज्रं पर्वशः सं [दधुः]) अपने वज्रको हर पोरमें या गांठमें सुदृढ बना दिया है।

भावार्थ— ६४ उच्च कोटिके पुष्टिकारक अन्नोंके प्रदान एवं मननीय काव्योंके गायन से वीरोंका यश बढने लगता है। ६५ हे वीरो ! चूँकि तुम शीघ्र मेरे समीप नहीं आ सके, अतः यह सवाल हठात् मेरे मनमें उठ खडा होता है कि किस जगह भला ये आनन्दोल्लासमें चूर हो बैठे हों और शायद ऐसा कौन उपासक इनसे प्रार्थना करता होगा कि, वहांसे शीघ्र प्रस्थान करना इन वीरोंको दूभर प्रतीत होता हो। ६६ सद्धर्म के लिए लडनेवाले सैनिकोंको प्रोत्साहन मिले, इसलिए वीर उत्तम प्रभावोत्पादक भाषणों द्वारा उनका उत्साह बढाते हैं। ६७ इन मरुतोंने मेघोंको, द्यावापृथिवी को, सूर्यको अपनी अपनी जगह भली भाँति धर दिया है और उनका स्थान अटल तथा स्थिर किया है। इन्हीं वीर मरुतोंने अपने वज्र नामक शस्त्र को स्थानस्थानपर ठीक तरह जोडकर उसे बलिष्ठ बना डाला है। अन्य वीरभी अपने हथियार अच्छी तरह तैयार करनेमें सतर्क रहें और शत्रुके हथियारोंसे भी अत्यधिक मात्रामें उन्हें प्रबल तथा कार्यक्षम बना दें।

टिप्पणी— [६५] (१) वृक्त-बर्हिस्= आसनपर-दर्भासनपर बैठनेवाले, कुश फैलाकर बैठनेवाले। (२) ब्रह्मा= ज्ञानी, ब्राह्मण, याजक, उपासक, मंत्रज्ञ, यज्ञके श्रेष्ठ ऋत्विज्। [६६] (१) शर्धः=बल, सामर्थ्य, सैन्य। (२) ऋतस्य शर्धः= सत्यका बल, सत्यधर्मके लिए लडनेवाली सेना। (३) जिन्व्= आनंद देना, उत्साहित करना। [६७] (१) क्षोणी= पृथ्वी, द्यावापृथिवी [निघंटु ३।३०]।

(६८) वि । वृत्रम् । पर्वऽशः । ययुः । वि । पर्वतान् । अराजिनः ।
चक्राणाः । वृष्णि । पौंस्यम् ॥ २३ ॥

(६९) अनु । त्रितस्य । युध्यतः । शुष्मम् । आवन् । उत । क्रतुम् ।
अनु । इन्द्रम् । वृत्रऽतूर्ये ॥ २४॥

(७०) विद्युत्ऽहस्ताः । अभिऽद्यवः । शिप्राः । शीर्षन् । हिरण्ययीः ।
शुभ्राः । वि । अञ्जत । श्रिये ॥ २५ ॥

अन्वयः- ६८ वृष्णि पौंस्यं चक्राणाः अ-राजिनः वृत्रं पर्वशः वि ययुः, पर्वतान् वि (ययुः) ।
६९ युध्यतः त्रितस्य शुष्मं उत क्रतुं अनु आवन्, वृत्र-तूर्ये इन्द्रं अनु (आवन्)।
७० विद्युत्-हस्ताः अभि-द्यवः शुभ्राः शीर्षन् हिरण्ययीः शिप्राः श्रिये वि अञ्जत।

अर्थ— ६८ [वृष्णि] बलशाली [पौंस्यं] पौरुषपूर्ण कार्य [चक्राणाः] करनेवाले इन [अ-राजिनः] संघशासक वीरोंने [वृत्रं पर्वशः वि ययुः] वृत्रके हर गांठके टुकडे टुकडे किये और (पर्वतान् वि [ययुः]) पहाडों को भी विभिन्न कर राह बना डाली। ६९ [युध्यतः त्रितस्य] लडते हुये त्रितके [शुष्मं उत क्रतुं] बल एवं कार्यशक्ति का तुमने [अनु आवन्] संरक्षण किया और [वृत्र-तूर्ये] वृत्रहत्याके अवसरपर [इन्द्रं अनु] इन्द्र को भी सहायता दे दी। ७० [विद्युत्-हस्ताः] बिजलीकी नाईं चमकनेवाले हथियार हाथमें धारण करनेवाले [अभि-द्यवः] तेजस्वी तथा [शुभ्राः] गौरवर्णवाले ये वीर [शीर्षन्] अपने सरपर [हिरण्ययीः शिप्राः] सुवर्ण के बने साफे [श्रिये] शोभा के लिये [वि अञ्जत] रख देते हैं।

भावार्थ— ६८ ये वीर ऐसे पराक्रमपूर्ण कार्य कर दिखलाते हैं कि, जिनमें बल, वीर्य तथा शूरताकी अतीव आवश्यकता प्रतीत होती है। ये किसी एक नियामक राजाकी छत्रछायामें नहीं रहते हैं। [इन्हें संघशासक नाम दिया जा सकता है, अर्थात् इनका समूचा संघही इनपर शासन करता है। ऐसे] इन वीरोंने वृत्रके टुकडे टुकडे कर डाले और पर्वतोंका भेदन कर आगे बढने के लिए सडक बना दी। ६९ इन वीरोंने त्रित नरेश को लडाईमें सहायता पहुंचाकर उसके बल, उत्साह तथा कर्तृत्वशक्ति को अक्षुण्ण बना रखा, अतः त्रित विजयी बन गया और इसी भाँति इन्द्र को भी वृत्रवध के मौकेपर मदद करके उसे भी विजयी बना दिया। ७० ये वीर चमकीले शस्त्र हाथोंमें रखते हैं। ये तेजस्वी तथा गौरकाय हैं और उनके सिरपर स्वर्णमय शिरस्त्राण सुहाते हैं। अन्य वीर भी इसी भाँति अपने शस्त्रों को पुराने या जीर्ण होने न दें, सदैव विद्युल्लताके समान प्रकाशमान एवं चमकीले रूप में रख दें।

टिप्पणी— [६८](१) राजिन्= [राजः अस्य अस्तीति राजी]= जिनपर शासन चलाने के लिए राजा विद्यमान रहता है, वे 'राजिन्' कहलाते हैं। अ-राजिन्= [राजः स्वामी अस्य न विद्यते इत्यराजी।] जिनपर किसी एक व्यक्तिका शासन या नियंत्रण नहीं प्रस्थापित हुआ हो, जिनका सारा संघ या समुदायही हर व्यक्तिपर नियमन डालता हो। मरुत् संघवादी, संघशासक वीर थे और सब स्वयंही मिलकर शासनप्रबंध करते थे। मंत्र २९२ और ३९८ में 'स्व-राजः' पदसे यही भाव सूचित होता है। (२) वृष्णि= पौरुषयुक्त, बलशाली, सामर्थ्यवान्, क्रुद्ध, मेष, बैल, प्रकाशकिरण, वायु। (३) पौंस्य= पौरुषकृत्य, सामर्थ्य, वीर्य, पुरुषमें विद्यमान वीरता। [६९](१) शुष्मं= बल, सामर्थ्य, सैन्य। (२) क्रतु= कर्मशक्ति, कर्तृत्व, उत्साह, यज्ञ, बुद्धि। (३) त्रित= [त्रिभिस्त्रायते] तीन शक्तियों का उपयोग कर रक्षा करता है। एक नरेशका नाम [त्रिषु स्थानेषु तायमानः। सायण ऋ० ५।५४।२; २५१ मंत्र]। [७०](१) शिप्रा=शिरस्त्राण, पगडी, ठुड्डी, नासिका, शिरस्त्राणके मुँहपर आनेवाला जाला। (२) वि-अञ्ज्= सुशोभित करना, सजावट करना, अंजन लगाना, सुन्दर बनाना, व्यक्त करना। हिरण्ययीः शिप्राः व्यञ्जत= सुवर्णसे विभूषित या सुनहली पगडियोंसे ये दूसरों से पृथक् दीख पडते थे। जनताके मध्य इन वीरों को पहचानना इन्हीं सुनहले साफोंसे आसान हुआ करता। स्वर्णमय शिरोवेष्टनसे विभूषित इन वीरों के समुदाय को देखतेही लोग तुरन्त कहना शुरु करते 'लो भाई, ये वीर मरुत् हैं।'

(६४) इमाः । ऊँ इति । वः । सुऽदानवः । घृतम् । न । पिप्युषीः । इषः ।
वर्धान् । काण्वस्य । मन्मऽभिः ॥ १९ ॥

(६५) क्व । नूनम् । सुऽदानवः । मदथ । वृक्तऽबर्हिषः । ब्रह्मा । कः । वः । सपर्यति ॥२०॥

(६६) नहि । स्म । यत् । ह । वः । पुरा । स्तोमेभिः । वृक्तऽबर्हिषः ।
शर्धान् । ऋतस्य । जिन्वथ ॥ २१ ॥

(६७) सम् । ऊँ इति । त्ये । महतीः । अपः । सम् । क्षोणी इति । सम् । ऊँ इति । सूर्यम् ।
सम् । वज्रम् । पर्वऽशः । दधुः ॥ २२ ॥

अन्वयः- ६४ (हे) सु-दानवः ! घृतं न पिप्युषीः इमाः इषः काण्वस्य मन्मभिः वः वर्धान्।
६५ (हे) सु-दानवः वृक्त-बर्हिषः ! क्व नूनं मदथ ? कः ब्रह्मा वः सपर्यति ?
६६ (हे) वृक्त-बर्हिषः ! नहि स्म, पुरा वः यत् ह स्तोमेभिः ऋतस्य शर्धान् जिन्वथ।
६७ त्ये महतीःअपः उ सं दधुः, क्षोणी सं, सूर्यं उ सं, वज्रं पर्वशः सं (दधुः)।

अर्थ— ६४ हे (सु-दानवः!) उत्तम दानी वीरो ! (घृतं न) घीके समान (इमाः पिप्युषीः इषः) ये पुष्टिकारक अन्न (कण्वस्य मन्मभिः) कण्वपुत्र के मनन करनेयोग्य काव्य या स्तोत्रद्वारा (वः वर्धान्) तुम्हारे यशकी वृद्धि करें। ६५ हे (सु-दानवः) सुचारु रूपसे दान देनेवाले तथा (वृक्त-बर्हिषः!) कुशासनोंपर बैठनेवाले वीरो ! (क्व नूनं मदथ ?) भला तुम किधर हर्षित हो रहे थे ? (कः ब्रह्मा) भला वह कौन ब्राह्मण है, जो (वः सपर्यति) तुम्हारी पूजा उपासना करता है ? ६६ (वृक्त-बर्हिषः!) हे दर्भासनपर बैठनेवाले वीरो ! (नहि स्म) क्या यह सच नहीं है कि (यत् ह) सचमुच यहाँपर (पुरा) पहले तुम (वः स्तोमेभिः) अपने प्रशंसा करनेवाले अभिभाषणों से (ऋतस्य शर्धान्) सत्यके सैनिकोंको अर्थात् धर्म के लिए लडनेवाले सिपाहियोंको (जिन्वथ) प्रोत्साहित कर चुके हो। ६७ (त्ये) उन वीरोंने (महतीः अपः) बहुतसा जल (उ सं दधुः) धारण किया, (क्षोणी सं [दधुः]) पृथ्वी को धर दिया और(सूर्यं उ सं [दधुः]) सूर्यको भी आधार दिया; उन्होंनेही (वज्रं पर्वशः सं [दधुः]) अपने वज्रको हर पोरमें या गांठमें सुदृढ बना दिया है।

भावार्थ— ६४ उच्च कोटिके पुष्टिकारक अन्नोंके प्रदान एवं मननीय काव्योंके गायन से वीरोंका यश बढने लगता है। ६५ हे वीरो ! चूँकि तुम शीघ्र मेरे समीप नहीं आ सके, अतः यह सवाल हठात् मेरे मनमें उठ खडा होता है कि किस जगह भला ये आनन्दोल्लासमें चूर हो बैठे हों और शायद ऐसा कौन उपासक इनसे प्रार्थना करता होगा कि, वहांसे शीघ्र प्रस्थान करना इन वीरोंको दूभर प्रतीत होता हो। ६६ सद्धर्म के लिए लडनेवाले सैनिकोंको प्रोत्साहन मिले, इसलिए वीर उत्तम प्रभावोत्पादक भाषणों द्वारा उनका उत्साह बढाते हैं। ६७ इन मरुतोंने मेघोंको, द्यावापृथिवी को, सूर्यको अपनी अपनी जगह भली भाँति धर दिया है और उनका स्थान अटल तथा स्थिर किया है। इन्हीं वीर मरुतोंने अपने वज्र नामक शस्त्र को स्थानस्थानपर ठीक तरह जोडकर उसे बलिष्ठ बना डाला है। अन्य वीरभी अपने हथियार अच्छी तरह तैयार करनेमें सतर्क रहें और शत्रुके हथियारोंसे भी अत्यधिक मात्रामें उन्हें प्रबल तथा कार्यक्षम बना दें।

टिप्पणी— [६५] (१) वृक्त-बर्हिस्= आसनपर-दर्भासनपर बैठनेवाले, कुश फैलाकर बैठनेवाले। (२) ब्रह्मा= ज्ञानी, ब्राह्मण, याजक, उपासक, मंत्रज्ञ, यज्ञके श्रेष्ठ ऋत्विज्। [६६] (१) शर्धः=बल,सामर्थ्य, सैन्य। (२) ऋतस्य शर्धः= सत्यका बल, सत्यधर्मके लिए लडनेवाली सेना। (३) जिन्व्= आनंद देना, उत्साहित करना। [६७] (१) क्षोणी= पृथ्वी, द्यावापृथिवी [निघंटु ३।३०]।

(६८) वि । वृत्रम् । पर्वऽशः । ययुः । वि । पर्वतान् । अराजिनः ।
चक्राणाः । वृष्णि । पौंस्यम् ॥ २३ ॥

(६९) अनु । त्रितस्य । युध्यतः । शुष्मम् । आवन् । उत । क्रतुम् ।
अनु । इन्द्रम् । वृत्रऽतूर्ये ॥ २४॥

(७०) विद्युत्ऽहस्ताः । अभिऽद्यवः । शिप्राः । शीर्षन् । हिरण्ययीः ।
शुभ्राः । वि । अञ्जत । श्रिये ॥ २५ ॥

अन्वयः- ६८ वृष्णि पौंस्यं चक्राणाः अ-राजिनः वृत्रं पर्वशः वि ययुः, पर्वतान् वि (ययुः) ।
६९ युध्यतः त्रितस्य शुष्मं उत क्रतुं अनु आवन्, वृत्र-तूर्ये इन्द्रं अनु (आवन्)।
७० विद्युत्-हस्ताः अभि-द्यवः शुभ्राः शीर्षन् हिरण्ययीः शिप्राः श्रिये वि अञ्जत।

अर्थ— ६८ [वृष्णि] बलशाली [पौंस्यं] पौरुषपूर्ण कार्य [चक्राणाः] करनेवाले इन [अ-राजिनः] संघशासक वीरोंने [वृत्रं पर्वशः वि ययुः] वृत्रके हर गांठके टुकडे टुकडे किये और (पर्वतान् वि [ययुः]) पहाडों को भी विभिन्न कर राह बना डाली। ६९ [युध्यतः त्रितस्य] लडते हुये त्रितके [शुष्मं उत क्रतुं] बल एवं कार्यशक्ति का तुमने [अनु आवन्] संरक्षण किया और [वृत्र-तूर्ये] वृत्रहत्याके अवसरपर [इन्द्रं अनु] इन्द्र को भी सहायता दे दी। ७० [विद्युत्-हस्ताः] विजलीकी नाईं चमकनेवाले हथियार हाथमें धारण करनेवाले [अभि-द्यवः] तेजस्वी तथा [शुभ्राः] गौरवर्णवाले ये वीर [शीर्षन्] अपने सरपर [हिरण्ययीः शिप्राः] सुवर्ण के बने साफे [श्रिये] शोभा के लिये [वि अञ्जत] रख देते हैं।

भावार्थ— ६८ ये वीर ऐसे पराक्रमपूर्ण कार्य कर दिखलाते हैं कि, जिनमें बल, वीर्य तथा शूरताकी अतीव आवश्यकता प्रतीत होती है। ये किसी एक नियामक राजाकी छत्रछायामें नहीं रहते हैं। [इन्हें संघशासक नाम दिया जा सकता है, अर्थात् इनका समूचा संघही इनपर शासन करता है। ऐसे] इन वीरोंने वृत्रके टुकडे टुकडे कर डाले और पर्वतोंका भेदन कर आगे बढने के लिए सडक बना दी। ६९ इन वीरोंने त्रित नरेश को लडाईमें सहायता पहुंचाकर उसके बल, उत्साह तथा कर्तृत्वशक्ति को अक्षुण्ण बना रखा, अतः त्रित विजयी बन गया और इसी भाँति इन्द्र को भी वृत्रवध के मौकेपर मदद करके उसे भी विजयी बना दिया। ७० ये वीर चमकीले शस्त्र हाथोंमें रखते हैं। ये तेजस्वी तथा गौरकाय हैं और उनके सिरपर स्वर्णमय शिरस्त्राण सुहाते हैं। अन्य वीर भी इसी भाँति अपने शस्त्रों को पुराने या जीर्ण होने न दें, सदैव विद्युल्लताके समान प्रकाशमान एवं चमकीले रूप में रख दें।

टिप्पणी— [६८](१) राजिन्= [राजः अस्य अस्तीति राजी]= जिनपर शासन चलाने के लिए राजा विद्यमान रहता है, वे 'राजिन्' कहलाते हैं। अ-राजिन्= [राजः स्वामी अस्य न विद्यते इत्यराजी।] जिनपर किसी एक व्यक्तिका शासन या नियंत्रण नहीं प्रस्थापित हुआ हो, जिनका सारा संघ या समुदायही हर व्यक्तिपर नियमन डालता हो। मरुत् संघवादी, संघशासक वीर थे और सब स्वयंही मिलकर शासनप्रबंध करते थे। मंत्र २९२ और २९८ में 'स्व-राजः' पदसे यही भाव सूचित होता है। (२) वृष्णि= पौरुषयुक्त, बलशाली, सामर्थ्यवान्, क्रुद्ध, मेघ, बैल, प्रकाशकिरण, वायु। (३) पौंस्य= पौरुषत्व, सामर्थ्य, वीर्य, युद्धमें दिखलाई वीरता। [६९] (१) शुष्म= बल, सामर्थ्य, सैन्य। (२) क्रतु= कर्मशक्ति, कर्तृत्व, उत्साह, यज्ञ, बुद्धि। (३) त्रित= [त्रिभिस्तायते] तीन शक्तियों का उपयोग कर रक्षा करता है। एक नरेशका नाम [त्रिषु स्थानेषु तायमानः। सायन ऋ० ५।५४।२; २५१ मंत्र]। [७०] (१) शिप्रा= शिरस्त्राण, पगडी, ठुड्डी, नासिका, शिरस्त्राणके ऊपर आनेवाला जाल। (२) वि-अञ्ज्= सुशोभित करना, सजावट करना, अंजन लगाना, सुन्दर बनाना, स्पष्ट करना। हिरण्ययीः शिप्राः व्यञ्जत= सुवर्णसे विभूषित या सुनहली पगडियोंसे वे दूसरों से पृथक् दीख पडते थे। जनताके मध्य इन वीरों को पहचानना इन्हीं सुनहले साफोंसे आसान हुआ करता। स्वर्णमय शिरोवेष्टनसे विभूषित इन वीरों के समुदाय को देखतेही लोग तुरन्त कहना शुरु करते 'लो भाई, ये वीर मरुद् हैं।'

(७७) सहो इतिं । सु । नः । वज्रंऽहस्तैः । कण्वांसः ।
स्तुषे । हिरंण्यऽवाशीभिः ॥ ३२ ॥

(७८) ओ इतिं । सु । वृष्णः । प्रऽयंज्यून् । आ । नव्य
ववृत्याम् । चित्रऽवाजान् ॥ ३३ ॥

(७९) गिरयः । चित् । नि । जिहते । पर्शानासः । मन्य
पर्वताः । चित् । नि । येमिरे ॥ ३४ ॥

अन्वयः— ७७ नः कण्वासः ! वज्र-हस्तैः हिरण्य-वाशीभिः म
७८ वृष्णः प्र-यज्यून् चित्र-वाजान् नव्यसे सुविता
७९ मन्यमानाः पर्शानासः गिरयः चित् नि जिहते

अर्थ- ७७ हे (नः कण्वासः !) हमारे कण्वो ! (वज्र-हस्तैः
करनेवाले तथा सुवर्णरंजित कुल्हाडियों का उपयोग करनेवाले
मान (अग्निं) अग्नि की (सु स्तुषे) भली भाँति सराहना करो

७८ (वृष्णः) वीर्यवान् (प्र-यज्यून्) अत्यंत पूजनीय
बल से युक्त ऐसे तुम्हें (नव्यसे सुविताय) नये धन की प्राप्ति
आने के लिए आकर्षित करता हूँ ।

७९ (मन्यमानाः पर्शानासः) अभिमान करनेवाले
पर्वत भी इन वीरों के आगे (नि जिहते) अपने स्थानसे विच
पहाड भी (नि येमिरे) नियमपूर्वक रहते हैं ।

भावार्थ- ७७ ये वीर वज्र एवं कुठार को काम में लाते हैं और अग्नि
७८ ये वीर अतीव वीर्यवान्, पूजनीय तथा भाँति भाँति क
निकट आ जायँ और हमें नया धन प्रदान करें ।
७९ इन वीरों के आगे बडे बडे शिखरोंवाले पर्वत एवं छो
वीरों का पराक्रम इतना महान् है और इनमें इतना प्रचंड पुरुषार्थ समाय
इनके लिए कोई असंभव तथा दुरूह बात नहीं है, क्योंकि ये बडी सुगमता

टिप्पणी— [७७] (१) वाशी = (मश्नतीति वाशी) तेज, छुरी
मंत्र १५० वाँ देखिए। [illegible]

(८०) आ । अक्ष्णऽयावानः । वहन्ति । अन्तरिक्षेण । पततः ।
धातारः । स्तुवते । वयः ॥ ३५ ॥

(८१) अग्निः । हि । जानि । पूर्व्यः । छन्दः । न । सूरः । अर्चिषा ।
ते । भानुऽभिः । वि । तस्थिरे ॥ ३६ ॥

कण्वपुत्र सोभरि ऋषि (ऋ० ८।२०।१—२६)

(८२) आ । गन्त । मा । रिषण्यत । प्रऽस्थावानः । मा । अप । स्थात । सऽमन्यवः ।
स्थिरा । चित् । नमयिष्णवः ॥ १ ॥

अन्वयः— ८० अक्ष्ण-यावानः अन्तरिक्षेण पततः स्तुवते वयः धातारः आ वहन्ति ।

८१ अग्निः हि अर्चिषा छन्दः, सूरः न, पूर्व्यः जानि, ते भानुभिः वि तस्थिरे ।

८२ (हे) प्रस्थावानः ! आ गन्त, मा रिषण्यत, (हे) स-मन्यवः ! स्थिरा चित् नमयिष्णवः मा अप स्थात ।

अर्थ- ८० (अक्ष्ण-यावानः) नेत्रोंकी निगाह की नाईं अति वेगसे दौडनेवाले और (अन्तरिक्षेण पततः) आकाश में से उडनेवाले साधन (स्तुवते) उपासक के लिए (वयः धातारः) अन्न की समृद्धि करनेवाले इन वीरों को (आ वहन्ति) ढोते हैं ।

८१ (अग्निः हि) अग्नि सचमुच (अर्चिषा) तेज से (छन्दः) ढका हुआ है और (सूरः न) सूर्य के समान वह (पूर्व्यः जानि) पहले प्रकट हुआ तथा पश्चात् (ते भानुभिः) वे वीर मरुत् अपने तेजों से (वि तस्थिरे) स्थिर हो गये ।

८२ हे (प्रस्थावानः !) वेगपूर्वक जानेवाले वीरो ! (आ गन्त) हमारे समीप आओ (मा रिषण्यत) आने से इनकार न करो । हे (स-मन्यवः !) उत्साहसे परिपूर्ण वीरो ! (स्थिरा चित्) जो शत्रु स्थिर एवं अटल हो चुके हों, उन्हें भी (नमयिष्णवः) तुम झुकानेवाले हो, अतः हमारी यह प्रार्थना है कि, हम से तुम (मा अप स्थात) दूर न रहो ।

भावार्थ- ८० इन वीरों के वाहन बडे वेगवान् तथा तीक्ष्णगामी होते हैं और इन पर सवार हो [illegible] विहार करते हैं, तथा भक्तों को पर्याप्त अन्न देते हैं ।

८१ सूर्य के समान ही अग्नि अपने तेज से प्रकाशमान होता है और वह तो पहले पहले प्रकट हो जाता है । पश्चात् वीर मरुतों का समुदाय अपने अपने स्थान पर आ बैठ जाता है । (अध्यात्म - शरीर के भीतर में भी प्रथम उष्णता संचारित हुआ करती है और पश्चात् प्राणों का आगमन होता है । ध्यान में रहे कि, शरीर में प्राण मरुत् ही हैं ।)

८२ इन वीरों में इतनी क्षमता विद्यमान है कि, प्रबल तथा सुस्थिर शत्रु को भी वे विचलित कर सकते हैं । इनका यह महान् पराक्रम विख्यात है । हमारी चाह यह है कि, वे हमसे [illegible] ।

टिप्पणी- [८०] (१) अन्तरिक्षेण पततः अक्ष्णयावानः = आकाश में से उडनेवाले [illegible] समान अत्यन्त वेगवान् साधनों पर [illegible] के वीर [illegible] सेना में विचरण करते हैं [illegible] कि, विमानदल ही के द्वारा [illegible] [illegible] । [८२] (१) स्थिरा चित् नमयिष्णवः = [illegible] न करो । यदि वे हमसे [illegible] स्थानों में हमारी रक्षा [illegible] ।

(८३) वीळुपविऽभिः । मरुतः । ऋभुक्षणः । आ । रुद्रासः । सुदीतिऽभिः ।
इषा । नः । अद्य । आ । गत । पुरुऽस्पृहः । यज्ञम् । आ । सोभरीऽयवः ॥ २ ॥

(८४) विद्म । हि । रुद्रियाणाम् । शुष्मम् । उग्रम् । मरुताम् । शिमीऽवताम् ।
विष्णोः । एषस्य । मीळ्हुषाम् ॥ ३ ॥

अन्वयः— ८३ (हे) ऋभु-क्षणः रुद्रासः मरुतः ! सु-दीतिभिः वीळु-पविभिः आ गत, (हे) पुरु-स्पृहः सोभरीयवः ! नः यज्ञं अद्य इषा आ (गत) आ ।

८४ विष्णोः एषस्य मीळ्हुषां शिमीवतां रुद्रियाणां मरुतां उग्रं शुष्मं विद्म हि ।

अर्थ- ८३ हे (ऋभुक्षणः) । वज्रधारी (रुद्रासः) शत्रुसंघ को रुलानेवाले (मरुतः !) वीर मरुतो ! (सु-दीतिभिः) अतीव तेजस्वी (वीळु-पविभिः) सुदृढ वज्रों से युक्त होकर (आ गत) इधर आओ; हे (पुरु-स्पृहः) बहुतोंद्वारा अभिलषित तथा (सोभरीयवः !) सोभरी ऋषि पर अनुग्रह करनेकी इच्छा करनेवाले वीरो ! (नः यज्ञं) हमारे यज्ञस्थल में (अद्य) आज (इषा) अन्न के साथ (आ आ) आओ ।

८४ (विष्णोः एषस्य) व्यापक आकांक्षाओंकी पूर्ति करनेवाले, (मीळ्हुषां) वृष्टि करनेवाले, (शिमीवतां) उद्योगशील, (रुद्रियाणां) रुद्र के पुत्र ऐसे (मरुतां) मरुतों के (उग्रं) क्षत्रधर्मोचित वीर भाव पैदा करनेवाले (शुष्मं) बल को (विद्म हि) हम जानते ही हैं ।

भावार्थ- ८३ वज्र धारण करनेवाले तथा समूची जनता के प्यारे ये वीर मरुत् अपने तेजस्वी एवं प्रभावशाली हथियारों के साथ इधर चले आयँ और वे इस यज्ञ में यथेष्ट अन्न लायँ, ताकि यह यज्ञ यथोचित ढंग से परिपूर्ण हो जाए।

- ८४ मरुत् वर्षा करनेवाले, वीर, उद्योग में निरत तथा पराक्रमी हैं । उनका बल अनूठा है ।

टिप्पणी- [८३] (१) ऋभु-क्षणः = (ऋभु-क्षन्) 'ऋभु' से तात्पर्य है, कार्यकुशल कारीगर लोग । जिन के समीप ऐसे निष्णात कार्यकर्ताओं की उपस्थिति होती है और उन के भरणपोषण की व्यवस्था निष्पन्न हो जाती है, वे ऋभुक्षन् उपाधिधारी हो सकते हैं । ऋभुक्षणः = (ऋभु-क्ष) ऋभुओं अर्थात् शिल्पकारों के बनाये हुए शस्त्रों का उपयोग करनेवाले 'ऋभुक्षणः' कहे जा सकते हैं । ऋ-भु-क्षणः (उरु-भासमान-निवासाः) जिनके निवासस्थान विशाल हैं, वे (क्षि = निवासे) । (२) रुद्रासः = रुद्रः = (रोदयिता) शत्रुको रुलानेवाला वीर । (३) सु-दीतिः = भलीभाँति तेजधारा से युक्त शस्त्र, जिस के छूनेमात्र से शरीर का अंगभंग होना सम्भव है । (४) वीळु-पविः = प्रबल वज्र, बडा वज्र, एक फौलाद के बने हुए शस्त्र को वज्र कहते हैं, पवि = चक्र, पहिये की परिधि । 'वीळु, वीड्डु, वीलु, वीर.' सभी शब्द बडी भारी शक्ति की सूचना देनेवाले हैं । 'वीरता' से इन शब्दों का घनिष्ट संपर्क है । (५) सोभरि = (सु-भरि) भली भाँति अन्न का दान कर के निर्धन एवं असहाय का अच्छा भरणपोषण करनेवाला सुभरि या सोभरि है । जो इस प्रकार अन्न का दान करता हो, उसे मरुत् सभी प्रकार की सहायता पहुँचाते हैं । [८४] (१) शिमी = प्रयत्न, उद्यम, कर्म । (२) शिमी-वत् = उद्यमी, कर्ममें निरत, हमेशा अच्छे कार्य करनेवाला । (३) रुद्रिय = रुद्रके साथ रहनेवाले, महान् वीरके अनुयायी, बडे शूर एवं वीर रुद्रके पुत्र । (४) शुष्मं = शत्रुओं को सुखानेवाला बल । (५) विष्णोः एषस्य मीळ्हुषः = व्यापक आकांक्षाओं की पूर्ति करनेवाले ।

८५) वि। द्वीपानि। पापतन्। तिष्ठत्। दुच्छुना। उभे इति। युजन्त। रोदसी इति।
प्र। धन्वानि। ऐरत। शुभ्रऽखादयः। यत्। एजथ। स्वऽभानवः॥ ४॥

८६) अच्युता। चित्। वः। अज्मन्। आ। नानदति। पर्वतासः। वनस्पतिः।
भूमिः। यामेषु। रेजते॥ ५॥

अन्वयः— ८५ (हे) शुभ्र-खादयः स्व-भानवः! यत् एजथ, द्वीपानि वि पापतन्, तिष्ठत् दुच्छुना (युज्यते), उभे रोदसी युजन्त, धन्वानि प्र ऐरत।

८६ वः अज्मन् अ-च्युता चित् पर्वतासः वनस्पतिः आ नानदति, यामेषु भूमिः रेजते।

अर्थ- ८५ हे (शुभ्र-खादयः) सुफेद हस्तभूषण धारण करनेवाले (स्व-भानवः!) स्वयं तेजस्वी वीरो! (यत्) जब तुम (एजथ) जाते हो, शत्रुदल पर धावा बोलने के लिए हलचल करते हो, तब (द्वीपानि वि पापतन्) टापू तक नीचे गिर जाते हैं। (तिष्ठत्) सभी स्थावर चीजें (दुच्छुना) विपत्ति से युक्त बन जाते हैं; (उभे रोदसी) दोनों द्युलोक तथा भूलोक कांपने (युजन्त) लगते हैं। (धन्वानि) मरुभूमि की बालू (प्र ऐरत) अधिक वेग से उडने लगती है।

८६ (वः अज्मन्) तुम्हारी चढाई के मौके पर (अच्युता चित्) न हिलनेवाले बडे बडे (पर्वतासः) पहाड तथा (वनस्पतिः) पेड भी (आ नानदति) दहाडने लगते हैं, वैसेही तुम (यामेषु) जब शत्रुदलपर आक्रमणार्थ यात्रा करना शुरु करते हो, तब (भूमिः रेजते) पृथ्वी विकंपित हो उठती है।

भावार्थ- ८५ साफसुथरे गहने पहन कर ये तेजःपूर्ण वीर जब शत्रुदल पर चढाई करने के लिए अति वेग से प्रस्थान करना शुरु करते हैं, तब भूमि के ऊपरी भाग नीचे गिर पडते हैं, वृक्ष जैसे स्थावर भी टूट गिरते हैं, आकाश एवं पृथ्वी में कँपकँपी पैदा हो जाती है और रेगिस्तान की बालुका तक वेग से ऊपर उडने लगती है। इतनी भारी हलचल विश्व में मचा देने की क्षमता वीरों के आन्दोलन में रहती है।

८६ (आधिदैविक क्षेत्रमें) वायु जोर से बहने लग जाए, आँधी या तूफान प्रवर्तित हो जाए, तो पर्वतोंपर के वृक्ष तक डावाँडोल हो जाते हैं, तथा ऊँची पहाडी चोटियों पर पवन की गति अतीव तीव्र प्रतीत होती है। वृक्षों के परस्पर एक दूसरे से घिस जाने से भीषण ध्वनि प्रादुर्भूत होती है, तथा भूमि भी चलायमान प्रतीत होती है। (आधिभौतिक क्षेत्र में) शत्रुओं पर जब वीर सैनिक धावा बोलते हैं, तब दृढमूल होने पर भी शत्रु विचलित हो जडमूल से उखड जाता है।

टिप्पणी- [८५] (१) खादिः = वलय, कटक (हाथपैरों में पहननेयोग्य आभूषण)। नाना पदार्थ; मंत्र १६६ देखिए। वृषखादिः (११०), हिरण्यखादिः, सुखादिः (१५० २१८,), शुभ्रखादिः (८५) ऐसे पदप्रयोग मिलते हैं। खादि एक विभूषण है, जो हाथ में या पैर में पहना जाता है और कंगन, वलय, कटकसदृश 'खादि' एक आभूषणवाचक शब्द है। (२) शुभ्र-खादयः = चमकीले आभूषण धारण करनेवाले। (३) दुच्छुना = (दुः-शुना) = (पागल कुत्ता यदि पीछे पडे, तो होनेवाली दशा) संकटावस्था, दुरवस्था, दुःख, विपदा। (४) धन्वन् = रेगिस्तान, निर्जल भूविभाग, धूलिमय प्रदेश। (५) द्वीप=आश्रयस्थान, टीलवत्, टापू। [८६] (१) अच्युता नानदति = स्थिर तथा अटल पदार्थ (दहाडने) चीखने लगते हैं। (विशेषतया अलंकार देखनेयोग्य है)। (२) वनस्पतिः नानदति = पेडों के टूट गिरने से बड् बड् आवाज सुनाई देती है। (३) भूमिः रेजते = (भूमिः रेजते) = जो भूमि स्थिर एवं अटल दिखाई देती है, सो भी विकंपित तथा विचलित हो उठती है। (अच्युता) स्थिरीभूत एवं अपने पद पर दृढतया अवस्थित शत्रुओं को भी उखाड फेंक देना केवलमात्र महान् वीरों का कर्तव्य है।

(८७) अमा॑य । व॒ः । म॒रु॒त॒ः । यात॑वे । द्यौः । जिहीं॑ते । उत्ऽत॑रा । बृ॒हत् ।
यत्रे॑ । नरः॑ । देदि॑शते । त॒नूषु॑ । आ । त्वक्षां॑सि । बा॒हुऽओ॑जसः ॥ ६ ॥

(८८) स्व॒धाम् । अनु॑ । श्रिय॑म् । नरः॑ । महि॑ । त्वे॒षाः । अम॑ऽवन्तः । वृष॑ऽप्सवः ।
वह॑न्ते । अह्रु॑तऽप्सवः ॥ ७ ॥

(८९) गोभि॑ः । वा॒णः । अ॒ज्य॒ते । सोभ॑रीणाम् । रथे॑ । कोशे॑ । हि॒र॒ण्यये॑ ।
गोऽब॑न्धवः । सु॒ऽजा॒तास॑ः । इ॒षे । भु॒जे । म॒हान्त॑ः । न॒ः । स्पर॑से । नु ॥ ८ ॥

अन्वयः— ८७ (हे) मरुतः! वः अमाय यातवे यत्र बाहु-ओजसः नरः त्वक्षांसि तनूषु आ देदिशते, [illegible] द्यौः उत्तरा बृहत् जिहीते। ८८ त्वेषाः अम-वन्तः वृष-प्सवः अ-हुत-प्सवः नरः स्व-धां अनु श्रियं महि वहन्ति। ८९ सोभरीणां हिरण्यये रथे कोशे गोभिः वाणः अज्यते, गो-बन्धवः सु-जातासः महान्तः नः इषे भुजे स्परसे नु।

अर्थ- ८७ (हे मरुतः!) वीर मरुतो! (वः अमाय) तुम्हारी सेना को (यातवे) जानेके लिए (यत्र) जिस ओर (बाहु-ओजसः) बाहु-बल से युक्त (नरः) तथा नेता के पद पर आधिष्ठित तुम वीर (त्वक्षांसि) सभी शक्तियों को अपने (तनूषु) शरीरों में एकत्रित कर (आ देदिशते) प्रहार करते हो उधर (द्यौः) आकाश भी (उत्तरा) ऊपर ऊपर (बृहत्) विस्तृत एवं बृहदाकार बनते बनते (जिहीते) जा रहा है, ऐसा प्रतीत होता है। ८८ (त्वेषाः) तेजस्वी, (अमवन्तः) बलवान्, (वृष-प्सवः) [illegible] हृष्टपुष्ट तथा (अ-ह्रुत-प्सवः) सरल स्वभाववाले (नरः) नेताके नाते वीर (स्व-धां अनु) [illegible] शक्तिके अनुकूल अपनी (श्रियं महि) शोभा एवं आभाको अत्यधिक मात्रामें (वहन्ति) बढाते हैं। ८९ (सोभरीणां हिरण्यये रथे) ऋषि सोभरिके सुवर्णमय रथके (कोशे) आसनपर (गोभिः) स्वरों के [illegible] (वाणः अज्यते) वाण नामक बाजा बजाया जाता है, (गो-बन्धवः) गौके बंधु [illegible] समान आदर की दृष्टि से देखनेवाले (सु-जातासः) अच्छे कुल में उत्पन्न (महान्तः) और [illegible] प्रभावशाली ये वीर (नः इषे) हमारे अन्न के लिए (भुजे) भोगों के लिए तथा (स्परसे) [illegible] के लिए (नु) तुरन्त ही हमारे सहायक बनें।

भावार्थ- ८७ इन वीरों की सेना जिस ओर मुड कर जाने लगती है और जिस दिशा में ये वीर शत्रु पर धावा [illegible] है, [illegible] आकाश ही विस्तृत एवं चौडा मार्ग बना दे रहा है, ऐसा प्रतीत होता है। ८८ तेजपुञ्ज [illegible] सरल प्रकृतिवाले वीर अपनी शक्तिके अनुसार निज शोभा बढाते हैं। ८९ सोभरि [illegible] प्रमुख आसनपर बैठकर रमणीय गायनके स्वरोंसे वाण, बाजा बजाया जा[ता] है, [illegible] परिवारमें उत्पन्न महान वीर हमें अन्न, उपभोग तथा [illegible]

टिप्पणी- [८७] [illegible] बाहु-ओजसः = बाहुबलसे युक्त वीर। (२) त्वक्ष् = (तनूकरणे) निर्माण करना, [illegible] त्वक्षस् = [illegible] शक्ति निर्माण करनेकी कुशलता, रचनाचातुरी। (३) आदिश् [illegible] प्रहार करना, उपदेश करना, घोषणा करना। [८८] (१) अम-वान् [illegible] वृष-प्सु = (वृष = [illegible]) बैलके समान पुष्ट शरीरवाला, वर्षा करनेवाला, [illegible] अह्रुत-प्सु = [illegible] (३) प्सु = (प्सा = रूप-रंग) दिखाई देना, प्रतीत [illegible] स्व-धा = [illegible] शक्ति, अपनी धारक शक्ति। [८९] (१) गोः = (गो) शब्द [illegible] सुन्दर [illegible] बाजा बजाते हैं। [illegible] गो-बन्धु = गौके भाई, गाय अपनी बहन है, ऐसा मानकर [illegible]

(९०) प्रति । वः । वृषत्ऽअञ्जयः । वृष्णे । शर्धाय । मारुताय । भरध्वम् ।
हव्या । वृषऽप्रयाव्णे ॥ ९ ॥

(९१) वृषणश्वेन । मरुतः । वृषऽप्सुना । रथेन । वृषऽनाभिना ।
आ । श्येनासः । न । पक्षिणः । वृथा । नरः । हव्या । नः । वीतये । गत ॥ १० ॥

(९२) समानम् । अञ्जि । एषाम् । वि । भ्राजन्ते । रुक्मासः । अधि । बाहुषु ।
दविद्युतति । ऋष्टयः ॥ ११ ॥

अन्वयः- ९० (हे) वृषत्-अञ्जयः ! वः वृष्णे वृष-प्रयाव्णे मारुताय शर्धाय हव्या प्रति भरध्वं। ९१ (हे) नरः मरुतः ! वृषन्-अश्वेन वृष-प्सुना वृष-नाभिना रथेन नः हव्या वीतये, श्येनासः पक्षिणः न, वृथा आ गत। ९२ एषां अञ्जि समानं, रुक्मासः वि भ्राजन्ते, बाहुषु अधि ऋष्टयः दविद्युतति।

अर्थ- ९० (वृषत्-अञ्जयः !) सोम को सम्मानपूर्वक अर्पण करनेवाले हे याजको ! तुम (वः) तुम्हारे समीप आनेवाले (वृष्णे) बलवान् तथा (वृष-प्रयाव्णे) बैल के समान इठलाते हुए जानेवाले (मारुताय) मरुतों के समुदाय के (शर्धाय) बल बढाने के लिए (हव्या प्रति भरध्वं) हविर्द्रव्य प्रत्येक को पर्याप्त मात्रा में प्रदान करो।

९१ हे (नरः मरुतः !) नेतृत्वगुण से संपन्न वीर मरुतो ! (वृषन्-अश्वेन) बलिष्ठ घोडों से युक्त, (वृष-प्सुना) बैल के समान सुदृढ दिखाई देनेवाले (वृष-नाभिना) और प्रबल नाभि से युक्त (रथेन) रथसे (नः हव्या) हमारे हविर्द्रव्यों के (वीतये) सेवनार्थ (श्येनासः पक्षिणः न) बाज पंछियों की नाईं वेगसे (वृथा आ गत) विना किसी कष्ट के आओ।

९२ (एषां) इन सभी वीरों का (अञ्जि) गणवेश (समानं) एकरूप है, इनके गले में (रुक्मासः) सुवर्ण के बने हुए सुन्दर हार (वि भ्राजन्ते) चमकते हैं और (बाहुषु अधि) भुजाओं पर (ऋष्टयः) हथियार (दविद्युतति) प्रकाशमान हो रहे हैं।

भावार्थ- ९० शक्तिमान् तथा प्रतापी मरुतोंको याजक बडे सम्मान एवं आदरसे हविसे परिपूर्ण अन्नभाग पर्याप्त मात्रासे दें। ९१ बलवान् घोडों से युक्त एवं सुदृढ रथ पर बैठकर हविर्द्रव्य के सेवनार्थ वीर दुरत बहुत ... बडे वेगसे हमारे समीप आ जायँ। ९२ इन सभी वीरों की वेशभूषा में कहीं भी विभिन्नता का नाम तक नहीं पाया जाता है। इनके गणवेष की एकरूपता या समानता प्रेक्षणीय है। [देखो मंत्र १०२।] सब के गलेमें सुवर्ण के हार पडे हुए हैं और सभी के हाथों में तरल हथियार झिलमिल कर रहे हैं।

उसकी सेवा करनेवाले। उसी प्रकार गायको मातृवत् समझनेवाले। गो-मातरः मंत्र १२५ देखिए। (४) सु-जाताः= कुलीन, प्रतिष्ठित परिवारमें उत्पन्न। (५) हिरण्ययः रथ = सुवर्णका बनाया रथ, सोनेके समान चमकीला रथ, जिसपर सुवर्णके अलंकार या नक्काशीका काम किया हो। (६) स्वरम् = स्फूर्ति, उत्साह, स्फुरण। (७) खादिः =(हस्तकटकानि: ... वीणाविशेषः इति सायणभाष्ये; ऋ. १-८५-१०; ११) ... प्रतीत होता है, यह एक ... है, जो ... लगोंसे युक्त है। जैसे मराठी या सांगी बड़ लगोंसे युक्त है, वैसे ही ... १०० लगे होते हैं। [९०] १ अञ्ज्=तेल लगाना, दर्शाना, व्यक्त, चमकना, सम्मान देना; अञ्जि = ..., चमकीला, ..., अगुवा ... (Commander), लेप, रंग से युक्त लेप, कुंकुम, वीरों के सूचक ... चिह्न) ... रूप, ...। २ वृषत्, वृषन् = वीर्यवान्, समर्थ, शक्तिशाली, प्रमुख, बैल, घोडा, वर्षा करनेवाला, इन्द्र, मेघ। [९२] (१) रुक्म = मुद्राओं का हार, जिन पर किसी प्रकार की छाप दिखाई देती है, उन्हें 'रुक्म' कहते हैं। (२) ऋष्टिः = दो धारवाली तलवार, कृपाण, भाला, दुधारा खड्ग।

(९३) ते । उग्रासः । वृषणः । उग्रऽबाहवः । नकिः । तनूषु । येतिरे ।
स्थिरा । धन्वानि । आयुधा । रथेषु । वः । अनीकेषु । अधि । श्रियः ॥ १२ ॥

(९४) येषाम् । अर्णः । न । सऽप्रथः । नाम । त्वेषम् । शश्वताम् । एकम् । इत् । भुजे ।
वयः । न । पित्र्यम् । सहः ॥ १३ ॥

(९५) तान् । वन्दस्व । मरुतः । तान् । उप । स्तुहि । तेषाम् । हि । धुनीनाम् ।
अराणाम् । न । चरमः । तत् । एषाम् । दाना । मह्ना । तत् । एषाम् ॥ १४ ॥

अन्वयः-९३ उग्रासः वृषणः उग्र-बाहवः ते तनूषु नकिः येतिरे, वः रथेषु स्थिरा धन्वानि आयुधा, अनीकेषु अधि श्रियः। ९४ अर्णः न, स-प्रथः त्वेषं शश्वतां येषां नाम एकं इत् सहः, पित्र्यं वयः न, भुजे। ९५ तान् मरुतः वन्दस्व, तान् उपस्तुहि, हि धुनीनां तेषां, अराणां चरमः न, तत् एषां तत् एषां दाना मह्ना।

अर्थ- ९३ (उग्रासः) मनमें किंचित् भयका संचार करानेवाले, (वृषणः) बलिष्ठ, (उग्र-बाहवः) तथा सामर्थ्ययुक्त बाहुओंसे युक्त (ते) वे वीर मरुत् (तनूषु) अपने शरीरोंकी रक्षा करनेके कार्यमें (नकिः येतिरे) सुतरां प्रयत्न नहीं करते हैं। हे वीरो! (वः रथेषु) तुम्हारे रथोंमें (स्थिरा) अनेक अटल एवं दृढ (धन्वानि) धनुष्य तथा (आयुधा) कई हथियार हैं, अतएव (अनीकेषु अधि) सेना के अग्रभागों में तुम्हें (श्रियः) विजयजन्य शोभा अलंकृत करती है। ९४ (अर्णः न) हलचलसे युक्त जलप्रवाहकी नाईं (स-प्रथः) चतुर्दिक् फैलनेवाले (त्वेषं) तेजःपूर्ण ढंगका जो (शश्वतां येषां) इन शाश्वत वीरोंका (नाम) यशोवर्णन है, (एकं इत्) यही एकमात्र (सहः) सामर्थ्य देनेवाला है और (पित्र्यं वयः न) पितासे प्राप्त अन्न के समान (भुजे) उपभोगके लिए सर्वथैव योग्य है। ९५ (तान् मरुतः) उन मरुतोंका (वन्दस्व) अभिवादन करो, (तान् उपस्तुहि) उनकी सराहना करो, (हि) क्योंकि (धुनीनां तेषां) शत्रुओंको हिलानेवाले उन वीरोंमें (अराणां चरमः न) श्रेष्ठ एवं कनिष्ठ यह भेदभाव नहीं के बराबर है, अर्थात् सभी समान हैं और किसी भी प्रकारकी विषमता के लिए जगह नहीं है, (तत् एषां तत् एषां) इनके (दाना मह्ना) दान बडे महत्त्वपूर्ण होते हैं।

भावार्थ- ९३ ये वीर बडे ही बलिष्ठ तथा उग्र हैं और इनकी भुजाओं में असीम बल एवं शक्ति विद्यमान है। शत्रुदल से जूझते समय अपने प्राणों की भी पर्वाह ये नहीं करते हैं। इन के रथों में सुदृढ धनुष्य रखे जाते हैं, तथा हथियार भी पर्याप्त मात्रामें रखे जाते हैं। यही कारण है कि, युद्धभूमि में ये ही हमेशा विजयी ठहरते हैं। ९४ जिस में वीरों के तेजस्वी तथा शाश्वत यश का बखान किया हो, वही काव्य शक्ति बढाने में सहायक होता है। वह जलके समान सभी जगह फैलनेवाला तथा बपौती के जैसे भोग्य और स्फूर्तिदायक है। ९५ मरुतोंका अभिवादन करके उन की सराहना करनी चाहिए। सभी प्रकार के शत्रुओं को विकंपित तथा विचलित करने की क्षमता इन वीरों में है। उनमें किसी प्रकारकी विषमता नहीं है, अतः कोई भी ऊँचा या नीचा मरुतों के संघ में नहीं पाया जाता है। सभी साम्यावस्थाकी अनुभूति पाते हैं। इनके दान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होते हैं।

टिप्पणी [९३] (१) रथेषु स्थिरा धन्वानि = रथमें स्थायी एवं अटल धनुष्य रखे हुए हैं। ये धनुष्य बहुत प्रचंड आकारवाले होते हैं और इनसे बाण बहुत दूर तक फेंके जा सकते हैं। हाथोंसे काममें लानेयोग्य धनुष्य 'चल धनुष्य' कहे जाते हैं और इनमें तथा स्थिर धनुष्योंमें पर्याप्त विभिन्नता रहती है। (२) तनूषु नकिः येतिरे = शरीरकी बिलकुल पर्वाह नहीं करते, उदाहरणार्थ, आधुनिक युगके Storm Troopers जैसे। [९५] (१) अरः = अर्यः = स्वामी, श्रेष्ठ, आर्य। (२) चरमः = अन्तिम, हीन। समता- इस मंत्रमें बतलाया है कि, उनमें कोई न श्रेष्ठ है, न कनिष्ठ है, अर्थात् सभी समान हैं (तेषां अराणां चरमः न) यही भाव अधिक विस्तारपूर्वक मंत्र ३०५ तथा ४५३ में

(९६) सुऽभगः । सः । वः । ऊतिषु । आस । पूर्वासु । मरुतः । विऽउष्टिषु ।
यः । वा । नूनम् । उत । असति ॥ १५ ॥

(९७) यस्य । वा । यूयम् । प्रति । वाजिनः । नरः । आ । हव्या । वीतये । गथ ।
अभि । सः । द्युम्नैः । उत । वाजसातिऽभिः । सुम्ना । वः । धूतयः । नशत् ॥१६॥

(९८) यथा । रुद्रस्य । सूनवः । दिवः । वशन्ति । असुरस्य । वेधसः ।
युवानः । तथा । इत् । असत् ॥ १७ ॥

अन्वयः— ९६ (हे) मरुतः ! उत पूर्वासु व्युष्टिषु यः वा नूनं असति सः वः ऊतिषु सुभगः आस।

९७ (हे) धूतयः नरः ! यूयं यस्य वा वाजिनः हव्या वीतये आ गथ, सः द्युम्नैः उत वाज-सातिभिः वः सुम्ना अभि नशत्।

९८ असु-रस्य वेधसः रुद्रस्य युवानः सूनवः दिवः यथा वशन्ति तथा इत् असत्।

अर्थ- ९६ हे (मरुतः !) मरुतो ! (उत पूर्वासु व्युष्टिषु) पहले के दिनों में (यः) जो (वा नूनं असति) तुम्हारा ही बनकर रहा, (सः) वह (वः ऊतिषु) तुम्हारी संरक्षण की आयोजनाओं से सुरक्षित होकर सचमुच (सु-भगः आस) भाग्यशाली बन गया।

९७ हे (धूतयः नरः !) शत्रुओं को विकम्पित कर देनेवाले वीर नेतागण ! (यूयं) तुम (यस्य वा वाजिनः) जिस अन्नयुक्त पुरुष के समीप विद्यमान (हव्या) हविर्द्रव्यों के (वीतये) सेवनार्थ (आ गथ) आते हो, (सः) वह (द्युम्नैः) रत्नों के (उत) तथा (वाज-सातिभिः) अन्न-दानों के फलस्वरूप (वः सुम्ना) तुम्हारे सुखों को (अभि नशात्) पूर्ण रूपसे भोगता है।

९८ (असु-रस्य वेधसः) जीवन देनेवाले ज्ञानी (रुद्रस्य युवानः सूनवः) वीरभद्रके पुत्र तथा युवा वीर मरुत् (दिवः) स्वर्ग से आकर (यथा) जैसे (वशन्ति) इच्छा करेंगे, (तथा इत्) उसी प्रकार हमारा बर्ताव (असत्) रहे।

भावार्थ- ९६ यदि कोई एक बार इन वीरों का अनुयायी बन जाए, तो सचमुच उसे भाग्यवान् मानने में कोई आपत्ति नहीं। उस के भाग्य खुल जायेंगे, इस में क्या संदेह ?

९७ ये वीर जिस के अन्न का सेवन करते हैं, वह रत्न, अन्न तथा सुखोंसे पूर्ण होता है।

९८ दूसरों की रक्षा के लिए अपना जीवन देनेवाले रुद्रपुत्र वीर स्वर्ग [illegible] में से हमारे निकट आ जायँ और हमारा आचरण भी उन की निगाह में अनुकूल एवं प्रिय बने।

[illegible] किया है। उन्हें भी इस सम्बन्ध में देखना उचित है। इस [illegible] [illegible] [illegible] कि जिस प्रकार रथ के आरों में न कोई छोटा न कोई बड़ा होता है, वैसे ही वीर भी समान होते हैं [illegible] भावों से दोनों दूर रहते हैं। ४१८ वें मंत्र में भी [illegible] आरों की ही [illegible] है। [९६] (१) व्युष्टि= (वि+उष्टि)= [illegible], ऐश्वर्य, [illegible], स्तुति, [illegible], [illegible]। [९७] १ सुम्नं = [illegible], [illegible] (सु-म्न), [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible]। (२) द्युम्नं= (द्यु-म्नः) [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] (देखो १० वें मन्त्र की टिप्पणी)। ३ सातिः= [illegible], प्राप्ति, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible]। [९८] (१) असुर= (असु-र) जीवन देनेवाला, ईश्वर, (अ-सुरः) [illegible], [illegible]। २ वेधस्= [illegible] [illegible], कवि, निर्माण करनेवाला, [illegible]।

(९९) ये । च । अर्हन्ति । मरुतः । सुऽदानवः । स्मत् । मीळ्हुषः । चरन्ति । ये ।
अतः । चित् । आ । नः । उप । वस्यसा । हृदा । युवानः । आ । ववृध्वम् ॥१८॥

(१००) यूनः । ऊँ इति । सु । नविष्ठया । वृष्णः । पावकान् । अभि । सोभरे । गिरा ।
गाय । गाःऽइव । चर्कृषत् ॥१९॥

(१०१) सहाः । ये । सन्ति । मुष्टिहाऽइव । हव्यः । विश्वासु । पृत्ऽसु । होतृषु ।
वृष्णः । चन्द्रान् । न । सुश्रवःऽतमान् । गिरा । वन्दस्व । मरुतः । अह ॥२०॥

अन्वयः— ९९ ये सु-दानवः मरुतः अर्हन्ति, ये च मीळ्हुषः स्मत् चरन्ति, अतः चित् (हे) युवानः ! वस्यसा हृदा नः उप आ आ ववृध्वम् । १०० (हे) सोभरे ! यूनः वृष्णः पावकान् नविष्ठया गिरा चर्कृषत् गाःइव सु अभि गाय । १०१ होतृषु विश्वासु पृत्सु हव्यः मुष्टि-हा इव सहाः सन्ति, वृष्णः चन्द्रान् न सु-श्रवस्तमान् मरुतः अह गिरा वन्दस्व ।

अर्थ- ९९ (ये) जो (सु-दानवः मरुतः) भली भाँति दान देनेवाले मरुतोंका (अर्हन्ति) सत्कार करते हैं (ये च) और जो (मीळ्हुषः) उन दयासे पिघलनेवाले वीरों के अनुकूल (स्मत् चरन्ति) आचरण रखते हैं, हम भी ठीक उन्हींके समान वर्ताव रखते हैं, (अतः चित्) इसीलिए हे (युवानः !) नवयुवक वीरो ! (वस्यसा हृदा) उदार अन्तःकरणपूर्वक (नः) हमारी ओर (उप आ आ ववृध्वं) आगमन करके हमारी समृद्धि करो। १०० हे (सोभरे !) ऋषि सोभरि ! (यूनः) युवक (वृष्णः) बलवान् तथा (पावकान्) पवित्रता करनेवाले वीरों को लक्ष्य में रखकर (नविष्ठया गिरा) अभिनव वाणीसे, स्वरसे, (चर्कृषत्) खेत जोतनेवाला किसान (गाःइव) जिस प्रकार बैलों के लिए गाने या तराने कहता है, वैसे ही (सु अभि गाय) भली भाँति काव्य गायन करो। १०१ (होतृषु) शत्रु को चुनौती देनेवाले (विश्वासु पृत्सु) सभी सैनिकोंमें (हव्यः मुष्टि-हा इव) चुनौती देनेवाले मुष्टियोद्धा मल्लकी नाईं (सहाः सन्ति) जो शत्रुदल के भीषण आक्रमणको सहन करनेकी क्षमता रखते हैं, उन (वृष्णः) बलिष्ठ (चन्द्रान् न) चन्द्रमाके समान आनन्ददायक (सु-श्रवस्तमान्) निर्मल यश से युक्त (मरुतः अह) मरुत् वीरों की ही (गिरा वन्दस्व) सराहना अपनी वाणी से करो।

भावार्थ- ९९ वीर मरुत् दानी हैं और करुणाभरी निगाह से सहायता करते हैं। चूँकि हम उन का सत्कार करते हैं, अतः वे वीर हमारे समीप आ जायँ और हम पर अनुग्रह करें।

१०० हल चलाते समय जैसे काश्तकार बैलों को रिझाने के लिए गाना गाता रहता है, वैसे ही युवक, बलिष्ठ एवं पवित्र वीरों के वर्णनों से युक्त वीरगीतों का गायन तुम करते रहो।

१०१ शत्रुओं पर धावा करनेवाले सभी सैनिकों में जिस भाँति मुष्टियोद्धा पहलवान अधिक बलवान् होता है उसी प्रकार सभी वीर शत्रुदल का आक्रमण बरदाश्त कर सकें। ऐसे बलिष्ठ, आनन्द बढानेवाले तथा [illegible] वीरों की प्रशंसा करो।

टिप्पणी- [१००] इस मंत्र से यों ज्ञात पड़ता है कि, वैदिक युगमें खेतों में हल चलाते समय बैलों की थकान दूर करने के लिए गाने गाये जाते थे। ' नविष्ठया गिरा अभि गाय ' नये काव्य या गीत गाते रहो । इससे स्पष्ट होता है कि, नये वीर काव्यों का सृजन हुआ करता था और ऐसे नवनिर्मित वीरगाथाओं का गायन भी हुआ करता था। [illegible] देखो टिप्पणी ८३ मन्त्र पर)। [१०१] (१) मुष्टि-हा= घूँसा या मुक्कों से लडनेवाला (Boxer) । (२) होतृ =पुकारनेवाला, लडने के लिए शत्रुको चुनौती या आह्वान देनेवाला, देवोंको यज्ञ में बुलानेवाला। (३) सहाः = [illegible] हुए, शत्रुकी चढाई होनेपर अपनी जगह अटल रूपसे खडे रहकर शत्रुको ही मार भगानेवाला वीर।

(१०२) गावः । चित् । घ । सऽमन्यवः । सऽजात्येन । मरुतः । सऽबन्धवः ।
रिहते । ककुभः । मिथः ॥२१॥

(१०३) मर्तः । चित् । वः । नृतवः । रुक्मऽवक्षसः । उप । भ्रातृऽत्वम् । आ । अयति ।
अधि । नः । गात । मरुतः । सदा । हि । वः । आपिऽत्वम् । अस्ति । निऽध्रुवि ॥२२॥

(१०४) मरुतः । मारुतस्य । नः । आ । भेषजस्य । वहत । सुऽदानवः ।
यूयम् । सखायः । सप्तयः ॥ २३ ॥

अन्वयः— १०२ (हे) स-मन्यवः मरुतः ! गावः चित् स-जात्येन स-बन्धवः ककुभः मिथः रिहते घ।
१०३ (हे) नृतवः रुक्म-वक्षसः मरुतः ! मर्तः चित् वः भ्रातृत्वं उप आ अयति, नः अधि गात, हि वः आपित्वं सदा नि-ध्रुवि अस्ति ।
१०४ (हे) सु-दानवः सखायः सप्तयः मरुतः ! यूयं नः मारुतस्य भेषजस्य आ वहत ।

अर्थ- १०२ हे (स-मन्यवः मरुतः !) उत्साही वीर मरुतो ! (गावः चित्) तुम्हारी माताएँ गौएँ (स-जात्येन) एकही जाति की होने के कारण (स-बन्धवः) अपनेही ज्ञातिबांधवों को, बैलों को (ककुभः) विभिन्न दिशाओं में जाने पर भी (मिथः रिहते घ) एक दूसरे को प्रेमपूर्वकही चाटती रहती हैं।

१०३ हे (नृतवः) नृत्य करनेवाले तथा (रुक्म-वक्षसः मरुतः !) मुहरों के हार छाती पर धारण करनेवाले वीर मरुत् गण ! (मर्तः चित्) मानव भी (वः भ्रातृत्वं) तुम्हारे भाईपन को (उप आ अयति) पाने के लिए योग्य ठहरता है, इसीलिए (नः अधि गात) हमारे साथ रहकर गायन करो, (हि) क्योंकि (वः आपित्वं) तुम्हारी मित्रता (सदा) हमेशा (नि-ध्रुवि अस्ति) न टलनेवाली है ।

१०४ हे (सु-दानवः) दानी, (सखायः) मित्रवत् वर्ताव रखनेवाले तथा (सप्तयः) सात सात पुरुषों की एक पंक्ति बनाकर यात्रा करनेवाले (मरुतः !) वीर मरुतो ! (यूयं) तुम (नः) हमारे लिए (मारुतस्य भेषजस्य) वायु में विद्यमान औषधि द्रव्य को (आ वहत) ले आओ ।

भावार्थ- १०२ मरुतों की माताएँ-गौएँ भले ही किसी भी दिशा में चली जायँ, तो भी प्यार से एक दूसरे को चाटने लगती हैं । (अधिभूत में) वीरों की दयालु माताएँ अपने भाइयों, बहनों एवं वीर पुत्रों और सभी वीरोंको प्यार से गले लगाती हैं ।

१०३ वीर सैनिक हर्षपूर्वक नृत्य करनेवाले तथा कई अलंकार अपने वक्षःस्थल पर धारण करनेवाले हैं । मानव को भी उनकी मित्रता पाना सुगम है, योग्यता बढने पर वह मरुतों का साथी बन जाता है और वह मित्रतापूर्ण सम्बन्ध एक बार प्रस्थापित होने पर अटूट बना रहता है ।

१०४ ये वीर एक एक पंक्ति में सात सात इस तरह मिलकर चलनेवाले हैं और अच्छे ढंग के उदारदेता मित्र भी हैं । हमारी इच्छा है कि ये हमारे लिए वायुमंडल में विद्यमान औषधि को ले आयँ ।

टिप्पणी- [१०४] (१) मारुतस्य भेषजं= वायुमें रोग हटानेकी शक्ति है, इसी कारण वायु-परिवर्तनसे रोगसे पीडित व्यक्तियोंको निरोगिताकी प्राप्ति हो जाती है । यहाँ पर सूचना मिलती है कि, वायुके उचित सेवनसे रोग दूर किये जा सकते हैं । वायुचिकित्साकी झलक इस मंत्रमें मिलती है । (२) सप्ति= घोडा, सात लोगोंकी बनी हुई पंक्ति, गुट ।

(१०५) याभिः । सिन्धुम् । अवथ । याभिः । तूर्वथ । याभिः । दुशस्यथ । क्रिविम् ।
मयः । नः । भूत । ऊतिऽभिः । मयःऽभुवः । शिवाभिः । असचऽद्विषः ॥२४॥

(१०६) यत् । सिन्धौ । यत् । असिक्न्याम् । यत् । समुद्रेषु । मरुतः । सुऽबर्हिषः ।
यत् । पर्वतेषु । भेषजम् ॥ २५ ॥

(१०७) विश्वम् । पश्यन्तः । बिभृथ । तनूषु । आ । तेन । नः । अधि । वोचत ।
क्षमा । रपः । मरुतः । आतुरस्य । नः । इष्कर्त । विऽह्रुतम् । पुनः इति ॥ २६ ॥

अन्वयः- १०५ (हे) मयो-भुवः अ-सच-द्विषः ! याभिः ऊतिभिः सिन्धुं अवथ, याभिः तूर्वथ, याभिः क्रिविं दशस्यथ, शिवाभिः नः मयः भूत ।

१०६ (हे) सु-बर्हिषः मरुतः ! यत् सिन्धौ भेषजं, यत् असिक्न्यां, यत् समुद्रेषु, यत् पर्वतेषु।

१०७ (हे) मरुतः ! विश्वं पश्यन्तः तनूषु आ विभृथ, तेन नः अधि वोचत, नः आतुरस्य रपः क्षमा वि-हुतं पुनः इष्कर्त ।

अर्थ- १०५ हे (मयो-भुवः) सुख देनेवाले (अ-सच-द्विषः!) एवं अजातशत्रु वीरो! (याभिः ऊतिभिः) जिन संरक्षक शक्तियों से तुम (सिन्धुं अवथ) समुद्र की रक्षा करते हो, (याभिः तूर्वथ) जिन शक्तियों के सहारे शत्रु का विनाश करते हो, (याभिः) जिनकी सहायता से (क्रिविं दशस्यथ) जलकुंड तैयार कर देते हो, उन्हीं (शिवाभिः) कल्याणप्रद शक्तियोंके आधार पर (नः मयः भूत) हमें सुख देनेवाले बनो।

१०६ हे (सु-बर्हिषः मरुतः!) उत्तम तेजस्वी वीर मरुतो! (यत्) जो (सिन्धौ भेषजं) सिन्धु नद में औषधिद्रव्य है, (यत् असिक्न्यां) जो असिक्नी के प्रवाह में है, (यत् समुद्रेषु) जो समुद्र में है और (यत पर्वतेषु) जो पर्वतों पर है, वह सभी औषधिद्रव्य तुम्हें विदित है।

१०७ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (विश्वं पश्यन्तः) सब कुछ देखनेवाले तुम (तनूषु) हमारे शरीरोंमें (आ विभृथ) पुष्टि उत्पन्न करो और (तेन) उस ज्ञानसे (नः अधि वोचत) हमसे बोलो; उसी प्रकार (नः आतुरस्य) हम में जो बीमार हो, उसके (रपः क्षमा) दोष की शांति करके (विहुतं) टूटे हुए अवयव को (पुनः इष्कर्त) फिर से ठीक बिठाओ।

भावार्थ- १०५ ये वीर अपनी शक्तियों से समुद्र एवं नदियों की रक्षा करते हैं, शत्रुदल को मटियामेट कर देते हैं, जनता को पानी पीने को मिले, इसलिए सुविधाएँ पैदा कर देते हैं और सभी लोगों की सुविधा का प्रबन्ध कर डालते हैं। १०६ सिन्धु, असिक्नी, समुद्र तथा पर्वतों पर जो रोगनिवारक औषधि हों, उन्हें जानना वीरों के लिए अनिवार्य है। १०७ ये वीर चिकित्सा करनेवाले कविराज या वैद्य हैं और विविध ओषधियोंसे भली भाँति परिचित हैं। ये हमें [illegible] औषध प्रदान कर हृष्टपुष्ट बना दें। जो कोई रोगग्रस्त हो, उसके शरीर में पाये जानेवाले दोष को हटाकर और छिन्नभिन्न अंग को फिर ठीक प्रकार से जोडकर पहले जैसे कार्यक्षम बना दें।

टिप्पणी— [१०५] (१) सिन्धुं अवथ = समुद्र का रक्षण करते हो (क्या मरुत् [illegible] नाविक बेडे पर नियुक्त [illegible] के अधिकारी हैं?) (२) अ-सच-द्विषः = ये वीर स्वयं ही किसी का भी द्वेष नहीं करते हैं, अतः इन्हें [illegible] है। (३) क्रिवि = [illegible] की [illegible], कुआँ, जल [illegible], पानी का बर्तन। [१०६] (१) सु-बर्हिषः = [illegible] करनेवाले, अच्छे यज्ञ करनेवाले। (मंत्र ११८ देखो)। [१०७] (१) वि-हुतं इष्कर्त = लडाई में घायल हुए सैनिकों की [illegible] [illegible] करके, [illegible] आदि [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] करना है। [illegible] मंत्र देखिए।

गोतमपुत्र नोधा ऋषि (ऋ० १।६४।१–१५)

(१०८) वृष्णे । शर्धाय । सुऽमखाय । वेधसे । नोधः । सुऽवृक्तिम् । प्र । भर । मरुत्ऽभ्यः ।
अपः । न । धीरः । मनसा । सुऽहस्त्यः । गिरः । सम् । अञ्जे । विदथेषु । आऽभुवः ॥१॥

(१०९) ते । जज्ञिरे । दिवः । ऋष्वासः । उक्षणः । रुद्रस्य । मर्याः । असुराः । अरेपसः ।
पावकासः । शुचयः । सूर्याःऽइव । सत्वानः । न । द्रप्सिनः । घोरऽवर्पसः ॥ २ ॥

अन्वयः— १०८ (हे) नोधः ! वृष्णे सु-मखाय वेधसे शर्धाय मरुद्भ्यः सु-वृक्तिं प्र भर, धीरः सु-हस्त्यः मनसा, विदथेषु आ-भुवः गिरः, अपः न, सं अञ्जे।

१०९ ते ऋष्वासः उक्षणः असु-राः अ-रेपसः पावकासः सूर्याःइव शुचयः द्रप्सिनः सत्वानः न घोर-वर्पसः रुद्रस्य मर्याः दिवः जज्ञिरे।

अर्थ— १०८ हे (नोधः !) नोधनामक ऋषे ! (वृष्णे) बल पाने के लिए, (सु-मखाय) यज्ञ भली भाँति हों, इस हेतु से, (वेधसे) अच्छे ज्ञानी होने के लिए और (शर्धाय) अपना बल बढाने के लिए (मरुद्भ्यः) मरुतों के लिए (सु-वृक्तिं प्र भर) उत्कृष्टतम काव्यों की यथेष्ट निर्मिति करो, (धीरः) बुद्धिमान् तथा (सु-हस्त्यः) हाथ जोडकर मैं (मनसा) मन से उनकी सराहना कर रहा हूँ और (विदथेषु आ-भुवः) यज्ञों में प्रभावयुक्त (गिरः) वाणियों की (अपः न) जल के समान (सं अञ्जे) वर्षा कर रहा हूँ अर्थात् उनके काव्यों का गायन करता हूँ।

१०९ (ते) वे (ऋष्वासः) ऊँचे, (उक्षणः) बडे (असु-राः) जीवन का दान करनेवाले, (अ-रेपसः) पापरहित, (पावकासः) पवित्रता करनेहारे, (सूर्याःइव शुचयः) सूर्य की नाईं तेजस्वी, (द्रप्सिनः) सोम पानेवाले और (सत्वानः न घोर-वर्पसः) सामर्थ्ययुक्त लोगों के जैसे बृहदाकार शरीरवाले (रुद्रस्य मर्याः) मानों रुद्र के मरणधर्मा वीर (दिवः) स्वर्ग से ही (जज्ञिरे) उत्पन्न हुए।

भावार्थ— १०८ बल, उत्तम कर्म, ज्ञान तथा सामर्थ्य बढने में बडे इसलिए वीर मरुतों के काव्य रचने चाहिए और सार्वजनिक सभाओं में उनका गायन करना उचित है।

१०९ उच्च, महान्, विश्व के हितार्थ अपने प्राणों का भी न झिझकते हुए बलिदान करनेवाले, निष्पाप, सभी जगह पवित्रता फैलानेवाले तेजस्वी, सोमपान करनेवाले, बलिष्ठ और प्रचंड देहधारी ये वीर मानों स्वर्ग से ही इस भूमंडल पर उतर पडे हों।

टिप्पणी— [१०८] (१) नोधस् = [नु-स्तुतौ] काव्य करनेवाला, कवि, एक ऋषि का नाम। [१०९] (१) ऋष्व = ऊँचे विचार मन में रखनेवाले, भव्य, उच्च पदपर रहनेवाले। (२) द्रप्सिन् = (द्रप्सः= सोम) जो अपने समीप सोम रखते हों, वे 'द्रप्सिनः' (Drops)। मंत्र ६१ देखिए।

(११०) युवा॑नः । रु॒द्राः । अ॒जराः॑ । अ॒भो॒क्ऽहनः॑ । व॒व॒क्षुः । अध्रि॑ऽगावः । पर्व॑ताःऽइव ।
दृ॒ळ्हा । चि॒त् । विश्वा॑ । भुव॑नानि । पार्थि॑वा । प्र । च्य॒व॒य॒न्ति॒ । दि॒व्यानि॑ । म॒ज्मना॑ ॥ ३ ॥

(१११) चि॒त्रैः । अ॒ञ्जिऽभिः॑ । वपु॑षे । वि । अ॒ञ्ज॒ते॒ । वक्षः॑ऽसु । रु॒क्मान् । अधि॑ । ये॒ति॒रे॒ । शु॒भे ।
अंसे॑षु । ए॒षा॒म् । नि । मि॒मृ॒क्षुः॒ । ऋ॒ष्टयः॑ । सा॒कम् । ज॒ज्ञि॒रे॒ । स्व॒धया॑ । दि॒वः । नरः॑ ॥ ४ ॥

अन्वयः- ११० युवानः अ-जराः अ-भोक्-हनः अध्रि-गावः पर्वताःइव रुद्राः ववक्षुः, पार्थिवा दिव्यानि विश्वा भुवनानि दृळ्हा चित् मज्मना प्र च्यवयन्ति। १११ वपुषे चित्रैः अञ्जिभिः वि अञ्जते, वक्षःसु शुभे रुक्मान् अधि येतिरे, एषां अंसेषु ऋष्टयः नि मिमृक्षुः, नरः दिवः स्व-धया साकं जज्ञिरे ।

अर्थ- ११० (युवानः) युवकदशामें रहनेवाले (अ-जराः) बूढापेसे अछूते (अ-भोक्-हनः) अनुदार कृपणोंको दूर करनेवाले (अध्रि-गावः) आगे बढनेवाले (पर्वताःइव) पहाडोंकी नाईं अपने स्थान पर अटल रूपसे खडे रहनेवाले (रुद्राः) शत्रुओंको रुलानेवाले ये वीर लोगोंको सहायता (ववक्षुः) पहुँचाते हैं। (पार्थिवा) पृथ्वी पर पाये जानेवाले तथा (दिव्यानि) द्युलोकमें विद्यमान (विश्वा भुवनानि) सभी लोक (दृळ्हा चित्) कितने भी स्थिर हों, तो भी उन्हें ये (मज्मना) अपने बलसे (प्र च्यवयन्ति) अपदस्थ कर देते हैं, विचलित कर डालते हैं। १११ (वपुषे) शरीरकी सुन्दरता बढानेके लिए (चित्रैः अञ्जिभिः) भाँति भाँतिके आभूषणों द्वारा वे (वि अञ्जते) विशेष ढंगसे अपनी सुषमा वृद्धिंगत कर देते हैं। (वक्षःसु) छातियों पर (शुभे) शोभा के लिए (रुक्मान्) सुवर्ण के बनाये हारों को (अधि येतिरे) धारण करते हैं। (एषां अंसेषु) इन मरुतोंके कंधों पर (ऋष्टयः नि मिमृक्षुः) हथियार चमकते रहते हैं। (नरः) ये नेताके पद पर अधिष्ठित वीर (दिवः) द्युलोकसे (स्व-धया साकं) अपने बलके साथ (जज्ञिरे) प्रकट हुए।

भावार्थ- ११० सदैव नवयुवक, बुढापा आने पर भी नवयुवकोंके जैसे उमंगभरे, कंजूस तथा स्वार्थी मानवोंको अपने समीप न रहने देनेवाले, किसी भी रुकावट के सामने शीश न झुकाते हुए प्रतिपल आगे ही बढनेवाले, पर्वत की नाईं अपनी जगह अटल खडे हुए, शत्रुदलको विचलित करनेवाले ये वीर जनताकी संपूर्ण सहायता करनेके लिए हमेशा सिद्ध रहते हैं। पृथ्वी या स्वर्गमें पाये जानेवाली सुदृढ चीजोंको भी ये अपने बलसे हिला देते हैं, (तो फिर शत्रु इनके सामने थरथर काँपने लगेंगे, तो कौन आश्चर्यकी बात है?) १११ वीर मरुत् गहनोंसे अपने शरीर सुशोभित करते हैं, वक्षःस्थलों पर मुहरोंके हार रख देते हैं, कंधों पर चमकीले आयुध धर देते हैं। ऐसी दशा में उन्हें देखने पर ऐसा प्रतीत होने लगता है कि मानों वे स्वर्गमेंसे ही अपनी अतुलनीय शक्तियों के साथ इस भूमंडल में उतर पडे हों।

[११०] (१) अ-जराः = वृद्ध न होनेवाले अर्थात् अवस्था में बुढापा आने पर भी नवयुवकों की तरह अति उमंग से कार्य करनेवाले, बुढापे में भी युवकों के उत्साह से काम में जुटनेवाले। (२) अ-भोक्-हनः = जो उपभोग दूसरों को मिलने चाहिए, उनका अपहरण करके स्वयं ही पाने की चेष्टा करनेवाले एवं समाज के लिए निरुपयोगी मानवोंको दूर करनेवाले। (हन् = [हिंसागत्योः,] यहाँ पर गति बतलानेवाला अर्थ लेना ठीक है।) (३) अध्रि-गुः= अबाध रूप से चढाई करनेवाले, किसी भी रुकावट या अडचन की ओर ध्यान न देनेवाले और शत्रुदल पर बराबर धावा करनेवाले। (४) पर्वताः इव (स्थिराः) = यदि शत्रु ही प्रारम्भ में आक्रमण कर बैठें तो भी अपने निर्धारित स्थानों पर अटल भाव से खडे रहनेवाले अतएव शत्रुदल की चढाई से अपनी जगह छोडकर पीछे न हटनेवाले। (५) पार्थिवा दिव्यानि विश्वा भुवनानि दृळ्हा चित् मज्मना प्र च्यवयन्ति = भूमि पर के तथा पर्वतशिखरों पर विद्यमान सुदृढ दुर्गतक को अपनी अद्भुत सामर्थ्य से हिला देते हैं। ऐसी अनूठी शक्ति के रहते यदि शत्रुओं को भी विचलित कर डालें, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। बेशक, दुश्मन उनके सामने खडे रहने का मौका आते ही थरथर काँप उठेंगे। देखो मंत्र १२६। [१११] (१) ऋष्टयः नि मिमृक्षुः = खड्ग भाले या कुठार जो कुछ भी शस्त्र वे धारण करते हों, उन्हें ठीक तरह साफ सुथरा रखकर तथा परिष्कृत करके रखते हैं, अतः वे चमकीले दीख

(११२) ईशानऽकृतः । धुनयः । रिशादसः । वातान् । विऽद्युतः । तविषीभिः । अकृत ।
दुहन्ति । ऊधः । दिव्यानि । धूतयः । भूमिम् । पिन्वन्ति । पयसा । परिऽज्रयः ॥५॥

(११३) पिन्वन्ति । अपः । मरुतः । सुऽदानवः । पयः । घृतऽवत् । विदथेषु । आऽभुवः ।
अत्यम् । न । मिहे । वि । नयन्ति । वाजिनम् । उत्सम् । दुहन्ति । स्तनयन्तम् । अक्षितम् ॥६॥

अन्वयः— ११२ ईशान-कृतः धुनयः रिश-अदसः तविषीभिः वातान् विद्युतः अकृत, परि-ज्रयः धूतयः दिव्यानि ऊधः दुहन्ति, भूमिं पयसा पिन्वन्ति। ११३ सु-दानवः आ-भुवः मरुतः विदथेषु घृतवत् पयः अपः पिन्वन्ति, अत्यं न वाजिनं मिहे वि नयन्ति, स्तनयन्तं उत्सं अ-क्षितं दुहन्ति।

अर्थ— ११२ (ईशान-कृतः) स्वामी तथा अधिकारीवर्ग का निर्माण करनेवाले, (धुनयः) शत्रुदल को हिलानेवाले, (रिश-अदसः) हिंसा में निरत विरोधियों का विनाश करनेवाले, (तविषीभिः) अपनी शक्तियों से (वातान्) वायुओं को तथा (विद्युतः) बिजलियों को (अकृत) उत्पन्न करते हैं। (परि-ज्रयः) चतुर्दिक् वेगपूर्वक आक्रमण करनेवाले तथा (धूतयः) शत्रुसेना को विकंपित करनेवाले ये वीर (दिव्यानि ऊधः) आकाशस्थ मेघों का (दुहन्ति) दोहन करते हैं और (भूमिं पयसा पिन्वन्ति) यथेष्ट वर्षाद्वारा भूमि को तृप्त करते हैं।

११३ (सु-दानवः) अच्छे दानी, (आ-भुवः) प्रभावशाली (मरुतः) वीर मरुतों का संघ (विदथेषु) यज्ञों एवं युद्धस्थलों में (घृतवत् पयः) घी के साथ दूध तथा (अपः पिन्वन्ति) जल की समृद्धि करते हैं, (अत्यं न) घोडे को सिखाते समय जैसे घुमाते हैं, ठीक वैसे ही (वाजिनं) बलयुक्त मेघों को (मिहे) वर्षा के लिए वे (वि नयन्ति) विशेष ढंग से ले चलते हैं, चलाते हैं और तदुपरान्त (स्तनयन्तं उत्सं) गरजनेवाले उस झरने का-मेघ का (अ-क्षितं दुहन्ति) अक्षय रूप से दोहन करते हैं।

भावार्थ— ११२ राष्ट्र के शासन की बागडोर हाथ में लेनेवाले, शासकों के वर्ग को अस्तित्व में लानेवाले, शत्रुओं को विचलित करनेवाले, कष्ट देनेवाले शत्रुवृन्द को जड मूल से उखाड देनेवाले, अपनी शक्तियों से चारों ओर बडे वेग से दुश्मनों पर धावा करनेवाले तथा उन्हें नीचे धकेलनेवाले ये वीर वायुप्रवाह, विद्युत् एवं वर्षा का सृजन करते हैं। वे ही मेघों को दुहकर भूमि पर वर्षारूपी दूध का सेचन करते हैं।

११३ उदाराशी तथा प्रभावशाली ये वीर मरुत् यज्ञों में दूध, घृत तथा जल की यथेष्ट समृद्धि कर देते हैं और घोडों को सिखाते समय जिस ढंग से उन्हें चलाते हैं, वैसे ही [illegible] में [illegible] मेघवृन्द को [illegible] चलाते हैं। उस मेघरूपी [illegible] से [illegible] अविरत [illegible] कर देते हैं।

[illegible] हैं। यह वर्णन ध्यानपूर्वक पढ लेना चाहिए और पाठक सोचें कि, [illegible] में [illegible] अधिकारी किस ढंगसे रहते हैं। पाठकोंको ज्ञात होगा कि, यहाँ पर [illegible] ही वर्णन किया है। देखिए [illegible] मंत्र [illegible]।
[११२] (१) ईशान-कृतः = King-makers, राष्ट्र पर [illegible] करने की [illegible] कुछ अधिकारी या शासकवर्ग का निर्माण करनेवाले, [illegible] करनेवाले। अथर्ववेद में [illegible] में 'राज-कृतः' पद इसी अर्थ की सूचना देता है। (२) दिव्यानि ऊधः दुहन्ति भूमिं पयसा पिन्वन्ति = दिव्य [illegible] का दोहन करके भूमंडल पर दूध की वर्षा करते हैं। दिव्यं ऊधः = मेघ, पयः = दूध [illegible]। (३) धुनयः, [illegible] हिलानेवाले, शत्रु को [illegible] हटानेवाले, दुश्मनों का [illegible] करनेवाले। (४) परि-ज्रयः = [illegible] = दुश्मनों पर चढाई करनेवाले, चारों ओर [illegible] (ज्रि [illegible] = [illegible], शत्रु को [illegible]।) (५) रिश-अदसः = (रिश + अदस् = [illegible], हिंसा करनेवाले शत्रुको [illegible] खा डालनेवाले, शत्रु का विनाश करनेवाले। [११३] आ-भुवः = ([illegible] [illegible] [illegible] [illegible] में 'आभुवः' पद [illegible]

(११४) महिपासः । मायिनः । चित्रऽभानवः । गिरयः । न । स्वऽतवसः । रघुऽस्यदः ।
मृगाःऽइव । हस्तिनः । खादथ । वना । यत् । आरुणीषु । तविषीः । अयुग्ध्वम् ॥७॥
(११५) सिंहाःऽइव । नानदति । प्रऽचेतसः । पिशाःइव । सुऽपिशः । विश्वऽवेदसः ।
क्षपः । जिन्वन्तः । पृषतीभिः । ऋष्टिऽभिः । सम् । इत् । सऽबाधः । शवसा । अहिऽमन्यवः ॥८॥

अन्वयः- ११४ महिपासः मायिनः चित्र-भानवः गिरयः न स्व-तवसः रघु-स्यदः हस्तिनः मृगाःइव वना खादथ, यत् आरुणीषु तविषीः अयुग्ध्वं ।

११५ प्र-चेतसः सिंहाःइव नानदति, पिशाःइव सु-पिशः विश्व-वेदसः क्षपः जिन्वन्तः शवसा अ-हि-मन्यवः पृषतीभिः ऋष्टिभिः स-बाधः सं इत् ।

अर्थ- ११४ (महिपासः) बडे, (मायिनः) निपुण कारीगर, (चित्र-भानवः) अत्यन्त तेजस्वी (गिरयः न) पर्वतों के समान (स्व-तवसः) अपने निजी बल से स्थिर रहनेवाले, परन्तु (रघु-स्यदः) वेगपूर्वक जानेवाले तुम (हस्तिनः मृगाःइव) हाथियों एवं मृगों के समान (वना खादथ) वनों को खा जाते हो, तोडमरोड देते हो, (यत्) क्योंकि (आरुणीषु) लाल वर्णवाली घोडियों में से (तविषीः) बलिष्ठों को ही (अयुग्ध्वम्) तुम रथों में लगा देते हो ।

११५ (प्र-चेतसः) ये उत्कृष्ट ज्ञानी वीर (सिंहाःइव) सिंहों के समान (नानदति) गर्जना करते हैं । (पिशाःइव सु-पिशः) आभूषणों से युक्त पुरुषोंकी नाईं सुहानेवाले, (विश्व-वेदसः) सब धनों से युक्त होकर (क्षपः) शत्रुदल की धज्जियाँ उडानेवाले, ((जिन्वन्तः) लोगोंको संतुष्ट करनेवाले, (शवसा अ-हि-मन्यवः) बलयुक्त होनेके कारण जिनका उत्साह घट नहीं जाता, ऐसे वे वीर (पृषतीभिः) धब्बेवाली घोडियों के साथ और (ऋष्टिभिः) हथियारों के साथ (स-बाधः) पीडित जनता की ओर उसकी रक्षा करने के लिए (सं इत्) तुरन्त इकट्ठे होकर चले जाते हैं ।

भावार्थ- ११४ ये वीर मरुत् बडे भारी कुशल, तेजस्वी, पर्वतकी नाईं अपनी सामर्थ्य के सहारे अपनी जगह स्थिर रहनेवाले पर शत्रुओंपर बडे वेगसे हमला करनेवाले हैं और मतवाले गजराज की नाईं वनोंको कुचलने की क्षमता रखते हैं । लाल घोडियों के झुंडमें से ये केवल बलयुक्त घोडियोंको ही अपने रथों में जोडने के लिए चुन लेते हैं ।

११५ ये ज्ञानी वीर सिंहकी नाईं दहाडते हुए घोषणा करते हैं । आभूषणों से बनेठने दीख पडते हैं । सब प्रकार के धन एवं सामर्थ्य बटोरकर और शत्रुदल की धज्जियाँ उडाकर ये सज्जनों का समाधान करते हैं । इनमें अमीत बल विद्यमान है, इसलिए इनका उत्साह कभी घटताही नहीं । भाँतिभाँति के अनूठे हथियार साथ में रखकर पीडित प्रजाका दुःख हरण करने के लिए ये वीर एकत्रित बन अत्याचारी शत्रुओंपर चढाई कर बैठते हैं ।

टिप्पणी- [११४] (१) महिषः = बडा, बडे शरीरवाला, भैंसा । (२) मायिन् = कुशलतापूर्ण कार्य करनेवाला, सिद्धहस्त, छलकपटसे शत्रु पर हमले करनेमें निपुण । (३) रघु-स्यदः = (लघु-स्यद्) = पैरोंकी आहट न सुनाई दे, इतने वेगसे जानेवाला; शत्रुके अनजाने उसपर धावा करनेवाला । [११५] (१) प्रचेतस् = विशेष ज्ञानी (देखो मंत्र ४४) । (२) पिश् = अलंकार, शोभा; सु-पिश = सुरूप । (३) विश्व-वेदस् = सभी प्रकारके धनोंसे युक्त, सर्वज्ञ । (४) क्षपः = शत्रुदलको मटियामेट करनेवाले । (५) जिन्वन्तः = तृप्ति करनेवाले । (६) शवसा अ-हि- मन्यवः = बल यथेष्ट मात्रा में विद्यमान है, इसलिए (अ हीन-मन्यवः) निरुत्साही न बननेवाले । (७) पृषतीभिः ऋष्टिभिः स-बाधः सं इत् (रक्षितुं गच्छन्ति) = सुशोभित (पकडने की जगह या लकडियों पर धब्बे रहने से) अनुपम हार ले दुःखी जनता के निकट जाकर उनकी रक्षा करते हैं ।

(११६) रोदसी इति । आ । वदत । गणऽश्रियः । नृऽसाचः । शूराः । शवसा । अहिऽमन्यवः ।
आ । वन्धुरेषु । अमतिः । न । दर्शता । विऽद्युत् । न । तस्थौ । मरुतः । रथेषु । वः ॥९॥

(११७) विश्वऽवेदसः । रयिऽभिः । सम्ऽओकसः । सम्ऽमिश्लासः । तविषीभिः । विऽरप्शिनः ।
अस्तारः । इषुम् । दधिरे । गभस्त्योः । अनन्तऽशुष्माः । वृषऽखादयः । नरः ॥१०॥

अन्वयः— ११६ (हे) गण-श्रियः नृ-साचः शूराः शवसा अ-हि-मन्यवः मरुतः ! रोदसी आ वदत वन्धुरेषु रथेषु, अमतिः न, दर्शता विद्युत् न, वः आ तस्थौ ।

११७ रयिभिः विश्व-वेदसः सम्-ओकसः तविषीभिः सम्-मिश्लासः वि-रप्शिनः अस्तारः अन्-अन्त-शुष्माः वृष-खादयः नरः गभस्त्योः इषुं दधिरे ।

अर्थ– ११६ हे (गण-श्रियः) समुदाय के कारण सुहानेवाले, (नृ-साचः) लोगों की सेवा करनेवाले, (शूराः) वीर, (शवसा अ-हि-मन्यवः) अत्यधिक बलके कारण न घटनेवाले उत्साहसे युक्त (मरुतः!) वीर मरुतो ! (रोदसी आ वदत) भूतल एवं द्युलोक को अपनी दहाड से भर दो, (वन्धुरेषु रथेषु) जिन में वैठने के लिए अच्छी जगह है, ऐसे रथों में (अमतिः न) निर्मल रूपवालों के समान तथा (दर्शता विद्युत् न) दर्शन करनेयोग्य विजली की नाईं (वः) तुम्हारा तेज (आ तस्थौ) फैल चुका है ।

११७ (रयिभिः विश्व-वेदसः) अनेक धनों से युक्त होनेके कारण सर्वधनयुक्त, (सम्-ओकसः) एकही घरमें रहनेवाले, (तविषीभिः सम्-मिश्लासः) भाँति भाँति के वलों से युक्त, (वि-रप्शिनः) विशेष सामर्थ्यवान्, (अस्तारः) शत्रुसेनापर अस्त्र फेंक देनेवाले, (अन्-अन्त-शुष्माः) असीम सामर्थ्यवाले, (वृष-खादयः) वडे वडे आभूषण धारण करनेवाले, (नरः) नेतृत्वगुणसे विभूषित वीर (गभस्त्योः) वाहुओंपर (इषुं दधिरे) वाण धारण कर रहे हैं ।

भावार्थ- ११६ वीर मरुत् जव गणवेश (वर्दी) पहनते हैं, तो वडे प्रेक्षणीय जान पडते हैं । इनमें वीरता कूटकूटकर भरी है और जनताकी सेवा करने का मानों इन्होंने व्रतसा लिया है । पर्याप्त रूप से वलवान् हैं, अतः इनकी उमंग कभी घटती ही नहीं । जव वे अपने सुशोभित रथोंपर जा वैठते हैं, तो दामिनीकी दमककी नाईं तेजस्वी दिखाई देते हैं ।

११७ विविध धन समीप रखनेवाले, एकही घर या निवासस्थानमें रहनेवाले, विभिन्न शक्तियोंसे युक्त, शत्रुसेनापर अस्त्र फेंकनेवाले जो भारी गहने पहनते हैं, ऐसे वीर नेता कंधोंपर वान तथा तरकस धारण करते हैं ।

टिप्पणी [११६] (१) गण-श्रियः= सामूहिक पहनावा पहनने के कारण सुहानेवाले । (२) नृ-साचः= मानवों की सेवा करनेवाले । (३) शवसा अ-हि-मन्यवः= देखो पिछला मंत्र । (४) वन्धुरः रथः= जिस में वैठनेकी जगह हो, ऐसा रथ । (५) वन्धुरः (वन्धुरः) = प्रेक्षणीय, शोभायुक्त, सुन्दराकार, झुका हुआ । (६) अमतिः = आकार, रूप, तेजस्विता, प्रकाश, समय । [११७] (१) सम्-ओकसः= एक घरमें (वॅरॅक Barrack) रहनेवाले वीर सैनिक । [देखो मंत्र २२१, २४५, ४४३] (२) रयिभिः विश्व-वेदसः = अपने समीप वहुत प्रकारके धन जिनके हैं, इसलिये विविध-धनसमन्वित । (३) तविषीभिः संमिश्लाः, अनन्तशुष्माः = वलवान्, सामर्थ्य से परिपूर्ण । (४) वृष-खादयः= सोमरसके साथ खानेकी चीजें खानेवाले (खादन) [मंत्र १५८ देखिए] । (५) गभस्त्योः इषुं दधिरे= स्कंधप्रदेशपर तूणीर धारण करते हैं । (६) विरप्शिनः= विशेष सामर्थ्य से युक्त ।

(११८) हिरण्ययेभिः । पविऽभिः । पयःऽवृधः । उत् । जिघ्नन्ते । आऽपथ्यः । न । पर्वतान् ।
मखाः । अयासः । स्वऽसृतः । ध्रुवऽच्युतः । दुध्रऽकृतः । मरुतः । भ्राजत्ऽऋष्टयः ॥११॥

(११९) घृषुम् । पावकम् । वनिनम् । विऽचर्षणिम् । रुद्रस्य । सूनुम् । हवसा । गृणीमसि ।
रजःऽतुरम् । तवसम् । मारुतम् । गणम् । ऋजीषिणम् । वृषणम् । सश्चत । श्रिये ॥१२॥

अन्वयः— ११८ पयो-वृधः मखाः अयासः स्व-सृतः ध्रुवच्युतः दु-ध्र-कृतः भ्राजत्-ऋष्टयः मरुतः आ-पथ्यः न पर्वतान् हिरण्ययेभिः पविभिः उत् जिघ्नन्ते । ११९ घृषुं पावकं वनिनं वि-चर्षणिं रुद्रस्य सूनुं हवसा गृणीमसि, श्रिये रजस्-तुरं तवसं वृषणं ऋजीषिणं मारुतं गणं सश्चत ।

अर्थ- ११८ (पयो-वृधः) दूध पीकर पुष्ट बननेवाले, (मखाः) यज्ञ करनेवाले, (अयासः) आगे जानेवाले, (स्व-सृतः) स्वेच्छापूर्वक हलचलें करनेवाले, (ध्रुव-च्युतः) अटल रूप से खडे शत्रुओं को भी हिलानेवाले, (दु-ध्र-कृतः) दूसरों से न पकडने तथा घेरे जानेवाले तथा (भ्राजत्-ऋष्टयः) तेजस्वी हथियार साथ रखनेवाले (मरुतः) वीर मरुत् (आ-पथ्यः न) चलनेवाला जिस तरह राह में पडा हुआ तिनका दूर फेंक देता है, ठीक वैसे ही (पर्वतान्) पहाडोंतक को (हिरण्ययेभिः पविभिः) स्वर्णमय रथों के पहियों से (उत् जिघ्नन्ते) उडा देते हैं ।

११९ (घृषुं) युद्धके संघर्षमें चतुर, (पावकं) पवित्रता करनेवाले, (वनिनं) जंगलोंमें घूमनेवाले, (वि-चर्षणिं) विशेष ध्यानपूर्वक हलचल करनेवाले, (रुद्रस्य सूनुं) महावीर के पुत्ररूपी इन वीरों के समूह की (हवसा) प्रार्थना करते हुए (गृणीमसि) प्रशंसा करते हैं; तुम (श्रिये) अपने ऐश्वर्यको बढाने के लिए (रजस्-तुरं) धूलि उडानेवाले अर्थात् अति वेग से गमन करनेवाले, (तवसं) बलिष्ठ, (वृषणं) [illegible] (ऋजीषिणं) सोम पीनेवाले (मारुतं गणं) मरुत्समुदाय को (सश्चत) प्राप्त हो जाओ ।

भावार्थ- ११८ गोदुग्ध-सेवन से पुष्टि पाकर अच्छे कार्य करते हुए शत्रुओं पर हमले करने के लिए आगे बढनेवाले, [illegible] भी हिला डालनेवाले, आभापूर्ण हथियारों से सज्ज तथा जिन्हें कोई घेर नहीं सकता, ऐसे ये वीर [illegible] तथा सुदृढ मानते हैं । ११९ महासमर के छिड जाने पर चतुराई से अपना कर्तव्य निभानेवाले, [illegible], वनस्थलों में संचार करनेवाले, अधिक सोचविचारपूर्वक हलचलोंका सूत्रपात करनेवाले ये वीर [illegible] की सराहना करनेके लिए काव्यगायन करते हैं । तुम लोग भी अपना वैभव बढाने के लिए [illegible], बलिष्ठ, पराक्रमी एवं सोम पीनेवाले मरुतों के निकट चले जाओ ।

टिप्पणी- [११८] (१) पयो-वृधः = चूँकि ये वीर गौको अपनी माता मानते हैं, इसलिए नित गोदुग्ध का [illegible] होते हैं । (२) मखाः = स्वयं ही यज्ञ करनेवाले । (३) स्व-सृतः = स्वयं हलचल [illegible] अपनी निजी स्फूर्ति से ही कार्य करने की प्रेरणा मिलती है । (४) ध्रुव-च्युतः = सुदृढ शत्रुओं [illegible] । (५) दु-ध्र-कृतः (दुर्धरं, अन्यैः धर्तुं अशक्यं आत्मानं कुर्वाणाः) = जिन्हें पकडना [illegible] प्रतीत हो । (६) पर्वतान् उत् जिघ्नन्ते = पहाडों को ये [illegible] चढाई करते समय अगर राह में पहाडों की वजह से कठिनाई प्रतीत हो [illegible] हैं और अपने गंतव्य स्थल को पहुँच जाते हैं । [११९] (१) घृषुः = [illegible], कुशल । (२) वनिन् = जंगलों में घूमनेवाला । (३) वि-चर्षणिः = [illegible] हलचल करनेवाला, विशेष प्रकार की शक्ति से युक्त वीर । (४) रजस्-तुर् = [illegible] जब वेग से जाने लगता है, तब जिस तरह गर्द या धूल [illegible] करनेवाला, अथवा (रजः अन्तरिक्षमें विमानद्वारा (तुर्) [illegible] (५) ऋजीषिन् = ([illegible]) सोमरस निचोडने के पश्चात् जो बचा हुआ अंश रहता है [illegible] करनेवाला । (ऋजीषं पिष्टपचनं सप्तविंशतिः । कौमुदी उणादि ४७१)

(१२०) प्र । नु । सः । मर्तः । शवसा । जनान् । अति । तस्थौ । वः । ऊती । मरुतः । यम् । आवत ।
अर्वत्ऽभिः । वाजम् । भरते । धना । नृऽभिः ।
आऽपृच्छ्यम् । क्रतुम् । आ । क्षेति । पुष्यति ॥ १३ ॥

(१२१) चर्कृत्यम् । मरुतः । पृत्ऽसु । दुस्तरम् । द्युऽमन्तम् । शुष्मम् । मघवत्ऽसु । धत्तन ।
धनऽस्पृतम् । उक्थ्यम् । विश्वऽचर्षणिम् । तोकम् । पुष्येम । तनयम् । शतम् । हिमाः ॥ १४ ॥

(१२२) नु । स्थिरम् । मरुतः । वीरऽवन्तम् । ऋतिऽसहम् । रयिम् । अस्मासु । धत्त ।
सहस्रिणम् । शतिनम् । शूशुऽवांसम् । प्रातः । मक्षु । धियाऽवसुः । जगम्यात् ॥ १५ ॥

अन्वयः- १२० (हे) मरुतः! यः ऊती यं प्र आवत सः मर्तः शवसा जनान् अति नु तस्थौ, अर्वद्भिः वाजं नृभिः धना भरते, पुष्यति, आपृच्छ्यं क्रतुं आ क्षेति। १२१ (हे) मरुतः! मघ-वत्सु चर्कृत्यं पृत्सु दुस्-तरं द्युमन्तं शुष्मं धन-स्पृतं उक्थ्यं विश्व-चर्षणिं तोकं तनयं धत्तन, शतं हिमाः पुष्येम। १२२ (हे) मरुतः! अस्मासु स्थिरं वीर-वन्तं ऋती-षाहं शतिनं सहस्रिणं शूशुवांसं रयिं नु धत्त, प्रातः धिया-वसुः मक्षु जगम्यात्।

अर्थ- १२० हे (मरुतः!) मरुतो! तुम (वः ऊती) अपनी [illegible] (यं प्र आवत) जिसकी रक्षा करते हो, (सः मर्तः) वह मनुष्य (शवसा) बलसे (जनान् अति) [illegible] (नु तस्थौ) स्थिर बन जाता है। (अर्वद्भिः वाजं) वह घुडसवारोंसे [illegible] (नृभिः धना भरते) वीरोंकी मदद से यथेष्ट मात्रामें धन इकट्ठा करता है [illegible] (पुष्यति) [illegible]। इसी प्रकार (आपृच्छ्यं क्रतुं) सराहनीय कर्मों और (आ क्षेति) [illegible]

१२१ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (मघ-वत्सु) [illegible] कार्य करनेवाला, (पृत्सु दुस्-तरं) युद्धोंमें विजेता, (द्युमन्तं) [illegible] से युक्त, (उक्थ्यं) सराहनीय, (विश्व-चर्षणिं) सब के [illegible] (धत्तन) देते रहें। इसी प्रकार (शतं हिमाः पुष्येम) [illegible]

१२२ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (अस्मासु) हममें [illegible] (ऋती षाहं) शत्रुओंका पराभव करनेवाले [illegible] वर्धिष्णु (रयिं) धन को (नु धत्त) अवश्य ही धर दो। [illegible] बुद्धिद्वारा कर्मोंका सम्पादन करके धन पानेवाले [illegible]

भावार्थ- १२० मैं वीर जिसकी रक्षा करते हैं, [illegible] घुडसवारोंके हमले [illegible]

१२१ [illegible]

[illegible]

टिप्पणी- [१२०] [illegible]

रहूगणपुत्र गोतमऋषि (ऋ० १ । ८५।१-१२)

(१२३) प्र । ये । शुम्भन्ते । जनयः । न । सप्तयः । यामन् । रुद्रस्य । सूनवः । सुऽदंससः ।
रोदसी इति । हि । मरुतः । चक्रिरे । वृधे । मदन्ति । वीराः । विदथेषु । घृष्वयः ॥१॥

(१२४) ते । उक्षितासः । महिमानम् । आशत । दिवि । रुद्रासः । अधि । चक्रिरे । सदः ।
अर्चन्तः । अर्कम् । जनयन्तः । इन्द्रियम् । अधि । श्रियः । दधिरे । पृश्निऽमातरः ॥२॥

[illegible] — १२३ ये सु-दंससः सप्तयः रुद्रस्य सूनवः यामन् जनयः न प्र शुम्भन्ते, मरुतः हि वृधे [illegible] वीराः विदथेषु मदन्ति । १२४ रुद्रासः दिवि सदः अधि चक्रिरे, अर्कं अर्चन्तः [illegible] अधि दधिरे, ते उक्षितासः महिमानं आशत ।

[illegible] १२३ [illegible] अच्छे कार्य करनेवाले, (सप्तयः) प्रगतिशील, (रुद्रस्य सूनवः) [illegible] बाहर जाते हैं, उस समय (जनयः न) महिलाओं के समान [illegible] सुशोभित करते हैं। (मरुतः हि) मरुतोंने ही (वृधे) सब की अभिवृद्धि के [illegible] की प्रस्थापना कर डाली, तथा ये वीर (घृष्वयः वीराः) [illegible] और (विदथेषु मदन्ति) यज्ञों में या रणांगणों में हर्षित [illegible] ।

[illegible] वीरोंने (दिवि) आकाश में (सदः अधि चक्रिरे) [illegible] पूजनीय देवकी उपासना करते हुए, (इन्द्रियं जन[यन्तः]) [illegible] हुए, (पृश्नि मातरः) मातृभूमि के सुपुत्र ये वीर (श्रियः [illegible]) [illegible] (ते उक्षितासः) वे अपने स्थानों पर अभिषिक्त [illegible] ।

[illegible] पुरोगामी वीर बाहर निकलते समय महिलाओं की [illegible] सब की प्रगति के लिए [illegible] वीर युद्ध का अवसर [illegible] इन वीरों का [illegible] हो जाता है।

[illegible] अपना अधिकार कर लेते हैं। वे [illegible] कल्याण के लिए [illegible] की पूर्ति करते हैं। [illegible]

[illegible] आक्रमण, हमला, चढाई [illegible] [illegible] भूमि [illegible] युद्ध [illegible] लडाई करनेवाले। [illegible]

(१२५) गोऽमा॑तरः । यत् । शु॒भय॑न्ते । अ॒ञ्जिऽभिः॑ । त॒नूषु॑ । शु॒भ्राः । द॒धि॒रे॒ । वि॒रुक्म॑तः ।
बाध॑न्ते । विश्व॑म् । अ॒भि॒ऽमा॒तिन॑म् । अप॑ । वर्त्मा॑नि । ए॒षा॒म् । अनु॑ । री॒य॒ते॒ । घृ॒तम् ॥३॥

(१२६) वि । ये । भ्राज॑न्ते । सुऽम॑खासः । ऋ॒ष्टिऽभिः॑ ।
प्र॒ऽच्य॒वय॑न्तः । अच्यु॑ता । चि॒त् । ओज॑सा ।
म॒नः॒ऽजुवः॑ । यत् । म॒रु॒तः॒ । रथे॑षु । आ । वृष॑ऽव्रातासः । पृष॑तीः । अयु॑ग्ध्वम् । ॥४॥

अन्वयः— १२५ शुभ्राः गो-मातरः यत् अञ्जिभिः शुभयन्ते तनूषु वि-रुक्मतः दधिरे, विश्वं अभिमातिनं अप बाधन्ते, एषां वर्त्मानि घृतं अनु रीयते ।

१२६ ये सु-मखासः ऋष्टिभिः वि भ्राजन्ते, (हे) मरुतः ! यत् मनो-जुवः वृष-व्रातासः रथेषु पृषतीः आ अयुग्ध्वं, अ-च्युता चित् ओजसा प्रच्यवयन्तः ।

अर्थ- १२५ (शुभ्राः) तेजस्वी, (गो-मातरः) भूमि को माता समझनेवाले वीर (यत्) जब (अञ्जिभिः शुभयन्ते) अलंकारों से अपने को सुशोभित करते हैं, अपनी सजावट करते हैं, तब वे (तनूषु) अपने शरीरों पर (वि-रुक्मतः दधिरे) विशेष ढंग से सुहानेवाले आभूषण पहनते हैं, वे (विश्वं अभिमातिनं) सभी शत्रुओं को (अप बाधन्ते) दूर हटा देते हैं, उनकी राह में रुकावटें खडी कर देते हैं, इसलिए (एषां) इनके (वर्त्मानि) मार्गों पर (घृतं अनु रीयते) घी जैसे पौष्टिक पदार्थ इन्हें पर्याप्त मात्रा में मिल जाते है ।

१२६ (ये सु-मखासः) जो तुम अच्छे यज्ञ करनेवाले वीर (ऋष्टिभिः) शस्त्रों के साथ (वि भ्राजन्ते) विशेष रूपसे चमकते हो, तथा हे (मरुतः !) मरुतो ! (यत्) जब (मनो-जुवः) मन की नाईं वेग से जानेवाले और (वृष-व्रातासः) सामर्थ्यशाली संघ बनानेवाले तुम (रथेषु) अपने रथों में (पृषतीः आ अयुग्ध्वं) धब्बेवाली हिरनियाँ जोडते हो, तब (अ-च्युता चित्) न हिलनेवाले सुदृढ शत्रुओं को भी (ओजसा) अपनी शक्ति से (प्रच्यवयन्तः) हिला देते हो ।

भावार्थ- १२५ गौ एवं भूमि को माता माननेवाले वीर आभूषणों तथा हथियारोंसे निजी शरीरों को खूब सजाते हैं और चूँकि वे शत्रुदलों का संहार करते हैं, अतएव उन्हें पौष्टिक अन्न पर्याप्त रूप से मिलता है ।

१२६ श्रेष्ठ यज्ञ करनेवाले, मन के समान वेगवान् तथा बलिष्ठ हो संघमय जीवन बितानेवाले वीर शस्त्रास्त्रों से सुसज्ज बन रथ पर चढ जाते हैं और सुदृढ शत्रुओं को भी जडमूल से उखाड फेंक देते हैं ।

टिप्पणी- [१२५] (१) गो-मातरः = गाय एवं भूमिको मातृवत् समझनेवाले । (२) अञ्जि = आभूषण, तमगा, गणवेश (देखो मंत्र ९०)। (३) वि-रुक्मत् = विशेष चमकीले गहने । (४) अभिमातिन् = हमला करनेवाला शत्रु । [१२६] (१) सु-मखः = अच्छे यज्ञ तथा कर्म करनेवाले । (२) वृष-व्रातः = बलवानों का संघ; अभेद्य संघ बनाकर रहनेवाले । (३) अ-च्युता प्रच्यवयन्तः = स्थिरों तक को हिला देते हैं, चिरकाल से स्थायी बने हुए शत्रुओं को भी अपदस्थ कर के विनष्ट करते हैं (देखिए मंत्र ८६ और ११०) ।

(१२७) प्र । यत् । रथेषु । पृषतीः । अयुग्ध्वम् । वाजे । अद्रिम् । मरुतः । रंहयन्तः ।
उत । अरुषस्य । वि । स्यन्ति । धाराः । चर्मऽइव । उदऽभिः । वि । उन्दन्ति । भूम ॥५॥

(१२८) आ । वः । वहन्तु । सप्तयः । रघुऽस्यदः । रघुऽपत्वानः । प्र । जिगात । बाहुऽभिः ।
सीदत । आ । बर्हिः । उरु । वः । सदः । कृतम् । मादयध्वम् । मरुतः । मध्वः । अन्धसः ॥६॥

(१२९) ते । अवर्धन्त । स्वऽतवसः । महिऽत्वना । आ । नाकम् । तस्थुः । उरु । चक्रिरे । सदः ।
विष्णुः । यत् । ह । आवत् । वृषणम् । मदऽच्युतम् । वयः । न । सीदन् । अधि । बर्हिषि । प्रिये ॥७॥

अन्वयः- १२७ (हे) मरुतः! वाजे अद्रिं रंहयन्तः यत् रथेषु पृषतीः प्र अयुग्ध्वं उत अ-रुषस्य धाराः वि स्यन्ति उदभिः भूम चर्मइव वि उन्दन्ति। १२८ वः रघु-स्यदः सप्तयः आ वहन्तु, रघु-पत्वानः बाहुभिः प्र जिगात, (हे) मरुतः! वः उरु सदः कृतं, बर्हिः आ सीदत, मध्वः अन्धसः मादयध्वं। १२९ ते स्व-तवसः अवर्धन्त, महित्वना नाकं आ तस्थुः, उरु सदः चक्रिरे, यत् वृषणं मद-च्युतं विष्णुः आवत् ह प्रिये बर्हिषि अधि, वयः न, सीदन्।

अर्थ- १२७ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (वाजे) अन्नके लिए (अद्रिं रंहयन्तः) मेघोंको प्रेरणा देते हुए, (यत्) जिस समय (रथेषु पृषतीः प्र अयुग्ध्वं) रथोंमें धब्बेवाली हिरनियाँ जोड देते हो, (उत) उस समय (अ-रुषस्य धाराः) तनिक मटमैले दिखाई देनेवाले मेघकी जलधाराएँ (वि स्यन्ति) वेगपूर्वक नीचे गिरने लगती हैं और उन (उदभिः) जलप्रवाहोंसे (भूम) भूमिको (चर्मइव) चमडी के जैसे (वि उन्दन्ति) भीगी या गीली कर डालते हैं। १२८ (वः) तुम्हें (रघु-स्यदः सप्तयः) वेगसे दौडनेवाले घोडे इधर (आ वहन्तु) ले आयँ, (रघु-पत्वानः) शीघ्र जानेवाले तुम (बाहुभिः) अपनी भुजाओं में विद्यमान शक्ति को पराक्रमद्वारा प्रकट करते हुए इधर (प्र जिगात) आओ। हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (वः) तुम्हारे लिए (उरु सदः) बडा घर, यज्ञस्थान हम (कृतं) तैयार कर चुके हैं, (बर्हिः आ सीदत) यहाँ दर्भमय आसन पर बैठ जाओ और (मध्वः अन्धसः) मिठास भरे अन्नके सेवन से (मादयध्वं) सन्तुष्ट एवं हर्षित बनो।
१२९ (ते) वे वीर (स्व-तवसः) अपने बलसे ही (अवर्धन्त) बढते रहते हैं। वे अपने (महित्वना) बडप्पन के फलस्वरूप (नाकं आ तस्थुः) स्वर्ग में जा उपस्थित हुए। उन्होंने अपने निवास के लिए (उरु सदः चक्रिरे) बडा भारी विस्तृत घर तैयार कर रखा है। (यत् वृषणं) जिस बल देनेवाले तथा (मद-च्युतं) आनन्द बढानेवालेका (विष्णुः आवत् ह) व्यापक परमात्मा स्वयं ही रक्षण करता है, उस (प्रिये बर्हिषि अधि) हमारे प्रिय यज्ञ में (वयः न) पंछियों की नाईं (सीदन्) पधार कर बैठें।

भावार्थ- १२७ मरुत मेघों को गतिशील बना देते हैं, इसलिए वर्षाका प्रारम्भ हो जलसमूह से समूची पृथ्वी भर्र हो उठती है। १२८ चूंकि घोडे तुम्हें इधर लायँ। तुम जैसे शीघ्रगामी अपने बाहुबलसे तेजस्वी बनकर इधर आओ। क्योंकि तुम्हारे लिए बडा विस्तृत स्थान यहाँ पर तैयार कर रखा है। इधर पधार कर तथा आसनों पर बैठकर मिठास से पूर्ण अन्न का सोमरसका सेवन कर हर्षित बनो। १२९ वीर अपनी शक्तिसे बडे होते हैं; अपनी कर्तृत्वशक्ति से स्वर्ग तक चढ जाते हैं और अपने बलसे विशाल जगह पर प्रभुत्व प्रस्थापित करते हैं। ऐसे वीर हमारे यज्ञमें शीघ्र ही पधारें।

टिप्पणी- [१२७] (१) अद्रिः = पर्वत या मेघ। (२) अ-रुष = तेजहीन, मलिन, निष्प्रभ (मेघ); रुष् = तेज प्रकाश। [१२८] (१) रघु-स्यद् = (रघु-स्यद्) चपल, बडे वेग से जानेवाला। (२) रघु-पत्वन् = (रघु, पत्वन्) शीघ्रगामी, वेगवान, तेज दौडनेवाला। (३) अन्धस् = अन्न, सोमरस। [१२९] (१) स्व-तवसः अवर्धन्त = अपनी और अपने शक्ति वृद्धि करते रहते हैं। (२) महित्वना नाकं आ तस्थुः = अपनी महिमा तथा बडप्पन से स्वर्ग तक [illegible] जा बैठते हैं। (३) उरु सदः चक्रिरे = अपने प्रयत्नसे अपने लिए विस्तृत स्थानका निर्माण करते हैं। (४) मदच्युतं वृषणं विष्णुः आवत् = आनन्द देनेवाले बलिष्ठ वीर की रक्षा करने का बीडा विष्णु ही उठाता है।

(१३०) शूराः॑ऽइव । इत् । युयु॑धयः । न । जग्म॑यः । श्रव॒स्यवः॑ । न । पृत॑नासु । ये॒ति॒रे॒ ।
भय॑न्ते । विश्वा॑ । भुव॑ना । म॒रुत्ऽभ्यः॑ । राजा॑नःऽइव । त्वे॒षऽसं॑दृशः । नरः॑ ॥ ८ ॥

(१३१) त्वष्टा॑ । यत् । वज्र॑म् । सुऽकृ॑तम् । हि॒र॒ण्यय॑म् । स॒हस्र॑ऽभृष्टिम् । सु॒ऽअपाः॑ । अव॑र्तयत् ।
धत्ते । इन्द्रः॑ । नरि॑ । अपां॑सि । क॒र्त॑वे ।
अह॑न् । वृ॒त्रम् । निः । अ॒पाम् । औ॒ब्ज॒त् । अ॒र्ण॒वम् ॥ ९ ॥

अन्वयः— १३० शूराःइव इत्, युयुधयः न जग्मयः, श्रवस्यवः न पृतनासु येतिरे, राजानःइव त्वेष-संदृशः नरः मरुद्भ्यः विश्वा भुवना भयन्ते ।

१३१ सु-अपाः त्वष्टा यत् सु-कृतं हिरण्ययं सहस्र-भृष्टिं वज्रं अवर्तयत् इन्द्रः नरि अपांसि कर्तवे धत्ते, अर्णवं वृत्रं अहन्, अपां निः औब्जत् ।

अर्थ- १३० (शूराःइव इत्) वीरों के समान लडने की इच्छा करनेवाले (युयुधयः न जग्मयः) योद्धाओंकी नाईं शत्रु पर जा चढाई करनेवाले तथा (श्रवस्यवः न) यशकी इच्छा करनेवाले वीरोंके जैसे ये वीर (पृतनासु येतिरे) संग्रामों में बडा भारी पुरुषार्थ कर दिखलाते हैं। (राजानःइव) राजाओं के समान (त्वेष-संदृशः) तेजस्वी दिखाई देनेवाले ये (नरः) नेता वीर हैं, इसलिए (मरुद्भ्यः) इन मरुतों से (विश्वा भुवना भयन्ते) सारे लोक भयभीत हो उठते हैं।

१३१ (सु-अपाः) अच्छे कौशल्यपूर्ण कार्य करनेवाले (त्वष्टा) कारीगरने (यत् सु-कृतं) जो अच्छी तरह बनाया हुआ, (हिरण्ययं) सुवर्णमय, (सहस्र-भृष्टि वज्रं) सहस्र धाराओं से युक्त वज्र इन्द्र को (अवर्तयत्) दे दिया, उस हथियार को (इन्द्रः) इन्द्रने (नरि) मानवों में प्रचलित युद्धों में (अपांसि कर्तवे) वीरतापूर्ण कार्य कर दिखलाने के लिए (धत्ते) धारण किया और (अर्ण-वं वृत्रं अहन्) जल को रोकनेवाले शत्रु को मार डाला तथा (अपां निः औब्जत्) जल को जाने के लिए उन्मुक्त कर दिया।

भावार्थ- १३० ये वीर सच्चे शूरों की भाँति लडते हैं, योद्धाओं के समान शत्रुसेनापर आक्रमण कर बैठते हैं, कीर्ति पाने के लिए लडनेवाले वीर पुरुषों की नाईं ये रणभूमि में भारी पराक्रम करते हैं। जैसे राजालोग तेजस्वी दीख पडते हैं, ठीक वैसे ही ये हैं। इसलिए सभी इनसे अतीव प्रभावित होते हैं।

१३१ अत्यन्त निपुण कारीगरने एक वज्र नामक शस्त्र तैयार कर दिया, जिसकी सहस्र धाराएँ या नोक विद्यमान थे और जिस पर शोभा के लिए सुनहली पच्चीकारी की गयी थी। इन्द्रने उस श्रेष्ठ आयुध को पाकर मानव-जाति में बारंबार होनेवाली लडाइयों में शूरता की अभिव्यंजना करने के लिए उसका प्रयोग किया। जलस्रोत पर प्रभुत्व प्रस्थापित करके रुकनेवाले तथा घेरनेवाले शत्रु का वध करके सब के लिए जल को उन्मुक्त कर रखा।

टिप्पणी- [१३१] (१) स्वपाः = (सु + अपाः) = अच्छे ढंग से पच्चीकारी आदि कार्य करनेवाला चतुर कारीगर। (२) सु-कृतं = सुन्दर बनावट से निर्माण किया हुआ। (३) सहस्र-भृष्टिः = सहस्र नोकों से युक्त। (४) नरि = युद्ध में, मनुष्यों के मध्य होनेवाले संघर्षों में। (५) अपः = कर्म, कृत्य, पराक्रम। (६) अर्ण-व = जल को रोकनेवाला, अपने लिए जल रखनेवाला। (७) वृत्र = आवरण करनेवाला, घेरनेवाला शत्रु, वृत्रासुर, एक राक्षस का नाम।

(१३२) ऊर्ध्वम् । नुनुद्रे । अवतम् । ते । ओजसा । दादृहाणम् । चित् । बिभिदुः । वि । पर्वतम् ।
धमन्तः । वाणम् । मरुतः । सुऽदानवः ।
मदे । सोमस्य । रण्यानि । चक्रिरे ॥ १०॥

(१३३) जिह्मम् । नुनुद्रे । अवतम् । तया । दिशा ।
असिञ्चन् । उत्सम् । गोतमाय । तृष्णऽजे ।
आ । गच्छन्ति । ईम् । अवसा । चित्रऽभानवः ।
कामम् । विप्रस्य । तर्पयन्त । धामऽभिः ॥ ११ ॥

अन्वयः— १३२ ते ओजसा ऊर्ध्वं अवतं नुनुद्रे, दादृहाणं पर्वतं चित् वि बिभिदुः, सु-दानवः मरुतः सोमस्य मदे वाणं धमन्तः रण्यानि चक्रिरे।

१३३ अवतं तया दिशा जिह्मं नुनुद्रे, तृष्णजे गोतमाय उत्सं असिञ्चन्, चित्र-भानवः अवसा ईं आ गच्छन्ति, धामभिः विप्रस्य कामं तर्पयन्त।

अर्थ- १३२ (ते) वे वीर (ओजसा) अपनी शक्ति से (ऊर्ध्वं अवतं) ऊँची जगह विद्यमान तालाब या झील के पानी को (नुनुद्रे) प्रेरित कर चुके और इस कार्य के लिए (दादृहाणं पर्वतं चित्) राह में रोडे अटकानेवाले पर्वत को भी (वि बिभिदुः) छिन्नविच्छिन्न कर चुके। पश्चात् उन (सु-दानवः मरुतः) अच्छे दानी मरुतोंने (सोमस्य मदे) सोमपान से उद्भूत आनन्द से (वाणं धमन्तः) वाण बाजा बजा कर (रण्यानि चक्रिरे) रमणीय गानों का सृजन किया।

१३३ वे वीर (अवतं) झील का पानी (तया दिशा) उस दिशा में (जिह्मं) टेढी राह से (नुनुद्रे) ले गये और (तृष्णजे गोतमाय) प्यास के मारे अकुलाते हुए गोतम के लिए (उत्सं असिञ्चन्) जलकुंड में उस जल का झरना बहने दिया। इस भाँति वे (चित्र-भानवः) अति तेजस्वी वीर (अवसा ईं) संरक्षक शक्तियों के साथ (आ गच्छन्ति) आ गये और (धामभिः) अपनी शक्तियों से (विप्रस्य कामं) उस ज्ञानी की लालसा को (तर्पयन्त) तृप्त किया ।

भावार्थ- १३२ ऊँचे स्थान पर पाये जानेवाले तालाब का पानी मरुतों ने नहर बनाकर दूसरी ओर पहुँचा दिया और ऐसा नहर खुदाई का कार्य करते समय राह में जो पहाड रुकावट के रूप में पाये गये थे, उन्हें काटकर पानी के बहावके लिए मार्ग बना दिया। इतना कार्य कर चुकने पर सोमरसको पीकर बडे आनन्दसे उन्होंने सामगायन किया।

१३३ इन वीरों ने टेढीमेढी राह से नहर खुदवाकर झील का पानी अन्य जगह पहुँचा दिया और ऋषिके आश्रम में पीने के जल का विपुल संचय कर रखा, जिसके फलस्वरूप गोतमजी की पानी की आवश्यकता पूर्ण हुई। इस भाँति ये तेजःपुञ्ज वीर दलबलसमेत तथा शक्तिसामर्थ्य से परिपूर्ण हो इधर पधारते हैं और अपने भक्तों तथा अनुयायियों की लालसाओं को तृप्त करते हैं। [देखिए मंत्र १३२, १५४]

टिप्पणी - १३२ (१) अवतं = कूआँ, कुंड, हौज, जल का संचय, तालाब, रक्षण करनेवाला। मंत्र १३३ तक १५४ देखिए। (२) नुद् = प्रेरित करना। (३) दादृहाणं = बढा हुआ, मार्ग में बढकर खडा हुआ। (४) वाणं = मंत्र ८९ देखिए (' शतसंख्याभिः तंत्रीभिर्युक्तः वीणाविशेषः ' सायणभाष्य) सौ तारों का बनाया हुआ एक तंतुवाद्य। [१३३] (१) जिह्म = कुटिल, टेढा, वक्र;। (२) धामन् = तेज, शक्ति, स्थान। (३) अवतः (अवटः) = गहरा स्थान, खाई; १३२ वाँ मंत्र देखिए। (४) गोतम = बहुतसी गौएँ साथ रखनेवाला ऋषि, जिसके आश्रम में अनगिनती गौओं का झुंड दिखाई पडता हो।

(१३४) या । वः । शर्म । शशमानाय । सन्ति ।
त्रिऽधातूनि । दाशुषे । यच्छत । अधि ।
अस्मभ्यम् । तानि । मरुतः । वि । यन्त ।
रयिम् । नः । धत्त । वृषणः । सुऽवीरम् ॥ १२ ॥

[ऋ० १।८६।१-१०]

(१३५) मरुतः । यस्य । हि । क्षये । पाथ । दिवः । विऽमहसः ।
सः । सुऽगोपातमः । जनः ॥ १ ॥

अन्वयः- १३४ (हे) मरुतः ! शशमानाय त्रि-धातूनि वः या शर्म सन्ति, दाशुषे अधि यच्छत, तानि अस्मभ्यं वि यन्त, (हे) वृषणः ! नः सु-वीरं रयिं धत्त ।

१३५ (हे) वि-महसः मरुतः ! दिवः यस्य हि क्षये पाथ, सः सु-गो-पा-तमः जनः ।

अर्थ- १३४ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (शशमानाय) शीघ्र गति से जानेवालों को देने के लिए (त्रि-धातूनि) तीन प्रकार की धारक शक्तियों से मिलनेवाले (वः या शर्म) तुम्हारे जो सुख (सन्ति) विद्यमान हैं और जिन्हें तुम (दाशुषे अधि यच्छत) दानी को दिया करते हो, (तानि) उन्हें (अस्मभ्यं वि यन्त) हमें दो । हे (वृषणः !) बलवान् वीरो ! (नः) हमें (सु-वीरं) अच्छे वीरों से युक्त (रयिं) धन (धत्त) दे दो ।

१३५ हे (वि- महसः मरुतः !) विलक्षण ढंग से तेजस्वी वीर मरुतो ! (दिवः) अन्तरिक्ष में से पधारकर (यस्य हि क्षये) जिस के घर में तुम (पाथ) सोमरस पीते हो, (सः) वह (सु-गो-पा-तमः जनः) अत्यन्त ही सुरक्षित मानव है ।

भावार्थ- १३४ त्रिविध धारक शक्तियों से जो कुछ भी सुख पाये जा सकते हैं, उन्हें वे वीर श्रेष्ठ कार्यों को शीघ्रता से निभानेवालों के लिए उपभोगार्थ देते हैं। हमारी लालसा है कि, हमें भी वे सुख मिल जायँ तथा उच्च कोटि के वीरों से रक्षित धन हमें प्राप्त हो । (अभिप्राय इतना ही है कि, धन तो अवश्यमेव कमाना चाहिए और उस की समुचित रक्षा के लिए आवश्यक वीरता पाने के लिए भी प्रयत्नशील रहना चाहिए ।)

१३५ तेजस्वी वीर लोग जिस मानव के घर में सोम का ग्रहण करते हैं, वह अवश्यमेव सुरक्षित रहेगा, ऐसा माननेमें कोई आपत्ति नहीं ।

टिप्पणी- [१३४] (१) शशमानः= (शश्= प्लुतगतौ)= शीघ्र गतिसे जानेवाले, जल्द कार्य पूरा करनेवाले (देखो मंत्र १४२) । (२) त्रिधातु = तीन धातुओं का उपयोग जिस में हुआ हो; तीन स्थानों में जो हैं; तीन धारक शक्तियों से युक्त । (३) शर्म = सुख, घर, आश्रयस्थान । [१३५] (१) वि-महस् = विशेष महत्त्व, बड़ा तेज । (२) क्षयः = (क्षि निवासे)=घर, स्थान । (३) सु-गो-पा-तमः = उच्च कोटिकी गौओंकी भली भाँति रक्षा करनेवाला, रक्षक वीरों से युक्त। इस पद से हमें यह सूचना मिलती है कि, गाय की यथावत् रक्षा करना मानों सर्वस्व का संरक्षण करना ही है ।

(१३६) यज्ञैः । वा । यज्ञऽवाहसः । विप्रस्य । वा । मतीनाम् । मरुतः । शृणुत । हवम् ॥२॥

(१३७) उत । वा । यस्य । वाजिनः । अनु । विप्रम् । अतक्षत ।
सः । गन्ता । गोऽमति । व्रजे ॥ ३ ॥

(१३८) अस्य । वीरस्य । बर्हिषि । सुतः । सोमः । दिविष्टिषु ।
उक्थम् । मदः । च । शस्यते ॥ ४ ॥

अन्वयः— १३६ (हे) यज्ञ-वाहसः मरुतः ! यज्ञैः वा विप्रस्य मतीनां वा, हवं शृणुत ।
१३७ उत वा यस्य वाजिनः विप्रं अनु अतक्षत, सः गो-मति व्रजे गन्ता ।
१३८ दिविष्टिषु बर्हिषि अस्य वीरस्य सोमः सुतः, उक्थं मदः च शस्यते ।

अर्थ- १३६ हे (यज्ञ- वाहसः मरुतः !) यज्ञ का गुरुतर भार उठानेवाले मरुतो ! (यज्ञैः वा) यज्ञों के द्वारा या (विप्रस्य मतीनां वा) विद्वान् की बुद्धि की सहायता से तुम हमारी (हवं शृणुत) प्रार्थना सुनो ।

१३७ (उत वा) अथवा (यस्य वाजिनः) जिस के बलवान् वीर (विप्रं अनु अतक्षत) ज्ञानी के अनुकूल हो, उसे श्रेष्ठ बना देते हैं, (सः) वह (गो-मति व्रजे) अनेक गौओं से भरे प्रदेश में (गन्ता) चला जाता है, अर्थात् वह अनगिनती गौएँ पाता है ।

१३८ (दिविष्टिषु = दिव्-इष्टिषु) इष्टिके दिनमें होनेवाले (बर्हिषि) यज्ञमें, (अस्य वीरस्य) इस वीर के लिए, (सोमः सुतः) सोम का रस निचोडा जा चुका है । (उक्थं) अब स्तोत्र का गान होता है और सोमरस से उद्भूत (मदः च शस्यते) आनन्द की प्रशंसा की जाती है ।

भावार्थ- १३६ यज्ञों के अर्थात् कर्मों के द्वारा तथा ज्ञानी लोगों की सुमतियों याने अच्छे संकल्पों के द्वारा जो प्रार्थना होती है, सो तुम सुनो ।

१३७ यदि वीर ज्ञानी के अनुकूल बनें, तो उस ज्ञानी पुरुष को बहुतसी गौएँ पाने में कोई कठिनाई नहीं होती है ।

१३८ जिन दिनों में यज्ञ प्रचलित रखे जाते हैं, तब सोमरस का सेवन तथा सामगान का श्रवण जारी रहता है ।

टिप्पणी- [१३६] किसी न किसी आदर्श या ध्येय को सामने रखकर ही मानव कर्म में प्रवृत्त होता है और उस कर्म से ध्येय का प्रकटीकरण होता है । उसी प्रकार ज्ञानसम्पन्न विद्वान् लोग मनन के उपरान्त जो संकल्प ठान लेते हैं, वह भी उनके आदर्श को ही दर्शाता है । अतः ऐसा कह सकते हैं कि, मानव के कर्म तथा संकल्प के साथ ही साथ जो प्रार्थना हुआ करती है, जिन आकांक्षाओं तथा ध्येयों की अभिव्यञ्जना होती है, उन्हें देवता सुन लें । [illegible] कर्म के द्वारा जो ध्येय आविर्भूत होता है, वही मानव का उच्च कोटि का ध्येय है, ऐसा समझना ठीक है और देवता का ध्यान उधर आकर्षित होता ही है । [१३७] (१) वाजिन् = घोडा, घुडसवार, बलिष्ठ, धान्य [illegible] । (२) अनु + तक्ष् = बना देना, निर्माण करना, संस्कार करके तैयार कर देना । (३) गो-मति व्रजे = अनेक गौओं से युक्त ग्वालोंके बाडे में । (४) व्रजः = ग्वालोंका बाडा । वीरोंकी अनुकूलता होने पर बहुत सी गौएँ पाना कोई कठिन बात नहीं है । क्योंकि गौएँ साथ रखनाही प्रचुर संपत्ति या वैभव का चिह्न है । [१३८] दिविष्टि = दिव् + इष्टि = दिन में की जानेवाली इष्टि । (२) बर्हिस् = दर्भ, आसन, यज्ञ । मंत्र १३१ देखिए ।

(१३९) अस्य । श्रोषन्तु । आ । भुवः । विश्वाः । यः । चर्षणीः । अभि ।
सूरम् । चित् । सस्रुषीः । इषः ॥ ५ ॥

(१४०) पूर्वीभिः । हि । ददाशिम । शरत्ऽभिः । मरुतः । वयम् ।
अवःऽभिः । चर्षणीनाम् ॥ ६ ॥

(१४१) सुऽभगः । सः । प्रऽयज्यवः । मरुतः । अस्तु । मर्त्यः ।
यस्य । प्रयांसि । पर्षथ ॥ ७ ॥

अन्वयः- १३९ विश्वाः चर्षणीः, सूरं चित्, इषः सस्रुषीः, यः अभि-भुवः अस्य (मरुतः) आ श्रोषन्तु ।

१४० (हे) मरुतः ! चर्षणीनां अवोभिः वयं पूर्वीभिः शरद्भिः हि ददाशिम ।

१४१ (हे) प्र-यज्यवः मरुतः ! सः मर्त्यः सु-भगः अस्तु, यस्य प्रयांसि पर्षथ ।

अर्थ- १३९ (विश्वाः चर्षणीः) सभी मानवों को तथा (सूरं चित्) विद्वान् को भी (इषः सस्रुषीः) अन्न मिल जाय, इसलिए (यः अभि-भुवः) जो शत्रु का पराभव करता है, (अस्य) उस का काव्य-गायन सभी वीर (आ श्रोषन्तु) सुन लें ।

१४० हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (चर्षणीनां अवोभिः) कृषकों की तथा मानवों की समुचित रक्षा करने की शक्तियों से युक्त (वयं) हम लोक (पूर्वीभिः शरद्भिः) अनेक वर्षों से (हि) सचमुच (ददाशिम) दान देते आ रहे हैं ।

१४१ हे (प्र-यज्यवः मरुतः !) पूज्य मरुतो ! (सः मर्त्यः) वह मनुष्य (सु-भगः अस्तु) अच्छे भाग्यवाला रहता है कि, (यस्य प्रयांसि) जिस के अन्न का (पर्षथ) सेवन तुम करते हो ।

भावार्थ- १३९ जो वीर पुरुष समूची मानवजाति को तथा विद्वन्मंडली को अन्न की प्राप्ति हो, इस हेतु शत्रुदल का पराभव करनेकी चेष्टा करके सफलता पाता है, उसी वीरके यशका गान लोग करते हैं और उस गुण-गरिमा-गान को सुनकर श्रोताओं में स्फूर्ति का संचार हो जाता है ।

१४० कृषकों तथा सभी मानवजाति की रक्षा करने के लिए जो आवश्यक गुण या शक्तियाँ हैं, उनसे युक्त बनकर हम पहले से ही दान देते आये हैं । (या किसानों तथा अन्य लोगों की संरक्षक शक्तियों के द्वारा सुरक्षित बन हम प्रथमतः दानी बन चुके हैं ।)

१४१ वीर पुरुष जिसके अन्न का सेवन करते हैं, वह मनुष्य सचमुच भाग्यशाली बनता है ।

टिप्पणी- [१३९] (१) सूरः = विद्वान्, बडा समालोचक । (२) सस्रुषीः = (सृ गतौ) चला जाय, पहुँचे, प्राप्त हों । (३) अभि-भुवः = शत्रुदल का पराभव करनेवाला । (४) विश्वाः चर्षणीः = जनता, समूचा मानवी समाज । (चर्षणिः = [कृष्] कृषक, काश्तकार, कृषिकर्म करनेवाला कर्मनिरत । [१४०] (१) चर्षणिः- (कृष्) = कृषक, हलसे भूमि जोतनेवाला । (२) अवस् = संरक्षण । [१४१] (१) प्र-यज्युः = पवित्र, पूज्य । (२) सु-भगः = भाग्यवान् । (३) प्रयस् = अन्न, यज्ञों के उपरांत प्राप्त किया हुआ भोग ।

(१४२) शशमानस्य । वा । नरः । स्वेदस्य । सत्यऽशवसः । विद । कामस्य । वेनतः ॥८

(१४३) यूयम् । तत् । सत्यऽशवसः । आविः । कर्त । महिऽत्वना ।
विध्यत । विऽद्युता । रक्षः ॥ ९ ॥

(१४४) गूहत । गुह्यम् । तमः । वि । यात । विश्वम् । अत्रिणम् ।
ज्योतिः । कर्त । यत् । उश्मसि ॥ १० ॥

अन्वयः— १४२ (हे) सत्य-शवसः मरुतः ! शशमानस्य स्वेदस्य वेनतः वा कामस्य विद ।
१४३ (हे) सत्य-शवसः ! यूयं तत् आविः कर्त, विद्युता महित्वना रक्षः विध्यत ।
१४४ गुह्यं तमः गूहत, विश्वं अत्रिणं वि यात, यत् ज्योतिः उश्मसि कर्त ।

अर्थ- १४२ हे (सत्य-शवसः मरुतः !) सत्यसे उद्भूत बल से युक्त मरुतो ! (शशमानस्य) शीघ्र गति के कारण (स्वेदस्य) पसीने से भीगे हुए, तथा (वेनतः वा) तुम्हारी सेवा करनेवाले की (कामस्य विद) अभिलाषा पूर्ण करो।

१४३ हे (सत्य-शवसः !) सत्य के बल से युक्त वीरो ! (यूयं) तुम (तत्) वह अपना बल (आविः कर्त) प्रकट करो। उस अपने (विद्युता महित्वना) तेजस्वी बल से (रक्षः विध्यत) राक्षसोंको मार डालो।

१४४ (गुह्यं) गुफामें विद्यमान (तमः) अँधेरा (गूहत) ढक दो, विनष्ट करो। (विश्वं अत्रिणं) सभी पेटू दुरात्माओं को (वि यात) दूर कर दो। (यत् ज्योतिः) जिस तेजको हम (उश्मसि) पाने के लिए लालायित हैं, वह हमें (कर्त) दिला दो।

भावार्थ- १४२ ये वीर सचाई के भक्त हैं, अतः बलवान् हैं। जो जल्द चले जाने के कारण पसीने से तर होते हैं या लगातार काम करने से थकेमाँदे होते हैं, उनकी सेवा करनेवालों की इच्छाएँ ये वीर पूर्ण कर देते हैं।

१४३ ये वीर सच्चे बलवान् हैं। इनका वह बल प्रकट हो जाय और उसके फलस्वरूप सदैव कष्ट पहुँचानेवाले दुष्टों का नाश हो जाय।

१४४ अँधियारी विनष्ट करके तथा कभी तृप्त न होनेवाले स्वार्थी शत्रुओं को हटाकर सभी जगह प्रकाश का विस्तार करना चाहिए।

टिप्पणी- [१४२] (१) सत्य-शवस् = सत्य का बल, जो सच्चे बल से युक्त होते हैं। (२) शशमानः = (शश्-प्लुतगतौ) = शीघ्र गतिसे जानेवाला, बहुत काम करनेवाला (मंत्र १३४ देखो)। [१४४] (१) गुह्यं तमः = गुहा में रहनेवाला अँधेरा, अन्तस्तलका अज्ञानरूपी तमःपटल, घरमें विद्यमान अंधकार। (२) अत्रिन् = खानेवाले, पेटू, दूसरोंका भाग स्वयं ही उठाकर उपभोग लेनेवाले स्वार्थी। [इस मंत्रके साथ 'तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्माऽमृतं गमय॥' (बृहदा० १।३।२८) इसकी तुलना कीजिए।]

(ऋ० १।८७।१—६)

(१४५) प्रऽत्वक्षसः । प्रऽतवसः । विऽरप्शिनः । अनानताः । अविथुराः । ऋजीषिणः ।
जुष्टऽतमासः । नृऽतमासः । अञ्जिभिः ।
वि । आनज्रे । के । चित् । उस्राःऽइव । स्तृऽभिः ॥ १ ॥

(१४६) उपऽह्वरेषु । यत् । अचिध्वम् । ययिम् । वयःऽइव । मरुतः । केन । चित् । पथा ।
श्चोतन्ति । कोशाः । उप । वः । रथेषु । आ । घृतम् । उक्षत । मधुऽवर्णम् । अर्चते ॥२॥

अन्वयः- १४५ प्र-त्वक्षसः प्र-तवसः वि-रप्शिनः अन्-आनताः अ-विथुराः ऋजीषिणः जुष्ट-तमासः नृ-तमासः के चित् उस्राःइव स्तृभिः वि आनज्रे।

१४६ (हे) मरुतः! वयःइव केन चित् पथा यत् उपह्वरेषु ययिं अचिध्वं, वः रथेषु कोशाः उप श्चोतन्ति, अर्चते मधु-वर्णं घृतं आ उक्षत।

अर्थ- १४५ (प्र-त्वक्षसः) शत्रुदल को क्षीण करनेवाले, (प्र-तवसः) अच्छे बलशाली, (वि-रप्शिनः) बडे भारी वक्ता, (अन्-आनताः) किसीके सम्मुख शीश न झुकानेहारे, (अ-विथुराः) न बिछुडनेवाले अर्थात् एकतापूर्वक जीवनयात्रा बितानेवाले (ऋजीषिणः) सोमरस पीनेवाले या सीदा-सादा तथा सरल बर्ताव रखनेवाले, (जुष्ट-तमासः) जनता को अतीव सेव्य प्रतीत होनेवाले तथा (नृ-तमासः) नेताओं में प्रमुख ये वीर (केचित् उस्राःइव) सूर्यकिरणों के समान (स्तृभिः) वस्त्र तथा अलंकारों से युक्त होकर (वि आनज्रे) प्रकाशमान होते हैं।

१४६ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (वयःइव) पंछी की नाईं (केन चित् पथा) किसी भी मार्ग से आकर (यत्) जब (उपह्वरेषु) हमारे समीप (ययिं) आनेवालों को तुम (अचिध्वं) इकट्ठे करते हो, तब (वः रथेषु) तुम्हारे रथों में विद्यमान (कोशाः) भांडार हम पर (उप श्चोतन्ति) धन की वर्षा करने लगते हैं और (अर्चते) पूजा करनेवाले उपासक के लिए (मधु-वर्णं) मधु की नाईं स्वच्छ वर्णवाले (घृतं) घी या जल की तुम (आ उक्षत) वर्षा करते हो।

भावार्थ- १४५ शत्रुओं को हतबल करनेवाले, बलसे पूर्ण, अच्छे वक्ता, सदैव अपना मस्तक ऊँचा करके चलनेहारे, एक ही विचार से आचरण करनेवाले, सोम का सेवन करनेवाले, सेवनीय और प्रमुख नेता बन जाने की क्षमता रखनेवाले वीर वस्त्रालंकारों से सजाये जाने पर सूर्यकिरणवत् सुहाते हैं।

१४६ जिस वक्त तुम किसी भी राह से आकर हमारे निकट आनेवाले लोगों में एकता प्रस्थापित करते हो, संगठन करते हो, तब तुम्हारे रथों में रखे हुए धनभांडार हमें संपत्ति से निहाल कर देते हैं, हम पर मानों धन की संतत वृष्टिसी रखते हैं। तुम लोग भी भक्त एवं उपासक को स्वच्छ जल एवं निर्दोष अन्न पर्याप्त मात्रा में देते हो।

टिप्पणी [१४५] (१) प्र-त्वक्षस् = बडे सामर्थ्यसे युक्त, शत्रुओंको दुर्बल कर देनेवाले। (२) प्र-तवस् = जिसके विक्रम की थाह न मिलती हो, बलिष्ठ। (३) वि-रप्शिन् = (रप्-व्यक्तायां वाचि) गंभीर आवाज से बोलनेवाले, भारी वक्ता, धुआँधार वक्तृता की झडी लगानेवाले। (४) अन्-आनताः = किसी के सामने न नमनेवाले याने आत्मसम्मान को अक्षुण्ण तथा अडिग रखनेवाले। (५) अ-विथुरः = (व्यथ्- भयसंचलनयोः) न डरनेवाले, न बिछुडनेवाले। मंत्र १४३ देखिये। (६) जुष्ट-तमाः= सेवा करने के लिए योग्य, समीप रखने के लिए उचित। [१४६] (१) उपह्वर = एकान्त, समीप, टेढापन, रथ। (२) ययि = आनेवाला। (३) कोशः = खजाना। (४) घृतं = घी, जल।

(१४७) प्र । एषाम् । अज्मेषु । विथुराऽइव । रेजते । भूमिः । यामेषु । यत् । ह । युञ्जते । शुभे । ते । क्रीळयः । धुनयः । भ्राजत्ऽऋष्टयः । स्वयम् । महिऽत्वम् । पनयन्त । धूतयः ॥३॥

(१४८) सः । हि । स्वऽसृत् । पृषत्ऽअश्वः । युवा । गणः । अया । ईशानः । तविषीभिः । आऽवृतः । असि । सत्यः । ऋणऽयावा । अनेद्यः । अस्याः । धियः । प्रऽअविता । अथ । वृषा । गणः ॥४॥

अन्वयः— १४७ यत् ह शुभे युञ्जते, एषां अज्मेषु यामेषु भूमिः विथुराइव प्र रेजते, ते क्रीळयः धुनयः भ्राजत्-ऋष्टयः धूतयः स्वयं महित्वं पनयन्त ।

१४८ सः हि गणः युवा स्व-सृत् पृषत्-अश्वः तविषीभिः आवृतः अया ईशानः अथ सत्यः ऋण-यावा अ-नेद्यः वृषा गणः अस्याः धियः प्र अविता असि ।

अर्थ- १४७ (यत् ह) जब सचमुच ये वीर (शुभे) अच्छे कर्म करने के लिए (युञ्जते) कटिबद्ध हो उठते हैं, तब (एषां अज्मेषु यामेषु) इनके वेगवान् हमलों में (भूमिः) पृथ्वी तक (विथुराइव) अनाथ नारी के समान (प्र रेजते) बहुतही काँपने लगती है। (ते क्रीळयः) वे खिलाडीपन के भाव से प्रेरित, (धुनयः) गतिशील, चपल (भ्राजत्-ऋष्टयः) चमकीले हथियारों से युक्त, (धूतयः) शत्रुको विचलित कर देनेवाले वीर (स्वयं) अपना (महित्वं) महत्त्व या बडप्पन (पनयन्त) विख्यात कर डालते हैं ।

१४८ (सः हि गणः) वह वीरों का संघ सचमुचही (युवा) यौवनपूर्ण, (स्व-सृत्) स्वयंप्रेरक, (पृषत्-अश्वः) रथ में धब्बेवाले घोडे जोडनेवाला (तविषीभिः आवृतः) और भाँतिभाँति के बलों से युक्त रहने के कारण (अया ईशानः) इस संसार का प्रभु एवं स्वामी बनने के लिए उचित एवं सुयोग्य है। (अथ) और वह (सत्यः ऋण यावा) सचाई से बर्ताव करनेवाला तथा ऋण दूर करनेवाला, (अ-नेद्यः) अनिंदनीय और (वृषा) बलवान् दीख पडनेवाला (गणः) यह संघ (अस्याः धियः) इस हमारे कर्म तथा ज्ञान की (प्र अविता असि) रक्षा करनेवाला है।

भावार्थ- १४७ जिस समय ये वीर जनता का कल्याण करने के लिए सुसज्ज हो जाते हैं, उस समय इनके शत्रुओं पर टूट पडने से मारे डरके समूची पृथ्वी थर थर काँप उठती है। ऐसे अवसर पर खिलाडी, चपल, तेजस्वी शस्त्रास्त्र धारण करनेवाले तथा शत्रु को विकंपित करनेवाले वीरों की महनीयता प्रकट हो जाती है।

१४८ यह वीरों का संघ युवा, स्वयंप्रेरक, बलिष्ठ, सत्यनिष्ठ, उऋण होने की चेष्टा करनेवाला, प्रशंसनीय तथा सामर्थ्यवान् है, इस कारण से इस संसार पर प्रभुत्व प्रस्थापित करने की क्षमता पूर्ण रूपेण रखता है। हमारी इच्छा है कि, इस भाँति का यह समुदाय हमारे कर्मों तथा संकल्पों में हमारी रक्षा करनेवाला बने। (अगर विश्व में विजयी बनने की एवं जगत् पर स्वामित्व प्रस्थापित करने की लालसा हो, तो उपर्युक्त गुणों की ओर ध्यान देना अतीव आवश्यक है।)

टिप्पणी [१४७] (१) युञ्जते = युक्त हो जाते हैं, सज्ज बनते हैं, रथ जोडकर तैयार होते हैं। (२) वि-धुरा = (वि-धुरा) विधुर नारी; अनाथ, असहाय महिला। मंत्र १४५ वाँ देखिए।

(१४९) पितुः । प्रत्नस्य । जन्मना । वदामसि । सोमस्य । जिह्वा । प्र । जिगाति । चक्षसा ।
यत् । ईम् । इन्द्रम् । शमि । ऋक्वाणः । आशत । आत् । इत् । नामानि । यज्ञियानि । दधिरे ॥५॥
(१५०) श्रियसे । कम् । भानुऽभिः । सम् । मिमिक्षिरे । ते । रश्मिऽभिः । ते । ऋक्वऽभिः । सुऽखादयः ।
ते । वाशीऽमन्तः । इष्मिणः । अभीरवः । विद्रे । प्रियस्य । मारुतस्य । धाम्नः ॥ ६ ॥

अन्वयः- १४९ प्रत्नस्य पितुः जन्मना वदामसि, सोमस्य चक्षसा जिह्वा प्र जिगाति, यत् शमि ईं इन्द्रं ऋक्वाणः आशत, आत् इत् यज्ञियानि नामानि दधिरे।

१५० ते कं श्रियसे भानुभिः रश्मिभिः सं मिमिक्षिरे, ते ऋक्वभिः सु-खादयः वाशी-मन्तः इष्मिणः अ-भीरवः ते प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः विद्रे।

अर्थ- १४९ (प्रत्नस्य पितुः जन्मना) पुरातन पिता से जन्म पाये हुए हम (वदामसि) कहते हैं कि, (सोमस्य चक्षसा) सोम के दर्शन से (जिह्वा प्र जिगाति) जीभ- वाणी प्रगति करती है, अर्थात् वीरों के काव्य का गायन करती है। (यत्) जब ये वीर (शमि) शत्रु को शान्त करनेवाले युद्ध में (ईं इन्द्रं) उस इन्द्र को (ऋक्वाणः) स्फूर्ति देकर (आशत) सहायता करते हैं, (आत् इत्) तभी वे (यज्ञियानि नामानि) प्रशंसनीय नाम- यश (दधिरे) धारण करते हैं।

१५० (ते) वे वीर मरुत् (कं श्रियसे) सब को सुख मिले इसलिए (भानुभिः रश्मिभिः) तेजस्वी किरणों से (सं मिमिक्षिरे) सब मिलकर वर्षा करना चाहते हैं। (ते) वे (ऋक्वभिः) कवियों के साथ (सु-खादयः) उत्तम अन्न का सेवन करनेहारे या अच्छे आभूषण धारण करनेवाले, (वाशी-मन्तः) कुल्हाडी धारण करनेवाले (इष्मिणः) वेग से जानेवाले तथा (अ-भीरवः) न डरनेवाले (ते) ये वीर (प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः) प्रिय मरुतों के स्थान को (विद्रे) पाते हैं।

भावार्थ- १४९ श्रेष्ठ परिवार में उत्पन्न हुए हम इस बात की घोषणा करना चाहते हैं कि, सोम की आहुति देते समय मुँह से अर्थात् जिह्वा से भी देवताओं की सराहना करनी चाहिए। शत्रुदल को विनष्ट करने के लिए जो युद्ध छेडने पडते हैं, उनमें इन्द्र को स्फूर्ति प्रदान करते हुए ये वीर सराहनीय कीर्ति पाते हैं। उन नामों से उनकी कर्तृत्व-शक्ति प्रकट हुआ करती है।

१५० ये वीर जनता सुखी बने इस लिए भूमि में, पृथ्वी-मंडल पर बडा भारी दान करते हैं और यज्ञ में हविष्यान्न का भोजन करनेवाले, सुन्दर वीरोचित आभूषण पहननेवाले, कुठार हाथ में उठाकर शत्रुदल पर टूट पडनेवाले, निर्भयता से पूर्ण वीर अपने प्रिय देश को पाकर उस की सेवा में लगे रहते हैं।

टिप्पणी [१४९] (१) शम् = शांत करना, शत्रु का वध करना। (२) ऋक्वाणः = (ऋच्-स्तुतौ) = प्रशंसा करके प्रेरणा करनेवाले। ' प्रहर भगवः, जहि, वीरयस्व ' ऐसे मंत्रों से या ' शूर, वीर ' आदि नाम पुकार कर उत्साह बढाया जाता है। वीरों की उमंग कैसी बढानी चाहिए, सो यहाँ पर विदित होगा। प्रशंसा करनेयोग्य नाम ही (यज्ञियानि नामानि) धारण करने चाहिए। ' विक्रमसिंह, प्रताप, रणशूर ' वगैरह नाम वीरों को देने चाहिये। वेद में ' वृत्रहा, शत्रुहा ' जैसे नाम हैं, जो कि उत्साहवर्धक हैं। सैनिकों को प्रोत्साहित करने की सूचना यहाँ पर मिलती है। [१५०] (१) सु-खादिः = अच्छा अन्न खानेवाले, सुन्दर वर्दी या गणवेश पहननेवाले, या वीरों के गहने धारण करनेवाले। (२) वाशी-मान् = कुठार, भाले, तलवार, परशु लेकर आक्रमण करनेवाला वीर। मंत्र ७७ देखो। (३) इष्मिन् = गतिमान्, आक्रमणशील। (४) अ-भीरुः = निडर। (५) प्रियस्य धाम्नः विद्रे = प्यारे देश को पहुँच जाते हैं, या प्राप्त हो जाते हैं।

(१४७) प्र । एषाम् । अज्मेषु । विथुराऽइव । रेजते । भूमिः । यामेषु । यत् । ह । युञ्जते । शुभे । ते । क्रीळयः । धुनयः । भ्राजत्ऽऋष्टयः । स्वयम् । महिऽत्वम् । पनयन्त । धूतयः ॥३॥

(१४८) सः । हि । स्वऽसृत् । पृषत्ऽअश्वः । युवा । गणः । अया । ईशानः । तविषीभिः । आऽवृतः । असि । सत्यः । ऋणऽयावा । अनेद्यः । अस्याः । धियः । प्रऽअविता । अथ । वृषा । गणः ॥४॥

अन्वयः— १४७ यत् ह शुभे युञ्जते, एषां अज्मेषु यामेषु भूमिः विथुराइव प्र रेजते, ते क्रीळयः धुनयः भ्राजत्-ऋष्टयः धूतयः स्वयं महित्वं पनयन्त ।

१४८ सः हि गणः युवा स्व-सृत् पृषत्-अश्वः तविषीभिः आवृतः अया ईशानः अथ सत्यः ऋण-यावा अ-नेद्यः वृषा गणः अस्याः धियः प्र अविता असि ।

अर्थ- १४७ (यत् ह) जब सचमुच ये वीर (शुभे) अच्छे कर्म करने के लिए (युञ्जते) कटिबद्ध हो उठते हैं, तब (एषां अज्मेषु यामेषु) इनके वेगवान् हमलों में (भूमिः) पृथ्वी तक (विथुराइव) अनाथ नारी के समान (प्र रेजते) बहुतही काँपने लगती है। (ते क्रीळयः) वे खिलाडीपन के भाव से प्रेरित, (धुनयः) गतिशील, चपल (भ्राजत्-ऋष्टयः) चमकीले हथियारों से युक्त, (धूतयः) शत्रुको विचलित कर देनेवाले वीर (स्वयं) अपना (महित्वं) महत्त्व या बडप्पन (पनयन्त) विख्यात कर डालते हैं ।

१४८ (सः हि गणः) वह वीरों का संघ सचमुचही (युवा) यौवनपूर्ण, (स्व-सृत्) स्वयंप्रेरक, (पृषत्-अश्वः) रथ में धब्बेवाले घोडे जोडनेवाला (तविषीभिः आवृतः) और भाँतिभाँति के बलों से युक्त रहने के कारण (अया ईशानः) इस संसार का प्रभु एवं स्वामी बनने के लिए उचित एवं सुयोग्य है। (अथ) और वह (सत्यः ऋण यावा) सचाई से बर्ताव करनेवाला तथा ऋण दूर करनेवाला, (अ-नेद्यः) अनिंदनीय और (वृषा) बलवान् दीख पडनेवाला (गणः) यह संघ (अस्याः धियः) इस हमारे कर्म तथा ज्ञान की (प्र अविता असि) रक्षा करनेवाला है।

भावार्थ- १४७ जिस समय ये वीर जनता का कल्याण करने के लिए सुसज्ज हो जाते हैं, उस समय इनके शत्रुओं पर टूट पडने से मारे डरके समूची पृथ्वी थर थर काँप उठती है। ऐसे अवसर पर खिलाडी, चपल, तेजस्वी शस्त्र धारण करनेवाले तथा शत्रु को विकंपित करनेवाले वीरों की महनीयता प्रकट हो जाती है।

१४८ यह वीरों का संघ युवा, स्वयंप्रेरक, बलिष्ठ, सत्यनिष्ठ, उऋण होने की चेष्टा करनेवाला, प्रशंसनीय तथा सामर्थ्यवान् है, इस कारण से इस संसार पर प्रभुत्व प्रस्थापित करने की क्षमता पूर्ण रूपेण रखता है। हमारी इच्छा है कि, इस भाँति का यह समुदाय हमारे कर्मों तथा संकल्पों में हमारी रक्षा करनेवाला बने। (अगर विश्व में विजयी बनने की एवं जगत् पर स्वामित्व प्रस्थापित करने की लालसा हो, तो उपर्युक्त गुणों की ओर ध्यान देना अतीव आवश्यक है।)

टिप्पणी [१४७] (१) युञ्जते = युक्त हो जाते हैं, सज्ज बनते हैं, रथ जोडकर तैयार होते हैं। (२) वि-थुरा = (वि-धुरा) विधुरा नारी: अनाथ, असहाय महिला। मंत्र १४५ वाँ देखिए।

(१४९) पितुः । प्रत्नस्यं । जन्मंना । वदामसि । सोमस्य । जिह्वा । प्र । जिगाति । चक्षसा ।
यत् । ईम् । इन्द्रम् । शमिं । ऋक्वाणः । आशंत । आत् । इत् । नामानि । यज्ञियानि । दधिरे ॥५॥
(१५०) श्रियसें । कम् । भानुऽभिः । सम् । मिमिक्षिरे । ते । रश्मिऽभिः । ते । ऋक्वऽभिः । सुऽखादयः ।
ते । वाशीऽमन्तः । इष्मिणः । अभीरवः । विद्रे । प्रियस्यं । मारुतस्य । धाम्नः ॥ ६ ॥

अन्वयः- १४९ प्रत्नस्य पितुः जन्मना वदामसि, सोमस्य चक्षसा जिह्वा प्र जिगाति, यत् शमि ईं इन्द्रं ऋक्वाणः आशत, आत् इत् यज्ञियानि नामानि दधिरे।

१५० ते कं श्रियसे भानुभिः रश्मिभिः सं मिमिक्षिरे, ते ऋक्वभिः सु-खादयः वाशी-मन्तः इष्मिणः अ-भीरवः ते प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः विद्रे।

अर्थ- १४९ (प्रत्नस्य पितुः जन्मना) पुरातन पिता से जन्म पाये हुए हम (वदामसि) कहते हैं कि, (सोमस्य चक्षसा) सोम के दर्शन से (जिह्वा प्र जिगाति) जीभ- वाणी प्रगति करती है, अर्थात् वीरों के काव्य का गायन करती है। (यत्) जब ये वीर (शमि) शत्रु को शान्त करनेवाले युद्ध में (ईं इन्द्रं) उस इन्द्र को (ऋक्वाणः) स्फूर्ति देकर (आशत) सहायता करते हैं, (आत् इत्) तभी वे (यज्ञियानि नामानि) प्रशंसनीय नाम- यश (दधिरे) धारण करते हैं।

१५० (ते) वे वीर मरुत् (कं श्रियसे) सब को सुख मिले इसलिए (भानुभिः रश्मिभिः) तेजस्वी किरणों से (सं मिमिक्षिरे) सब मिलकर वर्षा करना चाहते हैं। (ते) वे (ऋक्वभिः) कवियों के साथ (सु-खादयः) उत्तम अन्न का सेवन करनेहारे या अच्छे आभूषण धारण करनेवाले, (वाशी-मन्तः) कुल्हाडी धारण करनेवाले (इष्मिणः) वेग से जानेवाले तथा (अ-भीरवः) न डरनेवाले (ते) वे वीर (प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः) प्रिय मरुतों के स्थान को (विद्रे) पाते हैं।

भावार्थ- १४९ श्रेष्ठ परिवार में उत्पन्न हुए हम इस बात की घोषणा करना चाहते हैं कि, सोम की आहुति देते समय मुँह से अर्थात् जिह्वा से भी देवताओं की सराहना करनी चाहिए। शत्रुदल को विनष्ट करने के लिए जो युद्ध छेडने पडते हैं, उनमें इन्द्र को स्फूर्ति प्रदान करते हुए ये वीर सराहनीय कीर्ति पाते हैं। उन नामों से उनकी कर्तृत्व-शक्ति प्रकट हुआ करती है।

१५० ये वीर जनता सुखी बने इस लिए भूमि में, पृथ्वी-मंडल पर बडा भारी दान करते हैं और यज्ञ में हविष्यान्न का भोजन करनेवाले, सुन्दर वीरोचित आभूषण पहननेवाले, कुठार हाथ में उठाकर शत्रुदल पर टूट पडनेवाले, निर्भयता से पूर्ण वीर अपने प्रिय देश को पाकर उस की सेवा में लगे रहते हैं।

टिप्पणी [१४९] (१) शम् = शांत करना, शत्रु का वध करना। (२) ऋक्वाणः = (ऋच्-स्तुतौ) = प्रशंसा करके प्रेरणा करनेवाले। प्रहर भगवः, जहि, वीरयस्व ' ऐसे मंत्रों से या ' शूर, वीर ' आदि नाम पुकार कर उत्साह बढाया जाता है। वीरों की उमंग कैसी बढानी चाहिए, सो यहाँ पर विदित होगा। प्रशंसा करनेयोग्य नाम ही (यज्ञियानि नामानि) धारण करने चाहिए। ' विक्रमसिंह, प्रताप, राजपूत ' वगैरह नाम वीरों को देने चाहिये। वेद में ' वृत्रहा, दस्युहा ' जैसे नाम हैं, जो कि उत्साहवर्धक हैं। सैनिकों को प्रोत्साहित करने की सूचना यहाँ पर मिलती है। [१५०] (१) सु-खादिः = अच्छा अन्न खानेवाले, सुन्दर वरदी या गणवेश पहननेवाले, या वीरों के गहने धारण करनेवाले। (२) वाशी-मान् = कुठार, भाले, तलवार, परशु लेकर आक्रमण करनेवाला वीर। मंत्र ७७ देखो। (३) इष्मिन् = गतिमान्, आक्रमणशील। (४) अ-भीरु = निडर। (५) प्रियस्य धाम्नः विद्रे = प्यारे देश को पहुँच जाते हैं, या प्राप्त हो जाते हैं।

(१४७) प्र । एषाम् । अज्मेषु । विथुराऽइंव । रेजते । भूमिः । यामेषु । यत् । ह । युञ्जते । शुभे ते । क्रीळयः । धुनयः । भ्राजत्ऽऋष्टयः । स्वयम् । महिऽत्वम् । पनयन्त । धूतयः ॥३॥

(१४८) सः । हि । स्वऽसृत् । पृषत्ऽअश्वः । युवा । गणः । अया । ईशानः । तविषीभिः । आऽवृतः । असि । सत्यः । ऋणऽयावा । अनेद्यः । अस्याः । धियः । प्रऽअविता । अथ । वृषा । गणः ॥४॥

अन्वयः— १४७ यत् ह शुभे युञ्जते, एषां अज्मेषु यामेषु भूमिः विथुराइव प्र रेजते, ते क्रीळयः धुनयः भ्राजत्-ऋष्टयः धूतयः स्वयं महित्वं पनयन्त ।

१४८ सः हि गणः युवा स्व-सृत् पृषत्-अश्वः तविषीभिः आवृतः अया ईशानः अथ सत्यः ऋण-यावा अ-नेद्यः वृषा गणः अस्याः धियः प्र अविता असि ।

अर्थ- १४७ (यत् ह) जब सचमुच ये वीर (शुभे) अच्छे कर्म करने के लिए (युञ्जते) कटिबद्ध हो उठते हैं, तब (एषां अज्मेषु यामेषु) इनके वेगवान् हमलों में (भूमिः) पृथ्वी तक (विथुराइव) अनाथ नारी के समान (प्र रेजते) बहुतही काँपने लगती है। (ते क्रीळयः) वे खिलाडीपन के भाव से प्रेरित, (धुनयः) गतिशील, चपल (भ्राजत्-ऋष्टयः) चमकीले हथियारों से युक्त, (धूतयः) शत्रुको विचलित कर देनेवाले वीर (स्वयं) अपना (महित्वं) महत्त्व या बडप्पन (पनयन्त) विख्यात कर डालते हैं ।

१४८ (सः हि गणः) वह वीरों का संघ सचमुचही (युवा) यौवनपूर्ण, (स्व-सृत्) स्वयंप्रेरक, (पृषत्-अश्वः) रथ में धब्बेवाले घोडे जोडनेवाला (तविषीभिः आवृतः) और भाँतिभाँति के बलों से युक्त रहने के कारण (अया ईशानः) इस संसार का प्रभु एवं स्वामी बनने के लिए उचित एवं सुयोग्य है। (अथ) और वह (सत्यः ऋण यावा) सचाई से बर्ताव करनेवाला तथा ऋण दूर करनेवाला, (अ-नेद्यः) अनिंदनीय और (वृषा) बलवान् दीख पडनेवाला (गणः) यह संघ (अस्याः धियः) इस हमारे कर्म तथा ज्ञान की (प्र अविता असि) रक्षा करनेवाला है।

भावार्थ- १४७ जिस समय ये वीर जनता का कल्याण करने के लिए सुसज्ज हो जाते हैं, उस समय इनके शत्रुओं पर टूट पडने से मारे डरके समूची पृथ्वी थर थर काँप उठती है। ऐसे अवसर पर खिलाडी, चपल, तेजस्वी शस्त्र धारण करनेवाले तथा शत्रु को विकंपित करनेवाले वीरों की महनीयता प्रकट हो जाती है।

१४८ यह वीरों का संघ युवा, स्वयंप्रेरक, बलिष्ठ, सत्यनिष्ठ, उऋण होने की चेष्टा करनेवाला, प्रशंसनीय तथा सामर्थ्यवान् है, इस कारण से इस संसार पर प्रभुत्व प्रस्थापित करने की क्षमता पूर्ण रूपेण रखता है। हमारी इच्छा है कि इस भाँति का यह समुदाय हमारे कर्मों तथा संकटों में हमारी रक्षा करनेवाला बने। (अगर विश्व में विख्यात बनने की एवं जगत् पर स्वामित्व प्रस्थापित करने की लालसा हो, तो उपर्युक्त गुणों की ओर ध्यान देना अतीव आवश्यक है।)

टिप्पणी [१४७] (१) युञ्जते = युक्त हो जाते हैं, सज्ज बनते हैं, रथ जोडकर तैयार होते हैं। (२) विथुरा = (वि-धुरा) विधुरा नारी: अनाथ, असहाय महिला। मंत्र १४५ वाँ देखिए।

(१४९) पितुः । प्रत्नस्यं । जन्मंना । वदामसि । सोमंस्य । जिह्वा । प्र । जिगाति । चक्षसा ।
यत् । ईम् । इन्द्रंम् । शमिं । ऋक्वाणः । आशंत । आत् । इत् । नामानि । यज्ञियानि । दधिरे ॥५॥
(१५०) श्रियसें । कम् । भानुऽभिः । सम् । मिमिक्षिरे । ते । रश्मिऽभिः । ते । ऋक्वऽभिः । सुऽखादयः ।
ते । वाशींऽमन्तः । इष्मिणः । अभीरवः । विद्रे । प्रियस्यं । मारुतस्य । धाम्नः ॥ ६ ॥

अन्वयः- १४९ प्रत्नस्य पितुः जन्मना वदामसि, सोमस्य चक्षसा जिह्वा प्र जिगाति, यत् शमि ईं इन्द्रं ऋक्वाणः आशत, आत् इत् यज्ञियानि नामानि दधिरे।

१५० ते कं श्रियसे भानुभिः रश्मिभिः सं मिमिक्षिरे, ते ऋक्वभिः सु-खादयः वाशी-मन्तः इष्मिणः अ-भीरवः ते प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः विद्रे।

अर्थ- १४९ (प्रत्नस्य पितुः जन्मना) पुरातन पिता से जन्म पाये हुए हम (वदामसि) कहते हैं कि, (सोमस्य चक्षसा) सोम के दर्शन से (जिह्वा प्र जिगाति) जीभ- वाणी प्रगति करती है, अर्थात् वीरों के काव्य का गायन करती है। (यत्) जब ये वीर (शमि) शत्रु को शान्त करनेवाले युद्ध में (ईं इन्द्रं) उस इन्द्र को (ऋक्वाणः) स्फूर्ति देकर (आशत) सहायता करते हैं, (आत् इत्) तभी वे (यज्ञियानि नामानि) प्रशंसनीय नाम- यश (दधिरे) धारण करते हैं।

१५० (ते) वे वीर मरुत् (कं श्रियसे) सब को सुख मिले इसलिए (भानुभिः रश्मिभिः) तेजस्वी किरणों से (सं मिमिक्षिरे) सब मिलकर वर्षा करना चाहते हैं। (ते) वे (ऋक्वभिः) कवियों के साथ (सु-खादयः) उत्तम अन्न का सेवन करनेहारे या अच्छे आभूषण धारण करनेवाले, (वाशी-मन्तः) कुल्हाडी धारण करनेवाले (इष्मिणः) वेग से जानेवाले तथा (अ-भीरवः) न डरनेवाले (ते) वे वीर (प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः) प्रिय मरुतों के स्थान को (विद्रे) पाते हैं।

भावार्थ- १४९ श्रेष्ठ परिवार में उत्पन्न हुए हम इस बात की घोषणा करना चाहते हैं कि, सोम की आहुति देते समय मुंह से अर्थात् जिह्वा से भी देवताओं की सराहना करनी चाहिए। शत्रुदल को विनष्ट करने के लिए जो युद्ध छेडने पडते हैं, उनमें इन्द्र को स्फूर्ति प्रदान करते हुए ये वीर सराहनीय कीर्ति पाते हैं। उन नामों से उनकी कर्तृत्व-शक्ति प्रकट हुआ करती है।

१५० ये वीर जनता सुखी बने इस लिए भूमि में, पृथ्वी-मंडल पर बडा भारी दान करते हैं और यज्ञ में हविष्यान्न का भोजन करनेवाले, सुन्दर वीरोचित आभूषण पहननेवाले, कुठार हाथ में उठाकर शत्रुदल पर टूट पडनेवाले, निर्भयता से पूर्ण वीर अपने प्रिय देश को पाकर उस की सेवा में लगे रहते हैं।

टिप्पणी [१४९] (१) शम् = शांत करना, शत्रु का वध करना। (२) ऋक्वाणः = (ऋच्-स्तुतौ) = प्रशंसा करके प्रेरणा करनेवाले। 'प्रहर भगवः, जहि, वीरयस्व' ऐसे मंत्रों से या 'शूर, वीर' आदि नाम पुकार कर उत्साह बढाया जाता है। वीरों की उमंग कैसी बढानी चाहिए, सो यहाँ पर विदित होगा। प्रशंसा करनेयोग्य नाम ही (यज्ञियानि नामानि) धारण करने चाहिए। 'विक्रमसिंह, प्रताप, राजपूत' वगैरह नाम वीरों को देने चाहिये। वेद में 'वृत्रहा, शत्रुहा' जैसे नाम हैं, जो कि उत्साहवर्धक हैं। सैनिकों को प्रोत्साहित करने की सूचना यहाँ पर मिलती है। [१५०] (१) सु-खादिः = अच्छा अन्न खानेवाले, सुन्दर वर्दी या गणवेश पहननेवाले, या वीरों के गहने धारण करनेवाले। (२) वाशी-मान् = कुठार, भाले, तलवार, परशु लेकर आक्रमण करनेवाला वीर। मंत्र ७७ देखो। (३) इष्मिन् = गतिमान्, आक्रमणशील। (४) अ-भीरुः = निडर। (५) प्रियस्य धाम्नः विद्रे = प्यारे देश को पहुँच जाते हैं, या प्राप्त हो जाते हैं।

[illegible] । [illegible] । त्रिधुगाऽइंव । रेजते । भूमिः । यामेषु । यत् । ह । युञ्जते । [illegible]
[illegible] । [illegible] । [illegible] । स्वयम् । महिऽत्वम् । पनयन्त । धूतयः ॥२॥

[illegible] । [illegible] । [illegible] । युवा । गणः । अया । ईशानः । तविषीभिः । [illegible]
[illegible] । [illegible] । [illegible] । अस्याः । धियः । प्रऽअविता । अर्थ । वृषा । गणः ॥

[illegible] यामेषु भूमिः त्रिधुगाऽइव प्र रेजते, [illegible]
[illegible]

[illegible] तविषीभिः [illegible] अया ईशानः [illegible]
[illegible]

[illegible]

(१४९) पितुः । प्रत्नस्य । जन्मना । वदामसि । सोमस्य । जिह्वा । प्र । जिगाति । चक्षसा ।
यत् । ईम् । इन्द्रम् । शमि । ऋक्वाणः । आशत । आत् । इत् । नामानि । यज्ञियानि । दधिरे ॥५॥
(१५०) श्रियसे । कम् । भानुऽभिः । सम् । मिमिक्षिरे । ते । रश्मिऽभिः । ते । ऋक्वऽभिः । सुऽखादयः ।
ते । वाशीऽमन्तः । इष्मिणः । अभीरवः । विद्रे । प्रियस्य । मारुतस्य । धाम्नः ॥ ६ ॥

अन्वयः- १४९ प्रत्नस्य पितुः जन्मना वदामसि, सोमस्य चक्षसा जिह्वा प्र जिगाति, यत् शमि ईं इन्द्रं ऋक्वाणः आशत, आत् इत् यज्ञियानि नामानि दधिरे।

१५० ते कं श्रियसे भानुभिः रश्मिभिः सं मिमिक्षिरे, ते ऋक्वभिः सु-खादयः वाशी-मन्तः इष्मिणः अ-भीरवः ते प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः विद्रे।

अर्थ- १४९ (प्रत्नस्य पितुः जन्मना) पुरातन पिता से जन्म पाये हुए हम (वदामसि) कहते हैं कि, सोमस्य चक्षसा) सोम के दर्शन से (जिह्वा प्र जिगाति) जीभ- वाणी प्रगति करती है, अर्थात् वीरों के काव्य का गायन करती है। (यत्) जब ये वीर (शमि) शत्रु को शान्त करनेवाले युद्ध में (ईं इन्द्रं) इस इन्द्र को (ऋक्वाणः) स्फूर्ति देकर (आशत) सहायता करते हैं, (आत् इत्) तभी वे (यज्ञियानि नामानि) प्रशंसनीय नाम- यश (दधिरे) धारण करते हैं।

१५० (ते) वे वीर मरुत् (कं श्रियसे) सब को सुख मिले इसलिए (भानुभिः रश्मिभिः) तेजस्वी किरणों से (सं मिमिक्षिरे) सब मिलकर वर्षा करना चाहते हैं। (ते) वे (ऋक्वभिः) कवियों के साथ (सु-खादयः) उत्तम अन्न का सेवन करनेहारे या अच्छे आभूषण धारण करनेवाले, (वाशी-मन्तः) कुल्हाडी धारण करनेवाले (इष्मिणः) वेग से जानेवाले तथा (अ-भीरवः) न डरनेवाले (ते) वे वीर (प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः) प्रिय मरुतों के स्थान को (विद्रे) पाते हैं।

भावार्थ- १४९ श्रेष्ठ परिवार में उत्पन्न हुए हम इस बात की घोषणा करना चाहते हैं कि, सोम की आहुति देते समय मुँह से अर्थात् जिह्वा से भी देवताओं की सराहना करनी चाहिए। शत्रुदल को विनष्ट करने के लिए जो युद्ध छेडने पडते हैं, उनमें इन्द्र को स्फूर्ति प्रदान करते हुए ये वीर सराहनीय कीर्ति पाते हैं। उन नामों से उनकी कर्तृत्व-शक्ति प्रकट हुआ करती है।

१५० ये वीर जनता सुखी बने इस लिए भूमि में, पृथ्वी-मंडल पर बडा भारी दान करते हैं और यज्ञ में हविष्यान्न का भोजन करनेवाले, सुन्दर वीरोचित आभूषण पहननेवाले, कुठार हाथ में उठाकर शत्रुदल पर टूट पडनेवाले, निर्भयता से पूर्ण वीर अपने प्रिय देश को पाकर उस की सेवा में लगे रहते हैं।

टिप्पणी [१४९] (१) शम् = शांत करना, शत्रु का वध करना। (२) ऋक्वाणः = (ऋच्-स्तुतौ) = प्रशंसा करके प्रेरणा करनेवाले। 'प्रहर भगवः, जहि, वीरयस्व' ऐसे मंत्रों से या 'शूर, वीर' आदि नाम पुकार कर उत्साह बढाया जाता है। वीरों की उमंग कैसी बढानी चाहिए, सो यहाँ पर विदित होगा। प्रशंसा करनेयोग्य नाम ही (यज्ञियानि नामानि) धारण करने चाहिए। 'विक्रमसिंह, प्रताप, राजपूत' वगैरह नाम वीरों को देने चाहिये। वेद में 'वृत्रहा, शत्रुहा' जैसे नाम हैं, जो कि उत्साहवर्धक हैं। सैनिकों को प्रोत्साहित करने की सूचना यहाँ पर मिलती है। [१५०] (१) सु-खादिः = अच्छा अन्न खानेवाले, सुन्दर वरदी या गणवेश पहननेवाले, या वीरों के गहने धारण करनेवाले। (२) वाशी-मान् = कुठार, भाले, तलवार, परशु लेकर आक्रमण करनेवाला वीर। मंत्र १७ देखो। (३) इष्मिन् = गतिमान्, आक्रमणशील। (४) अ-भीरुः = निडर। (५) प्रियस्य धाम्नः विद्रे = प्यारे देश को पहुँच जाते हैं, या प्राप्त हो जाते हैं।

(ऋ० १।८८।१-६)

(१५१) आ। विद्युन्मत्ऽभिः। मरुतः। सुऽअर्कैः। रथेभिः। यात। ऋष्टिमत्ऽभिः। अश्वऽपर्णैः।
आ। वर्षिष्ठया। नः। इषा। वयः। न। पप्तत। सुऽमायाः॥ १॥
(१५२) ते। अरुणेभिः। वरम्। आ। पिशङ्गैः। शुभे। कम्। यान्ति। रथतूःऽभिः। अश्वैः।
रुक्मः। न। चित्रः। स्वधितिऽवान्। पव्या। रथस्य। जङ्घनन्त। भूम॥ २॥

अन्वयः-१५१ (हे) मरुतः! विद्युन्मद्भिः सु-अर्कैः ऋष्टि-मद्भिः अश्व-पर्णैः रथेभिः आ यात, (हे) सु-मायाः! वर्षिष्ठया इषा, वयः न, नः आ पप्तत।

१५२ ते अरुणेभिः पिशङ्गैः रथ-तूर्भिः अश्वैः शुभे वरं कं आ यान्ति, रुक्मः न चित्रः, स्वधिति-वान्, रथस्य पव्या भूम जंघनन्त।

अर्थ- १५१ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (विद्युन्मद्भिः) बिजली से युक्त या बिजली की नाईं अति-तेजस्वी, (सु-अर्कैः) अतिशय पूज्य, (ऋष्टि-मद्भिः) हथियारों से सजे हुए तथा (अश्व-पर्णैः) घोडों से युक्त होने के कारण वेग से जानेवाले (रथेभिः) रथों से (आ यात) इधर आओ। हे (सु-मायाः !) अच्छे कुशल वीरो ! तुम (वर्षिष्ठया इषा) श्रेष्ठ अन्न के साथ (वयः न) पंछियों के समान वेगपूर्वक (नः आ पप्तत) हमारे निकट चले आओ।

१५२ (ते) वे वीर (अरुणेभिः) रक्तिम दीख पडनेवाले तथा (पिशङ्गैः) भूरे वदामी वर्ण-वाले और (रथ-तूर्भिः) त्वरापूर्वक रथ खींचनेवाले (अश्वैः) घोडों के साथ (शुभे) शुभकार्य करने के लिए और (वरं कं) उच्च कोटिका कल्याण संपादन करने के लिए, सुख देनेके लिए (आ यान्ति) आते हैं। वह वीरों का संघ (रुक्मः न) सुवर्णकी भाँति (चित्रः) प्रेक्षणीय तथा (स्वधिति-वान्) शस्त्रों से युक्त है। ये वीर (रथस्य पव्या) वाहन के पहियोंकी लौहपट्टिकाओं से (भूम) समूची पृथ्वी पर (जंघनन्त) गति करते हैं, गतिशील बनते हैं।

भावार्थ- १५१ अपने शस्त्रास्त्र, रथ तथा रण-चातुरीके द्वारा वीर पुरुष अच्छा अन्न प्राप्त कर लें और ऐसी आयोजना ढूँढ निकालें कि वह सब को यथावत् मिल जाए।

१५२ वीर पुरुष समूची जनता का श्रेष्ठ कल्याण करने के लिए अपने रथों को हथियारों तथा अन्य विविध आयुधों से भली भाँति सज्ज करके सभी स्थानों में संचार करें।

टिप्पणी- [१५१] (१) अश्व-पर्णः = (अश्वानां पर्णं पतनं गमनं यत्र) अश्वों के जोडने से वेगपूर्वक जाने वाला (रथ)। (२) सु-मायाः = (माया = कौशल्य, दस्तकारी।) उत्तम कार्य-कुशलता से युक्त, कलापूर्ण वस्तु बनानेहारे। (३) वयः न = पंछियों के समान (आकाश में से जैसे पक्षी चले आते हैं, उसी तरह तुम आकाश-यानों में बैठकर आ जाओ।) (देखो मंत्र ९१,३८९) [१५२] (१) रुक्मः = जिस पर छाप दीख पडती हो ऐसा सोने का टुकडा, अलंकार, मुहर। (२) स्व-धितिः = कुठार, शस्त्र। (३) पविः = रथ के पहिये पर लगी हुई लौह पट्टिका; चक्र नामक एक हथियार। (४) हन् = (हिंसागत्योः) वध करना, गति करना (जाना)।

(१५३) श्रिये । कम् । वः । अधि । तनूषु । वाशीः । मेधा । वना । न । कृणवन्ते । ऊर्ध्वा ।
युष्मभ्यम् । कम् । मरुतः । सुऽजाताः । तुविऽद्युम्नासः । धनयन्ते । अद्रिम् ॥ ३ ॥
(१५४) अहानि । गृध्राः । परि । आ । वः । आ । अगुः ।
इमाम् । धियम् । वार्कार्याम् । च । देवीम् ।
ब्रह्म । कृण्वन्तः । गोतमासः । अर्कैः ।
ऊर्ध्वम् । नुनुद्रे । उत्सऽधिम् । पिबध्यै ॥ ४ ॥

अन्वयः— १५३ श्रिये कं वः तनूषु अधि वाशीः (वर्तते), वना न मेधा ऊर्ध्वा कृणवन्ते, (हे) सु-जाताः मरुतः! तुवि-द्युम्नासः युष्मभ्यं कं अद्रिं धनयन्ते।

१५४ (हे) गोतमासः! गृध्राः वः अहानि परि आ आ अगुः, वार्-कार्यां च इमां देवीं धियं अर्कैः ब्रह्म कृण्वन्तः, पिबध्यै उत्सधिं ऊर्ध्वं नुनुद्रे।

अर्थ- १५३ (श्रिये कं) विजयश्री तथा सुख पानेके लिए (वः तनूषु अधि) तुम्हारे शरीरोंपर (वाशीः) आयुध लटकते रहते हैं; (वना न) वनके वृक्षों के समान [अर्थात् वनों में पेड जैसे ऊँचे बढते हैं, उसी तरह तुम्हारे उपासक तथा भक्त] अपनी (मेधा) बुद्धिको (ऊर्ध्वा) उच्च कोटिकी (कृणवन्ते) बना देते हैं। हे (सु-जाताः मरुतः!) अच्छे परिवारमें उत्पन्न वीर मरुतो! (तुवि-द्युम्नासः) अत्यंत दिव्य मनसे युक्त तुम्हारे भक्त (युष्मभ्यं कं) तुम्हें सुख देनेके लिए (अद्रिं) पर्वतसे भी (धनयन्ते) धनका सृजन करते हैं [पर्वतोंपर से सोमसदृश वनस्पति लाकर तुम्हारे लिए अन्न तैयार करते हैं।]

१५४ हे (गोतमासः!) गौतमो! (गृध्राः वः) जल की इच्छा करनेवाले तुम्हें अब (अहानि) अच्छे दिन (परि आ आ अगुः) प्राप्त हो चुके हैं। अब तुम (वार्-कार्यां च) जलसे करनेयोग्य (इमां देवीं धियं) इन दिव्य कर्मों को (अर्कैः) पूज्य मंत्रों से (ब्रह्म) ज्ञानसे पवित्र (कृण्वन्तः) करो। (पिबध्यै) पानी पीनेके लिए मिले, सुगमता हो, इसलिए अब (ऊर्ध्वं) ऊपर रखे हुए (उत्सधिं) कुंडके जल को तुम्हारी ओर (नुनुद्रे) नहरद्वारा पहुँचाया गया है।

भावार्थ- १५३ समर में विजयी बनने के लिए और जनता का सुख बढाने के लिए भी वीर पुरुष अपने समीप सदैव शस्त्र रखें। अपनी विचारप्रणाली को भी हमेशा परिमार्जित तथा परिष्कृत रखें। मन में दिव्य विचारों का संग्रह बनाकर पर्वतीय एवं पार्थिव धनवैभव का उपयोग समूची जनता का सुख बढाने के लिए करें।

१५४ निवासस्थलों में यथेष्ट जल मिले, तो बहुत सारी सुविधाएँ प्राप्त हुआ करती हैं, इसमें क्या संशय? इस कारण से इन वीरोंने गोतम के आश्रम के लिए जल की सुविधा कर डाली। पश्चात् उस स्थान में मानवी बुद्धि ज्ञान के कारण पवित्र हो जाए, इस उत्साह से प्रभावित होकर महत्वपूर्णसदृश कर्मों की पूर्ति कराई। (मंत्र १३२,१३३ देखिए।)

टिप्पणी- [१५३] (१) द्युम्नं = (द्यु-मनः) तेजस्वी मन, विचार, यश, कांति, शोभा, शक्ति, धन, तेज, बल। (२) अ-द्रिः = तोड देने में असंभव दीख पडे, ऐसा पर्वत, सोम कूटने का पत्थर, वृक्ष, मेघ, वज्र, शस्त्र। (३) धनयन्ते = (धन शब्दात्तत्करोतीति णिच्) धन पैदा करते हैं, आवाज निकालते हैं। [१५४] (१) गृध्रः = लालची, गिद्ध, इच्छा करनेवाला। (२) वार्कार्या = (वार्-कार्या) जल से निपटा होनेवाले (कर्म)। (३) उत्स-धिः = कूआँ, कुंड, जलाशय, बावडी। (४) धीः = बुद्धि, कर्म।

(१५५) एतत् । त्यत् । न । योजनम् । अचेति ।
सस्वः । ह । यत् । मरुतः । गोतमः । वः ।
पश्यन् । हिरण्यऽचक्रान् । अयःदंष्ट्रान् ।
विऽधावतः । वराहून् ॥ ५ ॥
(१५६) एषा । स्या । वः । मरुतः । अनुऽभर्त्री ।
प्रति । स्तोभति । वाघतः । न । वाणी ।
अस्तोभयत् । वृथा । आसाम् । अनु । स्वधाम् । गभस्त्योः ॥ ६ ॥

अन्वयः— १५५ (हे) मरुतः! हिरण्य-चक्रान् अयो-दंष्ट्रान् वि-धावतः वर-आहून् वः पश्यन् गोतमः यत् एतत् योजनं सस्वः ह त्यत् न अचेति।

१५६ (हे) मरुतः! गभस्त्योः स्व-धां अनु स्या एषा अनु-भर्त्री वाघतः वाणी न वः प्रति स्तोभति, आसां वृथा अस्तोभयत्।

अर्थ- १५५ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (हिरण्य-चक्रान्) स्वर्णविभूषित पहिये की शक्ल के हथियार धारण करनेवाले (अयो-दंष्ट्रान्) फौलाद की तेज डाढोंसे- धाराओं से युक्त हथियार लेकर (वि-धावतः) भाँतिभाँति के प्रकारों से शत्रुओंपर दौडकर टूट पडनेवाले और (वर-आ-हून्) बलिष्ठ शत्रुओंका विनाश करनेवाले (वः) तुम्हें (पश्यन्) देखनेवाले (गोतमः) ऋषि गोतमने (यत् एतत्) जो यह तुम्हारी (योजनं) आयोजना- छन्दोबद्ध स्तुति (सस्वः ह) गुप्त रूपसे वर्णित कर रखी है, (त्यत्) वह सचमुच (न अचेति) अवर्णनीय है।

१५६ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! तुम्हारे (गभस्त्योः) बाहुओंकी (स्व-धां अनु) धारक शक्तिको शूरता को-ध्यान में रख कर (स्या एषा) वही यह (अनु-भर्त्री) तुम्हारे यशका पोषण करनेवाली (वाघतः वाणी) हम जैसे स्तोताओंकी वाणी (न) अब (वः प्रति स्तोभति) तुममेंसे प्रत्येक का वर्णन करती है। पहले भी (आसां) इन वाणियों ने (वृथा) किसी विशेष हेतुके सिवा इसी भाँति (अस्तोभयत्) सराहना की थी।

भावार्थ- १५५ वीरोंको चाहिए कि वे अपने तीक्ष्ण शस्त्र साथ लेकर शत्रुदलपर विभिन्न प्रकारोंसे हमलोंका सूत्रपात कर दें और उन्हें तितरबितर कर डालें। इस तरह शत्रुओंको जडमूलसे विनष्ट करना चाहिए। ऐसे वीरोंका समुचित बखान करनेके लिए कवि वीर गाथाओंका सृजन करेंगे और चतुर्दिक् इन वीर गीतों तथा काव्यों का गायन शुरू होगा।

१५६ वीर पुरुष जब युद्धभूमि में असीम शूरता प्रकट करते हैं, तब अनेक काव्यों का सृजन बडी आसानी से हो जाता है और ध्यान में रखनेयोग्य बात है कि, सभी कवि उन काव्यों की रचना में स्वयंस्फूर्ति से भाग लेते हैं। इसीलिए उन काव्यों के गायन एवं परिशीलन से जनता में बडी आसानी से जोशीले भाव पैदा हो जाते हैं।

टिप्पणी- [१५५] (१) चक्रं = पहिया, चक्रके आकारवाला हथियार। (२) हिरण्य-चक्र = सुवर्णकी पच्चीकारी से विभूषित पहिया जैसे दिखाई देनेवाला शस्त्र। (३) वर-आ-हुः (वर-आ-हन्) = बलिष्ठ शत्रुको धराशायी करनेवाला (४) योजनं = जोडना, रचना, तैयारी, शब्दों की रचना करके काव्य बनाना। (५) अयो-दंष्ट्र = फौलाद का बना एक हथियार जिसमें कई तीक्ष्ण धाराएँ पाई जाती हैं। (६) वि-धाव् = शत्रु पर भाँति भाँति के प्रकारों से चढाई करना। (७) सस्वः = गुप्त ढंग से; देखो ऋ. ५।२०।२ और ७।५९।७, ३८९। [१५६] (१) गभस्ति = किरण, गाडी का पृष्ठवंश, हाथ, कोहनी के आगे हाथ, सूर्य, किरण। (२) स्व-धा = अपनी धारक शक्ति, सामर्थ्य, अन्न। (३) वृथा = व्यर्थ, अनावश्यक, विशेष कारण के सिवा, निष्काम भाव से, स्वाभाविक रूप से।

दिवोदासपुत्र परुच्छेप ऋषि (ऋ. १।१३९।८)

(१५७) मो इति । सु । वः । अस्मत् । अभि । तानि । पौंस्या । सना । भूवन् । द्युम्नानि ।
मा । उत । जारिषुः । अस्मत् । पुरा । उत । जारिषुः ।
यत् । वः । चित्रम् । युगेऽयुगे । नव्यम् । घोषात् । अमर्त्यम् ।
अस्मासु । तत् । मरुतः । यत् । च । दुस्तरम् । दिधृत । यत् । च । दुस्तरम् ॥ ८ ॥

मित्रावरुणपुत्र अगस्त्य ऋषि (ऋ. १।१६६।१-१५)

(१५८) तत् । नु । वोचाम । रभसाय । जन्मने । पूर्वम् । महिऽत्वम् । वृषभस्य । केतवे ।
ऐधाऽइव । यामन् । मरुतः । तुविऽस्वनः । युधाऽइव । शक्राः । तविषाणि । कर्तन ॥ १ ॥

अन्वयः— १५७ (हे) मरुतः ! वः तानि सना पौंस्या अस्मत् मो सु अभि भूवन्, उत द्युम्नानि मा जारिषुः, उत अस्मत् पुरा (मा) जारिषुः वः यत् चित्रं नव्यं अ-मर्त्यं घोषात् तत् युगे युगे अस्मासु, यत् च दुस्तरं यत् च दुस्तरं दिधृत।

१५८ (हे) मरुतः ! रभसाय जन्मने, वृषभस्य केतवे, तत् पूर्वं महित्वं नु वोचाम. (हे) तुवि-स्वनः शक्राः ! युधाइव यामन् ऐधाइव तविषाणि कर्तन।

अर्थ- १५७ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वः तानि) तुम्हारे वे (सना) सनातन पराक्रम करनेहारे (पौंस्या) बल (अस्मत्) हमसे (मो सु अभि भूवन्) कभी दूर न होने पावें। (उत) उसी प्रकार हमारे (द्युम्नानि) धन (मा जारिषुः) कदापि क्षीण न हों। (उत) वैसे ही अस्मत् पुरा हमारे नगर [मा] जारिषुः कभी वीरान या उजड न हों। (वः यत्) तुम्हारा जो (चित्रं) आश्चर्यकारक (नव्यं) नया तथा (अ-मर्त्यं) अमर (घोषात् तत्) गोशालाओंसे लेकर मालवॉतक धन है, वह सभी (युगे युगे) प्रत्येक युग में (अस्मासु) हम में स्थिर रहे। (यत् च दुस्तरं, यत् च दुस्तरं) जो कुछ भी अजिक्य धन है, वह भी हमें (दिधृत) दे दो।

१५८ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (रभसाय जन्मने) पराक्रम करने के लिए सुयोग्य जीवन प्राप्त हो, इसलिए और (वृषभस्य केतवे) बलिष्ठों के सेवा बनने के लिए (तत्) वह तुम्हारा (पूर्वं) प्राचीन कालसे चला आ रहा (महित्वं) महत्त्व (नु वोचाम) हम ठीक ठीक कह रहे हैं। हे (तुविस्वनः) गरजनेवाले तथा (शक्राः !) समर्थ वीरो ! (युधाइव) युद्धवेत्ता के समानही (यामन्) शत्रुदल पर चढाई करते के लिए (ऐधाइव) धधकते हुए अग्नि की नाईं (तविषाणि कर्तन) बल प्राप्त करो।

भावार्थ- १५७ हमेशा वीर पराक्रम के कृत्य कर दिखलावें, हमें भी उसी तरह वैसेही कार्य निभाने की शक्ति मिले। उस शक्ति से उत्साहपूर्ण हमारा धन बढे। हमारे नगर समृद्धिशाली बनें। प्रतिष्ठित वीरों का बल प्रकट हो जाए। हमें इस भाँति का बल मिले कि, शत्रु कभी उसे हम से न छीन ले सके।

१५८ हम सामर्थ्यवान बनें और सेना के पद पर बैठ सकें, इसीलिए हम वीरों के सामर्थ्य का गायन तथा स्तव करते हैं। युद्ध छिड जाने के मौके पर जिस तरह तुम्हारी हलचलें या तैयारियाँ शुरू रहती हैं, उन्हें वैसे ही अक्षुण्ण बनाये रखो। उन तैयारियों में तनिक भी ढिलाई न रहने पाए, ऐसी सावधानी रखनी चाहिए।

टिप्पणी- [१५७] १ घोषः = गौ-शाला, जहाँ गायें बँधी रहती हैं, अहीरोंका गाँव। [१५८] (१ रभसः = बलवान्, उत्साह, शक्ति, सामर्थ्य, वेग, त्वरा, क्रोध, आनन्द। २) वृषभः = बलवान्, वर्षा करनेवाला। ३) वृषभस्य केतुः = बलिष्ठ वीर का ज्ञापक, शक्ति का चिह्न। ४) केतुः = प्रज्ञा, सेना, प्रकाश, चिह्न, ध्वज।

(१५९) नित्यम् । न । सूनुम् । मधु । बिभ्रतः । उप । क्रीळन्ति । क्रीळाः । विदथेषु । घृष्वयः ।
नक्षन्ति । रुद्राः । अवसा । नमस्विनम् । न । मर्धन्ति । स्वऽतवसः । हविःऽकृतम् ॥२॥
(१६०) यस्मै । ऊमासः । अमृताः । अरासत । रायः । पोषम् । च । हविषा । ददाशुषे ।
उक्षन्ति । अस्मै । मरुतः । हिताःऽइव । पुरु । रजांसि । पयसा । मयःऽभुवः ॥३॥

अन्वयः— १५९ नित्यं सूनुं न मधु बिभ्रतः घृष्वयः क्रीळाः विदथेषु उप क्रीळन्ति, रुद्राः नमस्विनं अवसा नक्षन्ति, स्व-तवसः हविस्-कृतं न मर्धन्ति।

१६० ऊमासः अ-मृताः मरुतः यस्मै हविषा ददाशुषे रायः पोषं अरासत अस्मै हिताःइव मयो-भुवः रजांसि पुरु पयसा उक्षन्ति।

अर्थ- १५९ (नित्यं सूनुं न) पिता जिस प्रकार अपने औरस पुत्र को खाद्यवस्तु दे देता है, वैसे ही सब के लिए (मधु बिभ्रतः) मिठासभरे रस का धारण करनेवाले (घृष्वयः) युद्धसंघर्षमें निपुण और (क्रीळाः) क्रीडासक्त मनोवृत्तिवाले ये वीर (विदथेषु उप क्रीळन्ति) युद्धों में मानों खेलकूद में लगे हों, इस भाँति कार्य करना शुरू करते हैं। (रुद्राः) शत्रुको रुलानेवाले ये वीर (नमस्विनं) उपासकों को (अवसा नक्षन्ति) स्वकीय शक्ति से सुरक्षित रखते हैं। (स्व-तवसः) अपने निजी बलसे युक्त ये वीर (हविस्-कृतं) हविष्यान्न देनेवाले को (न मर्धन्ति) कष्ट नहीं पहुँचाते हैं।

१६० (ऊमासः) रक्षण करनेवाले, (अ-मृताः) अमर वीर मरुतों ने (यस्मै हविषा ददाशुषे) जिस हविष्यान्न देनेवाले को (रायः पोषं) धन की पुष्टि (अरासत) प्रदान की- बहुतसा धन दे दिया (अस्मै) उसके लिए (हिताःइव) कल्याणकारक मित्रों के समान (मयो-भुवः) सुख देनेवाले वे वीर (रजांसि) हल चलाई हुई भूमि पर (पुरु पयसा) बहुत जल से (उक्षन्ति) वर्षा करते हैं।

भावार्थ- १५९ जिस तरह पिता अपने पुत्र को खानेकी चीजें देता है, उसी प्रकार वीरों को चाहिए कि वे भी सभी लोगों को पुत्रवत् मान उन्हें खानपान की वस्तुएँ प्रदान करें। ये वीर हमेशा खिलाडीपन से पारस्परिक बर्ताव करें और धर्मयुद्ध में कुशलतापूर्वक अपना कार्य करते रहें। शत्रुओं को हटाकर साधु जनों का संरक्षण करना चाहिए और दानी उदार लोगों को किसी प्रकार का कष्ट न देकर सुख पहुँचाना चाहिए।

१६० सब के संरक्षण का तथा उदार दानी पुरुषों के भरणपोषण का बीडा वीरों को उठाना पडता है। क्योंकि वीर समूची जनता के हितकर्ता हैं, अतएव वे सबको सुख पहुँचाते हैं।

टिप्पणी- [१५९] (१) मधु = मीठा, मीठा रस, शहद, सोमरस। (२) नित्यः = हमेशा का, न बदलनेवाला, सतत, सदैव रहनेवाला। (३) नित्यः सूनुः = औरस पुत्र, जिसका दूसरे का होना असंभव है। (४) घृष्वि = (घृषु संघर्षे स्पर्धायां च) पराक्रम में निपुण। [१६०] (१) ऊमः = (अव् रक्षणे) रक्षा करनेवाला, सहायक मित्र, प्रिय मित्र। (२) रजस् = धूलि, जोती हुई जमीन, उर्वर भूमि, अंतरिक्ष। [illegible] देखिए।

(१६१) आ। ये। रजांसि। तविषीभिः। अव्यंत। प्र। वः। एवांसः। स्वऽयंतासः। अध्रजन्। भयंन्ते। विश्वां। भुवंनानि। हर्म्यां। चित्रः। वः। यामः। प्रऽयंतासु। ऋष्टिषु॥ ४॥

(१६२) यत्। त्वेषऽयामाः। नदयंन्त। पर्वतान्। दिवः। वा। पृष्ठम्। नर्यां। अचुच्यवुः। विश्वः। वः। अज्मन्। भयते। वनस्पतिः। रथियन्तीऽइव। प्र। जिहीते। ओषधिः॥५॥

अन्वयः- १६१ ये एवासः तविषीभिः रजांसि अव्यत, स्व-यतासः प्र अध्रजन्, प्र-यतासु वः ऋष्टिषु विश्वा भुवनानि हर्म्या भयन्ते, वः यामः चित्रः।

१६२ त्वेष-यामाः यत् पर्वतान् नदयन्त, वा नर्याः दिवः पृष्ठं अचुच्यवुः, वः अज्मन् विश्वः वनस्पतिः भयते, ओषधिः रथीयन्तीइव प्र जिहीते।

अर्थ- १६१ (ये एवासः) जो तुम वेगवान् वीर (तविषीभिः) अपने सामर्थ्यों तथा बलोंद्वारा (रजांसि अव्यत) सब लोगों का संरक्षण करते हो, तथा (स्व-यतासः) स्वयं ही अपना नियंत्रण करनेवाले तुम जब शत्रुपर (प्र अध्रजन्) वेगपूर्वक दौड जाते हो और जब (प्र-यतासु वः ऋष्टिषु) अपने हथियारों को आगे धकेलते हो, उस समय (विश्वा भुवनानि) सारे भुवन, (हर्म्या) बडे बडे प्रासाद भी (भयन्ते) भयभीत हो उठते हैं, क्योंकि (वः यामः) तुम्हारी यह हलचल (चित्रः) सचमुच आश्चर्य-जनक है।

१६२ (त्वेष-यामाः) वेगपूर्वक चढाई करनेवाले ये वीर (यत्) जब (पर्वतान् नदयन्त) पहाडों को निनादमय बना डालते हैं, (वा) इसी प्रकार (नर्याः) जनता का हित करनेवाले ये वीर जब (दिवः पृष्ठं अचुच्यवुः) अन्तरिक्ष के पृष्ठभाग पर ले जाने लगते हैं, उस समय हे वीरो! (वः अज्मन्) तुम्हारी इस चढाई के फलस्वरूप (विश्वः वनस्पतिः) सभी वृक्ष (भयते) भयव्याकुल हो जाते हैं और सभी (ओषधिः) औषधियाँ भी (रथीयन्तीइव) रथ पर बैठी हुई महिला के समान (प्र जिहीते) विकंपित हुआ करती हैं।

भावार्थ- १६१ ये वीर सब की रक्षा में दत्तचित्त हुआ करते हैं और सब अपना नियंत्रण स्वयं ही करते हैं तथा शत्रुदल पर टूट पडते हैं, सब स्वयं स्फूर्ति से यह सब कुछ होता है. इसलिए सभी लोग सहम जाते हैं, क्योंकि इनका आक्रमण कोई साधारणसी बात नहीं है। इन वीरों की चढाई में भीषणता पर्याप्त मात्रा में पाई जाती है।

१६२ जब हमले करनेवाले शूर लोग शत्रुदल पर चढाई करने के लिए पहाडों में तथा अन्तरिक्ष में बडे जोर से आक्रमण कर देते हैं, तब वृक्षवनस्पति सभी विचलित हो उठते हैं।

टिप्पणी- [१६१] (१) एवः = जानेवाला, वेगवान्, चपल, घोडा। (२) स्व-यत = अपने द्वारा स्वयं ही अपना नियमन करनेवाला। [१६२] (१) त्वेष-यामन् = त्वेषः वेगपूर्वक किया हुआ (यामः) आक्रमण जिसे Blitzkrieg कहते हैं, बिजलीकी सी शत्रु पर धावा करना। (२) वनस्पतिः = (वनस्-पतिः) = पेड, जंगल, वृक्ष, सोम, बडा भारी वृक्ष।

(१६३) यूयम् । नः । उग्राः । मरुतः । सुऽचेतुना । अरिष्टऽग्रामाः । सुऽमतिम् । पिपर्तन ।
यत्र । वः । दिद्युत् । रदति । क्रिविःऽदती । रिणाति । पश्वः । सुधिताऽइव । बर्हणा ॥ ६ ॥
(१६४) प्र । स्कम्भऽदेष्णाः । अनवभ्रऽराधसः । अलातृणासः । विदथेषु । सुऽस्तुताः ।
अर्चन्ति । अर्कम् । मदिरस्य । पीतये । विदुः । वीरस्य । प्रथमानि । पौंस्या ॥ ७ ॥

अन्वयः— १६३ सु-धिताइव वर्हणा यत्र वः क्रिविर्-दती दिद्युत् रदति, पश्वः रिणाति, (हे) उग्राः मरुतः! यूयं सु-चेतुना अ-रिष्ट-ग्रामाः नः सु-मतिं पिपर्तन।

१६४ स्कम्भ-देष्णाः अन्-अवभ्र-राधसः अल-आ-तृणासः सु-स्तुताः विदथेषु मदिरस्य पीतये अर्कं अर्चन्ति, वीरस्य प्रथमानि पौंस्या विदुः।

अर्थ- १६३ (सु-धिताइव) अच्छे प्रकार पकडे हुए (वर्हणा) हथियार के समान (यत्र) जिस समय (वः) तुम्हारा (क्रिविर्-दती) तीक्ष्ण रूप से दंदानेदार और (दिद्युत्) चमकीली तलवार (रदति) शत्रुदल के टुकडे टुकडे कर डालती है, तथा (पश्वः रिणाति) जानवरों को भी मार डालती है, उस समय हे (उग्राः मरुतः!) शूर तथा मन में भय पैदा करनेवाले वीर मरुतो! (यूयं) तुम (सु-चेतुना) उत्तम अन्तःकरणपूर्वक (अ-रिष्ट-ग्रामाः) गाँवों का नाश न करते हुए (नः सु-मतिं) हमारी अच्छी बुद्धि को बढाते हो।

१६४ (स्कम्भ-देष्णाः) आश्रय देनेवाले, (अन्-अवभ्र-राधसः) जिन का धन कोई छीन नहीं सकता ऐसे, (अल-आ-तृणासः) शत्रुओं का पूरा पूरा विनाश करनेहारे तथा (सु-स्तुताः) अत्यन्त सराहनीय ये वीर (विदथेषु) युद्धस्थलों तथा यज्ञों में (मदिरस्य पीतये) सोमरस पीने के लिए (अर्कं प्र अर्चन्ति) पूजनीय देवता की भली भाँति पूजा करते हैं। क्योंकि वही (वीरस्य) वीरों के (प्रथमानि) प्रथम श्रेणी में परिगणनीय (पौंस्या विदुः) बल तथा पुरुषार्थ जानते हैं।

भावार्थ- १६३ अपने तीक्ष्ण हथियारों से वीर सैनिक शत्रु का विनाश कर देते हैं, इतनाही नहीं अपि तु शत्रु के पशुओं का भी वध कर डालते हैं। हे वीरो! तुम्हारे शुभ अंतःकरण से हमारी सुबुद्धि बढाओ और हमारे ग्रामों का विनाश न करो।

१६४ वीर लोग ही अन्य सज्जनों को आश्रय देते हैं, अपने धनवैभव का भली प्रकार संरक्षण करते हैं, शत्रुओं का विनाश करते हैं और सोमरस का सेवन करके युद्धों में अपना प्रभाव दर्शाते हैं तथा परमात्मा की उपासना भी करते हैं। ऐसे वीर ही अन्य वीरों की शक्तियों की यथोचित जाँच करने की क्षमता रखते हैं।

टिप्पणी- [१६३] (१) वर्हणा = शस्त्र, नोकवाला शस्त्र, नोक। (२) ग्रामः = देहात, जाति, समूह। (३) सु-चेतु = उत्तम मन। (४) रद् (विलेखने) = टुकडा करना, खुरचना। (५) दती = काटनेवाला, काटनेवाला। [१६४] (१) स्कम्भः = स्तंभ, आश्रय, आधारस्तम्भ। (२) देष्णं = दान, देय। (३) अव-भ्र = भगा ले जाना, छीन लेना, सीधी राह से न ले जाकर अज्ञात पगडंडी से ले जाना। (४) राधस् = सिद्धि, अन्न, कृपा, दया, देन, संपत्ति। (५) अलातृणासः = [अल (अलं) + आतृणासः = [illegible] करनेवाले] पूर्ण रूपेण उच्चाटन करनेहारे।

१६५) शतभुंजिऽभिः । तम् । अभिऽहुंतेः । अघात् । पूःऽभिः । रक्षत । मरुतः । यम् । आवंत ।
जनम् । यम् । उग्राः । तवसः । विऽरप्शिनः ।
पाथर्न । शंसात् । तनयस्य । पुष्टिषु ॥ ८ ॥
१६६) विश्वानि । भद्रा । मरुतः । रथेषु । वः । मिथस्पृध्याऽइव । तविषाणि । आऽहिता ।
अंसेषु । आ । वः । प्रऽपथेषु । खादयः ।
अक्षः । वः । चक्रा । समया । वि । ववृते ॥ ९ ॥

अन्वयः— १६५ (हे) उग्राः तवसः वि-रप्शिनः मरुतः ! यं अभिहुतेः अघात् आवत, यं जनं तनयस्य पुष्टिषु शंसात् पाथन, तं शत-भुजिभिः पूर्भिः रक्षत।

१६६ (हे) मरुतः ! वः रथेषु विश्वानि भद्रा, वः अंसेषु आ मिथ-स्पृध्याइव तविषाणि आहिता, प्र-पथेषु खादयः, वः अक्षः चक्रा समया वि ववृते।

अर्थ- १६५ हे (उग्राः) शूर, (तवसः) बलिष्ठ और (वि-रप्शिनः) समर्थ (मरुतः !) वीर-मरुतो ! (यं) जेसे (अभिहुतेः) विनाश से और (अघात्) पापसे तुम (आवत) सुरक्षित रखते हो, (यं जनं) जिस मनुष्य का (तनयस्य पुष्टिषु) वह अपने बालबच्चों का भरणपोषण कर ले, इसलिए (शंसात्) निन्दा से (पाथन) बचाते हो, (तं) उसे (शत-भुजिभिः) सैकडों उपभोग के साधनों से युक्त (पूर्भिः) दुर्गों से (रक्षत) रक्षित करो।

१६६ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वः रथेषु) तुम्हारे रथों में (विश्वानि भद्रा) सभी कल्याणकारण वस्तुएँ रखी हैं। (वः अंसेषु आ) तुम्हारे कंधों पर (मिथ-स्पृध्याइव) मानों एक दूसरे से बढाऊपरी करनेवाले (तविषाणि) बलयुक्त हथियार (आहिता) लटकायें हुए हैं। (प्र-पथेषु) सुदूर मार्गों में यात्रा करने के लिए (खादयः) खानेपीने की चीजों का संग्रह पर्याप्त है। (वः अक्षः चक्रा) तुम्हारे रथके पहियों को जोडनेवाला डंडा तथा उसके चक्र (समया वि ववृते) उचित समय पर घूमते हैं।

भावार्थ- १६५ जो बलवान् तथा वीर होते हैं, वे जनता को नाश तथा पापकृत्यों एवं निंदा से बचाने की चेष्टा में सफलता पाते हैं। इन वीरों के भुजबल के सहारे जनता सुरक्षित और अकुतोभय होकर अच्छे गढों से युक्त नगरी में निवास करते हैं और वहाँ पर अपने पुत्रपौत्रों का संरक्षण करते हैं।

१६६ वीरों के रथों पर सभी आवश्यक युद्धसाधनों का संग्रह रहता है। वे अपने शरीरों पर हथियार धारण करते हैं। दूर की यात्रा के लिए सभी जरूरी खानेपीने की चीजें रथों पर इकट्ठी की हुई हैं और उनके रथों के पहिये भी उचित वेला में जैसे घूमने चाहिए, वैसे ही फिरते रहते हैं।

टिप्पणी- [१६५] (१) अभिहुतिः = विनाश, हार, हानि, क्षति, पराजय। (२) पुर् = नगर, पुरी, कीला, वट। (३) भुजिः = (मानवी जीवन के लिए आवश्यक) उपभोग। (४) शंसः = स्तुति, आशीर्वाद, शाप, निन्दा। (५) वि-रप्शिन् = बडा, विशेष स्तुत्य, विशेष सामर्थ्य से युक्त। [१६६] (१) प्र-पथः = लंबा मार्ग, यात्रा, दूर का स्थान, चौडी राह या सडक। (२) समया = (सं-अया) = समीप, मौके पर, नियत समय में मिलकर जाना। (३) वृत् = घूमना (४) अक्षः = रथ के पहियों को जोडनेवाला डंडा।

(१६३) यूयम् । नः । उग्राः । मरुतः । सुऽचेतुना । अरिष्टऽग्रामाः । सुऽमतिम् । पिपर्तन ।
यत्र । वः । दिद्युत् । रदति । क्रिविःऽदती । रिणाति । पश्वः । सुधिताऽइव । बर्हणा ॥ ६ ॥
(१६४) प्र । स्कम्भऽदेष्णाः । अनवभ्रऽराधसः । अलातृणासः । विदथेषु । सुऽस्तुताः ।
अर्चन्ति । अर्कम् । मदिरस्य । पीतये । विदुः । वीरस्य । प्रथमानि । पौंस्या ॥ ७ ॥

अन्वयः— १६३ सु-धिताइव बर्हणा यत्र वः क्रिविर्-दती दिद्युत् रदति, पश्वः रिणाति, (हे) उग्राः मरुतः ! यूयं सु-चेतुना अ-रिष्ट-ग्रामाः नः सु-मतिं पिपर्तन ।

१६४ स्कम्भ-देष्णाः अन्-अवभ्र-राधसः अल-आ-तृणासः सु-स्तुताः विदथेषु मदिरस्य पीतये अर्कं अर्चन्ति, वीरस्य प्रथमानि पौंस्या विदुः ।

अर्थ- १६३ (सु-धिताइव) अच्छे प्रकार पकडे हुए (बर्हणा) हथियार के समान (यत्र) जिस समय (वः) तुम्हारा (क्रिविर्-दती) तीक्ष्ण रूप से दंदानेदार और (दिद्युत्) चमकीली तलवार (रदति) शत्रुदल के टुकडे टुकडे कर डालती है, तथा (पश्वः रिणाति) जानवरों को भी मार डालती है, उस समय हे (उग्राः मरुतः !) शूर तथा मन में भय पैदा करनेवाले वीर मरुतो ! (यूयं) तुम (सु-चेतुना) उत्तम अन्तःकरणपूर्वक (अ-रिष्ट-ग्रामाः) गाँवों का नाश न करते हुए (नः सु-मतिं) हमारी अच्छी बुद्धि को बढाते हो ।

१६४ (स्कम्भ-देष्णाः) आश्रय देनेवाले, (अन्-अवभ्र-राधसः) जिन का धन कोई छीन नहीं सकता ऐसे, (अल-आ-तृणासः) शत्रुओं का पूरा पूरा विनाश करनेहारे तथा (सु-स्तुताः) अत्यन्त सराहनीय ये वीर (विदथेषु) युद्धस्थलों तथा यज्ञों में (मदिरस्य पीतये) सोमरस पीने के लिए (अर्कं अर्चन्ति) पूजनीय देवता की भली भाँति पूजा करते हैं। क्योंकि वही (वीरस्य) वीरों के (प्रथमानि) प्रथम श्रेणी में परिगणनीय (पौंस्या विदुः) बल तथा पुरुषार्थ जानते हैं।

भावार्थ- १६३ अपने तीक्ष्ण हथियारों से वीर सैनिक शत्रु का विनाश कर देते हैं, इतनाही नहीं अपि तु शत्रु के पशुओं का भी वध कर डालते हैं। हे वीरो ! तुम्हारे शुभ अंतःकरण से हमारी सुबुद्धि बढाओ और हमारे ग्रामों का विनाश न करो।

१६४ वीर लोग ही अन्य सज्जनों को आश्रय देते हैं, अपने धनवैभव का भली प्रकार संरक्षण करते हैं, शत्रुओं का विनाश करते हैं और सोमरस का सेवन करके युद्धों में अपना प्रभाव दर्शाते हैं तथा परमात्मा की उपासना भी करते हैं। ऐसे वीर ही अन्य वीरों की शक्तियों की यथोचित जाँच करने की क्षमता रखते हैं।

टिप्पणी- [१६३] (१) बर्हणा = शस्त्र, नोकवाला शस्त्र, नोक। (२) ग्रामः = देहात, जाति, समूह, संघ। (३) सु-चेतु = उत्तम मन। (४) रद् (विलेखने) = टुकडा करना, खुरचना। (५) दती = दाँत करनेवाला, काटनेवाला। [१६४] (१) स्कम्भः = स्तंभ, आश्रय, आधारस्तम्भ। (२) देष्णं = दान, देना। (३) अव-भ्र = भाग ले जाना, छीन लेना, सीधी राह से न ले जाकर अज्ञात पगडंडी से ले जाना। (४) राधस् = सिद्धि, अन्न, कृपा, दया, देन, संपत्ति। (५) अलातृणासः = [अल (अलं) + आतृणासः = नाश करनेवाले] पूर्ण रूपेण उच्चाटन करनेहारे।

(१६५) शतभुंजिऽभिः । तम् । अभिऽहुंतेः । अघात् । पूःऽभिः । रक्षत । मरुतः । यम् । आर्वत ।
जनम् । यम् । उग्राः । तवसः । विऽरप्शिनः ।
पाथन । शंसात् । तनयस्य । पुष्टिषु ॥ ८ ॥

(१६६) विश्वानि । भद्रा । मरुतः । रथेषु । वः । मिथस्पृध्याऽइव । तविषाणि । आऽहिता ।
अंसेषु । आ । वः । प्रऽपथेषु । खादयः ।
अक्षः । वः । चक्रा । समया । वि । ववृते ॥ ९ ॥

अन्वयः— १६५ (हे) उग्राः तवसः वि-रप्शिनः मरुतः ! यं अभिहुतेः अघात् आवत, यं जनं तनयस्य पुष्टिषु शंसात् पाथन, तं शत-भुजिभिः पूर्भिः रक्षत ।

१६६ (हे) मरुतः ! वः रथेषु विश्वानि भद्रा, वः अंसेषु आ मिथ-स्पृध्याइव तविषाणि आहिता, प्र-पथेषु खादयः, वः अक्षः चक्रा समया वि ववृते ।

अर्थ- १६५ हे (उग्राः) शूर, (तवसः) बलिष्ठ और (वि-रप्शिनः) समर्थ (मरुतः !) वीर-मरुतो ! (यं) जिसे (अभिहुतेः) विनाश से और (अघात्) पापसे तुम (आवत) सुरक्षित रखते हो, (यं जनं) जिस मनुष्य का (तनयस्य पुष्टिषु) वह अपने बालबच्चों का भरणपोषण कर ले, इसलिए (शंसात्) निन्दा से (पाथन) बचाते हो, (तं) उसे (शत-भुजिभिः) सैकडों उपभोग के साधनों से युक्त (पूर्भिः) दुर्गों से (रक्षत) रक्षित करो ।

१६६ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वः रथेषु) तुम्हारे रथों में (विश्वानि भद्रा) सभी कल्याणकारण वस्तुएँ रखी हैं । (वः अंसेषु आ) तुम्हारे कंधों पर (मिथ-स्पृध्याइव) मानों एक दूसरे से चढाऊपरी करनेवाले (तविषाणि) बलयुक्त हथियार (आहिता) लटकाये हुए हैं । (प्र-पथेषु) सुदूर मार्गों में यात्रा करने के लिए (खादयः) खानेपीने की चीजों का संग्रह पर्याप्त है । (वः अक्षः चक्रा) तुम्हारे रथके पहियों को जोडनेवाला डंडा तथा उसके चक्र (समया वि ववृते) उचित समय पर घूमते हैं ।

भावार्थ- १६५ जो बलवान् तथा वीर होते हैं, वे जनता को नाश तथा पापकृत्यों एवं निंदा से बचाने की चेष्टा में सफलता पाते हैं । इन वीरों के भुजबल के सहारे जनता सुरक्षित और अकुतोभय होकर अच्छे गढों से युक्त नगरी में निवास करते हैं और वहाँ पर अपने पुत्रपौत्रों का संरक्षण करते हैं ।

१६६ वीरों के रथों पर सभी आवश्यक युद्धसाधनों का संग्रह रहता है । वे अपने शरीरों पर हथियार धारण करते हैं । दूर की यात्रा के लिए सभी जरूरी खानेपीने की चीजें रथों पर इकट्ठी की हुई हैं और उनके रथों के पहिये भी उचित वेला में जैसे घूमने चाहिए, वैसे ही फिरते रहते हैं ।

टिप्पणी-[१६५] (१) अभिहुतिः = विनाश, हार, हानि, क्षति, पराजय । (२) पुर् = नगर, पुरी, कीला, गढ । (३) भुजिः = (मानवी जीवन के लिए आवश्यक) उपभोग । (४) शंसः = स्तुति, आशीर्वाद, शाप, निन्दा । (५) वि-रप्शिन् = बडा, विशेष स्तुत्य, विशेष सामर्थ्य से युक्त । [१६६] (१) प्र-पथः = लंबा मार्ग, यात्रा, दूर का स्थान, चौडी राह या सडक । (२) समया = (सं-अया) = समीप, मौके पर, नियत समय में मिलकर जाना । (३) वृत् = घूमना (४) अक्षः = रथ के पहियों को जोडनेवाला डंडा ।

(१६७) भूरीणि । भद्रा । नर्येषु । बाहुषु ।
वक्षःऽसु । रुक्माः । रभसासः । अञ्जयः ।
अंसेषु । एताः । पविषु । क्षुराः । अधि ।
वयः । न । पक्षान् । वि । अनु । श्रियः । धिरे ॥ १० ॥

(१६८) महान्तः । मह्ना । विऽभ्वः । विऽभूतयः ।
दूरेऽदृशः । ये । दिव्याःऽइव । स्तृऽभिः ।
मन्द्राः । सुऽजिह्वाः । स्वरितारः । आसऽभिः ।
सम्ऽमिश्लाः । इन्द्रे । मरुतः । परिऽस्तुभः ॥ ११ ॥

अन्वयः— १६७ नर्येषु बाहुषु भूरीणि भद्रा, वक्षःसु रुक्माः, अंसेषु एताः रभसासः अञ्जयः, पविषु अधि क्षुराः, वयः पक्षान् न, अनु श्रियः वि धिरे।

१६८ ये मरुतः मह्ना महान्तः विभ्वः वि-भूतयः स्तृभिः दिव्याःइव दूरे-दृशः (ते) मन्द्राः सु-जिह्वाः आसभिः स्वरितारः, इन्द्रे सं-मिश्लाः परि-स्तुभः।

अर्थ- १६७ (नर्येषु) जनता का हित करनेवाले इन वीरों की (बाहुषु) भुजाओं में (भूरीणि भद्रा) यथेष्ट कल्याणकारक शक्ति विद्यमान हैं, (वक्षःसु रुक्माः) उनके वक्षःस्थलों पर मुहरों के हार तथा (अंसेषु) कन्धों पर (एताः) विभिन्न रँगवाले, (रभसासः) सुदृढ (अञ्जयः) वीरभूषण हैं, उनके (पविषु अधि) वज्रों पर (क्षुराः) तीक्ष्ण धाराएँ हैं, (वयः पक्षान् न) पंछी जिस तरह डैने धारण करते हैं, उसी प्रकार (अनु श्रियः वि धिरे) भाँति भाँति की शोभाएँ वे धारण करते हैं।

१६८ (ये मरुतः) जो वीर मरुत् (मह्ना) अपनी महत्ता के कारण (महान्तः) बडे (विभ्वः) सामर्थ्यवान् (वि-भूतयः) ऐश्वर्यशाली, तथा (स्तृभिः) नक्षत्रों से युक्त (दिव्याःइव) स्वर्गीय देवता गण की नाईं सुहानेवाले, (दूरे-दृशः) दूरदर्शी, (मन्द्राः) हर्षित और (सु-जिह्वाः) अच्छी जीभ रहने के कारण अपने (आसभिः) मुखोंसे (स्वरितारः) भली भाँति बोलनेवाले हैं। वे (इन्द्रे सं-मिश्लाः) इंद्र को सहायता पहुंचानेवाले हैं, अतः (परि-स्तुभः) सभी प्रकार से सराहनीय हैं।

भावार्थ- १६७ जनता का हित करने के लिए वीरों के बाहु प्रस्फुरित होने तथा आगे बढने लगते हैं और उनके उरोभाग पर एवं कंधों पर विभिन्न वीरभूषण चमकते हैं। उनके शस्त्र तीक्ष्ण धाराओं से युक्त होते हैं। पंछी जिस भाँति अपने डैनों से सुहाने लगते हैं, उसी प्रकार ये वीर इन सभी आभूषणों एवं आयुधों से बडे भले प्रतीत होते हैं।

१६८ वीरों में श्रेष्ठ गुण विद्यमान हैं, इसी कारण से वे महान तथा ऊँचे पद पर विराजमान होते और वे अत्यधिक सामर्थ्यवान्, ऐश्वर्यवान्, दूरदर्शी, तेजस्वी, उल्लसित, अच्छे भाषण करनेहारे और परमात्मा के कार्य का बीडा उठाने के कारण सभी के लिए प्रशंसनीय हैं।

टिप्पणी- [१६७] (१) एतः = तेजस्वी, भाँति भाँति के रंगों से युक्त, वेग से जानेवाला। [१६८] (१) वि-भुः = बलवान्, प्रमुख, समर्थ, व्यापक, शासक। (२) दूरे-दृशः = दूर से ही दिखाई देनेवाले, दूर दृष्टि से युक्त, दूरदर्शी। (३) वि-भूतिः = विशेष ऐश्वर्ययुक्त, शक्तिमान्, बडप्पन, बल, वैभवशालिता। (४) सु-जिह्व = मधुर भाषण करनेहारा, अच्छा वाग्मी; (५) स्वरितृ = उत्तम स्वर से बोलनेहारा।

(१६९) तत् । वः । सुऽजाताः । मरुतः । महिऽत्वनम् । दीर्घम् । वः । दात्रम् । अदितेःऽइव । व्रतम् ।
इन्द्रः । चन । त्यजसा । वि । हुणाति । तत् । जनाय । यस्मै । सुऽकृते । अराध्वम् ॥ १२ ॥

(१७०) तत् । वः । जामिऽत्वम् । मरुतः । परे । युगे । पुरु । यत् । शंसम् । अमृतासः । आवत ।
अया । धिया । मनवे । श्रुष्टिम् । आव्य ।
साकम् । नरः । दंसनैः । आ । चिकित्रिरे ॥ १३ ॥

अन्वयः- १६९ (हे) सु-जाताः मरुतः ! वः तत् महित्वनं अदितेःइव दीर्घं व्रतं वः दात्रं, यस्मै सु-कृते जनाय त्यजसा अराध्वं, तत् इन्द्रः चन वि हुणाति ।

१७० (हे) अ-मृतासः मरुतः ! वः तत् जामित्वं, यत् परे युगे शंसं पुरु आवत, अया धिया मनवे साकं दंसनैः नरः श्रुष्टिं आव्य आ चिकित्रिरे ।

अर्थ- १६९ हे (सु-जाताः मरुतः !) कुलीन वीर मरुतो ! (वः) तुम्हारा (तत् महित्वनं) वह बड़प्पन सचमुच प्रसिद्ध है। (अदितेःइव दीर्घं व्रतं) भूमि के विस्तृत व्रत के समान ही (वः दात्रं) तुम्हारी उदारता बहुत बड़ी है, (यस्मै) जिस (सु-कृते) पुण्यात्मा (जनाय) मानव को तुम (त्यजसा) अपनी त्यागवृत्ति से जो (अराध्वं) दान देते हो, (तत्) उसे (इन्द्रः चन [च न] वि हुणाति) इन्द्र तक विनष्ट नहीं कर सकता है।

१७० हे (अ-मृतासः मरुतः !) अमर वीर मरुत्गण ! (वः तत् जामित्वं) तुम्हारा वह भाईपन बहुत प्रसिद्ध है, (यत्) जिस (परे युगे) प्राचीन काल में निर्मित (शंसं) स्तुति को सुनकर तुम हमारी (पुरु आवत) बहुत रक्षा कर चुके हो और इसी (अया धिया) इस बुद्धि से (मनवे) मनुष्यमात्र के लिए (साकं नरः) मिलजुलकर पराक्रम करनेवाले नेता बने हुए तुम (दंसनैः) अपने कर्मों से (श्रुष्टिं आव्य) ऐश्वर्य की रक्षा कर के जग में विद्यमान (आ चिकित्रिरे) दोषों को दूर हटाते हो।

भावार्थ- १६९ वीर पुरुष बड़ी भारी उदारता से जो दान देते हैं, उसी से उनका बड़प्पन प्रकट होता है। पृथ्वी के समान ही वे बड़े विशालचेता एवं उदार हुआ करते हैं। शुभ कर्म करनेवाले को इन से जो [illegible] मिलती है, वह अप्रतिम तथा बेजोड़ ही है। एक बार ये वीर अगर कुछ कार्यकर्ता को दे डालें, तो कोई भी इस दान को छीन नहीं सकता। वीरों की देन को छीन लेने की मजाल भला किस में होगी ! [illegible] सत्कर्म करनेवाले ही इस दान को पाने के अधिकारी हों।

१७० इन वीरों का भ्रातृप्रेम सचमुच अवर्णनीय है। प्राचीनकाल में [illegible] की [illegible] कर चुके ही हो, लेकिन आगामी युग में भी इसी उदार मनोवृत्ति से सारे मानवों की रक्षा के लिए तुम सभी [illegible] मिलजुलकर एक दिल से अपने कर्मोद्वारा जिस ढंग से सुन्दर कार्य को करना चाहते हो, वह भी [illegible] एवं अविकल है।

टिप्पणी- [१६९] (१) अदितिः = (अ + दितिः) [illegible], धरती, प्रकृति, [illegible] = [illegible] देनेवाली, मातेसी [illegible] देनेवाली। (२) दात्रं = दान, देन। (३) [illegible] = [illegible]। [१७०] (१) जामिः = एक ही वंश या परिवार में उत्पन्न होने से भाईचारा का सम्बन्ध, [illegible], जामित्वं = भाई का प्यार। (२) श्रुष्टिः = [illegible], [illegible], [illegible]। (३) दंसनं = [illegible] (४) आ-चिकित् = [illegible], दोष दूर करना।

मरुत् [हि.] ९

(१६७) भूरी॑णि । भ॒द्रा । नर्ये॑षु । बा॒हुषु॑ ।
वक्षः॑ऽसु । रु॒क्मा॑ः । र॒भ॒सा॑सः । अ॒ञ्जयः॑ ।
अंसे॑षु । एताः॑ । प॒विषु॑ । क्षु॒राः । अधि॑ ।
वयः॑ । न । प॒क्षान् । वि । अनु॑ । श्रियः॑ । धि॒रे ॥ १० ॥

(१६८) म॒हान्तः॑ । म॒ह्ना । वि॒ऽभ्वः॑ । विऽभू॑तयः ।
दू॒रे॒ऽदृशः॑ । ये । दि॒व्याःऽइ॑व । स्तृऽभिः॑ ।
म॒न्द्राः । सु॒ऽजि॒ह्वाः । स्वरि॑तारः । आ॒सऽभिः॑ ।
सम्ऽमि॑श्लाः । इन्द्रे॑ । म॒रुतः॑ । प॒रि॒ऽस्तुभः॑ ॥ ११ ॥

अन्वयः— १६७ नर्येषु बाहुषु भूरीणि भद्रा, वक्षःसु रुक्माः, अंसेषु एताः रभसासः अञ्जयः, पविषु अधि क्षुराः, वयः पक्षान् न, अनु श्रियः वि धिरे।

१६८ ये मरुतः मह्ना महान्तः विभ्वः वि-भूतयः स्तृभिः दिव्याःइव दूरे-दृशः (ते) मन्द्राः सु-जिह्वाः आसभिः स्वरितारः, इन्द्रे सं-मिश्लाः परि-स्तुभः।

अर्थ- १६७ (नर्येषु) जनता का हित करनेवाले इन वीरों की (बाहुषु) भुजाओं में (भूरीणि भद्रा) यथेष्ट कल्याणकारक शक्ति विद्यमान है, (वक्षःसु रुक्माः) उनके वक्षःस्थलों पर मुहरों के हार तथा (अंसेषु) कन्धों पर (एताः) विभिन्न रँगवाले, (रभसासः) सुदृढ (अञ्जयः) वीरभूषण हैं, उनके (पविषु अधि) वज्रों पर (क्षुराः) तीक्ष्ण धाराएँ हैं, (वयः पक्षान् न) पंछी जिस तरह डैने धारण करते हैं, उसी प्रकार (अनु श्रियः वि धिरे) भाँति भाँति की शोभाएँ वे धारण करते हैं।

१६८ (ये मरुतः) जो वीर मरुत् (मह्ना) अपनी महत्ता के कारण (महान्तः) बडे (विभ्वः) सामर्थ्यवान् (वि-भूतयः) ऐश्वर्यशाली, तथा (स्तृभिः) नक्षत्रों से युक्त (दिव्याःइव) स्वर्गीय देवतागण की नाईं सुहानेवाले, (दूरे-दृशः) दूरदर्शी, (मन्द्राः) हर्षित और (सु-जिह्वाः) अच्छी जीभ रहने के कारण अपने (आसभिः) मुखोंसे (स्वरितारः) भली भाँति बोलनेवाले हैं। वे (इन्द्रे सं-मिश्लाः) इन्द्र को सहायता पहुंचानेवाले हैं, अतः (परि-स्तुभः) सभी प्रकार से सराहनीय हैं।

भावार्थ- १६७ जनता का हित करने के लिए वीरों के बाहु प्रस्फुरित होने तथा आगे बढने लगते हैं और उनके उरोभाव पर एवं कंधों पर विभिन्न वीरभूषण चमकते हैं। उनके शस्त्र तीक्ष्ण धाराओं से युक्त होते हैं। पंछी जिस भाँति अपने डैनों से सुहाने लगते हैं, उसी प्रकार ये वीर इन सभी आभूषणों एवं आयुधों से बडे ही प्रतीत होते हैं।

१६८ वीरों में श्रेष्ठ गुण विद्यमान हैं, इसी कारण से वे महान तथा ऊँचे पद पर विराजमान होते हैं और वे अत्यधिक सामर्थ्यवान्, ऐश्वर्यवान्, दूरदर्शी, तेजस्वी, उल्लसित, अच्छे भाषण करनेहारे और परमात्मा के कार्य का बीडा उठाने के कारण सभी के लिए प्रशंसनीय हैं।

टिप्पणी- [१६७] (१) एतः = तेजस्वी, भाँति भाँति के रंगों से युक्त, वेग से जानेवाला। [१६८] (१) वि-भुः = बलवान्, प्रमुख, समर्थ, व्यापक, शासक। (२) दूरे-दृशः = दूर से ही दिखाई देनेवाले, दूर दृष्टि से युक्त, दूरदर्शी। (३) वि-भूतिः = विशेष ऐश्वर्ययुक्त, शक्तिमान्, बडप्पन, बल, वैभवशालिता। (४) सु-जिह्व = मधुर भाषण करनेहारा, अच्छा वाग्मी। (५) स्वरितृ = उत्तम स्वर से बोलनेहारा।

(ऋ० १।१६७।२-३)

(१७३) आ । नः । अवःऽभिः । मुरुतः । यान्तु । अच्छ ।
ज्येष्ठेभिः । वा । बृहत्ऽदिवैः । सुऽमायाः ।
अध । यत् । एषाम् । निऽयुतः । परमाः । समुद्रस्य । चित् । धनयन्त । पारे ॥ २ ॥
(१७४) मिम्यक्ष । येषु । सुऽधिता । घृताची । हिरण्यऽनिर्निक् । उपरा । न । ऋष्टिः ।
गुहा । चरन्ती । मनुषः । न । योषा । सभाऽवती । विदथ्याऽइव । सम् । वाक् ॥ ३ ॥

अन्वयः— १७३ सु-मायाः मरुतः अवोभिः ज्येष्ठेभिः बृहत्-दिवैः वा नः अच्छ आ यान्तु, अध यत् एषां परमाः नियुतः समुद्रस्य पारे चित् धनयन्त ।

१७४ सु-धिता घृताची हिरण्य-निर्णिक् ऋष्टिः उपरा न, येषु सं मिम्यक्ष, गुहा चरन्ती मनुषः योषा न, विदथ्या इव वाक् सभा-वती ।

अर्थ- १७३ (सु-मायाः) ये अच्छे कौशल से युक्त (मरुतः) वीर मरुत्-गण अपने (अवोभिः) संरक्षण-क्षम शक्तियों के साथ और (ज्येष्ठेभिः) श्रेष्ठ (बृहत्-दिवैः वा) रत्नों के साथ (नः अच्छ आ यान्तु) हमारे निकट आ जायँ । (अध यत्) और तदुपरान्त (एषां परमाः नियुतः) इनके उत्तम घोडे (समुद्रस्य पारे चित्) समुन्दर के भी परे चले जाकर (धनयन्त) धन लानेका प्रयत्न करें ।

१७४ (सु-धिता) भली भाँति सुदृढ ढंगसे पकडी हुई, (घृताची) तेज बनाई हुई, (हिरण्य-निर्णिक्) सुवर्ण के समान चमकनेवाली (ऋष्टिः) तलवार (उपरा न) मेघमण्डल में विद्यमान बिजली के समान (येषु) जिन वीरोंके निकट (सं मिम्यक्ष) सदैव रहा करती है, वह (गुहा चरन्ती) पर्दे में संचार करती हुई (मनुषः योषा न) मानवकी नारी के समान कभी अदृश्य रहती है और कभी कभी (विदथ्याइव वाक्) यज्ञसभा की वाणी की न्याई (सभा-वती) सभामण्डपों में प्रकट हुआ करती है ।

भावार्थ- १७३ निपुण वीर अपनी संरक्षणक्षम शक्तियों के साथ हमारी रक्षा करें और [illegible] हमारी संपत्ति बढा दें । इसी प्रकार इनके घोडे भी समुद्रपार चले जाकर [illegible] ।
१७४ वीरोंकी तलवार श्रेष्ठ फौलादकी बनी हुई है और वह [illegible] रहती है । और लोग इसे बहुत मजबूत तरहसे हाथमें पकडे रहते हैं । तथापि वह मानवी महिलाके समान कभी कभी [illegible] रहती है और यज्ञिय [illegible] के समान वह [illegible] ।

टिप्पणी- [१७३] (१) नियुत् = घोडा, पंक्ति, कतार, [illegible] । (२) बृहत्-दिव = बडा तेजस्वी धन । [१७४] (१) घृताची = [illegible], [illegible], तेजस्वी, [illegible] [illegible] हो कि, फौलाद का [illegible] [illegible] भी अर्थ होगा । (२) गुहा = गुफा, ढकी हुई [illegible], [illegible], [illegible] । [illegible] साधारण महिलाएँ [illegible] में रखी हुई तलवार के समान [illegible] (३) हिरण्य-निर्णिक् = सुनहले रंग की । (४) उपरा (उपरा) = मेघमण्डल, [illegible], मेघ में [illegible] बिजुली [illegible] दो अर्थ हो सकते हैं- (१) मेघपर अर्थ- (सु-धिता) भली भाँति रखी हुई [illegible] [illegible] (हिरण्य-निर्णिक्) सोने के समान चमकनेवाली (ऋष्टिः न) [illegible] मेघ की बिजुली मानवी महिला के समान कभी कभी (गुहा [illegible]) [illegible] (विदथ्याइव वाक्) [illegible] है और कभी इसकी [illegible] नहीं दिखाई देती है । (२) वीरोंकी तलवार- (सु-धिता) [illegible]

(१७५) परा। शुभ्राः। अयासः। यव्या। साधारण्याऽइव। मरुतः। मिमिक्षुः।
न। रोदसी इति। अप। नुदन्त। घोराः। जुषन्त। वृधम्। सख्याय। देवाः ॥४॥
(१७६) जोषत्। यत्। ईम्। असुर्या। सचध्यै। विसितऽस्तुका। रोदसी। नृऽमनाः।
आ। सूर्याऽइव। विधतः। रथम्। गात्। त्वेषऽप्रतीका। नभसः। न। इत्या ॥५॥

अन्वयः- १७५ शुभ्राः अयासः मरुतः साधारण्याइव यव्या परा मिमिक्षुः, घोराः रोदसी न अप नुदन्त, देवाः सख्याय वृधं जुषन्त।

१७६ असु-र्या नृ-मनाः रोदसी यत् ईं सचध्यै जोषत्, वि-सित-स्तुका त्वेष-प्रतीका सूर्या-इव विधतः रथं नभसः इत्या न आ गात्।

अर्थ- १७५ (शुभ्राः) तेजस्वी, (अयासः) शत्रु पर हमला करनेवाले (मरुतः) वीर मरुत् (साधारण्या-इव) सामान्य नारी के साथ जैसे लोग बर्ताव रखते हैं, उसी तरह (यव्या) जौ उत्पन्न करनेवाली धरती पर (परा मिमिक्षुः) बहुत वर्षा कर चुके हैं। (घोराः) उन देखते ही मनमें तनिक भय उत्पन्न करनेवाले मरुतोंने (रोदसी) आकाश एवं धरती को (न अप नुदन्त) दूर नहीं हटा दिया। अर्थात् उनकी उपेक्षा नहीं की, क्योंकि (देवाः) प्रकाशमान उन मरुतोंने (सख्याय) सबसे मित्रता प्रस्थापित करनेके लिए ही (वृधं) बडप्पनका (जुषन्त) अंगिकार किया है।

१७६ (असु-र्या) जीवन देनेहारी और (नृ-मनाः) वीरों पर मन रखनेवाली (रोदसी) धरती या विद्युत् (यत् ईं) जो इनके (सचध्यै) सहवास के लिए (जोषत्) उनकी सेवा करती है। वह (वि-सित-स्तुका) केश सँवारकर ठीक बाँधे हुए (त्वेष-प्रतीका) तेजस्वी अवयववाली (सूर्याइव) सूर्यासावित्री के समान (विधतः रथं) विधाता के रथपर (नभसः इत्या न) सूर्य की गति के समान विशेष गति से (आ गात्) आ पहुँची।

भावार्थ- १७५ जो शूर तथा वीर हैं, वे उर्वरा भूमि को बडे परिश्रमपूर्वक जोतते हैं और मेघ भी ऐसी धरती पर यथेष्ट वर्षा करते हैं। जिस प्रकार सामान्य नारी से कोई भी सम्बन्ध रखता है, उसी प्रकार ये वीर भी भूलोक एवं द्युलोक में विद्यमान सब चीजों से मित्रतापूर्ण सम्पर्क प्रस्थापित करते हैं। इसीसे इन वीरों को बडप्पन प्राप्त हुआ है।

१७६ वीरों की पत्नी वीरों पर असीम प्रेम करती है और वह खूब सँवारकर तथा बन-ठन के या साज सिंगार करके जैसे सावित्री पति के घर जाने के लिए विधाता के रथ पर बैठ गयी थी वैसे ही पतिगृह पहुँचने के लिए वह भी वीरों के रथ पर चढ जाती है।

(क्षुर-भ्री) तीक्ष्ण धारवाली (हिरण्य-निर्णिक्) स्वर्ण की न्याईं कान्तिमय दिखाई देनेवाली (उपरा न) मेघस्थ बिजली के समान चमकनेवाली (ऋष्टिः) वीरों की तलवार सदैव वीरोंके निकट रहा करती है, लेकिन वह कभी कभी (गुहा चरन्ती) परदे में रहती हुई नारी के समान अदृश्य रहती है, तो एकाध अवसर पर जिस प्रकार यज्ञमंडप में वेदवाणी प्रकट होती है, उसी तरह वह (विदथ्या) युद्धभूमिमें या रणमें अपना स्वरूप व्यक्त करती है। [१७५] (१) यव्या = (यवानां क्षेत्रं) = जिस धरती में जौ पैदा होते हों। (२) अयासः = गतिशील, आक्रमण करने-हारे। [१७६] (१) सूर्या = सूर्य की पुत्री, नवपरिणीता वधू। (२) इत्या = गति, जाना, सडक, पालकी, वाहन। (३) असु-र्या = जीवन प्रदान करनेवाली। (४) प्रतीक = अवयव, चेहरा। (५) नभस् = मेघ, जल, आकाश, सूर्य।

(१७७) आ । अस्थापयन्त । युवतिम् । युवानः । शुभे । निऽमिश्लाम् । विदथेषु । पज्राम् ।
अर्कः । यत् । वः । मरुतः । हविष्मान् ।
गायत् । गाथम् । सुतऽसोमः । दुवस्यन् ॥ ६ ॥

(१७८) प्र । तम् । विवक्मि । वक्म्यः । यः । एषाम् । मरुताम् । महिमा । सत्यः । अस्ति ।
सचा । यत् । ईम् । वृषऽमनाः । अहम्ऽयुः ।
स्थिरा । चित् । जनीः । वहते । सुऽभागाः ॥ ७ ॥

अन्वयः— १७७ (हे) मरुतः ! यत् अर्कः हविष्मान् सुत-सोमः वः दुवस्यन् विदथेषु गाथं आ गायत्, युवानः नि-मिश्लां पज्रां युवतिं शुभे अस्थापयन्त।

१७८ एषां मरुतां यः वक्म्यः सत्यः महिमा अस्ति, तं प्र विवक्मि, यत् ईं स्थिरा चित् सचा वृष-मनाः अहं-युः सु-भागाः जनीः वहते।

अर्थ- १७७ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (यत्) जब (अर्कः) पूजनीय, (हविष्मान्) हविष्यान्न समीप रखनेवाला और (सुत-सोमः) जिसने सोमरस निचोड रखा है, वह (वः दुवस्यन्) तुम वीरों की पूजा करनेहारा उपासक (विदथेषु) यज्ञों में (गाथं) स्तोत्र का (आ गायत्) गायन करता है, तब (युवानः) तुम युवक वीर (नि-मिश्लां) नित्य सहवास में रहती हुई (पज्रां) बलशाली (युवतिं) नवयौवना-स्वपत्नी को- (शुभे) अच्छे मार्ग में, यज्ञ में (अस्थापयन्त) प्रस्थापित करते हो, ले आते हो।

१७८ (एषां मरुतां) इन वीर-मरुतों का (यः वक्म्यः) जो वर्णनीय एवं (सत्यः) सच्चा (महिमा अस्ति) बडप्पन है (तं प्र विवक्मि) उसका मैं भलीभाँति बखान करता हूँ। (यत् ईं) वह इस तरह कि यह (स्थिरा चित्) अटल धरती भी (सचा) इनका अनुसरण करनेवाली (वृष-मनाः) बलवानों से मनःपूर्वक प्रेम करनेहारी पर वीरपत्नी बनने की (अहं-युः) अहंकार धारण करनेवाली और (सु-भागाः) सौभाग्य युक्त (जनीः) प्रजा (वहते) धारण करती है, उत्पन्न करती है।

भावार्थ- १७७ जब उपासक तुम्हारी प्रशंसा करते हैं, तब वीरों की धर्मपत्नी सन्मार्ग पर चलती हुई अपने पति का यश बढाती है।

१७८ वीरों की महिमा इतनी अवर्णनीय है कि, धरतीमाता तक उनकी शूरता पर लुब्ध होकर अच्छी भाग्यशाली प्रजा का धारणपोषण करती है। इन वीरों की महिलाएँ भी इनके पराक्रम से संतुष्ट होकर अच्छे गुणों से युक्त संतान को जन्म देती हैं।

टिप्पणी- [१७७] (१ पज्र = बलशाली, सामर्थ्यवान्। (२) दुवस् = (दुवस्यति= सम्मान देता है, पूजा करता है) सम्मान, पूजा। दुवस्यन् = पूजा करनेवाला, सम्मान करनेहारा। मंत्र १८५ देखो। [१७८] (१) वक्मन् = (वच् परिभाषणे) स्तुतिस्तोत्र; वक्म्यः = स्तुत्य, वर्णनीय। (२ सच् = सचति सेवते सेवने च) = अनुसरण करना, पीछा करना, सहवास में रहना, आज्ञाकारी होना, सहायता करना। (३) जनिः = जन्म, उत्पत्ति (प्रजा) संतति। (४) वृष-मनाः = बलिष्ठ पर आसक्त होनेवाली, जिसका चित्त वर्षा पर लगा हो, बलवान मनवाली।

(१७५) परा । शुभ्राः । अयासः । यव्या । साधारण्याऽइव । मरुतः । मिमिक्षुः ।
न । रोदसी इति । अप । नुदन्त । घोराः । जुषन्त । वृधम् । सख्याय । देवाः ॥४॥
(१७६) जोषत् । यत् । ईम् । असुर्या । सचध्यै । विसितऽस्तुका । रोदसी । नृऽमनाः ।
आ । सूर्याऽइव । विधतः । रथम् । गात् । त्वेषऽप्रतीका । नभसः । न । इत्या ॥ ५ ॥

अन्वयः- १७५ शुभ्राः अयासः मरुतः साधारण्याइव यव्या परा मिमिक्षुः, घोराः रोदसी न अप नुदन्त, देवाः सख्याय वृधं जुषन्त ।

१७६ असु-र्या नृ-मनाः रोदसी यत् ईं सचध्यै जोषत्, वि-सित-स्तुका त्वेष-प्रतीका सूर्या-इव विधतः रथं नभसः इत्या न आ गात् ।

अर्थ- १७५ (शुभ्राः) तेजस्वी, (अयासः) शत्रु पर हमला करनेवाले (मरुतः) वीर मरुत् (साधारण्या-इव) सामान्य नारी के साथ जैसे लोग वर्ताव रखते हैं, उसी तरह (यव्या) जो उत्पन्न करनेवाली धरती पर (परा मिमिक्षुः) बहुत वर्षा कर चुके हैं। (घोराः) उन देखते ही मनमें तनिक भय उत्पन्न करनेवाले मरुतोंने (रोदसी) आकाश एवं धरती को (न अप नुदन्त) दूर नहीं हटा दिया। अर्थात् उनकी उपेक्षा नहीं की, क्योंकि (देवाः) प्रकाशमान उन मरुतोंने (सख्याय) सबसे मित्रता प्रस्थापित करनेके लिए ही (वृधं) बडप्पनका (जुषन्त) अंगिकार किया है।

१७६ (असु-र्या) जीवन देनेहारी और (नृ-मनाः) वीरों पर मन रखनेवाली (रोदसी) धरती या विद्युत् (यत् ईं) जो इनके (सचध्यै) सहवास के लिए (जोषत्) उनकी सेवा करती है। वह (वि-सित-स्तुका) केश सँवारकर ठीक बाँधे हुए (त्वेष-प्रतीका) तेजस्वी अवयववाली (सूर्याइव) सूर्यासावित्री के समान (विधतः रथं) विधाता के रथपर (नभसः इत्या न) सूर्य की गति के समान विशेष गति से (आ गात्) आ पहुँची।

भावार्थ- १७५ जो शूर तथा वीर हैं, वे उर्वरा भूमि को बडे परिश्रमपूर्वक जोतते हैं और मेघ भी ऐसी धरती पर यथेष्ट वर्षा करते हैं। जिस प्रकार सामान्य नारी से कोई भी सम्बन्ध रखता है, उसी प्रकार ये वीर भी भूलोक एवं द्युलोक में विद्यमान सब चीजों से मित्रतापूर्ण सम्पर्क प्रस्थापित करते हैं। इसीसे इन वीरों को बडप्पन प्राप्त हुआ है।

१७६ वीरों की पत्नी वीरों पर असीम प्रेम करती है और वह खूब सँवारकर तथा बन-ठन के या साज सिंगार करके जैसे सावित्री पति के घर जाने के लिए विधाता के रथ पर बैठ गयी थी वैसे ही पतिगृह पहुँचने के लिए वह भी वीरों के रथ पर चढ जाती है।

(घृत-भची) तीक्ष्ण धारावाली (हिरण्य-निर्णिक्) स्वर्ण की न्याई कान्तिमय दिखाई देनेवाली (उपरा न) मेघकी बिजली के समान चमकनेवाली (ऋष्टिः) वीरों की तलवार सदैव वीरोंके निकट रहा करती है, लेकिन वह कभी कभी (गुहा चरन्ती) परदे में रहती हुई नारी के समान अदृश्य रहती है, तो एकाध अवसर पर जिस प्रकार यज्ञमंडप में वेदवाणी प्रकट होती है, उसी तरह वह (विदथ्या) युद्धभूमिमें या रणमें अपना स्वरूप व्यक्त करती है। [१७५] (१) यव्यं = (यवानां क्षेत्रं) = जिस धरती में जौ पैदा होते हों। (२) अयासः = गतिशील, आक्रमण करनेहारे। [१७६] (१) सूर्या = सूर्य की पुत्री, नवपरिणीता वधू। (२) इत्या = गति, जाना, सडक, पालकी, वाहन। (३) असु-र्या = जीवन प्रदान करनेवाली। (४) प्रतीक = अवयव, चेहरा। (५) नभस् = मेघ, जल, आकाश, सूर्य।

(१७७) आ । अस्थापयन्त । युवतिम् । युवानः । शुभे । निऽमिंश्लाम् । विदथेषु । पज्राम् ।
अर्कः । यत् । वः । मरुतः । हविष्मान् ।
गायत् । गाथम् । सुतऽसोमः । दुवस्यन् ॥ ६ ॥

(१७८) प्र । तम् । विवक्मि । वक्म्यः । यः । एषाम् । मरुताम् । महिमा । सत्यः । अस्ति ।
सचा । यत् । ईम् । वृषऽमनाः । अहम्ऽयुः ।
स्थिरा । चित् । जनीः । वहते । सुऽभागाः ॥ ७ ॥

अन्वयः— १७७ (हे) मरुतः ! यत् अर्कः हविष्मान् सुत-सोमः वः दुवस्यन् विदथेषु गाथं आ गायत्, युवानः नि-मिश्लां पज्रां युवतिं शुभे अस्थापयन्त ।

१७८ एषां मरुतां यः वक्म्यः सत्यः महिमा अस्ति, तं प्र विवक्मि, यत् ईं स्थिरा चित् सचा वृष-मनाः अहं-युः सु-भागाः जनीः वहते ।

अर्थ- १७७ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (यत्) जब (अर्कः) पूजनीय, (हविष्मान्) हविष्यान्न समीप रखनेवाला और (सुत-सोमः) जिसने सोमरस निचोड रखा है, वह (वः दुवस्यन्) तुम वीरों की पूजा करनेहारा उपासक (विदथेषु) यज्ञों में (गाथं) स्तोत्र का (आ गायत्) गायन करता है, तब (युवानः) तुम युवक वीर (नि-मिश्लां) नित्य सहवास में रहती हुई (पज्रां) बलशाली (युवतिं) नव-यौवना-स्वपत्नी को- (शुभे) अच्छे मार्ग में, यज्ञ में (अस्थापयन्त) प्रस्थापित करते हो, ले आते हो।

१७८ (एषां मरुतां) इन वीर-मरुतों का (यः वक्म्यः) जो वर्णनीय एवं (सत्यः) सच्चा (महिमा अस्ति) बडप्पन है (तं प्र विवक्मि) उसका मैं भलीभाँति बखान करता हूँ। (यत् ईं) वह इस तरह कि यह (स्थिरा चित्) अटल धरती भी (सचा) इनका अनुसरण करनेवाली (वृष-मनाः) बलवानों से मनःपूर्वक प्रेम करनेहारी पर वीरपत्नी बनने की (अहं-युः) अहंकार धारण करनेवाली और (सु-भागाः) सौभाग्य युक्त (जनीः) प्रजा (वहते) धारण करती है, उत्पन्न करती है।

भावार्थ- १७७ जब उपासक तुम्हारी प्रशंसा करते हैं, तब वीरों की धर्मपत्नी सन्मार्ग पर चलती हुई अपने पति का यश बढाती है।

१७८ वीरों की महिमा इतनी अवर्णनीय है कि, धरतीमाता तक उनकी शूरता पर लुब्ध होकर अच्छी भाग्यशाली प्रजा का धारणपोषण करती है। इन वीरों की महिलाएँ भी इनके पराक्रम से संतुष्ट होकर अच्छे गुणों से युक्त संतान को जन्म देती हैं।

टिप्पणी- [१७७] (१) पज्र = बलशाली, सामर्थ्यवान्। (२) दुवस् = (दुवस्यति= सम्मान देता है, पूजा करता है) सम्मान, पूजा। दुवस्यन् = पूजा करनेवाला, सम्मान करनेहारा। मंत्र १८५ देखो। [१७८] (१) वक्मन् = (वच् परिभाषणे) स्तुतिस्तोत्र, वक्म्यः = स्तुत्य, वर्णनीय। (२) सच् = (समवाये सेचने सेवने च)= अनुसरण करना, पिछलग्गू बनना, सहवास में रहना, आज्ञा मान लेना, सहायता करना। (३) जनिः = जन्म, उत्पत्ति (प्रजा) संतति। (४) वृष-मनाः = बलिष्ठ पर आसक्त होनेवाली, जिसका चित्त वर्षा पर लगा हो, बलवान मनवाली।

(१७९) पान्तिं । मि॒त्राऽवरु॑णौ । अ॒व॒द्यात् । चय॑ते । ई॒म् । अ॒र्य॒मो इति॑ । अप्र॑ऽशस्तान् । उ॒त । च्य॒व॒न्ते॒ । अच्यु॑ता । ध्रु॒वाणि॑ । व॒वृ॒धे । ई॒म् । म॒रु॒तः॒ । दाति॑ऽवारः ॥ ८ ॥

(१८०) न॒हि । नु । वः॒ । म॒रु॒तः॒ । अन्ति॑ । अ॒स्मे इति॑ । आ॒रात्ता॑त् । चि॒त् । शव॑सः । अन्त॑म् । आ॒पुः । ते । धृ॒ष्णुना॑ । शव॑सा । शू॒शु॒ऽवांसः॑ । अर्णः॑ । न । द्वेषः॑ । धृ॒ष॒ता । परि॑ । स्थुः ॥९॥

अन्वयः— १७९ (हे) मरुतः! मित्रा-वरुणौ अवद्यात् ईं पान्ति, अर्यमा उ अ-प्रशस्तान् चयते, उत अ-च्युता ध्रुवाणि च्यवन्ते, ईं दाति-वारः ववृधे।

१८० (हे) मरुतः! वः शवसः अन्तं आन्ति आरात्तात् चित् अस्मे नहि नु आपुः, ते धृष्णुना शवसा शूशुवांसः धृषता द्वेषः, अर्णः न, परि स्थुः।

अर्थ- १७९ हे (मरुतः!) वीर-मरुतो! (मित्रा-वरुणौ) मित्र एवं वरुण (अवद्यात्) निंदनीय दोषों से (ईं पान्ति) रक्षण करते हैं। (अर्यमा उ) अर्यमा ही (अ-प्रशस्तान्) निंदा करनेयोग्य शत्रुओं को (चयते) एक ओर कर देता है और (उत) उसी प्रकार (अ-च्युता) न हिलनेवाले तथा (ध्रुवाणि) दृढ शत्रुओं को भी (च्यवन्ते) अपने पदों पर से ढकेल देते हैं, (ईं) यह तुम्हारा (दाति-वारः) दान का वर हमेशा (ववृधे) बढता जाता है। तुम्हारी सहायता अधिकाधिक मिलती रहती है।

१८० हे (मरुतः!) वीर-मरुतो! (वः शवसः) तुम्हारी सामर्थ्य की (अन्तं) चरम सीमा (अन्ति) समीप से या (आरात्तात् चित्) दूर से भी (अस्मे) हमें (नहि नु आपुः) सचमुच प्राप्त नहीं हुई है। (ते धृष्णुना शवसा) वे वीर आवेशयुक्त बल से (शूशुवांसः) बढनेवाले, अपने (धृषता) शत्रुदल की धज्जियाँ उडानेवाले बल से (द्वेषः) शत्रुओं को (अर्णः न) जल के समान (परि स्थुः) घेर लेते हैं।

भावार्थ- १७९ उपासक को मित्र, वरुण तथा अर्यमा दोषों से और निंदा से बचाते हैं। उसी प्रकार ये वीर [illegible] शत्रुओं को भी पदभ्रष्ट करके सारी प्रजा को प्रगतिशील बनने में सहायता पहुँचाते हैं। सहायता करने का गुण इनमें [illegible] बढता ही रहता है।

१८० शत्रुदल को हिलाने की जो शक्ति वीरों में अंतर्निगूढ बनी रहती है, उसकी चरम सीमा का ज्ञान [illegible] किसी को भी नहीं है। चूँकि इन वीरों में यह सामर्थ्य छिपा पडा है कि, इनके शत्रुओं को तुरन्त पराभूत [illegible], अतः वे अविरत वर्धिष्णु ही बने रहते हैं। इसी दुर्दम्य शक्ति के सहारे ये शत्रु को घेरकर उसे [illegible] देते हैं।

टिप्पणी- [१७९] (१) दातिः = (दा दाने) दान, त्याग, सहायता; (दा छेदने) काटना, तोडना। (२) वारः = वर, समूह, [illegible], [illegible]। [१८०] (१) धृषत् = शत्रु का पराभव करनेवाला, [illegible] की इच्छा से युक्त। (२) धृष्णु = वह साहसपूर्ण भाव कि जिससे शत्रु का पराभव अवश्य किया जाय। (३) द्वेषः = द्वेष करनेवाला, दुश्मन।

(१८१) वयम् । अद्य । इन्द्रस्य । प्रेष्ठाः । वयम् । श्वः । वोचेमहि । सऽमर्ये ।
वयम् । पुरा । महि । च । नः । अनु । द्यून् । तत् । नः । ऋभुक्षाः । नराम् । अनु । स्यात् ॥१०॥
(१८२) एषः । वः । स्तोमः । मरुतः । इयम् । गीः । मान्दार्यस्य । मान्यस्य । कारोः ।
आ । इषा । यासीष्ट । तन्वे । वयाम् । विद्याम । इषम् । वृजनम् । जीरऽदानुम् ॥ ११ ॥

(ऋ० १।१६८।१—१०)

(१८३) यज्ञाऽयज्ञा । वः । समना । तुतुर्वणिः । धियम्ऽधियम् । वः । देवऽयाः । ऊँ इति । दधिध्वे ।
आ । वः । अर्वाचः । सुविताय । रोदस्योः । महे । ववृत्याम् । अवसे । सुवृक्तिऽभिः ॥ १ ॥

अन्वयः— १८१ अद्य वयं इन्द्रस्य प्रेष्ठाः, वयं श्वः, पुरा वयं नः महि च द्यून् अनु स-मर्ये वोचेमहि, तत् ऋभुक्षाः नरां नः अनु स्यात् ।

१८२ [ऋ० १।१६६।१५; १६५ देखिये।] [१८३] यज्ञा-यज्ञा वः स-मना तुतुर्वणिः, धियं-धियं देव-याः उ दधिध्वे, रोदस्योः सु-विताय महे अवसे सु-वृक्तिभिः वः अर्वाचः आ ववृत्याम् ।

अर्थ- १८१ (अद्य वयं) आज हम (इन्द्रस्य प्र-इष्ठाः) इन्द्र के अत्यंत प्रिय बने हैं (वयं श्वः) कल भी उसी तरह उसके प्यारे बनेंगे। (पुरा वयं [illegible] नः) [illegible] (महि च) [illegible] जाय इस लिए (द्यून् अनु) प्रतिदिन (स-मर्ये) युद्धों में (वोचेमहि) हम [illegible] प्रार्थना कर चुके (तत्) कि (ऋभु-क्षाः) [illegible] (नरां) [illegible] अनुकूल बने। १८२ [ऋ० १।१६६।१५; १६५ देखिये।]

१८३ (यज्ञा-यज्ञा) हर यज्ञ में (वः) तुम्हारा (स-मना) [illegible] (तुतुर्वणिः) सेवा करने से त्वरा करने वाला है; तुम सचमुच (धियं-धियं) हर विचार [illegible] पाने की इच्छा से ही (दधिध्वे) धारण करते हो। (रोदस्योः) [illegible] (सु-विताय) सुस्थिति के लिए तथा (महे अवसे) बड़े के पूर्ण [illegible] (सु-वृक्तिभिः) [illegible] स्तोत्रों से (वः) तुम्हें (अर्वाचः) हमारी ओर (आ ववृत्याम्) [illegible]।

भावार्थ- १८१ हम प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि, [illegible]

१८२ [ऋ० १।१६६।१५ १६५ देखिये।]

१८३ वीरों के [illegible]

टिप्पणी- [१८१] [illegible]

[illegible]

(१८४) वव्रासः । न । ये । स्वऽजाः । स्वऽतवसः । इषम् । स्वः । अभिऽजायन्त । धूतयः ।
सहस्रियासः । अपाम् । न । ऊर्मयः । आसा । गावः । वन्द्यासः । न । उक्षणः ॥ २ ॥

(१८५) सोमासः । न । ये । सुताः । तृप्तऽअंशवः । हृत्ऽसु । पीतासः । दुवसः । न । आसते ।
आ । एषाम् । अंसेषु । रम्भिणीऽइव । ररभे । हस्तेषु । खादिः । च । कृतिः । च ।
सम् । दधे ॥ ३ ॥

अन्वयः— १८४ ये, वव्रासः न, स्व-जाः स्व-तवसः धूतयः इषं स्वः अभिजायन्त, अपां ऊर्मयः न, सहस्रि-यासः, वन्द्यास गावः उक्षणः न आसा।

१८५ सुताः पीतासः हृत्सु तृप्त-अंशवः सोमाः न, ये दुवसः न, आसते, एषां अंसेषु रम्भिणी इव आ ररभे, हस्तेषु च खादिः कृतिः च सं दधे।

अर्थ-- १८४ (ये) जो (वव्रासः न) सुरक्षित स्थानों के समान सबको सुरक्षित रखते हैं और जो (स्व-जाः) अपनी निजी स्फूर्ति से कार्य करते हैं और (स्व-तवसः) अपने बलसे युक्त होनेके कारण (धूतयः) शत्रुओं को हिला देते हैं वे (इषं) अन्नप्राप्ति तथा (स्वः) स्वप्रकाश के लिए ही (अभिजायन्त) सभी तरहसे जन्मे होते हैं, वे (अपां ऊर्मयः न) जलके तरंगों के समान (सहस्रि-यासः) हजारों लोगों को प्रिय होते हैं; वेही (वन्द्यासः गावः उक्षणः न) पूज्य गौ तथा बैलों के समान (आसा) हमारे समीप रहें।

१८५ (सुताः) निचोडे हुए (पीतासः) पिये हुए (हृत्सु) हृदय में जाकर (तृप्त-अंशवः) तृप्ति करनेवाले (सोमाः न) सोमरस के समान, (दुवसः न) पूज्य मानवों के समानही जो वीर पुरुष राष्ट्र में (आसते) रहते हैं (एषां अंसेषु) उनके कंधों पर (रम्भिणीइव) लठ्ठ ले चढाई करनेवाली सैनी के समान हथियार (आ ररभे) विद्यमान हैं। उसी प्रकार उनके (हस्तेषु खादिः) हाथों में अलंकार तथा (कृतिः च) तलवार भी (सं दधे) भली प्रकार धरे हुए हैं।

भावार्थ-- १८४ स्वयं प्रेरणा से ही वीर सैनिक जनता का संरक्षण करने के लिए आगे आते हैं। अपनी शक्ति से शत्रुओं का नाश करके वे जनता को भयमुक्त करते हैं। वे मानों लोगों को अन्न एवं तेजस्विता देने के लिए ही जन्मे हों। पानी के समान सभी लोग उन्हें चाहते हैं और सब की यही इच्छा है कि, गाय बैल जैसे वे अपने समीप सदैव रहें।

१८५ सोमरस के सेवन के उपरान्त जैसे हर्ष एवं उमंग में वृद्धि होती है उसी प्रकार जो वीर जनता में कर्म करने का उत्साह बढाते हैं उनके कंधों पर हथियार और हाथ में ढाल तलवार दिखाई देते हैं।

टिप्पणी-- [१८४] (१) आसा = (आस्, आसः) मुख, समीप, आँखोंके सामने, सहमने, बिलकुल समीप। (२) वव्रासः = (वव्रः = आश्रयस्थान, ढँकी हुई सुरक्षित जगह, जहाँ रहने पर अच्छी रक्षा हो सकती हो, आश्रय-[illegible]; गुहा। (३) स्व-जः = अपनी प्रेरणा से आगे बढनेवाला, दूसरे के दबाव से नहीं। (४) स्वः (स्व-रा[illegible]) [illegible], अपना प्रकाश (५) ऊर्मि = लहर, तरंग। [१८५] (१) अंशुः = सोमवल्ली, सोमरस। (२) [illegible]: = (कृती छेदने= काटना)= काटनेवाला आयुध, तलवार। (३) रम्भ= लकडी, लाठी। रम्भिणी= लाठी लेकर [illegible] करने वाली सेना। भाले के समान शस्त्र।

(१८४) वृव्रासः । न । ये । स्वऽजाः । स्वऽतवसः । इषम् । स्वः । अभिऽजायन्त । धूतयः ।
सहस्रियासः । अपाम् । न । ऊर्मयः । आसा । गावः । वन्द्यासः । न । उक्षणः ॥ २ ॥
(१८५) सोमासः । न । ये । सुताः । तृप्तऽअंशवः । हृत्ऽसु । पीतासः । दुवसः । न । आसते ।
आ । एषाम् । अंसेषु । रम्भिणीऽइव । ररभे । हस्तेषु । खादिः । च । कृतिः । च ।
सम् । दधे ॥ ३ ॥

अन्वयः— १८४ ये, वव्रासः न, स्व-जाः स्व-तवसः धूतयः इषं स्वः अभिजायन्त, अपां ऊर्मयः न, सहस्रि-यासः, वन्द्यास गावः उक्षणः न आसा।

१८५ सुताः पीतासः हृत्सु तृप्त-अंशवः सोमाः न, ये दुवसः न, आसते, एषां अंसेषु रम्भिणी इव आ ररभे, हस्तेषु च खादिः कृतिः च सं दधे।

अर्थ-- १८४ (ये) जो (वव्रासः न) सुरक्षित स्थानों के समान सबको सुरक्षित रखते हैं और जो (स्व-जाः) अपनी निजी स्फूर्ति से कार्य करते हैं और (स्व-तवसः) अपने बलसे युक्त होनेके कारण (धूतयः) शत्रुओं को हिला देते हैं वे (इषं) अन्नप्राप्ति तथा (स्वः) स्वप्रकाश के लिए ही (अभिजायन्त) सभी तरहसे जन्मे होते हैं, वे (अपां ऊर्मयः न) जलके तरंगों के समान (सहस्रि-यासः) हजारों लोगों को प्रिय होते हैं। वेही (वन्द्यासः गावः उक्षणः न) पूज्य गौ तथा बैलों के समान (आसा) हमारे समीप रहें।

१८५ (सुताः) निचोडे हुए (पीतासः) पिये हुए (हृत्सु) हृदय में जाकर (तृप्त-अंशवः) तृप्ति करनेवाले (सोमाः न) सोमरस के समान, (दुवसः न) पूज्य मानवों के समानही जो वीर पुरुष राष्ट्र में (आसते) रहते हैं (एषां अंसेषु) उनके कंधों पर (रम्भिणीइव) लठ्ठ ले चढाई करनेवाली सैनी के समान हथियार (आ ररभे) विद्यमान हैं। उसी प्रकार उनके (हस्तेषु खादिः) हाथों में अलंकार तथा (कृतिः च) तलवार भी (सं दधे) भली प्रकार धरे हुए हैं।

भावार्थ-- १८४ स्वयं प्रेरणा से ही वीर सैनिक जनता का संरक्षण करने के लिए आगे आते हैं। अपनी शक्ति से शत्रुओं का नाश करके वे जनता को भयमुक्त करते हैं। वे मानों लोगों को अन्न एवं तेजस्विता देने के लिए ही जन्मे हों। पानी के समान सभी लोग उन्हें चाहते हैं और सब की यही इच्छा है कि, गाय बैल जैसे वे अपने समीप सदैव रहें।

१८५ सोमरस के सेवन के उपरान्त जैसे हर्ष एवं उमंग में वृद्धि होती है उसी प्रकार जो वीर जनता में हर्ष करने का उत्साह बढाते हैं उनके कंधों पर हथियार और हाथ में ढाल तलवार दिखाई देते हैं।

टिप्पणी-- [१८४] (१) आसा = (आस्, आसः) मुख, समीप, आँखोंके सामने, सहसने, बिलकुल समीप। (२) वव्रासः = [illegible] वव्रः = आश्रयस्थान, ढँकी हुई सुरक्षित जगह, जहाँ रहने पर अच्छी रक्षा हो सकती हो, आश्रय-स्थान; गुफा। (३) स्व-जाः = अपनी प्रेरणा से आगे बढनेवाला, दूसरे के दबाव से नहीं। (४) स्वः (स्व-र) [illegible], अपना प्रकाश। (५) ऊर्मि = लहर, तरंग। [१८५] (१) अंशुः = सोमवल्ली, सोमरस। (२) [illegible] = (कृत् छेदने = काटना) = काटनेवाला आयुध, तलवार। (३) रम्भ = लकडी, लाठी। रम्भिणी = लाठी लेकर [illegible] करनेवाली सेना। लाठी के समान शस्त्र।

(१८४) व॒व्रास॑ः । न । ये । स्व॒ऽजाः । स्वऽत॑वसः । इषम् । स्वः॑ । अ॒भिऽजाय॑न्त । धूत॑यः ।
स॒ह॒स्रिया॑सः । अ॒पाम् । न । ऊ॒र्मय॑ः । आ॒सा । गाव॑ः । वन्द्या॑सः । न । उ॒क्षण॑ः ॥ २ ॥

(१८५) सोमा॑सः । न । ये । सु॒ताः । तृ॒प्तऽअ॑ंशवः । हृ॒त्ऽसु । पी॒तास॑ः । दु॒वस॑ः । न । आस॑ते ।
आ । ए॒षा॒म् । अंसे॑षु । र॒म्भिणी॑ऽइव । र॒र॒भ्रे । हस्ते॑षु । खा॒दिः । च॒ । कृ॒तिः । च॒ ।
सम् । द॒धे ॥ ३ ॥

अन्वयः— १८४ ये, वव्रासः न, स्व-जाः स्व-तवसः धूतयः इषं स्वः अभिजायन्त, अपां ऊर्मयः न, सहस्रि-यासः, वन्द्यास गावः उक्षणः न आसा।

१८५ सुताः पीतासः हृत्सु तृप्त-अंशवः सोमाः न, ये दुवसः न, आसते, एषां अंसेषु रम्भिणी-इव आ रस्भे, हस्तेषु च खादिः कृतिः च सं दधे।

अर्थ— १८४ (ये) जो (वव्रासः न) सुरक्षित स्थानों के समान सबको सुरक्षित रखते हैं और जो (स्व-जाः) अपनी निजी स्फूर्ति से कार्य करते हैं और (स्व-तवसः) अपने बलसे युक्त होनेके कारण (धूतयः) शत्रुओं को हिला देते हैं वे (इषं) अन्नप्राप्ति तथा (स्वः) स्वप्रकाश के लिए ही (अभिजायन्त) सभी तरहसे जन्मे होते हैं, वे (अपां ऊर्मयः न) जलके तरंगों के समान (सहस्रि-यासः) हजारों लोगों को प्रिय होते हैं, वेही (वन्द्यासः गावः उक्षणः न) पूज्य गौ तथा बैलों के समान (आसा) हमारे समीप रहें।

१८५ (सुताः) निचोडे हुए (पीतासः) पिये हुए (हृत्सु) हृदय में जाकर (तृप्त-अंशवः) तृप्ति करनेवाले (सोमाः न) सोमरस के समान, (दुवसः न) पूज्य मानवों के समानही जो वीर पुरुष राष्ट्र में (आसते) रहते हैं (एषां अंसेषु) उनके कंधों पर (रम्भिणीइव) लट्ठ ले चढाई करनेवाली सैनी के समान हथियार (आ ररभे) विद्यमान हैं। उसी प्रकार उनके (हस्तेषु खादिः) हाथों में अलंकार तथा (कृतिः च) तलवार भी (सं दधे) भली प्रकार धरे हुए हैं।

भावार्थ— १८४ स्वयं प्रेरणा से ही वीर सैनिक जनता का संरक्षण करने के लिए आगे आते हैं। अपनी शक्ति से शत्रुओं का नाश करके वे जनता को भयमुक्त करते हैं। वे मानों लोगों को अन्न एवं तेजस्विता देने के लिए ही जन्मे हों। लहरों के समान सभी लोग उन्हें चाहते हैं और सब की यही इच्छा है कि, गाय बैल जैसे वे अपने समीप रहें।

१८५ सोमरस के सेवन के उपरान्त जैसे हर्ष एवं उमंग में वृद्धि होती है उसी प्रकार जो वीर जनता में हर्ष करने का उत्साह बढाते हैं उनके कंधों पर हथियार और हाथ में ढाल तलवार दिखाई देते हैं।

टिप्पणी— [१८४] (१) आसा = (आस्, आस्यः) मुख, समीप, आँखोंके सामने, सहसने, बिलकुल समीप। (२) वव्रासः = (वव्रः = आश्रयस्थान, ढँकी हुई सुरक्षित जगह, जहाँ रहने पर अच्छी रक्षा हो सकती हो, आश्रयस्थान; गुहा। (३) स्व-जाः = अपनी प्रेरणा से आगे बढनेवाला, दूसरे के दबाव से नहीं। (४) स्वः (स्व र्) आत्मतेज, अपना प्रकाश। (५) ऊर्मि = लहर, तरंग। [१८५] (१) अंशुः = सोमवल्ली, सोमरस। (२) कृतिः = (कृती छेदने = काटना) = काटनेवाला आयुध, तलवार। (३) रम्भ = लकडी, लाठी। रम्भिणी = लाठी लेकर चढाई करने वाली सेना। भाले के समान शस्त्र।

(१८६) अवं । स्वऽयुक्ताः । दिवः । आ । वृथा । ययुः । अमर्त्याः । कशया । चोदत । त्मना ।
अरेणवः । तुविऽजाताः । अचुच्यवुः । दृळ्हानि । चित् ।
मरुतः । भ्राजत्ऽऋष्टयः ॥ ४ ॥

(१८७) कः । वः । अन्तः । मरुतः । ऋष्टिऽविद्युतः । रेजति । त्मना । हन्वाऽइव । जिह्वया ।
धन्वऽच्युतः । इषाम् । न । यामनि । पुरुऽप्रैषाः । अहन्यः । न । एतशः ॥ ५ ॥

अन्वयः— १८६ स्व-युक्ताः दिवः वृथा अव आ ययुः, (हे) अ-मर्त्याः! त्मना कशया चोदत, अ-रेणवः तुवि-जाताः भ्राजत्-ऋष्टयः मरुतः दृळ्हानि चित् अचुच्यवुः।

१८७ (हे) ऋष्टि-विद्युतः मरुतः! इषां पुरु-प्रैषाः धन्व-च्युतः न, अ-हन्यः एतशः न, वः अन्तः त्मना जिह्वया हन्वाइव कः रेजति?

अर्थ- १८६ (स्व-युक्ताः) स्वयं ही कर्म में निरत होनेवाले वे वीर (दिवः) द्युलोक से (वृथा) अनायासही (अव आ ययुः) नीचे आये हुए हैं। हे (अ-मर्त्याः!) अमर वीरो! (त्मना) तुम अपने (कशया) कोडे से घोडों को (चोदत) प्रेरित करो। ये (अ-रेणवः) निर्मल (तुवि-जाताः) बल के लिए प्रसिद्ध तथा (भ्राजत्-ऋष्टयः) तेजस्वी हथियार धारण करनेवाले (मरुतः) वीर मरुत् (दृळ्हानि चित्) सुदृढों को भी (अचुच्यवुः) हिला देते हैं।

१८७ हे (ऋष्टि-विद्युतः मरुतः!) आयुधों से विराजमान वीर मरुतो! तुम (इषां) अन्न के लिए (पुरु-प्रैषाः) बहुत प्रेरणा करनेहारे हो। (धन्व-च्युतः न) धनुष्य से छूटे हुए बाण की न्याईं या (अ-हन्यः) जिसे मारने की कोई आवश्यकता नहीं, ऐसे (एतशः न) सिखाये हुए घोडे के समान (वः अन्तः) तुममें (त्मना) स्वयं ही (जिह्वया) जीभ के साथ-वाणीसहित (हन्वाइव) ठुड्डी जैसे हिलती है, वैसेही (कः रेजति?) कौन भला प्रेरणा करता है?

भावार्थ- १८६ अपनी ही इच्छा से कार्य करनेवाले ये वीर दिव्यस्वरूपी हैं और निष्काम भाव से विविध कार्यों में जुट जाते हैं। इन निर्मल एवं तेजस्वी वीरों में इतनी क्षमता है कि, प्रबल शत्रुओं में भी बल नहीं कि इनके सामने खडे रह सकें।

१८७ वीर सैनिक अन्न की वृद्धि के लिए बहुत प्रयत्न करते हैं। धनुष्य से छोडा हुआ तीर जैसे तीर पहुँच जाता है, वैसे ही या भली भाँति सिखाया हुआ घोडा जैसे ठीक चलता रहता है, वैसे ही तुम जो कार्य-भार उठाते हो, उसे अच्छी तरह निभाते हो। भला इसमें तुम्हें अन्यप्रेरणा कैसे मिलती होगी?

टिप्पणी- [१८६] (१) रेणु = धूलिकण, रज, अरेणु = स्वच्छ, निर्मल। (२) स्व-युक्ताः = (स्वैः युक्ताः, स्वेन युक्ताः, स्वे युक्ताः) = अपने सभी वीरों के साथ, स्वयं ही अपने काम को ठीक करनेवाले, अपनी [illegible] स्वयं तैयार करनेवाले, खुद ही काम के लिए तैयार होनेवाले। (३) दृळ्ह = दृढ हुआ, दृढ स्थान पर [illegible], ठोस, बुलन्द, बलों में बुलन्द (मोटा, दृढ)। (४) वृथा = व्यर्थ, जिसमें विशेष परिश्रम नहीं [illegible] से, आसानी से। [१८७] (१) पुरु-प्रैषाः = बहुत बहुत प्रेरणा करनेवाले, [illegible]। (२) अ-हन्यः = जिसे मारने या हटकाने की कोई जरूरत न हो। (३) [illegible] = [illegible]। (४) एतशः = घोडा, सिखाया हुआ घोडा, अश्वविशेष।

(१९०) प्रति । स्तोभन्ति । सिन्धवः । पविऽभ्यः । यत् । अभ्रियाम् । वाचम् । उत्ऽईरयन्ति ।
अव । स्मयन्त । विऽद्युतः । पृथिव्याम् ।
यदि । घृतम् । मरुतः । प्रुष्णुवन्ति ॥ ८ ॥

(१९१) असूत । पृश्निः । महते । रणाय । त्वेषम् । अयासाम् । मरुताम् । अनीकम् ।
ते । सप्सरासः । अजनयन्त । अभ्वम् ।
आत् । इत् । स्वधाम् । इषिराम् । परि । अपश्यन् ॥ ९ ॥

अन्वयः— १९० यत् पविभ्यः अभ्रियां वाचं उदीरयन्ति, सिन्धवः प्रति स्तोभन्ति, यदि मरुतः घृतं प्रुष्णुवन्ति, पृथिव्यां विद्युतः अव स्मयन्त ।

१९१ पृश्निः महते रणाय अयासां मरुतां त्वेषं अनीकं असूत, ते सप्सरासः अभ्वं अजनयन्त आत् इत् इषिरां स्व-धां परि अपश्यन् ।

अर्थ- १९० (यत्) जब ये वीर (पविभ्यः) रथ के पहियों से (अभ्रियां वाचं) मेघसदृश गर्जना (उदीरयन्ति) प्रवर्तित कर देते हैं, तब (सिन्धवः) नदियाँ (प्रति स्तोभन्ति) खौलता उठती हैं (यदि) जिस समय (मरुतः) वीर मरुत् (घृतं) जल (प्रुष्णुवन्ति) बरसने लगते हैं तब (पृथिव्यां) धरती पर (विद्युतः) बिजलियाँ मानों (अव स्मयन्त) हँसती हैं, ऐसा जान पडता है ।

१९१ (पृश्निः) मातृभूमि ने (महते रणाय) बडे भारी संग्राम के लिए (अयासां मरुतां) गतिमान् वीर मरुतों का (त्वेषं अनीकं) तेजस्वी सैन्य (असूत) उत्पन्न किया । (ते सप्सरासः) वे इकट्ठे होकर हलचल करनेवाले वीर (अभ्वं अजनयन्त) बडी शक्ति प्रकट कर चुके । (आत् इत्) तदुपरान्त उन्होंने (इषि-रां स्व-धां) अन्न देनेवाली अपनी धारक शक्ति को ही (परि अपश्यन्) चतुर्दिक् देख लिया ।

भावार्थ- १९० (आधिभौतिक अर्थ-) इन वीरों का रथ चलने लगे, तो मेघों की दहाड़सी सुनाई पडती है और नदियों को पार करते समय जलप्रवाह में भारी खलबली मच जाती है । (आधिदैविक अर्थ-) जब वायुप्रवाह चलने लगते हैं, तब मेघगर्जना हुआ करती है, दामिनी की दमक दीख पडती है और मूसलाधार वर्षा से [illegible] नदियों में महान् बाढ आती है ।

१९१ शत्रु से जूझने के लिए मातृभूमि की प्रेरणा से वीरों की प्रचंड सेना अस्तित्व में आ गयी । मित्र बनकर शत्रु पर टूट पडनेवाले इन वीरों ने युद्ध में बडी भारी शक्ति प्रकट की और उन्होंने देखा कि, उस शक्ति में अन्न का सृजन करने की क्षमता थी ।

टिप्पणी- [१९०] (१) स्तुभ् (स्तम्भ्) = इकट्ठा होना; प्रति + स्तुभ् = खलबली मचाना । (२) प्रुष् = (स्नेहनसेवनपूरणेषु) वृष्टि करना, गीला करना । (३) पवि = पहिये की हाल, वाणी, वज्र [illegible] । [१९१] (१) सप्-सरासः = [(सप् समवाये) इकट्ठे होना, सृ = गतौ, सरकना, जाना,] मिलजुलकर इकट्ठे होकर जानेवाले, संघरूप होकर लडनेवाले । (२) अभ्वं = बडा भय, [illegible] (३) इषिर = [illegible], बलवान्, [illegible], अग्नि, अन्न देनेवाला ।

(ऋ० १। १७२। १-३)

(१९५) चित्रः। वः। अस्तु। यार्मः। चित्रः। ऊती। सुऽदानवः।
मरुतः। अहिऽभानवः॥ १॥
(१९६) आरे। सा। वः। सुऽदानवः। मरुतः। ऋञ्जती। शरुः।
आरे। अश्मा। यम्। अस्यथ॥ २॥
(१९७) तृणऽस्कन्दस्य। नु। विशः। परि। वृङ्क्त। सुऽदानवः।
ऊर्ध्वान्। नः। कर्त। जीवसे॥ ३॥

अन्वयः— १९५ (हे) सु-दानवः अ-हि-भानवः मरुतः! वः यामः ऊती चित्रः अस्तु।
१९६ (हे) सु-दानवः मरुतः! वः सा ऋञ्जती शरुः आरे, यं अस्यथ अश्मा आरे।
१९७ (हे) सु-दानवः! तृण-स्कन्दस्य विशः नु परि वृङ्क्त, नः जीवसे ऊर्ध्वान् कर्त।

अर्थ- १९५ हे (सु-दानवः!) अच्छे दानशूर और (अ-हि-भानवः) जिनका तेज कभी न घट जाता है, ऐसे (मरुतः!) वीर मरुतो! (वः) तुम्हारी (यामः) हलचल (चित्रः) आश्चर्यकारक तथा तुम्हारी (ऊती) संरक्षणक्षम शक्ति भी (चित्रः [चित्रा]) आश्चर्यकारक (अस्तु) होवे।

१९६ हे (सु-दानवः मरुतः!) भली भाँति दान देनेवाले वीर मरुतो! (वः) वह तुम्हारा (ऋञ्जती) वेगसे शत्रुदलपर टूट पडनेवाला (शरुः) हथियार हमसे (आरे) दूर रहे। (यं अस्यथ) जिसे तुम शत्रुपर फेंक देते हो, वह (अश्मा) वज्र भी हमसे (आरे) दूर रहने पाय।

१९७ हे (सु-दानवः!) अच्छे दानशूर वीरो! (तृण-स्कन्दस्य) तिनके के समान आसानीसे नष्ट होनेवाले (विशः) इन प्रजाजनों का नाश (नु) शीघ्रही (परि-वृङ्क्त) दूर हटा दो, अर्थात् उन्हें सुरक्षित रखो। (नः जीवसे) हम बहुत दिनोंतक जीवित रहें, इसलिए हमें (ऊर्ध्वान् कर्त) उच्च कोटिके बना दो।

भावार्थ- १९५ शत्रुदल पर चढाई करने की वीरों की योजना बडी ही विलक्षण है और रक्षण करने की शक्ति भी बहुत बडी है।

१९६ वीरों का हथियार हम पर न गिरे।

१९७ जो जनता तिनके के समान सुगमता से विनष्ट होती हो, उसे बचा कर उच्च पद पर ले जाओ और दीर्घायुष्यसंपन्न करो।

टिप्पणी [१९५] (१) अ-हि-भानवः = (अ-हीन-भानवः = अ-हीयमान-भानवः) = जिनका तेज कभी कम न होता हो। (२) दान-वः = (दा-दाने) = दान देनेवाले, उदार, देव। दान-वः = (दो-अवखण्डने) = टुकडे करनेवाले, नाश करनेवाले, राक्षस। [१९६] (१) ऋञ्ज् = वेगसे जाना, दौडना, प्रदर्शन करना, अलंकृत करना। ऋञ्जती = वेगसे जानेवाली, चमकनेवाली, सरपट जानेवाली। (२) शरुः = बाण, तीर, शस्त्र, वज्र, क्रोध। (३) अश्मन् = पत्थर, (पत्थर जैसा कडा हथियार) मेघ, वज्र, पहाड, ओले। (४) आरे = दूर, समीप। [१९७] (१) स्कन्द् = (गतिशोषणयोः) गिर पडना, नष्ट होना, हिलना, सूख जाना। (२) तृण-स्कन्द् = घासफूस या तिनके की भांति इधर उधर पडे रहना, सूख जाना। (३) ऊर्ध्व = ऊंचा।

शुनकपुत्र गृत्समदऋषि (पहले शुनहोत्रपुत्र आङ्गिरस और उसके बाद शुनकपुत्र भार्गव) (ऋ० २।३०।११)

(१९८) तम् । वः । शर्धम् । मारुतम् । सुम्नऽयुः । गिरा ।
उप । ब्रुवे । नमसा । दैव्यम् । जनम् ।
यथा । रयिम् । सर्वऽवीरम् । नशामहै । अपत्यऽसाचम् । श्रुत्यम् । दिवेऽदिवे ॥११॥

(ऋ० २।३४। १-१५)

(१९९) धाराऽवराः । मरुतः । धृष्णुऽओजसः । मृगाः । न । भीमाः । तविषीभिः । अर्चिनः ।
अग्नयः । न । शुशुचानाः । ऋजीषिणः । भृमिम् । धमन्तः । अप । गाः । अवृण्वत ॥१॥

अन्वयः— १९८ वः तं दैव्यं जनं मारुतं शर्धं सुम्न-युः नमसा गिरा उप ब्रुवे, यथा सर्व-वीरं अपत्य-साचं श्रुत्यं रयिं दिवे-दिवे नशामहै ।

१९९ धारा-वराः धृष्णु-ओजसः, मृगाः न भीमाः, तविषीभिः अर्चिनः, अग्नयः न, शुशुचानाः ऋजीषिणः भृमिं धमन्तः मरुतः गाः अप अवृण्वत ।

अर्थ- १९८ (वः) तुम्हारे (तं) उस (दैव्यं) तेजस्वी (जनं) प्रकट हुए (मारुतं शर्धं) वीर मरुतों के बल की, (सुम्न-युः) मैं सुखको चाहनेवाला, (नमसा) नमनसे और (गिरा) वाणी से (उप ब्रुवे) सराहना करता हूँ । (यथा) इस उपाय से हम (सर्व-वीरं) सभी वीरों से युक्त (अपत्य-साचं) पुत्र पौत्रादिकों से युक्त तथा (श्रुत्यं) कीर्तिसे युक्त (रयिं) धनको (दिवे-दिवे) प्रति दिन (नशामहै) प्राप्त करें ।

१९९ (धारा-- वराः) युद्ध के मोर्चे पर श्रेष्ठ प्रतीत होनेवाले, (धृष्णु-ओजसः) शत्रु को पछाडने के बलसे युक्त, (मृगाः न भीमाः) सिंहकी न्याईं भीषण, (तविषीभिः) निज बल से (अर्चिनः) पूजनीय ठहरे हुए, (अग्नयः न) अग्नि के जैसे (शुशुचानाः) तेजस्वी, (ऋजीषिणः) वेग से जानेवाले या सोमरस पीनेवाले और (भृमिं) वेग को (धमन्तः) उत्पन्न करनेहारे (मरुतः) वीर मरुत् (गाः) किरणों को [या गौओं को] शत्रु के कारागृह से (अप अवृण्वत) रिहा कर देते हैं ।

भावार्थ- १९८ मैं वीरों के बल की प्रशंसा करता हूँ । इससे हम सभी को वीरतायुक्त धन मिलता रहे । वह धन इस भाँति मिले कि, उसके साथ शूरता, वीरता, धीरज, वीर संतान एवं यश भी प्राप्त हो । अगर शूरता आदि स्पृहणीय गुणों से रहित धन हो, तो हमें वह नहीं चाहिए ।

१९९ ये वीर घमासान लडाई के मोर्चे पर श्रेष्ठता सिद्ध कर दिखाते हैं और वीरतापूर्ण कार्य करके बतलाते हैं । वे शत्रु को पछाड देते हैं । अपने निजी बलसे उच्च कोटिके कार्य निष्पन्न करके वंदनीय बन जाते हैं । शत्रुदलको हराकर अपहरण की हुई गौओं को छुडा लाते हैं ।

टिप्पणी— [१९८] (१) नश् = (अदर्शने) अभाव में विलीन होना, पहुँचना, पाना, मिलना । (२) जनं = जन्-जनी प्रादुर्भावे) = उत्पन्न हुआ । (३) सर्व-वीरं = सभी तरह की शूरताकी शक्तियों से परिपूर्ण । [१९९] (१) धारा = ओघ, प्रवाह, सेना का मोर्चा, समूह, कीर्ति, सादृश्य, भाषण । (२) अर्चिन् = पूजा करनेवाला, प्रकाशमान (तविषीभिः अर्चिनः = बल से तेजस्वी या बल से मातृभूमि की पूजा करनेहारे ।) (३) ऋज् (गतिस्थानार्जनोपार्जनेषु) जाना, प्राप्त करना, अपनी जगह स्थिर रहना, बलवान होना । (४) ऋजीषिन् = गतिमान, स्थिर, बलिष्ठ, रस निचोडने पर बचा हुआ अंश, सोम । (५) मृगः = सिंह, जानवर । (६) भृमिः = भ्रमण, झंझावात, शीघ्रता, आवर्त ।

(२००) द्यावः। न। स्तृऽभिः। चितयन्त। खादिनः।
वि। अभ्रियाः। न। द्युतयन्त। वृष्टयः।
रुद्रः। यत्। वः। मरुतः। रुक्मऽवक्षसः।
वृषा। अजनि। पृश्न्याः। शुक्रे। ऊधनि॥ २॥
(२०१) उक्षन्ते। अश्वान्। अत्यान्ऽइव। आजिषु।
नदस्य। कर्णैः। तुरयन्ते। आशुऽभिः।
हिरण्यऽशिप्राः। मरुतः। दविध्वतः। पृक्षम्। याथ। पृषतीभिः। सऽमन्यवः॥३॥

अन्वयः— २०० स्तृभिः न द्यावः खादिनः चितयन्त, वृष्टयः, अभ्रियाः न, वि द्युतयन्त, यत् (हे) रुक्म-वक्षसः मरुतः! वः वृषा रुद्रः पृश्न्याः शुक्रे ऊधनि अजनि।

२०१ अत्यान् इव अश्वान् उक्षन्ते, नदस्य कर्णैः आशुभिः आजिषु तुरयन्ते, (हे) हिरण्य-शिप्राः स-मन्यवः मरुतः! दविध्वतः पृषतीभिः पृक्षं याथ।

अर्थ— २०० (स्तृभिः न) नक्षत्रों से जिस प्रकार (द्यावः) द्युलोक उसी प्रकार (खादिनः) कँगन-धारी वीर इन आभूषणों से (चितयन्त) सुहाते हैं। (वृष्टयः) वल की वर्षा करनेहारे वे वीर (अभ्रि-याः न) मेघ में विद्यमान बिजली के समान (वि द्युतयन्त) विशेष ढंग से द्योतमान होते हैं। (यत्) क्योंकि हे (रुक्म-वक्षसः) उरोभाग पर मुहरों के हार पहननेवाले (मरुतः!) वीर मरुतो! (वः) तुम्हें (वृषा रुद्रः) बलिष्ठ रुद्र (पृश्न्याः) भूमि के (शुक्रे ऊधनि) पवित्र उदरमें से (अजनि) निर्माण कर चुका।

२०१ (अत्यान् इव) घुडदौड के घोडों के समान अपने (अश्वान्) घोडों को भी ये वीर (उक्षन्ते) बलिष्ठ करते हैं। वे (नदस्य कर्णैः) नाद करनेवाले, हिनहिनानेवाले (आशुभिः) घोडों-सहित (आजिषु) युद्धों में, चढाई के समय (तुरयन्ते) वेग से चले जाते हैं। हे (हिरण्य-शिप्राः) सोने के साफे पहने हुए (स-मन्यवः) उत्साही (मरुतः!) वीर मरुतो! (दवि-ध्वतः) शत्रुओं को हिलानेवाले तुम (पृषतीभिः) धब्बेवाली हिरनियोंसहित (पृक्षं याथ) अन्न के समीप जाते हो।

भावार्थ— २०० वीरों के आभूषण पहनने पर ये वीर बहुत भले दिखाई देते हैं और वे बिजली के समान चमकने लगते हैं। मातृभूमि की सेवा के लिए ही ये अस्तित्व में आ चुके हैं।

२०१ वीर मरुत् अपने घोडोंको पुष्टिकारक अन्न देकर, उन्हें बलवान् बना देते हैं और हिनहिनानेवाले घोडों के साथ शीघ्र ही रणभूमि में तुरन्त जा पहुँचते हैं। वे शत्रुओं को परास्त कर विपुल अन्न पाते हैं।

टिप्पणी- [२००] (१) स्तृ = नक्षत्र, तारका। (२) अभ्रियः = मेघ में पैदा होनेवाली बिजली। (३) पृश्निः = गौ, धरती, अंतरिक्ष। [२०१] (१) नदस्य कर्णैः (कर्णैः) = नाद करनेवाले, हिनहिनानेवाले (घोडों के साथ,) [नदस्य आशुभिः कर्णैः = घोषणा करने के त्वराशील सींगसहित, कर्ण = Mego-Phone।] (२) अश्वः = घोडा, व्यापनेवाला, खूब खानेवाला, घोडेके समान बलवान्। (३) उक्ष् = सिंचन करना, गीला करना, सबल होना। (४) आजि = (अज् गतौ) शत्रु पर करने का धावा, हमला, शीघ्रतापूर्वक विपुलशक्तिसे की हुई चढाई। (५) मन्युः = उत्साह, स-मन्युः = उत्साहसे युक्त, (मंत्र २०२ देखो।) (६) दविध्वत् = (धून् कम्पने) हिलानेवाला।

(२०२) पृक्षे । ता । विश्वा । भुवना । ववक्षिरे । मित्राय । वा । सदम् । आ । जीरऽदानवः ।
पृषत्ऽअश्वासः । अनवभ्रऽराधसः ।
ऋजिप्यासः । न । वयुनेषु । धूःऽसदः ॥ ४ ॥

(२०३) इन्धन्वऽभिः । धेनुऽभिः । रप्शदूधऽभिः । अध्वस्मऽभिः । पथिऽभिः । भ्राजत्-ऋष्टयः ।
आ । हंसासः । न । स्वसराणि । गन्तन ।
मधोः । मदाय । मरुतः । सऽमन्यवः ॥ ५ ॥

अन्वयः— २०२ जीर-दानवः पृषत्-अश्वासः अन्-अवभ्र-राधसः, ऋजिप्यासः न, वयुनेषु धूर्-सदः, पृक्षे मित्राय सदं वा ता विश्वा भुवना आ ववक्षिरे ।

२०३ (हे) स-मन्यवः भ्राजत्-ऋष्टयः मरुतः ! इन्धन्वभिः रप्शत्-ऊधभिः धेनुभिः अ-ध्वस्माभिः पथिभिः मधोः मदाय, हंसासः स्व-सराणि न, आ गन्तन ।

अर्थ- २०२ (जीर-दानवः) शीघ्र विजय पानेवाले, (पृषत्-अश्वासः) धब्बेवाले घोडे समीप रखनेवाले, (अन्-अवभ्र-राधसः) जिनका धन कोई भी छीन नहीं सकता, ऐसे और (ऋजिप्यासः न) सीधी राह से उन्नति को जानेवाले के समान (वयुनेषु) सभी कर्मों में (धूर्-सदः) अग्रभाग में बैठनेवाले ये वीर (पृक्षे) अन्नदान के समय (मित्राय सदं वा) मित्रों को स्थान देने के समान (ता विश्वा भुवना) उन सब भुवनों को (आ ववक्षिरे) आश्रय देते हैं ।

२०३ हे (स-मन्यवः) उत्साही, (भ्राजत्-ऋष्टयः) तेजस्वी हथियार धारण करनेवाले (मरुतः !) वीर मरुतो ! (इन्धन्वभिः) प्रज्वलित, तेजस्वी (रप्शत्-ऊधभिः) स्तुत्य और महान् थनों से युक्त (धेनुभिः) गौओं के साथ (अ-ध्वस्मभिः) अविनाशी (पथिभिः) मार्गों से (मधोः मदाय) सोमरसजन्य आनन्द के लिए इस यज्ञ के समीप (हंसासः स्व-सराणि न) हंस जैसे अपने निवास स्थान के समीप जाते हैं, उसी प्रकार (आ गन्तन) आओ ।

भावार्थ- २०२ ये वीर उदारचेता, अश्वारोही, धनसम्पन्न, सरल मार्ग से उन्नत बननेवालों के समान सभी कार्य करते समय अग्रगन्ता बननेवाले हैं । अन्न का प्रदान करते समय जैसे वे मित्रों को स्थान देते हैं उसी प्रकार सभी प्राणियोंको सहारा देनेवाले हैं ।

२०३ विपुल दूध देनेवाली गौओं के साथ सोमरस पीने के लिए ये वीर अच्छे सुघड मार्गों पर से इस यज्ञ की ओर आ जायँ ।

टिप्पणी— [२०२] (१) जीर-दानुः = (जीर = जल्द, तलवार; दानु = शूर, विजयी, विजेता, दान देनेवाला, काटनेवाला) शीघ्र विजयी, तुरन्त दान देनेवाला, तलवार ले मारकाट करनेवाला । (२) ऋजिप्य = (ऋजु+प्राप्य) सीधी राह से जानेवाला, सरलतया अपनी उन्नति करनेवाला । (३) वयुनं = ज्ञान, कर्म, नियम, रीति, व्यवस्था (Rule, Order) (४) अन्-अवभ्र-राधसः = अपतनशील धन से युक्त । (५) धूर्-सद् = प्रमुख, धुराके स्थान में बैठनेवाला । (६) भुवनं = भुवन, प्राणी, बनी हुई चीज । [२०३] (१) अ-ध्वस्मन् = (ध्वंस् अवस्रंसने गतौ च) अविनाशी । (२) स्व-सर = [स्व-सृ- (सर्) गतौ] स्वयमेव जिधर जाने की प्रवृत्ति हो, वह स्थान, घर, अपना स्थान । (३) स-मन्युः = उत्साही, समान अंतःकरण के, एक विचार के । (देखिए मंत्र २०१ ।)

(२०४) आ । नः । ब्रह्माणि । मरुतः । सऽमन्यवः ।
नराम् । न । शंसः । सवनानि । गन्तन ।
अश्वाँऽइव । पिप्यत । धेनुम् । ऊधनि ।
कर्त । धियम् । जरित्रे । वाजऽपेशसम् ॥ ६ ॥

(२०५) तम् । नः । दात । मरुतः । वाजिनम् । रथे ।
आपानम् । ब्रह्म । चितयत् । दिवेऽदिवे ।
इषम् । स्तोतृऽभ्यः । वृजनेषु । कारवे ।
सनिम् । मेधाम् । अरिष्टम् । दुस्तरम् । सहः ॥ ७ ॥

अन्वयः- २०४ (हे) स-मन्यवः मरुतः ! नरां शंसः न नः ब्रह्माणि सवनानि आ गन्तन, अश्वांइव धेनुं ऊधनि पिप्यत, जरित्रे वाज-पेशसं धियं कर्त ।

२०५ (हे) मरुतः ! रथे वाजिनं, दिवे-दिवे ब्रह्म चितयत्, आपानं तं इषं स्तोतृभ्यः नः दात, वृजनेषु कारवे सनिं मेधां अ-रिष्टं दुस्-तरं सहः ।

अर्थ- २०४ हे (स-मन्यवः मरुतः !) उत्साही मरुतो ! (नरां शंसः न) शूरों में प्रशंसनीय वीरों के समान (नः ब्रह्माणि सवनानि) हमारे ज्ञानमय सोमसत्रकी ओर (आ गन्तन) आ जाओ। (अश्वांइव) घोडों के समान हृष्टपुष्ट (धेनुं) गौको (ऊधनि) दुग्धाशय में (पिप्यत) पुष्ट करो। (जरित्रे) उपासक को (वाज-पेशसं) अन्नसे भली प्रकार सुरूपता देने का (धियं कर्त) कर्म करो।

२०५ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! हमें (रथे वाजिनं) रथमें बैठनेवाला वीर और (दिवे-दिवे) हरदिन (आपानं ब्रह्म चितयत्) प्राप्तव्य ज्ञान का संवर्धन करनेवाला ज्ञानी पुत्र दे दो. तथा इस भाँति (तं इषं) वह अभीष्ट अन्न भी (स्तोतृभ्यः नः दात) हम उपासकों को देदो। (वृजनेषु कारवे) युद्धों में पराक्रम करनेहारे वीर को धन की (सनिं) देन (मेधां) बुद्धि तथा (अ-रिष्टं) अविनाशी एवं (दुस्-तरं) अजेय (सहः) सहनशक्ति भी दे दो।

भावार्थ- २०४ शूर सैनिकों में जो सबसे अधिक शूर होते हैं, उनका अनुकरण अन्य वीरोंको करना चाहिए। इस भाँति अधिक पराक्रम करके वे सदैव सत्कर्मों में अपना हाथ बँटावे। परिपुष्ट घोडों के समान गौएँ भी चपल तथा पुष्ट रहें। गौओं को अधिक दुधारु बनाने की चेष्टा करें। अन्न से बल बढाकर शरीर प्रमाणबद्ध रहे, इसीलिए भाँतिभाँति के प्रयोग करने चाहिए।

२०५ हमें शूर, ज्ञानी, रथी, तथा सत्यनिष्ठ पुत्र मिले। हमें पर्याप्त अन्न मिले। लडाई में वीरतापूर्ण कार्य कर दिखलानेवाले को मिलनेयोग्य देन, बुद्धिकी प्रबलता, अविनाशी और अजेय शक्ति भी हमें मिले।

टिप्पणी- [२०४] (१) पेशस् = सुरूपता, तेजस्विता। (२) नृ = नेता, शूर। (३) धेनुं ऊधनि पिप्यत= गौका दुग्धाशय पुष्ट रहे ऐसा करो, गौ अधिक दूध देने लगे ऐसा करो। (४) जरितृ = स्तोता, उपासक, भक्त। (५) वाज-पेशस् = अन्न से बल पाकर जो शारीरिक गठन होता हो। (६) धी = बुद्धि, कर्म, (ज्ञानपूर्वक किया हुआ कर्म।) [२०५] (१) मेधा = शक्ति, धारणा-बुद्धि। (२) सहः = शत्रुके हमले सहन करके अपने स्थान पर अपराभूत दशा में खडे रहने की शक्ति। (३) वृजनं = दुर्ग, गढ में रहकर करने का युद्ध।

(२०२) पृक्षे । ता । विश्वा । भुवना । ववक्षिरे । मित्राय । वा । सदम् । आ । जीरऽदानवः ।
पृषत्ऽअश्वासः । अनवभ्रऽराधसः ।
ऋजिप्यासः । न । वयुनेषु । धूःऽसदः ॥ ४ ॥

(२०३) इन्धन्वऽभिः । धेनुऽभिः । रप्शदूधऽभिः । अध्वस्मऽभिः । पथिऽभिः । भ्राजत्ऽऋष्टयः ।
आ । हंसासः । न । स्वसराणि । गन्तन ।
मधोः । मदाय । मरुतः । सऽमन्यवः ॥ ५ ॥

अन्वयः— २०२ जीर-दानवः पृषत्-अश्वासः अन्-अवभ्र-राधसः, ऋजिप्यासः न, वयुनेषु धूर्-सदः, पृक्षे मित्राय सदं वा ता विश्वा भुवना आ ववक्षिरे ।

२०३ (हे) स-मन्यवः भ्राजत्-ऋष्टयः मरुतः ! इन्धन्वभिः रप्शत्-ऊधभिः धेनुभिः अ-ध्वस्माभिः पथिभिः मधोः मदाय, हंसासः स्व-सराणि न, आ गन्तन ।

अर्थ- २०२ (जीर-दानवः) शीघ्र विजय पानेवाले, (पृषत्-अश्वासः) धब्बेवाले घोडे समीप रखनेवाले, (अन्-अवभ्र-राधसः) जिनका धन कोई भी छीन नहीं सकता, ऐसे और (ऋजिप्यासः न) सीधी राह से उन्नति को जानेवाले के समान (वयुनेषु) सभी कर्मों में (धूर्-सदः) अग्रभाग में बैठनेवाले ये वीर (पृक्षे) अन्नदान के समय (मित्राय सदं वा) मित्रों को स्थान देने के समान (ता विश्वा भुवना) उन सब भुवनों को (आ ववक्षिरे) आश्रय देते हैं ।

२०३ हे (स-मन्यवः) उत्साही, (भ्राजत्-ऋष्टयः) तेजस्वी हथियार धारण करनेवाले (मरुतः!) वीर मरुतो ! (इन्धन्वभिः) प्रज्वलित, तेजस्वी (रप्शत्-ऊधभिः) स्तुत्य और महान् थनों से युक्त (धेनुभिः) गौओं के साथ (अ-ध्वस्मभिः) अविनाशी (पथिभिः) मार्गों से (मधोः मदाय) सोमरसजन्य आनन्द के लिए इस यज्ञ के समीप (हंसासः स्व-सराणि न) हंस जैसे अपने निवास स्थान के समीप जाते हैं, उसी प्रकार (आ गन्तन) आओ ।

भावार्थ- २०२ ये वीर उदारचेता, अश्वारोही, धनसम्पन्न, सरल मार्ग से उन्नत बननेवालों के समान सभी कार्य करते समय अग्रगन्ता बननेवाले हैं । अन्न का प्रदान करते समय जैसे वे मित्रों को स्थान देते हैं उसी प्रकार सभी प्राणियोंको सहारा देनेवाले हैं ।

२०३ विपुल दूध देनेवाली गौओं के साथ सोमरस पीने के लिए ये वीर अच्छे सुघड मार्गों पर से इस यज्ञ की ओर आ जायँ ।

टिप्पणी— [२०२] (१) जीर-दानुः = (जीर= जल्द, तलवार; दानु= शूर, विजयी, विजेता, दान देनेवाला, काटनेवाला) शीघ्र विजयी, तुरन्त दान देनेवाला, तलवार ले मारकाट करनेवाला । (२) ऋजिप्य= (ऋजु+ प्राप्य) सीधी राह से जानेवाला, सरलतया अपनी उन्नति करनेवाला । (३) वयुनं = ज्ञान, कर्म, नियम, रीति, व्यवस्था (Rule, Order) (४) अन्-अवभ्र-राधसः = अपतनशील धन से युक्त । (५) धूर्-सद् = प्रमुख, धुराके स्थान में बैठनेवाला । (६) भुवनं = भुवन, प्राणी, बनी हुई चीज । [२०३] (१) अ-ध्वस्मन् = (ध्वंस् अवस्रंसने गतौ च) अविनाशी । (२) स्व-सर = [स्व-सृ- (सर्) गतौ] स्वयमेव जिधर जाने की प्रवृत्ति हो, वह स्थान, घर, अपना स्थान । (३) स-मन्युः = उत्साही, समान अंतःकरण के, एक विचार के । (देखिए मंत्र २०१ ।)

(२०४) आ । नः । ब्रह्माणि । मरुतः । सऽमन्यवः ।
नराम् । न । शंसः । सवनानि । गन्तन ।
अश्वाँऽइव । पिप्यत । धेनुम् । ऊधनि ।
कर्त । धियम् । जरित्रे । वाजऽपेशसम् ॥ ६ ॥

(२०५) तम् । नः । दात । मरुतः । वाजिनम् । रथे ।
आपानम् । ब्रह्म । चितयत् । दिवेऽदिवे ।
इषम् । स्तोतृऽभ्यः । वृजनेषु । कारवे ।
सनिम् । मेधाम् । अरिष्टम् । दुस्तरम् । सहः ॥ ७ ॥

अन्वयः- २०४ (हे) स-मन्यवः मरुतः ! नरां शंसः न नः ब्रह्माणि सवनानि आ गन्तन, अश्वांइव धेनुं ऊधनि पिप्यत, जरित्रे वाज-पेशसं धियं कर्त ।

२०५ (हे) मरुतः ! रथे वाजिनं, दिवे-दिवे ब्रह्म चितयत्, आपानं तं इषं स्तोतृभ्यः नः दात, वृजनेषु कारवे सनिं मेधां अ-रिष्टं दुस्-तरं सहः ।

अर्थ- २०४ हे (स-मन्यवः मरुतः !) उत्साही मरुतो ! (नरां शंसः न) शूरों में प्रशंसनीय वीरों के समान (नः ब्रह्माणि सवनानि) हमारे ज्ञानमय सोमसत्रकी ओर (आ गन्तन) आ जाओ। (अश्वांइव) घोडी के समान हृष्टपुष्ट (धेनुं) गौको (ऊधनि) दुग्धाशय में (पिप्यत) पुष्ट करो। (जरित्रे) उपासक को (वाज-पेशसं) अन्नसे भली प्रकार सुरूपता देने का (धियं कर्त) कर्म करो।

२०५ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! हमें (रथे वाजिनं) रथमें बैठनेवाला वीर और (दिवे-दिवे) हरदिन (आपानं ब्रह्म चितयत्) प्राप्तव्य ज्ञान का संवर्धन करनेवाला ज्ञानी पुत्र दे दो, तथा इस भाँति (तं इषं) वह अभीष्ट अन्न भी (स्तोतृभ्यः नः दात) हम उपासकों को देदो। (वृजनेषु कारवे) युद्धों में पराक्रम करनेहारे वीर को धन की (सनिं) देन (मेधां) बुद्धि तथा (अ-रिष्टं) अविनाशी एवं (दुस्-तरं) अजेय (सहः) सहनशक्ति भी दे दो।

भावार्थ- २०४ शूर सैनिकों में जो सबसे अधिक शूर होते हैं, उनका अनुकरण अन्य वीरोंको करना चाहिए। इस भाँति अधिक पराक्रम करके वे सदैव सत्कर्मों में अपना हाथ बँटाये। परिपुष्ट घोडी के समान गौएँ भी चपल तथा पुष्ट रहें। गौओं को अधिक दुधारु बनाने की चेष्टा करें। अन्न से बल बढाकर शरीर प्रमाणबद्ध रहें, इसीलिए भाँतिभाँति के प्रयोग करने चाहिए।

२०५ हमें शूर, ज्ञानी, रथी, तथा सत्यनिष्ठ पुत्र मिले। हमें पर्याप्त अन्न मिले। लडाई में वीरतापूर्ण कार्य कर दिखलानेवाले को मिलनेयोग्य देन, बुद्धिकी प्रबलता, अविनाशी और अजेय शक्ति भी हमें मिले।

टिप्पणी- [२०४] (१) पेशस् = सुरूपता, तेजस्विता। (२) नृ = नेता, शूर। (३) धेनुं ऊधनि पिप्यत= गौका दुग्धाशय पुष्ट रहे ऐसा करो, गौ अधिक दूध देने लगे ऐसा करो। (४) जरितृ = स्तोता, उपासक, भक्त। (५) वाज-पेशस् = अन्न से बल पाकर जो शारीरिक गठन होता हो। (६) धी = बुद्धि. कर्म, ज्ञानपूर्वक किया हुआ कर्म।) [२०५] (१) मेधा = शक्ति, धारणा-बुद्धि। (२) सहः = शत्रुके हमले सहन करके अपने स्थान पर अपराजित दशा में खडे रहने की शक्ति। (३) वृजनं = दुर्ग, गढ में रहकर करने का युद्ध।

(२०२) पृक्षे । ता । विश्वा । भुवना । ववक्षिरे । मित्राय । वा । सदम् । आ । जीरऽदानवः ।
पृषत्ऽअश्वासः । अनवभ्रऽराधसः ।
ऋजिप्यासः । न । वयुनेषु । धूःऽसदः ॥ ४ ॥

(२०३) इन्धन्वऽभिः । धेनुऽभिः । रप्शदूधऽभिः । अध्वस्मऽभिः । पथिऽभिः । भ्राजत्ऽऋष्टयः ।
आ । हंसासः । न । स्वसराणि । गन्तन ।
मधोः । मदाय । मरुतः । सऽमन्यवः ॥ ५ ॥

अन्वयः— २०२ जीर-दानवः पृषत्-अश्वासः अन्-अवभ्र-राधसः, ऋजिप्यासः न, वयुनेषु धूर्-सदः पृक्षे मित्राय सदं वा ता विश्वा भुवना आ ववक्षिरे ।

२०३ (हे) स-मन्यवः भ्राजत्-ऋष्टयः मरुतः ! इन्धन्वभिः रप्शत्-ऊधभिः धेनुभिः अ-ध्वस्मभिः पथिभिः मधोः मदाय, हंसासः स्व-सराणि न, आ गन्तन ।

अर्थ- २०२ (जीर-दानवः) शीघ्र विजय पानेवाले, (पृषत्-अश्वासः) धब्बेवाले घोडे रखनेवाले, (अन्-अवभ्र-राधसः) जिनका धन कोई भी छीन नहीं सकता, ऐसे और (ऋजिप्यासः न) सीधी राह से उन्नति को जानेवाले के समान (वयुनेषु) सभी कर्मों में (धूर्-सदः) अग्रभाग में बैठनेवाले ये वीर (पृक्षे) अन्नदान के समय (मित्राय सदं वा) मित्रों को स्थान देने के समान (ता विश्वा भुवना) उन सब भुवनों को (आ ववक्षिरे) आश्रय देते हैं ।

२०३ हे (स-मन्यवः) उत्साही, (भ्राजत्-ऋष्टयः) तेजस्वी हथियार धारण करनेवाले (मरुतः) वीर मरुतो ! (इन्धन्वभिः) प्रज्वलित, तेजस्वी (रप्शत्-ऊधभिः) स्तुत्य और महान् थनों से युक्त (धेनुभिः) गौओं के साथ (अ-ध्वस्मभिः) अविनाशी (पथिभिः) मार्गों से (मधोः मदाय) सोमरसजन्य आनन्द के लिए इस यज्ञ के समीप (हंसासः स्व-सराणि न) हंस जैसे अपने निवासस्थान के समीप जाते हैं, उसी प्रकार (आ गन्तन) आओ ।

भावार्थ- २०२ ये वीर उदारचेता, अश्वारोही, धनसम्पन्न, सरल मार्ग से उन्नत बननेवालों के समान सभी कर्म करते समय अग्रगन्ता बननेवाले हैं । अन्न का प्रदान करते समय जैसे वे मित्रों को स्थान देते हैं उसी प्रकार प्राणियोंको सहारा देनेवाले हैं ।

२०३ विपुल दूध देनेवाली गौओं के साथ सोमरस पीने के लिए ये वीर अच्छे सुघड मार्गों से हमारे यज्ञ की ओर आ जायँ ।

टिप्पणी— [२०२] (१) जीर-दानुः = (जीर = जल्द, तलवार; दानु = शूर, विजयी, विजेता, दाता, काटनेवाला) शीघ्र विजयी, तुरन्त दान देनेवाला, तलवार ले मारकाट करनेवाला । (२) ऋजिप्य = (ऋजु-प्राप्य) सीधी राह से जानेवाला, सरलतया अपनी उन्नति करनेवाला । (३) वयुनं = ज्ञान, कर्म, नियम, व्यवस्था (Rule, Order) (४) अन्-अवभ्र-राधसः = अपतनशील धन से युक्त । (५) धूर्-सद् = प्रमुख, धुराके स्थान में बैठनेवाला । (६) भुवनं = भुवन, प्राणी, बनी हुई चीज । [२०३] (१) अ-ध्वस्मन् = (ध्वंस् अवस्रंसने गतौ च) अविनाशी । (२) स्व-सर = [स्व-सृ- (सर्) गतौ] स्वयमेव जिधर जाने की प्रवृत्ति हो, वह स्थान, घर, अपना स्थान । (३) स-मन्युः = उत्साही, समान अंतःकरण के, एक विचारवाले (देखिए मंत्र २०१ ।)

(२०४) आ । नः । ब्रह्माणि । मरुतः । सऽमन्यवः ।
नराम् । न । शंसः । सवनानि । गन्तन ।
अश्वाँऽइव । पिप्यत । धेनुम् । ऊधनि ।
कर्त । धियम् । जरित्रे । वाजऽपेशसम् ॥ ६ ॥

(२०५) तम् । नः । दात । मरुतः । वाजिनम् । रथे ।
आपानम् । ब्रह्म । चितयत् । दिवेऽदिवे ।
इषम् । स्तोतृऽभ्यः । वृजनेषु । कारवे ।
सनिम् । मेधाम् । अरिष्टम् । दुस्तरम् । सहः ॥ ७ ॥

अन्वयः- २०४ (हे) स-मन्यवः मरुतः ! नरां शंसः न नः ब्रह्माणि सवनानि आ गन्तन, अश्वांइव धेनुं ऊधनि पिप्यत, जरित्रे वाज-पेशसं धियं कर्त ।

२०५ (हे) मरुतः ! रथे वाजिनं, दिवे-दिवे ब्रह्म चितयत्, आपानं तं इषं स्तोतृभ्यः नः दात, वृजनेषु कारवे सनिं मेधां अ-रिष्टं दुस्-तरं सहः ।

अर्थ- २०४ हे (स-मन्यवः मरुतः !) उत्साही मरुतो ! (नरां शंसः न) शूरों में प्रशंसनीय वीरों के समान (नः ब्रह्माणि सवनानि) हमारे ज्ञानमय सोमसत्रकी ओर (आ गन्तन) आ जाओ। (अश्वांइव) घोडों के समान हृष्टपुष्ट (धेनुं) गौको (ऊधनि) दुग्धाशय में (पिप्यत) पुष्ट करो। (जरित्रे) उपासक को (वाज-पेशसं) अन्नसे भली प्रकार सुरूपता देने का (धियं कर्त) कर्म करो।

२०५ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! हमें (रथे वाजिनं) रथमें बैठनेवाला वीर और (दिवे-दिवे) हरदिन (आपानं ब्रह्म चितयत्) प्राप्तव्य ज्ञान का संवर्धन करनेवाला ज्ञानी पुत्र दे दो, तथा इस भाँति (तं इषं) वह अभीष्ट अन्न भी (स्तोतृभ्यः नः दात) हम उपासकों को देदो। (वृजनेषु कारवे) युद्धों में पराक्रम करनेहारे वीर को धन की (सनिं) देन (मेधां) बुद्धि तथा (अ-रिष्टं) अविनाशी एवं (दुस्-तरं) अजेय (सहः) सहनशक्ति भी दे दो।

भावार्थ- २०४ शूर सैनिकों में जो सबसे अधिक शूर होते हैं, उनका अनुकरण अन्य वीरोंको करना चाहिए। इस भाँति अधिक पराक्रम करके वे सदैव सत्कर्मों में अपना हाथ बँटाये। परिपुष्ट घोडों के समान गौएँ भी चपल तथा पुष्ट रहें। गौओं को अधिक दुधारु बनाने की चेष्टा करें। अन्न से बल बढाकर शरीर प्रमाणबद्ध रहे, इसीलिए भाँतिभाँति के प्रयोग करने चाहिए।

२०५ हमें शूर, ज्ञानी, रथी, तथा सत्यनिष्ठ पुत्र मिले। हमें पर्याप्त अन्न मिले। लडाई में वीरतापूर्ण कार्य कर दिखलानेवाले को मिलनेयोग्य देन, बुद्धिकी प्रबलता, अविनाशी और अजेय शक्ति भी हमें मिले।

टिप्पणी- [२०४] (१) पेशस् = सुरूपता, तेजस्विता। (२) नृ = नेता, शूर। (३) धेनुं ऊधनि पिप्यत= गौका दुग्धाशय पुष्ट रहे ऐसा करो, गौ अधिक दूध देने लगे ऐसा करो। (४) जरितृ = स्तोता, उपासक, भक्त। (५) वाज-पेशस् = अन्न से बल पाकर जो शारीरिक गठन होता हो। (६) धी = बुद्धि, कर्म, (ज्ञानपूर्वक किया हुआ कर्म।) [२०५] (१) मेधा = शक्ति, धारणा-बुद्धि। (२) सहः = शत्रुके हमले सहन करके अटल तथा अपराभूत दशा में खडे रहने की शक्ति। (३) वृजनं = दुर्ग, गढ में रहकर करने का युद्ध।

(२०६) यत् । युञ्जते । मरुतः । रुक्मऽवक्षसः ।
अश्वान् । रथेषु । भगे । आ । सुऽदानवः ।
धेनुः । न । शिश्वे । स्वसरेषु । पिन्वते ।
जनाय । रातऽहविषे । महीम् । इषम् ॥ ८ ॥

(२०७) यः । नः । मरुतः । वृकऽताति । मर्त्यः ।
रिपुः । दधे । वसवः । रक्षत । रिषः ।
वर्तयत । तपुषा । चक्रिया । अभि । तम् ।
अव । रुद्राः । अशसः । हन्तन । वधः ॥ ९ ॥

अन्वयः - २०६ यत् सु दानवः रुक्म-वक्षसः मरुतः भगे अश्वान् रथेषु आ युञ्जते, धेनुः शिश्वे न, रात-हविषे जनाय स्वसरेषु महीं इषं पिन्वते ।

२०७ (हे) वसवः मरुतः ! यः मर्त्यः वृक-ताति नः रिपुः दधे, रिषः रक्षत, तं तपुषा चक्रिया अभि वर्तयत, (हे) रुद्राः ! अशसः वधः अव हन्तन ।

अर्थ- २०६ (यत् सु-दानवः) जब दानशूर एवं (रुक्म-वक्षसः मरुतः) वक्षःस्थलपर स्वर्णमुद्रिकाओं से बना हार धारण करनेवाले वीर मरुत् (भगे) ऐश्वर्यप्राप्ति के लिए अपने (अश्वान्) घोडों को (रथेषु आ युञ्जते) रथों में जोड देते हैं, तब वे (धेनुः शिश्वे न) जैसे गौ अपने बछडे के लिए दूध देती है उसी प्रकार (रात हविषे जनाय) हविष्यान्न देनेवाले लोगों के लिए (स्व सरेषु) उनके अपने घरों में ही (महीं इषं पिन्वते) बडी भारी अन्नसमृद्धि पर्याप्त मात्रा में प्रदान करते हैं ।

२०७ हे (वसवः मरुतः !) बसानेवाले वीर मरुतो ! (यः मर्त्यः) जो मानव (वृक-ताति) भेडिये के समान क्रूर बन (नः रिपुः दधे) हमारे लिए शत्रुभूत होकर बैठा हो, उस (रिषः) हिंसक से (रक्षत) हमारी रक्षा कीजिए। (तं) उसे (तपुषा) संतापदायक (चक्रिया) पहिये जैसे हथियार से (अभि वर्तयत) घेर डालो। हे (रुद्राः !) शत्रुको रुलानेवाले वीरो ! (अशसः) पेटू (वध्यः) हननीय शत्रुका (अव हन्तन) वध करो ।

भावार्थ- २०६ वीर युद्ध के लिए रथपर चढकर जाते हैं और उधर भारी विजय पाकर धन साथ ले आते हैं। पश्चात् उदार पुरुषों को वही धन उचित मात्रा में विभक्त करके बाँट देते हैं ।

२०७ जो मनुष्य क्रूर बनकर हमसे शत्रुतापूर्ण व्यवहार करता हो, उससे हमें बचाओ। चारों ओरसे उस शत्रु को घेरकर नष्ट कर डालो ।

टिप्पणी- [२०६] (१) भगः = ऐश्वर्य, धन, भाग्य, सुख, कीर्ति, वैभवशालिता । [२०७] (१) चक्रिया= (चक्रं) = चक्रव्यूह, पहिये के समान हथियार । (२) अशस् = (अ-शस्) = अप्रशस्त, दुष्ट (अश्) भक्षक, पेटू । (३) तं तपुषा चक्रिया अभि वर्तयत = (तं) उस शत्रु को (तपुषा) धधकनेवाले, जल्द तपनेवाले (चक्रिया) चक्रवत् दिखाई देनेवाले शस्त्रों से घेरकर (अभि) चतुर्दिक् (वर्तयत) घेर दो ।

(२०८) चित्रं । तत् । वः । मरुतः । यामं । चेकिते ।
पृश्न्याः । यत् । ऊधः । अपि । आपयः । दुहुः ।
यत् । वा । निदे । नवमानस्य । रुद्रियाः ।
त्रितम् । जराय । जुरताम् । अदाभ्याः ॥ १० ॥

(२०९) तान् । वः । महः । मरुतः । एवऽयाव्नः । विष्णोः । एषस्य । प्रऽभृथे । हवामहे ।
हिरण्यऽवर्णान् । ककुहान् । यतऽस्रुचः । ब्रह्मण्यन्तः । शंस्यम् । राधः । ईमहे ॥ ११ ॥

अन्वयः— २०८ (हे) मरुतः ! वः तत् चित्रं याम चेकिते, यत् आपयः पृश्न्याः अपि ऊधः दुहुः, यत् (हे) अ-दाभ्याः रुद्रियाः ! नवमानस्य निदे त्रितं जुरतां जराय वा।

२०९ (हे) मरुतः ! एव-या व्नः महः तान् वः विष्णोः एषस्य प्र-भृथे हवामहे, ब्रह्मण्यन्तः यत स्रुचः हिरण्य वर्णान् ककुहान् शस्यं राधः ईमहे।

अर्थ– २०८ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वः तत् चित्रं) तुम्हारा वह आश्चर्यजनक (याम) हमला (चेकिते) सब को विदित है, (यत्) क्योंकि सब से (आपयः) मित्रता करनेवाले तुम (पृश्न्याः अपि ऊधः) गौके दुग्धाशय का (दुहुः) दोहन करके दूध पीते हो। (यत्) उसी प्रकार हे (अ-दाभ्याः) न दबनेवाले (रुद्रियाः !) महावीरो ! (नवमानस्य) तुम्हारे उपासक की (निदे) निंदा करनेहारे तथा (त्रितं) त्रित नामवाले ऋषिको (जुरतां) मारने की इच्छा करनेवाले शत्रुओं के (जराय वा) विनाश के लिए तुमही प्रयत्नशील हो, यह बात विख्यात है।

२०९ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (एव यान्नः) वेगसे जानेवाले (महः) तथा महत्त्वयुक्त ऐसे (तान् वः) तुम्हें हमारे (विष्णोः) व्यापक हितकी (एषस्य) इच्छा की (प्र-भृथे) पूर्ति के लिए (हवामहे) हम बुलाते हैं। (ब्रह्मण्यन्तः) ज्ञानकी इच्छा करनेहारे तथा (यत-स्रुचः) पुण्य कर्म के लिए कटिबद्ध हो उठनेवाले हम (हिरण्य-वर्णान) सुवर्णवत् तेजस्वी एवं (ककुहान्) अत्यन्त उत्कृष्ट ऐसे इन वीरों के समीप (शस्यं राधः) सराहनीय धनकी (ईमहे) याचना करते हैं।

भावार्थ- २०८ वीर सैनिक शत्रुदल पर जब धावा करते हैं, तो उस चढाईको देख प्रेक्षक अचरजमें आते हैं। ये वीर गोदुग्ध को पीते हैं और अपने अनुयायियोंकी रक्षा करते हैं, अतः वे शत्रुओं तथा निन्दकोंसे बिलकुल नहीं डरते हैं।

२०९ वीरों को बुलाने में हमारा यही अभिप्राय है कि वे हमारे सार्वजनिक हित की जो अभिलाषाएँ हैं उन्हें पूर्ण करनेमें सहायता दे दें। हम ज्ञान पाने की अभिलाषा करते हैं और एतदर्थ हम प्रयत्नशील भी हैं। इसीलिए हम इन श्रेष्ठ वीरों के निकट जाकर उनसे प्रशंसनीय धन माँग रहे हैं। वे हमारी इच्छा पूर्ण करें।

टिप्पणी- [२०८] (१) अदाभ्य = (अ-दाभ्य) न दबनेवाला, जिसे कोई क्षति न पहुँची हो। (२) आपिः = आप्त, सुगमता से प्राप्त होनेवाला, मित्र। (३) त्रित = त्रैवाद के तत्त्वज्ञान का प्रचार करनेवाला [एकत, द्वित, त्रित ये तीन ऋषि त्रिविध तत्त्वज्ञान के प्रवर्तक थे। एकत्व, द्वैत, त्रैत वादों का प्रवर्तन इन्होंने किया।]

[२०९] (१) एवयावन् = वेगपूर्वक जानेवाला। (२) ककुह = प्रधान, उत्कृष्ट, सबसे श्रेष्ठ। (३) यत स्रुच् = यज्ञकुण्ड में घृतकी आहुति देनेके लिए जिनने स्रुवा तैयार कर रखी हो (अच्छे कार्य करने के लिए जिनने कमर कस ली हो, ऐसा स्वार्थी पुरुष)। (४) हिरण्य-वर्ण = जो मरुत् सुवर्णकान्ति से शोभित पीतवर्णवाले थे (मरुद्भ्यो वैश्यं। वा० य० ३०।५) वैश्यों का रंग पीत बतलाया जाता है; इसी भाँति यहाँ पर मरुतों का वर्ण पीत है, ऐसा सूचित किया है।

(२१४) प्र । यन्तु । वाजाः । तविषीभिः । अग्नयः । शुभे । सम्ऽमिश्लाः । पृषतीः । अयुक्ष
बृहत्ऽउक्षः । मरुतः । विश्वऽवेदसः । प्र । वेपयन्ति । पर्वतान् । अदाभ्याः ॥४॥

(२१५) अग्निऽश्रियः । मरुतः । विश्वऽकृष्टयः । आ । त्वेषम् । उग्रम् । अवः । ईमहे । वय
ते । स्वानिनः । रुद्रियाः । वर्षऽनिर्निजः । सिंहाः । न । हेषऽक्रतवः । सुऽदानवः ॥५

अन्वयः— २१४ वाजाः अग्नयः तविषीभिः प्र यन्तु, शुभे सं मिश्लाः पृषतीः अयुक्षत, अ-दाभ्याः वि
वेदसः बृहत्-उक्षः मरुतः पर्वतान् प्र वेपयन्ति ।

२१५ मरुतः अग्नि-श्रियः विश्व-कृष्टयः, उग्रं त्वेषं अवः आ ईमहे, ते वर्ष-निर्णिजः रुद्रि
हेष-क्रतवः सिंहाः न, स्वानिनः सु-दानवः ।

अर्थ- २१४ (वाजाः) बलवान् या अन्नवान् (अग्नयः) अग्निवत् तेजस्वी वीर (तविषीभिः) अप
बलोंसहित शत्रुदलपर (प्र यन्तु) चढाई करें या टूट पडें । (शुभे) लोककल्याण के लिए (सं मिश्लाः) इ
हुए वे वीर (पृषतीः अयुक्षत) धब्बेवाली घोडियाँ या हरिणियाँ रथों में जोड देते हैं । (अ-दाभ्याः)
दबनेवाले, (विश्व-वेदसः) सभी धनों से युक्त और (बृहत्-उक्षः) अतीव बलवान् वे (मरुतः) वी
मरुत् (पर्वतान् प्र वेपयन्ति) पहाडोंको भी हिला देते हैं ।

२१५ (मरुतः अग्निश्रियः) वे वीर मरुत् अग्निवत् तेजस्वी हैं और (विश्व-कृष्टयः) सभी किसा
में से हैं । उनके (उग्रं त्वेषं अवः) प्रखर तेजस्वी संरक्षणको (वयं आ ईमहे) हम चाहते हैं । (ते व
निर्णिजः) वे स्वदेशी गणवेश पहननेवाले हैं तथा (रुद्रियाः) महावीर के समान शूरवीर औ
(हेष-क्रतवः सिंहाः न) गर्जना करनेवाले सिंह के समान (स्वानिनः) बडा शब्द करनेहारे हैं
(सु दानवः) बडे अच्छे दानी हैं ।

भावार्थ- २१४ वीर अपना बल एकत्रित कर के शत्रुदल पर टूट पडें । जनता का हित करने के लिए वे मिल
कर कार्य करें । ये वीर किसी से दबनेवाले नहीं हैं और अच्छे ज्ञानी एवं सामर्थ्यवान् होने के कारण यदि प्रयत्न क
तो पर्वत-श्रेणियों को भी अपनी जगह से उखाड फेंक देंगे ।

२१५ ये वीर अग्नि की नाईं तेजस्वी हैं और कृषक होते हुए भी सेना में प्रविष्ट हुए हैं । ये स्वदेश
बनाये हुए गणवेश का ही उपयोग करते हैं । हमारी इच्छा है कि वे हमें संकटों से बचायें । वे शेर की नाईं दहा
हैं और शत्रुको चुनौती देने में झिझकते नहीं । ये बडे उदार भी हैं ।

टिप्पणी- [२१४] (१) वाजः = अन्न, यज्ञ, बल, वेग, लडाई, संपत्ति । (२) तविषी =(तविष्) बल, मान
बलिष्ठ, पृथ्वी । (३) अग्नयः = अग्नि के समान तेजस्वी । (अगले मंत्र में 'अग्निश्रियः' शब्द देखिए) । [२१
(१) कृष् = (विलेखने) खींचना, पराजित करना, प्रभुत्व प्रस्थापित करना, हल चलाना । (२) विश्व-कृष्टि=
कृषक, सभी मानव, सब को खींचनेवाला । देखिए " इन्द्र आसीत्सीरपतिः शतक्रतुः, कीनाशा आसन् म
सु दानवः ॥ (अथर्व ६।३०।१) । (३) निर्णिज् = पुष्ट, पवित्र, वस्त्र । (४) वर्ष = वर्षा, देश । वर्ष निर्णि
स्वदेश में बने हुए कपडे पहननेवाला, देशी वरदी या गणवेश उपयोग में लानेवाला, वर्षा को ही जो पहनावा मानते है

गाथिपुत्र विश्वामित्र ऋषि (ऋ० ३।२६।४—६)

(२१४) प्र । यन्तु । वाजाः । तविषीभिः । अग्नयः । शुभे । सम्ऽमिश्लाः । पृषतीः । अयुक्षत
वृहत्ऽउक्षः । मरुतः । विश्वऽवेदसः । प्र । वेपयन्ति । पर्वतान् । अदाभ्याः ॥४॥
(२१५) अग्निऽश्रियः । मरुतः । विश्वऽकृष्टयः । आ । त्वेषम् । उग्रम् । अवः । ईमहे । वयम्
ते । स्वानिनः । रुद्रियाः । वर्षऽनिर्निजः । सिंहाः । न । हेषऽक्रतवः । सुऽदानवः ॥५

अन्वयः— २१४ वाजाः अग्नयः तविषीभिः प्र यन्तु, शुभे सं-मिश्लाः पृषतीः अयुक्षत, अ-दाभ्याः विश्व-वेदसः वृहत्- उक्षः मरुतः पर्वतान् प्र वेपयन्ति ।

२१५ मरुतः अग्नि-श्रियः विश्व-कृष्टयः, उग्रं त्वेषं अवः आ ईमहे, ते वर्ष-निर्णिजः रुद्रियाः हेष-क्रतवः सिंहाः न, स्वानिनः सु-दानवः ।

अर्थ- २१४ (वाजाः) वलवान् या अन्नवान् (अग्नयः) अग्निवत् तेजस्वी वीर (तविषीभिः) अपने बलोंसहित शत्रुदलपर (प्र यन्तु) चढाई करें या टूट पडें। (शुभे) लोककल्याण के लिए (सं मिश्लाः) इकट्ठे हुए वे वीर (पृषतीः अयुक्षत) धब्बेवाली घोडियाँ या हरिणियाँ रथों में जोड देते हैं। (अ-दाभ्याः) न दबनेवाले. (विश्व-वेदसः) सभी धनों से युक्त और (वृहत्-उक्षः) अतीव बलवान् वे (मरुतः) वीर मरुत् (पर्वतान् प्र वेपयन्ति) पहाडोंको भी हिला देते हैं।

२१५ (मरुतः अग्निश्रियः) वे वीर मरुत् अग्निवत् तेजस्वी हैं और (विश्व-कृष्टयः) सभी किसानों में से हैं। उनके (उग्रं त्वेषं अवः) प्रखर तेजस्वी संरक्षणको (वयं आ ईमहे) हम चाहते हैं। (ते वर्ष-निर्णिजः) वे स्वदेशी गणवेश पहननेवाले हैं तथा (रुद्रियाः) महावीर के समान शूरवीर और (हेष-क्रतवः सिंहाः न) गर्जना करनेवाले सिंह के समान (स्वानिनः) वडा शब्द करनेहारे हैं एवं (सु दानवः) बडे अच्छे दानी हैं।

भावार्थ- २१४ वीर अपना बल एकत्रित कर के शत्रुदल पर टूट पडें। जनता का हित करने के लिए वे मिलजुल कर कार्य करें। ये वीर किसी से दबनेवाले नहीं हैं और अच्छे ज्ञानी एवं सामर्थ्यवान् होने के कारण यदि प्रयत्न करें, तो पर्वत-श्रेणियों को भी अपनी जगह से उखाड फेंक देंगे।

२१५ ये वीर अग्नि की नाईं तेजस्वी हैं और कृषक होते हुए भी सेना में प्रविष्ट हुए हैं। ये स्वदेश में बनाये हुए गणवेश का ही उपयोग करते हैं। हमारी इच्छा है कि वे हमें संकटों से बचायें। वे शेर की नाईं दहाडते हैं और शत्रुको चुनौती देने में झिझकते नहीं। ये बडे उदार भी हैं।

टिप्पणी- [२१४] (१) वाजः = अन्न, यज्ञ, बल, वेग, लडाई ... । (२) तविषी = (तविष्) बल, सामर्थ्य, बलिष्ठ, पृथ्वी । (३) अग्नयः = अग्नि के समान तेजस्वी (अगले ... 'श्रियः' शब्द देखिए)। [२१५]
(१) कृष् = (विलेखने) खींचना, पराजित करना ... । (२) विश्व-कृष्टि = सभी
कृषक, सभी मानव, सब ... । देखि... आम्नन् महतः
सु दानवः ॥ (अथर्व ... ३) ... वर्षा, ... निर्णिज् =
स्वदेश में बने हुए ... को ... मानते हैं।

(१६) व्रातम्ऽव्रातम् । गणम्ऽगणम् । सुशस्तिऽभिः । अग्नेः । भामम् । मरुताम् । ओजः । ईमहे ।
पृषत्ऽअश्वासः । अनवभ्रऽराधसः । गन्तारः । यज्ञम् । विदथेषु । धीराः ॥६॥

अत्रिपुत्र श्यावाश्व ऋषि (ऋ० ५।५२।१-१७)

(१७) प्र । श्यावऽअश्व । धृष्णुऽया । अर्च । मरुत्ऽभिः । ऋक्वऽभिः ।
ये । अद्रोघम् । अनुऽस्वधम् । श्रवः । मदन्ति । यज्ञियाः ॥१॥

अन्वयः— २१६ गणं गणं व्रातं-व्रातं अग्नेः भामं मरुतां ओजः सु-शस्तिभिः ईमहे, पृषत्-अश्वासः अनवभ्र-राधसः धीराः विदथेषु यज्ञं गन्तारः ।

२१७ (हे) श्यावाश्व (श्याव-अश्व !) धृष्णु-या ऋक्वभिः मरुद्भिः प्र अर्च, ये यज्ञियाः अनु-स्व-धं अ-द्रोघं श्रवः मदन्ति ।

अर्थ- २१६ (गणं-गणं) हर सैन्य-विभाग में और (व्रातं-व्रातं) हर समूह में (अग्नेः भामं) अग्नि [illegible] तेज तथा (मरुतां ओजः) मरुतों का बल उत्पन्न हो इसलिए हम (सु-शस्तिभिः) उत्तम, अच्छी [illegible]तियों से (ईमहे) उनकी प्रार्थना करते हैं । (पृषत्-अश्वासः) धब्बों से युक्त घोडे रखनेवाले (अन्-[illegible]भ्र राधसः) जिनका धन छीना न जाता हो ऐसे वे (धीराः) धैर्ययुक्त वीर (विदथेषु) यज्ञों में या [illegible]ों में (यज्ञं गन्तारः) हवनस्थान के समीप जानेवाले हैं ।

२१७ हे (श्याव-अश्व !) भूरे रंग के घोडे पर बैठनेवाले वीर ! (धृष्णु-या) शत्रु का पराभव [illegible] में उपयुक्त बल से परिपूर्ण तू (ऋक्वभिः मरुद्भिः) सराहनीय वीर मरुतों के साथ (प्र अर्च) उनकी [illegible] कर । (ये यज्ञियाः) जो पूज्य वीर (अनु स्वधं) अपनी धारक शक्ति से युक्त हो (अ-द्रोघं) द्रोह-[illegible]हित (श्रवः) कीर्ति पाकर (मदन्ति) हर्षित हो उठते हैं ।

भावार्थ- २१६ हम वीरों के [illegible] इसलिए करते हैं कि, वीरों के हर दल में [illegible] विभाग में [illegible] स्थिर रहने पाय । इन वीरों के निकट घोडे रहते हुए हैं और वे [illegible] हैं । इन के [illegible] न कभी घटता और न दूसरों को पराङ्मुख [illegible] है । [illegible] में [illegible] [illegible]र वे पहुंचकर [illegible] पूरा कर देते हैं ।

२१७ [illegible] [illegible] वीर अपनी धारक शक्ति [illegible] [illegible] जाते हैं ।

टिप्पणी [२१६] (१) गणः= [illegible] ([illegible]) [illegible] हाथी, ८१ घोडे, १३५ पैदल सिपाही [illegible] । (२) व्रातः= [illegible] [illegible]र, पुरवार्य । (३ [illegible] = बल, [illegible] (४) धीर= (धी-र) बुद्धि [illegible] [२१७] (१) श्याव-अश्वः= (श्याव, [illegible] रंग का (अश्व) घोडा, [illegible] (२) [illegible] [illegible] (३) अद्रोघ= (द्रुह् [illegible]) [illegible]

गाथिपुत्र विश्वामित्र ऋषि (ऋ० ३।२६।४—६)

(२१४) प्र । यन्तु । वाजाः । तविषीभिः । अग्नयः । शुभे । सम्ऽमिश्लाः । पृषतीः । अयुक्षत ।
बृहत्ऽउक्षः । मरुतः । विश्वऽवेदसः । प्र । वेपयन्ति । पर्वतान् । अदाभ्याः ॥४॥
(२१५) अग्निऽश्रियः । मरुतः । विश्वऽकृष्टयः । आ । त्वेषम् । उग्रम् । अवः । ईमहे । वयम् ।
ते । स्वानिनः । रुद्रियाः । वर्षऽनिर्निजः । सिंहाः । न । हेषऽक्रतवः । सुऽदानवः ॥५॥

अन्वयः— २१४ वाजाः अग्नयः तविषीभिः प्र यन्तु, शुभे सं-मिश्लाः पृषतीः अयुक्षत, अ-दाभ्याः विश्व-वेदसः बृहत्-उक्षः मरुतः पर्वतान् प्र वेपयन्ति ।

२१५ मरुतः अग्नि-श्रियः विश्व-कृष्टयः, उग्रं त्वेषं अवः आ ईमहे, ते वर्ष-निर्णिजः रुद्रियाः हेष-क्रतवः सिंहाः न, स्वानिनः सु-दानवः ।

अर्थ- २१४ (वाजाः) बलवान् या अन्नवान् (अग्नयः) अग्निवत् तेजस्वी वीर (तविषीभिः) अपने बलोंसहित शत्रुदलपर (प्र यन्तु) चढाई करें या टूट पडें। (शुभे) लोककल्याण के लिए (सं मिश्लाः) इकट्ठे हुए वे वीर (पृषतीः अयुक्षत) धब्बेवाली घोडियाँ या हरिणियाँ रथों में जोड देते हैं। (अ-दाभ्याः) न दबनेवाले. (विश्व-वेदसः) सभी धनों से युक्त और (बृहत्-उक्षः) अतीव बलवान् वे (मरुतः) मरुत् (पर्वतान् प्र वेपयन्ति) पहाडोंको भी हिला देते हैं।

२१५ (मरुतः अग्निश्रियः) वे वीर मरुत् अग्निवत् तेजस्वी हैं और (विश्व-कृष्टयः) सभी किसानों में से हैं। उनके (उग्रं त्वेषं अवः) प्रखर तेजस्वी संरक्षणको (वयं आ ईमहे) हम चाहते हैं। (ते वर्ष-निर्णिजः) वे स्वदेशी गणवेश पहननेवाले हैं तथा (रुद्रियाः) महावीर के समान शूरवीर (हेष-क्रतवः सिंहाः न) गर्जना करनेवाले सिंह के समान (स्वानिनः) बडा शब्द करनेहारे हैं (सु दानवः) वडे अच्छे दानी हैं।

भावार्थ- २१४ वीर अपना बल एकत्रित कर के शत्रुदल पर टूट पडें। जनता का हित करने के लिए वे मिल कर कार्य करें। ये वीर किसी से दबनेवाले नहीं हैं और अच्छे ज्ञानी एवं सामर्थ्यवान् होने के कारण यदि प्रयत्न करें तो पर्वत-श्रेणियों को भी अपनी जगह से उखाड फेंक देंगे।

२१५ ये वीर अग्नि की नाईं तेजस्वी हैं और कृषक होते हुए भी सेना में प्रविष्ट हुए हैं। ये स्वदेश में बनाये हुए गणवेश का ही उपयोग करते हैं। हमारी इच्छा है कि वे हमें संकटों से बचायें। वे शेर की नाईं दहाडते हैं और शत्रुको चुनौती देने में झिझकते नहीं। ये वडे उदार भी हैं।

टिप्पणी- [२१४] (१) वाजः = अन्न, यज्ञ, बल, वेग, लडाई, संपत्ति। (२) तविषी =(तविष्) बल, सामर्थ्य, बलिष्ठ, पृथ्वी। (३) अग्नयः = अग्नि के समान तेजस्वी। (अगले मंत्र में ' अग्निश्रियः ' शब्द देखिए)। [२१५] (१) कृष् = (विलेखने) खींचना, पराजित करना, प्रभुत्व प्रस्थापित करना, हल चलाना। (२) विश्व-कृष्टि = कृषक, सभी मानव, सब को खींचनेवाला। देखिए " इन्द्र आसीत्सीरपतिः शतक्रतुः, कीनाशा आसन् मरुतः सु दानवः ॥ (अथर्व ६।३०।१)। (३) निर्णिज् = पुष्ट, पवित्र, वस्त्र। (४) वर्ष = वर्षा, देश। वर्ष-निर्णिज् = स्वदेश में बने हुए कपडे पहननेवाला, देशी वरदी या गणवेश उपयोग में लानेवाला, वर्षा को ही जो पहनावा मानते

(२१६) व्रातंम्ऽव्रातम् । गणम्ऽर्गणम् । सुशस्तिऽभिः । अग्नेः । भामम् । मरुताम् । ओजः । ईमहे ।
पृषत्ऽअश्वासः । अनवभ्रऽराधसः । गन्तारः । यज्ञम् । विदथेषु । धीराः ॥६॥

अत्रिपुत्र श्यावाश्व ऋषि (ऋ० ५।५२।१-१७)

(२१७) प्र । श्यावऽअश्व । धृष्णुऽया । अर्च । मरुत्ऽभिः । ऋक्वऽभिः ।
ये । अद्रोघम् । अनुऽस्वधम् । श्रवः । मदन्ति । यज्ञियाः ॥१॥

अन्वयः— २१६ गणं गणं व्रातं-व्रातं अग्नेः भामं मरुतां ओजः सु-शस्तिभिः ईमहे, पृषत्-अश्वासः अन्-अवभ्र-राधसः धीराः विदथेषु यज्ञं गन्तारः ।

२१७ (हे) श्यावाश्व (श्याव-अश्व !) धृष्णु-या ऋक्वभिः मरुद्भिः प्र अर्च, ये यज्ञियाः अनु-स्व-धं अ-द्रोघं श्रवः मदन्ति ।

अर्थ- २१६ (गणं-गणं) हर सैन्य-विभाग में और (व्रातं-व्रातं) हर समूह में (अग्नेः भामं) अग्नि का तेज तथा (मरुतां ओजः) मरुतों का बल उत्पन्न हो इसलिए हम (सु-शस्तिभिः) उत्तम, अच्छी स्तुतियों से (ईमहे) उनकी प्रार्थना करते हैं । (पृषत्-अश्वासः) धब्बों से युक्त घोडे रखनेवाले (अन्-अवभ्र-राधसः) जिनका धन छीना न जाता हो ऐसे वे (धीराः) धैर्ययुक्त वीर (विदथेषु) यज्ञों में या युद्धों में (यज्ञं गन्तारः) हवनस्थान के समीप जानेवाले हैं ।

२१७ हे (श्याव-अश्व !) भूरे रँग के घोडे पर बैठनेवाले वीर ! (धृष्णु-या) शत्रु का पराभव करने में उपयुक्त बल से परिपूर्ण तू (ऋक्वभिः मरुद्भिः) सराहनीय वीर मरुतों के साथ (प्र अर्च) उनकी पूजा कर । (ये यज्ञियाः) जो पूज्य वीर (अनु स्व-धं) अपनी धारक शक्ति से युक्त हो, (अ-द्रोघं) द्रोह-रहित (श्रवः) कीर्ति पाकर (मदन्ति) हर्षित हो उठते हैं ।

भावार्थ- २१६ हम वीरों के काव्य का गायन इसलिए करते हैं कि, वीरों के हर दल में तथा प्रत्येक विभाग में तेजस्विता स्थिर रहने पाए । इन वीरों के निकट घोडे रखे हुए हैं और ये अतीव धैर्यशाली हैं । इन के पास जो धन है, वह न कभी घटता और न दूसरों को पतनोन्मुख करता है । समान में जिधर आत्मबलिदान का कार्य करना पडे उधर ये पहुँचकर काम पूरा कर देते हैं ।

२१७ जिस से शत्रु का पराभव हो जाय, ऐसा बल प्राप्त करना चाहिए और वीरों का भी सम्मान करना चाहिए । वीर अपनी धारक शक्ति बढा कर किसी का भी द्वेष न करते हुए बडे बडे कार्यों में सफलता पाकर यशस्वी बन जाते हैं ।

टिप्पणी [२१६] (१) गणः= समुदाय, सैन्य का विभाग (Division, अक्षौहिणी का अंश, जिस में २७ रथ, २७ हाथी, ८१ घोडे, १३५ पैदल सिपाही हों । देखिए मंत्र २७७ पर की टिप्पणी)। (२) व्रातः = समुदाय, समूह, पौरुष, पुरुषार्थ । (३) यज्ञः = यज्ञ, हविर्द्रव्य (जिन सत्कर्मों में देवपूजा-संगतिकरण-दान होता हो,) आत्मसमर्पण । (४) धीर= (धी-र) बुद्धि देनेवाले, पराक्रम करनेवाले, धैर्यवान् । [२१७] (१) श्याव-अश्वः = (श्याव) भूरे रंग का (अश्व) घोडा, उस घोडे पर चढनेवाला वीर, [श्यावाश्व ऋषि वाचक नहीं ।] (२) श्रवस् = कान, यश, धन, सराहनीय कर्म, कीर्ति । (३) अर्च् = (पूजायां) = पूजा करना, सत्कार, सम्मान करना ।

(२१८) ते । हि । स्थिरस्य । शवसः । सखायः । सन्ति । धृष्णुऽया ।
ते । यामन् । आ । धृषत्ऽविनः । त्मना । पान्ति । शश्वतः ॥२॥

(२१९) ते । स्पन्द्रासः । न । उक्षणः । अति । स्कन्दन्ति । शर्वरीः ।
मरुताम् । अध । महः । दिवि । क्षमा । च । मन्महे ॥३॥

(२२०) मरुत्ऽसु । वः । दधीमहि । स्तोमम् । यज्ञम् । च । धृष्णुऽया ।
विश्वे । ये । मानुषा । युगा । पान्ति । मर्त्यम् । रिषः ॥४॥

अन्वयः— २१८ धृष्णु-या ते हि स्थिरस्य शवसः सखायः सन्ति, ते यामन् शश्वतः धृषत्-विनः त्मना आ पान्ति।

२१९ स्पन्द्रासः न उक्षणः ते शर्वरीः अति स्कन्दन्ति, अध मरुतां दिवि क्षमा च महः मन्महे।

२२० ये विश्वे मानुषा युगा मर्त्यं रिषः पान्ति, वः धृष्णु-या मरुत्सु स्तोमं यज्ञं च दधीमहि।

अर्थ- २१८ (धृष्णु-या ते हि) वे साहसी एवं आक्रमणकर्ता वीर (स्थिरस्य शवसः) स्थायी एवं अटल बल के (सखायः सन्ति) सहायक हैं। (ते यामन्) वे चढाई करते समय (शश्वतः) शाश्वत (धृषत्-विनः) विजयशील सामर्थ्य से युक्त वीरों का (त्मना) स्वयं ही (आ पान्ति) सभी ओरसे संरक्षण करते हैं।

२१९ (ते स्पन्द्रासः) शत्रु को विकम्पित करनेवाले (न उक्षणः) और बलवान् वीर (शर्वरीः अति स्कन्दन्ति) रात्रियों का अतिक्रमण करके आगे चले जाते हैं। (अध) अब इसलिए (मरुतां) मरुतों के (दिवि क्षमा च) द्युलोक में एवं पृथ्वी पर विद्यमान (महः मन्महे) तेजःपूर्ण काव्यका हम मनन करते हैं।

२२० (ये) जो वीर (विश्वे) सभी (मानुषा युगा) मानवी युगों में (मर्त्यं) मानवको (रिषः पान्ति) हिंसक से बचाते हैं, ऐसे (वः) तुम (धृष्णु-या) विजयशील सामर्थ्य से युक्त (मरुत्सु) मरुतों के लिए हम (स्तोमं यज्ञं च) स्तुति तथा पवित्र कार्य (दधीमहि) अर्पण करते हैं।

भावार्थ- २१८ ये साहसी और शूरवीर सैनिक बल की ही सराहना करते हैं। जब ये शत्रुदल पर आक्रमण कर देते हैं, तब स्थायी एवं विजयी बल से परिपूर्ण वीरों की रक्षा करने का गुरुतर कार्यभार स्वयं ही स्वेच्छा से उठाते हैं।

२१९ जो बलिष्ठ वीर शत्रु के दिल में धडकन पैदा करते हैं, वे रात्री के समय दुश्मनों पर चढाई करते हैं और दिन के अवसर पर भी आक्रमण प्रचलित रखते हैं। इसीलिए हम इन के मननीय चरित्र का मनन करते हैं।

२२० जो वीर मानवी युगों में शत्रुओं से अपनी रक्षा करते हैं, उन के सामर्थ्य की सराहना करनी चाहिए।

टिप्पणी- [२१८] (१) शश्वत् = असंख्य, चिरकाल तक टिकनेवाला, सतत। [२१९] (१) मन्मन् = ज्ञान, स्तुति, (मननीय काव्य)। (२) शर्वरीः अति स्कन्दन्ति = ये वीर दिन या रात्री का तनिक भी ख्याल न कर के अपना आक्रमण बराबर जारी रखते हैं। (३) स्पन्द् = (किञ्चिच्चलने) = हिलना, हिलाना। [२२०] (१) युग = युगल, पतिपत्नी, प्रजा, अनेक वर्षों का काल। (२) मर्त्यः = मानव, मरणधर्मा मनुष्य।

(२२१) अर्हन्तः । ये । सुऽदानवः । नरः । असामिऽशवसः ।
प्र । यज्ञम् । यज्ञियेभ्यः । दिवः । अर्च । मरुत्ऽभ्यः ॥५॥

(२२२) आ । रुक्मैः । आ । युधा । नरः । ऋष्वाः । ऋष्टीः । असृक्षत ।
अनु । एनान् । अह । विऽद्युतः । मरुतः । जज्झतीःऽइव । भानुः । अर्त । त्मना । दिवः ॥६॥

(२२३) ये । ववृधन्त । पार्थिवाः । ये । उरौ । अन्तरिक्षे । आ ।
वृजने । वा । नदीनाम् । सधऽस्थे । वा । महः । दिवः ॥७॥

(२२४) शर्धः । मारुतम् । उत् । शंस । सत्यऽशवसम् । ऋभ्वसम् ।
उत । स्म । ते । शुभे । नरः । प्र । स्यन्द्राः । युजत । त्मना ॥८॥

अन्वयः- २२१ ये अर्हन्तः सु-दानवः अ-सामि-शवसः दिवः नरः यज्ञियेभ्यः मरुद्भ्यः यज्ञं प्र अर्च ।

२२२ रुक्मैः आ युधा आ ऋष्वाः नरः दिवः मरुतः ऋष्टीः एनान् अनु ह जज्झतीः इव विद्युतः असृक्षत, भानुः त्मना अर्त ।

२२३ ये पार्थिवाः, ये उरौ अन्तरिक्षे, नदीनां वृजने वा महः दिवः सधस्थे वा आ ववृधन्त ।

२२४ सत्य-शवसं ऋभ्वसं मारुतं शर्धः उत् शंस, उत स्म स्यन्द्राः नरः ते शुभे त्मना प्र युजत ।

अर्थ— २२१ (ये) जो (अर्हन्तः) पूज्य, (सु-दानवः) दानशूर, (अ-सामि-शवसः) संपूर्ण बलसे युक्त तथा (दिवः) तेजस्वी, द्योतमान (नरः) नेता हैं, उन (यज्ञियेभ्यः) पूज्य (मरुद्भ्यः) वीर-मरुतों के लिए (यज्ञं) यज्ञ करो और उनकी (प्र अर्च) पूजा करो ।

२२२ (रुक्मैः आ) स्वर्णमुद्रा के हारों से और (युधा आ) आयुधों से युक्त (ऋष्वाः नरः) बडे तथा नेतृत्वगुण से युक्त (दिवः) दिव्य वीर (ऋष्टीः) अपने भालोंको और (एनान् अनु ह) इनके अनुरोधसे ही (जज्झतीः इव) घडघडाती हुई नदियों के समान (विद्युतः) तेजस्वी वज्र शत्रु पर (असृक्षत) फेंक देते हैं । इनका (भानुः) तेज (त्मना) उनके साथही (अर्त) चला जाता है ।

२२३ (ये पार्थिवाः) जो ये वीर पृथ्वी पर, (ये उरौ अन्तरिक्षे) जो विस्तीर्ण अन्तरिक्ष में या (नदीनां) नदियों के समीप के (वृजने वा) मैदानों में अथवा (महः दिवः) विस्तृत द्युलोकके (सधस्थे वा) स्थान में (आ ववृधन्त) सभी तरह से बढते रहते हैं ।

२२४ (सत्य-शवसं) सत्य के बलसे युक्त तथा (ऋभ्वसं) इनके कर्मेकारी (मारुतं शर्धः) वीर मरुतों के सांघिक बल की (उत् शंस) स्तुति करो । (उत स्म) क्योंकि (स्यन्द्राः) शत्रुओं को विचलित एवं विकम्पित करनेवाले और (नरः) नेता वे वीर (शुभे) लोककल्याण के लिए किये जानेवाले सत्कार्य में (त्मना) स्वयं अपनी सदिच्छासे ही (प्र युजत) जुट जाते हैं ।

भावार्थ- २२१ पूजनीय, दानी वीरों का अच्छा सत्कार करना चाहिए ।

२२२ हार एवं [illegible] से सजे हुए वे वीर बहुत तेजस्वी [illegible] हैं ।

२२३ ये वीर भूमंडल पर, अन्तरिक्ष में तथा द्युलोक में भी [illegible] हैं ।

२२४ वीरों के [illegible] बल का [illegible] करो । [illegible]

टिप्पणी- [२२१] १ सामि = अर्ध, अधूरा । अ-सामि = पूरा, [illegible] ।

[२२४] १ ऋभ्वस = [illegible] । २ शर्ध = बल, समूह, संघ, शत्रु के विरुद्ध [illegible] बल ।

(२२५) उत । स्म । ते । परुष्ण्याम् । ऊर्णाः । वसत । शुन्ध्यवः ।
उत । पव्या । रथानाम् । अद्रिम् । भिन्दन्ति । ओजसा ॥९॥

(२२६) आऽपथयः । विऽपथयः । अन्तःऽपथाः । अनुऽपथाः ।
एतेभिः । मह्यम् । नामऽभिः । यज्ञम् । विऽस्तारः । ओहते ॥१०॥

(२२७) अध । नरः । नि । ओहते । अध । निऽयुतः । ओहते ।
अध । पारावताः । इति । चित्रा । रूपाणि । दर्श्या ॥ ११ ॥

अन्वयः- २२५ उत स्म ते परुष्ण्यां शुन्ध्यवः ऊर्णाः वसत, उत रथानां पव्या ओजसा अद्रिं भिन्दन्ति

२२६ आ-पथयः वि-पथयः अन्तः-पथाः अनु-पथाः एतेभिः नामभिः विस्तारः मह्यं य[ज्ञं] ओहते।

२२७ अध नरः नि ओहते, अध नियुतः, अध पारावताः ओहते, इति रूपाणि चित्रा दर्श्या

अर्थ- २२५ (उत स्म) और (ते) वे वीर (परुष्ण्यां) परुष्णी नदी में (शुन्ध्यवः) पवित्र हो[कर] (ऊर्णाः वसत) ऊनी कपडे पहनते हैं (उत) और (रथानां पव्या) रथों के पहियों से तथा (ओजसा) बडे बलसे (अद्रिं भिन्दन्ति) पहाड को भी विभिन्न कर डालते हैं।

२२६ (आ-पथयः) समीप के मार्ग से जानेवाले, (वि-पथयः) विविध मार्गों से जानेवाले (अन्तः-पथाः) गुप्त सडकों परसे जानेवाले (अनु-पथाः) अनुकूल मार्गोंसे जानेवाले, (एतेभिः नाम[भिः]) ऐसे इन नामों से (विस्तारः) विख्यात हुए ये वीर (मह्यं) मेरे लिए (यज्ञं ओहते) यज्ञ के हविष्या[न्न] ढोकर लाते हैं।

२२७ (अध) कभी कभी ये वीर (नरः) नेता बनकर संसार का (नि ओहते) धारण करते हैं (अध नियुतः) कभी पंक्तियों में खडे रहकर सामुदायिक ढंगसे और (अध) उसी प्रकार (पारावताः) दूर-जगह खडे रहकर भी (ओहते) बोझ ढोते हैं, (इति) इस भाँति उनके (रूपाणि) स्वरूप (चित्रा) आश्चर्यकारक तथा (दर्श्या) देखनेयोग्य हैं।

भावार्थ- २२५ वीर नदी में नहाकर शुद्ध होते हैं और ऊनी कपडे पहनकर अपने रथों के वेग से पहाडों तक को लाँघ कर चले जाते हैं।

२२६ भाँति भाँति के मार्गों से जानेवाले वीर चहुँ ओर से अन्नसामग्री लाते हैं।

२२७ वीर पुरुष नेता बन जाते हैं और सेना में दूर जगह या समीप खडे रहकर संरक्षण का समूचा भार उठा लेते हैं। ये सुस्वरूप तथा दर्शनीय भी हैं।

टिप्पणी- [२२५] (१) परुस्= शरीर का अवयव; परुष्णी = शरीर, नदी का नाम। (२) ऊर्णा= ऊन, ऊनी कपडे।

[२२६] (१) आ-पथः= सरल राह। (२) वि-पथः= विशेष मार्ग, विरुद्ध दिशा में जानेवाली सडक। (३) अन्तः-पथः=गुप्त विवरमार्ग, भूमि के अन्दरकी सडक, दरों में जानेवाला मार्ग। (४) अनु-पथः= पगडंडियाँ या बडी सडक की बाजू से जानेवाला सँकरा मार्ग (Foot--Paths)।

[२२७] (१) नियुत् = घोडा, स्तोता, पंक्ति। (२) पारावताः = दूर दूर खडे हुए; दूर देश में रहे हुए।

। कुम॒न्यवः॑ । उत्स॑म् । आ । क्री॒रिणः॑ । नृ॒तुः ।
। चि॒त् । न । ता॒यवः॑ । ऊ॒माः । आ॒स॒न् । दृ॒शि । त्वि॒षे ॥ १२ ॥
। ऋ॒ष्टिऽवि॑द्युतः । क॒वयः॑ । सन्ति॑ । वे॒धसः॑ ।
मारु॑तम् । ग॒णम् । न॒म॒स्य । र॒मय॑ । गि॒रा ॥ १३ ॥
। मारु॑तम् । ग॒णम् । दा॒ना । मि॒त्रम् । न । यो॒षणा॑ ।
धृ॒ष्ण॒वः । ओज॑सा । स्तु॒ताः । धी॒भिः । इ॒ष॒ण्य॒त ॥ १४ ॥

:-स्तुभः कु-भन्यवः कीरिणः उत्सं आ नृतुः, ते के चित् मे तायवः न, ऊमाः

ऋषे! ये ऋष्वाः ऋष्टि-विद्युतः कवयः वेधसः सन्ति, तं मारुतं गणं नमस्य गिरा रमय।
) ऋषे! योषणा मित्रं न मारुतं गणं अच्छ दाना, ओजसा धृष्णवः दिवः वा
।

स्तुभः) छन्दों से सराहनीय तथा (कु-भन्यवः) मातृभूमि की पूजा करनेवाले
करनेवाले के लिए (उत्सं) जलप्रवाह (आ नृतुः) ला चुके। (ते के चित्) उनमें
: (तायवः न) चोरों के समान अदृश्य, कुछ (ऊमाः) रक्षणकर्ता होकर
तीर्ण और कई (त्विषे) तेजोबल बढाते (आसन्) थे।
) ऋषिवर! (ये) जो (ऋष्वाः) बडे बडे, (ऋष्टि-विद्युतः) हथियारों से द्योतमान,
र (वेधसः) कुशलतापूर्वक कर्म करनेवाले हैं (तं मारुतं गणं) उस वीर मरुतों
मन कर और (गिरा रमय) वाणी से आनन्द दो।
!) ऋषिवर! (योषणा मित्रं न) युवती जिस तरह प्रिय मित्र की ओर चली
ारुतं गणं अच्छ) मरुत्संघकी ओर (दाना) दान लेकर जाओ। (ओजसा
: शत्रुदल की धज्जियाँ उडानेवाले ये वीर (दिवः वा) तेजस्वी हैं। हे वीरो!
योंद्वारा प्रशंसित तुम इधर (इषण्यत) आओ।

ीर मातृभूमि के भक्त होते हैं, इसलिए वे सराहनीय हैं। उन में कुछ गुप्त रूप से, तो कई
करते हुए तेज की वृद्धि करते हैं।
ानिक महान् गुणी, विशेष ज्ञानी, कुशलतापूर्वक कार्य करनेहारे एवं आयुधधारी होने के कारण
को रमणीय वाणी से हर्षित कर और नमन कर।
कर वीरों के समीप चले जाना चाहिए। बल से शत्रुदल पर चढाई करनी चाहिए। जो ऐसे
स्तुति होनी।

---

(१) कु-भन्यवः (कुः= पृथ्वी, भन् = पूजा करना) = मातृभूमि की पूजा करनेहारे।
न = चोरों के समान अदृश्य। (२) केचित् ऊमाः दृशि = दृश्य संरक्षक। (३) केचित्
दी, शारीरिकबलसंवर्धक।]
१) वेधस् = [वि+धा = करना, उत्पन्न करना, आज्ञा करना] कुशलतापूर्वक कार्य करनेवाला।
१) योषणा = युवती, (यु = जोडना, मिलना, एक जगह आना- (यौति इति) = एक,
ेहारा।

(२३१) नु । मन्वानः । एषाम् । देवान् । अच्छ । न । वक्षणा ।
दाना । सचेत । सूरिऽभिः । यामऽश्रुतेभिः । अञ्जिऽभिः । ॥ १५ ॥
(२३२) प्र । ये । मे । बन्धुऽएषे । गाम् । वोचन्त । सूरयः । पृश्निम् । वोचन्त । मातरम् ।
अध । पितरम् । इष्मिणम् । रुद्रम् । वोचन्त । शिक्वसः ॥ १६ ॥
(२३३) सप्त । मे । सप्त । शाकिनः । एकम्ऽएका । शता । ददुः ।
यमुनायाम् । अधि । श्रुतम् । उत् । राधः । गव्यम् । मृजे । राधः ।
अश्व्यम् । मृजे । ॥ १७ ॥

अन्वयः— २३१ वक्षणा न एषां देवान् अच्छ नु मन्वानः सूरिभिः याम-श्रुतेभिः अञ्जिभिः दाना सचेत।

२३२ बन्धु-एषे ये सूरयः मे प्र वोचन्त गां पृश्निं मातरं वोचन्त, अध शिक्वसः इष्मिणं रुद्रं पितरं वोचन्त।

२३३ सप्त सप्त शाकिनः एकं-एका मे शता ददुः, श्रुतं गव्यं राधः यमुनायां अधि उत् मृजे, अश्व्यं राधः नि मृजे।

अर्थ- २३१ (वक्षणा न) वाहन के समान पार ले जानेवाले (एषां देवान् अच्छ) इन तेजस्वी वीरों की ओर (नु) शीघ्र पहुँच कर (मन्वानः) स्तुति करनेहारा, (सूरिभिः) ज्ञानी, (याम-श्रुतेभिः) चढाई के बारे में विख्यात एवं (अञ्जिभिः) वस्त्रालंकारों से अलंकृत ऐसे उन वीरों से (दाना) दान के साथ (सचेत) संगत होता है।

२३२ उनके (बन्धु-एषे) बांधवोंके जाननेकी इच्छा करने पर (ये सूरयः) जिन ज्ञानी वीरोंने (मे प्र वोचन्त) मुझसे कहा, उन्होंने "(गां) गौ तथा (पृश्निं) भूमि हमारी (मातरं) माताएँ हैं" (वोचन्त) ऐसा कह दिया। (अध) और (शिक्वसः) उन्हीं समर्थ वीरोंने "(इष्मिणं रुद्रं) वेगवान् महावीर हमारा (पितरं) पिता है" ऐसा भी कह दिया।

अर्थ- २३३ (सप्त सप्त) सात सात सैनिकों की पंक्ति में जानेवाले (शाकिनः) इन समर्थ वीरोंमें से (एकं-एका) हरेकने (मे शता ददुः) मुझे सौ गौएँ दे दीं। (श्रुतं) उस विश्रुत (गव्यं राधः) गोसमूहरूपी धनको (यमुनायां अधि) यमुना नदी में (उत् मृजे) धो डालता हूँ और (अश्व्यं राधः) अश्वरूपी संपत्ति को वहीं पर (नि मृज) धोता हूँ।

भावार्थ- २३१ वे वीर संकटोंमें से पार ले जानेवाले हैं और आक्रमण करने में बडे विख्यात हैं। वे ज्ञानी हैं और वस्त्रालंकारों से भूषित रहते हैं। ऐसे उन तेजस्वी वीरों के पास दान लेकर पहुँच जाओ।

२३२ गौ या भूमि मरुतों की माता है और रुद्र उनका पिता है।

२३३ वीरों से दानरूप में प्राप्त हुई गौएँ तथा मिले हुए घोडे नदीजल में धोकर साफसुथरे रखने चाहिए।

टिप्पणी- [२३१] (१) वक्षणं-वक्षणा = अग्नि, छाती, नदी का पात्र, नदी, वाहन।
[२३२] (१) शिक्वस् = (शक् शक्तौ) समर्थ, सामर्थ्यवान्।

(ऋ.५।५३।१—१६)

(२३४) कः । वेद । जानम् । एषाम् । कः । वा । पुरा । सुम्नेषु । आस । मरुताम् ।
यत् । युयुज्रे । किलास्यः ॥ १ ॥
(२३५) आ । एतान् । रथेषु । तस्थुषः । कः । शुश्राव । कथा । ययुः ।
कस्मै । सस्रुः । सुऽदासे । अनु । आपयः । इळाभिः । वृष्टयः । सह ॥ २ ॥
(२३६) ते । मे । आहुः । ये । आऽययुः । उप । द्युऽभिः । विऽभिः । मदे ।
नरः । मर्याः । अरेपसः । इमान् । पश्यन् । इति । स्तुहि ॥ ३ ॥

अन्वयः— २३४ यत् किलास्यः युयुज्रे एषां जानं कः वेद, कः वा पुरा मरुतां सुम्नेषु आस ?

२३५ रथेषु तस्थुषः एतान् कथा ययुः, कः आ शुश्राव, आपयः वृष्टयः इळाभिः सह कस्मै सु-दासे अनु सस्रुः ?

२३६ ये द्युभिः विभिः मदे उप आययुः ते मे आहुः, नरः मर्याः अ-रेपसः इमान् पश्यन् स्तुहि इति।

अर्थ— २३४ वीर मरुतोंने (यत्) जब (किलास्यः) धब्बेवाली हिरनियाँ (युयुज्रे) अपने रथोंमें जोड दीं, तब (एषां) इनके (जानं) जन्मका रहस्य (कः वेद) कौन भला जानता था ? (कः वा) और कौन भला (पुरा) पहले इन (मरुतां सुम्नेषु) वीर मरुतों के सुखच्छत्रछाया में (आस) रहता था ?

२३५ (रथेषु तस्थुषः) रथोंमें बैठे हुए (एतान्) इन वीरों के समीप कौन भला (कथा ययुः) किस तरह जाते हैं ? उसी प्रकार उनके प्रभाव का वर्णन (कः आ शुश्राव ?) भला किसे सुनने मिला ? (आपयः) मित्रवत् हितकर्ता एवं (वृष्टयः) वर्षाके समान शांतिदायक ये वीर अपनी (इळाभिः सह) गौओं के साथ (कस्मै सु-दासे) किस उत्तम दानी की ओर (अनु सस्रुः) अनुकूल हो चले गये ?

२३६ (ये) जो (द्युभिः विभिः) तेजस्वी सोमों के साथ (मदे) आनंद पानेके लिए (उप आययुः) इकट्ठे हुए (ते मे आहु) वे मुझसे बोले कि, "(नरः) नेता, (मर्याः) मानवोंके हितकारक (अ-रेपसः) तथा दोषरहित (इमान् पश्यन्) इन वीरों को देखकर (स्तुहि इति) उनकी प्रशंसा करो।"

भावार्थ- २३४ जब ये वीर रथ में बैठकर संचार करने लगे, तब भला किसे इन के जीवन का ज्ञान प्राप्त हुआ था ? उसी प्रकार कौन लोग इन के सहारे रहते थे ? (ये वीर जब जनता के सुख के लिए प्रयत्नशील हुए, तभी से लोगों को इनका परिचय प्राप्त हुआ और लोग इन के आश्रय में सुखपूर्वक रहने लगे।)

२३५ वीर रथों पर बैठकर मित्रों से मिलने के लिए जाते हैं, उस समय वे गायें साथ लेकर ही प्रस्थान करने लगते हैं। इन के शौर्य का वर्णन करना चाहिए।

२३६ सोमयाग में इकट्ठे हुए सभी लोग कहने लगे कि, वीरों के काव्य का गायन करना चाहिए।

टिप्पणी- [२३४] (१) किलास्यं = कुबेर धब्बा। किलासी= धब्बेवाली (हिरनी)।

[२३५] (१) इळा- (इला-इडा) गौ, भूमि, वाणी, दान, स्वर्ग, अन्न। (२) आपिः= मित्र, सुगमतापूर्वक प्राप्त होनेवाला।

[२३६] (१) विः= जानेवाला, पंछी, घोडा, लगाम, सोम, यजमान।

(२३७) ये । अञ्जिषु । ये । वाशीषु । स्वऽभानवः । स्रक्षु । रुक्मेषु । खादिषु ।
श्रायाः । रथेषु । धन्वऽसु ॥ ४ ॥
(२३८) युष्माकम् । स्म । रथान् । अनु । मुदे । दधे । मरुतः । जीरऽदानवः ।
वृष्टी । द्यावः । यतीःऽइव ॥ ५ ॥
(२३९) आ । यम् । नरः । सुऽदानवः । ददाशुषे । दिवः । कोशम् । अचुच्यवुः ।
वि । पर्जन्यम् । सृजन्ति । रोदसी इति । अनु । धन्वना । यन्ति । वृष्टयः ॥ ६ ॥

अन्वयः— २३७ ये स्व-भानवः अञ्जिषु ये वाशीषु स्रक्षु रुक्मेषु खादिषु रथेषु धन्वसु श्रायाः ।
२३८ (हे) जीर-दानवः मरुतः ! मुदे वृष्टी यतीःइव द्यावः युष्माकं रथान् अनु दधे स्म ।
२३९ नरः सु-दानवः दिवः ददाशुषे यं कोशं आ अचुच्यवुः रोदसी पर्जन्यं वि सृजन्ति वृष्टयः धन्वना अनु यन्ति ।

अर्थ- २३७ (ये) जो (स्व-भानवः) स्वयंप्रकाशमान वीर, (अञ्जिषु) वस्त्रालंकारों में, (वाशीषु) कुठारों में (स्रक्षु) मालाओं में, (रुक्मेषु) स्वर्णमय हारोंमें, (खादिषु) कँगनों में, (रथेषु) रथोंमें और (धन्वसु) धनुष्यों में (श्रायाः) आश्रय लेते हैं, अर्थात् इनका उपयोग करते हैं ।

२३८ हे (जीर-दानवः मरुतः !) शीघ्रतापूर्वक विजय पानेवाले वीर मरुतो ! (मुदे) आनंद के लिए मैं (वृष्टी) वर्षा के समान (यतीःइव) वेगपूर्वक जानेवाले (द्यावः) बिजलियों के समान तेजस्वी (युष्माकं रथान्) तुम्हारे रथोंका (अनु दधे स्म) अनुसरण करता हूँ ।

२३९ (नरः) नेता, (सु-दानवः) अच्छे दानी एवं (दिवः) तेजस्वी वीर (ददाशुषे) दानी लोगों के लिए (यं कोशं) जिस भाण्डार को (आ अचुच्यवुः) सभी स्थानों से बटोर लाते हैं, उसका वे (रोदसी) द्युलोक एवं भूलोक को (पर्जन्यं) वृष्टि के समान (वि सृजन्ति) विभजन कर डालते हैं। (वृष्टयः) वर्षा के समान शांतता देनेवाले वे वीर अपने (धन्वना) धनुष्यों के साथ (अनु यन्ति) चले जाते हैं ।

भावार्थ- २३७ ये वीर तेजस्वी हैं और आभूषण, कुठार, माला, हार धारण करते हैं, तथा रथ में बैठकर धनुष्यों का उपयोग करते हैं ।

२३८ मैं वीरों के रथ के पीछे चला आ रहा हूँ. (मैं उन के मार्ग का अवलम्बन करता हूँ ।)

२३९ ये वीर शूरतापूर्ण कार्य कर के चारों ओर से धन कमा लाते हैं और उन का उचित बँटवारा कर के जनता को सुखी करते हैं ।

टिप्पणी- [२३८] (१) दानु = (दा दाने, दो अवखण्डने, दान् खण्डने) दान देनेहारा, शूर, विजेता, नष्ट करनेवाला ।

[२३९] (१) च्यु = गिराना, गँवाना, टपक जाना ।

(२४०) तुतुद्रानाः । सिन्धवः । क्षोदसा । रजः । प्र । सस्रुः । धेनवः । यथा ।
स्यन्नाः । अश्वाःऽइव । अध्वनः । विऽमोचने । वि । यत् । वर्तन्ते । एन्यः ॥ ७ ॥
(२४१) आ । यात । मरुतः । दिवः । आ । अन्तरिक्षात् । अमात् । उत ।
मा । अव । स्थात । पराऽवतः ॥ ८ ॥
(२४२) मा । वः । रसा । अनितभा । कुभा । क्रुमुः । मा । वः । सिन्धुः । नि । रीरमत् ।
मा । वः । परि । स्थात् । सरयुः । पुरीषिणी । अस्मे इति । इत् । सुम्नम् । अस्तु । वः ॥ ९ ॥

अन्वयः- २४० यत् एन्यः अध्वनः विमोचने स्यन्नाः अश्वाःइव वि वर्तन्ते क्षोदसा तुतुद्रानाः सिन्धवः धेनवः यथा रजः प्र सस्रुः ।

२४१ (हे) मरुतः ! दिवः उत अ-मात् अन्तरिक्षात् आ यात, परावतः मा अव स्थात ।

२४२ वः अन्-इत-भा कु-भा रसा मा नि रीरमत्, वः क्रुमुः सिन्धुः मा, वः पुरीषिणी सरयुः मा परि स्थात्, अस्मे इत् वः सुम्नं अस्तु ।

अर्थ- २४० (यत् एन्यः) जो नदियाँ (अध्वनः विमोचने) मार्ग ढूँढ निकालने के लिए (स्यन्नाः अश्वाःइव) वेगवान् घोडोंके समान (वि वर्तन्ते) वेगपूर्वक बह जाती हैं, वे (क्षोदसा) उदकसे भूमि को (तुतुद्रानाः) फोडनेवाली (सिन्धवः) नदियाँ (धेनवः यथा) गौओं के समान (रजः) उपजाऊ भूमियों की ओर (प्रसस्रुः) बहने लगीं ।

२४१ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (दिवः) द्युलोक से तथा (उत) उसी प्रकार (अ-मात् अन्त-रिक्षात्) असीम अंतरिक्षमेंसे (आ यात) इधर आओ, (परावतः) दूरके देशमें [illegible] (मा अव स्थात) न रहो ।

२४२ (वः) तुम्हें (अन्-इत-भा) तेजहीन और (कु-भा) मलिन (रसा) [illegible] नदी (मा नि रीरमत्) रममाण न करे (वः) तुम्हें (क्रुमुः) वेगपूर्वक आक्रमण करनेवाला (सिन्धुः) सिंधु नद [illegible] बीचमें ही (मा) न रोक दे, (वः) तुम्हें (पुरीषिणी) जल से परिपूर्ण (सरयुः) सरयु नदी (मा परि स्थात्) न घेर लेवे । (अस्मे इत्) हमें ही (वः सुम्नं) तुम्हारा सुख (अस्तु) प्राप्त हो, [illegible] ।

भावार्थ- २४० मूसलधार वर्षा के पश्चात् नदियों में बाढ आने पर [illegible] बहने लगती हैं और उपजाऊ भूभाग को अधिक उर्वर बना देती हैं । २४१ [illegible] हमारे निकट [illegible] । २४२ हे वीरो ! तुम रसा, सिन्धु, पुरीषिणी एवं सरयु नदियों से [illegible] हमारे निकट आकर हमें सुख दिलाओ ।

टिप्पणी- [२४०] (१) तुद् = [illegible], [illegible] (२) [illegible] = नदी । (३) स्यन्न = (स्यन्द् [illegible]) वेगपूर्वक जानेवाला, [illegible] । [२४१] (१) अ-म = ([illegible]) = [illegible], विस्तृत, असीम; (अम् [illegible] = शक्ति, वेग । [२४२] [illegible] रसा, सिन्धु, पुरीषिणी तथा सरयु इन [illegible] नदियों का [illegible] पाया जाता है । [illegible] इन [illegible] नदियों का [illegible] शब्दों का यौगिक अर्थ [illegible] से स्थान दर्शाये [illegible] । [illegible] सिन्धु, [illegible] सरयू, [illegible] पुरीषिणी [illegible] । [illegible] नदियों के समीप प्रदेश में [illegible] । [illegible] और 'क्रुमु' भी नदियाँ हैं [illegible] में [illegible] ।

र्यम् । बीजम् । वहध्वे । अक्षितम् ।
। वः । ईमहे । राधः । विश्वऽआयु । सौभगम् ॥१३॥
स्वस्तिऽभिः । हित्वा । अवद्यम् । अरातीः ।
स्ति । भेषजम् । स्याम । मरुतः । सह ॥ १४ ॥

स्मै रात-हव्याय सु-जाताय प्र ययुः?
क्षितं धान्यं बीजं वहध्वे, यत् राधः वः ईमहे तत् विश्व-आयु

अवद्यं हित्वा अरातीः तिरः निदः अति स्याम, वृष्टी रोः

मरुत् । एना यामेन । इस रथ में से ... [illegible]
। सु-जाताय । कुलीन मानव की ओर । प्र ययु ... [illegible]

। तनयाय । पुत्रपौत्रों के लिए ... [illegible]
होकर लाते हो, यत् राधः जिस ... [illegible]
। विश्व-आयु । दीर्घ जीवन ... [illegible]

स्वस्तिभिः हित कारक ... [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

(२४८) सुऽदे॒वः । स॒मह॒ । अ॒स॒ति॒ । सुऽवी॑रः । नरः । मरुतः । सः । मर्त्यः ।
यम् । त्रायध्वे । स्याम । ते ॥ १५ ॥

(२४९) स्तुहि । भोजान् । स्तुवतः । अस्य । यामनि । रणन् । गावः । न । यवसे ।
यतः । पूर्वान्ऽइव । सखीन् । अनु । ह्वय । गिरा । गृणीहि । कामिनः ॥ १६ ॥

(ऋ० ५।५३।१-१६)

(२५०) प्र । शर्धाय । मारुताय । स्वऽभानवे । इमाम् । वाचम् । अनज । पर्वतऽच्युते ।
घर्मऽस्तुभे । दिवः । आ । पृष्ठऽयज्वने । द्युम्नऽश्रवसे । महि । नृम्णम् । अर्चत ॥ १ ॥

अन्वयः— २४८ (हे) नरः मरुतः ! यं त्रायध्वे सः मर्त्यः सु-देवः, स-मह, सु-वीरः असति, ते स्याम

२४९ स्तुवतः अस्य भोजान् यामनि, गावः न यवसे, रणन् स्तुहि, यतः पूर्वान्‌इव कामि सखीन् ह्वय, गिरा अनु गृणीहि ।

२५० स्व-भानवे पर्वत-च्युते मारुताय शर्धाय इमां वाचं प्र अनज, घर्म-स्तुभे दिवः पृष्ठ यज्वने द्युम्न-श्रवसे महि नृम्णं आ अर्चत ।

अर्थ- २४८ हे (नरः मरुतः !) नेता वीर मरुतो ! (यं) जिसे (त्रायध्वे) तुम बचाते हो, (स मर्त्यः) वह मनुष्य (सु-देवः) अत्यन्त तेजस्वी, (स-मह) महत्तासे युक्त और (सु-वीरः) अच्छा वी (असति) होता है। (ते स्याम) हम भी वैसे ही हों।

२४९ (स्तुवतः अस्य) स्तवन करनेवाले इस भक्त के यज्ञ में (भोजान्) भोजन पाने के लि (यामन्) जाते समय (गावः न यवसे) गौएँ जिस तरह घासकी ओर जाती हैं वैसे ही, (रणन्) आनन्द पूर्वक गरजते हुए जानेवाले इन वीरों की (स्तुहि) प्रशंसा करो, (यतः) क्योंकि वे (पूर्वान्‌इव पहले परिचित तथा (कामिनः) प्रेमभरे (सखीन्) मित्रों के समान अपने सहायक हैं। उन्हें (ह्वय अपने समीप बुलाओ और (गिरा) अपनी वाणी से उनकी (अनु गृणीहि) सराहना करो।

२५० (स्व-भानवे) स्वयंप्रकाश और (पर्वत-च्युते) पहाडों को भी हिलानेवाले (मारुता शर्धाय) मरुतों के बल के लिए (इमां वाचं) इस अपनी वाणी को-कविता को तुम (प्र अनज) भली भाँ सँवारो, अलंकृत करो। (घर्म-स्तुभे) तेजस्वी वीरों की स्तुति करनेहारे, (दिवः पृष्ठ-यज्वने) दिव स्थान से पीछे से आकर यजन करनेवाले और (द्युम्न-श्रवसे) तेजस्वी यश पानेवाले वीरोंको (महि नृम्णं) विपुल धन देकर (आ अर्चत) उनकी पूजा करो।

भावार्थ- २४८ जिन्हें वीरों का संरक्षण प्राप्त होवे, वे बडे तेजस्वी, महान तथा वीर होते हैं। हम उसी प्रकार बनें।

२४९ भक्त के यज्ञों में जाते समय इन वीरों को बडा भारी हर्ष होता है। चूँकि ये सब का हित चाहते हैं, इसलिए इनकी स्तुति सब को करनी चाहिए।

२५० अलंकारपूर्ण काव्य वीरों के वर्णन पर बनाओ और उन्हें धन देकर उनका सत्कार करो।

टिप्पणी- [२४९] (१) भोजः = (भुज्- पालनाभ्यवहारयोः = भोग प्राप्त करनेहारा। (२) यामन् = पूजा, ति, हलचल, चढाई, हमला। (३) अनु+गृ प्रोत्साहन देना, अनुग्रह करना, सराहना करना, उमंग बढाना।

[२५०] (१) यज् = देना, यज्ञ करना, सहायता प्रदान करना, पूजा-संगति-दानात्मक कार्य। (२) पृष्ठ = पीठ, पीछे से। (३) घर्म = (घृ = क्षरणदीप्त्योः) प्रकाशमान, तेजस्वी, उष्ण।) पृष्ठ-यज्वा = पीछे से अर्थात् किसी को भी विदित न हो, इस ढंग से सहायता देनेवाला। (५) नृम्णं = -मन) = मानवी मन, जो मानवी मन को बरबस अपनी ओर खींच ले ऐसा धन।

र्मऽदिद्यवः । वातंऽत्विषः । मुरुतः । पर्वतऽच्युतः ।
आ । ह्रादुनिऽवृतः । स्तनयंत्ऽअमाः । रभसाः । उत्ऽ-

विषाः उदन्यवः वयो-वृधः अश्व-युजः प्र परि-ज्रयः त्रि-तः विद्युता
वना स्वरन्ति ।
अश्म-दिद्यवः वात-त्विषः पर्वत-च्युतः ह्रादुनि-वृतः स्तनयत्-अमाः
आ अन्द्या ।

ो! (वः तविषा) तुम्हारे बलवान्, (उदन्-यवः) प्रजाके लिए
समृद्धि करनेहारे तथा (अश्व-युजः) रथोंमें घोडे जोडनेवाले वीर
र्दिक् घूमने लगते हैं और तुम्हारा (त्रि-तः) तीनों ओर फैलनेवाला
त्रोंसे सुसज्ज होता है और (वाशति) शत्रुको चुनौती देता है,
नेवाला (आपः) जीवन, जल (अवना) पृथ्वी पर (स्वरन्ति) गर्जना

ी के समान बलवान्, (नरः) नेता, (अश्म-दिद्यवः) हथियारोंके
ायु के समान गतिशील एवं तेजस्वी, (पर्वत-च्युतः) पहाडों को
युक्त, (स्तनयत्-अमाः) घोषणा करने की शक्तिसे युक्त, (रभसाः)
ाली वे (मरुतः) वीर मरुत् (मुहुः चित्) वारंवार (आ अन्द्या)
ो अपना सच्चा तेज दिखाते हैं ।

ा के लिए जल की व्यवस्था करते हैं, अन्न को वृद्धिंगत करते हैं, रथों में
ालत को स्वयं ही देख लेते हैं और विजयी बन जाते हैं । बडे अच्छे प्रबंध
सर्वत्र विजयपूर्ण वायुमंडल का सृजन करते हैं, तथा भूमंडल पर नदरों से
ोर पहुँचा देते हैं ।
ों से सुसज्जित बनकर पहाडों तक को विकंपित कर देनेकी अपनी क्षमता को
स्य ही उन्हें अपना बल दर्शाते हैं ।
चमक रही है, (अश्म) ओले गिर रहे हैं, भारी तूफान हो रहा है, दामिनी
ान पडता है कि, मानों पहाड उड जायेंगे । इसके बाद मूसलाधार वर्षा हो

(उदन् + यु = उदक + योजना) प्यासा, जल ढूँढनेवाला, पानी में
शरीरस्फूर्ति, बल, आयुष्य । (२) त्रि-त = (त्रि + तन् = फैलाव-
(त्रिषु स्थानेषु तायमानः-तायमानस्य) (४) तविष = (तु गति-वृद्धि-
रे-ज्रयः (ज्रि जये) चारों दिशाओं में विजयी, चतुर्दिक् गमन, चारों ओर
ा) = स्पादक, आकाश, जल, जीवन ।

(२४८) सु॒ऽदे॒वः । स॒म॒ह॒ । अ॒स॒ति॒ । सु॒ऽवी॑रः । नरः॑ । म॒रु॒तः॒ । सः । मर्त्यः॑ । यम् । त्राय॑ध्वे । स्याम॑ । ते ॥ १५ ॥

(२४९) स्तु॒हि । भो॒जान् । स्तु॒व॒तः । अ॒स्य॒ । याम॑नि । रण॑न् । गावः॑ । न । यव॑से । य॒तः । पूर्वा॑न्ऽइव । सखी॑न् । अनु॑ । ह्व॒य॒ । गि॒रा । गृ॒णी॒हि॒ । का॒मिनः॑ ॥ १६ ॥

(ऋ० ५।५३।१-१६)

(२५०) प्र । शर्धा॑य । मारु॑ताय । स्वऽभा॑नवे । इ॒माम् । वाच॑म् । अ॒न॒ज॒ । प॒र्व॒त॒ऽच्युते॑ । घ॒र्म॒ऽस्तुभे॑ । दि॒वः । आ । पृ॒ष्ठ॒ऽयज्व॑ने । द्यु॒म्नऽश्र॑वसे । महि॑ । नृ॒म्णम् । अ॒र्च॒त॒ ॥ १ ॥

अन्वयः— २४८ हे) नरः मरुतः ! यं त्रायध्वे सः मर्त्यः सु-देवः, स-मह, सु-वीरः असति, ते स्याम [illegible]

२४९ स्तुवतः अस्य भोजान् यामनि, गावः न यवसे, रणन् स्तुहि, यतः पूर्वान्इव कामि[illegible] [illegible], गिरा अनु गृणीहि ।

२५० [illegible] पर्वत-च्युते मारुताय शर्धाय इमां वाचं प्र अनज, घर्म-स्तुभे दिवः [illegible] [illegible] आ अर्चत ।

[illegible] २४८ हे (नरः मरुतः ! नेता वीर मरुतो ! (यं) जिसे (त्रायध्वे) तुम बचाते हो, ([illegible] [illegible] (सु-देवः) अत्यन्त तेजस्वी, (स-मह) महत्तासे युक्त और (सु-वीरः) अच्छा [illegible] [illegible] (स्याम) हम भी वैसे ही हों ।

२४९ (स्तुवतः अस्य [illegible] इस भक्त के यज्ञ में (भोजान्) भोजन पाने के लि[illegible] [illegible] (यवसे) गायें जिस तरह घासकी ओर जाती हैं वैसे ही, (रणन्) आन[illegible] [illegible] इन वीरों की (स्तुहि) प्रशंसा करो, (यतः) क्योंकि वे (पूर्वान्[illegible] [illegible] (सखीन्) मित्रों के समान अपने सहायक हैं । उन्हें ([illegible]

[illegible]

(२५५) अभ्राजि । शर्धः । मरुतः । यत् । अर्णसम् । मोपथ । वृक्षम् । कपनाऽइव । वेधसः । अध । स्म । नः । अरमतिम् । सऽजोषसः । चक्षुःऽइव । यन्तम् । अनु । नेपथ । सुऽगम् ॥ ६ ॥

(२५६) न । सः । जीयते । मरुतः । न । हन्यते । न । स्रेधति । न । व्यथते । न । रिष्यति । न । अस्य । रायः । उप । दस्यन्ति । न । ऊतयः । ऋषिम् । वा । यम् । राजानम् । वा । सुसूदथ ॥ ७ ॥

अन्वयः— २५५ (हे) वेधसः मरुतः! शर्धः अभ्राजि, यत् कपनाइव अर्णसं वृक्षं मोपथ, अध स्म (हे) स-जोषसः! चक्षुःइव यन्तं सु-गं अ-रमतिं नः अनु नेपथ।

२५६ (हे) मरुतः! यं ऋषिं वा राजानं वा सुसूदथ सः न जीयते, न हन्यते, न स्रेधति, न व्यथते, न रिष्यति, अस्य रायः न उप दस्यन्ति, ऊतयः न।

अर्थ— २५५ हे (वेधसः) कर्तृत्ववान (मरुतः!) वीर मरुतो! तुम्हारा (शर्धः) बल (अभ्राजि) द्योतमान हो चुका है, (यत् कपनाइव) क्योंकि प्रबल आँधी के समान (अर्णसं वृक्षं) सागवानी पेडों को भी तुम (मोपथ) तोडमरोड देते हो। (अध स्म) और हे (स-जोषसः!) हर्षित मनवाले वीरो! (चक्षुःइव) आँख जैसे (यन्तं) जानेवाले को (सु-गं) अच्छा मार्ग दर्शाती है, वैसे ही (अ-रमतिं नः) विना आराम लिए कार्य करनेवाले हमें (अनु नेपथ) अनुकूल ढंगसे सीधी राहपर से ले चलो।

२५६ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (यं ऋषिं वा) जिस ऋषि को या (राजानं वा) जिस राजा को तुम अच्छे कार्य में (सुसूदथ) प्रेरित करते हो, (सः न जीयते) वह विजित नहीं बनता है, (न हन्यते) उसकी हत्या नहीं होती है, (न स्रेधति) नष्ट नहीं होता है, (न व्यथते) दुःखी नहीं बनता है और (न रिष्यति) क्षीण भी नहीं होता है। (अस्य रायः) इसके धन (न उप दस्यन्ति) नष्ट नहीं होते हैं तथा (ऊतयः) इनकी संरक्षक शक्तियाँ भी नहीं घटतीं।

भावार्थ- २५५ कर्तृत्वशाली वीरों का तेज चमकता ही रहता है। जिस प्रकार प्रचंड आँधी बडे पेडों को जडमूल से उखाड फेंक देती है, वैसे ही ये वीर शत्रुओं को हिलाकर गिरा देते हैं। नेत्र जैसे यात्री को सरल सडक पर से ले चलता है, ठीक उसी प्रकार ये वीर हम जैसे प्रबल पुरुषार्थी लोगों को सीधी राह से प्रगति की ओर ले चलें।

२५६ जिसे वीरों की सहायता मिलती है, उसकी प्रगति सब प्रकार से होती है।

टिप्पणी- [२५५] (१) अर्णस्=गतिमान, चंचल, जिसमें खलबली मची हुई हो ऐसा प्रवाह, जल, सागवान, समुद्र। (२) अ-रमति = आराम न लेनेवाला, चारों ओर जानेवाला, आज्ञाधारक, रममाण न होनेवाला। (३) मुष् = (मुष् खण्डने मुष्णति, मोषति) क्षति करना, वध करना, तोडना मरोडना। (४) कपना= कंपन, हिलानेवाला, झंझावात, शक्ति, कृमि। (५) वेधस् = (वि-धा) = कर्ता, कर्तृत्ववान, विधाता।

[२५६] (१) सूद्= प्रेरणा देना, पकाना, फेंकना, उँडेलना, पीडा देना, वध करना। (२) रिष् = (रुष्) क्षीण होना।

(२५३) वि । अक्तून् । रुद्राः । वि । अहानि । शिक्वसः । वि । अन्तरिक्षम् । वि । रजांसि । धूतयः ।
वि । यत् । अज्रान् । अजथ । नावः । ईम् । यथा । वि । दुःऽगानि । मरुतः ।
न । अह । रिष्यथ ॥ ४ ॥

(२५४) तत् । वीर्यम् । वः । मरुतः । महिऽत्वनम् । दीर्घम् । ततान । सूर्यः । न । योजनम् ।
एताः । न । यामे । अगृभीतऽशोचिषः । अनश्वऽदाम् । यत् । नि । अयातन ।
गिरिम् ॥ ५ ॥

अन्वयः— २५३ (हे) धूतयः शिक्वसः रुद्राः मरुतः ! यत् अक्तून् वि, अहानि वि, अन्तरिक्षं वि, रजांसि वि अजथ, यथा नावः ईं अज्रान् वि, दुर्गाणि वि, न अह रिष्यथ।

२५४ (हे) मरुतः ! वः तत् योजनं वीर्यं, सूर्यः न, दीर्घं महित्वनं ततान, यत् यामे, एताः न, अ-गृभीत-शोचिषः अन्-अश्व-दां गिरिं नि अयातन।

अर्थ- २५३ हे (धूतयः) शत्रुओं को हिलानेवाले, (शिक्वसः) सामर्थ्ययुक्त एवं (रुद्राः मरुतः !) दुश्मनों को रुलानेवाले वीर मरुतो ! (यत्) जब (अक्तून् वि) रात्रियों में (अहानि वि) दिनों में (अन्तरिक्षं वि) अन्तरिक्षमें से या (रजांसि वि अजथ) धूलिमय प्रदेशमेंसे जाते हो, उस समय (यथा नावः ईं) जैसे नौकाएँ समुन्दरमें से जाती हैं, वैसे ही तुम (अज्रान् वि) विभिन्न प्रदेशों में से तथा (दुर्गाणि वि) बीहड स्थानोंमें से भी जाते हो, तब तुम (न अह रिष्यथ) बिलकुल थक न जाओ, बिना थकावट के यह सब कुछ हो जाय ऐसा करो।

२५४ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वः तत्) तुम्हारी वे (योजनं) आयोजनाएँ तथा (वीर्यं) शक्ति (सूर्यः न) सूर्यवत् (दीर्घं महित्वनं) अति विस्तृत (ततान) फैली हुई हैं. (यत्) क्योंकि तुम (यामे) शत्रु पर किये जानेवाले आक्रमण के समय (एताः न) कृष्णसारों के समान वेगवान बनकर (अ-गृभीत-शोचिषः) पकडने में असंभव प्रभाव से युक्त हो और (अन्-अश्व-दां) जहाँ पर घोडे पहुँच नहीं सकते, ऐसे (गिरिं) पर्वतपर भी (नि अयातन) हमले चढाते हो।

भावार्थ- २५३ जो बलिष्ठ वीर होते हैं, वे रात को, दिन में, अन्तरिक्ष में से या रेगिस्तानमें से चले जाते हैं। वे समतल भूमि पर से या बीहड पहाडी जगह में से बराबर आगे बढते ही जाते हैं, पर कभी थक नहीं जाते। (इस भाँति शत्रुदल पर लगातार हमले करके वे विजयी बन जाते हैं।)

२५४ वीरों की बनाई हुई युद्धकी आयोजनाएँ तथा उनकी संगठनशक्ति सचमुच बडी अनूठी है। दुश्मनों पर धावा करते वक्त वे जैसे समतल भूमि पर आक्रमण करते हैं, उसी प्रकार वे शत्रु के दुर्ग पर भी चढाई करनेमें हिचकिचाते नहीं।

टिप्पणी- [२५३] (१) शिक्वस् = (शक् शक्तौ) कुशल, बुद्धिमान, सामर्थ्ययुक्त। शिक्व= कुशल, बुद्धिमान, समर्थ। (२) अज्र = खेत, समतल भूमि।

[२५४] (१) योजनं = जोडनेवाला, इकट्ठा होनेवाला, व्यवस्था, प्रयत्न, आयोजना। (२) अन्-अश्व-दा (गिरिः) जहाँ पर घोडे पग नहीं धर देते, ऐसा स्थान, पहाडी गढ, दुर्गम पर्वत। (३) गिरिः = पर्वत, पार्वतीय दुर्ग, वाणी।

(२५५) अभ्राजि । शर्धः । मरुतः । यत् । अर्णसम् । मोपथ । वृक्षम् । कपनाऽइव । वेधसः ।
अध । स्म । नः । अरमतिम् । सऽजोषसः । चक्षुःऽइव । यन्तम् । अनु । नेषथ ।
सुऽगम् ॥ ६ ॥

(२५६) न । सः । जीयते । मरुतः । न । हन्यते । न । स्रेधति । न । व्यथते । न । रिष्यति ।
न । अस्य । रायः । उप । दस्यन्ति । न । ऊतयः । ऋषिम् । वा । यम् । राजानम् ।
वा । सुसूदथ ॥ ७ ॥

अन्वयः— २५५ (हे) वेधसः मरुतः ! शर्धः अभ्राजि, यत् कपनाइव अर्णसं वृक्षं मोपथ, अध स्म (हे) स-जोषसः ! चक्षुःइव यन्तं सुगं अ-रमतिं नः अनु नेषथ ।

२५६ (हे) मरुतः ! यं ऋषिं वा राजानं वा सुसूदथ सः न जीयते, न हन्यते, न स्रेधति, न व्यथते, न रिष्यति, अस्य रायः न उप दस्यन्ति, ऊतयः न ।

अर्थ— २५५ हे (वेधसः) कर्तृत्ववान (मरुतः !) वीर मरुतो ! तुम्हारा (शर्धः) बल (अभ्राजि) द्योतमान हो चुका है, (यत् कपनाइव) क्योंकि प्रबल आँधी के समान (अर्णसं वृक्षं) सामर्थ्यवान् पेडों को भी तुम (मोपथ) तोडमरोड देते हो । (अध स्म) और हे (स-जोषसः !) हर्षित मनवाले वीरो ! (चक्षुःइव) आँख जैसे (यन्तं) जानेवाले को (सुगं) अच्छा मार्ग दर्शाती है, वैसे ही (अ-रमतिं नः) बिना आराम लिए कार्य करनेवाले हमें (अनु नेषथ) अनुकूल ढंगसे सीधी राहपर से ले चलो ।

२५६ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (यं ऋषिं वा) जिस ऋषि को या (राजानं वा) जिस राजा को तुम अच्छे कार्य में (सुसूदथ) प्रेरित करते हो, (सः न जीयते) वह विजित नहीं बनता है, (न हन्यते) उसकी हत्या नहीं होती है, (न स्रेधति) नष्ट नहीं होता है, (न व्यथते) दुःखी नहीं बनता है और (न रिष्यति) क्षीण भी नहीं होता है । (अस्य रायः) इसके धन (न उप दस्यन्ति) नष्ट नहीं होते हैं तथा (ऊतयः) इसकी संरक्षक शक्तियाँ भी नहीं घटती ।

भावार्थ- २५५ कर्तृत्वशाली वीरों का तेज चमकता ही रहता है । जिस प्रकार प्रचंड आँधी बडे पेडों को जडमूल से उखाड फेंक देती है, वैसे ही ये वीर शत्रुओं को हिलाकर गिरा देते हैं । नेत्र जैसे यात्री को ठाक ठाक राह ले चलता है, ठीक उसी प्रकार ये वीर हम जैसे सतत पुरुषार्थी लोगों को सीधी राह से प्रगति की ओर ले चलें ।

२५६ जिसे वीरों की सहायता मिलती है, उसकी प्रगति सब प्रकार से होती है ।

टिप्पणी- [२५५] (१) अर्णस् = गतिमान, चंचल, जिसमें खलबली मची हुई हो ऐसा प्रवाह, जल, [illegible], समुद्र । (२) अ-रमति = आराम न लेनेवाला, चारों ओर जानेवाला, आक्रमणशील, रममाण न होनेवाला । (३) मुष् = (मुष् खण्डने मुष्णाति, मोषति) क्षति करना, वध करना, तोडना मरोडना । (४) कपना = कंपन, हिलानेवाला, झंझावात, शक्ति, हानि । (५) वेधस् = (वि-धा) = कर्ता, कर्तृत्ववान, विधाता ।

[२५६] (१) सूद् = प्रेरणा देना, रखना, फेंकना, उंडेलना, चोट देना, वध करना । (२) रिष् = (रुष्) क्षीण होना ।

(२५३) वि । अक्तून् । रुद्राः । वि । अहानि । शिक्वसः । वि । अन्तरिक्षम् । वि । रज
धूतयः ।
वि । यत् । अज्रान् । अजथ । नावः । ईम् । यथा । वि । दुःऽगानि । मरु
न । अहं । रिष्यथ ॥ ४ ॥

(२५४) तत् । वीर्यम् । वः । मरुतः । महिऽत्वनम् । दीर्घम् । ततान । सूर्यः । न । योज
एताः । न । यामे । अगृभीतऽशोचिषः । अनश्वऽदाम् । यत् । नि । अयातन ।
गिरिम् ॥ ५ ॥

अन्वयः— २५३ (हे) धूतयः शिक्वसः रुद्राः मरुतः ! यत् अक्तून् वि, अहानि वि, अन्तरिक्षं वि, र
वि अजथ, यथा नावः ईं अज्रान् वि, दुर्गाणि वि, न अह रिष्यथ।

२५४ (हे) मरुतः ! वः तत् योजनं वीर्यं, सूर्यः न, दीर्घं महित्वनं ततान, यत् यामे, एत
अ-गृभीत-शोचिषः अन्-अश्व-दां गिरिं नि अयातन।

अर्थ- २५३ हे (धूतयः) शत्रुओं को हिलानेवाले, (शिक्वसः) सामर्थ्ययुक्त एवं (रुद्राः मरु
दुश्मनों को रुलानेवाले वीर मरुतो ! (यत्) जब (अक्तून् वि) रात्रियों में (अहानि वि) दि
(अन्तरिक्षं वि) अन्तरिक्षमें से या (रजांसि वि अजथ) धूलिमय प्रदेशमेंसे जाते हो, उस समय (
नावः ईं) जैसे नौकाएँ समुन्दरमें से जाती हैं, वैसे ही तुम (अज्रान् वि) विभिन्न प्रदेशों में से
(दुर्गाणि वि) बीहड स्थानोंमें से भी जाते हो, तब तुम (न अह रिष्यथ) बिलकुल थक न जाओ,
थकावट के यह सब कुछ हो जाय ऐसा करो।

२५४ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वः तत्) तुम्हारी वे (योजनं) आयोजनाएँ तथा (वी
शक्ति (सूर्यः न) सूर्यवत् (दीर्घं महित्वनं) अति विस्तृत (ततान) फैली हुई हैं. (यत्) क्योंकि
(यामे) शत्रु पर किये जानेवाले आक्रमण के समय (एताः न) कृष्णसारों के समान वेगवान
(अ-गृभीत-शोचिषः) पकडने में असंभव प्रभाव से युक्त हो और (अन्-अश्व-दां) जहाँ पर घोडे
नहीं सकते, ऐसे (गिरिं) पर्वतपर भी (नि अयातन) हमले चढाते हो।

भावार्थ- २५३ जो बलिष्ठ वीर होते हैं, वे रात को, दिन में, अन्तरिक्ष में से या रेगिस्तानमें से चले जाते हैं
समतल भूमि पर से या बीहड पहाडी जगह में से बराबर आगे बढते ही जाते हैं, पर कभी थक नहीं जाते। (
भाँति शत्रुदल पर लगातार हमले करके वे विजयी बन जाते हैं।)

२५४ वीरों की बनाई हुई युद्धकी आयोजनाएँ तथा उनकी संगठनशक्ति सचमुच बडी अनूठी है। दु
पर धावा करते वक्त वे जैसे समतल भूमि पर आक्रमण करते हैं, उसी प्रकार वे शत्रु के दुर्ग पर भी चढाई करते
हिचावे नहीं।

टिप्पणी-- [२५३] (१) शिक्वस् = (शक् शक्तौ) कुशल, बुद्धिमान, सामर्थ्ययुक्त। शिक्व= कुशल,
मान, समर्थ। (२) अज्र = खेत, समतल भूमि।

[२५४] (१) योजनं = जोडनेवाला, इकट्ठा होनेवाला, व्यवस्था, प्रयत्न, आयोजना। (२) अ
अश्व-दा (गिरिः) जहाँ पर घोडे पग नहीं धर देते, ऐसा स्थान, पहाडी गढ, दुर्गम पर्वत। (३) गिरिः =
पार्वतीय दुर्ग, वाणी।

(२५५) अभ्राजि । शर्धः । मरुतः । यत् । अर्णसम् । मोषथ । वृक्षम् । कपनाऽइव । वेधसः । अर्ध । स्म । नः । अरमतिम् । सऽजोषसः । चक्षुःऽइव । यन्तम् । अनु । नेषथ । सुऽगम् ॥ ६ ॥

(२५६) न । सः । जीयते । मरुतः । न । हन्यते । न । स्रेधति । न । व्यथते । न । रिष्यति । न । अस्य । रायः । उप । दस्यन्ति । न । ऊतयः । ऋषिम् । वा । यम् । राजानम् । वा । सुसूदथ ॥ ७ ॥

अन्वयः— २५५ (हे) वेधसः मरुतः ! शर्धः अभ्राजि, यत् कपनाइव अर्णसं वृक्षं मोषथ, अध स्म (हे) स-जोषसः ! चक्षुःइव यन्तं सु-गं अ-रमतिं नः अनु नेषथ।

२५६ (हे) मरुतः ! यं ऋषिं वा राजानं वा सुसूदथ सः न जीयते, न हन्यते, न स्रेधति, न व्यथते, न रिष्यति, अस्य रायः न उप दस्यन्ति, ऊतयः न।

अर्थ— २५५ हे (वेधसः) कर्तृत्ववान (मरुतः !) वीर मरुतो ! तुम्हारा (शर्धः) बल (अभ्राजि) द्योतमान हो चुका है, (यत् कपनाइव) क्योंकि प्रबल आँधी के समान (अर्णसं वृक्षं) लागवानी पेडों को भी तुम (मोषथ) तोडमरोड देते हो। (अध स्म) और हे (स-जोषसः !) हर्षित मनवाले वीरो ! (चक्षुःइव) आँख जैसे (यन्तं) जानेवाले को (सु-गं) अच्छा मार्ग दर्शाती है, वैसे ही (अ-रमतिं नः) बिना आराम लिए कार्य करनेवाले हमें (अनु नेषथ) अनुकूल ढंगसे सीधी राहपर ले ले चलो।

२५६ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (यं ऋषिं वा) जिस ऋषि को या (राजानं वा) जिस राजा को तुम अच्छे कार्य में (सुसूदथ) प्रेरित करते हो, (सः न जीयते) वह विजित नहीं बनता है, (न हन्यते) उसकी हत्या नहीं होती है, (न स्रेधति) नष्ट नहीं होता है, (न व्यथते) दुःखी नहीं बनता है और (न रिष्यति) क्षीण भी नहीं होता है। (अस्य रायः) इसके धन (न उप दस्यन्ति) नष्ट नहीं होते हैं तथा (ऊतयः) इसकी संरक्षक शक्तियाँ भी नहीं घटतीं।

भावार्थ- २५५ कर्तृत्ववाले वीरों का तेज चमकता ही रहता है। जिस प्रकार प्रचंड आँधी बडे पेडों को जडमूल से उखाड फेंक देती है, वैसे ही ये वीर शत्रुओं को हिलाकर गिरा देते हैं। नेत्र जैसे यात्री को ठीक राह पर ले चलता है, ठीक उसी प्रकार ये वीर हम जैसे प्रबल पुरुषार्थी लोगों को सीधी राह से प्रगति की ओर ले चलें।

२५६ जिसे वीरों की सहायता मिलती है, उसकी प्रगति सब प्रकार से होती है।

टिप्पणी- [२५५] (१) अर्णस् = गतिमान, चंचल, जिसमें खलबली मची हुई हो ऐसा प्रवाह, जल, नागवान, समुद्र। (२) अ-रमति = आराम न लेनेवाला, चारों ओर जानेवाला, आज्ञाकारक, स्वस्थान न होनेवाला। (३) मुष् = (मुष् खण्डने मुष्णाति, मोषति) क्षति करना, वध करना, तोडना मरोडना। (४) कपना = केंचुआ, हिलनेवाला, झंझावात, शक्ति, कृमि। (५) वेधस् = (वि-धा) = कर्ता, कर्तृत्ववान, विधाता।

[२५६] (१) सूद् = प्रेरणा देना, चलाना, फेंकना, उँडेलना, धीरज देना, वध करना। (२) (स्त्रिध्) क्षीण होना।

(२५७) नियुत्वन्तः । ग्रामऽजितः । यथा । नरः । अर्यमणः । न । मरुतः । कवन्धिनः ।
पिन्वन्ति । उत्सम् । यत् । इनासः । अस्वरन् । वि । उन्दन्ति । पृथिवीम् । मध्वः ।
अन्धसा ॥ ८ ॥

(२५८) प्रवत्वती । इयम् । पृथिवी । मरुत्ऽभ्यः । प्रवत्वती । द्यौः । भवति । प्रयत्ऽभ्यः ।
प्रवत्वतीः । पथ्याः । अन्तरिक्ष्याः । प्रवत्वन्तः । पर्वताः । जीरऽदानवः ॥९॥

अन्वयः— २५७ यथा नियुत्वन्तः ग्राम-जितः नरः कवन्धिनः मरुतः, अर्यमणः न, यत् इनासः अस्वरन् उत्सं पिन्वन्ति पृथिवीं मध्वः अन्धसा वि उन्दन्ति।

२५८ (हे) जीर-दानवः! इयं पृथिवी मरुद्भ्यः प्रवत्-वती, द्यौः प्र-यद्भ्यः प्रवत्-वती भवति अन्तरिक्ष्याः पथ्याः प्रवत्-वतीः, पर्वताः प्रवत्-वन्तः।

अर्थ- २५७ (यथा) जैसे (नियुत्वन्तः) घोडे समीप रखनेवाले, (ग्राम-जितः) दुश्मनोंके गाँव जीतनेवाले, (नरः) नेता, (कवन्धिनः) समीप जल रखनेवाले (मरुतः) वीर मरुत् (अर्यमणः न) अर्यमाके समान (यत् इनासः) जब वेगसे जाते हैं, तब (अस्वरन्) शब्द करते हैं; (उत्सं पिन्वन्ति) जलकुण्डको परिपूर्ण बना रखते हैं और (पृथिवीं) भूमि पर (मध्वः) मिठास भरे (अन्धसा) अन्न की (वि उन्दन्ति) विशेष समृद्धि करते हैं।

२५८ हे (जीरदानवः!) शीघ्र विजयी बननेवाले वीरो! (इयं पृथिवी) यह भूमि (मरुद्भ्यः) वीर मरुतों के लिए (प्रवत्-वती) सरल मार्गोंसे युक्त बन जाती है, (द्यौः) द्युलोक भी (प्र-यद्भ्यः) वेगपूर्वक जानेवाले इन वीरों के लिए (प्रवत्-वती) आसानीसे जानेयोग्य (भवति) होता है; (अन्तरिक्ष्याः पथ्याः) अन्तराल की सडकें भी उनके लिए (प्रवत्-वतीः) सुगम बनती हैं और (पर्वताः) पहाड भी (प्रवत्-वन्तः) उनके लिए सरल पथवत् बने दीख पडते हैं।

भावार्थ- २५७ घुडसवार वीर शत्रुओं के ग्राम जीत लेते हैं, तथा वेगपूर्वक दुश्मनों पर धावा करते हैं। उस समय वे बडी भारी घोषणा करते हैं और जलकुण्ड पानी से भरकर भूमंडल पे मधुरिमामय अन्नजल की समृद्धि की बडी विपुलता कर देते हैं।

२५८ वीरों के लिए पृथ्वी, पर्वत, अन्तरिक्ष एवं आकाशपथ सभी सुसाध्य एवं सुगम प्रतीत होते हैं। (वीरों के लिए कोई भी जगह बीहड या दुर्गम नहीं जान पडती है।)

टिप्पणी— [२५७] (१) नियुत् = घोडा, पंक्ति। (२) अन्धस् = अन्न (अन्-धस्) प्राण का धारण करनेवाला अन्न। (३) कवन्धिन् = जलकुण्ड या पानी की बोतलें (Water-bottles) समीप रखनेवाले।
[२५८] (१) प्रवत् = सुगम मार्ग, समतल राह, ऊँचाई, ढाल।

(२५९) यत् । मरुतः । सऽभरसः । स्वःऽनरः । सूर्ये । उत्ऽइते । मदथ । दिवः । नरः ।
न । वः । अश्वाः । श्रथयन्त । अह । सिस्रतः । सद्यः । अस्य । अध्वनः । पारम् ।
अश्नुथ ॥१०॥

(२६०) अंसेषु । वः । ऋष्टयः । पत्ऽसु । खादयः । वक्षःऽसु । रुक्माः । मरुतः । रथे । शुभः ।
अग्निऽभ्राजसः । विऽद्युतः । गभस्त्योः । शिप्राः । शीर्षऽसु । विऽतताः । हिरण्ययीः ॥११॥

(२६१) तम् । नाकम् । अर्यः । अगृभीतऽशोचिषम् । रुशत् । पिप्पलम् । मरुतः । वि । धूनुथ ।
सम् । अच्यन्त । वृजना । अतित्विषन्त । यत् । स्वरन्ति । घोषम् । विऽततम् ।
ऋतऽयवः ॥१२॥

अन्वयः— २५९ (हे) मरुतः ! स-भरसः स्वर्-नरः सूर्ये उदिते मदथ, (हे) दिवः नरः ! यत् वः सिस्रतः अश्वाः न अह श्रथयन्त, सद्यः अस्य अध्वनः पारं अश्नुथ । २६० (हे) रथे शुभः मरुतः ! वः अंसेषु ऋष्टयः, पत्सु खादयः, वक्षःसु रुक्माः, गभस्त्योः अग्नि-भ्राजसः विद्युतः, शीर्षसु हिरण्ययीः विततः शिप्राः । २६१ (हे) अर्यः मरुतः ! तं अ-गृभीत-शोचिषं नाकं रुशत् पिप्पलं वि धूनुथ, वृजना सं अच्यन्त अतित्विषन्त, यत् ऋत-यवः विततं घोषं स्वरन्ति ।

अर्थ- २५९ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (स-भरसः) समान रूपसे कार्यका बोझ उठानेवाले, मानों (स्वर्-नरः) स्वर्गके नेता तुम (सूर्ये उदिते) सूर्यके उदय होनेपर (मदथ) हर्षित होते हो । हे (दिवः नरः !) तेजस्वी नेता एवं वीरो ! (यत्) जबतक (वः सिस्रतः अश्वाः) तुम्हारे दौडनेवाले घोडे (न अह श्रथयन्त) तनिक भी नहीं थक गये हैं, तभी तक (सद्यः) तुरन्तही तुम (अस्य अध्वनः पारं) इस मार्ग के अन्त (अश्नुथ) पहुँच जाओ । २६० हे (रथे शुभः मरुतः !) रथोंमें सुहानेवाले वीर मरुतो ! (वः अंसेषु) तुम्हारे कंधोंपर (ऋष्टयः) भाले विराजमान हैं, (पत्सु खादयः) पैरों में कडे, (वक्षःसु रुक्माः) उरोभागपै स्वर्णमुद्राओंके हार, (गभस्त्योः) भुजाओं पर (अग्नि-भ्राजसः विद्युतः) अग्निवत् चमकीले वज्र और (शीर्षसु) माथे पर (हिरण्ययीः विततः शिप्राः) सुवर्णके भव्य शिरस्त्राण रखे हुए हैं । २६१ हे (अर्यः मरुतः !) पूजनीय वीर मरुतो ! (तं अ-गृभीत-शोचिषं) उस अप्रतिहत तेजस्वी (नाकं) आकाशमेंसे (रुशत्) तेजस्वी (पिप्पलं) जलको (वि धूनुथ) विशेष हिलाओ, वर्षा करो । उसके लिए तुम (वृजना) अपने यत्नों का (सं अच्यन्त) संगठन करके अपने (अतित्विषन्त) तेज बढाओ; (यत्) क्योंकि (ऋत-यवः) पानी चाहनेवाले लोग (विततं) विस्तृत (घोषं स्वरन्ति) घोषणा करके कहते हैं कि, हमें जल चाहिए ।

भावार्थ- २५९ सभी कामों का भार वीर सैनिक सम भावसे बराबर बाँट कर उठाते हैं । दिनका प्रारम्भ होने पर (अर्थात् काम शुरु करना सुगम होता है, इसलिए) ये आनन्दित होते हैं । ऐसे उत्साही वीर घोडोंके थक जानेके पहले ही अपने गन्तव्यस्थान पर पहुँच जायँ । २६० इस मंत्र में मरुतों के जिस पहनावे का बखान किया है, वह (Military uniform) ही है । २६१ अपने बल का संगठन करके तेजस्विता बढा... । वर्षाका जल इकट्ठा करके सबको वह बाँट दो, क्योंकि जनता जल पर्याप्त मात्रा में पाने के लिए अतीव लालायित...

टिप्पणी- [२५९] (१) भरः = भार, बोझ, [illegible], समूह, उठानेवाला । [यत् न श्रथयन्त, सद्यः अध्वनः पारं अश्नुथ = अपने आदर्श या ध्येयको पहुँचनेका प्रयत्न करें ।] [२६०] (१) के किनारवाले साफे । [२६१] (१) ऋत-यु = [illegible] करने (२) पिप्पल = पानी, पीपल (३)

।। स-भरस् = सम भाव से कारभार ने अवयव थक नहीं जाते, तभी तक मानव : विततः शिप्राः = सुवर्णकी वेल पत्तियों वाला, सत्यकी-जलकी चाह रखनेवाला खूब, संक्षिप्त, विरल, फैला हुआ ।

(२६२) युष्माऽदत्तस्य । मरुतः । विऽचेतसः । राय: । स्याम । रथ्यः । वयस्वतः ।
न । यः । युच्छति । तिष्यः । यथा । दिवः । अस्मे इति । ररन्त । मरुतः । सहस्रिणम् ॥१३॥

(२६३) यूयम् । रयिम् । मरुतः । स्पार्हऽवीरम् । यूयम् । ऋषिम् । अवथ । सामऽविप्रम् ।
यूयम् । अर्वन्तम् । भरताय । वाजम् । यूयम् । धत्थ । राजानम् । श्रुष्टिमन्तम् ॥१४॥

(२६४) तत् । वः । यामि । द्रविणम् । सद्यःऽऊतयः । येन । स्वः । न । ततनाम । नॄन् । अभि ।
इदम् । सु । मे । मरुतः । हर्यत । वचः । यस्य । तरेम । तरसा । शतम् । हिमाः ॥१५॥

अन्वयः— २६२ (हे) वि-चेतसः मरुतः! युष्मा-दत्तस्य वयस्-वतः रायः रथ्यः स्याम, (हे) मरुतः! अस्मे यः, दिवः तिष्यः यथा, न युच्छति सहस्रिणं ररन्त। २६३ (हे) मरुतः! यूयं स्पार्ह-वीरं रयिं, यूयं साम-विप्रं ऋषिं अवथ, यूयं भरताय अर्वन्तं वाजं, यूयं राजानं श्रुष्टि-मन्तं धत्थ। २६४ (हे) सद्य-ऊतयः! वः तत् द्रविणं यामि, येन नॄन् स्वः न अभि ततनाम, (हे) मरुतः! इदं मे सु-वचः हर्यत, यस्य तरसा शतं हिमाः तरेम।

अर्थ- २६२ हे (वि-चेतसः मरुतः!) विशेष ज्ञानी वीर मरुतो! (युष्मा-दत्तस्य) तुम्हारे दिये हुए (वयस्-वतः) अन्नसे युक्त होकर (रायः) ऐश्वर्य के (रथ्यः) रथ भरके लानेवाले हम (स्याम) हों। हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (अस्मे) हमें (यः) वह (दिवः तिष्यः यथा) आकाश में विद्यमान् नक्षत्र के समान (न युच्छति) न नष्ट होनेवाला (सहस्रिणं) हजारों किस्म का धन देकर (ररन्त) संतुष्ट करो।

२६३ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (यूयं) तुम (स्पार्ह-वीरं) स्पृहणीय वीरों से युक्त (रयिं) धन का संरक्षण करते हो; (यूयं साम-विप्रं) तुम शांतिप्रधान या सामगायक विद्वान (ऋषिं अवथ) ऋषि का रक्षण करते हो; (यूयं) तुम (भरताय) जनता का भरणपोषण करनेवाले के लिए (अर्वन्तं वाजं) घोडे तथा अन्न देते हो और (यूयं) तुम (राजानं) नरेश को (श्रुष्टि-मन्तं) वैभवयुक्त करके उसे (धत्थ) धारित एवं पुष्ट करते हो।

२६४ हे (सद्य-ऊतयः!) तुरन्त संरक्षण करनेवाले वीरो! (वः तत्) तुम्हारे उस (द्रविणं यामि) द्रव्य की हम इच्छा करते हैं। (येन) जिससे हम (नॄन्) सभी लोगों को (स्वः न) प्रकाश के समान (अभि ततनाम) दान दे सकें। हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (इदं मे सु-वचः) यह मेरा अच्छा वचन (हर्यत) स्वीकार कर लो; (यस्य तरसा) जिसके बलसे हम (शतं हिमाः) सौ हेमन्तऋतु, सौ वर्ष (तरेम) दुःखमें से तैरकर पार पहुँच सकें, जीवित रह सकें।

भावार्थ- २६२ सहस्रों प्रकारका धन और अन्न हमें प्राप्त हो। वह धन आकाशके नक्षत्रकी न्याईं अक्षय एवं अटल रहे।

२६३ वीर पुरुष शूरतायुक्त धन का वितरण करके ज्ञानी तत्त्वज्ञ का पोषण करके प्रजापालनतत्पर भूपाल का पालनपोषण एवं संवर्धन करते हैं।

२६४ हे संरक्षणकर्ता वीरो! हमें प्रचुर धन दो ताकि हम उसे सब लोगों में बाँट दें। मैं अपना यह वचन दे रहा हूँ। इसी भाँति करते हम सौ वर्षों तक दुःख हटाकर जीवनयात्रा बितायें।

टिप्पणी- [२६३] (१) श्रुष्टि = सुननेवाला, सहायता, वर, वैभव, सुख।

[२६४] (१) स्वर् = स्वर्ग, जल, सूर्यकिरण, प्रकाश। (२) हर्य् (गतिकान्त्योः) = गति करना, इच्छा करना। (३) यामि (याचे) = याचना करता हूँ, चाहता हूँ। (४) स्वः न = (स्वर् न, स्वर्ण) = सूर्यप्रकाशवत्, जैसे सूर्य अपने किरणों को समान रूप से बाँट देता है वैसे। [शतं हिमाः तरेम = पश्येम शरदः शतम्। जीवेम शरदः शतम्॥ (वा० यजु० ३६।२४)]

(ऋ० ५।५५।१-१०)

(२६५) प्रऽयंज्यवः । मुरुतः । भ्राजंत्ऽऋष्टयः । बृहत् । वयः । दधिरे । रुक्मऽवंक्षसः ।
ईयन्ते । अश्वैः । सुऽयमैभिः । आशुऽभिः । शुभंम् । याताम् । अनुं । रथाः । अवृत्सत ॥१॥

(२६६) स्वयम् । दधिध्वे । तविंषीम् । यथां । विद । बृहत् । महान्तः । उर्विया । वि । राजथ ।
उत । अन्तरिक्षम् । ममिरे । वि । ओजंसा । शुभंम् । याताम् । अनुं । रथाः । अवृत्सत ॥२॥

अन्वयः- २६५ प्र-यज्यवः भ्राजत्-ऋष्टयः रुक्म-वक्षसः मरुतः बृहत् वयः दधिरे, सु-यमेभिः आशुभिः अश्वैः ईयन्ते, रथाः शुभं यातां अनु अवृत्सत।

२६६ यथा विद स्वयं तविषीं दधिध्वे, महान्तः उर्विया बृहत् वि राजथ, उत ओजसा अन्तरिक्षं वि ममिरे, रथाः शुभं यातां अनु अवृत्सत।

अर्थ- २६५ (प्र-यज्यवः) विशेष यजनीय कर्म करनेहारे, (भ्राजत्-ऋष्टयः) तेजस्वी हथियारों से युक्त तथा (रुक्म-वक्षसः मरुतः) वक्षःस्थलपर स्वर्णहार धारण करनेहारे वीर मरुत् (बृहत् वयः दधिरे) बडा भारी बल धारण करते हैं। (सु-यमेभिः) भली भाँति नियमित होनेवाले, (आशुभिः) वेगवान (अश्वैः) घोडों के साथ, वे (ईयन्ते) चले जाते हैं। उनके (रथाः) रथ (शुभं यातां) लोककल्याण के लिए जाते समय उन्हीं के (अनु अवृत्सत) पीछे चले जाते हैं।

२६६ (यथा) चूँकि तुम (विद) बहुत ज्ञान प्राप्त करते हो और (स्वयं तविषीं दधिध्वे) स्वयमेव विशेष बल भी धारण करते हो, तुम (महान्तः) बडे हो और (उर्विया) मातृभूमि का हित करने की लालसा से (बृहत् वि राजथ) विशेष रूपसे सुशोभित होते हो। (उत) और (ओजसा) अपने बल से, (अन्तरिक्षं वि ममिरे) अन्तरिक्षको भी व्याप्त कर डालते हो, (रथाः) इनके रथ (शुभं यातां) लोककल्याण के लिए जाते समय, (अनु अवृत्सत) इन्हीं का अनुसरण करते हैं।

भावार्थ- २६५ अच्छे कर्म करनेहारे, तेजस्वी आयुध धारण करनेवाले, आभूषणों से सुशोभित वीर अपने बल को अत्यधिक रूप से बढाते हैं और चपल अश्वोंपर आरूढ होकर जनता का हित करने के लिए शत्रुदलपर धावा करना शुरू करते हैं।

२६६ वीर पुरुष ज्ञान प्राप्त करके अपना बल बढाकर मातृभूमि का यश बढाने के लिए प्रयत्न करते हैं। अपने इन अदम्य अध्यवसायों के फलस्वरूप वे अत्यन्त सुशोभित दीख पडते हैं और अपनी ऊँची उडानों से समूचा अन्तरिक्ष भी व्याप्त कर डालते हैं।

टिप्पणी- [२६५] (१) वयस्= अन्न, बल, सामर्थ्य, तारुण्य।

[२६६] (१) उर्वी= (हिंसायाम्) उर्वी = भूमि, मातृभूमि। (उर्विया = मातृभूमि ...
... बुद्धि, ... भावना। (२) मा (माने) = मिनना, अन्तर्भूत हो जाना, व्याप्त होना ...

मरुत् (हिं०) १३

(२६७) साकम् । जाताः । सुऽभ्वः । साकम् । उक्षिताः ।
श्रिये । चित् । आ । प्रऽतरम् । ववृधुः । नरः ।
विरोकिणः । सूर्यस्यऽइव । रश्मयः ।
शुभम् । याताम् । अनु । रथाः । अवृत्सत ॥३॥

(२६८) आऽभूषेण्यम् । वः । मरुतः । महिऽत्वनम् ।
दिदृक्षेण्यम् । सूर्यस्यऽइव । चक्षणम् ।
उतो इति । अस्मान् । अमृतऽत्वे । दधातन ।
शुभम् । याताम् । अनु । रथाः । अवृत्सत ॥ ४ ॥

(२६९) उत् । ईरयथ । मरुतः । समुद्रतः । यूयम् । वृष्टिम् । वर्षयथ । पुरीषिणः ।
न । वः । दस्राः । उप । दस्यन्ति । धेनवः । शुभम् । यातान् । अनु । रथाः । अवृत्सत ॥५॥
(२७०) यत् । अश्वान् । धूःऽसु । पृषतीः । अयुग्ध्वम् । हिरण्ययान् । प्रति । अत्कान् । अमुग्ध्वम् ।
विश्वाः । इत् । स्पृधः । मरुतः । वि । अस्यथ । शुभम् । यातान् । अनु । रथाः । अवृत्सत ॥६॥
(२७१) न । पर्वताः । न । नद्यः । वरन्त । वः । यत्र । अचिध्वम् । मरुतः । गच्छथ । इत् ।
उँ इति । तत् ।
उत । द्यावापृथिवी इति । याथन । परि । शुभम् । यातान् । अनु । रथाः । अवृत्सत ॥७॥

अन्वयः— २६९ (हे) पुरीषिणः मरुतः ! यूयं समुद्रतः उत् ईरयथ, वृष्टिं वर्षयथ, (हे) दस्राः ! वः धेनवः न उप दस्यन्ति, रथाः शुभं यातां अनु अवृत्सत।

२७० (हे) मरुतः ! यत् पृषतीः अश्वान् धूर्षु अयुग्ध्वं, हिरण्ययान् अत्कान् प्रति अमुग्ध्वं, विश्वाः इत् स्पृधः वि अस्यथ, रथाः शुभं यातां अनु अवृत्सत।

२७१ (हे) मरुतः ! वः पर्वताः न वरन्त, नद्यः न, यत्र अचिध्वं तत् गच्छथ इत् उ, उत द्यावा-पृथिवी परि याथन, रथाः शुभं यातां अनु अवृत्सत।

अर्थ- २६९ हे (पुरीषिणः मरुतः !) जलसे युक्त वीर मरुतो ! (यूयं) तुम (समुद्रतः) समुद्र के जल को (उत् ईरयथ) ऊपर प्रेरणा देते हो और (वृष्टिं वर्षयथ) वर्षा का प्रारम्भ करते हो। हे (दस्राः !) शत्रुको विनष्ट करनेवाले वीरो ! (वः धेनवः) तुम्हारी गौएं (न उप दस्यन्ति) क्षीण नहीं होती हैं। (रथाः शुभं०) [२६५ वाँ मंत्र देखिए।]

२७० हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (यत् पृषतीः अश्वान्) जब धब्बेवाले घोडों को तुम, (धूर्षु) रथों के अग्रभाग में जोड देते हो और (हिरण्ययान् अत्कान्) स्वर्णमय कवच (प्रति अमुग्ध्वं) हर कोई पहनते हो, तब (विश्वाः इत्) सभी (स्पृधः) चढाऊपरी करनेवाले दुश्मनोंको तुम (वि अस्यथ) विभिन्न प्रकारों से तितरवितर कर देते हो। (रथाः शुभं०) [मंत्र २६५ वाँ देखिए।]

२७१ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वः) तुम्हारे मार्ग में (पर्वताः) पहाड (न वरन्त) रुकावट न डालें, (नद्यः न) नदियाँ भी रोडे न अटकाएँ। (यत्र) जिधर (अचिध्वं) जाने की इच्छा हो, (तत्) उधर (गच्छथ इत् उ) जाओ, (उत) और (द्यावा-पृथिवी) भूमंडल एवं द्युलोक में (परि याथन) चारों ओर घूमो। (रथाः शुभं ... ...) [मंत्र २६५ वाँ देखिए।]

भावार्थ- २६९ समुद्र में विद्यमान जल को ये मरुत् ऊपर आकाश में उठा ले जाते हैं और वहाँ से फिर वर्षा के द्वारा उसे भूमिपर पहुँचा देते हैं। इस वर्षा के कारण गौओं का पोषण होता है। २७० वीर सुन्दर दिखाई देनेवाले अश्वों को रथ में जोडकर कवचधारी बन बैठते हैं और सारे शत्रुओं को मार भगा देते हैं। २७१ पर्वत तथा नदियोंके कारण वीरों के पथ में कोई रुकावट खडी न होने पाय। विजयी बनने के लिए जिधर भी जाना उन्हें पसंद हो, उधर बिना किसी विघ्न के वे चले जायँ और सर्वत्र विजय का झंडा फहरायँ।

टिप्पणी- [२६९] (१) दस्रः= जंगली, उग्र। (दस्= फेंकना, नाश करना, जीतना, प्रकाशमान होना।) फेंकनेवाला, शत्रुविनाशक, विजयशील, प्रकाशमान। (२) पुरीष=जल (निघण्टु), मल, विष्ठा। (पुरि-इष, नगरी में जो इष्ट है वह; शरीर में जो इष्ट है वह।

[२७०] (१) अत्कः= (अत् सातत्यगमने) = यात्री, अवयव, जल, विद्युत्, वज्र, कवच। (२) प्रति-मुच्= पहनना, शरीरपर धारण करना।

(२७२) यत् । पूर्व्यम् । मरुतः । यत् । च । नूतनम् । यत् । उद्यते । वसवः । यत् । च । शस्यते ।
विश्वस्य । तस्य । भवथ । नवेदसः । शुभम् । याताम् । अनु । रथाः । अवृत्सत ॥८

(२७३) मृळत । नः । मरुतः । मा । वधिष्टन । अस्मभ्यम् । शर्म । बहुलम् । वि । यन्तन ।
अधि । स्तोत्रस्य । सख्यस्य । गातन । शुभम् । याताम् । अनु । रथाः । अवृत्सत ॥९

(२७४) यूयम् । अस्मान् । नयत । वस्यः । अच्छ । निः । अंहतिऽभ्यः । मरुतः । गृणानाः ।
जुषध्वम् । नः । हव्यऽदातिम् । यजत्राः । वयम् । स्याम । पतयः । रयीणाम् ॥१०

अन्वयः— २७२ (हे) वसवः मरुतः ! यत् पूर्व्यं, यत् च नूतनं, यत् उद्यते, यत् च शस्यते, तस्य विश्वस्य नवेदसः भवथ, रथाः शुभं यातां अनु अवृत्सत ।

२७३ (हे) मरुतः ! नः मृळत, मा वधिष्टन, अस्मभ्यं बहुलं शर्म वि यन्तन, स्तोत्रस्य सख्यस्य अधि गातन, रथाः शुभं यातां अनु अवृत्सत ।

२७४ (हे) गृणानाः मरुतः ! यूयं अस्मान् अंहतिभ्यः निः वस्यः अच्छ नयत, (हे) यजत्राः ! नः हव्य-दातिं जुषध्वं, वयं रयीणां पतयः स्याम ।

अर्थ- २७२ हे (वसवः मरुतः !) लोगों को बसानेहारे वीर मरुतो ! (यत् पूर्व्यं) जो पुरातन, पुराना है (यत् च नूतनं) और जो नया है (यत् उद्यते) जो उत्कृष्ट है और (यत् च शस्यते) जो प्रशंसित होता है, (तस्य विश्वस्य) उस सभीके तुम (नवेदसः भवथ) जाननेवाले होओ । (रथाः शुभं०) [मंत्र २६५ वाँ देखिए ।]

२७३ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (नः मृळत) हमें सुखी बनाओ; (मा वधिष्टन) हमें न मार डालो; (अस्मभ्यं) हमें (बहुलं शर्म वि यन्तन) बहुत सारा सुख दे दो और हमारी (स्तोत्रस्य सख्यस्य) स्तुतियोग्य मित्रता को तुम (अधि गातन) जान लो । (रथाः शुभं०) [मंत्र २६५ वाँ देखिए ।]

२७४ हे (गृणानाः मरुतः !) प्रशंसनीय वीर मरुतो ! (यूयं) तुम (अस्मान् अंहतिभ्यः निः) हमें दुर्दशासे दूर हटाकर (वस्यः अच्छ) बसने के लिए योग्य जगह की ओर (नयत) ले चलो । हे (यजत्राः !) यज्ञ करनेवाले वीरो ! (नः हव्य-दातिं) हमारे दिये हुए हविष्यान्नका (जुषध्वं) सेवन करो । (वयं) हम (रयीणां पतयः स्याम) विभिन्न प्रकारके धनों के स्वामी या अधिपति बन जायँ, ऐसा करो ।

भावार्थ- २७२ पुराना हो या नया, जो कुछ भी ऊँचा या वर्णनीय ध्येय है, उसे वीर जान लें और उसके लिए सचेष्ट रहें।

२७३ हमें सुख, आनन्द एवं कल्याण प्राप्त हो, ऐसा करो । जिस से हमारी क्षति हो जाए, ऐसा कुछ भी न करो और हम से मित्रतापूर्ण व्यवहार रखो ।

२७४ हमें वीर पुरुष पापों से बचाएँ और सुखपूर्वक जहाँ निवास कर सकें, ऐसे स्थान तक हमें पहुँचा दें। हम जो कुछ भी हविष्यान्न प्रदान करते हैं, उसे स्वीकार कर हमें भाँति भाँति के धन मिले, ऐसा करना उन्हें उचित है।

टिप्पणी- [२७२] (१) यत् उद्यते = (उत्--यते = ऊर्ध्वं प्राप्यते) (सायणभाष्य) ऊँचा प्राप्तव्य है । (२) नवेदसः = नवेदस् = " नभ्राणनपान्नवेदा० "- पा० सू० ६-३-७५ द्वारा इस पद की सिद्धि की है, पर अर्थ निषेधात्मक दीख पडता है । सायणाचार्यने ' जाननेवाला ' ऐसा अर्थ किया है । ऋ. १-१६५-१३ में ' नवेदाः ' पद है और वहाँपर भी (सा० भा० में) वही अर्थ किया है । ' अनुत्तम ' (सबसे उत्तम) पदके समान ही ' नवेदाः' पदका अर्थ बहुव्रीहि समास से ' अधिक ज्ञानी ' यों करना चाहिए ।

[२७४] (१) अंहतिः = दान, पाप, चिंता, कष्ट, दुःख, आपत्ति, बीमारी ।

(ऋ० ५।५६। १-९)

पिष्टम् । रुक्मेभिः । अञ्जिभिः ।

अग्ने । शर्धन्तम् । आ । गणम् । दिवः । चित् । रोचनात् । अधि ॥१॥

विशः । अद्य । मरुताम् । अव । ह्वये । तत् । इत् । मे । जग्मुः । आऽशसः ।

यथा । चित् । मन्यसे । हृदा । तान् । वर्ध । भीमऽसंदृशः ॥२॥

ये । ते । नेदिष्ठम् । हवनानि । आऽगमन् । मदन्ती । एति । अस्मत् । आ ।

मीळ्हुष्मतीऽइव । पृथिवी । पराऽहता । दुध्रः । गौःऽइव । भीमऽयुः ॥३॥

ऋक्षः । न । वः । मरुतः । शिमीऽवान् । अमः ।

अन्वयः— २७५ (हे) अग्ने ! अद्य शर्धन्तं रुक्मेभिः अञ्जिभिः पिष्टं गणं मरुतां विशः रोचनात् दिवः अधि अव आ ह्वये ।

२७६ हृदा यथा चित् मन्यसे तत् इत् आ-शसः मे जग्मुः, ये ते हवनानि नेदिष्ठं आगमन्, तान् भीम-संदृशः वर्ध ।

२७७ मीळ्हुष्मतीइव पृथिवी पर-अ-हता मदन्ती अस्मत् आ एति, (हे) मरुतः ! वः अमः ऋक्षः न शिमी-वान् दु-ध्रः गौःइव भीम-युः ।

अर्थ- २७५ हे (अग्ने !) अग्ने ! (अद्य) आज दिन (शर्धन्तं) शत्रुविनाशक, (रुक्मेभिः अञ्जिभिः) स्वर्ण-हारों एवं वीरों के आभूषणों से (पिष्टं) अलंकृत (गणं) वीर मरुतों के समुदाय को तथा (मरुतां विशः) मरुतों के प्रजाजनों को (रोचनात् दिवः अधि) प्रकाशमय द्युलोक से (अव आ ह्वये) मैं नीचे बुलाता हूँ।

२७६ हे अग्ने ! तू उन्हें (हृदा यथा चित्) अंतःकरणपूर्वक जैसे पूज्य (मन्यसे) समझता है, (तत् इत्) उसी प्रकार वे (आ-शसः) चतुर्दिक् शत्रुदल की धज्जियाँ उडानेवाले वीर (मे जग्मुः) मेरे निकट आ चुके हैं. (ये) जो (ते) तुम्हारे (हवनानि) हवनों के (नेदिष्ठं) समीप (आगमन्) आ गये, (तान् भीम-संदृशः) उन उग्र-स्वरूपी वीरों को (वर्ध) तू बढा दे।

२७७ (मीळ्हुष्मतीइव) उदार तथा (पर-अ-हता) शत्रुसे पराभूत न हुई और इसीलिए (मदन्ती) हर्षित हुई वीरसेना (अस्मत् आ एति) हमारे निकट आ रही है। हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वः अमः) तुम्हारा बल (ऋक्षः न) सप्तर्षियों के समान (शिमी-वान्) कार्यक्षम तथा (दु-ध्रः) शत्रुओं से घिरे जाने में अशक्य है और (गौःइव) बैल के समान वह (भीम-युः) भयंकर ढंगसे सामर्थ्यवान है।

भावार्थ- २७५ जनता के हित के लिए हम अपने बीच वीरों को बुलाते हैं। वे वीर सैनिक इधर आ जाएँ और अच्छी रक्षा के द्वारा सब को सुखी बना दें।

२७६ पूज्य वीरों को अन्न आदि देकर उनका यथावत् आदरसत्कार करें, तथा जिससे उनकी वृद्धि हो, ऐसे कार्य सम्पन्न करने चाहिए।

२७७ शिकस्त न खायी हुई, उमंग भरी वीर सेना हमें सहायता पहुँचाने के लिए आ रही है। वह प्रबल है; इसीलिए शत्रु उसे घेर नहीं सकते हैं और इसे देख लेने से दर्शकों के मन में तनिक भय का संचार होता है।

टिप्पणी- [२७५] (१) पिष्ट = (पिष्-तेजस्वी करना, व्यवस्थित करना, अलंकृत करना, आकार देना) विभूषित, सजाया हुआ। [२७६] (१) आ-शस् = (शस्-हिंसायाम्) शत्रुका वध, उच्छेद। [२७७] (१) मीळ्हुष्मती = (मीढ्वस्-मती) = उदार, दातृत्वयुक्त, स्नेहयुक्त। (२) शिमी-वान् = (शिमी = प्रयत्न, उद्यम, कर्म) प्रबल, प्रयत्नशील, समर्थ। (३) ऋक्षः = विनाशक, घातक, सप्तर्षि, सर्वोत्तम, अति (म.५.न.)।

(२७८) नि । ये । रिणन्ति । ओजसा । वृथा । गावः । न । दुःऽधुरः ।
अश्मानम् । चित् । स्वर्यम् । पर्वतम् । गिरिम् । प्र । च्यवयन्ति । यामऽभिः ॥४॥
(२७९) उत् । तिष्ठ । नूनम् । एषाम् । स्तोमैः । सम्ऽउक्षितानाम् ।
मरुताम् । पुरुऽतमम् । अपूर्व्यम् । गवाम् । सर्गम्ऽइव । ह्वये ॥५॥
(२८०) युङ्ग्ध्वम् । हि । अरुषीः । रथे । युङ्ग्ध्वम् । रथेषु । रोहितः ।
युङ्ग्ध्वम् । हरी इति । अजिरा । धुरि । वोळ्हवे । वहिष्ठा । धुरि । वोळ्हवे ॥६॥

अन्वयः— २७८ दुर्-धुरः गावः न ये ओजसा वृथा नि रिणन्ति यामभिः अश्मानं गिरिं स्वर्-यं पर्वतं चित् प्र च्यवयन्ति ।

२७९ उत् तिष्ठ, नूनं स्तोमैः सम्-उक्षितानां एषां मरुतां पुरु-तमं अ-पूर्व्यं गवां सर्गंइव ह्वये ।

२८० रथे हि अरुषीः युङ्ग्ध्वं, रथेषु रोहितः युङ्ग्ध्वं, अजिरा वहिष्ठा हरी वोळ्हवे धुरि वोळ्हवे धुरि युङ्ग्ध्वं ।

अर्थ- २७८ (दुर्-धुरः गावः न) जीर्ण धुराका नाश जैसे बैल करते हैं, उसी प्रकार (ये) जो वीर (ओजसा) अपनी सामर्थ्य से शत्रुओं का (वृथा) आसानी से विनाश करते हैं, वे (यामभिः) हमलों से (अश्मानं गिरिं) पथरीले पहाडों को तथा (स्वर्-यं पर्वतं चित्) आकाशचुम्बी पहाडों को भी (प्र च्यवयन्ति) स्थानभ्रष्ट कर देते हैं ।

२७९ (उत् तिष्ठ) उठो, (नूनं) सचमुच (स्तोमैः) स्तोत्रों से (सम्-उक्षितानां) इकट्ठे बढे हुए (एषां मरुतां) इन वीर मरुतों के (पुरु-तमं) बहुतही बडे (अ-पूर्व्यं) एवं अपूर्व गण की, (गवां सर्गं इव) बैलों के समूह की जैसे प्रार्थना की जाती है, वैसे ही (ह्वये) मैं प्रार्थना करता हूँ ।

२८० तुम अपने (रथे हि) रथ में (अरुषीः) लालिमामय हरिणियाँ (युङ्ग्ध्वं) जोड दो और अपने (रथेषु) रथ में (रोहितः) एक लालवर्णवाला हरिण (युङ्ग्ध्वं) लगा दो, या (अजिरा) वेगवान (वहिष्ठा हरी) ढोने की क्षमता रखनेवाले दो घोडों को रथ (वोळ्हवे धुरि वोळ्हवे धुरि) खींचने के लिए धुरा में (युङ्ग्ध्वं) जोड दो ।

भावार्थ- २७८ अपनी शक्ति के सहारे वीर शत्रुओं का वध करते हैं और पर्वतश्रेणी को भी जगह से हिला देते हैं ।

२७९ मैं वीरों की सराहना करता हूँ । (वीरों के काव्य का गायन करता हूँ ।)
२८० रथ खींचने के लिए घोडे, हिरनियाँ या हरिण रखते हैं ।

टिप्पणी- [२७८] (१) स्वर्-यः = स्वर्ग तक पहुँचा हुआ, आकाश को छूनेवाला, । (२) दुर्-धुर् = बुरी धुरा, जीर्ण धुरा ।

[२७९] (१) सम्-उक्षित = संवर्धित, (सम्) एकतापूर्वक (उक्षित) बलवान बनाया हुआ ।

[२८०] (१) अरुषी = (अरुष = लालिमामय) रक्तिम वर्णवाली (घोडी-हिरनी) अ-रुषी = (रुष् = क्रोध करना) = शांत प्रकृति की (हरिणी) । (२) अजिर = (अज् गतौ) वेगवान् । (रथों में हरिणी या कृष्ण-सार जोडने का उल्लेख मंत्र ७३ तथा ७४ की टिप्पणी में देखिए ।)

(२८१) उत । स्यः । वाजी । अरुषः । तुविऽस्वनिः । इह । स्म । धायि । दर्शतः ।
मा । वः । यामेषु । मरुतः । चिरम् । करत् । प्र । तम् । रथेषु । चोदत ॥७॥
(२८२) रथम् । नु । मारुतम् । वयम् । श्रवस्युम् । आ । हुवामहे ।
आ । यस्मिन् । तस्थौ । सुऽरणानि । बिभ्रती । सचा । मरुत्ऽसु । रोदसी ॥८॥
(२८३) तम् । वः । शर्धम् । रथेऽशुभम् । त्वेषम् । पनस्युम् । आ । हुवे ।
यस्मिन् । सुऽजाता । सुऽभगा । महीयते । सचा । मरुत्ऽसु । मीळ्हुषी ॥९॥

अन्वयः— २८१ उत स्यः अरुषः तुवि-स्वनिः दर्शतः वाजी इह धायि स्म, (हे) मरुतः! वः यामेषु चिरं मा करत्, तं रथेषु प्र चोदत।

२८२ यस्मिन् सु-रणानि बिभ्रती रोदसी मरुत्सु सचा आ तस्थौ (तं) श्रवस्युं मारुतं रथं वयं आ हुवामहे।

२८३ यस्मिन् सु-जाता सु-भगा मीळ्हुषी मरुत्सु सचा महीयते तं वः रथे-शुभं त्वेषं पनस्युं शर्धं आ हुवे।

अर्थ- २८१ (उत) सचमुच (स्यः) वह (अरुषः) रक्तिम आभासे युक्त (तुवि-स्वनिः) बडे जोरसे हिनहिनानेवाला (दर्शतः) देखनेयोग्य (वाजी) घोडा (इह) इस रथकी धुरा में (धायि स्म) जोडा गया है। हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (वः यामेषु) तुम्हारी चढाइयों में वह (चिरं मा करत्) विलम्ब न करेगा, (तं) उसे (रथेषु प्र चोदत) रथों में बैठकर भली भाँति हाँक दो।

२८२ (यस्मिन्) जिसमें (सु-रणानि) अच्छे रमणीय वस्तुओंको (बिभ्रती) धारण करनेवाली (रोदसी) द्यावापृथिवी (मरुत्सु सचा) वीर मरुतों के साथ (आ तस्थौ) बैठी हुई हैं, उस (श्रवस्-युं) कीर्तिको समीप करनेवाले (मारुतं रथं) वीर मरुतों के रथका (वयं आ हुवामहे) वर्णन हम सभी तरह से कर रहे हैं।

२८३ (यस्मिन्) जिस में (सु-जाता) भली भाँति उत्पन्न, (सु-भगा) अच्छे भाग्यसे युक्त एवं (मीळ्हुषी) उदार द्यावापृथिवी (मरुत्सु सचा) वीर मरुतों के साथ (महीयते) महत्त्व को प्राप्त होती है, (तं) उस (वः) तुम्हारे (रथे-शुभं) रथ में सुहानेवाले (त्वेषं) तेजस्वी और (पनस्युं) सराहनीय (शर्धं) बलको (आ हुवे) ठीक प्रकार में प्रार्थना करता हूँ।

भावार्थ-२८१ रथको शीघ्रही अश्वयुक्त करके शीघ्र चलनेके लिए उन्हें प्रेरणा करो और बहुत जल्द दुश्मनों पर धावा करो।

२८२ द्यावापृथिवी अच्छे रमणीय वस्तुओं को धारण करके जिनके आधार से टिकी हैं, उन मरुतों के विजयी रथ का काव्य हम रचते हैं तथा गायन भी करते हैं।

२८३ जिसमें समूचा भाग्य समाया हुआ है, ऐसे तेजस्वी मरुतोंके दिव्य बलको सराहना मैं करता हूँ।

टिप्पणी- [२८१] (१) तं रथेषु प्र चोदत- यहाँ पर ऐसा दीख पडता है कि, एक वचन के लिए 'रथेषु' बहुवचन का प्रयोग किया गया है अथवा हरएक मरुत् के रथ की इसी भाँति योजना होने के कारन यह बहुवचन का प्रयोग बिलकुल सार्थ है, ऐसा कहा जा सकता है।

[२८२] (१) रणः-णं = युद्ध, समरभूमि, आनंद, रमणीयता। (२) श्रवस्-युः = कीर्ति से संयुक्त होनेवाला, यश से सुहानेवाला।

[२८३] (१) सु-जात = अच्छी तरह बना हुआ, कुलीन, उत्तम ढंगसे प्रकट हुआ या निर्मित। (२) सु-भग = वैभवशाली, भाग्ययुक्त, अच्छे भाग्यवाला।

(ऋ० ५।५।१-८)

(२८४) आ । रुद्रासः । इन्द्रऽवन्तः । सऽजोषसः । हिरण्यऽरथाः । सुविताय । गन्तन ।
इयम् । वः । अस्मत् । प्रति । हर्यते । मतिः । तृष्णऽजे । न । दिवः । उत्साः । उदन्यवे ॥१॥
(२८५) वाशीऽमन्तः । ऋष्टिऽमन्तः । मनीषिणः । सुऽधन्वानः । इषुऽमन्तः । निषङ्गिणः ।
सुऽअश्वाः । स्थ । सुऽरथाः । पृश्निऽमातरः । सुऽआयुधाः । मरुतः । याथन । शुभम् ॥२॥
(२८६) धूनुथ । द्याम् । पर्वतान् । दाशुषे । वसु । नि । वः । वना । जिहते । यामनः । भिया ।
कोपयथ । पृथिवीम् । पृश्निऽमातरः । शुभे । यत् । उग्राः । पृषतीः । अयुग्ध्वम् ॥३॥

अन्वयः— २८४ (हे) इन्द्र-वन्तः स-जोषसः हिरण्य-रथाः रुद्रासः! सुविताय आ गन्तन, इयं अस्मत् मतिः वः प्रति हर्यते, (हे) दिवः! तृष्णजे उदन्यवे उत्साः न।

२८५ (हे) पृश्नि मातरः मरुतः! वाशी-मन्तः ऋष्टि-मन्तः मनीषिणः सु-धन्वानः इषु-मन्तः निषङ्गिणः सु-अश्वाः सु-रथाः सु-आयुधाः स्थ शुभं याथन।

२८६ दाशुषे वसु द्यां पर्वतान् धूनुथ, वः यामनः भिया वना नि जिहते, (हे) पृश्नि-मातरः! शुभे यत् उग्राः पृषतीः अयुग्ध्वं पृथिवीं कोपयथ।

अर्थ- २८४ हे (इन्द्र-वन्तः) इन्द्रके साथ रहनेवाले, (स-जोषसः) प्रेम करनेहारे, (हिरण्य-रथाः) सुवर्ण के बनाये रथ रखनेवाले तथा (रुद्रासः!) शत्रु को रुलानेवाले वीरो! (सुविताय) हमारे वैभव को बढाने के लिए (आ गन्तन) हमारे समीप आओ। (इयं अस्मत् मतिः) यह हमारी स्तुति (वः प्रति हर्यते) तुममें से हरेक की पूजा करती है। हे (दिवः!) तेजस्वी वीरो! जिस प्रकार (तृष्णजे) प्यासे और (उदन्-यवे) जलको चाहनेवालेके लिए (उत्साः न) जलकुंड रखे जाते हैं, उसी प्रकार हमारे लिए तुम हो।

२८५ हे (पृश्नि-मातरः मरुतः!) भूमि को माता माननेवाले वीर मरुतो! तुम (वाशी-मन्तः) कुठारसे युक्त, (ऋष्टि-मन्तः) भाले धारण करनेवाले, (मनीषिणः) अच्छे ज्ञानी, (सु-धन्वानः) सुन्दर धनुष्य साथ रखनेहारे, (इषु-मन्तः) बाण रखनेवाले, (निषङ्गिणः) तूणीरवाले, (सु-अश्वाः सु-रथाः) अच्छे घोडों तथा रथोंसे युक्त एवं (सु-आयुधाः) अच्छे हथियार धारण करनेहारे (स्थ) हो और इसी लिए तुम (शुभं) लोककल्याण के लिए (वि याथन) जाते हो।

२८६ (दाशुषे) दानी को (वसु) धन देनेके लिए जब तुम चढाई करते हो तब (द्यां) द्युलोक को और (पर्वतान्) पहाडोंको भी तुम (धूनुथ) हिला देते हो। उस (वः) तुम्हारे (यामनः भिया) हमले के डरसे (वना) अरण्य भी (नि जिहते) बहुतही काँपने लगते हैं। हे (पृश्नि-मातरः!) भूमिको माता समझनेवाले वीरो! (शुभे) लोककल्याण के लिए (यत्) जब तुम (उग्राः) उग्र स्वरूपवाले और बन (पृषतीः) धब्बेवाली हरिणियाँ रथों में (अयुग्ध्वं) जोडते हो, तब (पृथिवीं कोपयथ) भूमिको क्षुब्ध कर डालते हो।

भावार्थ- २८४ वीर हमारे पास आ जायँ और प्यासे हुए लोगोंको जल दें और हमारी वाणी उनका काव्यगायन करें। २८५ सभी भाँति के शस्त्रास्त्रों एवं हथियारोंसे सुसज्ज बनकर ये वीर शत्रुदल पर भीषण आक्रमण का सूत्रपात करते हैं। २८६ वीर सैनिक हाथ में शस्त्रास्त्र लेकर जब सज्ज होते हैं तब सभी लोग सहम जाते हैं।

टिप्पणी- [२८४] (१) इन्द्रः = इन्द्र, राजा, ईश्वर, श्रेष्ठ, प्रभु। इन्द्रवन्तः = राजा के साथ रहनेवाले वीर, जिनका प्रभु इन्द्र हो। (२) सुवित = सुदैव, कल्याण, वैभव की समृद्धि। (३) स-जोषसः = (समानप्रीतयः) एक दूसरे पर समान प्रीति करनेवाले, समान उत्साही।

(२८७) वार्तऽत्विषः । मुरुतः । वुर्षऽनिर्निजः । युमाःऽइव । सुऽसंदृशः । सुऽपेशसः ।
पिशङ्गऽअश्वाः । अुरुणऽअश्वाः । अुरेपसः । प्रऽत्वंक्षसः । मुहिना । द्यौःऽइव । उुरवः ॥४॥
(२८८) पुरुऽद्रुप्साः । अुञ्जिऽमन्तः । सुऽदानवः । त्वेषऽसंदृशः । अनवभ्रऽराधसः ।
सुऽजातासः । जनुषा । रुक्मऽवंक्षसः । दिवः । अर्काः । अमृतम् । नाम । भेजिरे ॥५॥
(२८९) ऋष्टयः । वुः । मरुतः । अंसयोः । अधि । सहः । ओजः । बाह्वोः । वुः । बलम् । हितम् ।
नृम्णा । शीर्षऽसु । आयुधा । रथेषु । वुः । विश्वा । वुः । श्रीः । अधि । तनूषु । पिपिशे ॥६॥

अन्वयः- २८७ मरुतः वात-त्विषः वर्ष-निर्णिजः यमाःइव सु-सदृशः सु-पेशसः पिशङ्ग-अश्वाः अरुण-अश्वाः अ-रेपसः प्र-त्वक्षसः महिना द्यौःइव उरवः। २८८ पुरु-द्रप्साः अञ्जि-मन्तः सु-दानवः त्वेष-संदृशः अन्-अवभ्र-राधसः जनुषा सु-जातासः रुक्म-वक्षसः दिवः अर्काः अ-मृतं नाम भेजिरे। २८९ (हे) मरुतः! वः अंसयोः ऋष्टयः, वः बाह्वोः सहः ओजः बलं अधि हितं, शीर्षसु नृम्णा, वः रथेषु विश्वा आयुधा, वः तनूषु श्रीः अधि पिपिशे।

अर्थ- २८७ (मरुतः) वीर मरुत् (वात-त्विषः) प्रखर तेजसे युक्त, (वर्ष-निर्णिजः) स्वदेशी कपडा पहननेवाले हैं। (यमाःइव) यमज भाई के समान (सु-सदृशः) बिलकुल तुल्यरूप तथा (सु-पेशसः) सुन्दर रूपवाले हैं। वे (पिशङ्ग-अश्वाः) भूरे रंगके एवं (अरुण-अश्वाः) लाल रंगके घोडे समीप रखनेवाले, (अ-रेपसः) पापरहित तथा (प्र-त्वक्षसः) शत्रुओंका पूर्ण विनाश करनेवाले, अपने (महिना) महत्त्व के कारण (द्यौःइव उरवः) आकाश के तुल्य बडे हुए हैं। २८८ (पुरु-द्रप्साः) यथेष्ट जल समीप रखनेवाले, (अञ्जि-मन्तः) वस्त्रालंकार-गणवेश-धारण करनेवाले, (सु दानवः) दानशूर, (त्वेष-संदृशः) तेजस्वी दीख पडनेवाले, (अन्-अवभ्र-राधसः) जिनका धन कोई छीन नहीं ले जा सकता ऐसे, (जनुषा सु जातासः) जन्मसे उत्तम परिवारमें उत्पन्न (रुक्म-वक्षसः) सुवर्णके अलंकार छाती पर धरनेहारे, (दिवः) तेजःपुञ्ज तथा (अर्काः) पूजनीय वीर (अ-मृतं नाम भेजिरे) अमर कीर्ति पा चुके। २८९ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (वः अंसयोः ऋष्टयः) तुम्हारे कंधों पर भाले रखे हैं। (वः बाह्वोः) तुम्हारी भुजाओं में (सहः ओजः) शत्रु को पराभूत करनेका बल तथा (बलं) सामर्थ्य (अधि हितं) रखा हुआ है। (शीर्षसु) माथों पर (नृम्णा) सुवर्णमय शिरोवेष्टन, (वः रथेषु) तुम्हारे रथों में (विश्वा आयुधा) सभी हथियार विद्यमान हैं। (वः तनूषु) तुम्हारे शरीरों पर (श्रीः अधि पिपिशे) तेज अत्यधिक शोभा बढा रहा है।

भावार्थ- २८७ जो वीर शत्रुका नाश करते हैं, वे अपने प्रभावसे ही बडप्पनको प्राप्त होते हैं। २८८ वीर सैनिक साहस करके बडी भारी यशस्विता एवं ख्याति प्राप्त करें। २८९ वीर सैनिक तथा उनके रथ हथियारोंसे सदैव सुसज्ज रहते हैं।

टिप्पणी- [२८७] (१) वात = (वा गतिगन्धनयोः) फूंका हुआ, भडकाया (प्रखर) वायु। (२) वर्ष = वरसात, देश, राष्ट्र। निर्णिक् = वस्त्र, आच्छादन। वर्ष-निर्णिज् = (१) वर्षा जिनका पहनावा है। (२) स्वदेशी पहनावा करनेवाले। मरुत् भूमिको माता समझनेवाले (पृश्नि-मातरः) हैं, इसलिए अपने देशमें बना हुआ कपडा ही पहनते हैं। यह अर्थ अधिभूतपक्ष में संभवनीय है। अधिदैवत पक्षमें मरुत् आँधी के वायुप्रवाह हैं, जिनका पहनावा वर्षा है। दोनों स्थलोंमें अर्थका भेद आसानीसे ध्यानमें आ सकता है। [२८८] (१) द्रप्स = गिर पडना, बिन्दु, जल-बिन्दु (Drops)। पुरु-द्रप्स = समीप यथेष्ट जल रखनेवाले, पानीसे तर। [२८९] (१) नृम्णं = पौरुष, बल, धैर्य, धन, पगडी (साफा)। इस मंत्र से प्रतीत होता है कि, मरुतोंका रथ बहुत ही विशाल तथा भाण्डागार सा रहा हो। क्योंकि इस रथ पर (विश्वा आयुधा) सभी शस्त्रास्त्र रखे जाते हैं, फिर धनुष्य (मंत्र २१) तथा बडे धनुष्य भी पाये जाते हैं। युद्धस्थल के वीर धनुष्य की डोरियाँ खींचने पर तुले रहते हैं और कभी कभी धनुष्यके भी टूट जाने

(२९०) गोऽमत् । अश्वंऽवत् । रथंऽवत् । सुऽवीरम् । चन्द्रऽवत् । राधः । मरुतः । दुद । न
प्रऽशस्तिम् । नः । कृणुत । रुद्रियासः । भक्षीय । वः । अवसः । दैव्यस्य ॥७॥

(२९१) हये । नरः । मरुतः । मृळत । नः । तुविऽमघासः । अमृताः । ऋतऽज्ञाः ।
सत्यऽश्रुतः । कवयः । युवानः । बृहत्ऽगिरयः । बृहत् । उक्षमाणाः ॥८॥

(ऋ० ५।५८।१-८)

(२९२) तम् । ऊँ इति । नूनम् । तविषीऽमन्तम् । एषाम् । स्तुषे । गणम् । मारुतम् । नव्यसीनाम्
ये । आशुऽअश्वाः । अमऽवत् । वहन्ते । उत । ईशिरे । अमृतस्य । स्वऽराजः ॥१॥

अन्वयः— २९० (हे) मरुतः ! गो-मत् अश्व-वत् रथ-वत् सु-वीरं चन्द्र-वत् राधः नः दद, (हे) रुद्रियासः ! नः प्र-शस्तिं कृणुत, वः दैव्यस्य अवसः भक्षीय। २९१ हये नरः मरुतः ! तुवि-मघासः अ-मृताः ऋत-ज्ञाः सत्य-श्रुतः कवयः युवानः बृहत्-गिरयः बृहत् उक्षमाणाः नः मृळत। २९२ स्व-राजः ये आशु-अश्वाः अम-वत् वहन्ते उत अ-मृतस्य ईशिरे तं उ नूनं एषां नव्यसीनां मारुतं तविषी-मन्तं गणं स्तुषे

अर्थ- २९० हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (गो-मत्) गौओं से युक्त, (अश्व-वत्) घोडों से युक्त, (रथ-वत्) रथों से युक्त, (सु-वीरं) वीरों से परिपूर्ण तथा (चन्द्र-वत्) सुवर्ण से युक्त, (राधः) अन्न (नः दद) हमें दे दो। हे (रुद्रियासः !) वीरो ! (नः) हमारी (प्र-शस्तिं) वैभवशालिता (कृणुत) करो। (वः) तुम्हारी (दैव्यस्य अवसः) दिव्य संरक्षणशक्ति का हम (भक्षीय) सेवन कर सकें ऐसा करो।

२९१ (हये नरः मरुतः !) हे नेता एवं वीर मरुतो ! (तुवि-मघासः) बहुत सारे धनसे युक्त, (अ-मृताः) अमर, (ऋतज्ञाः) सत्य को जाननेवाले, (सत्य-श्रुतः) सत्य कीर्ति से युक्त, (कवयः युवानः) ज्ञानी एवं युवक, (बृहत्-गिरयः) अत्यन्त सराहनीय और (बृहत् उक्षमाणाः) प्रचंड बल से युक्त तुम (नः मृळत) हमें सुखी बनाओ।

२९२ (स्व-राजः) स्वयंशासक ऐसे (ये) जो वीर (आशु-अश्वाः) वेगवान घोडों को समीप रखनेवाले हैं, इसलिए (अम-वत् वहन्ते) अतिवेग से चले जाते हैं, (उत) और जो (अ-मृतस्य ईशिरे) अमर लोक पर प्रभुत्व प्रस्थापित करते हैं (तं उ नूनं) उस सचमुच (एषां) इन (नव्यसीनां) सराहनीय (मारुतं) वीर मरुतों के (तविषी-मन्तं गणं स्तुषे) वलिष्ठ गण-संघ की तू स्तुति कर है।

भावार्थ- २९० हर तरह से सहायता करके और हमारा संरक्षण करके वीर हमारी प्रगति में मददगार हों। हमें अन्न की प्राप्ति ऐसी हो कि जिसके साथ गौ, रथ, अश्व एवं वीर सैनिक की समृद्धि हो जाय।

२९१ ऐसे वीर जनता का संरक्षण कर हम सब को सुखी बना दें।

२९२ जो वीर वन्दनीय हों उनकी प्रशंसा सभी को करनी चाहिए। येही वीर इहलोक तथा परलोक पर प्रभुत्व प्रस्थापित करने की क्षमता रखते हैं।

की संभावना होने के कारण बहुत से धनुष्य रखना अनिवार्य हो, तो आश्चर्य नहीं। वैसे ही कुल्हाडी, भाला, गदा तथा अन्य हथियार रथ में ही रखने पडते थे। अतः रथ बहुत बडा हो, तो स्वाभाविक है। ये सभी आयुध भली भाँति पृथक् पृथक् रखने चाहिए और प्रबंध ऐसा हो कि चाहे जो हथियार ठीक मौके पर हाथमें आ जाय। यदि इस व्यवस्थाको मानें तो यह स्पष्ट है कि, इन महारथियोंका रथ अत्यन्त विशाल प्रमाण पर बना हुआ होगा। [२९०]

(१) चन्द्र = कपूर, जल, सोना, चन्द्रमा। (२) प्र-शस्ति = स्तुति, वर्णन, मार्गदर्शकता, उत्कृष्टता (वैभव)। [२९१] (१) मघं = दान, धन, महत्त्वयुक्त द्रव्य। (२) गिरि = पर्वत, वाणी, स्तुति, आदरणीय, माननीय। [२९२] (१) स्व-राज् = (राज् दीप्तौ = प्रकाशना, अधिकार प्रस्थापित करना) स्वयंशासक, स्वयंप्रकाश। (२) नव्यसीनां (णु स्तुतौ = प्रशंसा करना; नवितुं योग्यः नव्यः।)=नूतन, सराहनीय। (३) अ-मृत = अमर, अमरपन, देव, स्वर्ग, कांति।

(२९३) त्वेषम् । गणम् । तवसम् । खादिऽहस्तम् । धुनिऽव्रतम् । मायिनम् । दातिऽवारम् ।
मयःऽभुवः । ये । अमिताः । महिऽत्वा । वन्दस्व । विप्र । तुविऽराधसः । नॄन् ॥२॥
(२९४) आ । वः । यन्तु । उदऽवाहासः । अद्य । वृष्टिम् । ये । विश्वे । मरुतः । जुनन्ति ।
अयम् । यः । अग्निः । मरुतः । संऽइद्धः । एतम् । जुषध्वम् । कवयः । युवानः ॥३॥
(२९५) यूयम् । राजानम् । इर्यम् । जनाय । विभ्वऽतष्टम् । जनयथ । यजत्राः ।
युष्मत् । एति । मुष्टिऽहा । बाहुऽजूतः । युष्मत् । सत्ऽअश्वः । मरुतः । सुऽवीरः ॥४॥

अन्वयः— २९३ हे (विप्र !) ये मयो-भुवः महित्वा अ-मिताः तुवि-राधसः नॄन्, तवसं खादि-हस्तं धुनि-व्रतं मायिनं दाति-वारं त्वेषं गणं वन्दस्व। २९४ ये उद-वाहासः वृष्टिं जुनन्ति विश्वे मरुतः अद्य वः आ यन्तु, (हे) कवयः युवानः मरुतः ! यः अयं अग्निः सम्-इद्धः एतं जुषध्वं। २९५ (हे) यजत्राः मरुतः ! यूयं जनाय इर्यं विभ्व-तष्टं राजानं जनयथ, युष्मत् मुष्टि-हा बाहु-जूतः एति युष्मत् सत्-अश्वः सु-वीरः।

अर्थ- २९३ हे (विप्र !) ज्ञानी पुरुष ! (ये मयो-भुवः) जो सुखदायक, (महित्वा) बडप्पन से (अ-मिताः) असीम सामर्थ्यवान तथा (तुवि-राधसः) यथेष्ट धनाढ्य हैं, उन (नॄन्) नेता वीरपुरुषों को तथा (तवसं) बलिष्ठ एवं (खादि-हस्तं) हाथ में वलय-कडे धारण करनेवाले, (धुनि-व्रतं) शत्रुओं को हिला देने का व्रत जिन्होंने ले लिया हो, ऐसे (मायिनं) कुशल (दाति वारं) दानी या शत्रु का वध करके उसे दूर करनेवाले, (त्वेषं) तेजस्वी ऐसे उन वीरों के (गणं वन्दस्व) संघ को नमन कर।

२९४ (ये उद-वाहासः) जो जल देनेवाले (वृष्टिं जुनन्ति) वृष्टि को प्रेरणा देते हैं, वे (विश्वे मरुतः) सभी वीर मरुत् (अद्य) आज (वः) तुम्हारी ओर (आ यन्तु) आ जायँ। हे (कवयः) ज्ञानी तथा (युवानः मरुतः !) युवक वीर मरुतो ! (यः अयं) जो यह (अग्निः सम्-इद्धः) अग्नि प्रज्वलित किया गया है, (एतं जुषध्वं) इसका सेवन करो।

२९५ हे (यजत्राः मरुतः !) यज्ञ करनेवाले वीर मरुतो ! (यूयं) तुम (जनाय) लोक-कल्याण के लिए (इर्यं) शत्रुविनाशक तथा (विभ्व-तष्टं) कुशलतापूर्वक कार्य करनेहारे (राजानं) राजा को (जनयथ) उत्पन्न कर देते हो। (युष्मत्) तुमसे (मुष्टि हा) मुष्टि-योधी और (बाहु-जूतः) बाहुबल से शत्रु को हटानेवाला वीर (एति) आ जाता है, हमें प्राप्त होता है। (युष्मत्) तुमसे ही (सत्-अश्वः) अच्छे घोडे रखनेवाला (सु-वीरः) अच्छा वीर तैयार हो जाता है।

भावार्थ- २९३ सभी लोग ऐसे वीरोंका अभिवादन करें। २९४ सबको जल देकर संतुष्ट करनेवाले वीर जनताके निकट आकर उन्हें संतुष्ट करें और वहीं पर जलती या धधकती हुई अँगीठीके समीप बैठ जायँ। २९५ जनताका हित हो इसलिए दुश्मनों को विनष्ट करनेवाला, कुशलतापूर्वक सभी राज्यशासनके कार्य करनेवाला नरेश राष्ट्रपतिकी हैसियतसे पदाधिकारी चुना जाता है। उसी प्रकार मुष्टियोधी महाबाहु वीर तथा अच्छे घोडे समीप रखनेवाला वीर भी राष्ट्रमें जन्म ले लेता है।

टिप्पणी- [२९३] (१) व्रत = शपथ, वचन, निश्चय, कृत्य, योजना। धुनि-व्रत = शत्रुदल को हिलाने का व्रत जिसने लिया हो। (२) दाति वारः = (दातिः = देन, वारः = बडा प्रमाण, समूह) बडे पैमाने पर दान देनेवाला; (दा अवखण्डने) दाति,] वध करके [वार] निवारक, शत्रुको हटानेवाला। [२९४] (१) उद-वाह = जल ढोनेवाला, मेघ, पानी पहुँचानेवाला। [२९५] (१) इर्य = प्रेरक, स्वामी, चपल, शक्तिमान; (शत्रुओंका) विनाश करनेहारा। (२) राजानं इर्यं = तेजस्वी राजा को (प्रभु को)। (३) विभ्व-तष्ट = (विभ्वः = कुशल, कारीगर, व्यापक); (तष्ट) = (तक्ष् तनूकरणे = बनाना.) कुशलतापूर्वक कार्य करनेहारा। (विभ्वः) चतुर तथा निष्णात शिक्षकों द्वारा सिखाकर (तष्टः) तैयार किया हुआ।

(२९६) अराःऽइव । इत् । अचरमाः । अहाऽइव । प्रऽप्र । जायन्ते । अकवा । महःऽभिः
पृश्नेः । पुत्राः । उपऽमासः । रभिष्ठाः । स्वया । मत्या । मरुतः । सम् । मिमिक्षुः ॥५
(२९७) यत् । प्र । अयासिष्ट । पृषतीभिः । अश्वैः । वीळुपविऽभिः । मरुतः । रथेभिः ।
क्षोदन्ते । आपः । रिणते । वनानि । अव । उस्रियः । वृषभः । क्रन्दतु । द्यौः ॥६
(२९८) प्रथिष्ट । यामन् । पृथिवी । चित् । एषाम् । भर्ताऽइव । गर्भम् । स्वम् । इत् । शवः । धुः
वातान् । हि । अश्वान् । धुरि । आऽयुयुज्रे । वर्षम् । स्वेदम् । चक्रिरे । रुद्रियासः ॥७॥

अन्वयः— २९६ अराःइव इत् अ-चरमाः अहाइव महोभिः अ-कवाः प्र प्र जायन्ते, उप मासः रभिष्ठा पृश्नेः पुत्राः स्वया मत्या सं मिमिक्षुः । २९७ (हे) मरुतः ! यत् पृषतीभिः अश्वैः वीळु-पविभिः रथेभि प्र अयासिष्ट आपः क्षोदन्ते वनानि रिणते, उस्रियः वृषभः द्यौः अव क्रन्दतु । २९८ एषां यामन् पृथिवी चित् प्रथिष्ट, भर्ताइव गर्भं स्वं इत् शवः धुः, हि वातान् अश्वान् धुरि आयुयुज्रे रुद्रियासः स्वेदं वर्षं चक्रिरे।

अर्थ— २९६ (अराःइव इत्) पहिये के आरों के समानही (अ-चरमाः) सभी समान दीख पडनेवाले तथा (अहाइव) दिवसतुल्य (महोभिः) बडे भारी तेजसे युक्त होकर (अ-कवाः) अवर्णनीय ठहरनेवाले ये वीर (प्र प्र जायन्ते) प्रकट होते हैं। (उप-मासः) लगभग समान कदके (रभिष्ठाः) अतिवेगवान ये (पृश्नेः पुत्राः) मातृभूमि के सुपुत्र (मरुतः) वीर मरुत् (स्वया मत्या) अपने मनसे ही (सं मिमिक्षुः) सब कोई मिलकर एकतापूर्वक विशेष कार्य का सृजन करते हैं।

२९७ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (यत्) जब (पृषतीभिः अश्वैः) धब्बेवाले घोडे जोते हुए (वीळु-पविभिः) दृढ तथा सामर्थ्यवान पहियोंसे युक्त (रथेभिः) रथोंसे तुम (प्र अयासिष्ट) जाने लगते हो तब (आपः क्षोदन्ते) सभी जलप्रवाह क्षुब्ध हो उठते हैं, (वनानि रिणते) वनोंका नाश होता है, तथा (उस्रियः वृषभः) प्रकाशयुक्त वर्षा करनेहारा, (द्यौः) आकाश तक (अव क्रन्दतु) भीषण शब्दसे गूँज उठता है।

२९८ (एषां यामन्) इन वीरों के आक्रमण से (पृथिवी चित्) भूमितक (प्रथिष्ट) विख्यात हो चुकी है। (भर्ता इव) पति जैसे पत्नी में (गर्भं) गर्भ की स्थापना करता है, वैसे ही इन्होंने (स्वं इत्) अपनाही (शवः धुः) बल अपने राष्ट्र में प्रस्थापित किया (हि) और (वातान् अश्वान्) वेगवान् घोडों को (धुरि आ युयुज्रे) रथ के अगले भाग में जोत दिया और (रुद्रियासः) उन वीरोंने (स्वेदं वर्षं चक्रिरे) अपने पसीने की मानों वर्षासी की, पराक्रम की पराकाष्ठा कर दिखायी।

भावार्थ- २९६ ये सभी वीर तुल्यरूप दीख पडते हैं और समान ढंगके तेजस्वी हैं। वे अपना कर्तव्य वेगसे पूर्ण कर देते हैं और अपनी मातृभूमिकी सेवामें मिलजुलकर अविषम भावसे विशिष्ट कार्यको संपन्न कर देते हैं। २९७ जब मरुत् शत्रुदल पर हमले चढाने लगते हैं, याने वायु बहने लगती है, उस समय जलप्रवाह बौखला उठते हैं, वन के पेड टूट गिरने लगते हैं और आकाश के वर्षा करनेहारे मेघ भी गरजने लगते हैं। २९८ इन वीरों के शत्रुदल पर होनेवाले आक्रमणों के फलस्वरूप मातृभूमि विख्यात हुई। इन्होंने अपना बल राष्ट्र में प्रस्थापित किया और घोडों से रथ संयुक्त करके जब ये चढाई करने लगे, तब (इस युद्ध में) पसीने से तर होने तक वीरतापूर्ण कार्य करते रहे।

टिप्पणी- [२९६] (१) चरम = अंतिम, निम्न श्रेणीका (छोटासा, अल्प प्रमाण का) । अ-चरम = बडा, तुल्य, निम्न श्रेणीका नहीं। (२) अ-कवाः (कव् = वर्णन करना)= अवर्णनीय अदुष्ट, अकुत्सित । (३) सं-मिह् = सं-मिक्ष् = मिलावट करना (To mix with), निर्माण करना (endow with, to prepare, to furnish) तयार करना, सुसज्ज बनाना। उपमासः रभिष्ठाः पृश्नेः पुत्राः स्वया मत्या संमिमिक्षुः = ये मातृभूमि के सुपुत्र वीर समानतापूर्ण बर्ताव करते हैं अविषम दशामें रहते हैं और अपने कर्तव्यको ऐक्यसे निभाते हैं। देखो मंत्र ३०५, ४४३; जिनमें साम्यभावका वर्णन किया है। [२९७] (१) उस्रियः=गौविषयक, बैलके बारेमें, बैल, प्रकाश, दूध, बछडा।

(२९९) हुये । नरः । मरुतः । मृळत । नः । तुविऽमघासः । अमृताः । ऋतऽज्ञाः ।
सत्यऽश्रुतः । कवयः । युवानः । बृहत्ऽगिरयः । बृहत् । उक्षमाणाः ॥८॥

(ऋ० ५।५७।८)

(३००) प्र । वः । स्पट् । अक्रन् । सुविताय । दावने । अर्च । दिवे । प्र । पृथिव्यै । ऋतम् । भरे ।
उक्षन्ते । अश्वान् । तरुषन्ते । आ । रजः । अनु । स्वम् । भानुम् । श्रथयन्ते । अर्णवैः ॥१॥

(३०१) अमात् । एषाम् । भियसा । भूमिः । एजति । नौः । न । पूर्णा । क्षरति । व्यथिः । यती ।
दूरेऽदृशः । ये । चितयन्ते । एमऽभिः । अन्तः । महे । विदथे । येतिरे । नरः ॥२॥

अन्वयः— २९९ [ऋ० ५।५७।८: २२१ देखिए ।] ३०० वः सुविताय दावने स्पट् प्र अक्रन्, दिवे अर्च, पृथिव्यै ऋतं प्र भरे, अश्वान् उक्षन्ते, रजः आ तरुषन्ते. स्वं भानुं अर्णवैः अनु श्रथयन्ते । ३०१ एषां अमात् भियसा भूमिः एजति, पूर्णा यती व्यथिः नौः न क्षरति, दूरे-दृशः ये एमभिः चितयन्ते (ते) नरः विदथे अन्तः महे येतिरे ।

अर्थ- २९९ [ऋ० ५।५७।८; २२१ देखिए ।]

३०० (वः सुविताय) तुम्हारा अच्छा कल्याण हो तथा (दावने) अच्छा दान दिया जा सके, इसलिए (स्पट्) याजक इस कर्म का (प्र अक्रन्) उपक्रम या प्रारंभ कर रहा है; तुम भी (दिवे अर्च) प्रकाशक देव की, द्युलोककी पूजा कर और मैं भी (पृथिव्यै) मातृभूमि के लिए (ऋतं प्र भरे) स्तोत्र का गायन करता हूँ। वे वीर (अश्वान् उक्षन्ते) अपने घोडों को बलवान बनाते हैं तथा (रजः आ तरुषन्ते) अन्तरिक्षसे भी परे चले जाते हैं और (स्वं भानुं) अपने तेजको (अर्णवैः समुद्रों से-समुद्रपर्यटनोंद्वारा-समुद्रोंमें से भी (अनु श्रथयन्ते) फैला देते हैं।

३०१ (एषां) इनके (अमात् भियसा) बलके डरसे (भूमिः एजति) पृथ्वी काँप उठती है और (पूर्णा) वस्तुओं से भरी होने के कारण (यती) जाते समय (व्यथिः नौः न) पीडित होनेवाली नौका के समान यह (क्षरति) आन्दोलित, स्पन्दित हो उठती है। (दूरे-दृशः) दूरसे दिखाई देनेवाले, (ये) जो (एमभिः) वेगयुक्त गतियों से (चितयन्ते) पहचाने जाते हैं, वे (नरः) नेता वीर (विदथे अन्तः) युद्ध में रहकर (महे) बडप्पन पाने के लिए (येतिरे) प्रयत्न करते हैं।

भावार्थ- [२९९ ऋ० ५।५७।८; २२१ देखिए ।] ३०० सबका भला हो और सबको सहायता पहुँचे, इस हेतु से याजक इस यज्ञका प्रारम्भ करता है। प्रकाशके देवताकी पूजा करो और मातृभूमिके सूक्तोंका गायन करो। वीर अपने घोडों को किसी भी भूभाग पर चढाई करनेके लिये सदैव तैयार रखते हैं और (विमान पर चढकर) अन्तरिक्षमें संचार करते हैं, (तथा नौका एवं जहाजों द्वारा समुद्रयात्रा करके सुदूरवर्ती देशोंमें अपना तेज फैला देते हैं। ३०१ इन वीरोंमें भारी बल विद्यमान है, इस कारणसे भूमंडल इनके डर मारे कांपने लगते हैं। भरी हुई वस्तुओंसे नौका जिस तरह पवनके कारण हिलनेडोलने लगी, तो अधिक भय प्रतीत होने लगता है, ठीक उसी प्रकार सभी लोग इनकी तीव्रगामिता के परिणाम-स्वरूप कुछ अंश में भयभीत हो जाते हैं। चूँकि इनका गमन विद्युद्गति से हुआ करता है, अतः इन वीरों को सभी पहचानते हैं। जब ये रणक्षेत्र में युद्धरत हो जूझते हैं, तब इनके मनमें एक ही विचार तथा प्रबल आतुर रहता है कि, यथासम्भव बडप्पन प्राप्त करना ही चाहिए।

टिप्पणी- [२९९] [ऋ० ५।५७।८; २२१ देखिए ।] [३००] १ तरुषः = जीतनेवाला, तरुष्यति = चढाई करना, तरुस् = चढाई, हमला, हमला करना। २ स्पट् स्पश् = रक्षक, दूत, याजक, निरीक्षक। स्वं भानुं अर्णवैः अनु श्रथयन्ते = अपना तेज समुद्रोंके परे भी जाकर फैला देते हैं। [३०१] १ दूरे-दृशः = दूरसे दीख पडनेवाले, दूरदर्शिता से कार्य करनेवाले, दूरदर्शी।

(३०६) वर्यः । न । ये । श्रेणीः । पप्तुः । ओजसा । अन्तान् । दिवः । बृहतः । सानुनः । परि ।
अश्वासः । एषाम् । उभये । यथा । विदुः । प्र । पर्वतस्य । नभनून् । अचुच्यवुः ॥७॥
(३०७) मिमातु । द्यौः । अदितिः । वीतये । नः । सम् । दानुऽचित्राः । उपसः । यतन्ताम् ।
आ । अचुच्यवुः । दिव्यम् । कोशम् । एते । ऋषे । रुद्रस्य । मरुतः । गृणानाः ॥८
(ऋ० ५।६१।१-४; ११-१६)
(३०८) के । स्थ । नरः । श्रेष्ठऽतमाः । ये । एकःऽएकः । आऽयय ।
परमस्याः । पराऽवतः ॥१॥

अन्वयः— ३०६ ये वयः न, श्रेणीः ओजसा दिवः अन्तान् बृहतः सानुनः परि पप्तुः, यथा उभये विदुः एषां अश्वासः पर्वतस्य नभनून् प्र अचुच्यवुः ।

३०७ द्यौः अदितिः नः वीतये मिमातु, दानु-चित्राः उपसः सं यतन्तां, (हे) ऋषे ! गृणानाः एते रुद्रस्य मरुतः दिव्यं कोशं आ अचुच्यवुः ।

३०८ (हे) श्रेष्ठ-तमाः नरः ! के स्थ ? ये एकः-एकः परमस्याः परावतः आयय ।

अर्थ— ३०६ (ये) जो वीर (वयः न) पंछियों की तरह (श्रेणीः) पंक्तिरूपमें समूह में (ओजसा) वेगसे (दिवः अन्तान्) आकाश के दूसरे छोरतक तथा (बृहतः) बडे बडे (सानुनः) पर्वतों के शिखर पर भी (परि पप्तुः) चारों ओरसे पहुँचते हैं। (यथा) जैसे एक दूसरेका बल (उभये विदुः) परस्पर जान लेते हैं, वैसे ही ये कर्म करते हैं। (एषां अश्वासः) इनके घोडे (पर्वतस्य नभनून्) पहाड के टुकडे करके (प्र अचुच्यवुः) नीचे गिरा देते हैं।

३०७ (द्यौः) द्युलोक तथा (अदितिः) भूमि (नः वीतये) हमारे सुखसमाधानके लिए (मिमातु) तैयारी कर लें, (दानु-चित्राः) दानद्वारा आश्चर्यचकित कर डालनेवाले (उपसः) उषःकाल हमारे लिए (सं यतन्तां) भली भाँति प्रयत्न करें। हे (ऋषे!) ऋषिवर! (गृणानाः) प्रशंसित हुए (एते) ये (रुद्रस्य मरुतः) वीरभद्र के वीर मरुत् (दिव्यं कोशं) दिव्य कोश या भाण्डार को (आ अचुच्यवुः) सभी ओर से उण्डेल देते हैं।

३०८ हे (श्रेष्ठ-तमाः नरः!) अति उच्च कोटि के तथा नेता के पदपर अधिष्ठित वीरो! तुम (के स्थ) कौन हो? (ये) जो तुम (एकः-एकः) अकेले अकेले (परमस्याः परावतः) अति सुदूर देश से यहाँ पर (आयय) आते हो।

भावार्थ- ३०६ ये वीर पंक्ति में रहकर समान रूप से पग उठाते एवं धरते हुए चलने लगते हैं और इनकी वेगवान गति के कारण दर्शक यों समझने लगता है कि, मानों ये आकाश के अंतिम छोर तक इसी भाँति जाते रहेंगे। पर्वतश्रेणियों पर भी ठीक इसी प्रकार ये चढ जाते हैं। एक दूसरे की शक्ति से परिचित वीर जैसे लडते हों, वैसे ही ये जूझते हैं और इनके घोडे पहाडों तक को चकनाचूर कर आगे निकल जाते हैं। ३०७ द्युलोक तथा भूलोक हमारे सुख को बढावें। उषःकाल का प्रारम्भ होते ही देन देने का प्रारम्भ हो जाय। ये सराहनीय वीर विजय पाकर धन का बृहदाकार खजाना ले आयँ और उस द्रविणभाण्डार को हमारे सामने उण्डेल दें। ३०८ अत्यन्त सुदूरवर्ती प्रदेशमें से बिना थकावट के आनेवाले वीर भला तुम कौन हो?

टिप्पणी-- [३०६] (१) नभनु = (नभ् = कष्ट देना, तोडमरोड देना) क्षति पहुँचानेवाला, नदी, टूटाहुआ विभाग। [३०७] (१) दिव्य = स्वर्गीय, आश्चर्यकारक। (२) च्यु = (गतौ) बटोरना, गिर जाना। (३) मा (माने) = मापना, समाना, तैयार करना, बाँधना, दर्शाना। (४) वीतिः = जाना, उत्पन्न करना, उत्पत्ति, उपभोग, खाना, तेज।

(३०९) क्व॑ । वः॒ । अश्वाः॑ । क्व॑ । अ॒भीश॑वः । क॒थम् । शे॒क॒ । क॒था । य॒य ।
पृ॒ष्ठे । सदः॑ । न॒सोः । यमः॑ ॥२॥
(३१०) ज॒घने॑ । चोदः॑ : ए॒षाम् । वि । स॒क्थानि॑ । नरः॑ । य॒मुः ।
पु॒त्र॒ऽकृ॒थे । न । जन॑यः ॥३॥
(३११) परा॑ । वीरा॑सः । इ॒त॒न । मर्या॑सः । भद्र॑ऽजानयः ।
अ॒ग्नि॒ऽतपः॑ । यथा॑ । अस॑थ ॥४॥

अन्वयः— ३०९ वः अश्वाः क्व ? अभीशवः क्व ? कथं शेक ? कथा यय ? पृष्ठे सदः नसोः यमः ।
३१० एषां जघने चोदः, पुत्र-कृथे जनयः न, नरः सक्थानि वि यमुः ।
३११ हे वीरासः मर्यासः भद्र-जानयः अग्नि-तपः ! यथा असथ परा इतन ।

अर्थ- ३०९ (वः अश्वाः क्व ?) तुम्हारे घोडे किधर हैं ? (अभीशवः क्व ?) उनके लगाम कहाँ हैं ? (कथं शेक ?) किसके आधार से या कैसे तुम सामर्थ्यवान हुए हो ? और तुम (कथा यय ?) भला कैसे जाते हो ? उनकी (पृष्ठे सदः) पीठपर की काठी, जीन [पर्याण] एवं (नसोः यमः) नथुनेमें डाली जानेवाली रस्सी कहाँ धर दिये हैं ?

३१० जब (एषां) इन घोडों की (जघने) जाँघों पर (चोदः) चाबुक लगता है, तब (पुत्र-कृथे) पुत्रप्रसूति के समय (जनयः न) स्त्रियाँ जैसे गोदोंको तानती हैं, वैसे ही ये (नरः) नेता वीर (सक्थानि) उन घोडों की जाँघों का (वि यमुः) विशेष ढंगसे नियमन करते हैं ।

३११ हे (वीरासः) वीर, (मर्यासः) जनता के हितकर्ता, (भद्र-जानयः) उत्तम [illegible] हुए और (अग्नि-तपः !) अग्नि-तुल्य तेजस्वी वीरो ! (यथा असथ) जैसे तुम [illegible] हो, वैसे [illegible] (परा इतन) इधर आओ ।

भावार्थ- ३०९ इन वीरों के घोडे लगाम, पर्याण, अन्य वस्तुएं कहाँ हैं और कैसी हैं ?

३१० घुडसवार होने पर ये वीर जब अश्वसंचालन करके चलाना शुरू करते हैं, तब वे घोडे [illegible] विरुद्ध करने लगते हैं, पर ये वीर सैनिक उन्हें नियमित करते अर्थात् रोक देते हैं। (अपनी जाँघोंसे [illegible] हैं, हिलने नहीं देते हैं ।)

३११ वीर हमारे निकट आ जायँ ।

टिप्पणी- [३०९] (१) सदस् = घर, आसन, बैठ जाने का साधन, जीन । " नसोः यमः ? " – [illegible] घोडों के नथुनों में रस्सी डालते थे ? आजकल घोडे के मुँह में लौहमय सलाका [illegible] कर उसे [illegible] देते हैं । इस मंत्र में ' अश्वाः ' पद पाया जाता है और अन्त में नसोः यमः ' नथुनेमें रस्सी ' [illegible] विचार करनेयोग्य है ।

[३१०] (१) नरः सक्थानि वि यमुः = वीर घोडे पर [illegible] [illegible] घोडे पर से न गिर जायँ ।

(३१२) ये । इ॒म् । व॒ह॑न्ते । आ॒शुऽभि॑ः । पिब॑न्तः । म॒दि॒रम् । मधु॑ ।
अत्र॑ । श्रवा॑ंसि । द॒धि॒रे ॥११॥
(३१३) येषा॑म् । श्रि॒या । अधि॑ । रोद॑सी॒ इति॑ । वि॒ऽभ्राज॑न्ते । रथे॑षु । आ ।
दि॒वि । रु॒क्मःऽइ॑व । उ॒परि॑ ॥१२॥
(३१४) युवा॑ । सः । मारु॑तः । ग॒णः । त्वे॒षऽर॑थः । अने॑द्यः ।
शु॒भ॒म्ऽयावा॑ । अप्र॑तिऽस्कुतः ॥१३॥

अन्वयः— ३१२ ये मदिरं मधु पिबन्तः आशुभिः ईं वहन्ते अत्र श्रवांसि दधिरे।
३१३ येषां श्रिया रोदसी अधि, उपरि दिवि रुक्मःइव, रथेषु आ विभ्राजन्ते।
३१४ सः मारुतः गणः युवा त्वेष-रथः अ-नेद्यः शुभं-यावा अ-प्रति-स्कुतः।

अर्थ- ३१२ (ये) जो (मदिरं मधु) मिठासभरा सोमरस (पिबन्तः) पीनेवाले वीर (आशुभिः) वेगवान घोडों के साथ (ईं वहन्ते) शीघ्र चले जाते हैं, वे (अत्र) यहाँ पर (श्रवांसि दधिरे) बहुतसा धन दे देते हैं।

३१३ (येषां श्रिया) जिन की शोभासे (रोदसी) द्युलोक तथा भूलोक (अधि) अधिष्ठित -सुशोभित-हुए हैं, वे वीर (उपरि दिवि) ऊपर आकाश में (रुक्मःइव) प्रकाशमान सूर्य के तुल्य (रथेषु आ विभ्राजन्ते) रथों में द्योतमान होते हैं।

३१४ (सः) वह (मारुतः गणः) वीर मरुतों का संघ (युवा) तरुण, (त्वेष-रथः) तेजस्वी रथ में बैठनेवाला, (अ-नेद्यः) अनिंदनीय, (शुभं-यावा) शुभ कार्य के लिए ही हलचलें करनेवाला और (अ-प्रति-स्कुतः) अपराजित- सदैव विजयी है।

भावार्थ- ३१२ अच्छे अन्नपान का सेवन करना चाहिए और वेगवान वाहनों द्वारा शत्रुसेनापर आक्रमण करना उचित है, क्योंकि ऐसा करनेसे उच्च कोटि का धन मिलता है।

३१३ रथों में बैठकर वीर सैनिक जब कार्य करने लगते हैं, तब वे अतीव सुहाने लगते हैं।

३१४ वीरों का समुदाय सत्कर्म करनेमें निरत, निष्पाप, हमेशा विजयी तथा नवयुवकवत् उमंग एवं उत्साह से परिपूर्ण रहता है।

टिप्पणी- [३१२] (१) श्रवस् = सुनना, कीर्ति, धन, मंत्र, प्रशंसनीय कृत्य। यहाँ पर 'श्रवांसि' बहुवचनान्त पद है, इसलिए 'यश' अर्थ लेने की अपेक्षा 'धन' अर्थ करना, ठीक प्रतीत होता है. क्योंकि यश का अनेक होनेका संभव नहीं, लेकिन धन विविध प्रकार के हुआ करते हैं, अतः बहुवचनी प्रयोग किये जानेपर 'श्रवांसि' का अर्थ धनसमूह करनाही ठीक है।

[३१३] रुक्मः = सुवर्णका टुकडा, मुहर, प्रकाशमान। दिवि रुक्मः = आकाश में प्रकाशमान (सूर्य)

[३१४] स्कु = कूदना, उठा लेना, व्याप्त होना। प्रतिष्कु = ढकना (पराभूत करना) अ-प्रतिष्कुतः = विजयी, जो कभी न हारा हुआ हो।

(३१५) कः । वेद । नूनम् । एषाम् । यत्र । मदन्ति । धूतयः ।
ऋतऽजाताः । अरेपसः ॥१४॥

(३१६) यूयम् । मर्तम् । विपन्यवः । प्रऽनेतारः । इत्था । धिया ।
श्रोतारः । यामंऽहूतिषु ॥१५॥

(३१७) ते । नः । वसूनि । काम्या । पुरुऽचन्द्राः । रिशादसः ।
आ । यज्ञियासः । ववृत्तन ॥१६॥

अन्वयः— ३१५ धूतयः ऋत-जाताः अ-रेपसः यत्र मदन्ति एषां कः नूनं वेद ?
३१६ (हे) वि-पन्यवः ! यूयं इत्था मर्तं प्र-नेतारः याम-हूतिषु धिया श्रोतारः ।
३१७ पुरु-चन्द्राः रिश-अदसः यज्ञियासः ते नः काम्या वसूनि आ ववृत्तन ।

अर्थ- ३१५ (धूतयः) शत्रुओं को हिलानेवाले (ऋत-जाताः) सत्य के लिए जन्मे हुए और (अ-रेपसः) निष्पाप ये वीर (यत्र मदन्ति) जहाँ आनन्द का उपभोग लेते हैं, वह (एषां [illegible]) इनका ठौर (कः नूनं वेद) सचमुच कौन भला जानता है ?

३१६ हे (वि-पन्यवः!) प्रशंसनीय वीरो ! (यूयं) तुम (इत्था) इस प्रकारसे (मर्तं प्र-नेतारः) मानवों को उत्कृष्ट प्रेरणा देनेवाले हो और (याम-हूतिषु) शत्रुदल पर चढाई करते समय [illegible] तुम (धिया) मनःपूर्वक बडी लगनसे उस प्रार्थना को (श्रोतारः) सुन लेते हो ।

३१७ हे (पुरु-चन्द्राः) अत्यन्त आह्लाददायक, (रिश-अदसः) शत्रुओं के [illegible] (यज्ञियासः !) तथा पूज्य वीरो ! (ते) ऐसे प्रसिद्ध तुम (नः काम्या) हमारे अभीष्ट [illegible] हमें (आ ववृत्तन) वापिस लौटा दो ।

भावार्थ- ३१५ कौनसा स्थान वीरों को आनन्द देता है ?

३१६ शत्रु पर चढाई करते वक्त मददके लिए [illegible] देते हैं, शरणार्थी की पुकार सुन लेते हैं ।

३१७ वीरों की सहायता से हमें सभी [illegible] मिले । [[illegible] सारी सम्पदा हमें पुनः प्राप्त मिले ।]

टिप्पणी- [३१५] १ ऋत-जात = सत्य के लिए पैदा हुआ [illegible] का बलिदान देता है । २ रेपस् = [illegible] अ-रेपस् = [illegible] पापरहित ।

[३१६] १ [illegible] = [illegible] पुकार । याम-हूतिः = [illegible]

अत्रिपुत्र एवयामरुत् ऋषि (ऋ० ५।८७।१-२)

(३१८) प्र । वः । महे । मतयः । यन्तु । विष्णवे । मरुत्वते । गिरिऽजाः । एवयामरुत् । प्र । शर्धाय । प्रऽयज्यवे । सुऽखादये । तवसे । भन्दत्ऽइष्टये । धुनिऽव्रताय । शवसे ॥१॥

(३१९) प्र । ये । जाताः । महिना । ये । च । नु । स्वयम् । प्र । विद्मना । ब्रुवते । एवयामरुत् । क्रत्वा । तत् । वः । मरुतः । न । आऽधृषे । शवः । दाना । मह्ना । तत् । एषाम् । अधृष्टासः । न । अद्रयः ॥२॥

अन्वयः- ३१८ एवयामरुत् गिरि-जाः मतयः वः मरुत्-वते महे विष्णवे प्र यन्तु, प्र-यज्यवे सु-खादये तवसे भन्दत्-इष्टये धुनि-व्रताय शवसे शर्धाय प्र।

३१९ ये महिना प्र जाताः, ये च नु स्वयं विद्मना प्र, एवयामरुत् ब्रुवते, (हे) मरुतः ! वः तत् शवः क्रत्वा न आ-धृषे, एषां तत् दाना मह्ना, अद्रयः न, अ-धृष्टासः।

अर्थ- ३१८ (एवयामरुत्) मरुतों के अनुसरण करनेवाले ऋषि की (गिरि-जाः) वाणी से निकले हुए (मतयः) विचार एवं काव्यमय श्लोक (वः) तुम्हारे (मरुत्-वते) मरुतों से युक्त (महे विष्णवे) बडे व्यापक देव के पास (प्र यन्तु) पहुँचें। तुम्हारे (प्र-यज्यवे) अत्यन्त पूजनीय, (सु-खादये) अच्छे कडे, वलय धारण करनेहारे, (तवसे) बलवान, (भन्दत्-इष्टये) अच्छी आकांक्षा करनेवाले, (धुनि-व्रताय) शत्रु को हटा देने का व्रत लेनेहारे (शवसे) वेगपूर्वक जानेवाले (शर्धाय) बल के लिए ही तुम्हारे विचार एवं काव्यप्रवाह (प्र यन्तु) प्रवर्तित हो चलें।

३१९ (ये) जो अपनी निजी (महिना) महत्त्व से (प्र जाताः) प्रकट हुए, (ये च) और जो (नु) सचमुच (स्वयं विद्मना) अपनी निजी विद्या से (प्र) प्रसिद्ध हुए, उन वीरों का (एवयामरुत् ब्रुवते) एवयामरुत् ऋषि वर्णन करता है। हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वः तत् शवः) तुम्हारा वह बल (क्रत्वा) कृति से युक्त होने के कारण (न आ-धृषे) पराभूत नहीं हो सकता है, (एषां तत्) ऐसे तुम वीरों का वह बल (दाना) दानसे (मह्ना) तथा महत्त्व से युक्त है। तुम तो (अद्रयः न) पर्वतों के समान (अ-धृष्टासः) किसी से परास्त न होनेवाले हो।

भावार्थ- ३१८ ऋषि सर्वव्यापक ईश्वर के सम्बन्ध में विचार करते हैं, उसके स्तोत्रों का गायन करते हैं और उनकी प्रतिभा-शक्ति परमात्मा की ओर मुड जाती है। उसी प्रकार, बल बढा कर शत्रु को मटियामेट करने के गुरुतर कार्य की ओर भी उनकी मनोवृत्ति झुक जाय।

३१९ तुम्हारी विद्या एवं महत्ता असाधारण कोटिकी है। तुम्हारा बल इतना विशाल है कि, कोई तुम्हें पद-दलित तथा पराभूत या परास्त नहीं कर सकता है। तुम्हारा दान भी बहुत बडा है और जैसे पर्वत अपनी जगह स्थिर रहा करता है, वैसे ही तुम जिधर कहीं रहते हो, उधर भले ही दुश्मन भीषण हमले कर डाले, लेकिन तुम अपने स्थान पर अचल, अटल तथा अडिग रह कर उसे हटा देते हो।

टिप्पणी- [३१८] (१) भन्द् = सुदैवी होना, उत्तम होना, आनन्दित बनना, सन्मान देना, पूजा करना। (२) इष्टिः = इच्छा- आकांक्षा, विनंति, इष्ट वस्तु, यज्ञ। (३) एवया = संरक्षण करना, मार्ग परसे जाना, निश्चित राह परसे चलना। एवया-मरुत् = मरुतों के पथ से जानेहारा, मरुतों का अनुगामी, ऋषि (सा० भा०)।

[३१९] (१) क्रतु = यज्ञ, बुद्धि, सयानापन, शक्ति, निश्चय, आयोजना, इच्छा। (२) शवस् = बल, शत्रु का नाश करने में समर्थ बल। (३) अधृष्ट = अकम्पित।

(२२०) प्र । ये । दिवः । बृहतः । शृण्विरे । गिरा । सुऽशुक्वानः । सुऽभ्वः । एवयाऽमरुत् ।
न । येषाम् । इरी । सधऽस्थे । ईष्टे । आ । अग्नयः । न । स्वऽविद्युतः । प्र ।
स्यन्द्रासः । धुनीनाम् ॥३॥

(२२१) सः । चक्रमे । महतः । निः । उरुऽक्रमः । समानस्मात् । सदसः । एवयाऽमरुत् ।
यदा । अयुक्त । त्मना । स्वात् । अधि । स्नुऽभिः । विऽस्पर्धसः । विऽमहसः ।
जिगाति । शेऽवृधः । नृऽभिः ॥४॥

अन्वयः— २२० सु-शुक्वानः सु-भ्वः ये बृहतः दिवः प्र शृण्विरे, एवयामरुत् गिरा, येषां सध-स्थे इरी न आ ईष्टे, अग्नयः न, स्व-विद्युतः, धुनीनां प्र स्यन्द्रासः।

२२१ यदा एवयामरुत् स्नुभिः नृभिः त्मना स्वात् अधि अयुक्त, (तदा) उरुक्रमः सः समानस्मात् महतः सदसः निः चक्रमे, वि-महसः शे-वृधः वि-स्पर्धसः जिगाति।

अर्थ- २२० (सु-शुक्वानः) अत्यन्त तेजस्वी तथा (सु-भ्वः) उत्तम ढंग से रहनेहारे (ये) जो वीर (बृहतः) विशाल (दिवः) अन्तरिक्ष में से आते समय जनता की की हुई स्तुतियाँ (प्र शृण्विरे) सुनते हैं, उनकी ही (एवयामरुत् गिरा) एवयामरुत् ऋषि अपनी वाणीद्वारा स्तुति करता है। (येषां सध-स्थे) जिनके प्रदेश में उनके (इरी) प्रेरक की हैसियत से उनपर (न आ ईष्टे) कोई भी प्रभुत्व नहीं प्रस्थापित करता है; वे (अग्नयः न) अग्नि के तुल्य (स्व-विद्युतः) स्वयंप्रकाशी वीर (धुनीनां) गर्जना करनेहारे शत्रुओं को भी (प्र स्यन्द्रासः) अत्यन्त विकम्पित कर डालनेवाले हैं।

२२१ (यदा एवयामरुत्) जब एवयामरुत् ऋषि अपने (स्नुभिः नृभिः) वेगवान लोगों के साथ (त्मना) स्वयं ही (स्वात्) अपने निवासस्थान के समीप (अधि अयुक्त) अश्व जोतकर तैयार हुआ, तब (उरु-क्रमः सः) बड़ा भारी आक्रमण करनेहारा वह मरुतों का संघ (समानस्मात्) सब के लिए समान रहे (सदसः) अपने निवासस्थान से (निः चक्रमे) बाहर निकल पड़ा और (वि-महसः) विलक्षण तेजस्वी एवं (शे-वृधः) सुख बढानेवाले वे वीर (वि-स्पर्धसः) बिना किसी स्पर्धा से तुरन्त उधर (जिगाति) आ पहुँचे।

भावार्थ- २२० ये वीर तेजस्वी तथा अच्छा आचरण रखनेवाले हैं। वे स्वयं-शासित हैं, इन पर अन्य किसी का प्रभुत्व नहीं प्रस्थापित है। वे स्वयंप्रकाशी होते हुए गर्जनेवाले बड़े बड़े वीर शत्रुओं को भी भयभीत कर देते हैं, जिस से वे काँपने लगते हैं।

२२१ जब ऋषि इन वीरों का सुस्वागत करने के लिए तैयार हुआ, तब ये वीर उन अपने निवासस्थल से, जो सब के लिए समान था, निकलकर स्वयं ही उन के समीप आ पहुँचे। ये वीर बड़े ही तेजस्वी एवं जनता का सुख बढानेवाले थे।

टिप्पणी- [२२०] (१) शुचि (स्वद् चमके) = चमकनेवाला, तेज ज्यानेवाला, (स्यन्द् कम्पने) हिलानेवाला। (२) सु-भू = बलवान, भलीभाँति अच्छे ढंग से रहनेवाले। (३) शुक्वन् = (शुच्=चमकना) = चमकनेवाला, तेजस्वी। ' येषां इरी न ईष्टे ' = जिन का शासक कोई भी नेता नहीं होता है, अर्थात् जो स्वयं-शासक हैं। (मंत्र ६४, २३१, २२८, देखिए।)

[२२१] (१) समानं सदः = सब के लिए समान रूप से खुला हुआ निवासस्थान, मैदानों के बैरक (Barracks)। (मंत्र ११३, २२०, २२३ देखिए।) (२) वि-स्पर्धस् = बिना स्पर्धा, स्पर्धा छोड़कर, स्पर्धारहित। (३) शे-वृध = (शेवृध, शेव) = सुख से बढे हुए, सुखों से बढ़े हुए- [illegible]। शेव = सुख, संपत्ति, अतः शेवृधः सुख-संपदा बढ़ानेवाले।

(३२४) ते । रुद्रासः । सुऽमखाः । अग्नयः । यथा । तुविऽद्युम्नाः । अवन्तु । एवयामरुत् ।
दीर्घम् । पृथु । पप्रथे । सद्म । पार्थिवम् । येषाम् । अज्मेषु । आ । महः । शर्धांसि ।
अद्भुतऽएनसाम् ॥७॥

(३२५) अद्वेषः । नः । मरुतः । गातुम् । आ । इतन । श्रोत । हवम् । जरितुः । एवयामरुत् ।
विष्णोः । महः । सऽमन्यवः । युयोतन । स्मत् । रथ्यः । न । दंसना । अप ।
द्वेषांसि । सनुतरिति ॥८॥

(३२६) गन्त । नः । यज्ञम् । यज्ञियाः । सुऽशमि । श्रोत । हवम् । अरक्षः । एवयामरुत् ।
ज्येष्ठासः । न । पर्वतासः । विऽओमनि । यूयम् । तस्य । प्रऽचेतसः । स्यात । दुःऽधर्तवः । निदः ॥९

अन्वयः— ३२४ सु-मखाः, अग्नयः यथा तुवि-द्युम्नाः, ते रुद्रासः एवयामरुत् अवन्तु, दीर्घं पृथु पार्थिवं सद्म पप्रथे, अद्भुत-एनसां येषां अज्मेषु महः शर्धांसि आ। ३२५ (हे) मरुतः! अ-द्वेषः गातुं नः आ इतन, जरितुः एवयामरुत् हवं श्रोत, (हे) स-मन्यवः! विष्णोः महः युयोतन, रथ्यः न स्मत्, दंसना सनुतः द्वेषांसि अप। ३२६ (हे) यज्ञियाः! सु-शमि नः यज्ञं गन्त, अ-रक्षः एवयामरुत् हवं श्रोत, वि-ओमनि, पर्वतासः न, ज्येष्ठासः, प्र-चेतसः यूयं तस्य निदः दुर्-धर्तवः स्यात।

अर्थ- ३२४ (सु-मखाः) उच्च कोटि के यज्ञ करनेहारे, (अग्नयः यथा) अग्नि के तुल्य (तुवि-द्युम्नाः) अति तेजस्वी (ते रुद्रासः) वे शत्रु को रुलानेवाले वीर (एवयामरुत् अवन्तु) एवयामरुत् ऋषि का संरक्षण करें। (दीर्घं) विस्तीर्ण तथा (पृथु) भव्य (पार्थिवं सद्म) भूमंडल पर का निवासस्थान उन्हीं के कारण (पप्रथे) विख्यात हो चुका है। (अद्भुत-एनसां) पापरहित ऐसे (येषां) जिन वीरों के (अज्मेषु) आक्रमणों के समय (महः शर्धांसि) बडे बडे बल उनके साथ (आ) आते हैं।

३२५ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (अ-द्वेषः) द्वेष न करनेहारे तुम वीरों के (गातुं) काव्य का गायन करने के समय तुम (नः आ इतन) हमारे समीप आओ। (जरितुः एवयामरुत्) स्तुति करनेवाले, एवयामरुत् ऋषि की यह प्रार्थना (श्रोत) सुन लो। हे (स-मन्यवः!) उत्साही वीरो! तुम (विष्णोः महः) व्यापक देव की शक्तियों से (युयोतन) एकरूप बनो। तुम (रथ्यः न) रथमें जोतनेयोग्य घोडे के समान (स्मत्) प्रशंसा के योग्य हो, इसलिए (दंसना) अपने पराक्रम से, कर्म से (सनुतः द्वेषांसि) गुप्त शत्रुओं को (अप) दूर हटाओ। ३२६ हे (यज्ञियाः!) पूज्य वीरो! (सु-शमि) अच्छे शान्त ढंगसे (नः यज्ञं) हमारे यज्ञकी ओर (गन्त) आओ। (अ-रक्षः) अरक्षित ऐसे (एवयामरुत्) एवयामरुत् ऋषि की (हवं) यह प्रार्थना (श्रोत) सुनो। (वि-ओमनि) विशेष रक्षण के कार्य में तुम (पर्वतासः न) पहाडों के तुल्य (ज्येष्ठासः) श्रेष्ठ हो। (प्र-चेतसः) उत्कृष्ट ढंग से विचार करनेहारे तुम (तस्य निदः) उस निन्दक के लिए (दुर्-धर्तवः) दुर्धर्ष-अजिंक्य (स्यात) बनो।

भावार्थ- ३२४ ये वीर अच्छे कर्म करनेहारे हैं। ये ऋषियोंका संरक्षण करते हैं। इन्हींके कारण पृथ्वीपर विद्यमान स्थान विख्यात हुआ है। ये पापरहित वीर जब शत्रु पर हमले करते हैं, तब इनकी अनेक शक्तियाँ व्यक्त हुआ करती हैं। ३२५ हम वीरोंके काव्यका गायन करते हैं, उसे वे आकर सुन लें। परमात्माकी शक्तिसे युक्त होकर अपने अपने अनवरत उद्यम से सभी शत्रुओं को दूर करें। ३२६ वीर यज्ञमें आ जायँ और काव्यगायन सुन लें। रक्षा करते समय स्थिर रूप से प्रजाओं की रक्षा करें। विचारपूर्वक निन्दकों को हटाकर शत्रुसेना के लिए स्वयं अजिंक्य बनने की चेष्टा करें।

टिप्पणी [३२४] (१) मखः=पूज्य, चपल, दर्शनीय, आनन्दी। (२) अद्भुत=(न भूतं अभूतं) न हुआ [३२५] (१) स्मत्= प्रशस्त, ठीक। (२) सनुतः= गुप्त, दूर, एक ओरपर। [३२६] (१) शम्= ●

(३३०) तम् । वः । इन्द्रम् । न । सुऽक्रतुम् । वरुणम्ऽइव । मायिनम् ।
अर्यमणम् । न । मन्द्रम् । सृप्रऽभोजसम् । विष्णुम् । न । स्तुषे । आऽदिशे ॥१४॥
(३३१) त्वेषम् । शर्धः । न । मारुतम् । तुविऽस्वनि । अनर्वाणम् । पूषणम् । सम् । यथा । शता ।
सम् । सहस्रा । कारिषत् । चर्षणिऽभ्यः । आ । आविः । गूळ्हा । वसु । करत् ।
सुऽवेदा । नः । वसु । करत् ॥१५॥
(३३२) वामी । वामस्य । धूतयः । प्रऽनीतिः । अस्तु । सूनृता ।
देवस्य । वा । मरुतः । मर्त्यस्य । वा । ईजानस्य । प्रऽयज्यवः ॥२०॥

अन्वयः— ३३० इन्द्रं न सु-क्रतुं, वरुणंइव मायिनं, अर्यमणं न मन्द्रं, विष्णुं न सृप्र-भोजसं वः तं आ-दिशे स्तुषे । ३३१ न त्वेषं तुवि-स्वनि अन्-अर्वाणं पूषणं मारुतं शर्धः यथा चर्षणिभ्यः शता सं सहस्रा सं आ कारिषत्, गूळ्हा वसु आविः करत्, नः वसु सु-वेदा करत् । ३३२ (हे) धूतयः प्र-यज्यवः मरुतः ! देवस्य वा ईजानस्य मर्त्यस्य वा वामस्य प्र-नीतिः वामी सूनृता अस्तु ।

अर्थ— ३३० (इन्द्रं न) इन्द्रके समान (सु-क्रतुं) अच्छे कर्म करनेहारे, (वरुणंइव) वरुण की नाईं (मायिनं) कुशल कारीगर, (अर्यमणं न) अर्यमाके तुल्य (मन्द्रं) आनन्ददायक, (विष्णुं न) विष्णु के जैसे (सृप्र-भोजसं) पर्याप्त अन्न देनेवाले, पालनपोषण करनेहारे (वः तं) तुम्हारे उन वीरोंके संघकी, हमें (आ-दिशे) मार्ग दर्शाये, इसलिए (स्तुषे) सराहना करता हूँ ।

३३१ (न) अब (त्वेषं) तेजस्वी, (तुवि-स्वनि) महान् आवाज करनेहारे, (अन्-अर्वाणं) शत्रु-रहित तथा (पूषणं) पोषण करनेवाले (मारुतं शर्धः) उन वीर मरुतोंका सांघिक बल (यथा) जैसे (चर्षणिभ्यः) मानवों को (शता सं) सौ प्रकार के धन या (सहस्रा सं) हजारों ढंग के धन एकही समय (आ कारिषत्) समीप लाये और (गूळ्हा वसु) गुप्त धनको (आविः करत्) प्रकट करे, उसी प्रकार (नः) हमें (वसु) धन (सु-वेदा) सुगमतापूर्वक प्राप्त हो सके, ऐसा करे ।

३३२ हे (धूतयः) शत्रुसेनाको हिला देनेवाले तथा (प्र-यज्यवः) अत्यन्त पूजनीय (मरुतः !) वीर मरुतो ! (देवस्य वा) देवकी या (ईजानस्य मर्त्यस्य वा) यज्ञ करनेवाले मानवकी (वामस्य प्र-नीतिः) धन पानेकी प्रणाली (वामी) प्रशंसनीय तथा (सूनृता) सत्यपूर्ण (अस्तु) हो जाए ।

भावार्थ– ३३० अच्छे कर्म करनेहारे, कुशल, आनन्दप्रद एवं पर्याप्त अन्नपानीय देनेवाले वीरों के काव्य का गायन हम प्रवर्तित करते हैं, क्योंकि उस के कारण सम्भव है कि, हमें उचित पथ का ज्ञान हो जाय । [इन मरुतों में इंद्र का पराक्रम, वरुण की कुशलता, अर्यमा का सुखदायित्व और विष्णु का प्रजापालकत्व समाया हुआ है ।] ३३१ अजात-शत्रु एवं महाबलवान वीर मरुत् अपने बल से सभी मानवोंको विभिन्न ढंग के धन दे चुके हैं और उसी प्रकार वह मुझे भी मिल सके, ऐसा वे करें । ३३२ मानव न्यायपूर्वक धन प्राप्त करें ।

टिप्पणी- [३३०] (१) भोजस् = खानपान, अन्न । (२) सृप्र-भोजस् = भरपेट अन्न देनेवाला । (सृप् = धीरेधीरे आना, सरकते हुए जाना, भुज् = रक्षा करना, उपभोग लेना, सहानुभूति करना) = शरण आये हुए लोगों की रक्षा करनेवाला, मनु पर सत्ता प्रस्थापित करनेवाला । (३) आ-दिश् = दर्शाना, पथप्रदर्शक होना, आज्ञा देना, लक्ष्यवेध करना । [३३१] (१) गूळ्हं वसु = भूमि में दबा हुआ धन, (खनिज संपत्ति ?), गुप्त धन । (२) आ+कृ (To bring near) समीप लाना, बटोरना, पूर्ण रूपसे बनाना । (३) अर्व् = (गतौ हिंसायां च) अर्वन् = गतिमान, घोडा, हिंसक दुश्मन । अनर्वा = अ-शत्रु, अजातशत्रु, जिन के समीप घोडा न हो । [मंत्र २

(३३३) स॒द्यः । चि॒त् । यस्य॑ । च॒र्कृ॑तिः । परि॑ । द्याम् । दे॒वः । न । एति॑ । सूर्यः॑ । त्वे॒षम् । शवः॑ । द॒धि॒रे । नाम॑ । य॒ज्ञिय॑म् । म॒रुतः॑ । वृ॒त्र॒ऽहम् । शवः॑ । ज्येष्ठ॑म् । वृ॒त्र॒ऽहम् । शवः॑ ॥२१॥

बृहस्पतिपुत्र भरद्वाज ऋषि (ऋ० ६।६६।१-११)

(३३४) वपुः॑ । नु । तत् । चि॒कि॒तुषे॑ । चि॒त् । अ॒स्तु । स॒मा॒नम् । नाम॑ । धे॒नु । पत्य॑मानम् । मर्ते॑षु । अ॒न्यत् । दो॒हसे॑ । पी॒पाय॑ । स॒कृत् । शु॒क्रम् । दु॒दु॒हे॒ । पृश्निः॑ । ऊधः॑ ॥१॥

(३३५) ये । अ॒ग्नयः॑ । न । शोशु॑चन् । इ॒धा॒नाः । द्विः । यत् । त्रिः । म॒रुतः॑ । व॒वृ॒धन्त॑ । अ॒रे॒णवः॑ । हि॒र॒ण्यया॑सः । ए॒षा॒म् । सा॒कम् । नृ॒म्णैः । पौंस्ये॑भिः । च॒ । भू॒व॒न् ॥२॥

अन्वयः— ३३३ यस्य चर्कृतिः देवः सूर्यः न, सद्यः चित् द्यां परि एति, मरुतः त्वेषं शवः यज्ञियं नाम दधिरे, शवः वृत्र-हं, वृत्र-हं शवः ज्येष्ठं । ३३४ तत् धेनु समानं नाम पत्यमानं वपुः नु चित् चिकितुषे अस्तु, अन्यत् मर्तेषु दोहसे पीपाय, शुक्रं सकृत् पृश्निः ऊधः दुदुहे । ३३५ ये मरुतः, इधानाः अग्नयः न, शोशुचन्, यत् द्विः त्रिः ववृधन्त, एषां अ-रेणवः हिरण्ययासः नृम्णैः पौंस्येभिः च साकं भूवन् ।

अर्थ— ३३३ (यस्य) जिनका (चर्कृतिः) कर्म (देवः सूर्यः न) प्रकाशमान सूर्य के तुल्य (सद्यः चित्) तुरन्त (द्यां परि एति) द्युलोकमें चारों ओर फैलता है, उन (मरुतः) वीर मरुतोंने (त्वेषं शवः) तेजस्वी बल तथा (यज्ञियं नाम) पूजनीय यश (दधिरे) प्राप्त किया। उनका वह (शवः) बल (वृत्र-हं) वृत्रका वध करनेवाला था और सचमुच वह (वृत्र-हं शवः ज्येष्ठं) वृत्रविनाशक बल उच्च कोटिका था।

३३४ (तत्) वह जो (धेनु समानं नाम) धेनु एकही नाम है, (पत्यमानं) उसे धारण करने वाला (वपुः) स्वरूप (नु चित्) सचमुचही (चिकितुषे) ज्ञानी पुरुषोंको परिचित (अस्तु) रहे। (अन्यत्) उनमेंसे एक रूप (मर्तेषु) मानवोंमें-मर्त्य लोकमें (दोहसे) दूध का दोहन करने के लिए गोरूप से (पीपाय) पुष्ट होता रहता है और (शुक्रं) दूसरा तेजस्वी रूप (सकृत्) एक बारही (पृश्निः) अन्तरिक्ष के मेघरूपी (ऊधः) दुग्धाशय से (दुदुहे) दोहन किया हुआ है।

३३५ (ये मरुतः) जो मरुत्-वीर (इधानाः) प्रज्वालित (अग्नयः न) अग्निके तुल्य (शोशुचन्) द्योतमान हुआ करते हैं और (यत्) जो (द्विः त्रिः) दुगुनी या तिगुनी मात्रामें बलिष्ठ होकर (ववृधन्त) बढते हैं (एषां) इनके रथ (अ-रेणवः) निर्मल (हिरण्य-यासः) स्वर्णरञ्जित हैं, और वे वीर (नृम्णैः) बुद्धि तथा (पौंस्येभिः च साकं) बलके साथ (भूवन्) प्रकट होते हैं।

भावार्थ- ३३३ जैसे सूर्य का प्रकाश द्युलोक में फैलता है, उसी प्रकार मरुतोंका यश तथा बल चतुर्दिक् प्रसृत है और घेरनेवाले शत्रु को कुचल देता है। ३३४ दो प्रसिद्ध गौएँ 'धेनु' नाम से विख्यात हैं। एक धेनु नामक गोमाता मानवोंके पोषणार्थ दूध देती है और दूसरी अन्तरिक्षमें रहनेवाली (मेघरूपी माता) वर्षमें एक बार जलकी वर्षा करके सबको तृप्त करती है। ३३५ वीर सैनिक अपने बलको दुगुना, तिगुना बढाते हैं और अत्यधिक बडे हो जाते हैं। इन के रथ साफसुथरे तथा स्वर्णसे विभूषित हैं। अपनी बुद्धि तथा बलको व्यक्त करके ये वीर विख्यात बनते हैं।

टिप्पणी देखिए।] [३३२] (१) वाम= धन । (२) नीतिः = बर्ताव रखने के नियम । (३) प्र-नीतिः = मार्गदर्शकता, बर्ताव । (४) सूनृत = रमणीय, सत्यपूर्ण, मनःपूर्वक, सौम्य, विनयशील । [३३३] (१) वृत्रः = (वृणोति इति) ढकनेवाला, वेष्टनकर्ता, शत्रु, वृत्र राक्षस । (२) चर्कृतिः = कृति, कर्म, बारंबार की जानेवाली कृति, यश, कीर्ति । (३) यज्ञियं नाम=मन्त्र १ तथा १४९ टिप्पणी देखिए। [३३४] (१) वपुः = शरीर, सुन्दर, आकृति

(३३६) रुद्रस्यं । ये । मीळ्हुषंः । सन्तिं । पुत्राः । यान् । चो इतिं । नु । दाधृविः । भरध्यै ।
विदे । हि । माता । महः । मही । सा । सा । इत् । पृश्निः । सुऽभ्वें । गर्भम् । आ । अधात् ॥३॥
(३३७) न । ये । ईषन्ते । जनुषः । अया । नु । अन्तरिति । सन्तः । अवद्यानि । पुनानाः ।
निः । यत् । दुह्रे । शुचयः । अनु । जोषम् । अनु । श्रिया । तन्वम् । उक्षमाणाः ॥४॥
(३३८) मक्षु । न । येषु । दोहसे । चित् । अयाः । आ । नाम । धृष्णु । मारुतम् । दधानाः ।
न । ये । स्तौनाः । अयासः । महा । नु । चित् । सुऽदानुः । अव । यासत् । उग्रान् ॥५॥

अन्वयः— ३३६ ये मीळ्हुषः रुद्रस्य पुत्राः सन्ति, दाधृविः यान् चो नु भरध्यै, महः हि माता मही विदे, सा पृश्निः सु-भ्वे इत् गर्भं आ अधात्। ३३७ अन्तः सन्तः अवद्यानि पुनानाः ये नु अया जनुषः न ईषन्ते, यत् श्रिया तन्वं अनु उक्षमाणाः शुचयः जोषं अनु निः दुह्रे। ३३८ येषु धृष्णु मारुतं नाम आ दधानाः न दोहसे चित् मक्षु अयाः, सु-दानुः न ये अयासः स्तौनाः उग्रान् नु चित् महा अव यासत्।

अर्थ— ३३६ (ये) जो वीर (मीळ्हुषः रुद्रस्य) स्नेहयुक्त रुद्रके (पुत्राः सन्ति) सुपुत्र हैं, (दाधृविः) सबका धारण करनेवाली पृथ्वी (यान् चो नु) जिनके सचमुचही (भरध्यै) पालनपोषणके लिए है और जो (महः हि) महान वीरोंकी (माता) माता होनेके कारण (मही) बडी (विदे) समझी जाती है, (सा पृश्निः) वह मातृभूमि (सु-भ्वे इत्) जनताका कल्याण हो, इसीलिये (गर्भं आ अधात्) गर्भ धारण कर चुकी है।

३३७ (अन्तः सन्तः) अन्दर रहकर (अवद्यानि) दोषोंको, पापोंको (पुनानाः) पवित्र करते हुये (ये नु) जो वीर सचमुचही (अया) अपनी गतिसे (जनुषः) जनतासे (न ईषन्ते) दूर नहीं जाते हैं, तथा (यत्) जो (श्रिया) अपनी आभासे (तन्वं) शरीरको (अनु) अनुकूलतासे (उक्षमाणाः) बलवान करते हैं वे (शुचयः) पवित्र वीर (जोषं अनु) इच्छाके अनुकूल दान (निः दुह्रे) देते रहते हैं।

३३८ (येषु) जिनमें वीर (धृष्णु) शत्रुसेनाका धर्षण करनेहारा (मारुतं नाम) मरुतोंका नाम (आ दधानाः) धारण करते हैं और जो (दोहसे चित्) जनताके पोषणके लिए (मक्षु) तुरन्त (अयाः) अग्रगामी बनते हैं वे (सु-दानुः) अच्छे दानी वीर (न) अभी (ये) जो (अयासः) भटकनेवाले (स्तौनाः) चोर हैं उन्हें (उग्रान् नु चित्) भीषण डाकुओंको भी (अव यासत) परास्त कर देते हैं।

भावार्थ— ३३६ ये वीर सैनिक वीरभद्रके सुपुत्र हैं। सारी पृथ्वी इनका पोषण करती है। यही कारण है कि पृथ्वीका बडप्पन चहुँओर विख्यात है। लोककल्याणके लिए पृथ्वी धान्यरूपी गर्भका धारण करती है। ३३७ ये वीर समाजमेंही रहते हैं और दोषोंको दूर हटाकर पवित्रतापूर्ण वातावरण फैला देते हैं। वे कभी जनताका परित्याग करके दूर नहीं जाते हैं। और अपना तेज बढाकर सबको अनुकूलतापूर्वक दान देते रहते हैं। ३३८ जिन्होंने शूरका नाम धारण किया है और जो जनताके पुष्ट्यर्थ प्रयत्नशील बने रहते हैं वे प्रबल डाकुओंको भी दूर हटाते हैं।

रूप। (२) अन्यत् = दूसरा, बदला हुआ, अलग, अनूठा। (३) चिकित्वत् = जाननेवाला, परिचित, अनुभविक, ज्ञानी। [३३५] (१) रेणुः = धूलि, मल; अ-रेणवः = निर्मल (निष्पाप)। [३३६] (१) मीळ्हुष = (मीढ्वस्) स्नेहयुक्त, उदार, प्रभावी, ऐश्वर्यसंपन्न, सिंचन करनेहारा। (२) दाधृविः = (धृ धारणे) सबका धारण करनेहारी (पृथ्वी)। (३) भरध्यै = (भृ धारणपोषणयोः) पालनपोषण। [महः माता मही] = महान् पुत्रोंकी माता है, वह इसीलिये पृथ्वीको 'मही' नाम दिया गया है। [३३७] (१) अया = गति। (२) ईष् = उड जाना, देना, देखना, चढाई करना, वध करना, चुपकेसे चले जाना, सरक जाना। (३) जनुस् = उत्पत्ति, प्राणी, जीव, जन्मभूमि। (४) जोष = मनोभाव, सुख, आनन्द, उपयोग। (५) [अन्तः सन्तः अवद्यानि पुनानाः] = जो...

(३३९) ते । इत् । उग्राः । शवसा । धृष्णुऽसेनाः । उभे इति । युजन्त । रोदसी इति ।
सुमेके इति सुऽमेके ।
अध । स्म । एषु । रोदसी । स्वऽशोचिः ।
आ । अमवत्ऽसु । तस्थौ । न । रोकः ॥६॥

(३४०) अनेनः । वः । मरुतः । यामः । अस्तु । अनश्वः । चित् । यम् । अजति । अरथी
अनवसः । अनभीशुः । रजःऽतूः ।
वि । रोदसी इति । पथ्याः । याति । साधन् ॥७॥

अन्वयः— ३३९ ते शवसा उग्राः धृष्णु-सेनाः सुमेके उभे रोदसी युजन्त इत्, अध स्म एषु अम-व
रोदसी स्व-शोचिः, रोकः न आ तस्थौ ।

३४० (हे) मरुतः! वः यामः अन्-एनः अस्तु, अन्-अश्वः अ-रथीः चित् यं अजा
अन्-अवसः अन्-अभीशुः रजस्-तूः साधन् रोदसी पथ्याः वि याति ।

अर्थ— ३३९ (ते) वे (शवसा) अपने बलसे (उग्राः) उग्र प्रतीत होनेवाले, और (धृष्णु-सेनाः) साह
सेनासे युक्त वीर (सुमेके) सुहानेवाले (उभे रोदसी) भूलोक एवं द्युलोकमें (युजन्त इत्) सुसज्ज
रहते हैं। (अध स्म) और (अम-वत्सु) बलवान (एषु) इन वीरोंके तैयार रहते समय (रोदसी) आक
तथा पृथ्वी (स्व-शोचिः) अपने तेजसे युक्त होते हैं और पश्चात् (रोकः) उन्हें किसी रुकावटसे (
आ तस्थौ) मुठभेड नहीं करनी पडती है!

३४० हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (वः यामः) तुम्हारा रथ (अन्-एनः) दोषरहित (अस्
रहे, उसे (अन्-अश्वः) घोडे न जोते हों, तोभी (अ-रथीः) रथपर न बैठनेवाला भी (यं अजति
जिसे चलाता है। (अन्-अवसः) जिसमें रक्षाका साधन नहीं तथा (अन्-अभीशुः) लगाम नहीं अ
(रजस्-तूः) धूल उडानेवाला हो तथापि वह (साधन्) इच्छापूर्ति करता हुआ (रोदसी) आका
एवं पृथ्वी परके (पथ्याः) मार्गोंसे (वि याति) विविध प्रकारोंसे जाता है।

भावार्थ— ३३९ ये वीर तथा इनकी साहसपूर्ण सेना सदैव तैयार रहती है, अतः इनकी राहमें कोई रुकावट ग
नहीं रहती है। इसी कारणसे विना किसी कठिनाई या विघ्नके ये अपना कर्तव्य पूरा करते हैं।

३४० मरुतोंके रथमें दोष नहीं है। उसमें घोडे नहीं जोते हैं। जो मनुष्य रथ चलानेमें अनभ्यस्त है
वह भी उसे चला सकता है। युद्धके समय उपयोग दे सके, ऐसा कोई रक्षाका साधन उसपर नहीं है और खींचनेके लि
लगाम भी नहीं है। वह रथ जब चलने लगता है, तब धूल या गर्द उडाता हुआ भूमिपरसे जाता है और उसी प्रक
अन्तरिक्षमेंसे भी जाता है।

अन्दर रहकर शारीरिक दोष दूर हटाकर उसे पवित्र करनेहारे (अध्यात्मपक्षमें मरुत्-प्राण)। [३३८] (१
धृष्णु नाम = ऐसा नाम कि जिससे शत्रुके दिलमें भय उत्पन्न हो। (२) स्तेन = डाकू, चोर, उचक्का। (३) यम
प्रयत्न करना। अव+यस= दूर करना, हटाना। [३३९] (१) रोकः= तेजस्विता, दीप्ति। [३४०] (१
अवसं = अन्न, संरक्षण, संरक्षक, धन, गति, यत्न, समाधान, इच्छा, आकांक्षा। (२) रजस्-तूः = अन्तरिक्षमें
त्वरापूर्वक वेगसे जानेवाला। (३) रोदसी पथ्याः याति= अन्तरिक्षमेंसे रथ जाना है। (देखो मंत्र ३३।८०।

(३४१) न । अस्य । वर्ता । न । तरुता । नु । अस्ति ।
मरुतः । यम् । अवथ । वाजऽसातौ ।
तोके । वा । गोषु । तनये । यम् । अप्ऽसु ।
सः । व्रजं । दर्ता । पार्ये । अध । द्योः ॥८॥

(३४२) प्र । चित्रम् । अर्कम् । गृणते । तुराय । मारुताय । स्वऽतवसे । भरध्वम् ।
ये । सहांसि । सहसा । सहन्ते । रेजते । अग्ने । पृथिवी । मखेभ्यः ॥९॥

अन्वयः- ३४१ मरुतः ! वाज-सातौ यं अवथ अस्य वर्ता न तरुता नु न अस्ति, अध तोके तनये गोषु अप्सु वा यं सः पार्ये द्योः व्रजं दर्ता ।

३४२ (हे) अग्ने ! ये सहसा सहांसि सहन्ते, मखेभ्यः पृथिवी रेजते, गृणते तुराय स्व-तवसे मारुताय चित्रं अर्कं प्र भरध्वं ।

अर्थ— ३४१ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वाज-सातौ) संग्राममें (यं अवथ) जिसकी रक्षा तुम करते हो, (अस्य) उसका (वर्ता न) घेरनेवाला कोई नहीं है, या उसका (तरुता) विनाशक भी कोई (नु न अस्ति) नहीं रहता है। (अध) उसी प्रकार (तोके) पुत्रोंमें, (तनये) पौत्रोंमें, (गोषु) गौओंमें या (अप्सु) जलमें रहनेवाले (यं) जिस मानवका संरक्षण तुम करते हो, (सः) वह (पार्ये) युद्धमें (द्योः) तेजस्वी द्युलोककी (व्रजं) गोशालाका भी (दर्ता) विदारण करता है, अपने अधीन करता है।

३४२ हे (अग्ने !) अग्ने ! तथा अग्निके अनुयायी लोगों ! (ये) जो अपने (सहसा) बलसे (सहांसि) शत्रुओंके आक्रमणों को (सहन्ते) बरदाश्त करते हैं, उन (मखेभ्यः) बडे वीरोंके वेगसे (पृथिवी रेजते) भूमितक दहल उठती है; उन (गृणते) स्तोत्रपाठ करनेहारे, (तुराय) वेग जानेवाले एवं (स्व-तवसे) अपने निजी बलसे युक्त (मारुताय) वीर मरुतोंके संघके लिए (चित्रं) आश्चर्य-कारक, (अर्कं) पूजनीय तथा प्रशंसनीय [illegible] (प्र भरध्वं) पर्याप्त मात्रामें दे दो।

भावार्थ— ३४१ ये वीर जिसके संरक्षणका बीडा उठाते हैं, [illegible] कभी [illegible] नहीं होता है। पुत्रपौत्रों, पशुओं या जलमें [illegible] रहनेवाले जिन अनुयायियोंका [illegible] ये वीर करते हैं वे [illegible] शत्रुओंका विध्वंस कर सकते हैं। [illegible] कोई आश्चर्यकी बात नहीं।

३४२ इन वीरोंके [illegible] हो उठती है। [illegible] इन वीरोंके [illegible] तरह का अन्न दे दो और इन्हें संतुष्ट रखो।

टिप्पणी— [३४१] (१) वर्तृ [illegible] (२) [illegible] लड़ाई, [illegible], [illegible], वेग, बल। वाज [illegible] (३) [illegible] = हिंसा, [illegible], विनाश, संग्रह। (३) तरुतृ = [illegible] (४) [illegible] ; (५) द्योः व्रजः = स्वर्गकी गोशाला। [३४२] (१) [illegible] = [illegible], [illegible] हिलनेवाला, हिलानेवाला, [illegible] (२) [illegible] = सूर्य, [illegible], तेज, [illegible] इत्यादि।

(३४३) त्विषिऽमन्तः । अध्वरस्यऽइव । दिद्युत् । तृषुऽच्यवसः । जुह्वः । न । अग्नेः ।
अर्चत्रयः । धुनयः । न । वीराः । भ्राजत्ऽजन्मानः । मरुतः । अधृष्टाः ॥ १०

(३४४) तम् । वृधन्तम् । मारुतम् । भ्राजत्ऽऋष्टिम् । रुद्रस्य । सूनुम् । हवसा । आ । विवा
दिवः । शर्धाय । शुचयः । मनीषाः । गिरयः । न । आपः । उग्राः । अस्पृध्रन् ॥ १

मित्रावरुणपुत्र वसिष्ठऋषि (ऋ० ७।५६।१-२५)

(३४५) के । ईम् । विऽअक्ताः । नरः । सऽनीळाः ।
रुद्रस्य । मर्याः । अध । सुऽअश्वाः ॥ १ ॥

अन्वयः— ३४३ मरुतः अ-ध्वरस्यइव त्विषि-मन्तः तृषु-च्यवसः, अग्नेः जुह्वः न, दिद्युत् अर्चत्र वीराः न धुनयः, भ्राजत्-जन्मानः अ-धृष्टाः । ३४४ तं वृधन्तं भ्राजत्-ऋष्टिं रुद्रस्य सूनुं मा हवसा आ विवासे, दिवः शर्धाय उग्राः शुचयः मनीषाः, गिरयः आपः न, अस्पृध्रन् । ३४५ रुद्रस्य स-नीळाः मर्याः सु-अश्वाः व्यक्ताः नरः ईं के ?

अर्थ- ३४३ (मरुतः) वे वीर मरुत् (अ-ध्वरस्यइव) अहिंसायुक्त कर्मके समान (त्विषि-मन्त तेजस्वी, (तृषु-च्यवसः) वेगपूर्वक बाहर निकलनेवाले, (अग्नेः जुह्वः न) अग्नि की लपटों के तु (दिद्युत्) प्रकाशमान, (अर्चत्रयः) पूजनीय, (वीराः न) वीरोंके समान (धुनयः) शत्रुओंके हिलानेवा (भ्राजत्-जन्मानः) तेजस्वी जीवन धारण करनेहारे हैं तथा (अ-धृष्टाः) इनका पराभव दूसरे क नहीं कर सकते हैं । ३४४ (तं वृधन्तं) उस बढनेवाले तथा (भ्राजत्-ऋष्टिं) तेजस्वी भाले धा करनेहारे (रुद्रस्य सूनुं) वीरभद्रके सुपुत्र (मारुतं) वीर मरुतों के संघका मैं (आ विवासे) सभी तर स्वागत करता हूँ । उसी प्रकार (दिवः शर्धाय) दिव्य बलकी प्राप्ति के लिए हमारी (उग्राः शुचय उग्र तथा पवित्र (मनीषाः) इच्छाएँ (गिरयः आपः न) पर्वत से बहनेवाली जलधाराओं के सम (अस्पृध्रन्) स्पर्धा करती हैं । ३४५ (अध) और (रुद्रस्य स-नीळाः मर्याः) महावीरके, एक घ रहनेहारे वीर मर्त्य (सु-अश्वाः व्यक्ताः नरः) उत्कृष्ट घोडे समीप रखनेवाले, सबको परिचित एवं ने (ईं के) भला सचमुच कौन हैं ?

भावार्थ— ३४३ ये वीर तेजस्वी, वेगसे धावा करनेवाले, शत्रुदलको हटानेवाले हैं, अतएव इनका पराभव हो कदापि संभव नहीं ।

३४४ में इन शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्ज वीरोंका सुस्वागत करता हूँ । हम अपनी पवित्र आकांक्षाओंको इन निकट बडी स्पर्धासे भेजते हैं, ताकि हमें दिव्य बल प्राप्त हो जाय और इस विषयमें सचेष्ट रहते हैं कि अधिकाधि बल हमें प्राप्त हो जाय ।

३४५ हे लोगो ! जो महावीरके सैनिक, जनताके हितकर्ता एवं अच्छे घोडे समीप रखनेवाले होने कारण सबको परिचित हैं, भला वे कौन हैं ?

टिप्पणी— [३४३] (१) तृषु= प्यासा, शीघ्र-वेगसे जानेवाला । (२) च्यु= बाहर निकलना, गिर पडना, टपक [३४५] (१) व्यक्त = साफ दिखाई देनेवाला, प्रकट हुआ, अलंकृत, स्वच्छ, सबको ज्ञात, सयाना । (२) मर्या (नरेभ्यो हिताः । सायणभाष्य) मानवोंका हित करनेहारे । रुद्रस्य मर्याः= महावीरके वीर सैनिक (३) स-नीळान एक घरमें (Barrack में) रहनेवाले । (देखिये मंत्र ११७,३११,४४७ ।)

(३४६) नकिः । हि । एषाम् । जनूंषि । वेद । ते । अङ्ग । विद्रे । मिथः । जनित्रम् ॥२॥
(३४७) अभि । स्वऽपूभिः । मिथः । वपन्त । वातऽस्वनसः । श्येनाः । अस्पृध्रन् ॥३॥
(३४८) एतानि । धीरः । निण्या । चिकेत । पृश्निः । यत् । ऊधः । मही । जभार ॥४॥
(३४९) सा । विट् । सुऽवीरा । मरुत्ऽभिः । अस्तु । सनात् । सहन्ती । पुष्यन्ती । नृम्णम् ॥५॥
(३५०) यामम् । येष्ठाः । शुभा । शोभिष्ठाः । श्रिया । सम्ऽमिश्लाः । ओजःऽभिः । उग्राः ॥६

अन्वयः— ३४६ एषां जनूंषि नकिः हि वेद, ते मिथः जनित्रं अङ्ग विद्रे ।
३४७ स्व-पूभिः मिथः अभि वपन्त, वात-स्वनसः श्येनाः अस्पृध्रन् ।
३४८ धी-रः एतानि निण्या चिकेत, यत् मही पृश्निः ऊधः जभार ।
३४९ सा विट् मरुद्भिः सु-वीरा, सनात् सहन्ती, नृम्णं पुष्यन्ती अस्तु ।
३५० यामं येष्ठाः, शुभा शोभिष्ठाः, श्रिया सं-मिश्लाः, ओजोभिः उग्राः ।

अर्थ— ३४६ (एषां) इन वीरोंके (जनूंषि) जन्म (नकिः हि वेद) कोईभी नहीं जानता है। (ते) वे वीर ही (मिथः) एक दूसरेका (जनित्रं) जन्मस्थान (अङ्ग) सचमुच (विद्रे) जानते हैं। ३४७ वे वीर जब (स्व-पूभिः) अपने पवित्रता करनेहारे साधनोंके साथ (मिथः अभि वपन्त) एकत्र जुड जाते हैं, तब (वात-स्वनसः) पवनके तुल्य बडा भारी शब्द करनेवाले वे वीर (श्येनाः) बाज पंछियोंकी नाईं वेगमें (अस्पृध्रन्) स्पर्धा करते हैं।

३४८ (धी-रः) बुद्धिमान पुरुष इन ही वीरों के (एतानि निण्या) ये गुप्त कार्यकलाप (चिकेत) जान सकता है। (यत्) जिन्हें (मही) महान (पृश्निः) गौने अपने (ऊधः) दुग्धाशयमें से दूध पिला-कर (जभार) पुष्ट किया है।

३४९ (सा विट्) वह प्रजा (मरुद्भिः) वीर मरुतों के सहायता से (सु-वीरा) अच्छे वीरों से युक्त होकर (सनात्) हमेशा ही (सहन्ती) शत्रुका पराभव करनेहारी तथा (नृम्णं पुष्यन्ती) बलका संवर्धन करनेहारी (अस्तु) बने।

३५० वे वीर शत्रु पर (यामं) हमले करनेके (येष्ठाः) प्रयत्न करनेहारे, (शुभा शोभिष्ठाः) अलं-कारों से सुहानेवाले, (श्रिया) कांति से (सं-मिश्लाः) जुड जानेवाले तथा (ओजोभिः उग्राः) शारीरिक सामर्थ्य से उग्र स्वरूपवाले प्रतीत होते हैं।

भावार्थ— ३४६ किसीकोभी इनका जन्मवृत्तान्त ज्ञात नहीं; शायद वेही अपना जन्म जानते हों। ३४७ वीर सैनिक अपनी शक्ति बढानेके कार्यमें चढाऊपरी करते हैं, होड लगाते हैं। ३४८ इन वीरोंके गुप्त कार्य केवल बुद्धिमान पुरुषकोही विदित हैं। इन वीरोंका पोषण गौने अपने दुग्धके प्रदानसे किया है। [ये गौको अपनी माता समझनेवाले हैं।] ३४९ समूची प्रजा शूर एवं वीर बने, वह अपना बल बढाती रहे और शत्रुका पराभव करती रहे। ३५० ये वीर शत्रुपर हमले चढानेमें तत्पर, शोभायमान, तेजस्वी, एवं सामर्थ्यवान हैं।

टिप्पणी— [३४७] (१) वप्= बोना, फैलाना, फेंकना, उत्पन्न करना। अभि-वप् = फैलाना, बोना, ढकना। (२) पू= (पवने) पवित्र करना, स्वच्छ करना, उन्मुक्त करना, [३४८] (१) निण्य= छिपा हुआ, गुप्त, आश्चर्य-जनक। [३५०] (१) येष्ठ= (येष्= प्रयत्न करना, चेष्टा करना, कोशिश करना + स्थ= स्थिर रहना) कोशिश करते हुए अटल खडे रहनेवाले। या= जाना, (या+इष्ठ) अत्यन्त वेगसे जानेवाले (अथवा [illegible]) वेगसे जानेवाला।)

(३५५) सुऽआयुधासः । इष्मिणः । सुऽनिष्काः । उत । स्वयम् । तन्वः । शुम्भमानाः ॥११॥

(३५६) शुची । वः । हव्या । मरुतः । शुचीनाम् । शुचिम् । हिनोमि । अध्वरम् । शुचिऽभ्यः । ऋतेन । सत्यम् । ऋतऽसापः । आयन् । शुचिऽजन्मानः । शुचयः । पावकाः ॥१२॥

(३५७) अंसेषु । आ । मरुतः । खादयः । वः । वक्षःऽसु । रुक्माः । उपऽशिश्रियाणाः । वि । विद्युतः । न । वृष्टिऽभिः । रुचानाः । अनु । स्वधाम् । आयुधैः । यच्छमानाः ॥१३॥

अन्वयः— ३५५ सु-आयुधासः इष्मिणः सु-निष्काः उत स्वयं तन्वः शुम्भमानाः। ३५६ हे मरुतः! शुचीनां वः शुची हव्या, शुचिभ्यः शुचिं अध्वरं हिनोमि, ऋत-सापः शुचि-जन्मानः शुचयः पावकाः ऋतेन सत्यं आयन्। ३५७ हे मरुतः! वः अंसेषु खादयः आ, वक्षःसु रुक्माः उप-शिश्रियाणाः, विद्युतः न, रुचानाः वृष्टिभिः आयुधैः स्व-धां अनु यच्छमानाः।

अर्थ- ३५५ वे वीर (सु-आयुधासः) अच्छे हथियार समीप रखनेहारे, (इष्मिणः) वेगसे जानेहारे, (सु-निष्काः) सुन्दर मुहरोंके हार धारण करनेवाले (उत) और वे (स्वयं) अपनेही (तन्वः) शरीरोंको (शुम्भमानाः) सुशोभित करनेहारे हैं।

३५६ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (शुचीनां वः) पवित्र ऐसे तुम्हें (शुची हव्या) शुद्ध हवि-द्रव्य हम देते हैं, (शुचिभ्यः) विशुद्ध ऐसे तुम्हारे लिए (शुचिं अध्वरं) पवित्र यज्ञको मैं (हिनोमि) करता हूं। (ऋत-सापः) सत्यकी उपासना करनेहारे, (शुचि-जन्मानः) विशुद्ध जन्मवाले, [illegible] (शुचयः) स्वयं पवित्र होते हुए दूसरोंको (पावकाः) पवित्र करनेवाले तुम (ऋतेन) सत्यकी उपासनासे (सत्यं) अमरपनको (आयन्) पाते हो।

३५७ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (वः अंसेषु) तुम्हारे कंधोंपर (खादयः आ) आभूषण तथा (वक्षःसु रुक्माः) छातीपर स्वर्णमुद्राओंके हार (उप-शिश्रियाणाः) लटकते रहते हैं। (विद्युतः न) बिजलियोंके तुल्य (रुचानाः) चमकनेवाले तुम (वृष्टिभिः आयुधैः) वर्षा करनेवाले [illegible] (स्व-धां) धारकशक्ति बढानेवाला पुष्टिकारक अन्न हमें (अनु यच्छमानाः) देते रहो।

भावार्थ— ३५५ वीर सैनिकोंके हथियार अच्छे हैं और वे वेगसे [illegible] हैं। [illegible] आभूषणोंसे अपने शरीर को सुशोभित करते हैं। ३५६ वीर [illegible] विशुद्ध हैं और [illegible] है। वे [illegible] करते हैं और [illegible] करते हैं। वे स्वयं पवित्र [illegible] करते हैं। सत्यकी [illegible] करते हुए वे अमरत्वको प्राप्त कर लेते हैं। ३५७ वीर [illegible] वक्षःस्थलपर आभूषण दीख पडते हैं। [illegible] करते हैं, [illegible] [illegible] देते हैं और [illegible] किया करते हैं।

टिप्पणी— [३५५] (१) निष्क = सुवर्ण, [illegible] [illegible] = वे वीर [illegible] [illegible] [illegible]। [३५६] (१) [illegible] = [illegible] (२) [illegible] = [illegible] (३) सत् = [illegible] (४) ऋत-सापः = [illegible] [३५७] (१) [illegible] = [illegible] (२) वृष्टि = [illegible] (३) रुचानाः = रुच् = [illegible]

मरुत् (हि०) १८

(३५८) प्र । बुध्न्या । वः । ईरते । महांसि । प्र । नामानि । प्रऽयज्यवः । तिरध्वम् ।
सहस्रियम् । दम्यम् । भागम् । एतम् । गृहऽमेधीयम् । मरुतः । जुषध्वम् ॥१४
(३५९) यदि । स्तुतस्य । मरुतः । अधिऽइथ । इत्था । विप्रस्य । वाजिनः । हवीमन् ।
मक्षु । रायः । सुऽवीर्यस्य । दात । नु । चित् । यम् । अन्यः । आऽदभत् । अरावा ॥१
(३६०) अत्यासः । न । ये । मरुतः । सुऽअञ्चः । यक्षऽदृशः । न । शुभयन्त । मर्याः ।
ते । हर्म्येऽस्थाः । शिशवः । न । शुभ्राः । वत्सासः । न । प्रऽक्रीळिनः । पयःऽधाः ॥१

अन्वयः— ३५८ (हे) प्र-यज्यवः मरुतः ! वः बुध्न्या महांसि प्र ईरते, नामानि प्र तिरध्वं, सहस्रियं दम्यं गृह-मेधीय भागं जुषध्वं । ३५९ (हे) मरुतः ! वाजिनः विप्रस्य हवीमन् स्तुतस्य यदि इत्था अधीथ, सु-वीर्यस्य रायः मक्षु दात, अन्यः अ-रावा नु चित् यं आदभत् । ३६० मरुतः अत्यासः न सु-अञ्चः, यक्ष-दृशः मर्याः न शुभयन्त, ते हर्म्येष्ठाः शिशवः न शुभ्राः, पयो-धाः वत्सासः न प्र-क्रीळिनः ।

अर्थ- ३५८ हे (प्र-यज्यवः मरुतः !) पूज्य वीर मरुतो ! (वः) तुम्हारे (बुध्न्या महांसि) मौलिक आन्तरिक सामर्थ्य तथा बल (प्र ईरते) प्रकट होते हैं। तुम अपने (नामानि) यशोंको (प्र तिरध्वं) [illegible] बढा दो। (एतं) इस (सहस्रियं) सहस्रावधि गुणोंसे युक्त (दम्यं) घरके (गृह-मेधीय) [illegible] (भागं) विभागका तुम (जुषध्वं) सेवन करो।

३५९ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वाजिनः) अन्नयुक्त (विप्रस्य) ज्ञानी पुरुषकी (हवीमन्) हविष्प्रदान करते समय की हुई (स्तुतस्य) स्तुतिको (यदि) अगर (इत्था) इस प्रकार तुम (अधीथ) जानते हो तो (सु-वीर्यस्य) अच्छी वीरतासे युक्त (रायः) धन (मक्षु) तुरन्तही उसे (दात) दे दो। नहीं तो (अन्यः) दूसरा कोई (अ-रावा) शत्रु (नु चित्) सचमुचही (यं) उसे (आदभत्) विनष्ट कर डालेगा।

३६० (ये मरुतः) जो वीर मरुत् (अत्यासः न) घुडदौडके घोडोंके तुल्य (सु-अञ्चः) [illegible] जानेवाले हैं, (यक्ष-दृशः) यज्ञका दर्शन लेने आये हुए (मर्याः न) लोगोंके तुल्य [illegible] आपको शोभायमान करते हैं, (ते) वे वीर (हर्म्य-स्थाः) राजप्रासादमें रहनेवाले (शिशवः न) बालकोंके समान (शुभ्राः) सुहानेवाले हैं और (पयो-धाः वत्सासः न) दूधपर पलनेवाले बछडोंके समान (प्र-क्रीळिनः) अत्यधिक खिलाडीपनसे परिपूर्ण हैं।

[illegible] ३५८ [illegible] छिपे पडे हैं वे प्रकट हों और उनका यश दशदिशाओंमें प्रसृत हो। गृहस्थके [illegible] का वे सेवन करें। ३५९ अन्नदान करते समय ज्ञानीकी प्रार्थनाको यदि ये वीर [illegible] [illegible] धन दे डालें। अगर ऐसा न हुआ तो दूसरा कोई शत्रु उस सम्पत्तिको हथा बैठेगा।
३६० [illegible] गतिमान, सुशोभित, सुन्दर तथा खिलाडी हैं।

[illegible] — [३५८] [illegible] प्र तिर = [illegible] पार चले जाना, फैलाव पहुँचना। (२) बुध्न्य = [illegible] [illegible] (३) दम्-ने = घर, आत्मसंयम, [illegible] बनाना, [illegible] [illegible] [illegible] (४) गृह-मेध = घरमें किया हुआ यज्ञ, गृहस्थका कर्तव्य [illegible] [illegible] [३५९] (१) अरावा = (अ-रावा) दान न देनेवाला [illegible] [illegible] दभ् = दबाना (नाश करना, दबाना, जाना, दबाना। [३६०] [illegible]
[illegible]

(३६१) दुवस्यन्तः । नः । मरुतः । मृळन्तु । वरिवस्यन्तः । रोदसी इति । सुमेके इति सुऽमेके ।
आरे । गोऽहा । नृऽहा । वधः । वः । अस्तु । सुम्नेभिः । अस्मे इति । वसवः । नमध्वम् ॥१७॥
(३६२) आ । वः । होता । जोहवीति । सत्तः । सत्राचीम् । रातिम् । मरुतः । गृणानः ।
यः । ईवतः । वृषणः । अस्ति । गोपाः । सः । अद्वयावी । हवते । वः । उक्थैः ॥१८॥
(३६३) इमे । तुरम् । मरुतः । रमयन्ति । इमे । सहः । सहसः । आ । नमन्ति ।
इमे । शंसम् । वनुष्यतः । नि । पान्ति । गुरु । द्वेषः । अररुषे । दधन्ति ॥१९॥

अन्वयः— ३६१ दुवस्यन्तः सुमेके रोदसी वरिवस्यन्तः मरुतः नः मृळन्तु। हे वसवः! गो-हा नृ-हा वः वधः आरे अस्तु, सुम्नेभिः अस्मे नमध्वं। ३६२ (हे) वृषणः मरुतः! सत्तः सत्राचीं रातिं गृणानः होता वः आ जोहवीति, यः ईवतः गोपाः अस्ति सः अद्वयावी वः उक्थैः हवते। ३६३ इमे मरुतः तुरं रमयन्ति, इमे सहः सहसः आ नमन्ति, इमे शंसं वनुष्यतः नि पान्ति, अररुषे गुरु द्वेषः दधन्ति।

अर्थ— ३६१ शत्रुओंका दुवस्यन्तः विनाश करनेहारे तथा सुमेके रोदसी सुस्थिर द्यावापृथ्वीको (वरिवस्यन्तः) आश्रय देनेहारे मरुतः वीर मरुत् नः मृळन्तु हमें सुखी बना दें। हे वसवः! [illegible] बसानेवाले वीरो! गो-हा गोवध करनेहारा नृ-हा वधा शत्रुदलमें [illegible] वः वधः तुम्हारा आयुध हमसे आरे अस्तु दूर रहे; तुम सुम्नेभिः [illegible] हमारी ओर आनेके लिए निकल पडो। ३६२ हे वृषणः मरुतः! [illegible] स्थानपर बैठा हुआ तथा (सत्रा-अची) सभी जगह पहुँचनेवाले [illegible] करनेहारा एवं होता बुलानेवाला याजक (वः आ जोहवीति) तुम्हें बुला रहा है। यः जो ईवतः [illegible] प्रगति करनेवालोंका संरक्षक (अस्ति) है, सः वह (अ-द्वयावी) [illegible] तुम्हारी उक्थैः स्तोत्रोंसे हवते प्रार्थना करता है। ३६३ इमे मरुतः ये वीर मरुत [illegible] वीरोंको रमयन्ति आनन्द देते हैं। इमे ये [illegible] आ नमन्ति झुकाते हैं, पाते हैं। इमे ये (वीर) [illegible] पान्ति रक्षा करते हैं। [illegible]

भावार्थ— ३६१ [illegible]

[illegible]

टिप्पणी— [३६१] (१) [illegible]

[illegible]

(३६४) इमे । रध्रम् । चित् । मरुतः । जुनन्ति ।
भृमिम् । चित् । यथा । वसवः । जुषन्त ।
अप । बाधध्वम् । वृषणः । तमांसि ।
धत्त । विश्वम् । तनयम् । तोकम् । अस्मे इति ॥२०॥

(३६५) मा । वः । दात्रात् । मरुतः । निः । अराम ।
मा । पश्चात् । दघ्म । रथ्यः । विऽभागे ।
आ । नः । स्पार्हे । भजतन । वसव्ये ।
यत् । ईम् । सुऽजातम् । वृषणः । वः । अस्ति ॥२१॥

अन्वयः— ३६४ इमे वसवः मरुतः यथा रध्रं चित् जुनन्ति भृमिं चित् जुषन्त, (हे) वृषणः! तमांसि अप बाधध्वं, अस्मे विश्वं तोकं तनयं धत्त।

३६५ (हे) रथ्यः मरुतः! वः दात्रात् मा निः अराम, वि-भागे पश्चात् मा दघ्म, (हे) वृषणः! वः सु-जातं यत् ईं अस्ति स्पार्हे वसव्ये नः आ भजतन।

अर्थ- ३६४ (इमे) ये (वसवः) बसानेहारे (मरुतः) वीर मरुत् (यथा) जैसे (रध्रं चित्) समृद्धिशाली मानवके निकट (जुनन्ति) जाते हैं, उसी प्रकार (भृमिं चित्) भटकनेवाले भीखमँगेके समीप भी वे (जुषन्त) जाते रहते हैं; हे (वृषणः!) बलिष्ठ वीरो! (तमांसि अप बाधध्वं) अँधेरे को दूर हटा दो और (अस्मे) हमारे लिए (विश्वं तनयं तोकं) सभी पुत्रपौत्रों-संतानों-को (धत्त) दे दो।

३६५ हे (रथ्यः मरुतः!) रथपर बैठनेवाले वीर मरुतो! (वः) तुम्हारे (दात्रात्) दानके स्थानसे हम (मा निः अराम) बहुत दूर न रहें। (वि-भागे) धनका बँटवारा होते समय (पश्चात् मा दघ्म) हमें सबके पीछे न रखो। हे (वृषणः!) बलिष्ठ वीरो! (वः) तुम्हारा (सु-जातं) उच्चकोटिका (यत् ईं) जो कुछ धन (अस्ति) है, उस (स्पार्हे वसव्ये) स्पृहणीय धनमें (नः) हमें (आ भजतन) सब प्रकारसे अंशभागी करो।

भावार्थ- ३६४ वीर सैनिक जिस प्रकार धनाढ्योंका संरक्षण करते हैं, उसी प्रकार वे निर्धनोंकाभी संरक्षण करते हैं। वीरोंको उचित है कि वे जिधरभी चले जायँ उधर अँधियारी दूर करके सबको प्रकाशका मार्ग बतला दें। हमारे पुत्रपौत्रोंको सुरक्षित रख दें।

३६५ हमें धनका बँटवारा ठीक समयपर मिल जाय।

करना, उच्चार करना, ढूँढना, प्रिय होना। (५) अररुस् = जानेवाला, हिलनेवाला, शत्रु, शस्त्र (अ-प्रयच्छन्; सायनः।) रा = देना; ररुस् = देनेवाला; अ-ररुस् = न देनेहारा, जो दान न देता हो-- (कंजुस, कृपण।)

[३६४] (१) रध्र = (राध् संसिद्धौ) = धनिक, उदार, सुखी, दुःख देनेवाला, पूजा करनेहारा। (२) भृमि = (भ्रम् चलने = भटकना) झँझावात, शीघ्रता, इधर उधर घूमनेवाला (भीखमँगा)। (३) जुष् (गतौ) = जाना, हिलना।

[३६५] (१) दात्रं = काटनेका हथियार, दान, दानका स्थान। दा+त्रं = जिस दानसे त्राण-रक्षा होता हो, वह दान।

३६६) सम् । यत् । हनन्त । मन्युऽभिः । जनासः ।
शूराः । यह्वीषु । ओषधीषु । विक्षु ।
अध । स्म । नः । मरुतः । रुद्रियासः । त्रातारः । भूत । पृतनासु । अर्यः ॥२२॥

३६७) भूरि । चक्र । मरुतः । पित्र्याणि ।
उक्थानि । या । वः । शस्यन्ते । पुरा । चित् ।
मरुत्ऽभिः । उग्रः । पृतनासु । साळ्हा ।
मरुत्ऽभिः । इत् । सनिता । वाजम् । अर्वा ॥२३॥

अन्वयः- ३६६ (हे) रुद्रियासः अर्यः मरुतः ! यत् शूराः जनासः यह्वीषु ओषधीषु विक्षु मन्युभिः सं हनन्त अध पृतनासु नः त्रातारः भूत स्म ।

३६७ (हे) मरुतः ! पित्र्याणि भूरि उक्थानि चक्र, वः या पुरा चित् शस्यन्ते, उग्रः मरुद्भिः पृतनासु साळ्हा, मरुद्भिः इत् अर्वा वाजं सनिता ।

अर्थ- ३६६ हे (रुद्रियासः) महावीरके (अर्यः) पूज्य (मरुतः!) वीर मरुतो ! (यत्) जब तुम्हारे (शूराः जनासः) शूर लोग (यह्वीषु) नदियों में (ओषधीषु) अरण्य में-वृक्षकुंजमें (विक्षु) प्रजा में (मन्युभिः) उत्साहपूर्वक शत्रुपर (सं हनन्त) मिलकर हमला करते हैं (अध) तब इन ऐसे (पृतनासु) युद्धों में (नः) हमारे (त्रातारः भूत स्म) संरक्षक बने रहो ।

३६७ हे (मरुतः!) वीर मरुतो ! तुम (पित्र्याणि) पितरों के संबंध में (भूरि) बहुतसे (उक्थानि) स्तोत्र (चक्र) कर चुके हो; (वः) तुम्हारे (या) इन स्तोत्रों की (पुरा चित्) पहलेसे (शस्यन्ते) प्रशंसा होती है । (उग्रः) उग्र स्वरूपवाला वीर (मरुद्भिः) मरुतोंकी सहायतासे (पृतनासु) युद्धों में शत्रुओं का (साळ्हा) पराभव करता है; (मरुद्भिः इत्) वीर मरुतोंकी प्रेरणासे (अर्वा) घोडा भी (वाजं) युद्धक्षेत्रके (सनिता) अपने कार्य पूर्ण करता है ।

भावार्थ— ३६६ वीर सैनिक जब उत्साहपूर्वक शत्रुपर हमले करते हैं, तब उनकी लडाइयाँ नदियोंमें, अरण्योंमें विद्यमान घने निकुंजोंमें तथा जनताके मध्य हुआ करती हैं। ऐसे युद्धोंमें वे हमारी रक्षा करें।

३६७ वीर मरुत् कवि हैं। उनके काव्योंकी प्रशंसा सभी करते हैं और इनकी सहायतासे वीर सैनिक शत्रुओंको परास्त करते हैं तथा घोडे भी युद्धमें अपना कार्य ठीक प्रकारसे निभाते हैं।

टिप्पणी— [३६६] (१) यह्व= बडा, शक्तिमान, चपल, बेचैन । यह्वी=नदी, आकाश, पृथ्वी, प्रातःकाल या सायंकालका दिनका-रात्रिका भाग । युद्ध तीन स्थलोंमें हुआ करते हैं । (१) यह्वीषु= नदियोंके स्थलमें, नदी लाँघते समय हमले होते हैं; (२) ओषधीषु=जंगलोंमें, सघन वृक्षनिकुंजोंमें छिपे रहके वैसा शत्रुपर चढाई की जाती है और (३) विक्षु= बस्तीमें, नगरोंमें एवं बस्तियों के मध्य, नगर कब्जेमें लेनेके लिए । इस भाँति तीन प्रकारके समरोंमें वे वीर हमें बचावें । (२) ओषधी= औषधी, विनष्ट करनेके दोष हटानेके लिए उपयुक्त बं.पदि: (ओष) तेज (धी) धारण करनेहारी वनस्पति, जंगल, कुंज, अरण्य । [३६७] (१) उक्थ=वाक्य, श्लोक, स्तोत्र, पद्य. (२) वाजं=बल, युद्ध, जल, वेग । (३) साळ्हा= सह्= पराभव करना, जीतना पराभव करनेहारा, विजेता । (४) सन्= (संभक्तौ) विभाग करना, सेवन करना, देना, प्रिय होना सम्मान देना । मरुतोंके कवि होनेके सम्बन्धमें देखिए २२०; २९१; २९४; २९५; ३६३ मन्त्रोंमें देखिए ।

(३६८) असे इति । वीरः । मरुतः । शुष्मी । अस्तु । जनानाम् । यः । असुरः । वि...
अपः । येन । सुऽक्षितये । तरेम । अध । स्वम् । ओकः । अभि । वः । स्याम ।
(३६९) तत् । नः । इन्द्रः । वरुणः । मित्रः । अग्निः । आपः । ओषधीः । वनिनः । जु...
शर्मन् । स्याम । मरुताम् । उपऽस्थे । यूयम् । पात । स्वस्तिऽभिः । सदा । नः ॥

(ऋ० ७।५७।१-७)

(३७०) मध्वः । वः । नाम । मारुतम् । यजत्राः । प्र । यज्ञेषु । शवसा । मदन्ति ।
ये । रेजयन्ति । रोदसी इति । चित् । उर्वी इति । पिन्वन्ति । उत्सम् । यत् । अयासुः । उग्राः ।

अन्वयः—३६८ (हे) मरुतः! यः असु-रः जनानां विधर्ता असे वीरः शुष्मी अस्तु, येन सु-क्षितये तरेम, अध वः स्वं ओकः अभि स्याम। ३६९ इन्द्रः मित्रः वरुणः अग्निः आपः ओषधीः वनिनः नः जुषन्त, मरुतां उप-स्थे शर्मन् स्याम, यूयं स्वस्तिभिः सदा नः पात। ३७० (हे) यजत्राः! वः म... नाम मध्वः यज्ञेषु शवसा प्र मदन्ति, यत् उग्राः अयासुः, ये उर्वी चित् रोदसी रेजयन्ति, उत्सं पिन्वन्ति...

अर्थ- ३६८ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (यः) जो अपना (असु-रः) जीवन देकर (जनानां वि-ध... लोगों का विशेष ढंगसे धारण करता है वह (असे वीरः) हमारा वीर (शुष्मी अस्तु) बलिष्ठ ... (येन) जिसकी सहायतासे हम (सु-क्षितये) उत्तम निवास करने के लिए (अपः) समुद्रको भी (त... [illegible] जाते हैं; (अध) और (वः) तुम्हारे मित्र बनकर हम (स्वं ओकः) अपने निजी घरमें (अ... स्याम) सुखपूर्वक निवास करते हैं।

३६९ (इन्द्रः) इन्द्र, (मित्रः) मित्र, (वरुणः) वरुण, (अग्निः) अग्नि, (आपः) जल, (ओषधीः) औषधियां तथा (वनिनः) वनके पेड (नः तत्) हमारा वह स्तोत्र (जुषन्त) प्रीतिपूर्वक सेवन करते हैं। (मरुतां उप-स्थे) वीर मरुतों के निकटतम सहवास में हम (शर्मन् स्याम) सुखसे रहें। हे वीरो! (यूयं) तुम (स्वस्तिभिः) कल्याणकारक उपायों से (सदा) हमेशा (नः पात) हमारी रक्षा करो।

३७० हे (यजत्राः !) पूज्य वीरो ! (वः मारुतं नाम) तुम वीर मरुतों का नाम सचमुच (मध्वः) मिठासका द्योतक है। ये वीर (यज्ञेषु) यज्ञों में (शवसा) बलके कारण (प्र मदन्ति) अर्थात् [illegible] संतुष्ट हो उठते हैं। (यत्) जब ये (उग्राः) उग्र वीर (अयासुः) शत्रुओंपर चढाई कर... [illegible] (उर्वी चित्) बडी विस्तीर्ण (रोदसी) आकाश एवं पृथ्वी को भी (रेजयन्ति) [illegible] और (उत्सं पिन्वन्ति) जलप्रवाहको भी बहा देते हैं।

भावार्थ- ३६८ [illegible] जनता का संरक्षण करनेहारा हमारा पुत्र बलवान वीर ब... [illegible] इन वीरोंकी [illegible] कठिनाइयाँ दूर करेंगे और वीरोंके मित्र बनकर अपने [illegible] ३६९ [illegible] वीरोंके समीप हम [illegible] जीवनयात्रा बितायें। वीर [illegible] ३७० [illegible] ये वीर यज्ञमें अपनी सामर्थ्यके [illegible] तब समूची पृथ्वी [illegible] [illegible]

[illegible] ३६८ [illegible] = [illegible] [illegible] ३७० [illegible] नाम = [illegible]

(३७१) निऽचेतारः । हि । मरुतः । गृणन्तम् । प्रऽनेतारः । यजमानस्य । मन्म ।
अस्माकम् । अद्य । विदथेषु । बर्हिः । आ । वीतये । सदत । पिप्रियाणाः ॥२॥

(३७२) न । एतावत् । अन्ये । मरुतः । यथा । इमे । भ्राजन्ते । रुक्मैः । आयुधैः । तनूभिः ।
आ । रोदसी इति । विश्वऽपिशः । पिशानाः । समानम् । अञ्जि । अञ्जते । शुभे । कम् ॥३॥

(३७३) ऋधक् । सा । वः । मरुतः । दिद्युत् । अस्तु । यत् । वः । आगः । पुरुषता । कराम ।
मा । वः । तस्याम् । अपि । भूम । यजत्राः । अस्मे इति । वः । अस्तु । सुऽमतिः । चनिष्ठा ॥४॥

अन्वयः- ३७१ (हे) मरुतः! गृणन्तं नि-चेतारः हि, यजमानस्य मन्म प्र-नेतारः पिप्रियाणाः अद्य अस्माकं विदथेषु वीतये बर्हिः आ सदत। ३७२ इमे मरुतः रुक्मैः आयुधैः तनूभिः यथा भ्राजन्ते, न एतावत् अन्ये, विश्व-पिशः रोदसी पिशानाः शुभे समानं अञ्जि कं आ अञ्जते। ३७३ (हे) यजत्राः मरुतः! यत् वः आगः पुरुषता कराम सा वः दिद्युत् ऋधक् अस्तु, वः तस्यां अपि मा भूम, अस्मे वः चनिष्ठा सु-मतिः अस्तु।

अर्थ- ३७१ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! तुम (गृणन्तं) काव्यका सृजन करनेवालोंको (नि-चेतारः हि) इकट्ठे करते हो और (यजमानस्य) याजक के (मन्म) मननीय काव्यका (प्र-नेतारः) [illegible] भी हो। (पिप्रियाणाः) सदा हर्षित एवं प्रसन्न रहनेवाले तुम (अद्य) आज (अस्माकं विदथेषु) हमारे यज्ञमें (वीतये) हविष्यान्नका सेवन करनेके लिए इस (बर्हिः) कुशासनपर (आ सदत) आकर बैठो।

३७२ (इमे मरुतः) ये वीर मरुत् (रुक्मैः) स्वर्णमुद्राओंके हारोंसे (आयुधैः) [illegible] तथा (तनूभिः) अपने शरीरोंसे भी (यथा भ्राजन्ते) जिस भाँति [illegible] उस प्रकार दूसरे कोई नहीं प्रकाशमान हो उठते हैं। (विश्व-पिशः) [illegible] (रोदसी) द्युलोक एवं भूलोकको भी (पिशानाः) [illegible] (समानं अञ्जि) सदृश वीरभूषण या गणवेश (कं आ अञ्जते) [illegible]।

३७३ हे (यजत्राः मरुतः!) पूज्य वीर मरुतो! (यत्) [illegible] अप-राध (पुरुष-ता कराम) मानवताको भूले करना, अपराध करना, [illegible] (सा वः) वह तुम्हारा (दिद्युत्) चमकनेवाला [illegible] (तस्यां) उस आयुधके समीप हम (अपि) [illegible] मा भूम [illegible] (वः) तुम्हारी (चनिष्ठा) अन्न देनेवाली (सु-मतिः अस्तु) अच्छी बुद्धि [illegible]।

भावार्थ— ३७१ हे वीर [illegible] हमारे यज्ञमें [illegible] हविद्वार धारण [illegible] और समान [illegible] ही है। [illegible]

टिप्पणी— [३७१] [illegible] [३७२] [illegible]

(३७४) कृते । चित् । अत्रं । मुरुतः । रणन्त । अनवद्यासः । शुचयः । पावकाः ।
प्र । नः । अवत । सुमतिऽभिः । यजत्राः ।
प्र । वाजेभिः । तिरत । पुष्यसे । नः ॥ ५ ॥

(३७५) उत । स्तुतासः । मुरुतः । व्यन्तु । विश्वेभिः । नामऽभिः । नरः । हवींषि ।
ददात । नः । अमृतस्य । प्रऽजायै ।
जिगृत । रायः । सूनृता । मघानि ॥ ६ ॥

अन्वयः- ३७४ अन्-अवद्यासः शुचयः पावकाः मरुतः अत्र कृते चित् रणन्त, (हे) यजत्राः! सु-मतिभिः प्र अवत, नः वाजेभिः पुष्यसे प्र तिरत।

३७५ उत विश्वेभिः स्तुतासः नरः मरुतः हवींषि व्यन्तु, नः प्रजायै अ-मृतस्य ददात, सूनृता रायः मघानि जिगृत।

अर्थ- ३७४ (अन्-अवद्यासः) अनिंदनीय (शुचयः) स्वयं पवित्र होते हुए दूसरोंको (पावकाः) पवित्र करनेहारे ये (मरुतः) वीर मरुत् (अत्र कृते चित्) यहाँपर हमारे चलाये हुए कर्ममें-यज्ञमें (रणन्त) रममाण हों; हे (यजत्राः !) पूजनीय वीरो ! (नः) हमारी तुम (सु-मतिभिः) अच्छी बुद्धियोंसे (प्र अवत) भली भाँति रक्षा करो। (नः) हम (वाजेभिः) अन्नोंसे (पुष्यसे) पुष्ट हों, इस लिए हमें संकटोंसे (प्र तिरत) परे ले चलो।

३७५ (उत) निश्चयपूर्वक (विश्वेभिः नामभिः) सभी नामोंसे (स्तुतासः) प्रशंसित ये (नरः मरुतः) नेता वीर मरुत् (हवींषि व्यन्तु) हविष्यान्न प्राप्त करें। हे वीरो ! (नः प्रजायै) हमारी प्रजाको (अ-मृतस्य) अमरपनका (ददात) प्रदान करो और (सूनृता रायः) आनन्ददायक धन तथा (मघानि) सुखोंकोभी (जिगृत) दे दो।

भावार्थ- ३७४ ये वीर निष्कलंक, विशुद्ध तथा पवित्रता करनेहारे हैं। हम जिस कार्यका सूत्रपात करने चले हैं, उसमें ये रममाण हों। यह कार्य उन्हें अच्छा लगे। ये हमारी रक्षा करें और अच्छे अन्नसे हमारा पोषण हो, इसलिए हमें संकटोंसे छुडा दें।

३७५ प्रशंसनीय वीर सभी प्रकारके उत्तम अन्न प्राप्त कर लायँ। समूची प्रजाको अविच्छिन्न सुख प्रदान करें और सभी भाँतिके धन एवं सम्पत्ति प्राप्त कर देवें।

अपने शरीरोंपर (समानं अञ्जि Uniform) समानरूपका वेश धर देते हैं। (२) पिश् = आकार देना, सजाना, व्यवस्थित होना, प्रकाशमान होना, तैयार रहना, अलंकृत करना।

[३७३] (१) ऋधक्- (क्) = पृथक्, दूर। (२) चनिष्ठा = (चनस्-स्थ) बहुतसा अन्न देनेहारा, दातृत्वगुणमें स्थिर। [आगः पुरुषता कराम- भूलें करना मानवी स्वभावके अनुकूल है- To err is human]

[३७४] (१) प्र-तिर् = परले तटपर जाना, उस पार चले जाना। (२) कृत = कृत्य, कर्म, ध्येय, सेवा, परिणाम।

[३७५] (१) वी = (गति-व्याप्ति-प्रजनन-कान्ति-असन-खादनेषु) = लाना, उत्पन्न करना, पाना, खाना। (२) सूनृत = सत्यपूर्ण, आनन्ददायक, मंगल, प्रिय। (३) मघ = सुख, दान, सम्पत्ति। (४) गृ = देना।

(३७६) आ। स्तुतासः। मरुतः। विश्वे। ऊती। अच्छ। सूरीन्। सर्वऽताता। जिगात।
ये। नः। त्मना। शतिनः। वर्धयन्ति। यूयम्। पात। स्वस्तिऽभिः। सदा। नः ॥७॥

(ऋ० ७।५७।१-३)

(३७७) प्र। साकम्ऽउक्षे। अर्चत। गणाय। यः। दैव्यस्य। धाम्नः। तुविष्मान्।
उत। क्षोदन्ति। रोदसी इति। महिऽत्वा। नक्षन्ते। नाकम्। निःऽऋतेः। अवंशात् ॥१॥

(३७८) जनूः। चित्। वः। मरुतः। त्वेष्येण। भीमासः। तुविऽमन्यवः। अयासः।
प्र। ये। महःऽभिः। ओजसा। उत। सन्ति। विश्वः। वः। यामन्। भयते। स्वःऽदृक् ॥२

अन्वयः— ३७६ (हे) स्तुतासः मरुतः! विश्वे सर्व-ताता सूरीन् अच्छ ऊती आ जिगात, ये त्मना शतिनः नः वर्धयन्ति, यूयं स्वस्तिभिः सदा नः पात। ३७७ यः दैव्यस्य धाम्नः तुविष्मान् साकं-उक्षे गणाय प्र अर्चत, उत अवंशात् निर्ऋतेः क्षोदन्ति, महित्वा रोदसी नाकं नक्षन्ते। ३७८ (हे) भीमासः तुवि-मन्यवः अयासः मरुतः! वः जनूः त्वेष्येण चित्, उत ये महोभिः ओजसा प्र सन्ति, वः यामन् स्वर्-दृक् विश्वः भयते।

अर्थ— ३७६ हे (स्तुतासः मरुतः!) प्रशंसनीय वीर मरुतो! तुम (विश्वे) सभी लोग उस (सर्व-ताता) सभी जगह फैलनेवाले यज्ञकर्म में काम करनेवाले (सूरीन् अच्छ) विद्वानोंकी ओर (ऊती) संरक्षक शक्तियों के साथ (आ जिगात) आओ। (ये) जो तुम (त्मना) स्वयंही (शतिनः नः) हम जैसे सैकडों मानवोंको (वर्धयन्ति) बढाते हैं। (यूयं) तुम (स्वस्तिभिः) कल्याणकारक उपायोंद्वारा (सदा) सदैवके लिए (नः पात) हमारी रक्षा करो। ३७७ (यः) जो (दैव्यस्य धाम्नः) दिव्य स्थान का (तुविष्मान्) ज्ञाता है, उस (साकं-उक्षे) संघ के बलको धारण करनेहारे (गणाय) वीरों के समूह को (प्र अर्चत) पूजा करो। (उत) क्योंकि वे वीर (अवंशात्) वंश के विनाशरूपी (निर्ऋतेः) आपत्ति को (क्षोदन्ति) चकनाचूर कर देते हैं, विनष्ट करते हैं, और (महित्वा) बडप्पनसे (रोदसी) आकाश एवं पृथ्वी तथा (नाकं) स्वर्ग के मध्य (नक्षन्ते) जा पहुंचते हैं, व्याप्त होते हैं। ३७८ हे (भीमासः) भीषण कार्यकारी, (तुवि-मन्यवः) अत्यंत उत्साह से परिपूर्ण एवं (अयासः मरुतः!) वेगवान वीर मरुतो! (वः जनूः) तुम्हारा जन्म (त्वेष्येण चित्) तेजस्वितासे युक्त है। (उत) उसी प्रकार (ये महोभिः) जो महत्वोंसे तथा (ओजसा) शारीरिक बलसे (प्र सन्ति) प्रसिद्ध हैं, ऐसे (वः) तुम्हारे (यामन्) शत्रुदलपर हमला करते समय (स्वर्-दृक्) आकाश की ओर दृष्टि देकर (विश्वः भयते) समूचा प्राणिसमूह भयभीत हो उठता है।

भावार्थ— ३७६ ये वीर सैकडों मानवोंका संवर्धन करते हैं। इस यज्ञकर्ममें जो विद्वान् कार्यमें निरत हुए हैं, उनकी रक्षाका भार ये वीर उठावें और कल्याण करनेके सभी साधनोंसे हम सबकी रक्षा करें। ३७७ ये वीर उस दिव्य स्थानको जानते हैं, जहां पहुंचनेकी इच्छा सबके मनमें उठ खडी होती है। इन वीरोंके [illegible], इसीलिए इनका सत्कार करो। ये [illegible] घोर आपत्ति से बचाते हैं और अपने बडप्पनसे भूमंडल, आकाश एवं स्वर्गमें भी अबाधित संचार करते हैं। ३७८ ये वीर [illegible] बडेही उत्साही एवं बलवान हैं, उनका जन्मही [illegible] वृद्धि करनेके लिए है। अपने बलसे [illegible] सभी जगह प्रसिद्ध हैं, जब ये [illegible], तब उनके प्रचण्ड [illegible] सभी जीवजन्तु भयभीत हो जाते हैं।

टिप्पणी— [३७६] (१) सर्व-ताता= यज्ञ, जिसका परिणाम सभी जगह फैल सके ऐसा अच्छा कर्म। (२) शतिन= संत, [illegible]। [३७७] १ तुविष्मत्= वृद्धि, शक्ति [illegible]। २ निर्ऋतिः= [illegible]

(३७९) बृहत् । वयः । मघवत्ऽभ्यः । दधात । जुजोषन् । इत् । मरुतः । सुऽस्तुतिम् । न
गतः । न । अध्वा । वि । तिराति । जन्तुम् । प्र । नः । स्पार्हाभिः । ऊतिऽभिः । तिरेत ॥
(३८०) युष्माऽऊतः । विप्रः । मरुतः । शतस्वी । युष्माऽऊतः । अर्वा । सहुरिः । सहस्री
युष्माऽऊतः । सम्ऽराट् । उत । हन्ति । वृत्रम् । प्र । तत् । वः । अस्तु । धूतयः । देष्णम् ॥

अन्वयः— ३७९ (हे) मरुतः ! मघ-वद्भ्यः बृहत् वयः दधात, नः सु-स्तुतिं जुजोषन् इत्, ग
अध्वा जन्तुं न वि तिराति, नः स्पार्हाभिः ऊतिभिः प्र तिरेत ।

३८० (हे) मरुतः ! युष्मा-ऊतः विप्रः शतस्वी सहस्री, युष्मा-ऊतः अर्वा सहुरिः,
युष्मा-ऊतः सम्-राट् वृत्रं हन्ति, (हे) धूतयः ! वः तत् देष्णं प्र अस्तु ।

अर्थ— ३७९ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (मघ-वद्भ्यः) धनिकोंके लिए (बृहत् वयः) बहुत आरो
एवं सुदीर्घ जीवन (दधात) दे दो । (नः सु-स्तुतिं) हमारी अच्छी सराहना का तुम (जुजोषन् इ
सेवन करो । तुम (गतः अध्वा) जिस राहपरसे जा चुके हो, वह मार्ग (जन्तुं) प्राणी को विल
(न तिराति) विनष्ट नहीं करेगा । उसी प्रकार (नः) हमारा (स्पार्हाभिः ऊतिभिः) स्पृहणीय संरक्ष
शक्तियों से (प्र तिरेत) संवर्धन करो ।

३८० हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (युष्मा-ऊतः) तुमसे सुरक्षित हुआ, (विप्रः) ज्ञानी मनु
(शतस्वी सहस्री) सैकडों तथा हजारों प्रकार के धनसे युक्त होता है। (युष्मा-ऊतः) जिसकी रक्षा प
[illegible] तुमने की हो, ऐसा (अर्वा) घोडातक (सहु-रिः) सहनशक्तिसे युक्त होता है- विज
[illegible] है। (युष्मा-ऊतः) तुम्हारी सहायतासे सुरक्षित बना हुआ (सम्-राट्) सार्वभौम नरेश (वृ
[illegible] दुश्मनोंको (हन्ति) मार डालता है । हे (धूतयः !) शत्रुओंको हिलानेवाले वीरो ! (वः तत
तुम्हारा वह (देष्णं) दान हमें (प्र अस्तु) पर्याप्त मात्रामें उपलब्ध हो ।

भावार्थ— ३७९ जो धनिक हैं, उन्हें उत्तम आरोग्य तथा दीर्घ जीवन मिले । जिस राहपरसे वीर पुरुष चले है
[illegible] किसीको भी कुछ कष्ट नहीं उठाना पडता है और इनकी संरक्षक शक्ति उधर [illegible]
[illegible] की उत्तम रक्षा हो रही है ।

३८० यदि ये वीर किसी मानव के संरक्षण का बीडा उठा लें, तो वह अवश्यही धनाढ्य, विजयी, [illegible]
[illegible] सकता है।

[illegible]) = जाना, कुचलना, चकनाचूर करना । (४) [illegible]
[illegible] अ-वंश= निर्वंश होना, वंशनाश । अ-वंशात् निर्ऋतिः = निर्वंश हो जानेका भय । [illegible]
[illegible] की प्राप्ति होती है। [illegible]-प्रजाभिः अमृतत्वं । [illegible]
[illegible] (२) यामन्= गति, जाना, आक्रमण, हमला । (३) [illegible]
[illegible] और [illegible] करनेहारा, [illegible] करनेहारा, आकाश की ओर [illegible]
[illegible] [३७९] (१) मयः= सुख, दान, [illegible] । (२) वयस्= अन्न, आयुष्य, [illegible]
[illegible] धनिक लोग [illegible], [illegible] तथा [illegible]
[illegible] जीवन एवं आरोग्य मिले, [illegible]
[illegible] [३८०] (१) सहु-रिः [illegible] करनेहारा, [illegible]
[illegible] (२) वृत्र= [illegible], [illegible] दुश्मन । (३) देष्णं= दान, [illegible]

(३८१) तान् । आ । रुद्रस्य॑ । मी॒ळ्हुषः॑ । वि॒वा॒से॒ । कु॒वित् । नंस॑न्ते । म॒रुतः॑ । पुनः॑ । नः॒ ।
यत् । स॒स्वर्ता॑ । जि॒ही॒ळि॒रे । यत् । आ॒विः । अव॑ । तत् । एनः॑ । ई॒म॒हे॒ । तु॒राणा॑म् ॥५॥

(३८२) प्र । सा । वा॒चि । सु॒ऽस्तु॒तिः । म॒घोना॑म् । इ॒दम् । सु॒ऽउ॒क्तम् । म॒रुतः॑ । जु॒ष॒न्त॒ ।
आ॒रात् । चि॒त् । द्वेषः॑ । वृ॒ष॒णः॒ । यु॒यो॒त॒ । यू॒यम् । पा॒त॒ । स्व॒स्तिऽभिः॑ । सदा॑ । नः॒ ॥६॥

(ऋ० ७।५८।१-६)

(३८३) यम् । त्राय॑ध्वे । इ॒दम्ऽइ॑दम् । देवा॑सः । यम् । च॒ । नय॑थ ।
तस्मै॑ । अ॒ग्ने॒ । वरु॑ण । मित्र॑ । अर्य॑मन् । मरु॑तः । शर्म॑ । य॒च्छ॒त॒ ॥१॥

अन्वयः— ३८१ मीळ्हुषः रुद्रस्य तान् आ विवासे, मरुतः नः कुवित् पुनः नंसन्ते, यत् सस्वर्ता यत् आविः जिहीळिरे तुराणां तत् एनः अव ईमहे।

३८२ मघोनां सु-स्तुतिः सा वाचि प्र, मरुतः इदं सूक्तं जुषन्त, (हे) वृषणः! द्वेषः आरात् चित् युयोत, यूयं स्वस्तिभिः सदा नः पात।

३८३ (हे) देवासः! यं इदं-इदं त्रायध्वे यं च नयथ, तस्मै (हे) अग्ने! वरुण! मित्र! अर्यमन्! मरुतः! शर्म यच्छत।

अर्थ— ३८१ (मीळ्हुषः) बलिष्ठ (रुद्रस्य तान्) रुद्रके उन वीरोंकी (आ विवासे) मैं सेवा करता हूँ। (मरुतः) वे वीर मरुत् (नः) हमें (कुवित्) अनेक बार तथा (पुनः) बारंवार (नंसन्ते) सहायता पहुँचाते हैं, हममें सम्मिलित होते हैं। (यत् सस्वर्ता) जिन गुप्त या (यत् आविः) प्रकट पापोंके कारण वे (जिहीळिरे) हमपर क्रोध प्रकट करते आये हैं, उन (तुराणां) शीघ्रतासे अपना कर्तव्य करनेवालोंके संबंधमें किया हुआ वह (एनः) पाप हम अपनेसे (अव ईमहे) दूर हटाते हैं।

३८२ (मघोनां) धनाढ्य वीरोंकी यह (सु-स्तुतिः) उत्कृष्ट सराहना है, (सा) वह सदैव हमारे (वाचि प्र) संभाषणमें निवास करे। (मरुतः) वीर मरुत् (इदं सूक्तं) इस सूक्तका (जुषन्त) सेवन करें। हे (वृषणः!) बलिष्ठ वीरो! हमारे (द्वेषः) द्वेष्टाओं को (आरात् चित्) जब तक वे दूर हैं, तभीतक हमसे (युयोत) दूर करो। (यूयं) तुम (स्वस्तिभिः) कल्याणकारक उपायोंद्वारा (सदा) हमेशा (नः पात) हमारी रक्षा करो!

३८३ हे (देवासः!) देवो! (यं) जिसे तुम (इदं-इदं) इस भाँति (त्रायध्वे) सुरक्षित रखते हो (यं च) और जिसे अच्छी राहसे (नयथ) ले चलते हो, (तस्मै) उसे हे (अग्ने!) अग्ने! हे (वरुण!) वरुण! हे (मित्र!) मित्र! हे (अर्यमन्!) अर्यमन्! तथा हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (शर्म यच्छत) सुख दे दो।

भावार्थ— ३८१ हम इन वीरोंकी सेवा करते हैं, इसलिए वे बारंबार हमारी मदद करते हैं। पाप करनेसे उन्हें क्रोध आता है, अतः हम पापी विचारधाराको बहुत दूर हटाते हैं।

३८२ इन वीरोंके संबंधमें यह काव्य हमारे मुँहमें सदैव रहने पाए। जबतक हमारे शत्रु सुदूर स्थानोंमें हैं, तभीतक उनका नाश ये वीर सैनिक करें और हमारी रक्षाका अच्छा प्रबंध करके कल्याण करें।

३८३ जिसकी रक्षाका भार वीर अपने ऊपर ले लेते हैं, वह सुखी बनता है।

टिप्पणी— [३८१] (१) नम्= पहुँचना, नमीत जाना, झुकना, नम्र होना, मानने जैसा होना। (२) एनस्= पाप, अपराध, दोष, त्रुटि। (३) जिहीळिरे = (हेड् अनादरे) अनादर दर्शाना, तिरस्कार किया, दुतकारा।

(३८४) युष्माकम् । देवाः । अवसा । अहनि । प्रिये । ईजानः । तरति । द्विषः । प्र । सः । क्षयम् । तिरते । वि । महीः । इषः । यः । वः । वराय । दाशति ॥

(३८५) नहि । वः । चरमम् । चन । वसिष्ठः । परिऽमंसते । अस्माकम् । अद्य । मरुतः । सुते । सचा । विश्वे । पिबत । कामिनः ॥२॥

(३८६) नहि । वः । ऊतिः । पृतनासु । मर्धति । यस्मै । अराध्वम् । नरः । अभि । वः । आ । अवर्त् । सुऽमतिः । नवीयसी । तूयम् । यात । पिपीषवः

अन्वयः— ३८४ (हे) देवाः! युष्माकं अवसा प्रिये अहनि ईजानः द्विषः तरति, यः वः वराय इषः वि दाशति, सः क्षयं प्र तिरते।

३८५ (हे) मरुतः! वसिष्ठः वः चरमं चन नहि परिमंसते, अद्य अस्माकं सुते विश्वे सचा पिबत।

३८६ (हे) नरः! यस्मै अराध्वं, वः ऊतिः पृतनासु नहि मर्धति, वः नवीयसी सु अभि अवर्त्, पिपीषवः तूयं आ यात।

अर्थ— ३८४ हे (देवाः!) प्रकाशमान वीरो! (युष्माकं अवसा) तुम्हारी रक्षासे सुरक्षित हो अहनि) अभीष्ट दिन (ईजानः) यज्ञ करनेहारा (द्विषः तरति) द्वेष्टा लोगोंको लाँघ जाता है, श पराभव करता है। (यः) जो (वः वराय) तुम जैसे श्रेष्ठ पुरुषोंको (महीः इषः) बहुत सारा अ दाशति) प्रदान करता है, (सः) वह (क्षयं) अपने निवासस्थान को (प्र तिरते) निर्भय बना दे

३८५ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (वसिष्ठः) यह वसिष्ठ ऋषि (वः चरमं चन) तुममेंसे अं भी (नहि परिमंसते) अनादर नहीं करता है, सबकी बराबर सराहना करता है। (अद्य अस्माकं दिन हमारे यहाँ (सुते) सोमरसके निचोड चुकनेपर उसे पीनेके लिए (कामिनः) अपनी चाह करनेवाले तुम (विश्वे) सभी (सचा) मिलजुलकर उस रसको (पिबत) पी लो।

३८६ हे (नरः!) नेता वीरो! तुम (यस्मै) जिसे संरक्षण (अराध्वं) देते हो, व ऊतिः) तुम्हारी संरक्षणक्षम शक्ति (पृतनासु) युद्धोंमें उसका (नहि मर्धति) विनाश नहीं कर (वः) तुम्हारी (नवीयसी) नाविन्यपूर्ण (सु-मतिः) अच्छी बुद्धि (अभि अवर्त्) हमारी ओ जाए। (पिपीषवः) सोमपान करनेकी इच्छा करनेहारे तुम (तूयं आ यात) शीघ्रही इधर आओ

भावार्थ— ३८४ वीरोंकी सहायता पाकर मानव सुरक्षित बनें, यज्ञ करें, अन्नदान करें और निर्भय बन स कालक्रमणा करें।

३८५ वीरोंका आदर करना चाहिए, उन्हें सोमरस पीनेके लिए देना चाहिए और वीर भी उसे प्र सेवन करें।

३८६ जिन्हें वीरोंका संरक्षण प्राप्त हुआ, वे सदैव सुरक्षित रहते हैं।

टिप्पणी— [३८४] (१) वरः= चुनाव, इच्छा, विनंति, दान, वर, श्रेष्ठ, उत्तम। [३८५] (१) (ज्ञाने, अवबोधने स्तम्भे च) मानना, पूजा करना, आदर करना। परि-मन् = विपरीत ढंगसे मानना, अनादर घृणा के भाव दर्शाना। (२) वसिष्ठः (वासयति इति) = जो कि सबका निवास सुखपूर्वक हो, इसलिये प्रय रहता है, एक ऋषि। [३८६] (१) तूयं = शीघ्र।

(३८७) ओ इति । सु । घृष्विऽराधसः । यातन । अन्धांसि । पीतये ।
इमा । वः । हव्या । मरुतः । ररे । हि । कम् । मो इति । सु । अन्यत्र । गन्तन ॥५॥
(३८८) आ । च । नः । बर्हिः । सदत । अवित । च । नः । स्पार्हाणि । दातवे । वसु ।
अस्रेधन्तः । मरुतः । सोम्ये । मधौ । स्वाहा । इह । मादयाध्वै ॥६॥
(३८९) सस्वः । चित् । हि । तन्वः । शुम्भमानाः । आ । हंसासः । नीलऽपृष्ठाः । अपप्तन् ।
विश्वम् । शर्धः । अभितः । मा । नि । सेद । नरः । न । रण्वाः । सवने । मदन्तः ॥७॥

अन्वयः— ३८७ (हे) घृष्वि-राधसः मरुतः ! अन्धांसि पीतये सु ओ यातन, हि वः इमा हव्या ररे, अन्यत्र मो सु गन्तन।

३८८ स्पार्हाणि वसु दातवे नः अवित च, नः बर्हिः आ सदत च. (हे) अ-स्रेधन्तः मरुतः! इह मधौ सोम्ये स्वाहा मादयाध्वै।

३८९ सस्वः चित् हि तन्वः शुम्भमानाः नील-पृष्ठाः हंसासः सवने मदन्तः रण्वाः नरः न आ अपप्तन्, विश्वं शर्धः मा अभितः नि सेद।

अर्थ— ३८७ हे (घृष्वि-राधसः मरुतः!) संघर्षमें सिद्धि पानेवाले वीर मरुतो! (अन्धांसि पीतये) अन्नरस पीनेके लिए (सु ओ यातन) अच्छी व्यवस्थासे आओ। (हि) क्योंकि (वः) तुम्हें (इमा हव्या) ये हविष्यान्न मैं (ररे) प्रदान कर रहा हूँ, अतः तुम (अन्यत्र) दूसरी ओर कहीं भी (मो सु गन्तन) विलकुल न जाओ।

३८८ (स्पार्हाणि) स्पृहणीय (वसु) धन (दातवे) देनेके लिए (नः) हमारी ओर (अवित च) आओ और (नः बर्हिः) हमारे इन आसनोंपर (आ सदत च) बैठ जाओ। हे (अ-स्रेधन्तः मरुतः!) अहिंसक वीर मरुतो! (इह) यहाँके (मधौ) मिठास से पूर्ण (सोम्ये) सोमरस के (स्वाहा) भागको, स्वीकार कर (मादयाध्वै) आनन्दित हो जाओ।

३८९ (सस्वः चित् हि) गुप्त जगह रहनेपरभी (तन्वः शुम्भमानाः) अपने शरीरों को सुशोभित करनेवाले ये वीर (नील-पृष्ठाः हंसासः) नीलवर्ण-काली पीठसे युक्त हंसों की नाईं या (सवने मदन्तः) यज्ञमें आनंदित होनेवाले (रण्वाः नरः न) रमणीय नेताओं के तुल्य (आ अपप्तन्) हमारे समीप आ जायँ और इनका (विश्वं शर्धः) समूचा बल (मा) मेरे (अभितः नि सेद) चारों ओर रहे।

भावार्थ— ३८७ वीर हमारे समीप आ जायँ और इस खाद्यपेयसामग्रीका सेवन करें, तथा इस संघर्षमें यश मिलने-तक सहायक बनें।

३८८ अच्छा धन प्रदान करो। यहाँपर पधारकर मिठासभरे अन्नका सेवन करके प्रसन्नचेता बनो।

३८९ गुप्त स्थानपर-दुर्गमें-रहते हुए भी अपने आपको सजाते-सँवारते हुए ये वीर सैनिक अपने सारे बलोंके साथ हममें आकर निवास कर लें। जैसे हंस पंक्तियोंमें, कतारोंमें उडने लगते हैं, वैसेही ये वीर कतारमें चलने लगें, और जिस प्रकार यज्ञमें उपस्थित रहनेके लिए यात्रा करनेवाले नेतागण वन-ठनके प्रस्थान करते हैं, उसी प्रकार ये वीर शोभायमान होते हुए सभी कार्यकलाप निभायँ।

टिप्पणी— [३८७] (१) घृष्वि= संघर्षमें चतुर, राधस्= सिद्धि, दान, यश। घृष्वि-राधस्= संघर्षमें सफलता पानेवाला। (२) अन्धस्= अन्न, सोम, सोमरस। [३८८] (१) स्रिध्= दुखाना, विनाश करना, वध करना, (२) स्वाहा = हविर्भाग, अन्नभाग। [३८९] (१) सस्व= अन्तर्हित, छिपा हुआ, गुप्त (निघंटु ३।२५)।

(४०१) कत् । अत्विपन्त । सूरयः । तिरः । आपःऽइव । स्निधः ।
अर्पन्ति । पूतऽदक्षसः ॥७॥

(४०२) कत् । वः । अद्य । महानाम् । देवानाम् । अवः । वृणे ।
त्मना । च । दस्मऽवर्चसाम् ॥८॥

(४०३) आ । ये । विश्वा । पार्थिवानि । पप्रथन् । रोचना । दिवः ।
मरुतः । सोमऽपीतये ॥९॥

(४०४) त्यान् । नु । पूतऽदक्षसः । दिवः । वः । मरुतः । हुवे ।
अस्य । सोमस्य । पीतये ॥१०॥

अन्वयः— ४०१ सूरयः स्निधः तिरः आपःइव अत्विपन्त, पूत-दक्षसः कत् अर्पन्ति ?
४०२ त्मना च दस्म-वर्चसां देवानां महानां वः अवः अद्य कत् वृणे ?
४०३ ये विश्वा पार्थिवानि दिवः रोचना आ पप्रथन्, मरुतः सोम-पीतये ।
४०४ (हे) मरुतः ! पूत-दक्षसः दिवः त्यान् वः नु अस्य सोमस्य पीतये हुवे ।

अर्थ- ४०१ वे (सूरयः) ज्ञानी तथा (स्निधः) शत्रुविनाशक वीर (तिरः) टेढी राहसे जानेवाले (आपःइव) जलप्रवाहोंकी नाईं (अत्विपन्त) प्रकाशमान होते हैं और वे (पूत-दक्षसः) पवित्र बल धारण करनेहारे वीर (कत्) भला कब हमारी ओर (अर्पन्ति) पधारेंगे ?

४०२ (त्मना च) स्वाभाविक ढंगसे (दस्म-वर्चसां) सुन्दर आकारवाले (देवानां) तेजस्वी एवं (महानां) बडे महनीय (वः) तुम जैसे सैनिकोंसे (अवः) संरक्षणकी (अद्य कत्) आज भला कब मैं (वृणे) याचना करूँ ?

४०३ (ये) जो (विश्वा पार्थिवानि) सभी भूमंडलस्थ वस्तुओं को और (दिवः रोचना) द्यु-लोकके तेजस्वी पदार्थोंको (आ पप्रथन्) विस्तृत कर चुके, उन (मरुतः) वीर मरुतों को (सोम-पीतये) सोमपान करनेके लिए मैं बुलाता हूँ।

४०४ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (पूत-दक्षसः) पवित्र बलसे युक्त और (दिवः) तेजस्वी (त्यान् वः) ऐसे तुम्हें (नु) अभी (अस्य सोमस्य पीतये) इस सोमरस के पान के लिए (हुवे) बुलाता हूँ।

भावार्थ- ४०१ जैसे ढलती जगहसे गिरनेवाला जलप्रवाह चमकने लगता है, वैसेही ये ज्ञानी वीर अपने पराक्रमसे जगमगाने लगते हैं। पवित्र कार्य के लिए अपने बलका उपयोग करनेवाले वे वीर सैनिक हमारे यज्ञमें आ जायँ।

४०२ ये तेजस्वी एवं शक्तिशाली वीर हमारी रक्षा करनेका बीडा उठावें।

४०३ आकाशस्थ एवं भूमंडलस्थ सभी वस्तुओं को मरुतोंने विस्तृत किया है, इसीलिए मैं उन्हें सोमपान करनेके लिए बुलाता हूँ।

४०४ बलवान एवं तेजस्वी वीरोंको आदरपूर्वक बुलाकर अन्नपानके प्रदानसे उनका सत्कार करना चाहिए।

टिप्पणी— [४००] (१) मत्सति= (मदि स्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु) हर्षित होता है। [४०१] (१) दक्ष= योग्यता, बल, बौद्धिक शक्ति। (२) स्निध्= विनाश करना, दुःख देना। (३) ऋप् (गतौ) = बह जाना, फिसलना, (जाना)। [४०२] (१) दस्म = (दस् = उपक्षये) विनाशक, सुन्दर, आश्चर्यकारक, याजक, चोर, दुष्ट, अग्नि। (२) वर्चस् = शक्ति, तेज, आकार, सौंदर्य, वीर्य, विष्ठा। (३) अद्य= आज, आजकल, अब।

(४०५) त्यान् । नु । ये । वि । रोदसी इति । तस्तभुः । मरुतः । हुवे ।
अस्य । सोमस्य । पीतये ॥११॥

(४०६) त्यम् । नु । मारुतम् । गणम् । गिरिऽस्थाम् । वृषणम् । हुवे ।
अस्य । सोमस्य । पीतये ॥१२॥

भृगुपुत्र स्यूमरश्मिऋषि (ऋ० १०।७७।१-८)

(४०७) अभ्रऽप्रुषः । न । वाचा । प्रुष । वसु । हविष्मन्तः । न । यज्ञाः । विऽजानुषः ।
सुऽमारुतम् । न । ब्रह्माणम् । अर्हसे । गणम् । अस्तोषि । एषाम् । न । शोभसे ॥

अन्वयः— ४०५ ये मरुतः रोदसी वि तस्तभुः त्यान् नु अस्य सोमस्य पीतये हुवे।
४०६ त्यं गिरि-स्थां वृषणं मारुतं गणं नु अस्य सोमस्य पीतये हुवे।
४०७ अभ्र-प्रुषः न, वाचा वसु प्रुष, हविष्मन्तः यज्ञाः न वि-जानुषः, ब्रह्माणं न, सु-मा[रुतं]
गणं अर्हसे अस्तोषि एषां शोभसे न।

अर्थ- ४०५ (ये मरुतः) जो वीर मरुत् (रोदसी) आकाश एवं भूलोक को (वि तस्तभुः) वि[शेष]
ढंगसे आधार दे चुके, (त्यान् नु) उन्हें अभी (अस्य सोमस्य पीतये) इस सोमका सेवन करनेके [लिए]
(हुवे) मैं बुलाता हूँ।

४०६ (त्यं) उस (गिरि-स्थां) पर्वतपर रहनेवाले, (वृषणं) बलवान (मारुतं गणं) वीर म[रुतों]
के समुदायको (नु) अभी (अस्य सोमस्य पीतये) इस सोमरसको पीनेके लिए (हुवे) बुलाता हूँ।

४०७ (अभ्र-प्रुषः न) मेघोंकी वर्षा के तुल्य ये वीर (वाचा) आशीर्वचनोंके साथ (वसु प्रु[ष])
द्रव्यका दान करें। (हविष्मन्तः यज्ञाः न) हविष्यान्नसे युक्त यज्ञोंके समान वे (वि-जानुषः) सब [कुछ]
जाननेवाले वीर सबको सुख दें। (ब्रह्माणं न) ज्ञानीके समान (सु-मारुतं गणं) उत्तम वीर मरुतों[के]
समुदायकी (अर्हसे) आवभगत करनेके लिए ही (अस्तोषि) मैंने स्तुति की; केवल (एषां) इ[नकी]
(शोभसे) शोभा देखकरही सराहना (न) नहीं की।

भावार्थ- ४०५ सबको आधार देनेका कार्य वीर करते हैं, इसलिए उन्हें सोमपानमें सम्मिलित होनेके लिए बु[लाना]
चाहिए।

४०६ पर्वतपर रहकर सबका संरक्षण करनेहारे वीरोंको सोमरसका ग्रहण करनेके लिए बुलाना चाहिए।

४०७ मेघसे जिस प्रकार गर्जना के साथ वर्षा होने लगती है, उसी प्रकार ये वीर पर्याप्त धन दे देते
और साथही साथ शुभ आशीर्वाद भी दे डालते हैं। जैसे विपुल अन्नसंतर्पणपूर्वक किये हुए यज्ञ सुख देते हैं, वैसेही
वीर भी स्वयं ज्ञानी होनेके कारण भाँति भाँति के उपायोंद्वारा जनताके सुख बढानेके प्रकार जानते हैं। जिस तरह ज्ञा[नी]
पुरुषकी सब जगह सराहना हुआ करती है, उसी प्रकार इन वीरोंके संघकी मैं प्रशंसा करता हूँ। ध्यानमें रहे कि उ[नके]
गुणोंको जानकरही मैंने यह प्रशंसा की है, न कि केवल उनके बाहरी डामडौल या टीमटाम अथवा बनाव-सिंगा[र]
देखकर या उससे प्रभावित होकर।

टिप्पणी- [४०५] (१) स्तम्भ्=(रोधने धारणे प्रतिबन्धने च) स्थिर करना, आश्रय देना। [४०६] गिरि[-स्थाम्] =
पर्वत, पहाडपर बँधा हुआ दुर्ग। [४०७] (१) प्रुष् (दाहे, स्नेहनस्नेदनपूरणेषु च) = जलाना, भ[ला]
करना, गीला करना, सींचना, पूर्ण करना।

(४०८) श्रिये । मर्यासः । अञ्जीन् । अकृण्वत । सुऽमारुतम् । न । पूर्वीः । अति । क्षपः ।
दिवः । पुत्रासः । एताः । न । येतिरे । आदित्यासः । ते । अक्राः । न । वृवृधुः ॥२॥
(४०९) प्र । ये । दिवः । पृथिव्याः । न । बर्हणा । त्मना । रिरिचे । अभ्रात् । न । सूर्यः ।
पाजस्वन्तः । न । वीराः । पनस्यवः । रिशादसः । न । मर्याः । अभिऽद्यवः ॥३॥
(४१०) युष्माकम् । बुध्ने । अपाम् । न । यामनि । विथुर्यति । न । मही । श्रथर्यति ।
विश्वऽप्सुः । यज्ञः । अर्वाक् । अयम् । सु । वः । प्रयस्वन्तः । न । सत्राचः । आ । गत ॥४॥

अन्वयः— ४०८ मर्यासः श्रिये अञ्जीन् अकृण्वत, पूर्वीः क्षपः सु-मारुतं न अति, दिवः पुत्रासः एताः न येतिरे, आदित्यासः ते अक्राः न वृवृधुः। ४०९ ये त्मना बर्हणा दिवः पृथिव्याः न, अभ्रात् सूर्यः न, प्र रिरिचे; पाजस्वन्तः वीराः न, पनस्यवः रिश-अदसः मर्याः न, अभिद्यवः। ४१० अपां यामनि न, युष्माकं बुध्ने मही न विथुर्यति श्रथर्यति, अयं विश्व-प्सुः यज्ञः वः सु अर्वाक्, प्रयस्वन्तः न, सत्राचः आ गत।

अर्थ- ४०८ (मर्यासः) मानवोंके हितकर्ता ये वीर (श्रिये) शोभाके लिए (अञ्जीन्) वीरभूषण या गणवेश (अकृण्वत) पहन लेते हैं। (पूर्वीः) पहलेसे (क्षपः) विनाशकारिणी शत्रुसेनाएँ भी (सु-मारुतं) अच्छे वीर मरुतोंके गण या संघको (न अति) पराभूत नहीं कर सकती हैं। (दिवः पुत्रासः) द्युलोकके सुपुत्र ये वीर (एताः न) कृष्णसारों या [बारह सींगों]के तुल्य लंबी छलांगें मारकर विजयके लिए (येतिरे) प्रयत्न करते हैं और (आदित्यासः ते) सूर्यवत् तेजस्वी प्रतीत होनेवाले ये वीर (अक्राः न) गढ या दुर्गके तटकी नाईं (वृवृधुः) बढते रहते हैं। ४०९ (ये) जो (त्मना) अपने (बर्हणा) महत्त्वसे (दिवः पृथिव्याः न) द्युलोक जिस तरह पृथ्वीसे, (अभ्रात्) मेघोंसे (सूर्यः न) जैसे सूर्य ऊँचाईपर रहता है, वैसेही (प्र रिरिचे) बडे हुए हैं, वे (पाजस्वन्तः वीराः न) बलवान वीरोंके समान (पनस्यवः) प्रशंसनीय और (रिश-अदसः मर्याः न) हिंसक शत्रुओंको मार डालनेवाले मानवी वीरों के तुल्य (अभि-द्यवः) अति तेजस्वी हैं। ४१० (अपां यामनि न) जैसे जलप्रवाहके नीचेकी उसी प्रकार (युष्माकं बुध्ने) तुम्हारी हलचल के नीचे विद्यमान (मही) पृथ्वी (न विथुर्यति) केवल पीडितही होती है, सो बात नहीं पर वह (श्रथर्यति) डोली तक बन जाती है। (अयं) यह (विश्व-प्सुः यज्ञः) सर्वस्वदानसे संपन्न होनेवाला यज्ञ (वः सु अर्वाक्) तुम्हारे सामने ही हो जाए, तुम्हें लाभ पहुँचानेवाला हो जाय। (प्रयस्वन्तः न) अन्नदान करनेवालोंके समान तुम (सत्राचः) सभी वीर इकट्ठे होकर इस यज्ञमें (आ गत) पधारो।

भावार्थ— ४०८ मानवोंके हित करनेमें लगे हुए ये वीर समान पहनावा पहनकर विभूषित हो घूमते हैं। जो शत्रुसेना पहलेसे विध्वंस करनेपर तुली हुई थी, वह भी इन वीरोंके सम्मुख परास्त हो जाती है; भला इन वीरोंका पराभव कौन कर सके, किसकी इतनी मजाल कि इन वीरोंको पछाड दें। दिव्य शक्तिसे युक्त ये वीर कृष्णसारोंकी नाईं फुर्तीले बन छलांगें मारकर प्रगतिके लिए सचेष्ट रहा करते हैं और दुर्गतटोंके समान चहुँ ओरसे जनताकी रक्षा करते हैं। ४०९ अपनी सामर्थ्यके कारण ये वीर द्यावापृथिवीकी अपेक्षा अत्यधिक बडे हुए हैं। ये वीर सैनिकवृत्तिसे युक्त हैं, अतः सराहनीय और शत्रुविध्वंसक होनेके कारण बडे तेजस्वी हैं। ४१० ये वीर जहाँपर जाते हैं, उधरही इनके आन्दोलनों एवं हलचलोंसे भूमि विकम्पित हो उठती है। इनकी हलचल इस भाँति अतीव प्रभावशालिनी है। जिसमें सभी सर्वोंका दान दिया जाता है, ऐसा यह यज्ञ इन्हें प्राप्त हो। इस यज्ञमें सभी वीर मिलकर आ जायँ और अपना अपना भाग ले लें।

टिप्पणी— [४०८] (१) पूर्व = पहला, उत्कृष्ट, सदाचरित। (२) क्षपः = (क्षप् प्रेरणे च) = विनाशकारिणी (शत्रुसेना)। (३) अक्रः = (अ-क्रः) = स्थिर, कर्महीन, व्यर्थ, निराधार, आकार, दुर्गकी दीवार, पताका, (Banner)। (४) मर्यासः = [मानवाः - मर्त्याः, पूर्व मनुष्याः मन्त्रः स्वप्न मुक्तानिर्देशेन ज्ञाना जानन्:]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

(४१३) यः । उत्ऽऋचि । युज्ञे । अध्वरेऽस्थाः ।
मुरुत्ऽभ्यः । न । मानुषः । ददाशत् ।
रेवत् । सः । वयः । दुधते । सुऽवीरम् ।
सः । देवानाम् । अपि । गोऽपीथे । अस्तु ॥७॥

(४१४) ते । हि । युज्ञेषु । युज्ञियासः । ऊमाः ।
आदित्येन । नाम्ना । शम्ऽभविष्ठाः ।
ते । नः । अवन्तु । रथऽतूः । मनीषाम् ।
महः । च । यामन् । अध्वरे । चकानाः ॥८॥

अन्वयः—४१३ अध्वरे-स्थाः यः मानुषः यज्ञे उत्-ऋचि मरुद्भ्यः न ददाशत्, सः रे-वत् सु-वीरं वयः दधते, देवानां अपि गो-पीथे अस्तु।

४१४ ते हि ऊमाः यज्ञेषु यज्ञियासः आदित्येन नाम्ना शं-भविष्ठाः, रथ-तूः अध्वरे यामन् महः चकानाः च ते नः मनीषां अवन्तु।

अर्थ— ४१३ (अध्वरे-स्थाः) यज्ञमें स्थिर रहनेवाला; यज्ञ करनेहारा (यः मानुषः) जो मनुष्य (यज्ञे उत्-ऋचि) यज्ञसमाप्ति के उपरान्त (मरुद्भ्यः न) वीर मरुतों को दिया जाता है, उसी भाँति (ददाशत्) दान देता है, (सः) वह (रे-वत्) धनयुक्त एवं (सु-वीरं) अच्छे वीरों से युक्त (वयः) अन्न (दधते) धारण करता है, अपने समीप रखता है और वह (देवानां अपि) देवों के भी (गो-पीथे) गोरसपान के समय उपस्थित (अस्तु) रहता है।

४१४ (ते हि) वे वीर सचमुचही सबकी (ऊमाः) रक्षा करनेहारे हैं, अतः (यज्ञेषु) यज्ञोंमें (यज्ञियासः) पूजनीय हैं; उसी प्रकार वे (आदित्येन नाम्ना) आदित्यके रूपसे सबको (शं-भविष्ठाः) सुख देनेवाले हैं। (रथ-तूः) रथमें बैठकर वेगसे जानेवाले वे वीर (अध्वरे यामन्) यज्ञमें जाकर (महः चकानाः च) महत्त्व प्राप्त करने की इच्छा करते हैं। ये (नः मनीषां) हमारी आकांक्षाओं को (अवन्तु) सुरक्षित करें।

भावार्थ— ४१३ यज्ञसमाप्तिके समय जैसे दान दिया जाता है, वैसेही जो दान देने लगता है, वह एक तरह से अपने समीप विद्यमान अन्न को बढाता है और इसी कारणसे उसे पर्याप्त मात्रामें वीर संतान प्राप्त होती है तथा देवोंके सोमरस या गोरसपान के मौकेपर वहाँ उपस्थित होनेका गौरव एवं सम्मान भी उसे मिल जाता है।

४१४ ये वीर सबके संरक्षक हैं, इसलिए यह अत्यन्त उचित है कि, यज्ञमें उनका सम्मान हो। सूर्यवत् मन ये सबको सुखी करते हैं। रथमें बैठकर वे यज्ञोंमें उपस्थित होते हैं और वहाँपर हविर्भाग का आदान करना चाहते हैं। ऐसे ये वीर हमारी आकांक्षाओंकी भली भाँति रक्षा करें।

टिप्पणी— [४१३] (१) गो-पीथ= गोरक्षण, पवित्र स्थान, रक्षा, सोमरस पीनेका स्थान, गोदुग्ध सेवन करनेकी जगह। (२) उत्-ऋच्= बडी आवाजमें कही जानेवाली ऋचा, श्रेष्ठ ऋचा। [४१४] (१) नामन्= नाम, कीर्ति, चिन्ह, तरह, आकृति, स्वरूप। (२) चकान= कन्= संतुष्ट होना, प्रीति करना; संतुष्ट करनेहारे, संतुष्ट होनेवाले प्यार करनेवाले।

(ऋ० १०।७८।१-८)

(४१५) विप्रासः । न । मन्मऽभिः । सुऽआध्यः । देवऽअव्यः । न । यज्ञैः । सुऽअप्नसः ।
राजानः । न । चित्राः । सुऽसंदृशः ।
क्षितीनाम् । न । मर्याः । अरेपसः ॥१॥

(४१६) अग्निः । न । ये । भ्राजसा । रुक्मऽवक्षसः ।
वातासः । न । स्वऽयुजः । सद्यःऽऊतयः ।
प्रऽज्ञातारः । न । ज्येष्ठाः । सुऽनीतयः ।
सुऽशर्माणः । न । सोमाः । ऋतम् । यते ॥२॥

अन्वयः- ४१५ विप्रासः न, मन्मभिः सु-आध्यः, देवाव्यः न, यज्ञैः सु-अप्नसः, राजानः न चित्राः सु-संदृशः, क्षितीनां मर्याः न अ-रेपसः।

४१६ ये, अग्निः न, भ्राजसा रुक्म-वक्षसः, वातासः न स्व-युजः, सद्य-ऊतयः, प्र-ज्ञातारः न ज्येष्ठाः, सोमाः न सु-शर्माणः, ऋतं यते सु-नीतयः।

अर्थ- ४१५ वे वीर (विप्रासः न) ज्ञानी पुरुषों के समान (मन्मभिः) मननीय काव्यों से (सु-आध्यः) उत्कृष्ट विचार प्रकट करनेहारे, (देवाव्यः न) देवोंको संतुष्ट करनेहारे भक्तों के तुल्य (यज्ञैः सु-अप्नसः) बहुतसे यज्ञ करके अच्छे कार्य करनेवाले, (राजानः न) नरेशोंके समान (चित्राः) आश्चर्यकारक कर्म करनेवाले और (सु-संदृशः) अतिशय सुन्दर स्वरूपवाले हैं तथा (क्षितीनां) अपने गृहमें ही संतुष्ट रहनेवाले (मर्याः न) मानवों के समान (अ-रेपसः) पापरहित हैं।

४१६ (ये) जो (अग्निः न) अग्नितुल्य (भ्राजसा) तेजसे युक्त (रुक्म-वक्षसः) स्वर्णमुद्राओंके हार वक्षःस्थलपर धारण करनेहारे, (वातासः न) वायुप्रवाहके समान (स्व-युजः) स्वयंही काममें जुट जानेवाले, (सद्य-ऊतयः) तुरन्त रक्षा करनेहारे, (प्र-ज्ञातारः न) उत्कृष्ट ज्ञानियोंके तुल्य (ज्येष्ठाः) श्रेष्ठ, (सोमाः न) सोमों के समान (सु-शर्माणः) अत्यन्त सुखदायक तथा (ऋतं यते) सत्यकी ओर जानेवाले के लिए (सु-नीतयः) उत्तम पथप्रदर्शक हैं।

भावार्थ— ४१५ ये वीर ज्ञानी लोगोंके समान मननीय काव्योंसे सुविचारों का प्रचार करनेवाले, यज्ञरूपी सत्कर्मोंसे देवताओं को संतुष्ट करनेहारे, नरेशों की नाईं अनूठे एवं सराहनीय कार्यकलाप निभानेवाले और, अपरिग्रह मनोवृत्तिके सज्जनोंके तुल्य निष्पाप हैं।

४१६ जगमगाते मुद्राहार पहननेके कारण द्योतमान, स्वेच्छा से कार्यमें निरत, ज्ञानी, श्रेष्ठ, शान्त, सुखदायी, तथा सन्मार्गपर से चलनेवाले मानवों के तुल्य दूसरों को अच्छी राह बतलानेवाले ये वीर सैनिक हैं।

टिप्पणी— ४१५ (१) स्वाध्य= [सु+आ+ध्य (ध्यै चिन्तायाम्) चिंतन करना, ध्यान करना, सोचना] भली भाँति सोचनेहारा। (२) देवाव्य= (देव+अव् प्रीतितृप्त्योः) देवों को संतुष्ट करनेहारा। (३) स्वप्नसः= (सु+अप्नस्= कृत्य) अच्छे कृत्य करनेहारे, सत्कर्म करनेवाले। (४) क्षितिः= पृथ्वी, मनुष्य, स्वदेश। क्षि-ति= [क्षि निवासे, गृहे तिष्ठन्ति। यथा प्रतिग्रहार्थं अन्यत्र अगत्वा स्वगृहे एव अनुतिष्ठन्तः निर्दोषाः भवन्ति तादृशाः (सा० भा०)] जो कुछ अपने घरमें मिलेगा, उसीमें संतुष्ट रहकर प्रतिग्रहके लिए घरघर न घूमनेवाला, अपरिग्रह मनोवृत्ति का।

(४१७) वातासः । न । ये । धुनयः । जिगत्नवः । अग्नीनाम् । न । जिह्वाः । विऽरोकिणः ।
वर्मण्ऽवन्तः । न । योधाः । शिमीऽवन्तः । पितॄणाम् । न । शंसाः । सुऽरातयः ॥३॥
(४१८) रथानाम् । न । ये । अराः । सऽनाभयः । जिगीवांसः । न । शूराः । अभिऽद्यवः ।
वरेऽयवः । न । मर्याः । घृतऽप्रुषः । अभिऽस्वर्तारः । अर्कम् । न । सुऽस्तुभः ॥४॥
(४१९) अश्वासः । न । ये । ज्येष्ठासः । आशवः । दिधिषवः । न । रथ्यः । सुऽदानवः ।
आपः । न । निम्नैः । उदऽभिः । जिगत्नवः । विश्वऽरूपाः । अङ्गिरसः । न । सामऽभिः ॥५॥

अन्वयः— ४१७ ये, वातासः न धुनयः, जिगत्नवः, अग्नीनां जिह्वाः न विरोकिणः, वर्मण्वन्तः योधाः न शिमी-वन्तः, पितॄणां शंसाः न सु-रातयः। ४१८ ये, रथानां अराः न स-नाभयः, जिगीवांसः शूराः न अभि-द्यवः, वर-ईयवः मर्त्याः न घृत-प्रुषः, अर्कं अभि-स्वर्तारः न सु-स्तुभः। ४१९ ये, अश्वासः न, ज्येष्ठासः आशवः, दिधिषवः रथ्यः न, सु-दानवः, निम्नैः उदभिः, आपः न, जिगत्नवः, विश्व-रूपाः सामभिः अङ्गिरसः न।

अर्थ— ४१७ (ये) जो ये वीर (वातासः न) वायुके समान (धुनयः) शत्रुदलको हिला देनेवाले, (जिगत्नवः) वेगपूर्वक जानेहारे, (अग्नीनां जिह्वाः न) अग्नी की लपटों के तुल्य (विरोकिणः) देदीप्यमान, (वर्मण्वन्तः) कवचधारी (योधाः न) योद्धाओं के समान (शिमी-वन्तः) शूरतापूर्ण कार्य करनेहारे और (पितॄणां शंसाः न) पितरोंके आशीर्वादों के समान (सु-रातयः) अच्छे दान देनेवाले हैं।

४१८ (ये) जो वीर (रथानां अराः न) रथोंके पहियोंमें विद्यमान आरों के तुल्य (स-नाभयः) एकही केन्द्रमें रहनेवाले, (जिगीवांसः शूराः न) विजयेच्छु वीरोंके समान (अभि-द्यवः) सभी प्रकारसे तेजस्वी, (वर-ईयवः) अभीष्ट प्राप्त करनेहारे (मर्याः न) मानवोंके समान (घृत-प्रुषः) घृत आदि पौष्टिक वस्तुओंकी समृद्धि करनेवाले, (अर्कं) पूज्य देवताके (अभि-स्वर्तारः न) स्तोत्र पढनेवाले के समान (सु-स्तुभः) भली प्रकार काव्यगायन करनेवाले हैं।

४१९ (ये) जो (अश्वासः न) घोडोंके समान (ज्येष्ठासः) श्रेष्ठ हैं, तथा (आशवः) शीघ्र गतिसे जानेवाले हैं, (दिधिषवः) विपुल धन समीप रखनेवाले (रथ्यः न) रथोंसे संपन्न होनेवाले महारथियोंके समान (सु-दानवः) अच्छे दानशूर, (निम्नैः उदभिः) ढलती जगह की ओर जानेवाले जलप्रवाहोंके (आपः न) जलोंकी नाईं (जिगत्नवः) बडे वेगसे जानेवाले, (विश्व-रूपाः) भाँति भाँतिके रूप धारण करनेहारे और (सामभिः) सामगानों से (अङ्गिरसः न) अंगिरसोंके तुल्य ये वीर अच्छे गायक हैं।

भावार्थ- ४१७ ये वीर शत्रुको जड मूलसे उखाड फेंक देनेवाले, अग्निवत् तेजस्वी, कवचधारी बनकर लडनेवाले तथा शूरता दर्शानेवाले हैं और इनके दान पितरोंके आशीर्वादोंके समान सुखदायी सहायक हैं। ४१८ ये वीर एक उद्देश्यसे प्रभावित हो कार्य करनेवाले, विजय पानेकी चाह रखनेवाले, तेजस्वी, शूर, सबको समृद्धि प्रदान करनेहारे तथा पूजनीय वीरोंके काव्यका गायन करनेवाले हैं। ४१९ ये वीर घोडोंके समान वेगसे जानेहारे, महारथियोंके समान उदार, उचित मौकेपर विभिन्न स्वरूप धारन कर कार्य करनेमें बडेही कुशल, जलौघोंके समान निम्न स्थानमें पहुँचकर शान्ति प्रदान करनेहारे और सामगान करनेमें बिलकुल अंगिरसोंके समान कुशल हैं।

टिप्पणी— [४१८] (१) नाभिः = पहियेकी नाभि, केन्द्र, नेता, बन्धु। (२) अभि-स्वर्तृ = (स्वृ = शब्दोपतापयोः) आवाज करनेहारा, उच्चार करनेहारा, स्तुति करनेवाला। (अराः न) जिस भाँति चक्रके आरे समान होते हैं, वैसेही ये सभी वीर सैनिक समान हैं। (देखिए मंत्र ९५; १०५; ३५३।)

(४२०) ग्रावाणः । न । सूरयः । सिन्धुऽमातरः । आऽदुर्दिरासः । अद्रयः । न । विश्वहा । शिशूलाः । न । क्रीळयः । सुऽमातरः । महाऽग्रामः । न । यामन् । उत । त्विषा ॥ ६ ॥
(४२१) उषसाम् । न । केतवः । अध्वरऽश्रियः । शुभम्ऽयवः । न । अञ्जिऽभिः । वि । अश्वितन् । सिन्धवः । न । ययियः । भ्राजत्ऽऋष्टयः । पराऽवतः । न । योजनानि । ममिरे ॥७॥
(४२२) सुऽभागान् । नः । देवाः । कृणुत । सुऽरत्नान् । अस्मान् । स्तोतॄन् । मरुतः । ववृधानाः । अधि । स्तोत्रस्य । सख्यस्य । गात । सनात् । हि । वः । रत्नऽधेयानि । सन्ति ॥८॥

अन्वयः— ४२० सूरयः, ग्रावाणः न सिन्धु-मातरः, आ-दर्दिरासः अद्रयः न विश्व-हा, सु-मातरः शिशूलाः न क्रीळयः, उत महा-ग्रामः न यामन् त्विषा। ४२१ उषसां केतवः न, अध्वर-श्रियः, शुभं-यवः न, अञ्जिभिः वि अश्वितन्, सिन्धवः न ययियः, भ्राजत्-ऋष्टयः, परावतः न योजनानि ममिरे। ४२२ (हे) देवाः ववृधानाः मरुतः! अस्मान् नः स्तोतॄन् सु-भागान् सु-रत्नान् कृणुत, सख्यस्य स्तोत्रस्य अधि गात, हि वः रत्न-धेयानि सनात् सन्ति।

अर्थ— ४२० (सूरयः) ये ज्ञानी वीर (ग्रावाणः न) मेघोंके समान (सिन्धु-मातरः) नदियोंके बनानेहारे, (आ-दर्दिरासः) सभी प्रकारसे शत्रुका विनाश करनेहारे (अद्रयः न) वज्रोंके तुल्य (विश्व-हा) सभी शत्रुओंका संहार करनेहारे, (सु-मातरः) उत्तम माताओंके (शिशूलाः न) निरोगी पुत्र-संतानोंके समान (क्रीळयः) खिलाडी (उत) और (महा-ग्रामः न) बडे संग्राम-चतुर योद्धाके समान शत्रुपर (यामन्) हमला करते समय (त्विषा) तेजस्वी दीख पडते हैं।

४२१ ये वीर (उषसां केतवः न) उषःकालीन किरणोंके समान तेजस्वी, (अध्वर-श्रियः) यज्ञके कारण सुहानेवाले, (शुभं-यवः न) कल्याणप्राप्तिके लिए प्रयत्न करनेवाले वीरोंके समान (अञ्जिभिः) वीरभूषणों या गणवेशोंसे (वि अश्वितन्) विशेष ढंगसे प्रकाशित हो रहे हैं। ये (सिन्धवः न) नदियोंके समान (ययियः) वेगपूर्वक जानेहारे, (भ्राजत्-ऋष्टयः) तेजस्वी हथियार धारण करनेहारे तथा (परावतः न) दूर जानेहारे प्रवासियोंके समान (योजनानि) कई योजन (ममिरे) पार कर चले जाते हैं।

४२२ हे (देवाः) प्रकाशमान तथा (ववृधानाः) बढनेवाले (मरुतः!) मरुतो! (अस्मान्) हमें और (नः स्तोतॄन्) हमारे सभी कवियोंको (सु-भागान्) अच्छे भाग्यवान एवं (सु-रत्नान्) उत्तम रत्नोंसे युक्त (कृणुत) करो। (सख्यस्य स्तोत्रस्य) हमारी मित्रताके काव्यका (अधि गात) गायन करो। (हि) क्योंकि (वः) तुम्हारे (रत्न-धेयानि) रत्नोंके दान (सनात्) चिरकालसे (सन्ति) प्रचलित हैं।

भावार्थ- ४२० ये वीर जनताके सहायक, शस्त्रों के तुल्य शत्रुनाशक, उत्तम माताके आरोग्यसंपन्न बच्चोंकी नाईं खिलाडी और युद्धकुशल योद्धाके जैसे शत्रुदलपर टूट पडते समय प्रसन्नचेता बननेवाले हैं। ४२१ ये वीर तेजस्वी, अपने शरीरोंको सँवारनेवाले, वेगपूर्वक दौडनेवाले, आभामय हथियार रखनेवाले, शीघ्र पहुँच जानेकी इच्छा करनेवाले यात्रियोंके समान कई योजन थकावट न दर्शाते हुए जानेवाले हैं। ४२२ हे वीरो! हमें तथा हमारे सभी कवियोंको प्रचुर मात्रामें धन एवं रत्न दे दो, क्योंकि तुम्हारा धनदानका कार्य लगातार प्रचलित रहता है। मित्रदृष्टि हर स्थानपर पनपने लगे, इसीलिए इस काव्यका गायन करो और मित्रतापूर्ण दृष्टिको बढाओ।

टिप्पणी— [४२०] (१) ग्रावन् = पत्थर, मेघ, पर्वत। (२) आ-दर्दिर = (आ + दॄ = फोडना, नाश करना) विनाशक। [४२१] (१) पर+अवत् = दूर जानेवाला। [४२२] (१) धेयं = बटोरना, लेना, पोषण करना। (२) स्तोता = कवि। (३) सख्यस्य स्तोत्रं = मित्रत्व बढानेके लिए किया हुआ काव्य, सभी जगह मित्रभाव बढे, इस हेतुसे रचा हुआ काव्य।

(वा० यजु० ३।४४)

(४२३) प्रघासिन इति प्रऽघासिनः । हवामहे । मरुतः । च । रिशादसः ।
करम्भेण । सजोषस इति सऽजोषसः ॥४४॥

(का० यजु० ७।३६)

(४२४) उपयामगृहीत इत्युपयामऽगृहीतः । असि । इन्द्राय । त्वा । मरुत्वते । एषः । ते ।
योनिः । इन्द्राय । त्वा । मरुत्वते । उपयामगृहीत इत्युपयामऽगृहीतः । असि । मरुताम् । त्वा ।
ओजसे ॥३६॥

(वा० यजु० १७।८०-८६)

(४२४) शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्मांश्च । शुक्रश्चऽऋतपाश्चात्यंहाः ॥८०॥

[१] शुक्रज्योतिरिति शुक्रऽज्योतिः । च । चित्रज्योतिरिति चित्रऽज्योतिः । च । सत्यज्योतिरिति सत्यऽज्योतिः । च । ज्योतिष्मान् । च ।
शुक्रः । च । ऋतपाऽइत्यृतऽपाः । च । अत्यंहा इत्यतिऽअंहाः ॥८०॥

अन्वयः— ४२३ प्र-घासिनः रिश-अदसः करम्भेण स-जोषसः च मरुतः हवामहे । ४२४ उपयाम-गृहीतः असि, मरुत्वते इन्द्राय त्वा, एष ते योनिः, मरुत्वते इन्द्राय उपयाम-गृहीतः असि, मरुतां ओजसे त्वा । ४२४ (१) शुक्र-ज्योतिः च चित्र-ज्योतिः च सत्य-ज्योतिः च ज्योतिष्मान् च शुक्रः च ऋत-पाः च अत्यंहाः [हे मरुतः ! यूयं अस्मिन् यज्ञे एतन] ।

अर्थ— ४२३ (प्र-घासिनः) उत्तम अन्नका सेवन करनेहारे, (रिश-अदसः) हिंसकोंका वध करनेहारे और (करम्भेण स-जोषसः च) दहीभातको सब मिलकर सेवन करनेवाले (मरुतः हवामहे) वीर मरुतों को हम बुलाते हैं । ४२४ तू (उपयाम-गृहीतः असि) उपयाम वर्तनमें धरा हुआ सोम है, (मरुत्वते इन्द्राय) वीर मरुतोंके साथ रहनेवाले इन्द्रके लिए (त्वा) तू है । (एषः ते योनिः) यह तेरा उत्पत्तिस्थान है । (मरुतां ओजसे) वीर मरुतोंके तुल्य बल प्राप्त हो जाय, इसीलिए हम (त्वा) तुझे अर्पित करते हैं या तेरा ग्रहण करते हैं । ४२४ (१) (शुक्र-ज्योतिः च) अति शुभ्र तेजसे युक्त, (चित्र-ज्योतिः च) आश्चर्यजनक तेजसे पूर्ण, (सत्य-ज्योतिः च) सत्यके तेजसे भरा हुआ, (ज्योतिष्मान् च) पर्याप्त मात्रामें प्रकाशमान, (शुक्रः च) पवित्र, (ऋत-पाः च) सत्यका संरक्षण करनेहारा और (अत्यंहाः) पापसे दूर रहनेवाला [इस भाँति नाम धारण करनेहारे वीर मरुतो ! इस हमारे यज्ञमें तुम पधारो]

भावार्थ— ४२३ शत्रुविनाशक तथा सब इकट्ठे होकर अन्नका सेवन करनेवाले मरुतोंको हम अपने समीप बुलाते हैं । ४२४ उपयामनामक पात्रमें सोमरस उँडेलकर इन्द्र तथा मरुतोंको दिया जाता है और ऐसा करनेसे मरुतोंके समान बल प्राप्त हो, ऐसी प्रार्थना उपासक करता है तथा वह उस सोमरसका ग्रहण एवं दान करता है । ४२४ (१) १ शुक्रज्योति, २ चित्रज्योति, ३ सत्यज्योति, ४ ज्योतिष्मान्, ५ शुक्र, ६ ऋतपाः ७ अत्यंहाः ये सात मरुत् हैं । यह मरुतोंकी पहली पंक्ति है ।

टिप्पणी— [४२३] (१) प्र-घासिन् = (घस् अदने = खाना; घासः = अन्न) उत्तम अन्नको खानेवाले, पर्याप्त अन्नका सेवन करनेवाले । (२) करम्भ = सत्तूका आटा दहीमें मिलाकर तैयार किया हुआ खाद्य पदार्थ । दही-भात, कोईभी अन्न दहीमें मिला देनेपर सिद्ध होनेवाली खानेकी चीज । [४२४ (१)] (१) अत्यंहस् = (अति + अंहस्-) पापसे दूर रहनेवाला । [हे मरुतः ! —— यह अध्याहार मंत्र ४२५ में से लिया है ।

(४२४) ई॒दृङ् चा॒न्या॒दृङ् च॒ स॒दृङ् च॒ प्रति॑सदृङ् च । मि॒तश्च॒ सम्मि॑तश्च॒ सभ॑राः ॥८१॥
[२] ई॒दृङ् । च॒ । अ॒न्या॒दृङ् । च॒ । स॒दृङ् । स॒दृङ्ङिति॑ स॒ऽदृङ् । च॒ । प्रति॑सदृङ्ङिति॒ प्रति॑ऽसदृङ् । ... मि॒तः । च । सम्मि॑त॒ऽइति॑ सम्ऽमि॑तः । च॒ । सभ॑रा॒ऽइति॑ स॒ऽभ॑राः ॥८१॥
(४२४) ऋ॒तश्च॑ स॒त्यश्च॑ ध्रु॒वश्च॑ ध॒रुण॑श्च । ध॒र्ता च॑ विध॒र्ता च॑ विधार॒यः ॥८२॥
[३] ऋ॒तः । च॒ । स॒त्यः । च॒ । ध्रु॒वः । च॒ । ध॒रुणः॑ । च॒ । ध॒र्ता । च॒ । वि॒ध॒र्तेति॑ विऽध॒र्ता ... वि॒धा॒र॒यऽइति॑ विऽधार॒यः ॥ ८२ ॥
(४२४) ऋ॒तजि॑च्च स॒त्यजि॑च्च सेन॒जिच्च॑ सु॒षेण॑श्च । अन्ति॑मित्रश्च दू॒रेऽअ॑मित्रश्च ग॒णः ॥८३॥
[४] ऋ॒त॒जिदित्यृ॒त॒ऽजित् । च॒ । स॒त्य॒जिदिति॑ स॒त्य॒ऽजित् । च॒ । से॒न॒जिदिति॑ सेन॒ऽजित् । च॒ ... सु॒षेणः॑ । सु॒सेन॒ऽइति॑ सु॒ऽसेनः॑ । च॒ ।
अन्ति॑मित्र॒ऽइत्यान्ति॑ऽमित्रः । च॒ । दू॒रेऽअ॑मित्र॒ऽइति॑ दू॒रेऽअ॑मित्रः । च॒ । ग॒णः ॥ ८३ ॥

अन्वयः— ४२४ (२) ई-दृङ् च अन्या-दृङ् च स-दृङ् च प्रति-सदृङ् च मितः च सं-मितः च स-भराः [हे मरुतः ! यूयं अस्मिन् यज्ञे पतन ।] ४२४ (३) ऋतः च सत्यः च ध्रुवः च धरुणः च धर्ता च वि-धर्ता च वि-धारयः [हे मरुतः ! यूयं अस्मिन् यज्ञे पतन] । ४२४ (४) ऋत-जित् च सत्य-जित् च सेन-जित् च सु-षेणः च अन्ति-मित्रः च दूरेऽअ-मित्रः च गणः [हे मरुतः ! यूयं अस्मिन् यज्ञे पतन]

अर्थ— ४२४ (२) (ई-दृङ् च) समीप की वस्तुपर दृष्टि रखनेवाला, (अन्या-दृङ् च) दूसरी ओर निगाह डालनेवाला, (स-दृङ् च) सबको सम दृष्टिसे देखनेवाला, (प्रति-संदृङ् च) प्रत्येकको पृ... विशिष्ट दृष्टिसे देखनेहारा, (मितः च) संतुलित भावसे वर्ताव रखनेवाला, (सं-मितः च) सबसे समता... होनेवाला, (स-भराः) सभी कामोंका बोझ अपने सरपर उठानेवाला- [इन नामोंसे प्रख्यात वीर मरुतो ! इस हमारे यज्ञमें आ जाओ । ४२४ (३) (ऋतः च) सरल व्यवहार करनेहारा, (सत्यः च) सत्याचरणी, (ध्रुवः च) अटल एवं अडिग भावसे पूर्ण, (धरुणः च) सबको आश्रय देनेवाला, (धर्ता च) धारकशक्तिसे युक्त, (वि-धर्ता च) विविध ढंगोंसे धारण करनेमें समर्थ और (वि-धार-यः) विशे... रीतिसे धारण कर प्रगतिशील बननेवाला- [इन नामोंसे विख्यात वीर मरुतो ! हमारे यज्ञमें पधारो।] ४२४ (४) (ऋत-जित् च) सरल राहसे चलकर यशस्वी होनेवाला, (सत्य-जित् च) सत्यसे जीतनेवाला, (सेन-जित् च) शत्रुसेनापर विजय पानेवाला, (सु-षेणः च) अच्छी सेना समीप रखनेवाला, (अन्ति-मित्रः च) मित्रोंको समीप करनेवाला, (दूरेऽअ-मित्रः च) शत्रुको दूर हटानेवाला और (गणः) गिनती करनेवाला-- [इन नामोंसे विभूषित वीरो ! हमारे इस यज्ञमें आओ]

भावार्थ— ४२४ (२) ८ ईदृङ्, ९ अन्यादृङ्, १० सदृङ्, ११ प्रतिसंदृङ्, १२ मित, १३ संमित तथा १४ सभर सात मरुतोंका उल्लेख यहाँपर किया है। यह मरुतोंकी दूसरी कतार है। ४२४ (३) १५ ऋत, १६ सत्य, १७ ध्रुव, १८ धरुण, १९ विधर्ता, २० धर्ता, २१ विधारय ऐसे सात मरुतोंका उल्लेख यहाँपर है। यह मरुतोंकी तीसरी पंक्ति है। ४२४ (४) २२ ऋतजित्, २३ सत्यजित्, २४ सेनजित्, २५ सुषेण, २६ अन्तिमित्र, २७ दूरेऽमित्र, २८ गण इन सात मरुतोंका निर्देश यहाँपर किया है। यह मरुतोंकी चतुर्थ कतार है।

टिप्पणी— [४२४ (३)] (१) ऋत = सरल, विश्वासार्ह, पूज्य, प्रदीप्त, सत्य, यज्ञ, सत्कर्म। (२) धरुण = ढोनेवाला, ले जानेवाला, आश्रय देनेहारा। [४२४ (४)] (१) गणः = (गण् परिसंख्याने) गिनती करनेहारा, चतुर्दिक् ध्यान देनेहारा, चौकन्ना।

(४२५) ई॒दृक्षा॑सः । ए॒ता॒दृक्षा॑सः । ऊँ॒ऽइति॑ । सु । नः॒ । स॒दृक्षा॑स॒ इति॑ स॒ऽदृक्षा॑सः । प्रति॑सदृक्षास॒ऽ-इ॒ति॒ प्रति॑ऽसदृक्षासः । आ । इ॒त॒न॒ । मि॒तास॑ः । च॒ । सम्मि॑तास॒ऽइ॒ति॒ सम्ऽमि॑तासः । नः॒ । अ॒द्य । सभ॑रस॒ऽइ॒ति॒ स॒ऽभ॑रसः । म॒रु॒तः॒ । य॒ज्ञे । अ॒स्मिन् ॥८४॥

(४२६) स्वत॑वा॒नि॒ति॒ स्व॒ऽत॑वान् । च॒ । प्र॒घा॒सीति॑ प्र॒ऽघा॒सी । च॒ । सा॒न्त॒प॒न॒ऽइ॒ति॑ साम्ऽत॒प॒नः । च॒ । गृ॒ह॒मे॒धीति॑ गृ॒ह॒ऽमे॒धी । च॒ । क्री॒डी । च॒ । शा॒की । च॒ । उ॒ज्जे॒षीत्यु॒त्ऽजे॒षी ॥८५॥

[(४२६) उ॒ग्रश्च॑ भी॒मश्च॒ ध्वान्त॑श्च॒ धुनि॑श्च । सा॒स॒ह्वाँश्चा॑भियु॒ग्वा च॑ वि॒क्षिपः॒ स्वाहा॑ । (वा०य०३९।७)

[१] उ॒ग्रः । च॒ । भी॒मः । च॒ । ध्वान्त॒ऽइ॒ति॒ धु॒ऽआ॒न्तः । च॒ । धुनिः॑ । च॒ । सा॒स॒ह्वान् । स॒स॒ह्वानि॑ति स॒स॒ह्वान् । च॒ । अ॒भि॒ऽयु॒ग्वेत्य॒भि॒ऽयु॒ग्वा । च॒ । वि॒क्षिप॒ऽइति॑ वि॒ऽक्षिपः॑ । स्वाहा॑ ॥७॥]

(४२७) इन्द्र॑म् । दैवीः॑ । विशः॑ । म॒रुतः॑ । अनु॑वर्त्मा॒न॒ऽइ॒त्यनु॑ऽवर्त्मानः । अ॒भ॒व॒न् । यथा॑ । इन्द्र॑म् । दैवीः॑ । विशः॑ । म॒रुतः॑ । अनु॑वर्त्मा॒न॒ इ॒त्यनु॑ऽवर्त्मानः । अ॒भ॒व॒न् । ए॒वम् । इ॒मम् । यज॑मानम् । दैवीः॑ । च॒ । विशः॑ । मानु॑षीः । च॒ । अनु॑वर्त्मा॒न॒ऽइ॒त्यनु॑ऽवर्त्मानः । भ॒व॒न्तु॒ ॥८६॥

अन्वयः— ४२५ ई-दृक्षासः एता-दृक्षासः ऊ स-दृक्षासः प्रति-सदृक्षासः सु-मितासः सं-मितासः नः स-भरसः (हे) मरुतः ! अद्य नः अस्मिन् यज्ञे एतन । ४२६ स्व-तवान् च प्र-घासी च सान्तपनः च गृह-मेधी च क्रीडी च शाकी च उत्-जेषी च [हे मरुतः ! यूयं अस्मिन् यज्ञे एतन] । ४२६(१) उग्रः च भीमः च ध्वान्तः च धुनिः च सासह्वान् च अभि-युग्वा च विक्षिपः स्वाहा । ४२७ दैवीः विशः मरुतः इन्द्रं अनु-वर्त्मानः अभवन् (यथा दैवीः.... अभवन्) एवं दैवीः मानुषीः च विशः इमं यजमानं अनु-वर्त्मानः भवन्तु ।

अर्थ- ४२५ (ई-दृक्षासः) इन समीपस्थ वस्तुओंपर विशेष दृष्टि रखनेहारे, (एता-दृक्षासः) उन सुदूर वर्ती चीजोंपर विशेष ध्यान केन्द्रित करनेवाले, (ऊ स-दृक्षासः) सब मिलकर एक विचारसे देखनेहारे, (प्रति-सदृक्षासः) प्रत्येककी ओर विशेष ध्यान देनेवाले, (सु-मितासः) अच्छे ढंगसे प्रमाणबद्ध, (सं-मितासः) मिलजुलकर काम करनेहारे तथा (नः) हमारा (स-भरसः) समान अनुपातमें पोषण करनेवाले हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (अद्य) आज दिन (नः अस्मिन् यज्ञे) हमारे इस यज्ञमें (एतन) आओ ।

४२६ (स्व-तवान्) अपने निजी बलके सहारे खडा हुआ, (प्र-घासी च) भली भाँति अन्न तैयार करनेवाला, (सान्तपनः च) शत्रुओंको परिताप देनेवाला, (गृह-मेधी च) गृहस्थधर्म का पालन करनेवाला, (क्रीडी च) खिलाडी, (शाकी च) सामर्थ्ययुक्त तथा (उत्-जेषी च) दुश्मनोंपर अच्छी विजय पानेहारा [इस भाँति नाम धारण करनेहारे वीर मरुतो ! इस हमारे यज्ञमें आओ ।]

४२६ (१) (उग्रः च) उग्र, (भीमः च) भीषण, (ध्वान्तः च) शत्रुओं के आँखों में अँधियारी छा जाय ऐसा कार्य करनेहारा, (धुनिः च) शत्रुदलको हिला देनेवाला, (सासह्वान् च) सहनशक्तिसे युक्त, (अभि-युग्वा च) शत्रुदलसे सामने जूझनेवाला, (वि-क्षिपः च) विविध ढंगोंसे शत्रुओं को भगानेवाला-इस भाँति नाम धारण करनेहारे वीर मरुतोंको ये हविष्यान्न (स्वाहा) अर्पित हों ।

४२७ (दैवीः विशः मरुतः) ये वीर मरुत् दैवी प्रजाजन हैं और ये (इन्द्रं अनु-वर्त्मानः) इन्द्र के अनुयायी (अभवन्) हुए हैं । (एवं) इसी भाँति (दैवीः मानुषीः च विशः) देवलोक एवं मनुष्यलोक के प्रजाजन (इमं यजमानं) इस यज्ञ करनेहारे के (अनु-वर्त्मानः भवन्तु) अनुयायी हों ।

भावार्थ— ४२५ २९ ईदृक्षासः, ३० एतादृक्षासः, ३१ सदृक्षासः, ३२ प्रतिसदृक्षासः, ३३ सुमितासः, ३४ संमि सः, ३५ सभरसः इन सात मरुतों का उल्लेख इस मन्त्रमें है। यह मरुतोंकी पंचम पंक्ति है।

४२६ ३६ स्वतवान्, ३७ प्रघासी, ३८ सान्तपन, ३९ गृहमेधी, ४० क्रीडी, ४१ शाकी, ४२ उज्जेषी सात मरुतोंका निर्देश यहाँ है। यह मरुतोंकी छठी पंक्ति है।

४२६ (१) ४३ उग्र, ४४ भीम, ४५ ध्वान्त, ४६ धुनि, ४७ सासह्वान्, ४८ अभियुग्वा, ४९ विक्षि इस भाँति सात मरुतोंकी संख्या यहाँपर निर्दिष्ट है। यह मरुतोंकी सप्तम पंक्ति है।

टिप्पणी— [४२६ (१)] (१) ध्वान्तः = (ध्वन् शब्दे) शब्दकारी, अँधेरा। (२) सासह्वान् = (स-अ [सह् मर्षणे]+वत्) सहनशक्तिसे युक्त। [ऋ० ८. ९६. ८ मंत्रमें " त्रिः षष्टिस्त्वा मरुतो वावृधाना' अर्थात् समूचे मरुतोंकी संख्या ६३ है, ऐसा स्पष्ट कहा है। उसी मंत्रपर की हुई सायणाचार्यजी की टीकामें यों लिखा " त्रिः त्रयः। षष्टिरुत्तरसंख्याकाः मरुतः। ते च तैत्तिरीयके 'ईदृङ् चान्यादृङ् च' (तै० सं० ४।६।५।५ इत्यादिना नवसु गणेषु सप्त सप्त प्रतिपादिताः। तत्रादितः पञ्च गणाः संहितायामाम्नायन्ते। 'स्वतवांश्च प्रघासी च सान्तपनश्च गृहमेधी च क्रीडी च शाकी चोज्जेषी' (वा० सं० १७।८५) इति खैलिकः षष्ठो गणः ततो ' धुनिश्च ध्वान्तश्च ' (तै० आ० ४।२४) इत्याद्याम्नयोऽरण्येऽनुवाक्याः। इत्थं त्रयःषष्टिसंख्या काः– "

तैत्तिरीय संहिताका परिगणन इस भाँति है--

	संख्या	
(१) ईदृङ् च—	७	(वा० यजु० मंत्रसंख्या १७।८१)
(२) शुक्रज्योतिश्च–	७	(" " " ८०)
(३) ऋतजिच्च–	७	(" " " ८३)
(४) ऋतश्च–	७	(" " " ८२)
(५) ईदृक्षासः–	७	(" " " ८४)
	३५	

टीकाके अनुसार देखना हो तो--

(६) स्वतवान्–	७	(वा० य० १७।८५)
(७) धुनिश्च ध्वान्तश्च--	७	(तै० आ० ४।२४)
(८) उग्रश्च धुनिश्च--	१२	" "
	१९	

टीकामें ' धुनिश्च इत्याद्याम्नयः ' यों कहा है, परन्तु ७ × ३ = २१ मरुत् स्वतंत्र रीतिसे नहीं पाये गये हैं। केवल १९ हैं। जिनमेंसे ५ पुनरुक्त हैं। सब मिलाकर तै० सं ३५+वा० य० ७+तै० आ० १४ = ५६ मरुतोंकी गिनती पाई जाती है। (वा० य० ३९।७) ' उग्रश्च भीमश्च ' गिनतीकोभी इसीसे संयुक्त करें और उसमेंसेभी पुनरुक्त ४ नाम हटा दें तो (पहले के ५६ +) शेष ३ मिलानेपर कुल ५९ संख्याही दीख पडती है। शेष ४ नामोंका अनुसन्धान विज्ञ सुधीओंको करना चाहिए। ' एकोनपञ्चाशत्संख्याकाः मरुतः ' ऐसा वर्णन अनेक स्थानोंपर पाया जाता है, उस प्रकार (वा० य० १७।८० से ८५ और ३९।७) तक ४९ मरुतोंकी गणना स्पष्ट है।

अब (वा० य० १७।८० से ८५ और ३९।७); (तै० सं० ४।६।५।५) और (तै० आ० ४।२४) इन सभी मंत्रोंकी गणना निम्नलिखित ढंगकी है—

मरुतोंका एक संघ

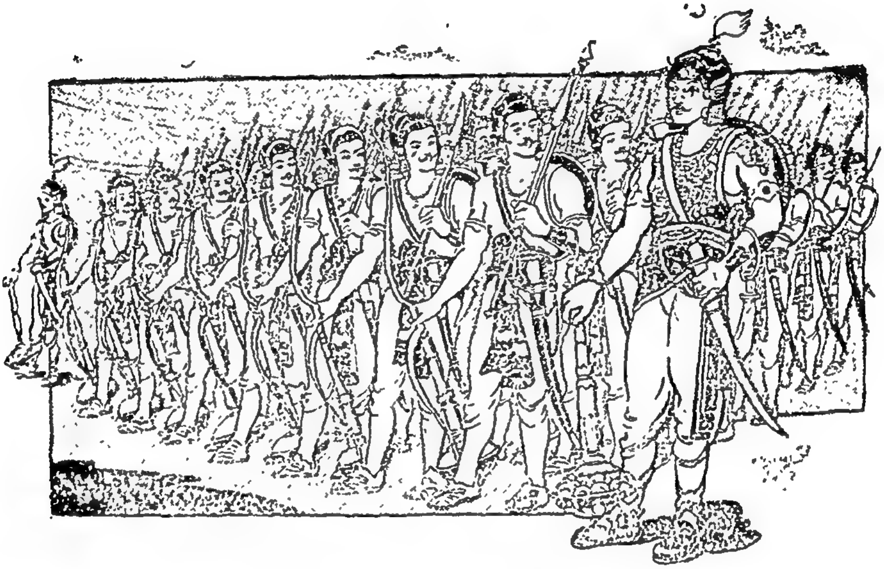

पार्श्वरक्षकोंकी पंक्ति ७ मरुत्	मरुतोंकी सात पंक्तियाँ ४९ मरुत	पार्श्वरक्षकोंकी पंक्ति ७ मरुत्

७ पार्श्वरक्षक + ४९ मरुत् + ७ पार्श्वरक्षक= कुल ६३ मरुतोंका एक संघ.

(वा० यजु० २५।२०)

(४२८) पृषदश्वा इति पृषत्ऽअश्वाः । मुरुतः । पृश्निमातर इति पृश्निऽमातरः ।
शुभंयावान इति शुभम्ऽयावानः । विदथेषु । जग्मयः ।
अग्निजिह्वा इत्यग्निऽजिह्वाः । मनवः । सूरचक्षस इति सूरऽचक्षसः ।
विश्वे । नः । देवाः । अवसा । आ । अगमन् । इह ॥२०॥

अत्रिपुत्र श्यावाश्व ऋषि (ज्ञान० ३५६)

(४२९) यदि । वहन्ति । आशवः । भ्राजमानाः । रथेषु । आ ।
पिबन्तः । मदिरम् । मधु । तत्र । श्रवांसि । कृण्वते ॥५॥

ब्रह्मा ऋषि (अथर्व० १।२६।३-४)

(४३०) यूयम् । नः । प्रऽवतः । नपात् । मरुतः । सूर्यऽत्वचसः ।
शर्म । यच्छाथ । सऽप्रथाः ॥३॥

अन्वयः— ४२८ पृषत्-अश्वाः पृश्नि-मातरः शुभं-यावानः विदथेषु जग्मयः अग्नि-जिह्वाः मनवः सूर-चक्षसः मरुतः विश्वे देवाः अवसा नः इह आगमन्।

४२९ यदि आशवः रथेषु भ्राजमानाः मधु मदिरं पिबन्तः आ वहन्ति तत्र श्रवांसि कृण्वते।

४३० (हे) सूर्य-त्वचसः मरुतः ! प्रवतः नपात् ! यूयं नः स-प्रथाः शर्म यच्छाथ।

अर्थ— ४२८ रथों को (पृषत्-अश्वाः) धब्बेवाले घोडे जोतनेवाले, (पृश्नि-मातरः) भूमि एवं गौको माता माननेहारे, (शुभं-यावानः) लोककल्याण के लिए हलचल करनेवाले, (विदथेषु जग्मयः) युद्धोंमें जानेवाले, (अग्नि-जिह्वाः) अग्निकी लपटों की नाईं तेजस्वी, (मनवः) विचारशील, (सूर-चक्षसः) सूर्यवत् प्रकाशमान (मरुतः) वीर मरुत् और (विश्वे देवाः) सभी देव (अवसा) संरक्षक शक्तियोंके साथ (नः इह) हमारे यहाँ (आगमन्) आ जायँ।

४२९ (यदि) जहाँ जहाँ ये (आशवः) वेगपूर्वक जानेहारे, (रथेषु भ्राजमानाः) रथोंमें चमकनेहारे तथा (मधु मदिरं पिबन्तः) मीठा सोमरस पीनेवाले वीर (आ वहन्ति) चले जाते हैं (तत्र) वहाँ वहाँपर (श्रवांसि कृण्वते) विपुल धन पाते हैं।

४३० हे (सूर्य-त्वचसः मरुतः !) सूर्यवत् तेजस्वी वीर मरुतो ! और (प्रवतः नपात्) अग्ने ! (यूयं) तुम सभी मिलकर (नः) हमें (स-प्रथाः) विपुल (शर्म) सुख (यच्छाथ) दे दो।

भावार्थ— ४२८ (भावार्थ स्पष्ट है।) ४२९ जिधर ये वीर सैनिक चले जाते हैं, उधर वे भाँति भाँतिके धन कमाते हैं। ४३० हमें इन देवों की कृपासे सुख मिले।

टिप्पणी— [४३०] (१) प्रवत्= सुगम मार्ग, राह। (२) नपात्= पोता, पुत्र (न-पात्) जिसका पतन न होता हो। प्रवतो नपात्= (Son of the heavenly height i.e. Agni); ऊँची राहसे आकर न गिरनेवाला। (३) स-प्रथाः= (प्रथस्=विस्तार) विस्तारसे युक्त, विशाल, विपुल।

(४३१) सुसूदत । मृडत । मृडय । नः । तनूभ्यः । मयः । तोकेभ्यः । कृधि ॥४॥

(अथर्व० ५।२६।५)

(४३२) छन्दांसि । यज्ञे । मरुतः । स्वाहा ।
माताऽइव । पुत्रम् । पिपृत । इह । युक्ताः ॥५॥

(अथर्व० १३।१।३)

(४३३) यूयम् । उग्राः । मरुतः । पृश्निऽमातरः । इन्द्रेण । युजा । प्र । मृणीत । शत्रून् ।
आ । वः । रोहितः । शृणवत् । सुऽदानवः ।
त्रिऽसप्तासः । मरुतः । स्वादुऽसंमुदः ॥२॥

अन्वयः— ४३१ सु-सूदत मृडत मृडय नः तनूभ्यः तोकेभ्यः मयः कृधि।

४३२ (हे) मरुतः ! युक्ताः इह यज्ञे माताइव पुत्रं छन्दांसि पिपृत, स्वाहा।

४३३ (हे) पृश्नि-मातरः उग्राः मरुतः ! यूयं इन्द्रेण युजा शत्रून् प्र मृणीत, (हे) सु-दानवः स्वादु-सं-मुदः त्रि-सप्तासः मरुतः ! वः रोहितः आ शृणवत् !

अर्थ— ४३१ हमारे शत्रुओं को (सु-सूदत) विनष्ट करो। हमें (मृडत) सुखी करो; हमें (मृडय) सुखी करो। (नः तनूभ्यः) हमारे शरीरों को और (तोकेभ्यः) पुत्रपौत्रोंको (मयः) सुखी (कृधि) करो।

४३२ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (युक्ताः) हमेशा तैयार रहनेवाले तुम (इह यज्ञे) इस यज्ञमें (माताइव पुत्रं) माता जैसे पुत्रका पालनपोषण करती है, उसी प्रकार हमारे (छन्दांसि) मन्त्रों का, इच्छाओं का (पिपृत) संगोपन करो। (स्वाहा) ये हविष्यान्न तुम्हें अर्पित हों।

४३३ हे (पृश्नि-मातरः) भूमिको माता माननेवाले, (उग्राः) शूर (मरुतः !) वीर मरुतो ! (यूयं) तुम (इन्द्रेण युजा) इन्द्रसे युक्त होकर (शत्रून् प्र मृणीत) शत्रुओंका संहार करो। हे (सु-दानवः) दानी, (स्वादु-सं-मुदः) मीठे अन्नसे अच्छा आनन्द पानेहारे तथा (त्रि-सप्तासः) इक्कीस विभागोंमें बँटे हुए (मरुतः !) वीर मरुतो ! (वः रोहितः) तुम्हारा लाल रंगवाला हरिण (आ शृणवत्) तुम्हारी बात सुन ले, तुम्हारी आज्ञामें रहे।

भावार्थ— ४३१ हमारे शत्रुओंका विनाश होकर हमें सुख प्राप्त हो।

४३२ हमारी आकांक्षाओंका भली भाँति संगोपन हो और वह वीरोंके प्रयत्नसे हो, अतः इन वीरोंको हम यह अर्पण कर रहे हैं।

४३३ वीर सैनिक अपने प्रमुख सेनापतिकी आज्ञामें रहकर शत्रुदलकी धज्जियाँ उडा दें। अच्छा अन्न प्राप्त करके आनन्द प्राप्त करें। अपने सभी सेनाविभागोंकी सुव्यवस्था रखकर हरएक वीर, प्रमुखकी आज्ञाके अनुसार, कार्य करता रहे, ऐसा अनुशासनका प्रबंध रहे।

टिप्पणी— [४३१] (१) सूद् (क्षरणे)= विनाश करना, वध करना, दुःख देना, दूर फेंक देना, रखना।

[४३२] (१) छन्दस्= इच्छा, स्तुति, वेद।

[४३३] (१) स्वादु = मीठा, (मिठासभरी खाद्य वस्तु, सोमरस)। (२) सप्त= (सप् = सम्मान) साथ, सम्मानित।

अथर्वा ऋषि (अथर्व० ३।१२, ६)

(४३४) यूयम् । उग्राः । मरुतः । ईदृशे । स्थ । अभि । प्र । इत । मृणत । सहध्वम् ।
अमीमृणन् । वसवः । नाथिताः । इमे । अग्निः । हि । एषाम् । दूतः । प्रतिऽएतु । विद्वान् ॥२॥

(४३४) इन्द्रः सेनां मोहयतु मरुतो घ्नन्त्वोजसा । चक्षूंष्यग्निरा दत्तां पुनरेतु पराजिता ॥६॥

[१] इन्द्रः । सेनाम् । मोहयतु । मरुतः । घ्नन्तु । ओजसा ।
चक्षूंषि । अग्निः । आ । दत्ताम् । पुनः । एतु । पराऽजिता ॥६॥

(अथर्व० ३।२।६)

(४३५) असौ । या । सेना । मरुतः । परेषाम् । अस्मान् । आऽएति । अभि । ओजसा । स्पर्धमाना ।
ताम् । विध्यत । तमसा । अपऽव्रतेन । यथा । एषाम् । अन्यः । अन्यम् । न । जानात् ॥६॥

अन्वयः— (हे) उग्राः मरुतः ! यूयं ईदृशे स्थ, अभि प्र इत, मृणत सहध्वं, इमे नाथिताः वसवः अमीमृणन्, एषां विद्वान् दूतः अग्निः हि प्रत्येतु। ४३४ (१) इन्द्रः सेनां मोहयतु, मरुतः ओजसा घ्नन्तु, अग्निः चक्षुः आ दत्तां, पराजिता पुनः एतु। ४३५ (हे) मरुतः ! असौ परेषां या सेना ओजसा स्पर्धमाना अस्मान् अभि आ-एति तां अप-व्रतेन तमसा विध्यत यथा एषां अन्यः अन्यं न जानात्।

अर्थ— ४३४ हे (उग्राः मरुतः !) उग्र स्वरूपवाले वीर मरुतो ! (यूयं) तुम (ईदृशे) ऐसे समरमें (स्थ) स्थिर रहो और शत्रुओंपर (अभि प्र इत) आक्रमण करो। शत्रुओंके वीरोंको (मृणत) मारकर (सहध्वं) उनका पराभव करो। उसी प्रकार (इमे) ये (नाथिताः) प्रशंसित और (वसवः) बसानेवाले वीर हमारे शत्रुओंको (अमीमृणन्) विनष्ट कर डालें। (एषां विद्वान् दूतः) इनका ज्ञानी दूत (अग्निः हि) अग्निभी (प्रत्येतु) हर शत्रुपर चढाई करे। ४३४ (१) (इन्द्रः) इन्द्र (सेनां) शत्रुसेनाको (मोहयतु) मोहित कर डाले, (मरुतः) वीर मरुत् (ओजसा) अपने बलसे विरोधी पक्षके लोगोंको (घ्नन्तु) मार डालें (अग्निः) अग्नि उनकी (चक्षुः) दृष्टिको (आ दत्तां) निकाल ले और इस ढंगसे (पराजिता) परास्त हुई शत्रुसेना (पुनः एतु) फिर एक बार पीछे हटकर लौट जाय। ४३५ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (असौ) यह (परेषां या सेना) शत्रुओंकी जो सेना (ओजसा) अपने बलके आधारसे (स्पर्धमाना) स्पर्धा करती हुई, होड लगाती हुई (अस्मान् अभि आ-एति) हमपर चढाई करती हुई आती है, (तां) उसे (अप-व्रतेन) जिसमें कुछ भी नहीं किया जा सकता है, ऐसा (तमसा) अंधेरा फैलाकर, उससे उस सेनाको विध्यत बिंध डालो, इस भाँति (यथा) कि (एषां) इनमें से (अन्यः अन्यं न जानात्) एक दूसरे को जान नहीं सके।

भावार्थ— ४३४ युद्ध छिड जानेपर वीर सैनिक अपनी जगह डटकर खडे रहें और दुश्मनोंपर टूट पडें। शत्रुओंको गाजरमूलीकी तरह काट देना चाहिए और दुश्मनोंकी चढाईके फलस्वरूप अपना स्थान छोडकर भागना नहीं चाहिए, क्योंकि ऐसा करनेसे स्वयं अपनेको परास्त होना पडेगा। ४३४ (१) शत्रुदल पागल हो जाय, उसे लिरना (?) पडे। ४३५ शत्रुदलपर इस भाँति आक्रमण कर देना चाहिए कि, सभी सर्वत्र धूलि उठे, सब ओर अंधेरा ही उठे। अंधेरा उत्पन्न करनेवाले तमस् —अस्त्र का प्रयोग करके दुश्मनोंकी सेनाको अस्तव्यस्त बनाया जाय।

टिप्पणी— [४३४] १ (मृण्) = (हिंसायाम्) वध करना, नाश करना। (२) दूत = दर्शनीय बनानेसे प्रकाशित करनेहारा, (शासकशक्ति)। [४३५] १ अप-व्रत = व्रतरहित, जिसमें कोई कर्म न किया जा सके; तमसा = यह एक अस्त्र है। शत्रुसेनामें तीव्र अंधियारी फैलती है, धुएँ के मारे सैनिकों को श्वास लेना दूभर प्रतीत होता है, दम घुटने लगता है। उन्हें ज्ञात नहीं होता कि, क्या किया जाय। जो करना सो नहीं करते और अनिष्ट के पास जाते हैं, कारण नहीं करता है, वही कर बैठते हैं। 'अप-व्रतेन' नामक अस्त्रका प्रभाव इसी भाँति कहा जा सकता है।

(अथर्व० ५।२४।६)

(४३६) मुरुतः । पर्वतानाम् । अधिऽपतयः । ते । मा । अवन्तु ।
अस्मिन् । ब्रह्मणि । अस्मिन् । कर्मणि । अस्याम् । पुरःऽधायाम् । अस्याम् । प्रतिऽस्थायाम् ।
अस्याम् । चित्त्याम् । अस्याम् । आऽकूत्याम् । अस्याम् । आऽशिषि । अस्याम् । देवऽ-
हूत्याम् । स्वाहा ॥६॥

शन्ताति ऋषि । (अथर्व० ४।१३।४)

(४३७) त्रायन्ताम् । इमम् । देवाः । त्रायन्ताम् । मरुताम् । गणाः ।
त्रायन्ताम् । विश्वा । भूतानि । यथा । अयम् । अरपाः । असत् ॥४॥

(अथर्व० ६।२२।२-३)

(४३८) पयस्वतीः । कृणुथ । अपः । ओषधीः । शिवाः । यत् । एजथ । मरुतः । रुक्मऽवक्षसः ।
ऊर्जम् । च । तत्र । सुऽमतिम् । च । पिन्वत । यत्र । नरः । मरुतः । सिञ्चथ । मधु ॥२॥

अन्वयः— ४३६ पर्वतानां अधिपतयः ते मरुतः अस्मिन् ब्रह्मणि अस्मिन् कर्मणि अस्यां पुरो-धायां अस्यां प्र-तिष्ठायां अस्यां चित्त्यां अस्यां आकूत्यां अस्यां आशिषि अस्यां देव-हूत्यां मा अवन्तु स्वाहा ।

४३७ देवाः इमं त्रायन्तां, मरुतां गणाः त्रायन्तां, विश्वा भूतानि यथा अयं अ-रपाः असत् त्रायन्तां ।

४३८ (हे) रुक्म-वक्षसः मरुतः ! यत् एजथ पयस्वतीः अपः शिवाः ओषधीः कृणुथ, (हे) नरः मरुतः ! यत्र मधु सिञ्चथ तत्र ऊर्जं च सु-मतिं च पिन्वत ।

अर्थ— ४३६ (पर्वतानां अधिपतयः) पहाडों के स्वामी (ते मरुतः) वे वीर मरुत् (अस्मिन् ब्रह्मणि) इस ज्ञानमें, (अस्मिन् कर्मणि) इस कर्म में, (अस्यां पुरो-धायां) इस नेतृत्व में, (अस्यां प्र-तिष्ठायां) इस अच्छी प्रकारकी स्थिरतामें, (अस्यां चित्त्यां) इस विचारमें, (अस्यां आकूत्यां) इस अभिप्रायमें, (अस्यां आशिषि) इस आशीर्वादमें (अस्यां देव-हूत्यां) और इस देवोंकी प्रार्थनामें (मां अवन्तु) मेरी रक्षा करें। (स्वाहा) ये हविष्यान्न उनके लिए अर्पित हैं।

४३७ (देवाः) देवतागण (इमं त्रायन्तां) इसका संरक्षण करें, (मरुतां गणाः वीर मरुतों के संघ इसकी त्रायन्तां) रक्षा करें। (विश्वा भूतानि) समूचे जीवजन्तु भी (यथा) जिस भाँति (अयं अ-रपाः असत्) यह निर्दोष निष्पाप, निरोगी हो, उसी ढंगसे इसे (त्रायन्तां) बचायें।

४३८ हे रुक्म-वक्षसः मरुतः!) वक्षःस्थलपर स्वर्णमुद्राके हार धारण करनेवाले वीर मरुतो ! (यत् एजथ) जब तुम चलने लगते हो तब (पयस्वतीः अपः) बलवर्धक जल तथा (शिवाः ओषधीः [illegible]) वनस्पतियाँ (कृणुथ) उत्पन्न करते हो और हे (नरः मरुतः !) नेतापदपर अधिष्ठित वीर मरुतो ! (यत्र मधु सिञ्चत) जहाँपर तुम मीठासभरे अन्नकी समृद्धि करते हो, (तत्र) वहाँपर (ऊर्जं च सुमतिं च) बल एवं उत्तम बुद्धि को (पिन्वत) निर्मित करते हो।

भावार्थ— ४३८ पवन बहता है, मेघ वर्षा करने लगते हैं, वनस्पतियाँ बढती हैं और मिठासभरे फल [illegible] [illegible] । इस अन्नसे बुद्धि की वृद्धि होनेमें बडी भारी सहायता मिलती है।

टिप्पणी- [४३६] १ चित्तिः= विचार, मनन, ज्ञान, भक्ति, कीर्ति।

(४३९) उदुऽप्रुतः । मरुतः । तान् । इयर्त । वृष्टिः । या । विश्वाः । निऽवतः । पृणाति । एजाति । ग्लहा । कन्याऽइव । तुन्ना । एरुम् । तुन्दाना । पत्याऽइव । जाया ॥२॥

मृगार ऋषि । (अथर्व ४।२७।१-७)

(४४०) मरुताम् । मन्वे । अधि । मे । ब्रुवन्तु । प्र । इमम् । वाजम् । वाजऽसाते । अवन्तु । आशून्ऽइव । सुऽयमान् । अह्वे । ऊतये । ते । नः । मुञ्चन्तु । अंहसः ॥१॥

(४४१) उत्सम् । अक्षितम् । विऽअञ्चन्ति । ये । सदा । ये । आऽसिञ्चन्ति । रसम् । ओषधीषु । पुरः । दधे । मरुतः । पृश्निऽमातॄन् । ते । नः । मुञ्चन्तु । अंहसः ॥२॥

अन्वयः- ४३९ (हे) मरुतः ! उद्-प्रुतः तान् इयर्त, या वृष्टिः विश्वाः निवतः पृणाति, तुन्दाना ग्लहा तुन्ना कन्याइव, एरुं पत्याइव जाया एजाति । ४४० मरुतां मन्वे, मे अधि ब्रुवन्तु, वाज-साते इमं वाजं अवन्तु, आशून्इव सु-यमान् ऊतये अह्वे, ते नः अंहसः मुञ्चन्तु । ४४१ ये सदा अ-क्षितं उत्सं वि-अञ्चन्ति, ये ओषधीषु रसं आसिञ्चन्ति, पृश्नि-मातॄन् मरुतः पुरः दधे, ते नः अंहसः मुञ्चन्तु ।

अर्थ— ४३९ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (उद्-प्रुतः तान्) जलको गति देनेवाले उन मेघोंको (इयर्त) प्रेरित करो । उनसे हुई (या वृष्टिः) जो बारिश (विश्वाः निवतः) सभी दर्राकंदराओंको (पृणाति) परिपूर्ण कर देती है, उस समय (तुन्दाना ग्लहा) दहाडनेवाली बिजली (तुन्ना कन्याइव) उत्सुक कन्या (एरुं) नवयुवक को प्राप्त करती है, उस समयकी तरह तथा (पत्याइव जाया) पतिके आलिंगनमें रही नारीकी नाईं (एजाति) विकम्पित हो उठती है । ४४० (मरुतां) वीर मरुतोंको मैं (मन्वे) सम्मान देता हूँ; वे (मे) मुझे (अधि ब्रुवन्तु) उपदेश दें, पथप्रदर्शन करें और (वाज-साते) युद्धके अवसरपर (इमं) इस मेरे (वाजं) बलकी (अवन्तु) रक्षा करें । (आशून्इव) वेगवान घोडोंके तुल्य अपना (सु-यमान्) अच्छा नियमन भली प्रकार करनेवाले उन वीरोंको हमारे (ऊतये) संरक्षणार्थ (अह्वे) मैं बुलाता हूँ । (ते) वे (नः) हमें (अंहसः) पापसे (मुञ्चन्तु) छुडा दें । ४४१ (ये) जो (सदा) हमेशा (अ-क्षितं) कभी न न्यून होनेवाले (उत्सं) जलप्रवाहोंको (वि-अञ्चन्ति) विशेष ढंगसे प्रवर्तित करते हैं, (ये) जो (ओषधीषु) औषधियोंपर (रसं आसिञ्चन्ति) जलका छिडकाव करते हैं, उन (पृश्नि-मातॄन् मरुतः) भूमिको माता समझनेवाले वीर मरुतोंको मैं (पुरः दधे) [illegible] रख देता हूँ । (ते) वे वीर (नः अंहसः मुञ्चन्तु) हमें पापोंसे बचावें ।

भावार्थ— ४३९ वायुप्रवाह मेघोंको प्रेरित कर तथा वर्षा करके [illegible] दर्राकंदराओंको [illegible] डालते हैं । उस समय विद्युत् मेघोंसे इस भाँति [illegible] हो जाती है, जैसे [illegible] लगाती है । ४४० वीर हमें बोध करें [illegible] । सिखाये हुए घोडे जिस भाँति [illegible] रहते हैं उसी प्रकार ये वीर हैं और ये हमें [illegible] । ४४१ वायुप्रवाहोंके कारण वर्षा हुआ करती है, [illegible] । हैं । पापसे बचनेमें वीर हमें सहायता दें [illegible] ।

टिप्पणी- [४३९] १ निवत्= [illegible] । (२) ग्लहा = [illegible] , ३ तुन्न = [illegible] , ([illegible]) तुद्-व्यथने = [illegible] । [illegible] = [illegible] , ([illegible] । [४४१] (१) पुरः दधे = [illegible] मार्गदर्शक समझता हूँ ।

(४४२) पयः । धेनूनाम् । रसम् । ओषधीनाम् । जवम् । अर्वताम् । कवयः । ये । इन्वथ ।
शग्माः । भवन्तु । मरुतः । नः । स्योनाः । ते । नः । मुञ्चन्तु । अंहसः ॥३॥
(४४३) अपः । समुद्रात् । दिवम् । उत् । वहन्ति । दिवः । पृथिवीम् । अभि । ये । सृजन्ति ।
ये । अत्ऽभिः । ईशानाः । मरुतः । चरन्ति । ते । नः । मुञ्चन्तु । अंहसः ॥४॥
(४४४) ये । कीलालेन । तर्पयन्ति । ये । घृतेन । ये । वा । वयः । मेदसा । सम्ऽसृजन्ति ।
ये । अत्ऽभिः । ईशानाः । मरुतः । वर्षयन्ति । ते । नः । मुञ्चन्तु । अंहसः ॥५॥

अन्वयः— ४४२ ये कवयः धेनूनां पयः ओषधीनां रसं अर्वतां जवं इन्वथ (ते) शग्माः मरुतः नः स्योनाः भवन्तु, ते नः अंहसः मुञ्चन्तु । ४४३ ये समुद्रात् अपः दिवं उत् वहन्ति, दिवः पृथिवीं अभि सृजन्ति, ये अद्भिः ईशानाः मरुतः चरन्ति, ते नः अंहसः मुञ्चन्तु । ४४४ ये कीलालेन ये घृतेन तर्पयन्ति, ये वा वयः मेदसा संसृजन्ति, ये अद्भिः ईशानाः मरुतः वर्षयन्ति, ते नः अंहसः मुञ्चन्तु ।

अर्थ— ४४२ (ये कवयः) जो ज्ञानी वीर (धेनूनां पयः) गौओंके दुग्धका तथा (ओषधीनां रसं) वनस्पतियोंके रसका सेवन करके (अर्वतां जवं) घोडोंके वेगको (इन्वथ) प्राप्त करते हैं, वे (शग्माः) समर्थ (मरुतः) वीर मरुत् (नः) हमारे लिए (स्योनाः भवन्तु) सुखकारक हों। (ते) वे (नः) हमें (अंहसः मुञ्चन्तु) पापोंसे बचायँ। ४४३ (ये) जो (समुद्रात्) समुन्दरमें से (अपः) जलोंको (दिवं उत् वहन्ति) अन्तरिक्षमें ऊपर ले चलते हैं और (दिवः) अन्तरिक्षसे (पृथिवीं अभि) भूमण्डलपर वर्षाके रूपमें (सृजन्ति) छोड देते हैं, और (ये) जो ये (अद्भिः) जलोंकी वजहसे (ईशानाः) संसारपर प्रभुत्व प्रस्थापित करनेवाले (मरुतः) वीर-मरुत् (चरन्ति) संचार करते हैं, (ते) वे (नः अंहसः मुञ्चन्तु) हमें पापोंसे रिहा कर दें। ४४४ (ये) जो (कीलालेन) जलसे तथा (ये) जो (घृतेन) घृतादि पौष्टिक पदार्थों से सबको (तर्पयन्ति) तृप्त करते हैं, (ये वा) अथवा जो (वयः) पंछियों को भी (मेदसा संसृजन्ति) मेदसे संयुक्त करते हैं, और (ये) जो (अद्भिः ईशानाः) जलकी वजह से विश्वपर प्रभुत्व प्रस्थापित करनेवाले (मरुतः वर्षयन्ति) वीर मरुत् वर्षा करते हैं (ते) वे (नः) हमें (अंहसः मुञ्चन्तु) पापसे छुडायें।

भावार्थ— ४४२ वीर सैनिक गोदुग्ध तथा सोमसदृश वनस्पतियोंके रसके सेवनसे अपनी शक्ति बढाते हैं। ऐसे वीर हमें सुख दें और पापोंसे हमें सुरक्षित रखें। ४४३ वायुओंकी सहायतासे समुद्रमें विद्यमान अपार जलराशि भाफके रूपमें ऊपर उठ जाती है और मेघमंडल के रूप में परिवर्तित हो चुकनेपर वर्षाके रूपमें फिर पृथ्वीपर आ जाती है। इस भाँति ये वायुप्रवाह विशुद्ध जलके प्रदानसे सारे संसारको जीवन देनेवाले हैं, अतः येही सृष्टिके सच्चे अधिपति हैं। वे हमें पापोंके जालसे छुडायँ। ४४४ वायुओंके संचार से मेघ से वर्षा होती है और सभी वृक्षवनस्पतियोंमें भाँतिभाँतिके रसोंकी वृद्धि होती है, तथा गौ आदि पशुओंमें दूध आदि पुष्टिकारक रसोंकी समृद्धि होती है। इस भाँति ये मरुत् रससमृद्धि निष्पन्न कर समूची सृष्टिपर प्रभुत्व प्रस्थापित करते हैं। हम चाहते हैं कि वे हमें पापोंसे सुरक्षित रखें।

टिप्पणी— [४४२] (१) इन्व् (व्याप्तौ) = जाना, व्याप्त होना, पकडना, कब्जा करना, आनन्द देना, भर देना, प्रभु होना। (२) शग्माः (शक्माः-शक् शक्तौ)= समर्थ। (३) स्योन = सुखदायक, सुन्दर। [४४४] (1) वयस्= पंछी, यौवन, अन्न, शक्ति, आरोग्य। वयः मेदसा संसृजन्ति= यौवनको मेद या मज्जासे युक्त कर देते हैं। शक्तिको मेद एवं मज्जासे जोड देते हैं, अर्थात् जैसे शरीरमें मेद को बढाते हैं, वैसेही अतुल शक्तिभी पर्याप्त मात्रामें निर्माण करते हैं।

यदि । देवाः । दैव्येन । ईदृक् । आर ।
इत् । इदम् । मरुतः । मारुतेन । ते । नः । मुञ्चन्तु । अंहसः ॥६॥
। ईशिध्वे । वसवः । तस्य । निःऽकृतेः । मारुतम् । शर्धः । पृतनासु । उग्रम् ।
म् । अनीकम् । विदितम् । सहस्वत् । ते । नः । मुञ्चन्तु । अंहसः ॥७॥
मि । मरुतः । नाथितः । जोहवीमि ।

अङ्गिरा ऋषि (अथर्व० ७।८२।३)

उरुऽक्षयाः । सऽगणाः । मानुषासः ।
सम्ऽवत्सरीणाः । मरुतः । सुऽअर्काः । साम्ऽतपनाः । मत्सराः । मादयिष्णवः ॥३॥
तत् । पाशान् । प्र । मुञ्चन्तु । एनसः ।

—४४५ (हे) वसवः देवाः मरुतः ! यदि इदं मारुतेन इव, यदि दैव्येन ईदृक् आर, यूयं तस्य
ईशिध्वे, ते नः अंहसः मुञ्चन्तु । ४४६ तिग्मं अनीकं विदितं सहस्-वत् मारुतं शर्धः पृतनासु
ः स्तौमि, नाथितः जोहवीमि, ते नः अंहसः मुञ्चन्तु । ४४७ संवत्सरीणाः सु-अर्काः स-गणाः
ः मानुषासः सान्तपनाः मत्सराः मादयिष्णवः ते मरुतः अस्मत् एनसः पाशान् प्र मुञ्चन्तु ।
. ४४५ हे (वसवः) जनताको बसानेवाले (देवाः) द्योतमान (मरुतः !) वीर-मरुतो ! (यदि)
इदं) यह पाप (मारुतेन इव) मरुद्गणों के सम्बन्धमें या (यदि) अगर (दैव्येन) देवों के संबंधमें
) ऐसे (आर) उत्पन्न हुआ हो, तो (यूयं) तुम (तस्य निष्कृतेः) उस पापका विनाश करनेके
(ईशिध्वे) समर्थ हो । (ते) वे (नः) हमें (अंहसः मुञ्चन्तु) पापसे बचा दें ।
४४६ (तिग्मं) प्रखर, अति तीव्र (अनीकं) सैन्यमें प्रकट होनेहारा, (विदितं) विख्यात तथा
ओंका (सहस्-वत्) पराभव करनेमें समर्थ (मारुतं शर्धः) वीर मरुतोंका बल (पृतनासु) संग्रामोंमें,
इयोंमें (उग्रं) भीषण है; उन (मरुतः स्तौमि) वीर मरुतोंकी मैं सराहना करता हूँ । (नाथितः) कष्ट-
पीडित होता हुआ मैं (जोहवीमि) उनसे प्रार्थना करता हूँ, उन्हें पुकारता हूँ । (ते) वे (नः) हमें
हसः) पापसे (मुञ्चन्तु) छुडावें ।
४४७ (संवत्सरीणाः) हर साल बारंबार आनेवाले, (सु-अर्काः) अत्यंत पूज्य, (स-गणाः) संघ
नाकर रहनेवाले, (उरु-क्षयाः) विस्तृत घरमें रहनेवाले, (मानुषासः) मानवोंके हित करनेवाले,
सान्तपनाः) शत्रुओंको परिताप देनेहारे, (मत्सराः) सोम पीनेवाले या आनन्दित होनेवाले तथा (माद-
यिष्णवः) दूसरोंको आनन्द देनेवाले (ते मरुतः) वे वीर मरुत् (अस्मत्) हमारे (एनसः) पापके
(पाशान्) फंदोंको (प्र मुञ्चन्तु) तोड डालें ।
भावार्थ— ४४५ देवोंकी कृपासे हम पापोंसे दूर रहें ।
४४६ वीरोंका युद्धमें प्रकट होनेवाला प्रचंड एवं [illegible] बल सबको विदित है । शत्रुसे पीडा पहुँचने दे
कालमें मैं इन वीरोंकी सराहना करता हूँ । वे वीर मुझे पापसे छुडावें । ४४७ बडे घरमें संघ बनाकर रहनेवाले,
पूजनीय, तथा जनताका कल्याण करनेवाले वीर हमें पापोंसे बचा दें ।

टिप्पणी— [४४६] (१) नाथित = जिसे सहायताकी आवश्यकता है, पीडित (नाथ् = नाध् = याच्-
ञैश्वर्याशीःषु) समर्थ होना, आशीर्वाद देना, प्रार्थना करना, माँगना, कष्ट देना । (२) अनीकं = सैन्य, समूह, मुख,
प्रमुख, तेज, बल । [४४७] (१) उरु-क्षय = बडा है [illegible] घर, [illegible] [illegible] मंत्र २१७,२६२
तथा ३३५ देखिए । (२) मत्सरः (मद् + सरः) = सोमरस [illegible]

अत्रिपुत्र वसुश्रुत ऋषि (ऋ० ५।३।३)

(४४८) तव॑ । श्रि॒ये । म॒रुतः॑ । म॒र्जय॑न्त । रुद्र॑ । यत् । ते॒ । जनि॑म । चारु॑ । चि॒त्रम् ।
पदम् । यत् । विष्णोः॑ । उप॒ऽमम् । नि॒ऽधायि॑ ।
तेन॑ । पा॒सि॒ । गुह्य॑म् । नाम॑ । गोना॑म् ॥३॥

अत्रिपुत्र श्यावाश्व ऋषि (ऋ० ५।६०।१-८)

(४४९) ईळे॑ । अ॒ग्निम् । सु॒ऽअव॑सम् । नमः॑ऽभिः । इ॒ह । प्र॒ऽस॒त्तः । वि । च॒य॒त् । कृ॒तम् । नः॒ ।
रथैः॑ऽइव । प्र । भ॒रे॒ । वा॒ज॒यत्ऽभिः॑ ।
प्र॒ऽद॒क्षि॒णित् । म॒रुता॑म् । स्तोम॑म् । ऋ॒ध्या॒म् ॥१॥

अन्वयः— ४४८ (हे) रुद्र ! तव श्रिये मरुतः मर्जयन्त, ते यत् जनिम चारु चित्रं, यत् उपमं विष्णोः पदं निधायि तेन गोनां गुह्यं नाम पासि ।

४४९ सु-अवसं अग्निं नमोभिः ईळे, इह प्र-सत्तः नः कृतं वि चयत्, वाजयद्भिः रथैःइव प्र भरे, प्र-दक्षिणित् मरुतां स्तोमं ऋध्यां ।

अर्थ— ४४८ हे (रुद्र !) भीषण वीर ! (तव श्रिये) तुम्हारी शोभा पानेके लिये (मरुतः) वीर मरुत् (मर्जयन्त) अपने आपको अत्यन्त पवित्र करते हैं। (ते यत् जनिम) तेरा जो जन्म है, वह सचमुच ही (चारु) सुन्दर तथा (चित्रं) आश्चर्यपूर्ण है। (यत्) क्योंकि (उपमं) सबमें अत्युच्च (विष्णोः पदं) विष्णुके स्थानमें-आकाशमें तेरा स्थान (निधायि) स्थिर हो चुका है। (तेन) उसी कारण से तू (गोनां) गौके, वाणियोंके (गुह्यं नाम) रहस्यपूर्ण यशको (पासि) सुरक्षित रखता है।

४४९ (सु-अवसं) भली भाँति रक्षा करनेहारे (अग्निं) अग्नि की मैं (नमोभिः) नमनपूर्वक (ईळे) स्तुति करता हूं। (इह) यहाँपर (प्र-सत्तः) प्रसन्नतापूर्वक बैठा हुआ वह अग्नि (नः कृतं) हमारा यह कृत्य (वि चयत्) निष्पन्न करे, सिद्ध करे। (वाजयद्भिः) अन्नमय यज्ञोंसे, (रथैःइव) जैसे रथोंसे अभीष्ट जगह पहुँच जाते हैं, उसी प्रकार मैं अपने अभीष्टको (प्र भरे) पाता हूँ और (प्र-दक्षिणित्) प्रदक्षिणा करनेवाला मैं (मरुतां स्तोमं) वीर मरुतों के काव्यका गायन करके (ऋध्यां) समृद्धि पाता हूँ।

भावार्थ— ४४८ शोभा बढानेके लिए ये वीर मरुत् अपनी तथा समीपस्थ वस्तुओंकी सफाई करते हैं। सभी हथियारोंको चमकीले बनाते हैं। इन वीरोंका जन्म सचमुच लोककल्याण के लिए है, अतः वह एक रहस्यमय बात है। विष्णुपद इन वीरोंका अटल एवं अडिग स्थान है।

४४९ संरक्षणकुशल इस अग्निकी सराहना मैं करता हूँ। यह अग्नि हमारा यह यज्ञ पूर्ण करे। जिनमें अन्नदान करना पडता है, वैसे यज्ञ प्रारंभ कर मैं अपनी इच्छा की पूर्ति करता हूँ। इस अग्निकी प्रदक्षिणा करते हुए मैं इन वीरोंके स्तोत्र का गायन करता हूँ।

टिप्पणी— [४४८] (१) मृज् (शुद्धौ शौचालंकारयोश्च) = धोना, माँजना, शुद्ध करना, अलंकृत करना। (२) विष्णोः पदं = आकाश, अवकाश। (३) उपमं = ऊँचा, सर्वोपरि, उत्कृष्ट। (४) गुह्यं = गुप्त, आश्चर्यजनक, रहस्यमय।

[४४९] (१) वि+चि (चयने) = विशेष सूक्ष्म निगाहसे देखना-जानना, इकट्ठा करना, जाँच करना, अन्वय करना, पसंद करना, नाश करना, साफ करना, बनाना, जोड देना। (२) ऋध् (वृद्धौ) = वैभव बढना, विजयी होना, बढना। (३) प्र-दक्षिणित् = प्रदक्षिणा करनेहारा, सतर्कतापूर्वक कार्य करनेहारा।

(४५३) अज्येष्ठासः । अकनिष्ठासः । एते । सम् । भ्रातरः । ववृधुः । सौभगाय ।
युवा । पिता । सुऽअपाः । रुद्रः । एषाम् । सुऽदुघा । पृश्निः । सुऽदिना । मरुत्ऽभ्यः ॥५॥
(४५४) यत् । उत्ऽतमे । मरुतः । मध्यमे । वा । यत् । वा । अवमे । सुऽभगासः । दिवि । स्थ
अतः । नः । रुद्राः । उत । वा । नु । अस्य । अग्ने । वित्तात् । हविषः । यत् । यजाम ॥६॥
(४५५) अग्निः । च । यत् । मरुतः । विश्वऽवेदसः । दिवः । वहध्वे । उत्ऽतरात् । अधि । स्नुऽभिः
ते । मन्दसानाः । धुनयः । रिशादसः । वामम् । धत्त । यजमानाय । सुन्वते ॥७॥

अन्वयः— ४५३ अ-ज्येष्ठासः अ-कनिष्ठासः एते भ्रातरः सौभगाय सं ववृधुः, एषां सु-अपाः युवा पिता रुद्रः सु-दुघा पृश्निः मरुद्भ्यः सु-दिना । ४५४ (हे) सु-भगासः रुद्राः मरुतः! यत् उत्तमे मध्यमे वा यत् वा अवमे दिवि स्थ अतः नः, उत वा (हे) अग्ने! यत् नु यजाम अस्य हविषः वित्तात्। ४५५ (हे) विश्व-वेदसः मरुतः! अग्निः च यत् उत्तरात् दिवः अधि स्नुभिः वहध्वे, ते मन्दसानाः धुनयः रिश-अदसः सुन्वते यजमानाय वामं धत्त ।

अर्थ— ४५३ ये वीर (अ-ज्येष्ठासः) श्रेष्ठ भी नहीं हैं और (अ-कनिष्ठासः) कनिष्ठ भी नहीं हैं, तो (एते) ये परस्पर (भ्रातरः) भाईपनसे वर्ताव रखते हुए (सौभगाय) उत्तम ऐश्वर्य पानेके लिए (सं ववृधुः) एकतापूर्वक अपनी वृद्धि करते हैं। (एषां) इनका (सु-अपाः) अच्छे कर्म करनेहारा (युवा) युवक (पिता) पिता (रुद्रः) महावीर है और (सु-दुघा) उत्तम दूध देनेहारी-अच्छे पेय देनेवाली (पृश्निः) गौ या भूमि इन (मरुद्भ्यः) वीर मरुतोंको (सु-दिना) अच्छे शुभ दिन दर्शाती है।

४५४ हे (सु-भगासः) उत्तम ऐश्वर्यसंपन्न (रुद्राः) शत्रुओं को रुलानेवाले (मरुतः!) वीर मरुतो! (यत्) जिस (उत्तमे) ऊपरके, (मध्यमे वा) मँझले (यत् वा अवमे) या नीचेके (दिवि) प्रकाश-स्थानमें तुम (स्थ) हो, (अतः) वहाँसे (नः) हमारी ओर आओ; (उत वा) और हे (अग्ने!) अग्ने! (यत् नु यजाम) जिसका आज हम यजन कर रहे हैं, (अस्य हविषः) वह हविष्यान्न (वित्तात्) तुम जान लो, अर्थात् उधर ध्यान दे दो।

४५५ हे (विश्व-वेदसः) सब धनोंसे युक्त (मरुतः!) वीर मरुतो! तुम (अग्निः च) तथा अग्नि (यत्) चूँकि (उत्तरात् दिवः) ऊपर विद्यमान द्युलोकके (स्नुभिः) ऊँचे स्थानके मार्गोंसेही (अधि वहध्वे) सदैव जाते हो, अतः (ते) वे (मन्दसानाः) प्रसन्न वृत्तिके, (धुनयः) शत्रुदलको हिला-नेवाले तथा (रिश-अदसः) हिंसकोंका वध करनेवाले तुम (सुन्वते यजमानाय) सोमरस तैयार करने-वाले याजकको (वामं) श्रेष्ठ धन (धत्त) दे दो।

भावार्थ— ४५३ ये वीर परस्पर समभावसे वर्ताव रखते हैं, इसीलिए इनमें कोईभी न कनिष्ठ या श्रेष्ठ पाया जाता है। भाईचारा इनमें विद्यमान है और ये एकतासे श्रेष्ठ पुरुषार्थ करके अपनी समृद्धि करते हैं। महावीर इनका पिता है और गाय या पृथ्वी इनकी माता है, जो इन्हें अच्छे दिन दर्शाती है। ४५४ वीर जिधरभी हों, उधरसे हमारे निकट चले आयँ और जो हविर्भाग हम दे रहे हैं, उसे भली भाँति देखकर स्वीकार कर लें। ४५५ ये वीर उच्च स्थानमें रहते हैं। उल्लसित मनोवृत्तिके और शत्रुदलको परास्त करनेवाले ये वीर याजकोंको धन देते हैं।

टिप्पणी— ४५३ (१) स्वपाः (सु+अपस्= कृत्य)= अच्छे कर्म निष्पन्न करनेहारा। (२) अ-ज्येष्ठासः ::::: (मंत्र २०५ देखिए)। [४५४] (१) [यहाँपर द्युलोकके तीन भाग माने गये हैं, 'उत्तमे, मध्यमे, अवमे दिवि'।] [४५५] (१) वाम= सुन्दर, टेढा, बायाँ, धन, संपत्ति। (२) मन्दसानः (मद् हर्षे)= हर्षयुक्त।

(४५६) अग्ने । मरुत्ऽभिः । शुभयत्ऽभिः । ऋक्वंऽभिः । सोमम् । पिब । मन्दसानः ।
गणश्रिऽभिः ।
पावकेभिः । विश्वम्ऽइन्वेभिः । आयुऽभिः । वैश्वानर । प्रऽदिवा । केतुना । सऽजूः ॥८॥

अथर्वा ऋषिः (अथर्व० १।२०।१)

(४५७) अदारऽसृत् । भवतु । देव । सोम । अस्मिन् । यज्ञे । मरुतः । मृडत । नः ।
मा । नः । विदत् । अभिऽभाः । मो इति । अशस्तिः । मा । नः । विदत् । वृजिना ।
द्वेष्या । या ॥ १ ॥

(अथर्व० ४।१५।४)

(४५८) गणाः । त्वा । उप । गायन्तु । मारुताः । पर्जन्य । घोषिणः । पृथक् ।
सर्गाः । वर्षस्य । वर्षतः । वर्षन्तु । पृथिवीम् । अनु ॥ ४ ॥

अन्वयः- ४५६ (हे) वैश्वा-नर अग्ने ! प्र-दिवा केतुना सजूः शुभयद्भिः ऋक्वभिः गण-श्रिभिः पावकेभिः विश्वं-इन्वेभिः आयुभिः मरुद्भिः मन्दसानः सोमं पिब । ४५७ (हे) देव सोम ! अ-दार-सृत् भवतु, (हे) मरुतः ! अस्मिन् यज्ञे नः मृडत. अभि-भाः नः मा विदत्, अ-शस्तिः मो, या द्वेष्या वृजिना नः मा विदत् । ४५८ (हे) पर्जन्य ! घोषिणः मारुताः गणाः पृथक् त्वा उप गायन्तु, वर्षतः वर्षस्य सर्गाः पृथिवीं अनु वर्षन्तु ।

अर्थ— ४५६ हे (वैश्वा-नर) विश्वके नेता (अग्ने !) अग्ने ! (प्र-दिवा) प्रखर तेजसे तथा (केतुना) ज्वालाओं से (सजूः) युक्त होकर तू (शुभयद्भिः) शोभायमान, (ऋक्वभिः) सराहनीय, (गण-श्रिभिः) संघजन्य शोभासे युक्त, (पावकेभिः) पवित्र, (विश्वं-इन्वेभिः) सबको उत्साह देनेहारे तथा (आयुभिः) दीर्घ जीवन का उपभोग लेनेवाले (मरुद्भिः) वीर मरुतों के साथ (मन्दसानः) आनन्दित होकर (सोमं पिब) सोमरसका सेवन कर।

४५७ हे (देव सोम !) तेजस्वी सोम ! हमारा शत्रु अपनी (अ-दार-सृत्) स्त्रीसे भी न मिलानेवाला (भवतु) हो जाय, अर्थात् मर जाए। हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (अस्मिन् यज्ञे) इस यज्ञमें (नः मृडत) हमें सुखी करो। हमारा (अभि-भाः) तेजस्वी दुश्मन (नः मा विदत्) हमें न मिले, हमारी ओर न आ जाए। हमें (अ-शस्तिः मो) अपयश न मिले। (या द्वेष्या) जो निन्दनीय (वृजिना) पाप हैं, वे (नः मा विदत्) हमें न लगें।

४५८ हे (पर्जन्य !) पर्जन्य ! (घोषिणः) गर्जना करनेहारे (मारुताः गणाः) मरुतों के संघ (पृथक्) विभिन्न ढंगसे (त्वा उप गायन्तु) तुम्हारी स्तुति का गायन करें। (वर्षतः वर्षस्य) बडे वेगसे होनेवाली धुआँधार वर्षा की (सर्गाः) धाराएँ (पृथिवीं अनु वर्षन्तु) भूमिपर लगातार गिरती रहें।

भावार्थ— ४५७ हमारा शत्रु विनष्ट होवे। (वह अपनी स्त्रीसे मिलकर संतान उत्पन्न करनेमें समर्थ न होवे।) हमारे शत्रु हमसे दूर हों और उनका आक्रमण हमपर न होने पाय। हम अपकीर्ति तथा पापसे कोसों दूर होकर सुखसे रहें।

टिप्पणी— [४५६] (१) विश्व-मिन्व=(मिन्व्- स्नेहने सेचने च) सबपर प्रेम करनेवाला, सभी जगह वर्षा करनेहारा। (२) सजुस्= युक्त। [४५७] (१) अ-दार-सृत्=स्त्रीके समीप न जानेवाला, घर न लौट जानेवाला (रणभूमिमें धराशायी होनेवाला)।

(अथर्व० ४।१५।५-७)

(४५९) उत् । ईरयत । मरुतः । समुद्रतः । त्वेषः । अर्कः । नभः । उत् । पातयाथ ।
महाऽऋषभस्य । नदतः । नभस्वतः । वाश्राः । आपः । पृथिवीम् । तर्पयन्तु ॥ ५ ॥
(४६०) अभि । क्रन्द । स्तनय । अर्दय । उदऽधिम् । भूमिम् । पर्जन्य । पयसा । सम् । अङ्धि ।
त्वया । सृष्टम् । बहुलम् । आ । एतु । वर्षम् । आशारऽएषी । कृशऽगुः । एतु ।
अस्तम् ॥ ६ ॥
(४६१) सम् । वः । अवन्तु । सुऽदानवः । उत्साः । अजगराः । उत ।
मरुत्ऽभिः । प्रऽच्युताः । मेघाः । वर्षन्तु । पृथिवीम् । अनु ॥७॥

अन्वयः— (हे) मरुतः ! समुद्रतः उत् ईरयथ, त्वेषः अर्कः नभः उत् पातयाथ, नदतः महा-ऋषभस्य नभस्वतः वाश्राः आपः पृथिवीं तर्पयन्तु ।

४६० (हे) पर्जन्य ! अभि क्रन्द स्तनय उदधिं अर्दय भूमिं पयसा सं अङ्धि, त्वया सृष्टं बहुलं वर्षं आ एतु, आशार-एषी कृश-गुः अस्तं एतु ।

४६१ (हे) सु-दानवः ! वः अजगराः उत उत्साः सं अवन्तु, मरुद्भिः प्र-च्युताः मेघाः पृथिवीं अनु वर्षन्तु ।

अर्थ— ४५९ हे (मरुतः !) मरुतो ! तुम (समुद्रतः) समुद्रके जलको (उत् ईरयथ) ऊपर ले चलो। (त्वेषः) तेजस्वी तथा (अर्कः) पूज्य (नभः) मेघको आकाशमें (उत् पातयाथ) इधरसे उधर घुमाओ। (नदतः महा-ऋषभस्य) दहाडते हुए बडे भारी बैल के समान प्रतीत होनेवाले (नभस्वतः) मेघों के (वाश्राः आपः) गरजते हुए जलसमूह (पृथिवीं तर्पयन्तु) भूमिको संतृप्त करें।

४६० हे (पर्जन्य !) पर्जन्य ! (अभि क्रन्द) गरजते रहो, (स्तनय) दहाडना शुरु करो, (उदधिं) समुद्रमें (अर्दय) खलबली मचा दो, (भूमिं) पृथ्वी को (पयसा) जलसे (सं अङ्धि) भली प्रकार गीली करो। (त्वया सृष्टं) तुझसे निर्मित (बहुलं वर्षं) प्रचुर वर्षा (आ एतु) इधर आये तथा (आशार-एषी) बडी वर्षा की कामना करनेहारा (कृश-गुः) दुर्बल गौएँ साथ रखनेवाला कृषक (अस्तं एतु) घर चले जाकर आनन्दसे रहे।

४६१ हे (सु-दानवः !) दानशूर वीरो ! (वः) तुम्हारे (अजगराः उत) अजगरके समान दीर्घ पडनेवाले (उत्साः) जलप्रवाह (सं अवन्तु) हमारी भली भाँति रक्षा करें। (मरुद्भिः) मरुतों की ओर से वर्षाके रूपमें (प्र-च्युताः) नीचे टपके हुए (मेघाः) बादल (पृथिवीं अनु वर्षन्तु) भूमंडलपर लगातार वर्षा करें।

टिप्पणी— [४६०] (१) आशार-एषी कृश-गुः अस्तं एतु = वर्षा कब होगी, इस आशासे आकाशकी ओर टकटकी बाँधकर देखनेवाला और कृश गायों को भी प्यार से समीप रखनेवाला किसान वर्षा होनेके पश्चात् सहर्ष अपने घर लौटकर आनन्द से दिन बिताने लगे। (यदि वर्षा न हो, घासतिनका न मिले, तो कृषक अपने गोधनको साथ ले जहाँ जल पर्याप्त मात्रामें उपलब्ध होता है ऐसे स्थानपर जा बसते हैं, और वृष्टि की राह देखते रहते हैं। वर्षा होनेके उपरान्त तृणकी यथेष्ट समृद्धि होतेही वे अपने पूर्व निवासस्थानमें लौट आते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि, इस मन्त्रमें इस प्रथाका का उल्लेख किया हो।)

(४६२) आशाम्ऽआशाम् । वि । द्योतताम् । वाताः । वान्तु । दिशःऽदिशः ।

मरुत्ऽभिः । प्रऽच्युताः । मेघाः । सम् । यन्तु । पृथिवीम् । अनु ॥ ८ ॥

(४६३) आपः । विऽद्युत् । अभ्रम् । वर्षम् । सम् । वः । अवन्तु । सुऽदानवः । उत्साः ।

अजगराः । उत ।

मरुत्ऽभिः । प्रऽच्युताः । मेघाः । प्र । अवन्तु । पृथिवीम् । अनु ॥९॥

(४६४) अपाम् । अग्निः । तनूभिः । सम्ऽविदानः । यः । ओषधीनाम् । अधिऽपाः । बभूव ।

सः । नः । वर्षम् । वनुताम् । जातऽवेदाः । प्राणम् । प्रऽजाभ्यः । अमृतम् । दिवः । परि ॥१०॥

अग्निर्मरुतश्च । (अग्निदेवता मन्त्र २४३८ से २४४६)

कण्वपुत्र मेधातिथि ऋषि (ऋ० १।१९।१-९)

४६५ प्रति त्यं चारुमध्वरं गोपीथाय प्र हूयसे । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥१॥ [२४३८]

(४६५) प्रति । त्यम् । चारुम् । अध्वरम् । गोऽपीथाय । प्र । हूयसे । मरुत्ऽभिः । अग्ने ।

आ । गहि ॥१॥

अन्वयः— ४६२ आशां-आशां वि द्योततां, दिशः-दिशः वाताः वान्तु, मरुद्भिः प्र-च्युताः मेघाः पृथिवीं अनु वर्षन्तु । ४६३ (हे) सु-दानवः ! वः आपः विद्युत् अभ्रं वर्षं अजगराः उत उत्साः सं अवन्तु, मरुद्भिः प्र-च्युताः मेघाः पृथिवीं अनु प्र अवन्तु। ४६४ अपां तनूभिः संविदानः यः जात-वेदाः अग्निः ओषधीनां अधि-पाः बभूव सः नः प्रजाभ्यः दिवः परि अमृतं वर्षं प्राणं वनुतां। ४६५ त्यं चारुं अध्वरं प्रति गो-पीथाय प्र हूयसे, (हे) अग्ने ! मरुद्भिः आ गहि।

अर्थ— ४६२ (आशां-आशां) हर दिशामें बिजली (वि द्योततां) चमक जाए। (दिशः-दिशः) सभी दिशाओंमें (वाताः वान्तु) वायु बहने लगें। (मरुद्भिः) मरुतों से (प्र-च्युताः) नीचे गिरे हुए मेघाः) बादल वर्षा के रूपमें (पृथिवीं अनु सं यन्तु) भूमिसे मिल जायँ।

४६३ हे (सु-दानवः!) दानी वीरो ! (वः) तुम्हारा (आपः) जल, (विद्युत्) बिजली, (अभ्रं) मेघ, (वर्षं) बारिश तथा (अजगराः उत उत्साः) अजगर की नाईं प्रतीत होनेवाले झरने, जलप्रवाह सभी प्राणियोंको (सं अवन्तु) बराबर बचा दें। (मरुद्भिः प्र-च्युताः मेघाः) मरुतों से नीचे गिराये हुए मेघ (पृथिवीं अनु) भूमिको अनुकूल ढंगसे (प्र अवन्तु) ठीकठीक सुरक्षित रखें।

४६४ (अपां तनूभिः) जलों के शरीरों से (सं-विदानः) तादात्म्य पाया हुआ (यः जात-वेदाः अग्निः) जो वस्तुमात्रमें विद्यमान अग्नि (ओषधीनां अधि-पाः) औषधियोंका संरक्षण करनेवाला है, (सः) वह (नः प्रजाभ्यः) हमारी प्रजाके लिए (दिवः परि) द्युलोकका (अमृतं) मानों अमृतही ऐसा (वर्षं) बारिशका पानी (प्राणं वनुता) प्राणशक्तिके साथ दे दे।

४६५ (त्यं चारुं अ-ध्वरं प्रति) उस सुन्दर हिंसारहित यज्ञमें (गो-पीथाय) गोरस पीनेके लिए तुझे (प्र हूयसे) बुलाते हैं, अतः हे (अग्ने) अग्ने! (मरुद्भिः) वीर मरुतोंके साथ इधर (आ गहि) आ जाओ।

भावार्थ— ४६४ आकाशमेंसे जो वर्षा होती है, उसीके साथ एक प्रकार का प्राणवायु भी पृथ्वीपर उतरता है। वह सभी प्राणियों को तथा वनस्पतियोंको सुख देता है।

टिप्पणी— [४६५] (१) गो-पीथ (पा पाने रक्षणे च) = गोरसका पान, गौका संरक्षण।

४६६ नहि देवो न मर्त्यो महस्तव क्रतुं परः। मरुद्भिरग्न आ गहि ॥२॥ [२४३९]

(४६६) नहि। देवः। न। मर्त्यः। महः। तव। क्रतुम्। परः। मरुत्ऽभिः। अग्ने। आ। गहि। ॥२॥

४६७ ये महो रजसो विदु-र्विश्वे देवासो अद्रुहः। मरुद्भिरग्न आ गहि ॥३॥ [२४४०]

(४६७) ये। महः। रजसः। विदुः। विश्वे। देवासः। अद्रुहः। मरुत्ऽभिः। अग्ने। आ। गहि ॥३॥

४६८ य उग्रा अर्कमानृचु-रनाधृष्टास ओजसा। मरुद्भिरग्न आ गहि ॥४॥ [२४४१]

(४६८) ये। उग्राः। अर्कम्। आनृचुः। अनाधृष्टासः। ओजसा। मरुत्ऽभिः। अग्ने। आ। गहि ॥४॥

अन्वयः— ४६६ तव महः क्रतुं नहि देवः न मर्त्यः परः, (हे) अग्ने! मरुद्भिः आ गहि।
४६७ ये विश्वे देवासः अ-द्रुहः महः रजसः विदुः मरुद्भिः (हे) अग्ने! आ गहि।
४६८ उग्राः ओजसा अन्-आ-धृष्टासः ये अर्कं आनृचुः, मरुद्भिः (हे) अग्ने! आ गहि।

अर्थ- ४६६ (तव महः क्रतुं) तेरे महान कर्तृत्वको लाँघनेके लिए, तुझसे विरोध करनेके लिए (नहि देवः) देवता समर्थ नहीं है तथा (न मर्त्यः परः) मानव भी समर्थ नहीं हैं। हे (अग्ने!) अग्ने! (मरुद्भिः आ गहि) वीर मरुतों के संग इधर पधारो।

४६७ (ये) जो (विश्वे) सभी (देवासः) तेजस्वी तथा (अ-द्रुहः) विद्रोह न करनेवाले वीर हैं, वे (मह रजसः) विस्तीर्ण अन्तरिक्षको (विदुः) जानते हैं, उन (मरुद्भिः) वीर मरुतोंके साथ हे (अग्ने!) अग्ने! तू (आ गहि) यहाँ आगमन कर।

४६८ (उग्राः) शूर, (ओजसा) शारीरिक बलके कारण (अन्-आ-धृष्टासः) शत्रुओंको अजिक्य ऐसे जो वीर (अर्कं आनृचुः) पूजनीय देवताकी उपासना करते हैं, उन (मरुद्भिः) वीर मरुतों के संग के साथ हे (अग्ने!) अग्ने! (आ गहि) इधर आ जा।

भावार्थ- ४६६ कर्तृत्व का उल्लंघन करना विरोध करनाही है।

४६७ ये वीर तेजस्वी हैं और वे किसीसे वैरभाव नहीं रखते हैं, न किसी को कष्टही पहुँचाते हैं। इस भूमंडलपर जिस भाँति वे संचार करते हैं, उसी प्रकार अन्तरिक्षमेंसे भी वे प्रयाण करते हैं। हर जगह घूमकर वे ज्ञान पाते हैं। [वीरोंको उचित है कि वे आवश्यक सभी जानकारी हस्तगत करें।]

४६८ वीर उग्र स्वरूपवाले, शूर एवं बलिष्ठ बने और सभी प्रकारके शत्रुओंके लिए अजेय बन जायँ।

टिप्पणी— [४६६] (१) परः= दूसरा, श्रेष्ठ, समर्थ, उस पार विद्यमान।

[४६७] रजस्= अन्तरिक्ष, धूलि, पृथ्वी। महः रजसः विदुः= बडी भारी पृथ्वी एवं विशाल तथा महान अन्तरिक्षको जानते हैं। [वीरोंको शत्रुसेनापर आक्रमण करने पडते हैं, अतः भूमंडल परके विभाग, पर्वत, नदियाँ ऊबडखाबड प्रदेश आदिकी जानकारी और उसी प्रकार आकाशपथसे परिचय प्राप्त करना चाहिए। क्योंकि बिना इनके शत्रुदलका विध्वंस भली भाँति नहीं हो सकता।]

४६९ ये शुभ्रा घोरवर्पसः सुक्षत्रासो रिशादसः । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥५॥ [२४४२]
(४६९) ये । शुभ्राः । घोरऽवर्पसः । सुऽक्षत्रासः । रिशादसः । मरुत्ऽभिः । अग्ने । आ । गहि ॥५॥

४७० ये नाकस्याधि रोचने दिवि देवास आसते । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥६॥ [२४४३]
(४७०) ये । नाकस्य । अधि । रोचने । दिवि । देवासः । आसते । मरुत्ऽभिः । अग्ने । आ । गहि ॥६॥

४७१ य ईङ्खयन्ति पर्वतान् तिरः समुद्रमर्णवम् । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥७॥ [२४४४]
(४७१) ये । ईङ्खयन्ति । पर्वतान् । तिरः । समुद्रम् । अर्णवम् । मरुत्ऽभिः । अग्ने । आ । गहि ॥७॥

४७२ आ ये तन्वन्ति रश्मिभिस्तिरः समुद्रमोजसा । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥८॥ [२४४५]
(४७२) आ । ये । तन्वन्ति । रश्मिऽभिः । तिरः । समुद्रम् । ओजसा । मरुत्ऽभिः । अग्ने । आ । गहि ॥८॥

अन्वयः— ४६९ ये शुभ्राः घोर-वर्पसः सु-क्षत्रासः रिश-अदसः मरुद्भिः (हे) अग्ने! आ गहि।
४७० ये देवासः नाकस्य अधि रोचने दिवि आसते, मरुद्भिः (हे) अग्ने! आ गहि।
४७१ ये पर्वतान् ईङ्खयन्ति, अर्णवं समुद्रं तिरः, मरुद्भिः (हे) अग्ने! आ गहि।
४७२ ये रश्मिभिः ओजसा समुद्रं तिरः तन्वन्ति, मरुद्भिः (हे) अग्ने! आ गहि।

अर्थ- ४६९ (ये शुभ्राः) जो गौरवर्णवाले, (घोर-वर्पसः) देखनेवाले के दिलको तनिक स्तिमित कर सके, ऐसे दृढ़ाकार शरीरसे युक्त, (सु-क्षत्रासः) उच्च कोटिके क्षत्रिय हैं, अतः (रिश-अदसः) हिंसकों का वध करनेहारे हैं, उन (मरुद्भिः) वीर मरुतोंके झुंडके साथ हे (अग्ने!) अग्ने! इधर पधारो।

४७० (ये देवासः) जो तेजस्वी होते हुए (नाकस्य अधि) सुखदायक स्थान में या (रोचने दिवि) प्रकाशयुक्त द्युलोकमें (आसते) रहते हैं, उन (मरुद्भिः) वीर मरुतों के साथ हे (अग्ने!) अग्ने! (आ गहि) इधर आओ।

४७१ (ये) जो (पर्वतान्) पहाडों को (ईङ्खयन्ति) हिला देते हैं और जो (अर्णवं समुद्रं) प्रक्षुब्ध समुन्दरको भी (तिरः) तैरकर परे चले जाते हैं, उन (मरुद्भिः) वीर मरुतों के साथ हे (अग्ने!) अग्ने! (आ गहि) इधर आ जाओ।

४७२ (ये) जो (रश्मिभिः) अपने तेजसे तथा (ओजसा) बलसे (समुद्रं) समुन्दरको (तिरः तन्वन्ति) लाँघकर परे जा पहुँचते हैं, उन (मरुद्भिः) वीर मरुतों के साथ हे (अग्ने!) अग्ने! (आ गहि) इधर आ जाओ।

भावार्थ- ४६९ वीर सैनिक अपनी सामर्थ्य बढावें, शरीरको बलिष्ठ बना दें और शत्रुओंका हर ढंगसे पराभव करें।

टिप्पणी—[४६९] (१) वर्पस्=मूर्ति, आकृति, शरीर। (२) सु-क्षत्रासः= अच्छे, उत्कृष्ट क्षत्रिय। [इस पदसे साफ जाहिर होता है कि, मरुत् क्षत्रिय वीर हैं। ऋ० ५।५४।५ देखिए। वहाँ 'स्वक्षत्रेभिः' पद पाया जाता है।]

[४७०] (१) नाक= (न-अ-क) क= सुख, अक= दुःख, नाक = सुखमय लोक।

[४७१] (१) पर्वतान् ईङ्खयन्ति = (देखिए मरुद्देवता मंत्र १२,१०,६२।)

४७३ अभि त्वा पूर्वपीतये सृजामि सोम्यं मधु । मरुद्भिरग्न आ गहि ॥९॥ [२४४६]

(४७३) अभि । त्वा । पूर्वऽपीतये । सृजामि । सोम्यम् । मधु । मरुत्ऽभिः । अग्ने । आ । गहि ॥९॥

कण्वपुत्र सोभरि ऋषि (ऋ० ८।१०३।१४) (अग्निदेवता मंत्र २४४७)

४७४ आग्ने याहि मरुत्सखा रुद्रेभिः सोमपीतये । सोभर्या उप सुष्टुतिं मादयस्व स्वर्णरे ॥१४॥

(४७४) आ । अग्ने । याहि । मरुत्ऽसखा । रुद्रेभिः । सोमऽपीतये । सोभर्याः । उप । सुऽस्तुतिम् । मादयस्व । स्वःऽनरे । ॥१४॥ [२४४७]

इन्द्र-मरुतश्च । (इन्द्रदेवता मंत्र ३२४५-३२४६)

विश्वामित्रपुत्र मधुच्छन्दा ऋषि (ऋ० १।६।५,७)

४७५ वीळु चिदारुजत्नुभिर्गुहा चिदिन्द्र वह्निभिः । अविन्द उस्रिया अनु ॥५॥ [३२४५]

(४७५) वीळु । चित् । आरुजत्नुऽभिः । गुहा । चित् । इन्द्र । वह्निऽभिः । अविन्दः । उस्रियाः । अनु ॥५॥

अन्वयः— ४७३ त्वा पूर्व-पीतये मधु सोम्यं अभि सृजामि, (हे) अग्ने ! मरुद्भिः आ गहि । ४७४ (हे) अग्ने ! मरुत्-सखा रुद्रेभिः सोम-पीतये स्वर्-नरे आ याहि, सोभर्याः सु-स्तुतिं उप मादयस्व। ४७५ (हे) इन्द्र ! वीळु चित् आ-रुजत्नुभिः वह्निभिः (मरुद्भिः) गुहा चित् उस्रियाः अनु अविन्दः।

अर्थ- ४७३ (त्वा) तुझे (पूर्व-पीतये) प्रारंभमें ही पीने के लिए यह (मधु सोम्यं) मीठा सोमरस (अभि सृजामि) मैं निर्माण कर दे रहा हूं; हे (अग्ने!) अग्ने! (मरुद्भिः आ गहि) वीर मरुतोंके साथ इधर आओ।

४७४ हे (अग्ने !) अग्ने ! तू (मरुत्-सखा) वीर मरुतोंका मित्र है, अतः तू (रुद्रेभिः) शत्रुओं को रुलानेवाले इन वीरों के संग (सोम-पीतये) सोम पीनेके लिए (स्व-र्-नरे) अपने प्रकाश का जिससे विस्तार होता है, ऐसे इस यज्ञमें (आ याहि) पधारो और (सोभर्याः सु-स्तुतिं) इस सोभरि ऋषिकी अच्छी स्तुतिको सुनकर (मादयस्व) संतुष्ट बनो।

४७५ हे (इन्द्र!) इन्द्र ! (वीळु चित्) अत्यन्त सामर्थ्यवान् शत्रुओंका भी (आ-रुजत्नुभिः) विनाश करनेहारे और (वह्निभिः) धन ढोनेवाले इन वीरोंकी सहायतासे शत्रुओंने (गुहा चित्) गुफामें या गुप्त जगह रखी हुई (उस्रियाः) गौओंको तू (अनु अविन्दः) पा सका, वापिस लेनेमें समर्थ हो गया।

भावार्थ— ४७५ ये वीर, दुश्मनोंके बडे बडे गढोंका निपात करके अपने अधीन करनेमें, बडेही सफल होते हैं। इन्हीं वीरोंकी मदद पाकर वह, शत्रुओंने बडी सतर्कतापूर्वक किसी गुप्त स्थानमें रखी हुई गौएँ या धनसंपदाका पता लगानेमें, सफलता पाता है। यदि ये वीर सहायता न पहुँचाते, तो किसी अज्ञात, दुर्गम तथा बीहड भूभागमें छिपी हुई गोसंपदाको पाना उसके लिये दूभर होता, इसमें क्या संशय ?

टिप्पणी— [४७४] (१) सोभर्याः (सोभरेः) [सोभरिः-सुभरिः] = सोभरिनामक ऋषि की, उत्तम ढंगसे पालनपोषण करनेहारे की (प्रशंसा)। (२) स्वर्णरे (स्व-र्-नरे)= (स्व) अपने (रा) प्रकाशका विस्तार करनेके कार्यमें-यज्ञमें। (स्वर्) अपना प्रकाश हो तथा (न-रम्) वैयक्तिक भोगलिप्सा न हो, ऐसा यज्ञ।

[४७५] (१) आ-रुजत्नु= (आ+रुज् भङ्गे हिंसायां च)- तोडनेवाला, क्षति पैदा करनेवाला, विदारक, टुकडे टुकडे करनेवाला, रोगपीडित। (२) उस्रिय (वस् निवासे)= रहनेवाला, बैल, गाय, बछडा, दूध, तेज, प्रकाश। (३) वह्निः (वह् प्रापणे)= ढोनेवाला, ले चलनेवाला अग्नि।

४७६ इन्द्रेण सं हि दृक्षसे संजग्मानो अबिभ्युषा । मन्दू समानवर्चसा ॥७॥ [२२४६]

(४७६ इन्द्रेण । सम् । हि । दृक्षसे । सम्ऽजग्मानः । अबिभ्युषा । मन्दू इति । समानऽवर्चसा ॥७॥

मरुत्वानिन्द्रः ॥ [illegible]
कण्वपुत्र मेधातिथि ऋषि [illegible]

४७७ मरुत्वन्तं हवामह इन्द्रमा सोमपीतये । सजूर्गणेन तृम्पतु ॥७॥ [२२४७]

(४७७) मरुत्वन्तम् । हवामहे । इन्द्रम् । आ । सोमऽपीतये । सऽजूः । गणेन । तृम्पतु ॥७॥

४७८ इन्द्रज्येष्ठा मरुद्गणा देवासः पूषरातयः । विश्वे मम श्रुता हवम् ॥८॥ [२२४८]

(४७८) इन्द्रऽज्येष्ठाः । मरुत्ऽगणाः । देवासः । पूषऽरातयः । विश्वे । मम । श्रुत । हवम् ॥८॥

अन्वयः— ४७६ (हे मरुत्-गण !) अ-बिभ्युषा इन्द्रेण सं-जग्मानः सं दृक्षसे हि, समान-वर्चसा मन्दू (स्थः) ।

४७७ मरुत्वन्तं इन्द्रं सोम-पीतये आ हवामहे, गणेन सजूः तृम्पतु ।

४७८ हे देवासः पूष-रातयः इन्द्र-ज्येष्ठाः मरुद्-गणाः ! विश्वे मम हवं श्रुत ।

अर्थ— ४७६ हे वीरो ! तुम सदैव अ-बिभ्युषा इन्द्रेण न डरनेवाले इन्द्रसे सं-जग्मानः मिलकर आक्रमण करनेहारे, सं दृक्षसे हि, सचमुच दीख पडते हो । तुम दोनों समान-वर्चसा समान तेज या उत्साहसे युक्त हो और मन्दू हमेशा प्रसन्न एवं उल्हासित बने रहते हो ।

४७७ (मरुत्वन्तं) वीर मरुतों से युक्त इन्द्रं इन्द्रको सोम-पीतये सोमपान के लिए हम हवामहे बुलाते हैं । वह इन्द्र गणेन सजूः इन वीरोंके गणके साथ तृम्पतु तृप्त होवे ।

४७८ हे देवासः तेजस्वी, पूष-रातयः [illegible] इन्द्र-ज्येष्ठाः इन्द्रको सर्वोपरि [illegible] (मरुद्-गणाः) वीर मरुतो ! (विश्वे) तुम सभी मम हवं श्रुत मेरी प्रार्थना सुनो ।

भावार्थ— ४७६ हे वीरो ! तुम [illegible] इन्द्रके [illegible] में [illegible] रहते हो । [illegible] हो । [illegible] नहीं है ।

४७८ इन वीरोंमें [illegible] [illegible] हैं ।

टिप्पणी— [४७६] १ [illegible] । २ [illegible] ।

[४७७] १ [illegible] ।

[४७८] १ पूष-रातिः [illegible] ।

[illegible]

४७९ हुत वृत्रं सुदानव इन्द्रेण सहसा युजा । मा नो दुःशंस ईशत ॥९॥ [३२४९]
(४७९) हुत । वृत्रम् । सुऽदानवः । इन्द्रेण । सहसा । युजा । मा । नः । दुःशंसः । ईशत ॥९॥

मित्रावरुणपुत्र अगस्त्य ऋषि (ऋ० १।१६५।१-१४) (इन्द्रदेवता मंत्र ३२५०-३२६३)

४८० कया शुभा सवयसः सनीळाः समान्या मुरुतः सं मिमिक्षुः ।
कया मती कुत एतास एतेऽर्चन्ति शुष्मं वृषणो वसूया ॥१॥ [३२५०]
(४८०) कया । शुभा । सऽवयसः । सऽनीळाः । समान्या । मुरुतः । सम् । मिमिक्षुः ।
कया । मती । कुतः । आऽइतासः । एते । अर्चन्ति । शुष्मम् । वृषणः । वसुऽया ॥१॥

अन्वयः— ४७९ (हे) सु-दानवः! सहसा इन्द्रेण युजा वृत्रं हत, दुस्-शंसः नः मा ईशत ।
४८० स-वयसः स-नीळाः स-मान्या मरुतः कया शुभा सं मिमिक्षुः ? एते कुतः एतासः? वृषणः वसु-या कया मती शुष्मं अर्चन्ति ?

अर्थ- ४७९ हे (सु-दानवः!) दानशूर वीरो! तुम (सहसा) शत्रुको परास्त करनेकी सामर्थ्यसे युक्त (इन्द्रेण युजा) इन्द्रके साथ रहकर (वृत्रं हत) निरोधक दुश्मनका वध कर डालो। (दुस्-शंसः) दुष्कीर्तिसे युक्त वह शत्रु (नः मा ईशत) हमपर प्रभुत्व प्रस्थापित न करे।

४८० (स-वयसः) समान उम्रवाले, (स-नीळाः) एकही घरमें निवास करनेहारे, (स-मान्या) समान रूपसे सम्माननीय (मरुतः) ये वीर मरुत् (कया शुभा) किस शुभ इच्छासे भला सभी (सं मिमिक्षुः) मिलजुलकर कार्य करते हैं? (एते) ये (कुतः एतासः) किधरसे यहाँ आ गये और (वृषणः) बलवान होते हुए भी (वसु-या) धन पानेके लिए (कया मती) किस विचारसे ये (शुष्मं अर्चन्ति) बलकी पूजा करते हैं- अपनी सामर्थ्य बढाते ही रहते हैं।

भावार्थ- ४७९ ये वीर बडे अच्छे दानी हैं और इन्द्रसदृश सेनापतिके नेतृत्वमें रहकर दुरात्मा दुश्मनोंका वध तथा विध्वंस करते हैं। ऐसे शत्रुओंका प्रभाव इन वीरोंके अथक परिश्रमसे कहींभी नहीं टिकने पाता। जो शत्रु हमपर अपना प्रभुत्व प्रस्थापित करनेकी लालसासे प्रेरित हों, उन्हें ये वीर धराशायी कर डालें और ऐसा प्रबंध करें कि, ये दुष्ट शत्रु अपना सर ऊँचा न उठा सकें तथा हम शत्रुसेनाके चँगुलमें न फँसें।

४८० ये सभी वीर समान उम्रवाले हैं और वे एकही घरमें रहते हैं [सैनिक Barracks बैरकमें रहते हैं, सो प्रसिद्ध है।] सभी उन्हें सम्माननीय समझते हैं और लोगोंका हित हो, इसलिए वे शत्रुओंपर एकत्रित रूप से आक्रमण कर बैठते हैं। सुदूरवर्ती दुश्मनोंपर भी ये विजय पाते हैं और समूची जनताका हित हो, इस हेतु धन कमानेके लिए अपना बल बढाते रहते हैं।

टिप्पणी— [४७९] (१) शंसः (शंस् स्तुतौ दुर्गतौ च) = स्तुति, तुलाना, दुर्गति, सदिच्छा, दर्शनिहारा, आशीर्वाद, शाप। दुस्-शंसः = दुष्ट इच्छा रखनेवाला, बुरी लालसासे प्रेरित, अपकीर्तिसे युक्त। (२) सहस् = बल, सामर्थ्य, शत्रुका पराभव करनेकी शक्ति, शत्रुदलका आक्रमण बरदाश्त करते हुए अपनी जगह स्थायी रूप से टिकनेकी शक्ति। [४८०] (१) स-वयस् = (वयस् = वय, यौवन, अन्न, बल, पंछी, आरोग्य।) अन्नयुक्त, बलवान्, नवयुवक, आरोग्यसंपन्न, समान उम्रका। (२) वसु-या = धन पानेके लिए जानेहारे, चेष्टा करनेमें निरत। (३) =शोभा, तेज, सुख, विजय, अलंकार, जल, तेजस्वी रथ। (४) मिक्ष् = मिलाना (Mix), तैयार करना, इकट्ठा। (५) स-नीळाः = एक घरमें रहनेवाले, (देखो मरुद्देवताके मंत्र ३२१, ३४५, ४४७)।

४८१ कस्य॑ ब्रह्मा॑णि जुजुषुर्युवा॑नः को अ॑ध्वरे म॒रुत॒ आ व॑वर्त ।
श्ये॒नाँ इ॑व॒ ध्रज॑तो अ॒न्तरि॑क्षे केन॑ म॒हा मन॑सा रीरमाम ॥२॥ [३२५१]

(४८१) कस्य॑ । ब्रह्मा॑णि । जु॒जु॒षुः । युवा॑नः । कः । अ॒ध्व॒रे । म॒रुतः॑ । आ । व॒व॒र्त॒ ।
श्ये॒नान्ऽइ॑व । ध्रज॑तः । अ॒न्तरि॑क्षे । केन॑ । म॒हा । मन॑सा । री॒र॒मा॒म ॥२॥

४८२ कुत॒स्त्वमि॑न्द्र॒ माहि॑नः स॒न्नेको॑ यासि सत्पते॒ किं त॑ इ॒त्था ।
सं पृ॑च्छसे समरा॒णः शु॑भा॒नैर्वो॒चेस्तन्नो॑ हरिवो॒ यत् ते॑ अ॒स्मे ॥३॥ [३२५२]

(४८२) कुतः॑ । त्वम् । इ॒न्द्र॒ । माहि॑नः । सन् । एकः॑ । या॒सि॒ । स॒त्ऽप॒ते॒ । किम् । ते॒ । इ॒त्था ।
सम् । पृ॒च्छ॒से॒ । स॒म्ऽअ॒रा॒णः । शु॒भा॒नैः । वो॒चेः । तत् । नः॒ । ह॒रि॒ऽवः॒ । यत् । ते॒ । अ॒स्मे इति॑ ॥३॥

अन्वयः— ४८१ युवानः कस्य ब्रह्माणि जुजुषुः ? कः मरुतः अ-ध्वरे आ ववर्त ? अन्तरिक्षे श्येनान् इव ध्रजतः (तान्) केन महा मनसा रीरमाम ? ४८२ (हे) सत् पते इन्द्र ! त्वं माहिनः एकः सन् कुतः यासि ? ते इत्था किं ? शुभानैः सं-अराणः सं पृच्छसे, (हे) हरि-वः ! यत् ते अस्मे तत् वोचेः ।

अर्थ-४८१ ये (युवानः) वीर युवक इस समय (कस्य ब्रह्माणि जुजुषुः) भला किसके स्तोत्र सुनते होंगे? (कः) कौन इस समय (मरुतः) इन वीर मरुतोंको अपने (अ-ध्वरे) हिंसारहित यज्ञमें (आ ववर्त) आनेके लिए प्रवृत्त करता होगा ? (अन्तरिक्षे) आकाशपथमेंसे (श्येनान् इव) बाज पंछी की नाईं (ध्रजतः) वेगपूर्वक जानेहारे इन वीरोंको (केन महा मनसा) किस उदार मनोभावसे हम (रीरमाम) भला रममाण कर लें ?

४८२ हे सत्-पते इन्द्र !) सज्जनोंका पालन करनेहारे इन्द्र ! (त्वं माहिनः) तू महान् होते हुए भी इस भाँति (एकः सन्) अकेलाही (कुतः यासि) किधर भला चला जा रहा है ? (ते) तेरा (इत्था) इसी तरह वर्ताव (किं) भला किस लिए है ? (शुभानैः) अच्छे कर्म करनेहारे वीरोंके साथ (सं-अराणः) शत्रुदलपर धावा करनेहारा तू (सं पृच्छसे) हमसे कुशल प्रश्न पूछता है । हे (हरि-वः !) उत्तम अश्वोंसे युक्त इन्द्र ! (यत् ते अस्मे) जो कुछ तुझे हमें बतलाना हो (तत् वोचेः) वह कह दे ।

भावार्थ— ४८१ ये वीर युवकदशामें हैं और वे यज्ञमें जाकर काव्यगायनका श्रवण करते हैं, वीरगाथाओंका गायन सुनते हैं । वे (अपने वायुयानोंमें बैठ) अन्तरिक्षकी राहसेंसे वेगपूर्वक चले जाते हैं । हमारी चाह है कि वे हमारे इस हिंसारहित कर्ममें पधारें और शुभ कर्मका अवलोकन करके इधरही रममाण हों ।

४८२ सज्जनोंका पालनकर्ता इन्द्र अकेला होने परभी कभी एकाध मौकेपर शत्रुसेनापर आक्रमण करने जाता है । प्रायः वह तेजस्वी वीरोंको साथ ले विरोधियोंसे जूझने प्रयाण करता है । प्रथम अपनी आयोजना उनसे कह-कर और सबका एकत्रित कर्तव्य निर्धारित करके पश्चात्‌ही वह विद्युद्युद्धप्रणालीका अवलंब करता है, जिनके फलस्वरूप शत्रुसेना तितरबितर हुआ करती है ।

टिप्पणी— [४८१] (१) ब्रह्मन् = ज्ञान, स्तोत्र, काव्य, बुद्धि, धन, सूर्य, अन्न । (२) मनस् = मन, विचार, कल्पना, युक्ति, हेतु, इच्छा । (३) ध्रज् (गतौ) = जाना, हिलना, हिलाना । (४) अन्तरिक्षे श्येनान् इव = (देखो मरुद्देवताके मंत्र ९१, १५१, ३८९)। [४८२] (१) माहिनः = बडा, प्रसन्नचेता, प्रशंसनीय । (२) शुभानः = शोभायमान, सुशोभित ।

४८३ ब्रह्मा॑णि मे म॒तयः॒ शं सु॒तासः॒ शुष्म॑ इयर्ति॒ प्रभृ॑तो मे॒ अद्रिः॑ ।
आ शा॑सते॒ प्रति॑ हर्यन्त्यु॒क्थे—मा हरी॑ वहत॒स्ता नो॒ अच्छ॑ ॥४॥ [३२५३]

(४८३) ब्रह्मा॑णि । मे॒ । म॒तयः॑ । शम् । सु॒तासः॑ । शुष्मः॑ । इ॒यर्ति॒ । प्रऽभृ॑तः । मे॒ । अद्रिः॑ ।
आ । शा॒स॒ते॒ । प्रति॑ । ह॒र्य॒न्ति॒ । उ॒क्था । इ॒मा । हरी॒ इति॑ । व॒ह॒तः॒ । ता । नः॒ ।
अच्छ॑ ॥४॥

४८४ अतो॑ व॒यमन्त॒मेभि॑र्युजा॒नाः स्वक्ष॑त्रेभिस्त॒न्व१ः॒ शुम्भ॑मानाः ।
महो॑भि॒रेताँ॒ उप॑ युज्महे॒ न्वि—न्द्र॑ स्व॒धामनु॒ हि नो॑ ब॒भूथ॑ ॥५॥ [३२५४]

(४८४) अतः॑ । व॒यम् । अ॒न्त॒मेभिः॑ । यु॒जा॒नाः । स्वऽक्ष॑त्रेभिः । त॒न्वः॑ । शुम्भ॑मानाः ।
महः॑ऽभिः । ए॒तान् । उप॑ । यु॒ज्म॒हे॒ । नु । इन्द्र॑ । स्व॒धाम् । अनु॑ । हि । नः॒ । ब॒भूथ॑ ।
॥५॥

अन्वयः — ४८३ मे ब्रह्माणि मतयः सुतासः शं, प्र-भृतः मे शुष्मः अद्रिः इयर्ति, आ शासते, उक्था प्रति हर्यन्ति, इमा हरी नः ता अच्छ वहतः ।

४८४ अतः वयं अन्तमेभिः स्व-क्षत्रेभिः युजानाः तन्वः शुम्भमानाः महोभिः एतान् नु उप युज्महे, हि (हे) इन्द्र ! नः स्व-धां अनु बभूथ ।

अर्थ— ४८३ (मे) मेरे (ब्रह्माणि) स्तोत्र, मेरे (मतयः) विचार तथा (सुतासः) निचोडे हुए सोम-रस सभी (शं) सुखकारक हों : हाथमें (प्र-भृतः) सुदृढ ढंगसे पकडा हुआ (मे) यह मेरा (शुष्मः) शत्रुका शोषण करनेवाला प्रभावी (अद्रिः) वज्र (इयर्ति) शत्रुपर जा गिरता है और इसीलिए सभी लोग (आ शासते) मेरी प्रशंसा करते हैं तथा मेरे (उक्था) काव्योंकाभी (प्रति हर्यन्ति) गायन करते हैं। (इमा हरी) ये दो घोडे (नः) हमें (ता अच्छ) उन यज्ञस्थलोंतक (वहतः) ले चलते हैं।

४८४ (अतः) इसीलिए (वयं) हम (अन्तमेभिः) अपने समीपकी (स्व-क्षत्रेभिः) स्वकीय शूरताओं से (युजानाः) युक्त होकर (तन्वः शुम्भमानाः) शरीर सुशोभित करके इस (महोभिः) सामर्थ्य से पूर्ण (एतान्) कृष्णसारोंको अपने रथोंमें (नु उप युज्महे) जोतते हैं। (हि) क्योंकि हे (इन्द्र!) इन्द्र ! (नः स्व-धां) हमारी शक्तिका तुझे (अनु बभूथ) अनुभव ही है।

भावार्थ— ४८३ वीरोंके काव्य सुविचारको प्रोत्साहन देते हैं। वीर सैनिक मीठे एवं उत्साहवर्धक सोमरसका पान करें। जिधर वीरकाव्योंका गायन होता हो उधर जनता चली जाय, और उसे सुन ले। वीर अपने समीप ऐसे हथियार रखें कि, जो शत्रुके बलको शुष्क कर डालें तथा उनका विनाशभी कर दें।

४८४ वीर क्षत्रिय अपनी शूरतासे सुहाते हैं। मौका आतेही वे सज्ज होकर शत्रुओंपर धावा करनेके लिए रथोंको तैयार रखते हैं। उनका सेनापति भी उनकी शक्ति के अनुसार उन्हें कार्य देता है।

टिप्पणी- [४८४] (१) स्व-क्षत्रेभिः= अपने क्षत्रिय वीरोंके साथ, अपने क्षत्रियोचित साधनोंके साथ। (ऋ० ७।१।१४ देखो।) इस पदसे स्पष्ट सूचना मिलती है कि, मरुत् क्षत्रियवीरही हैं।

४८५ क्व१ स्या वो मरुतः स्वधासीद् यन्मामेकं समधत्ताहिहत्ये।
अहं ह्यु१ग्रस्तविषस्तुविष्मान् विश्वस्य शत्रोरनमं वधस्नैः ॥६॥ [३२५५]

(४८५) क्व। स्या। वः। मरुतः। स्वधा। आसीत्। यत्। माम्। एकम्। सम्ऽअधत्त।
अहिऽहत्ये।
अहम्। हि। उग्रः। तविषः। तुविष्मान्। विश्वस्य। शत्रोः। अनमम्। वधऽस्नैः ॥६॥

४८६ भूरि चकर्थ युज्येभिरस्मे समानेभिर्वृषभ पौंस्येभिः।
भूरीणि हि कृणवामा शविष्ठेन्द्र क्रत्वा मरुतो यद् वशाम ॥७॥ [३२५६]

(४८६) भूरि। चकर्थ। युज्येभिः। अस्मे इति। समानेभिः। वृषभ। पौंस्येभिः।
भूरीणि। हि। कृणवाम। शविष्ठ। इन्द्र। क्रत्वा। मरुतः। यत्। वशाम ॥७॥

अन्वयः-४८५ (हे) मरुतः! अहि-हत्ये यत् मां एकं समधत्त स्या वः स्व-धा क्व आसीत्? अहं हि उग्रः तविषः तुविष्मान् विश्वस्य शत्रोः वध-स्नैः अनमम्।

४८६ (हे) वृषभ! अस्मे युज्येभिः समानेभिः पौंस्येभिः भूरि चकर्थ, (हे) शविष्ठ इन्द्र! (वयं) मरुतः यत् वशाम, क्रत्वा भूरीणि कृणवाम हि।

अर्थ- ४८५ हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (अहि-हत्ये) शत्रुको मारनेके समय [illegible] (मां एकं) मेरे अकेले के निकट तुम (समधत्त) सब मिलकर [illegible] (स्या वः) तुम्हारी (स्व-धा) शक्ति अब (क्व आसीत्) भला किधर है? (अहं हि) मैं तो (उग्रः [illegible] बलवान् तथा (तुविष्मान्) वेगपूर्वक हमले करनेवाला हूँ। [illegible] (वध-स्नैः) वज्रके आघातों से (अनमं) झुका चुका हूँ, इनपर मैं विजयी बन चुका हूँ।

४८६ हे (वृषभ!) बलवान् इन्द्र! (अस्मे) हमारे लिए (युज्येभिः [illegible] समानेभिः) सदृश (पौंस्येभिः) प्रभावोत्पादक सामर्थ्यों से तू (भूरि चकर्थ) बहुत [illegible] (शविष्ठ इन्द्र!) बलिष्ठ इन्द्र! (मरुतः) हम वीर मरुत् (यत् वशाम) जिसे चाहते हैं [illegible] कार्यक्षमता तथा पुरुषार्थ से हम अवश्यही (भूरीणि) [illegible] दिखाते हैं।

४८७ वधीं वृत्रं मरुत इन्द्रियेण स्वेन भामेन तविषो बभूवान् ।
अहमेता मनवे विश्वश्चन्द्राः सुगा अपश्चकर वज्रबाहुः ॥८॥ [३२५७]

(४८७) वधीम् । वृत्रम् । मरुतः । इन्द्रियेण । स्वेन । भामेन । तविषः । बभूवान् ।
अहम् । एताः । मनवे । विश्वऽचन्द्राः । सुऽगाः । अपः । चकर । वज्रऽबाहुः ॥८॥

४८८ अनुत्तमा ते मघवन्नकिर्नु न त्वावाँ अस्ति देवता विदानः ।
न जायमानो नशते न जातो यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध ॥९॥ [३२५८]

(४८८) अनुत्तम् । आ । ते । मघऽवन् । नकिः । नु । न । त्वाऽवान् । अस्ति । देवता । विदानः ।
न । जायमानः । नशते । न । जातः । यानि । करिष्या । कृणुहि । प्रऽवृद्ध ॥९॥

अन्वयः— ४८७ (हे) मरुतः ! स्वेन भामेन इन्द्रियेण तविषः बभूवान्, वज्र-बाहुः अहं वृत्रं वधीं, मनवे एताः विश्व-चन्द्राः अपः सु-गाः चकर ।

४८८ (हे) मघवन् ! ते अन्-उत्तं नकिः नु आ, त्वावान् विदानः देवता न अस्ति, (हे) प्र-वृद्ध ! यानि करिष्या कृणुहि न जायमानः न जातः नशते ।

अर्थ —४८७ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (स्वेन भामेन इन्द्रियेण) अपने निजी तेजस्वी इन्द्रियों से (तविषः) बलवान् (बभूवान्) हुआ और (वज्र-बाहुः) हाथमें वज्र धारण करनेवाला (अहं) मैं (वृत्रं वधीं) घेरनेवाले शत्रुका वध करके (मनवे) मानवमात्रके लिए (एताः) ये (विश्व-चन्द्राः) सबको आल्हाद देनेवाले (अपः) जलौघ सबको (सु-गाः चकर) सुगमतापूर्वक मिलते जायँ, ऐसा प्रबंध कर चुका ।

४८८ हे (मघवन् !) इन्द्र ! (ते) तुम्हारी (अन्-उत्तं) प्रेरणा के विना (नकिः नु आ) कुछ भी नहीं होने पाता । (त्वावान्) तुम्हारे समकक्ष (विदानः देवता) ज्ञाता देव (न अस्ति) दूसरा कोई विद्यमान नहीं है । हे (प्र-वृद्ध !) अत्यन्त महान् इन्द्र ! (यानि करिष्या) जो कर्तव्यकर्म तू (कृणुहि) निभाता है, उन्हें दूसरा कोई भी (न जायमानः [नशते]) जन्म लेनेवाला नहीं कर सकता, अथवा (न जातः नशते) उत्पन्न हुआ पुरुष भी नहीं कर सकता ।

भावार्थ— ४८७ अपना इन्द्रियसामर्थ्य बढाकर वीर पुरुष हाथमें हथियार लेकर जलप्रवाहकी स्वच्छन्द गतिमें बाधा डालनेवाले शत्रु का वध करके सभी मानवोंके हितके लिये अत्यावश्यक जीवनोपयोगी जल हरएक को बडी आसानीसे मिल सके, ऐसी व्यवस्था कर दे । [इस भाँतिके लोकहितकारक कार्य करना बलिष्ठ वीरोंका कर्तव्यही है।]

४८८ वीर के लिए अजेय कुछ भी नहीं है । वीर जानकारी प्राप्त करके ज्ञानी बने और वह ऐसे कार्य शुरू कर दे कि, जिन्हें निष्पन्न करना अभी तक असम्भव हुआ हो या आगे चलकर कोई दूसरा कर लेगा, ऐसी संभावना न दीख पडती हो ।

टिप्पणी— [४८७] (१) सुगाः अपः= (सु-गाः) सुगमतापूर्वक मिल सके ऐसे जलप्रवाह, जिसमें सरलता से नहाती हो, ऐसा प्रवाह ।

[४८८] (१) अ नुत्त (नुद् प्रेरणे)= अप्रेरित, अजेय अन्-उत्त= (उद्-उन्द् क्लेदने) जो न भिगोया गया हो, जिसपर आक्रमण न हुआ हो । (२) विदानः (विद् ज्ञाने)= ज्ञानी । (३) प्र-वृद्ध= महान्, बलिष्ठ, अनुभवी ।

४८९ एकस्य चिन्मे विभ्वस्त्वोजो या नु दधृष्वान् कृणवै मनीषा।
अहं ह्युग्रो मरुतो विदानो यानि च्यवमिन्द्र इदीश एषाम् ॥१०॥ [३२५९]

(४८९) एकस्य । चित् । मे । विऽभु । अस्तु । ओजः । या । नु । दधृष्वान् । कृणवै । मनीषा ।
अहम् । हि । उग्रः । मरुतः । विदानः । यानि । च्यवम् । इन्द्रः । इत् । ईशे । एषाम् ॥१०॥

४९० अमन्दन्मा मरुतः स्तोमो अत्र यन्मे नरः श्रुत्यं ब्रह्म चक्र।
इन्द्राय वृष्णे सुमखाय मह्यं सख्ये सखायस्तन्वे तनूभिः ॥११॥ [३२६०]

(४९०) अमन्दत् । मा । मरुतः । स्तोमः । अत्र । यत् । मे । नरः । श्रुत्यम् । ब्रह्म । चक्र ।
इन्द्राय । वृष्णे । सुऽमखाय । मह्यम् । सख्ये । सखायः । तन्वे । तनूभिः ॥११॥

अन्वयः— ४८९ मे एकस्य चित् ओजः विभु अस्तु, या मनीषा दधृष्वान् कृणवै नु, (हे) मरुतः! अहं हि उग्रः विदानः यानि च्यवं एषां इन्द्रः चित् ईशे।

४९० (हे) नरः मरुतः! अत्र स्तोमः मा अमन्दत्, यत् मे श्रुत्यं ब्रह्म चक्र, वृष्णे सु-मखाय मह्यं इन्द्राय, (हे) सखायः! सख्ये तनूभिः तन्वे।

अर्थ— ४८९ (मे एकस्य चित्) मेरे अकेलेकाही (ओजः) सामर्थ्य (विभु अस्तु) प्रभावशाली बनता रहे। (या मनीषा) जो इच्छा मैं (दधृष्वान्) अन्तःकरणमें धारण कर लूँगा, वह (कृणवै नु) सचमुचही पूर्ण करूँगा। हे (मरुतः!) वीर मरुतो! (अहं हि) मैं तो (उग्रः) शूर तथा (विदानः) ज्ञानी हूँ और (यानि च्यवं) जिनके समीप मैं जाऊँगा, (एषां) उनपर (इन्द्रः इत्) इन्द्रकी हैसियतमेंही (ईशे) प्रभुत्व प्रस्थापित कर लूँगा।

४९० हे (नरः मरुतः!) नेता वीर मरुत्! (अत्र) यहाँ तुम्हारा (स्तोमः) यह स्तोत्र (मा अमन्दत्) मुझे हर्षित कर रहा है। (यत्) जो यह तुम (मे) मेरा (श्रुत्यं ब्रह्म) यशस्वी स्तोत्र (चक्र) बना चुके हो, वह (वृष्णे) बलवान तथा (सु-मखाय) उत्तम सत्कर्म करनेहारे (मह्यं इन्द्राय) मुझ इन्द्रके लिएही किया है। हे (सखायः!) मित्रो! तुम सचमुच (सख्ये) मेरी मित्रता के लिए अपने (तनूभिः) शरीरों से मेरे (तन्वे) शरीरका संरक्षण करते हो।

भावार्थ— ४८९ वीरके अन्तःकरणमें यह महत्त्वाकांक्षा सदैव जागृत एवं उत्कट रहे कि उसका बल प्रभावशाली हो। वह जिस आयोजनाकी रूपरेखा निर्धारित करे, उसे लगनके साथ पूर्ण कर ले। अपना ज्ञान तथा शौर्य वृद्धिंगत करके शत्रुपर धावा करे, उनपर प्रभुत्व तथा स्वामित्व स्थापित करना कर्तव्य बने।

४९० वीरोंके बारेमें गाये जानेवाले यशोवर्णन को सुनकर वीर सैनिक अतीव प्रसन्न हो उठते हैं। वीरों को वीरोंकी सहायता सदैव मिलती है।

टिप्पणी— [४८९] (१) विभु = (विभात्) प्रबल, प्रभुत्व, समर्थ, स्थिर।

४९१ एवेदेते प्रति मा रोचमाना अनेद्यः श्रव एषो दधानाः ।
संचक्ष्या मरुतश्चन्द्रवर्णा अच्छान्त मे छदयाथा च नूनम् ॥१२॥ [३२६१]

(४९१) एव । इत् । एते । प्रति । मा । रोचमानाः । अनेद्यः । श्रवः । आ । इषः । दधानाः ॥
सम्ऽचक्ष्य । मरुतः । चन्द्रऽवर्णाः । अच्छान्त । मे । छदयाथ । च । नूनम् ॥१२॥

४९२ को न्वत्र मरुतो मामहे वः प्र यातन सखीँरच्छा सखायः ।
मन्मानि चित्रा अपिवातयन्त एषां भूत नवेदा म ऋतानाम् ॥१३॥ [३२६२]

(४९२) कः । नु । अत्र । मरुतः । ममहे । वः । प्र । यातन । सखीन् । अच्छ । सखायः ।
मन्मानि । चित्राः । अपिऽवातयन्तः । एषाम् । भूत । नवेदाः । मे । ऋतानाम् ॥१३॥

अन्वयः— ४९१ (हे) चन्द्र--वर्णाः मरुतः ! एव इत् रोचमानाः अ-नेद्यः श्रवः इषः आ दधानाः एते मा प्रति सं-चक्ष्य मे नूनं अच्छान्त छदयाथ च ।

४९२ (हे) सखायः मरुतः ! अत्र कः नु वः ममहे ? सखीन् अच्छ प्र यातन, (हे) चित्राः ! मन्मानि अपि-वातयन्तः एषां मे ऋतानां नवेदाः भूत ।

अर्थ— ४९१ हे (चन्द्र-वर्णाः मरुतः !) चन्द्रमाके तुल्य वर्णवाले वीर मरुतो ! (एव इत्) सचमुचही (रोचमानाः) तेजस्वी, (अ-नेद्यः) अनिन्दनीय तथा (श्रवः इषः आ दधानाः) कीर्ति एवं अन्न धारण करनेहारे (एते) ये विख्यात वीर (मा प्रति) मेरी ओर (सं-चक्ष्य) भली भाँति निहारकर अपने यशोद्वारा (मे नूनं) मुझे सचमुच (अच्छान्त) हर्षित कर चुके, उसी भाँति अब भी (छदयाथ च) प्रसन्न करो।

४९२ हे (सखायः मरुतः !) प्यारे मित्र मरुत्-वीरो ! (अत्र) यहाँ (कः नु) भला कौन (वः) तुम्हारा (ममहे) सम्मान कर रहा है ? तुम (सखीन् अच्छ) अपने मित्रोंकी ओर (प्र यातन) चले जाओ। हे (चित्राः !) आश्चर्य उत्पन्न करनेवाले वीरो ! तुम (मन्मानि) मननीय धनों के समीप (अपि-वातयन्तः) वेगपूर्वक जाकर पहुँच जानेवाले-श्रेष्ठ धन प्राप्त करनेवाले और (एषां मे ऋतानां) इन मेरे [illegible] के (नवेदाः भूत) जाननेहारे बनो।

भावार्थ— ४९१ वीर मरुतों का वर्ण चन्द्रवत् आल्हाददायक है। ये तेजस्वी हैं और निर्दोष अन्नकी समृद्धि करते हुए [illegible] बन गये हैं। कभी कभी उनका पराक्रम इतना उज्ज्वल रहता है कि उसीके फलस्वरूप वे अपने सेनापति [illegible] अपने [illegible] देते हैं और इसीसे उसे आनंदित भी करते हैं।

४९२ वीरोंका गौरव एवं सम्मान चतुर्दिक् होता रहे। वे अपने मित्रोंके निकट जाकर उनकी रक्षा करें [illegible] कि जनता अचरजमें आ जाय और निर्दोष ढंगसे धन कमाकर सरल मार्गोंसेही गतिशील [illegible] भली प्रकार जान लें।

टिप्पणी— [४९१] १ चन्द्र-वर्णाः= चन्द्रमाके तुल्य वर्णवाले, (चन्द्र=सुवर्ण; सुवर्णके रंगसे युक्त) [मन्त्र [illegible] 'हिरण्य-वर्णान्' पद उपलब्ध है। ऋ० २।३०।१८ में 'हिरण्येभिः' पदसे मरुतोंके सुवर्णा[illegible] [illegible] ऐसा ज्ञात रहता है कि वीर-मरुत् [illegible] [illegible] पड़ते थे।] (२) अच्छान्त [illegible] [illegible] किया। ३ चक्ष् ([illegible]) = देखना, बोलना।

[४९२] १ ऋत = [illegible], सत्य, यज्ञ, पवित्र कार्य, प्रिय भाषण, सत्कर्म। (२) नवेदस [illegible] [illegible] [[illegible] तथा ऋ० १०।३१।३ देखिए।]

४९३ आ यद् दुवस्याद् दुवसे न कारु॒रस्माञ्चक्रे मान्यस्यं मेधा ।
ओ षु वर्त्त मरुतो विप्रमच्छे॒मा ब्रह्माणि जरिता वो अर्चत् ॥१४॥ [३२६३]

(४९३) आ । यत् । दुवस्यात् । दुवसे । न । कारुः । अस्मान् । चक्रे । मान्यस्यं । मेधा ।
ओ इति । सु । वर्त्त । मरुतः । विप्रम् । अच्छं । इमा । ब्रह्माणि । जरिता । वः ।
अर्चत् ॥१४॥

(ऋ० १।१७१।१-६) [इन्द्रदेवता मंत्र ३२६५-६८]

४९४ स्तुतासों नो मरुतों मृळयन्तू॒त स्तुतो मघवा शंभविष्ठः ।
ऊर्ध्वा नः सन्तु कोम्या वना॒न्यहानि विश्वा मरुतो जिगीषा ॥३॥ [३२६५]

(४९४) स्तुतासः । नः । मरुतः । मृळयन्तु । उत । स्तुतः । मघऽवा । शम्ऽभविष्ठः ।
ऊर्ध्वा । नः । सन्तु । कोम्या । वनानि । अहानि । विश्वा । मरुतः । जिगीषा
॥३॥

अन्वयः— ४९३ (हे) मरुतः ! दुवस्यात् मान्यस्य कारुः मेधा न दुवसे अस्मान् आ चक्रे, विप्रं अच्छ ओ सु वर्त्त, जरिता वः इमा ब्रह्माणि अर्चत् ।

४९४ स्तुतासः मरुतः नः मृळयन्तु, उत स्तुतः शं-भविष्ठः मघवा, (हे) मरुतः ! नः अहानि कोम्या वनानि सन्तु जिगीषा ऊर्ध्वा ।

अर्थ— ४९३ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! तुम (दुवस्यात्) पूजनीय या संमाननीय हो, अतः (मान्यस्य) मान्य कवि की (कारुः मेधा) कुशल बुद्धि (न) अब तुम्हारा (दुवसे) सत्कार करने के लिए (अस्मान्) हमें (आ चक्रे) सभी प्रकारसे प्रेरणा करती है, इसलिए तुम इस (विप्रं अच्छ) ज्ञानी की ओर (ओ सु वर्त्त) प्रवृत्त हो जाओ-आओ । (जरिता) यह स्तोता-उपासक (वः इमा ब्रह्माणि) तुम्हारे इन स्तोत्रों-काव्यों-का (अर्चत्) गायन करता आ रहा है ।

४९४ (स्तुतासः मरुतः) सराहना करनेपर ये वीर मरुत् (नः मृळयन्तु) हमें सुख दें; (उत) और (स्तुतः) प्रशंसा करनेपर (शं-भविष्ठः) आनन्द देनेहारा (मघवा) इन्द्र भी हमें सुख दे । हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (नः विश्वा अहानि) हमारे सभी दिन (कोम्या) काम्य, (वनानि) वनराजि के तुल्य आनन्ददायक (सन्तु) हों और हमारी (जिगीषा) विजयकी लालसा (ऊर्ध्वा) उच्च कोटिकी बनी रहे ।

भावार्थ— ४९३ ये वीर सम्माननीय हैं, इसलिए कवियोंकी बुद्धि उनके समुचित वर्णन के लिए सचेष्ट रहा करती है । वीरभी ऐसे कवियोंका आदर करें और उनके काव्योंका श्रवण करें ।

४९४ वीर मरुत् और इन्द्र हमें सुखी बना दें । हमारा प्रत्येक दिन उज्ज्वल, रमणीय तथा सत्कार्य में लगा हुआ होनेके कारण आनन्ददायक हो और हमारी विजयेच्छा अत्यन्त उच्च दर्जेकी हो जाय ।

टिप्पणी— [४९३] (१) [दुवस्यात् (हतोः)= हेत्वर्थे पञ्चमी ।] दुवस्यः= माननीय, पूजनीय । (२) जरिता (जॄ जरते= बुलाना, स्तुति करना)= स्तुति करनेहारा, स्तोता, उपासक ।

[४९४] (१) कोम्य= कमनीय, स्पृहणीय, रमणीय, उज्ज्वल (Polished, lovely) । (२) वन्= सम्मान देना, इच्छा करना, चाहना । वन= इष्ट, इच्छा करनेके योग्य, वन ।

४९५ अस्मादहं तविषादीषमाण इन्द्राद्‍ भिया मरुतो रेजमानः ।
युष्मभ्यं हव्या निशितान्यासन् तान्यारे चकृमा मृळता नः ॥४॥ [३२६६]
(४९५) अस्मात् । अहम् । तविषात् । ईषमाणः । इन्द्रात् । भिया । मरुतः । रेजमानः ।
युष्मभ्यम् । हव्या । निऽशितानि । आसन् । तानि । आरे । चकृम । मृळत । नः ।
॥४॥

४९६ येन मानासश्चितयन्त उस्रा व्युष्टिषु शवसा शश्वतीनाम् ।
स नो मरुद्भिर्वृषभ श्रवो धा उग्र उग्रेभिः स्थविरः सहोदाः ॥५॥ [३२६७]
(४९६) येन । मानासः । चितयन्ते । उस्राः । विऽउष्टिषु । शवसा । शश्वतीनाम् ।
सः । नः । मरुत्ऽभिः । वृषभ । श्रवः । धाः । उग्रः । उग्रेभिः । स्थविरः । सहःऽ
दाः ॥५॥

अन्वयः- ४९५ (हे) मरुतः ! अस्मात् तविषात् इन्द्रात् भिया अहं ईषमाणः रेजमानः, युष्मभ्यं हव्या नि-शितानि आसन्, तानि आरे चकृम, नः मृळत ।

४९६ मानासः उस्राः येन शवसा शश्वतीनां व्युष्टिषु चितयन्ते, उग्रेभिः मरुद्भिः (हे) वृषभ उग्र ! स्थविरः सहो-दाः सः नः श्रवः धाः ।

अर्थ— ४९५ हे (मरुतः !) वीर मरुतो ! (अस्मात् तविषात् इन्द्रात्) इस बलिष्ठ इन्द्रके (भिया) भयसे (अहं) मैं भयभीत होकर (ईषमाणः) दौडने तथा (रेजमानः) कांपने लगा हूँ। (युष्मभ्यं) तुम्हारे लिए (हव्या) हविष्यान्न (नि-शितानि आसन्) भली भाँति तैयार कर रखे थे, पर (तानि) वे उसके भयसे (आरे) दूर (चकृम) कर दिये, वे उसे दिये जा चुके हैं, इसलिए अब (नः मृळत) हमें क्षमा करते हुए सुखी बनाओ।

४९६ (मानासः) माननीय (उस्राः) सूर्यकिरण (येन शवसा) जिस सामर्थ्य से (शश्वतीनां व्युष्टिषु) शाश्वतिक उषःकालों में जनताको (चितयन्ते) जागृत करते हैं, उसी सामर्थ्य से युक्त और (उग्रेभिः) शूर (मरुद्भिः) वीर मरुतों के साथ विद्यमान हे (वृषभ उग्र !) बलवान तथा शूर वीरश्रेष्ठ इन्द्र ! (स्थविरः) वयोवृद्ध तथा (सहो-दाः) बल देनेवाला (सः) वह तू (नः) हमें (श्रवः धाः) कीर्ति तथा अन्न प्रदान कर।

भावार्थ— ४९५ वीरोंका पराक्रम तथा प्रभाव इस भाँति हो कि, परिचित लोगभी उसे निहारकर सहम जाएँ; फिर शत्रु यदि डर जाएँ तो उसमें क्या आश्चर्य ?

४९६ इन वीरोंकी सहायता से हमें अन्न तथा यश मिले।

टिप्पणी— [४९५] (१) नि-शित (शो तनूकरणे)= तीक्ष्ण किया हुआ, तेज (हथियार)। (२) ईष् (गति-हिंसादर्शनेषु)= जाना, वध करना, देखना।

[४९६] (१) मानः= आदर, सम्मान, परिमाण। (२) चित्= चेतना देना, जागृत करना, देखना, निहारना, जानना। (३) उस्र (वस् निवासे)= बैल, गौ, किरण। (४) व्युष्टि=प्रभात, वैभवशालिता, स्तुति, देखना।

४९७ त्वं पा॑हीन्द्र॒ सही॑यसो॒ नॄन् भवा॑ म॒रुद्भि॒रव॑यातहेळाः ।
सु॒प्रके॒तेभि॑ः सास॒हिर्दधा॑नो वि॒द्यामे॒षं वृ॒जनं॑ जी॒रदा॑नुम् ॥६॥ [२२६८]
(४९७) त्वम् । पा॒हि । इ॒न्द्र॒ । सही॑यसः । नॄन् । भव॑ । म॒रुत्ऽभि॑ः । अव॑यातऽहेळाः ।
सु॒ऽप्र॒के॒तेभि॑ः । स॒स॒हिः । द॒धा॑नः । वि॒द्याम॑ । इ॒षम् । वृ॒जन॑म् । जी॒रऽदा॑नुम् ॥६॥

इन्द्रामरुतौ (इन्द्रदेवता मंत्र २२३९)।
अंगिरसपुत्र तिरश्ची या मरुत्पुत्र द्युतान ऋषि। (ऋ० ८।९६।१४)

४९८ द्र॒प्सम॑पश्यं॒ विषु॑णे॒ चर॑न्त मुपह्व॒रे न॒द्यो॑ अंशु॒मत्या॑ः ।
न॒भो॒ न कृ॒ष्णम॑वत॒स्थिवां॑स॒ मिष्या॑मि वो वृषणो॒ युध्य॑ता॒जौ ॥१४॥ [२२६९]
(४९८) द्र॒प्सम् । अ॒प॒श्य॒म् । विषु॑णे । चर॑न्तम् । उ॒प॒ऽह्व॒रे । न॒द्य॑ः । अं॒शु॒ऽमत्या॑ः ।
नभ॑ः । न । कृ॒ष्णम् । अ॒व॒त॒स्थि॒ऽवांस॑म् । इष्या॑मि । व॒ः । वृ॒ष॒णः । युध्य॑त । आ॒जौ ॥१४॥

अन्वयः— ४९७ (हे) इन्द्र ! त्वं सहीयसः नॄन् पाहि, मरुद्भिः अवयात-हेळाः भव, सु-प्रकेतेभिः ससहिः दधानः. (वयं) इषं वृजनं जीर-दानुं विद्याम।

४९८ अंशुमत्याः नद्यः उपह्वरे विषुणे द्रप्सं चरन्तं, नभः न कृष्णं, अपश्यम्, अवतस्थिवांसं इष्यामि, (हे) वृषणः ! वः आजौ युध्यत।

अर्थ— ४९७ हे (इन्द्र !) इन्द्र ! (त्वं) तू (सहीयसः नॄन्) शत्रुओंका पराभव करने का बल प्राप्त करने वाले हमारे सदृश लोगों की (पाहि) रक्षा कर; (मरुद्भिः) वीर मरुतों के साथ हमपर (अवयात-हेळाः) क्रोध न करनेवाला बन और (सु-प्रकेतेभिः) अत्यन्त ज्ञानी वीरों के साथ (ससहिः) शत्रुदलके परास्त करनेकी सामर्थ्य (दधानः) धारण करके हमें (इषं) अन्न, (वृजनं) बल तथा (जीर-दानुं : शीघ्र विजयप्राप्ति (विद्याम) प्राप्त हो, ऐसा कर।

४९८ (अंशुमत्याः नद्यः) अंशुमती नामक नदीके समीप (उपह्वरे विषुणे) एकान्त में विद्यमान बीहड स्थानमें (द्रप्सं चरन्तं) शीघ्र गति से घूमनेवाले (नभः न कृष्णं) अँधेरे की नाईं बहुतही काले-कलूटे शत्रुको (अपश्यं) मैं देख चुका। ऐसी उस सुगुप्त जगह (अवतस्थिवांसं) रहनेवाले उस दुश्मन को (इष्यामि) मैं ढूंढ निकालता हूं। (हे वृषणः !) बलवान वीरो ! (वः) तुम उस शत्रुके साथ (आजौ) युद्धभूमि में (युध्यत) लडते रहो।

भावार्थ— ४९७ परमपिता परमात्मा उन लोगोंका परिपालन करता है जो अपनेमें शत्रुदलको परास्त करनेवाले बल का संवर्धन करते हैं। इस कार्यमें ज्ञानी वीरोंकी सहायता उसे बार बार होती है। उनके प्रचण्ड बलके सहारे समूची प्रजा अन्नसमृद्धि तथा बल एवं विजयका लाभ प्राप्त करती है।

४९८ प्रथम शत्रुके निवासस्थान तथा आश्रय आदिकी भली भाँति जानकारी उपलब्ध करनी चाहिए और पश्चात्ही उसपर धावा करना चाहिए।

टिप्पणी— [४९७] (१) प्रकेत (कित् ज्ञाने रोगापनयने च)=ज्ञान, बुद्धि, रोग। सु-प्रकेत= दर्शनीय, ज्ञानी, रोग दूर हटानेवाला। (२) जीर-दानु= (मरुद्देवता मन्त्र १०२ देखिए।)

[४९८] (१) द्रप्स (द्रु गतौ=दौडना, आक्रमण करना)=दौडनेवाला, आक्रमणकर्ता, सोमबिंदु, सोमरस। (२) विषुण= विभिन्न, परिवर्तनशील, तरह तरह का (३) उपह्वर= एकान्त स्थान, ऊबडखाबड जगह

मरुतोंके मंत्रोंके ऋषि

और उनकी मंत्रसंख्या ।

	मंत्र-क्रमांक		कुल मंत्र
१ श्यावाश्व आत्रेयः	२१७-३१७-	१०१	
	४२९-	१	
	४२९-४५६-	८=	११०
२ अगस्त्यो मैत्रावरुणिः	१५८-१९७-	४०	
	४८०-४९७-	१८=	५८
३ मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः	३४५-३९४-		५०
४ कण्वो घौरः	६- ४५-		४०
५ पुनर्वत्सः काण्वः	४६- ८१-		३६
६ गोतमो राहूगणः	१२३- ५६-	३४	
	४२८-	१=	३५
७ सोभरिः काण्वः	८२-१०७-	२६	
	४७४-	१=	२७
८ गृत्समदः शौनकः	१९८ २१३-		१६
९ स्यूमरश्मिर्भार्गवः	४०७-४२२-		१६
१० नोधा गौतमः	१०८-१२२-		१५
११ मेधातिथिः काण्वः	५-	१	
	४६५-४७३-	९	
	४७७-४७९-	३=	१३
१२ बिन्दुः पूतदक्षो वा आङ्गिरसः	३९५-४०६-		१२
१३ भरद्वाजो बार्हस्पत्यः	३३४-३४४-		११

	मंत्र-क्रमांक		कुल मंत्र
१४ अथर्वा	४३४-४३६-	३	
	४५७-४६४-	८=	११
१५ एवयामरुदात्रेयः	३१८-३२६-		९
१६ मृगारः	४४०-४४६-		७
१७ शंयुर्बार्हस्पत्यः	३२७-३३३-		७
१८ मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः	१— ४-	४	
	४७१ ४७६-	[illegible]=	[illegible]
१९ ब्रह्मा	४३०-४३३-		४
२० गाथिनो विश्वामित्रः	२१४-२१६-	३	
	४२४-	१=	४
२१ सप्तर्षय (ऋषयः)	४२५-४२७-		३
। (१) भरद्वाजः, (२) कश्यपः, (३) गोतमः, (४) अत्रिः, (५) विश्वामित्रः, (६) जमदग्निः, (७) वसिष्ठः ।			
२२ शन्तातिः	४३७ ४३९-		३
२३ परुच्छेपो दैवोदासिः	१५७-		१
२४ प्रजापतिः	४९३-		१
२५ अङ्गिराः	४४७-		१
२६ वसुश्रुत आत्रेयः	४४८-		१
२७ आङ्गिरस स्तरथी, सुतनो वा मारुतः	४९८-		१
			४९८

मरुतोंका संदर्भ ।

[illegible], ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषदादि ग्रंथोंमें आये हुए, परंतु मरुद्देवताके मंत्रसंग्रहमें संगृहीत न [illegible] [illegible] संदर्भ बतलानेवाले वाक्यांश इस तरह हैं—

ऋग्वेदसंहिता ।

[illegible]

मंडल सू० मं०

[illegible] मरुतः [illegible] ([illegible])
[illegible] मरुत्वः [illegible] । ([illegible])
[illegible] मरुतो [illegible] । ''
[illegible] मरुत्वो [illegible] । ''
[illegible] मरुत्वो [illegible] ([illegible])
[illegible] मरुत्वः [illegible]
[illegible]
[illegible] मरुत्वः [illegible]

५।३। ९ मरुतः अनु अमदन । (इन्द्रः)
१५ मरुतः आओ अर्चन । ''
८०। ४ वृत्रा मरुत्वतीरव । ''
११ मरुत्वाँ वृषं अर्चत । ''
८५। ७ मरुतः पृश्निमातरः । ([illegible])
९०। ४ मरुतः [illegible] । ''
९४।१२ मरुतां [illegible] । (अग्निः)
१००।१-१५ मरुत्वान् नो [illegible] (इन्द्रः)

१०११।६–७ मरुत्वन्तं सख्याय हवामहे। (इन्द्रः)
८ मरुत्वः परमे सधस्थे। ”
९ मरुद्भिः मादयस्व। ”
११ मरुतस्ते अस्य वृजनस्य गोपाः। ”
१०७। २ मरुतो मरुद्भिः शर्म यंसत्। (विश्वे देवाः)
१११। ४ मरुतः सोमपीतये हुवे। (ऋभवः)
११४। ६ मरुतां उच्यते वचः। (रुद्रः)
९ मरुतां सुम्नं रास्व। ”
११ मरुत्वान् रुद्रः नः हवं शृणोतु ”
१२२। १ रोदस्योः मरुतोऽस्तोषि। (विश्वे देवाः)
१२८। ५ मरुतां न भोजया। (अग्निः)
१३४। ४ मरुतः वक्षणाभ्यः अजनयः। (वायुः)
१३६। ७ मरुद्भिः स्ववशसः मंसीमहि। (लिंगोक्ता)
१४२। ९ मरुत्सु भारती। (तिस्रो देव्यः)
१२ मरुत्वते इन्द्राय हव्यं कर्तन। (स्वाहाकृतयः)
१४३। ५ मरुतामिव स्वनः। (अग्निः)
१६१।१४ मरुतः दिवा यान्ति। (ऋभवः)
१६२। १ मरुतः परिख्यन्। (अश्वः)
१६५।१५ मरुतः एष वः स्तोमः। (मरुत्वान् इन्द्रः)
१६९। १ मरुतां चिकित्वान्…इन्द्रः। (इन्द्रः)
२ मरुतां पृत्सुतिर्हासमाना। ”
३ अभ्वं मरुतो जुनन्ति। ”
५ मरुतो नो मृळयन्तु। ”
७ मरुतां आयतां उपब्दिः शृण्वे। ”
८ रदा मरुद्भिः शुरुधः। ”
१७०। २ मरुतो भ्रातरः तव। ”
५ इन्द्र! त्वं मरुद्भिः संवदस्व। ”
१७३।१२ मरुतः! गीः वन्दते। ”
१८२। २ धिष्ण्या मरुत्तमा। (अश्विनौ)
१८६। ८ मरुतो वृद्धसेनाः। (विश्वे देवाः)
२। ३। ३ मरुतां शर्धं आ वह। (इळः)
३०। ८ मरुत्वती शत्रून् जेषि। (सरस्वती)
३३। १ मरुतां सुम्नं एतु। (रुद्रः)
६ मरुत्वान् रुद्रः मा उग्रो ममन्द। ”
१३ मरुतः! या वः भेषजा। ”
४१।१५ मरुद्गणा! मम हवं श्रुत। (विश्वे देवाः)
३। ४। ६ मरुत्वाँ इन्द्रः। (उषासनक्ता)
१३। ६ मरुद्वृधः अग्ने नः शं शोच। (अग्निः)
१४। ४ मरुतः सुम्नमर्चन्। ”
१६। २ मरुतः ऊर्ध्वं सचन्त। (अग्निः)

२९।१५ मरुतामिव प्रयाः। (अग्निः)
३२। ३ इन्द्र! मरुतः ते ओजः अर्चन्ति। ”
४ शर्धो मरुतः य आसन्। ”
३५। ७ मरुत्वते तुभ्यं हवींषि रात। (इन्द्रः)
९ इन्द्र! मरुतः आ भज। ”
४७। १ मरुत्वान् इन्द्रः। ”
२ इन्द्र! मरुद्भिः सोमं पिब। ”
३ इन्द्र! मरुतः आ भज। ”
४ इन्द्र! मरुद्भिः सोमं पिब। ”
५ मरुत्वन्तं इन्द्रं हुवेम। ”
५०। १ मरुत्वान् इन्द्रः। ”
५१। ७ मरुत्व इह सोमं पाहि। ”
८ मरुद्भिः सोमं पाहि। ”
९ मरुतः अमन्दन्। ”
५२ ७ मरुद्भिः सोमं पिब। ”
५४।१३ मरुतः ऋष्टिमन्तः। (विश्वे देवाः)
२० मरुतः शर्म यच्छन्तु। ”
६२। २ मरुद्भिः मे हवं शृणुतं। (इन्द्रावरुणौ)
३ अस्मे रयिः मरुतः। ”
४। १। ३ विश्वभानुषु मरुत्सु विदः। (अग्निवरुणौ)
२। ४ मरुतः अग्ने वह। (अग्निः)
३। ८ कथा मरुतां शर्धाय। ”
२१। ३ मरुत्वान् इन्द्रः आ यातु। (इन्द्रः)
२६। ४ मरुतो विरस्तु। (श्येनः)
३४। ७ मरुद्भिः पाहि। (ऋभवः)
११ मरुद्भिः सं मदथ। ”
३९। ४ मरुतां भद्रं नाम अमन्महि। (दधिक्राः)
५५। ५ मरुतां अवांसि। (विश्वे देवाः)
५। ५।११ मरुद्भ्यः स्वाहा। (स्वाहाकृतयः)
२६। ९ मरुतः सीदन्तु (विश्वे देवाः)
२९। १ मरुतः त्वा अर्चन्ति। (इन्द्रः)
२ मरुतः इन्द्रं आर्चन्। ”
३ मरुतो मे सुषुतस्य पेयाः। ”
६ मरुतः इन्द्रं अर्चन्ति। ”
३०। ६ मरुतः अर्कं अर्चन्ति ”
८ मरुद्भ्यः रोदसी चक्रिया इव। ”
३१।१० मरुतः ते तविषीं अवर्धन्। ”
३६। ६ श्रुतरथाय मरुतां दुवोया।
४१। ५ मरुतः रायः दधीत। (विश्वे देवाः)
१६ मरुतो अच्छोक्तौ ” ”
४३।१० मरुतो वक्षि जातवेदः। ” ”

४५। ४ **मरुतो** यजन्ति । (विश्वे देवाः)
४६। ३ **मरुतः** हुवे । " "
६०। १ **मरुतां** स्तोमं ऋध्याम् । (मरुतः, अग्नामरुतौ वा)
२ **मरुतो** रथेषु तस्थुः । "
३ **मरुतः** यत् क्रीळथ । "
५ **मरुद्भ्यः** सुदुघा पृश्निः । "
६ **मरुतः** दिवि ष्ठ । "
७ **मरुतो** दिवो वहध्वे । "
८ अग्ने ! **मरुद्भिः** सोमं पिब ।"
६३। ५ **मरुतः** रथं युञ्जते । (मित्रावरुणौ)
६ **मरुतः** सुमायया वसत । "
८३। ६ **मरुतः** ! वृष्टिं ररीध्वं । (पर्जन्यः)
६। ३। ८ शर्धो वा यो **मरुतां** ततक्ष । (अग्निः)
११। १ अग्ने ! शर्धो **मरुतां** न प्रयुक्ति । "
१७।११ **मरुतः** यं वर्धान् । (इन्द्रः)
२१। ९ **मरुतः** कृष्वावसे नो अद्य । (विश्वे देवाः)
४०। ५ **मरुद्भिः** पाहि । (इन्द्रः)
४७। ५ यामस्तभ्नाद् वृषभो **मरुत्वान्** । (सोमः)
४७।२८ **मरुतां** अनीकं । (रथः)
४९।११ **मरुतः** आ गन्त । (विश्वे देवाः)
५०। ४ **मरुतो** अद्याम देवान् । " "
५ श्रुत्वा हवं **मरुतो** यद्ध याथ । " "
५२। २ **मरुतः** ! यः नः अतिमन्यते । " "
११ **मरुद्गणः** स्तोत्रं जुषन्त । " "
७। ०। ५ **मरुतः** यक्षि । (अग्निः)
१८।२५ **मरुतः** इमं सश्चत । (इन्द्रः)
३१। ८ त्वा **मरुत्वती** परिष्टुवत् । "
३२।१० यस्य **मरुतः** अविता (रः) । "
३४।२४ अनु विश्वे **मरुतो** जिहीत । (विश्वे देवाः)
२५ शर्मन्त्स्याम **मरुतां** उपस्थे । " "
३५। ९ शं नो भवन्तु **मरुतः** । " "
३६। ७ **मरुतः** नो अवन्तु । " "
९ **मरुतः** ! अयं वः श्लोकः । " "
३९। ५ **मरुतो** मादयन्तां । " "
४०। ३ मीळ्हुष्माँ अस्तु **मरुतः** । " "
[illegible] ५ **मरुतः** नु वरिवं कृणोत नः । " "
५१। ३ **मरुतश्च** विश्वे नः पात । (आदित्याः)
८२। ५ **मरुद्भिरुग्रः** शुभमन्य ईयते । (इन्द्रावरुणौ)
९३। ८ **मरुतः** परि ख्यन् । (इन्द्राग्नी)
९६। २ सा नो बोध्यवित्री **मरुत्सखा** । (सरस्वती)

८। ३।२१ यं मे दुरिन्द्रो **मरुतः** । (कौरयाणः पाकस्थामा)
१२।१६ **मरुत्सु** मन्दसे । (इन्द्रः)
१३।२८ **मरुत्वतीर्विशो** अभि प्रयः । "
१८।२० बृहद्वरूथं **मरुतां** । (आदित्याः)
२१ **मरुतो** यन्त नः छर्दिः । "
२५।१० **मरुतः** उरुष्यन्तु । (विश्वे देवाः)
१४ **तन्मरुतः** (वृणीमहे) । (मित्रावरुणौ)
२७। १ ऋचा यामि **मरुतः** । (विश्वे देवाः) [काठ०१०।४१]
३ **मरुत्सु** विश्वभानुषु । " "
५ ऋचा गिरा **मरुतः** । " "
६ अभि प्रिया **मरुतः** । " "
८ आ प्र यात **मरुतः** । " "
३५। ३ **मरुद्भिः** सचा भुवा । (अश्विनौ)
१३ **मरुत्वन्ता** जरितुर्गच्छता हवं । "
३६।१-६ **मरुत्वाँ** इन्द्र सत्पते । (इन्द्रः)
४१। १ **मरुद्भ्यो** अर्च । (वरुणः)
४६। ४ यं **मरुतः** पान्ति । (इन्द्रः)
१७ **मरुतां** इयक्षसि । "
५४। ३ शृण्वन्तु **मरुतो** हवं । (विश्वे देवाः)
६३।१० स्याम **मरुतो** वृधे । (इन्द्रः)
७६। १ **मरुत्वन्तं** न वृञ्जसे । (इन्द्रः)
२-३ इन्द्रो **मरुत्सखा** । "
४ **मरुत्वता** इन्द्रेण जितं । "
५-६ **मरुत्वन्तं** इन्द्रं हवामहे । "
७ **मरुत्वाँ** इन्द्रः । "
८ **मरुत्वते** हूयन्ते । "
९ **मरुत्सखा** इन्द्र पिब । "
८३। ७ इता **मरुतो** अश्विना । (विश्वे देवाः)
८९। १ **मरुतः** ! इन्द्राय गायत । (इन्द्रः)
२ **मरुद्गण** ! देवासो सख्याय येमिरे । "
३ **मरुतो** ब्रह्मार्चत । "
९६। ७ **मरुद्भिरिन्द्र** सख्यं ते अस्तु । "
८ **मरुतो** वावृधानाः । "
९ तिग्ममायुधं **मरुतामनीकं** । "
९। २५। १ **मरुद्भ्यो** वायवे मदः । (पवमानः सोमः)
३३। ३ **मरुद्भ्यः** सोमा अर्षन्ति । " "
३४। २ **मरुद्भ्यः** सोमो अर्षति । " "
५१। ३ **मरुतः** मधो व्यंजने । " "
६१।१२ **मरुद्भ्यः** परि स्रव । " "
६४.२२ **मरुत्वते** इन्द्राय पवस्व । "

२४ **मरुतः** पवमानस्य पिबन्ति । (पवमानः सोमः)
९५।१० **मरुत्वते** पवस्व । ,, ,,
२० **मरुद्भ्यः** सोमो अर्षति । ,, ,,
९६।२६ हरिश्चन्द्रो **मरुद्गणः** । ,, ,,
७०। ६ **मरुतामिव** स्वनः नानदेति । ,, ,,
८१। ४ **मरुतः** नः आ गच्छन्तु । ,, ,,
९६।१७ **मरुतः** वह्निं शुम्भन्ति । ,, ,,
१०७।१७ **मरुत्वते** सोमः सुतः । ,, ,,
२५ **मरुत्वन्तो** मत्सराः । ,, ,,
१०८।१४ यस्य **मरुतः** पिबात् । ,, ,,
। १३। ५ **मरुत्वते** सप्त क्षरन्ति । (हविर्धाने)
३६। १ **मरुतः** हुवे । (विश्वे देवाः)
४ **मरुतां** शर्म अशीमहि । ,, ,,
३७। ६ **मरुतां** हवं शृण्वन्तु । (सूर्यः)
५२। २ **मरुतो** मा जुनन्ति । (विश्वे देवाः)
६३। ९ **मरुतः** स्वस्तये हवामहे । ,, ,,
१४ **मरुतो** यं अवथ । ,, ,,
१५ **मरुतो** राये दधातन । ,, ,,
६४।११ **मरुतां** भद्रा उपस्तुतिः । ,, ,,
१२ **मरुतः** मेध्यिं अददात । ,, ,,
१३ **मरुतो** बुबोधथ । ,, ,,
६५। १ **मरुतः** महिमानमीरयन् । ,, ,,
६६। २ **मरुद्गणे** मन्म धीमहि । ,, ,,
४ **मरुतः** अवसे हवामहे । ,, ,,
७०।११ अग्ने ! अन्तरिक्षात् **मरुतः** आ वह । (स्वाहाकृतयः)
७३। १ **मरुतः** इन्द्रं अवर्धन् । (इन्द्रः)
७५। ५ आर्जीकीये **मरुद्वृधे** । (नद्यः)
७६। १ **मरुतो** रोदसी अनक्तन । (ग्रावाणः)
८४। १ तृषिता **मरुत्वः** । (मन्युः)
८६। ९ **मरुत्सखा** इन्द्रः । (इन्द्रः)
९२। ६ **मरुतो** विश्वकृष्टयः । (विश्वे देवाः)
११ **मरुतो** विष्णुरहिरे । ,, ,,
९३। ४ **मरुतः** । (विश्वे देवाः)
१०३। ८ **मरुतो** यन्तु अग्रं । (इन्द्रः)
९ **मरुतां** शर्धः उदस्थात् । ,,
११३। ३ **मरुतः** इन्द्रियं अवर्धन् । ,,
१२२। ५ **मरुतः** त्वां मर्जयन् । (अग्निः)
१२६। ५ **मरुद्भिः** रुद्रं हुवेम । (विश्वे देवाः)
१२८। २ **मरुतः** विहवे सन्तु । ,, ,,
१३७। ५ त्रायतां **मरुतां** गणः ,, ,,

१५७। ३ **मरुद्भिः** इन्द्रः अस्माकं अविता भूतु । (विश्वे देवाः)

(२) सामवेदसंहिता ।

४४५ अर्चन्त्यर्कं **मरुतः** स्वर्काः । (इन्द्रः)

(३) अथर्ववेदसंहिता ।

कां० सू० मन्त्र.
२। १२। ६ अतीव यो **मरुतो** मन्यते नो ब्रह्म । (मरुतः)
२९। ४ **मरुद्भिरुग्रः** प्रहितो न आगन् । (द्यावापृथिवी, विश्वे देवाः, मरुतः, आपः ।)
५ विश्वे देवा **मरुत** ऊर्जमापः [धत्त] ”
३। ३। १ युञ्जन्तु त्वा **मरुतो** विश्ववेदसः (अग्निः)
४। ४ विश्वे देवा **मरुतस्त्वा** ह्वयन्तु । (अश्विनौ)
१२। ४ उक्षन्तूद्ना **मरुतो** घृतेन । (वास्तोष्पतिः)
१७। ९ विश्वैर्देवैरनुमता **मरुद्भिः** । (सीता)
१९। ६ देवा इन्द्रज्येष्ठा **मरुतो** यन्तु सेनया । (विश्वे-देवाः, चन्द्रमाः, इन्द्रः ।)
४। ११। ४ पर्जन्यो धारा **मरुत** ऊधो अस्य (अनड्वान्)
१५।१५ वर्ष वनुध्वं पितरो मरुतां मन इच्छत । (पितरः)
५। ३। ३ इन्द्रवन्तो **मरुतो** मम विहवे सन्तु । (देवाः)
२४।१२ **मरुतां** पिता पशूनामधिपतिः । (मरुतां पिता)
६। ३। १ पातं न इन्द्रापूषणादितिः पान्तु **मरुतः** । (इन्द्रा-पूषणौ, अदितिः, मरुतः इत्यादयः ।)
४। २ अदितिः पान्तु **मरुतः** । (अदितिः, मरुतः इत्यादयः ।)
३०। २ कीनाशा आसन् **मरुतः** सुदानवः । (शमी)
४७। २ विश्वे देवा **मरुत** इन्द्रो अस्मान् न जह्युः । (विश्वे देवाः)
७४। ३ **मरुद्भिरुग्रा** अहृणीयमानाः । (सांमनस्यम्)
९२। १ युञ्जन्तु त्वा **मरुतो** विश्ववेदसः । (इन्द्रः)
९३। ३ विश्वे देवा **मरुतो** विश्ववेदसः वधात् नो त्रायध्वम् । (विश्वे देवाः, मरुतः ।)
१०४। ३ इन्द्रो **मरुत्वानादानममित्रेभ्यः** कृणोतु नः । (इन्द्राग्नी, सोम इन्द्रश्च ।)
१२२। ५ इन्द्रो **मरुत्वान्** स ददातु तन्मे । (विश्वकर्मा)
१२५। ३ इन्द्रस्यौजो **मरुतामनीकम्** । (वनस्पतिः)
१३०। ४ उन्मादयत **मरुत** उदन्तरिक्ष मादय । (स्मरः)
७। २५। १ विश्वे देवा **मरुतो** यत् स्वर्काः [अखनन्] । (सविता)
३४। २ सं मा सिञ्चन्तु **मरुतः** [प्रजया धनेन] । (दीर्घायुः)
५६। ३ प्रदक्षिणं **मरुतां** स्तोममृध्याम् । (इन्द्रः)

५९। २ सप्त क्षरन्ति शिशवे मरुत्वते। (सरस्वती)
१०३। १ समिन्द्रेण मनुत सं मरुद्भिः। (इन्द्रः,विश्वे देवाः)
८। १। २ उदेनं मरुतो देवा उदिन्द्राग्नी स्वस्तये। (आयुः)
९। १। ३ मरुतामुग्रा नप्तिः। (मृत्यु, अश्विनौ)
१।१० ,, ,, ,, ,, ,,
४। ८ अश्विनोरंसौ मरुतामियं ककुत्। (ऋषभः)
१२। ३ [द्वि। पर्यायः ६] त्रिवृजिह्वा मरुतो दन्ताः। (गौः)
१०। ९। ८ उत्तरं त्वा मरुतस्त्वा गोपायन्ति। (शतौदना)
१० आदित्या त्वा मरुतो दिशः आप्नोति। (,,)
११। १।२७ इन्द्रो मरुत्वान्त्स ददादिदं मे। (ओदनः)
३३ अग्रिमं गोपाः मरुतस्तु सर्वे।
९(११)।२५ ईशां वो मरुतो देव आदित्यो ब्रह्मणस्पतिः। (अर्बुदिः)
१२। ३।२४ इन्द्रो रक्षतु दक्षिणतो मरुत्वान्। (स्वर्गः,ओदनः अग्निः)
१३। ३।२३ किमभ्यार्चन्मरुतः पृश्निमातरः। (रोहितादित्यौ)
४। ८ तस्यैष मारुतो गणः स एति शिक्याकृतः। (रोहित,दित्यौ)
१४। १।३३ अस्मै वः पूषा मरुतश्च सर्वे सविता सुवाति। (आत्मा)
५४ बृहस्पतिर्मरुतो ब्रह्म सोम इमां वर्धयन्तु (,,)
१५।१४। १ मारुतं शर्धो भूत्वानुऽव्यचलत्। (व्रात्यः)
१८। २।२२ उत् त्वा वहन्तु मरुत उदवाहा उदप्रुतः। (यमः)
३।२५ इन्द्रो मा मरुत्वान् प्राच्या दिशः पातु (,,)
१९।१०। ९ शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः। (बहुदेवताः)
१३। ९ देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्तु मध्ये। (इन्द्रः)
१० मरुतां शर्धमुग्रम्। (इन्द्रः) [काठ० १८।५३; ऋ०१०।१०३।९]
१७। ८ इन्द्रो मा मरुत्वानेतस्या दिशः पातु। (इन्द्रः)
१८। ८ इन्द्रं ते मरुत्वन्तमृच्छतु। (इन्द्रः)
४५।१० मरुतो मा गणैरवन्तु। (आञ्जनं, मरुतः।)
२०। २। १ मरुतः पोत्रात्सुष्टुभः स्वर्कादृतुना सोमं पिबतु। (मरुतः)
६३। २ इन्द्रः सगणो मरुद्भिरस्माकं भूत्वविता। (इन्द्रः)
१०६। ३ त्वां शर्धो मदत्यनु मारुतम्। (इन्द्रः)
१११। १ यद्वा मरुत्सु मन्दसे समिन्दुभिः (,,)
१२६। ९ मरुत्सखा विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः। (,,)

(४) वा० यजुर्वेदसंहिता।

अ०कं०
२।१६ मरुतां पृषतीः गच्छ। (प्रस्तरः) [काठ. १।१४५;३।१६;१११११
२२ सम् विश्वेभिर्भीः सं मरुद्भिः। (इन्द्रादयः)
३।४६ प्र बीभत्सो मरुतो वन्दने गीः। (इन्द्रामरुतौ) [श. २।५।२।२८]
६।१६ कर्णनिगर्भ मारुतं गच्छतम्। (रक्षः)
७।३५ इन्द्र मरुत्व इह पाहि। (इन्द्रमरुतौ) [काठ. ४।३६; श. ४।३।३।१३]
७।३६ मरुत्वन्तं वृषभं वावृधानं इन्द्रं हुवेम। (मरुत्वान्) [काठ. ४।४०]
३७ सजोषा इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमं पिब। (इन्द्रामरुतौ)
३८ मरुत्वाँ इन्द्र वृषभो रणाय पिबा सोमम्। (इन्द्रामरुतौ) [काठ. ४।३८]
८।५५ इन्द्रश्च मरुतश्च क्रयायोपोत्थितः। (इन्द्रादयः)
९। ८ युञ्जन्तु त्वा मरुतो विश्ववेदसः। (अश्वः)
३२ मरुतः सप्त क्षरेण सप्त ग्राम्यान् पशूनुदजयन्। (पूषादयः) [काठ. १४।२४]
३५ मरुन्नेत्रेभ्यः वा देवेभ्य उत्तरासद्भ्यः स्वाहा। (पृथिवी)
३६ मरुन्नेत्रा वोत्तरांसदस्तेभ्यः स्वाहा। (देवाः)
१०।२१ मरुतां प्रसवेन जय। (रथादयः)
२३ मरुतामोजसे स्वाहा। (अग्न्यादयः)
१२।७० विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः। (सीता) [काठ. १६।१४९; तै. आ. ४।४।१]
१४।२० मरुतो देवता। (इन्द्राग्नी, विश्वकर्मादयः)
२५ मरुतामाधिपत्यं (असि)। (ऋषयः,इष्टकाः) [काठ. २१।१]
१५।१२ मरुत्वतीयं उक्थं अव्यथायै स्तभ्नातु। (इष्टकाः)
१३ मरुतस्ते देवा आधिपतयः। (,,)
१७। १ तां न इषमूर्जं धत्त मरुतः। (मरुतः) [काठ. १७।७१]
१८।१७ मरुतश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्। (अग्निः)
२० मरुत्वतीयाश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्। (,,)
३१ विश्वे अद्य मरुतो विश्व ऊती आगमन्तु। (विश्वे देवाः) [काठ. १८।६५; ऋ. १०।३५।१३]
४५ मारुतोऽसि मरुतां गणः। (वायुः) [काठ. १८।७५]

२०।३० वृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम् ।(इन्द्रः)
२१।१९ सरस्वती भारती मरुतो विशः वयः दधुः।
(तिस्रो देव्यः)
२७ मरुतः स्तुताः इन्द्रे वयः दधुः। (इन्द्रः,मरुतः)
२२।२८ मरुद्भ्यः स्वाहा। (मरुतः)
२३।४१ अहोरात्राणि मरुतो विलिष्टं सूदयन्तु ते।
(अश्वः)
२४। ४ पृश्निः तिरश्चीनपृश्निः ऊर्ध्वपृश्निः ते मारुताः।
(प्रजापत्यादयः)
१६ सान्तपनेभ्यः मरुद्भ्यः,गृहमेधिभ्यः,मरुद्भ्यः, क्रीडिभ्यः मरुद्भ्यः, स्वतवद्भ्यः मरुद्भ्यः प्रथमजानालभते। (प्रजापत्यादयः)
२५। ४ मरुतां सप्तमी। (वातादयः)
६ मरुतां स्कन्धा विश्वेषां देवानां प्रथमा कीकसा।
(वातादयः)
२४ इन्द्रः ऋभुक्षा मरुतः परिख्यन्। (अश्वः)
४६ आदित्यैरिन्द्रः सगणो मरुद्भिरस्मभ्यं भेषजा करत्। (विश्वे देवाः)
२६।१७ स नः इन्द्राय मरुद्भ्यः परि स्रव। (सोमः)
२९।५४ इन्द्रस्य वज्रो मरुतामनीकम्। (रथः)
५८ मारुतः कल्माषः। (पशवः)
३०। ५ क्षत्राय राजन्यं मरुद्भ्यो वैश्यम्। (सविता)
३३।४५ आदित्यान्मारुतं गणम् (आहुयामि)।
(विश्वे देवाः)
४७ हता मरुतो अश्विना। ,,
४८ शर्धः प्रयन्त मारुतोत विष्णो। ,,
४९ मरुत ऊतये हुवे। ,,
६३ पिबेन्द्र सोमं सगणो मरुद्भिः। (इन्द्रः)
तै. आ. १।२७।१
६४ अवर्धन्निन्द्रं मरुतश्चिदत्र। (इन्द्रः)
[कठ. ४।१६४]
९५ देवास इन्द्र सख्याय येमिरे बृहद्भानो मरुद्गण। (इन्द्रः)
९६ प्र व इन्द्राय बृहते मरुतो ब्रह्मार्चत। (इन्द्रः)
३४।१२ तव व्रते कवयो विद्मनापसोऽजायन्त मरुतो भ्राजदृष्टयः। (अग्निः)
५६ उप प्र यन्तु मरुतः सुदानवः। (ब्रह्मणस्पतिः)
[कठ. १०।४७]
३७।१३ स्वाहा मरुद्भिः परि श्रीयस्व। (घर्मः)

तै.आ. ४।५।५;५।४।९
३९। ५ मारुतः क्वथन्। (प्रायश्चित्तदेवताः)
६ मरुतः सप्तमे अहन्। (सवित्रादयः)
९ बलेन मरुतः। (प्रजापतिः)

(५) काठक संहिता।

शं नः शोचा मरुद्वृधोऽग्ने। काठ. २।१७
मरुतः स्तनयित्नुना हृदयमाच्छिन्दन्। काठ. ८।५
इन्द्रस्य त्वा मरुत्वतो व्रतेनादधे। काठ. ८।८
मारुत्यामिक्षा वारुण्यामिक्षा काय एककपालः। काठ. ९।८
मरुद्भ्यः क्रीडिभ्यः प्रातस्सप्तकपालः। काठ. ९।१६; श. २।५।३।२०
अग्निभिर्मरुतः। काठ. ९।१८
मरुतो यद्ध वो दिवो यूयमस्मा निनं वः। काठ. ९।१९
सयोनित्वाय मारुतं प्रैयङ्गवं चरुं निर्वपेत्। काठ. १०।१८
पृश्न्या वै मरुतो जाताः वाचो वाश्या वा ,,
पृथिव्या मारुतास्सजाता एतन्मरुतां स्वं पयः। ,,
क्षत्रं वा इन्द्रो विण्मरुतः क्षत्रायैव विशमनु नियुनक्ति१०।११
मारुतस्य मारुतीमनूच्यैन्द्र्या यजेत्। ,,
विड्वै मरुतो भागधेयेनैवैनाञ्छमयति। ,,
अगस्त्यो वै मरुद्भ्यस्सहस्रमुक्ष्णः पृश्नीन् प्रौक्षन्।
तानिन्द्रायालभत तं मरुतः क्रुद्धा वज्रमुद्यत्याभ्यपतन्। ,,
इन्द्रो मरुद्भिः क्रतुधा कृणोतु। काठ. १०।१३
मारुतं चरुं निर्वपेत्। काठ. ११।१
इन्द्रो मरुद्भिः (उदजयत्)। काठ. ११।५; २४।१३
इन्द्राय मरुत्वते एकादशकपालम्। काठ. ,,
तस्य मारुती याज्यानुवाक्ये स्याताम्। काठ. ११।६
उप प्रेत मरुतः स्वतवसः। काठ. ११।१२; २०।१७
मरुतां [illegible] ते [illegible] दधतु। काठ. ११।१३
इन्द्रेण दत्तं प्रयतं मरुद्भिः। काठ. ११।१४
मारुतं चरुं [illegible]कपालम्। काठ. १२।१२
[illegible] मरुत[illegible]। काठ. १२।१७
वैराजं मरुतां [illegible]। काठ. १२।१४
ऐन्द्रमारुतं पृश्निसक्थमालभेत। काठ. १३।७
मरुतां [illegible] नह सूर्यः। काठ. १३।१८
मरुतः [illegible]। काठ. १४।१४
,, ,, [illegible]। १४।१५

ये देवा मरुन्नेत्राः। काठ. १५।२
मरुद्भ्यः पश्चात्सद्भ्यो रक्षोहभ्यः स्वाहा। ,,
मरुतामोजस्थ। काठ. १५।८
मरुतो देवता विट्। काठ. १५।६
मरुतो देवता। काठ. १७।१२; ३९।४५,
मरुत्वतीयमुक्थमव्यथाय स्तभ्नातु। काठ. १७।२१
मरुतस्ते देवा अधिपतयः। काठ. ,, श. ८।६।२।८
अभिमारुते उक्थे अव्यथाय। काठ. ,, ,,
आदित्या अन्नं मरुतोऽन्नम्। कठ. २१।२, श. ४।३।३।१२
वैश्वानरं मारुता अनुहूयन्ते। काठ. २१।३३
उपांशु मारुताञ्जुहोति। ,, ,,
[illegible] एव मरुतस्तर्पयति। ,, ,,
[illegible] वा एव मरुतां विट्। २१।३४
[illegible] मरुद्भिः ,, ,,
[illegible] मरुतो यद्व वो दिवः। काठ. २१।४४; ऋ. ८।७।११
[illegible] मरुतां [illegible]। काठ. २१।१६
[illegible] मरुतां [illegible]। काठ. २३।१०
[illegible] ,,
[illegible] मरुतो [illegible]। ,,
मरुत्सु [illegible]। काठ. २३।३७
[illegible] मरुद्भिर्[illegible] मरुत्वतीयं [illegible] भवति
मरुत्वतीय[illegible] मरुत्वतीया [illegible]। काठ. २८।६
[illegible] मरुत्वतीयोऽ[illegible]। ,,
[illegible] मरुत्वतीयेन [illegible] ,,
[illegible] मरुत्वतीयं [illegible]। ,,
[illegible] मरुतो [illegible]। ,,
[illegible] मरुत्वतं [illegible] मरुत्वन्तं [illegible] देवम्। काठ. २८।६
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

मरुद्भिर्विशामिनानीकेन स वृत्रमभ्यनातिष्ठत्। काठ. ३६।८
तं मरुत ऐषीकैर्वातिरथैरध्येयन्त। काठ. ३६।१५
स एतं मरुद्भ्यो भागं निरवपत् तं मरुतो वीर्येण समतपन्। (काठ. ३६।१५)
ते मरुद्भ्यो गृहमेधिभ्योऽजुहवुः। काठ. ३६।३; श. २।५।३।४।१
तं मरुतः परिक्रीडन्त। काठ. ३६।१८
ते मरुतः क्रीडीन् क्रीडतोऽपश्यन्। ,, ,,
तं मरुतोऽभ्यक्रीडन्। ३६।१९
मारुती पृश्निर्वशा। काठ. ३७।४
अथैष मारुत एकविंशतिकपालः। काठ. ३७।३,८
त्रिणवे मरुतस्स्तुतम्। काठ. ३८।१२६
अजुषन्त मरुतो यज्ञमेतम्। काठ. ४०।१८

(६) ब्राह्मण-ग्रन्थ।

मरुतो रश्मयः। ताण्ड्य. १४।१२।९
ये ते मारुताः (पुरोडाशाः) रश्मयस्ते। श० ९।३।१।२५
युञ्जन्तु त्वा मरुतो विश्ववेदस इति युञ्जन्तु त्वा देवा इत्ये-वैतदाह (मरुतः = देवाः— अमरकोषे १।३।५८) श० ५।१।४।१
गणशो हि मरुतः। तां. १९।१४।२
मरुतो गणानां पतयः। तै. ३।११।४।२
सप्त हि मारुतो गणः। श० ५।४।३।१७
सप्त गणा वै मरुतः। तै. १।६।२।३; २।७।२।२
सप्तसप्त हि मारुता गणाः। श० ९।३।१।२५ [काठ० २१।१०
मारुतः सप्तकपालः (पुरोडाशः)। तां. २१।१०।२३ [काठ. ९।४; २१।१०;३७।३]
मारुतस्तु सप्तकपालः (,,)। श० २।५।१।१२
मारुतं सप्तकपालं पुरोडाशं निर्वपति। श० ५।३।१।६
मरुतो वै देवानां भूयिष्ठाः। तां. १४।१२।९; २१।१४।३
मरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः। तै० २।७।१०।२
मरुतो ह वै देवविशोऽन्तरिक्षभाजना ईश्वराः। कौ ७।८
विशो वै मरुतो देवविशः। श० २।५।१।१२; ३।९।१।१७-१८, [illegible]

मरुतो वै देवानां विशः। ऐ. १।९; तां. ६।१०।१०
१८।१।१४। [illegible]

[illegible] वै देवानां मरुतो [illegible]। श० [illegible]
[illegible] वै मरुतः, तै० [illegible] [illegible]

[illegible] मरुतः। श० [illegible]
[illegible]

विशो वै मरुतः । श० ३.९.१.१७
मारुतो हि वैश्यः । तै० २.७.२.२ [काठ० ३७।४]
पशवो वै मरुतः । ऐ० ३।१९ [कठ० २१.३६;
३६।२,१६]
अन्नं वै मरुतः । तै० १।७।३।५; १।७।५।२; १।७।७।३
प्राणा वै मारुताः । श० ९।३।१।७
मारुता वै ग्रावाणः । तां ९।९।१४
मरुतो वै देवानामपराजितमायतनम् । तै० १।४।६।२
अप्सु वै मरुतः शिताः (श्रिताः) । कौ० ५।४
अप्सु वै मरुतः श्रितः (श्रिताः) । गो० उ० १।२२
आपो वै मरुतः । ऐ. ६ ३०; कौ० १२।८
मरुतोऽङ्गिरोभिरतनयन् । तस्य तन्तस्य हृदयमच्छिन्दन्
साऽशनिरभवत् । तै० १।१।३।१२
मरुतो वै वर्षस्येशते । श० ९।१।२।५ [काठ. ११।१२]
पत्तिभिः पार्जन्यैर्वा मारुतैर्वा वर्षतु । श० १३.५।४।२८
इन्द्रस्य वै मरुतः । कौ० ५।४.५
अथैनं (इन्द्रं) कर्ध्वायां दिशि मरुतश्चाङ्गिरसश्च देवा...
...अभ्यषिञ्चन्...पारमेष्ठ्याय म हाराज्याया धिपत्याय स्वाव-
श्यायाऽऽतिष्ठाय । ऐ० ८।१४
हेमन्तेनर्तुना देवा मरुतस्त्रिणवे (स्तोमे) स्तुतं बलेन शक्करीः
सहः । हविरिन्द्रे वयो दधुः । तै० २।६।१९।२
मारुतो वसतर्दः । तां० २१।१४।१२
पङ्क्तिश्छन्दो मरुतो देवता श्रोवन्तौ । श० १०।३।२।१०
मरुत्स्तोमो वा एषः । तां० १७।१।३
मरुतो ह वै क्रीडिनो वृत्रꣳहनिष्यन्तमिन्द्रमागतं तमभितः
परि चिक्रीडुर्महयन्तः । श० २।५।३।२०
ते (मरुतः) एनं (इन्द्रं) अभ्यक्रीडन् । तै० १।६।७।५
इन्द्रस्य वै मरुतः क्रीडिनः । कौ० ५।५
इन्द्रो वै मरुतः क्रीडिनः । गो० उ० १।२३
मरुतो ह वै सान्तपना मध्यन्दिने वृत्रꣳसन्तेपुः स सन्तप्तो-
ऽनन्नेव प्राणन् परिदीर्णः शिश्ये । श० २।५।३।३
इन्द्रो वै मरुतः सान्तपनः । गो० उ० १।२३
घोरा वै मरुतः स्वतवसः । कौ० ५।२; गो०उ० १।२०
प्राणा वै मरुतः स्वापयः । ऐ० ३।१६
सवनानि वै मरुत्वतीयग्रहः । कौ० १५।१
पवमानोक्थं वा एतद्यन्मरुत्वतीयम् । ऐ० ८।१;
कौ० १५.२
तदेतद्वार्त्रघ्नमेवोक्थं यन्मरुत्वतीमनेन ह्येन्द्रो वृत्रमहन् ।
कौ० १५।२
तदेतत्पृतनाजिदेव सूक्तं यन्मरुत्वतीयमेतेन हीन्द्रः पृतना
अजयत् । कौ० १५।३
अथैष मरुत्स्तोम एतेन वै मरुतोऽपरिमितां पुष्टिमपुष्य-
न्नपरिमितां पुष्टिं पुष्यति य एवं वेद । तां.१९ १४।१
अन्तरिक्षलोको वै मारुतो मरुतां गणः । श० ९।४।२।६
तद्ध सर्वं मरुत्वर्णीयं भवति । ऐ. ३।१६
वृष्टिवनिपदं मरुत इति मारुतमन्वंनमहे । ऐ. ३।१८
मरुत्वतीयं प्रगाथं शंसति, मरुत्वतीयं सूक्तं शंसति,
मरुत्वतीयां निविदं दधाति, मरुतां सा भक्तिः
मरुत्वतीयमुक्थं शस्त्वा मरुत्वतीयया यजति ।
ऐ० ३।२०
तन्मरुतो धून्वन् । ऐ०३।२४
तस्माद्वैश्वानरीयेणाग्निमारुतं प्रतिपद्यते । ऐ. ३।२५
प्रत्वोदवोति य अग्निमारुतं शंसति
इन्द्रोऽगस्त्यो मरुतस्ते समजानत । ऐ० ५।१६;
मरुतो यस्य हि क्षय इति मारुतं क्षेतिवदन्तरूपम् ।
ऐ०५।२१
,, ,, ,, पोता यजति । ऐ० ६।१०
स उ मारुत आपो वै मारुतः । ऐ० ६।१०
,, ,, मेव संसिष्टेति । ,,
पुरस्तान्मारुतस्याप्यरदाया इति । ,,
से ऽग्नये मरुत्वते त्रयोदशकपालं पुरोळाशं निर्वपेत् । ऐ० ७.९
अग्नये मरुत्वते स्वाहा । ..
मरुतश्च त्वाङ्गिरसश्च देवा अतिछन्दसा छन्दसा रोहन्तु ।
ऐ० ८।१२; १७
मरुतश्चाङ्गिरसश्च देवाः षड्भिश्चैव पञ्चविंशैरहोभिरभ्य-
षिञ्चन् । ऐ० ८।१४; १९
मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्यावसन् गृहे । ऐ० ८।२१;
श०१३।५।४।६
मारुती दक्षिणाग्निनैव न्वेव मारुती भवति ।
श० २।५।२।१०
तद्वै सा मरुतः पाप्मानं विमेथिरे । श० २।५।२।२४
प्रजानां ,, ,, विमथ्नते । ,, ,,
स एतामैन्द्रीं मरुत्वतीमजपत् । श० २।५ २।२७
मारुत्यां तं वरुणमवदधाति । श० २।५।२।३६

मरुद्भ्योऽनुब्रूहीति । श० २।५।२।३८
अथैते मारुत्यै पयस्यायै निरवपति । "
मरुतो यजेति । "
तस्मात् मरुत्वतीयान् गृह्णाति । श० ४।३।३।६, ९; ४।४।१।२
इन्द्रायैव मरुत्वते गृह्णीयात् । श० ४।३।३।१०
नापि मरुद्भ्यः स यत्रापि मरुद्भ्यो गृह्णीयात् । "
इन्द्रमेवानु मरुत आभजति । "
मरुतो वाऽइत्येतनङ्गोऽपक्रम्य तस्थुः । श० ४।३।३।६
विशा मरुद्भिः स यथा विजयस्य कामाय । श० ४।३।३।१५
अथ मरुद्भ्यः उज्जेषेभ्यः । श. ५।१।३।३
येऽएव के च मारुत्यौ स्याताम् । " "
इन्द्रो मरुत उपामन्त्रयत । श० ५।३।५।१४
स यदेव मारुतश्चरुस्तस्य तदेतेन प्रीणाति । श० ५।४।३।१७
अथ पृश्नीं विचित्रगर्भां मरुद्भ्य आलभते । श० ५।५।२।९
आदित्याः पश्चान्मरुत उत्तरतः । श० ८।६।३।३
मरुतो देवताश्चीवन्तौ । श० १०।३।२।१०
अन्वाध्या मरुतः । श० १३।४।२।१६
विश्वे देवा मरुत इति । श० १४।४।२।२४
अथ यन्मरुतः स्वतवसो यजति, घोरा वै मरुतः स्वतवसः । गो० उ० १।२०

अथ मरुद्भ्यः सान्तपनेभ्यः । श० २।५।३।३
तं मरुद्भ्यो देवविड्भ्यः । ऐ १।१०
मरुत्वां इन्द्र मीढ्व । ऐ. ५।६
मरुत्वतीयस्य प्रतिपदनुचरौ । ऐ० ४।२९, ३१; ५।१
एतद्यन्मरुत्वतीयं पवमाने वा । ऐ० ८।१
एतद्वै मरुत्वतीयं समृद्धम् । ऐ. ८।२
मरुत्वतीयमेव गृहीत्वा । श. ४।३।३।३
निविदं दधातीति मरुत्वतीयम् । श. १३।५।१।९
मरुत्वतीयं ह होतुर्बभूव । गो. पू. ३।५
त्रिष्टुभा मरुत्वतीयं प्रत्यपद्यत । गो. उ. ३।१२
विश्वे देवा अब्रुवन् मरुतो हैनं नाजहुः । ऐ० ३।२०
मध्यंदिने यन्मरुत्वतीयस्य । ऐ. ३।२८
मरुत्वतीयः प्रगाथः । ऐ. ४।२९
मरुत्वतीयस्य प्रतिपदीमह । ऐ. ५।४
मरुत्वतीयस्य प्रतिपाच्चजन्यया । ऐ. ५।६

मरुत्वतीयस्य प्रतिपदनुचरौ । ऐ. ५।१२
मरुत्वतीये तृतीये सवने । गो. उ. ३।२३; ४।१८
ऊर्ध्वं मरुत्वतीयात् । "
मरुद्भ्यो ऽग्ने सहस्रसातमः । श. ११।४।३।१९

(७) आरण्यक ग्रन्थ ।

वातवन्तो मरुद्गणाः । तै. आ. १।४।२
इहेह वः स्वतपसः । मरुतः सूर्यत्वचः ।
शर्म सप्रथा आवृणे । तै. आ. १।४।२
वैश्वानरस्य भिषगाभिसाभिमारुतस्य । ऐ. आ. १।५।१
प्रवज्यवो मरुत इति मारुतं समानोदर्कम् । "
चतुर्विंशान्मरुत्वतीयस्याऽऽतानः । ऐ. आ. ५।१।१
जनिष्ठा उग्र इति मरुत्वतीयम् । "
संस्थिते मरुत्वतीये होता । "
मरुतः प्राणैरिन्द्रं बलेन । तै. आ. ३।२८।१
प्रति हास्मै मरुतः प्राणान् दधति । "
अभिघून्वतामभिघ्नताम् । वातवतां मरुताम् । तै. आ. १।१४।१
मरुतां च विहायसाम् । तै. आ. १।२७।६
वातवतां मरुताम् । तै. आ. १।१५।१
युतान एव मारुतो मरुद्भिरुत्तरतो रोचय । तै. आ. ५।२
वासुकेणैतन्मरुत्वतीयं प्रतिपद्यते । ऐ. आ. १।३।१

(८) उपनिषदादि ग्रन्थ ।

तन्मरुत उपजीवन्ति सोमेन मुखेन । छान्दोग्य. ३।९।१
मरुतामेवैको भूत्वा । "
मरुतामेव तावदाधिपत्यं स्वाराज्यं पर्येता । "
विश्वे देवा मरुत इति । बृहदा. १।४।१२
मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहन् । महानारा. २०।१
मरुच्चात्रेति विश्रुतेऽसि । मैत्रा. २।१
तस्मै नमस्कृत्वा... मरुदुत्तरायणं गतः । मैत्रा. ६।३०
मरुतः.... पश्चादुद्यन्ति । मैत्रा. ७।३
संवर्तकोऽग्निर्मरुतो विराट् । नृ. पूर्व. २।१
मरीचिर्मरुतामस्मि । भ. गी. १०।२१
अश्विनौ मरुतस्तथा । भ. गी. ११।६
मरुतश्चोष्मपाश्च । भ. गी. ११।२२

मरुतोंके मंत्रोंमें विद्यमान सुभाषित।

वीरोंका धर्म तथा वीरोंके कर्तव्य।

इसके पहले हम मरुतोंके मंत्रोंका सरल अर्थ दे चुके। यह अत्यन्त आवश्यक प्रतीत होता है कि, उन मंत्रोंमें जो प्रमुख कल्पना है, उसे हम जान लें। उस केन्द्रभूत कल्पनाकी जानकारी पानेके लिए यहाँपर हम उन मंत्रोंके सर्वसाधारण प्रतिपादनोंको मूल शब्दोंके साथ देकर सरल अर्थ बताना चाहते हैं। मरुतोंका वर्णन करते हुए वीरोंके संबंधमें जो साधारण धारणाएँ उस उस स्थानपर प्रमुखतया दीख पडती हैं, उन्हींका संग्रह यहाँपर किया है। मंत्रमें पाया जानेवाला वाक्यही यहाँ लिया है। विशेष वर्णनात्मक शब्दोंका ग्रहण नहीं किया है और जिस मौलिक कल्पनाको व्यक्त करनेके लिए मंत्रका सृजन हुआ, उसी मूलभूत कल्पना की स्पष्टता जितने कम शब्दोंसे हो सकती है, उतनेही शब्द यहां ले लिये हैं। बहुधा प्रारंभिक अन्वय ज्योंका त्यों रखा गया है, पर जिससे सर्वसाधारण बोध प्राप्त होगा, ऐसा वाक्य बनाने के लिए पर्याप्त शब्द चुन लिये हैं। यद्यपि यह वर्णन मरुतोंकाही है, तथापि इन सुभाषितोंमें वह केवल मरुतोंकाही नहीं रहा है। मरुतोंका विशेष वर्णन हटानेके कारण हमें यह सर्वसामान्य उपदेश मिल जाता है। ऐसा कहा जा सकता है कि, समूचे मानवोंको इस भाँति नीतिका उपदेश दिया गया है। इसी ढंगसे वेदप्रतिपादित सर्वसाधारण धर्मका ज्ञान हो सकता है। इसके लिए ऐसे चुने हुए सुभाषितों का बडा अच्छा उपयोग हो सकता है। पाठकोंको अगर उचित जंचे, तो मंत्रोंके अन्य शब्दभी यथोचित जगहकी पूर्तिके लिए वे रखें। पाठकोंकी सुविधाके लिए मंत्रोंके क्रमांक प्रारंभमें दिये हैं और उन मंत्रोंके ऋग्वेदादि वेदोंमें पाये जानेवाले पते भी आगे दिये हैं।

इस भाँति स्वाध्याय करनेसेही वेदका सच्चा आशय समझ लेना सुगम होगा, ऐसी हमारी आशा है।

[विश्वामित्रपुत्र मधुच्छन्दा ऋषि।]

(१) याज्ञियं नाम दधानाः। (ऋ. १।६।४)
पूजनीय नाम धारण करें। [उच्च कोटिका यश पाना चाहिए।]

पुनः गर्भत्वं एरिरे। (ऋ. १।६।४)
(वीरोंको) बार बार गर्भवासमें रहना पडता है। [पुनर्जन्मकी कल्पना का आभास यहाँपर अवश्य होता है।]

स्व-धां अनु (ऋ. १।६।४)
अपनी धारक शक्ति बढाने के लिए या अन्न पानेके लिए [प्रयत्न करना चाहिए।]

(२) देवयन्तः श्रुतं विदद्वसुं अनूषत। (ऋ. १।६।६)
देवत्व पानेकी इच्छा करनेवाले लोगोंको उचित है कि, वे धनकी योग्यता जाननेवाले विख्यात वीरोंके काव्यका गायन करें।

(३) अनवद्यैः अभिद्युभिः गणैः सहस्वत् अर्चति। (ऋ. १।६।८)
निर्दोष एवं तेजस्वी वीरोंके साथ के शत्रुदलका पराभव करनेहारे बलकी वह पूजा करता है। [ऐसे बलको वह अपनेमें बढाता है।]

[कण्वपुत्र मेधातिथि ऋषि।]

(५) पोत्रात् ऋतुना पिबत। (ऋ. १।१५।२)
पवित्र पात्रमेंसे ऋतुकी अनुकूलता देखकर पीनेयोग्य वस्तुओंका सेवन करो।

यज्ञं पुनीतन। (ऋ. १।१५।२)
यज्ञ के कर्म को अधिक पवित्र करो।

[घोरपुत्र कण्व ऋषि।]

(६) अनर्वाणं शर्धं अभि प्र गायत (ऋ. १।३७।१)
जो सामर्थ्य पारस्परिक मनोमालिन्य या वैरभावको न

बढने दे उसका वर्णन करो।

(७) स्वभानवः वाशीभिः ऋष्टिभिः साकं अजायन्त।
(ऋ. १।३७।२)

तेजस्वी वीर अपने हथियारों को साथ रखकर सुसज्ज बने रहते हैं। [सदैव शस्त्रसज्ज रहना वीरोंका तो कर्तव्यही है।]

(८) यामन् चित्रं नि ऋञ्जते। (ऋ. १।३७।३)

युद्धभूमिमें हमला करते समय वीर सैनिक बडी विलक्षण शूरता दर्शाता है।

(९) देवत्तं ब्रह्म शर्धाय, घृष्वये, त्वेषद्युम्नाय प्र गायत।
(ऋ. १।३७।४)

देवताओंका स्तोत्र, बल बढानेके लिए, शत्रुका विनाश करनेके लिए और तेजस्वी बननेके हेतु गाते रहो। [ऐसे स्तोत्र पढनेसे या गानेसे उपर्युक्त गुणों की वृद्धि होगी।]

(१०) गोषु अघ्न्यं शर्धः प्रशंस; रसस्य जम्भे ववृधे।
(ऋ. १।३७।५)

गौओंमें जो श्रेष्ठ बल विद्यमान है, उसकी सराहना करो, गोरसके सेवनसे मानवोंमें वह बढ जाता है।

(११) धूतयः नरः। (ऋ. १।३७।६)

शत्रुसेनाको विचलित करनेवाले [जो वीर हों,] वे नेता होते हैं।

(१२) उग्राय यामाय पर्वतः जिहीत। (ऋ० १।३७।७)

शत्रुसेनापर जब भीषण धावा होता है, तब पहाडतक हिलने लगता है। [वीर सैनिक इसी भाँति दुश्मनोंपर चढाई करें।]

(१३) यामेषु अज्मेषु पृथिवी भिया रेजते।
(ऋ० १।३७।८)

शत्रुदलपर चढाई करते समय भूमि काँप उठती है। [वीर सिपाही इसी प्रकार शत्रुओंपर आक्रमण कर दें।]

(१४) शवः द्विता अनु। (ऋ० १।३७।९)

बलका उपयोग दो स्थानोंमें करना पडता है, [अर्थात् जो प्राप्त हुआ है, उसका संरक्षण तथा नये धनकी प्राप्तिके लिए शूर सैनिकोंका बल विभक्त होता है।]

(१५) अज्मेषु यातवे काष्ठाः उत् अत्नत।
(ऋ० १।३७।१०)

शत्रुपर हमले करनेके समय हलचल करनेमें कोई रुकावट या बाधा न हो, इसलिए सभी दिशाओंमें सडकें मार्ग बनवाने चाहिए। [यदि आनेजानेके लिए अच्छी सडकें हों, तो दुश्मनोंपर किए हुए आक्रमणोंमें सफलता मिलती है।]

(१६) यामभिः, दीर्घं पृथुं अमृध्रं नपातं, च्यावयन्ति।
(ऋ. १।३७।११

वीर सैनिक अपने प्रभावी आक्रमणोंसे बडे, नष्ट न होनेवाले एवं बहुतकालतक टिकनेवाले शत्रुओंको अत्यन्त विचलित तथा विकम्पित कर डालते हैं।

(१७) जनान् गिरीन् अचुच्यवीतन, (तत्) बलम्।
(ऋ. १।३७।१२

जिसकी सहायतासे शत्रुके वीरोंको अथवा पहाडोंको भी अपदस्थ करना संभव है, वही बल है।

(१९) शीभं प्रयात। (ऋ. १।३७।१४)

शीघ्रतासे चलो।

आशुभिः शीभं प्रयात। = वेगवान साधनोंकी सहायतासे बहुत जल्द गमन करो।

(२०) विश्वं आयुः जीवसे (ऋ० १।३७।१५)

पूर्ण आयुतक जीवित रहनेके लिए प्रयत्न करना चाहिए।

(२१) पिता पुत्रं न हस्तयोः दधिध्वे। (ऋ. १।३८।१)

जैसे पिता अपने पुत्रको अपने हाथोंसे उठा लेता है, उसी प्रकार [वीर पुरुष जनताको] सान्त्वना या आधार दे दें।

(२२) वः गावः क्व न रण्यन्ति। (ऋ. १।३८।२)

तुम्हारी गौएँ किधर जानेपर दुःखी बन जाती हैं! [वह देखो; वह तुम्हारे दुश्मनोंका स्थान है, ऐसा निश्चित समझ लो।

(२३) सुम्ना क्व? सुविता क? सौभगा क?
(ऋ. १।३८।३

आपके सुख, वैभव, ऐश्वर्य भला कहाँ हैं [देखो क्या वे तुम्हारे समीप हैं या शत्रु उन्हें छीन ले गये हैं।]

(२४) पृश्निमातरः मर्तासः, स्तोता अमृतः।
(ऋ. १।३८।४

भूमिको माता समझनेवाले वीर यद्यपि मर्त्य हैं, तोभी जो उनके संबंधमें काव्य बनाते हैं, वे अमर बनते हैं। [मातृभूमिके उपासकोंका इतना महत्त्व है, वे स्वयं तो अमर बनते ही हैं, पर उनका काव्य यदि कोई बना दें, तो वे कवि भी अमर हो जाते हैं।]

(२५) जरिता यमस्य पथा मा उप गात्। (ऋ. १।३८।५)
कहि कदापि मौतको पहुंचानेवाली मार्गसे नहीं चलेगा। [जो कवि वीरोंका वर्णन करनेके लिए वीररसपूर्ण काव्य का सृजन करेगा, वह अवश्य अमर बनेगा।]

(२६) दुर्हणा निर्ऋतिः नः मो षु वधीत् (ऋ. १।३८।६)
विनाश करनेवाली दुर्गतिके कारण हमारा नाश न होने पाय। [इस विषयमें सावधानी से तत्पर रहना चाहिए।]

दुर्हणा निर्ऋतिः तृष्णया पदीष्ट। (ऋ. १।३८।६)
विनाशका कारण उपस्थित करनेवाली दुःस्थिति लोभ-लालसासे बढती जाती है और इसी कारण उसका विनाश हुआ करता है। [भोगलालसासे दुःखसाधनोंकी वृद्धि होती है और उनसे वर्णन ही बढानेसे वे विनष्ट होते हैं।]

(२७) त्वेषा अमवन्तः धन्वन् मिहं कृण्वन्ति। (ऋ. १।३८।७)
तेजस्वी तथा बलवान वीर रेगिस्तानमें एवं मरुस्थलोंमें भी जलको वर्षा कर दिखाते हैं। [धान्यसे कुछकी भांति फूला करती है।]

(२८) मरुतां स्तनात् पार्थिवं सद्म मानुषाः प्र अवेजन्त। (ऋ. १।३८।१०)
गर्जनेवाले बडे शब्द करनेवाले वीर सैनिकोंकी दहाड से पृथ्वीपर निवासस्थान तथा सभी मानव कांपने लगते हैं। [वीरोंको चाहिए कि वे इसी भांति [illegible] ।]

(२९) वीळुपाणिभिः अचिद्रयामभिः रोधस्वतीः अनु यात। (ऋ. १।३८।११)
[illegible] प्रवाहोंमें भी चले चलो। [किसीभी [illegible] बाधक [illegible] ।]

(३०) वः रथाः [illegible] सुसंस्कृताः। (ऋ. १।३८।१२)
[illegible]
[illegible]

(३१) [illegible]। (ऋ. १।३८।१३)
[illegible]

(३२) [illegible] (ऋ. १।३८।१४)
[illegible]

करो, [काव्यरचना इस भांति सहज ही होने पाय।]

गाय-त्रं उक्थ्यं गाय।
जिससे गानेवालेकी रक्षा हो, ऐसे काव्योंका गायन करते रहो। [व्यर्थही मनमाने काव्योंका गायन करना उचित नहीं।]

(३५) त्वेषं पनस्युं अर्किणं वन्दस्व। (ऋ. १।३८।१५)
तेजस्वी, वर्णन करनेयोग्य तथा पूज्य वीरोंको प्रणाम करो। [चाहे किस नीच व्यक्तिके सामने शीश झुकाया न जाय।]

अस्मे इह वृद्धाः असन्।
हमारे समीप वृद्ध रहें।

(३६) वः आयुधा पराणुदे स्थिरा वीळू सन्तु।
(ऋ. १।३९।२)
तुम्हारे हथियार शत्रुओंको दूर भगानेके लिए स्थिर एवं पर्याप्त करके सुदृढ रहें। [इस बातपर इस विषयमें ध्यान रहे कि, तुम्हारे हथियार दुश्मनोंके आयुधोंसेभी अपेक्षाकृत अधिक कार्यक्षम एवं [illegible] ।]

युष्माकं तविषी पनीयसी अस्तु, मायिनः मा।
तुम्हारी शक्ति प्रशंसनीय [illegible], पर [illegible] कपटी मनुष्य [illegible] । [illegible]]

(३८) स्थिरं [illegible] (ऋ. १।३९।३)
[illegible]
[illegible]]

[illegible]
[illegible]]

(३९) [illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]
[illegible]

(४०) सर्वया विशा प्रो आरत। (ऋ. १।३९।५)

समूची प्रजाके साथ उन्नतिको प्राप्त करो। [संघकी प्रगतिमें व्यक्ति अपनी उन्नति मान ले।]

(४१) यः यामाय पृथिवी आ अश्रोत्, मानुषा अबीभयन्त। (ऋ. १।३९।६)

तुम्हारे आक्रमणकी आवाज सारी पृथ्वी सुन लेती है, अर्थात् एक छोरसे दूसरे छोरतक आक्रमणका समाचार पहुँचता है, अतः मानवोंको अत्यन्त भय प्रतीत होता है। [वीरोंके हमलेमें इसी भाँति भीषणता पर्याप्त मात्रामें रहनी चाहिए।]

(४२) तनाय कं अवः आवृणीमहे। (ऋ. १।३९।७)

हम चाहते हैं कि, जिस संरक्षणसे बालबच्चोंका सुख बढे, वही हमें मिल जाए।

विभ्युषे अवसा गन्त।

जो भयभीत हुआ हो उसके समीप अपनी संरक्षक शक्तियोंके साथ चले जाओ। [जो भयभीत हुए हों, उन्हें तसल्ली देनी चाहिए।]

(४३) अभ्वः शवसा ओजसा ऊतिभिः वि युयोत।
(ऋ. १।३९।८)

शत्रुके अभूतपूर्व भीषण प्रहारोंको अपने बलसे, सामर्थ्यसे एवं संरक्षक शक्तियोंसे हटा दो, दूर कर दो।

(४४) असामि दद, असामिभिः ऊतिभिः नः आगन्तन। (ऋ० १।३९।९)

पूर्ण रूपसे दान दो; अपनी संपूर्ण, अविकल शक्तियोंके साथ हमारे समीप आओ। [संरक्षण करनेके लिए जाते समय पूर्ण सिद्धता रखनी चाहिए। कहींभी अधूरापन या त्रुटि न रहे।]

(४५) असामि ओजः शवः बिभृथ। (ऋ. १।३९।१०)

संपूर्ण ढंगसे अपना बल तथा सामर्थ्य बढाकर धारण करो।

द्विषे द्विषं सृजत।

शत्रुपर शत्रुको छोडो। [एक शत्रुसे दूसरे दुश्मनको लडाकर ऐसा प्रबंध करो कि, दोनों शत्रु हतबल एवं परास्त हों।

[कण्वपुत्र पुनर्वत्स ऋषि।]

(४६) पर्वतेषु विराजथ। (ऋ. ८।७।१)

पर्वतोंमें आनन्दपूर्वक रहो। [पहाडी मुल्कमेंभी जानेआनेका अभ्यास करना चाहिए। पार्वतीय भूविभागोंके बीहडपनसे तनिकभी न डरते हुए वहाँपर विराजमान होना चाहिए।]

(४७) तविषीयवः! यामं अचिध्वं, पर्वता नि अहासत। (ऋ. ८।७।२)

बलवान वीर जिस समय शत्रुसेनापर धावा करनेके लिए अपना रथ सुसज्ज करते हैं, तब पर्वतभी काँप उठते हैं। [ऐसी दशामें मानव तो अवश्यही मारे डरके थरथर काँपने लगेंगे, इसमें क्या आश्चर्य ?]

(४८) पृश्निमातरः उदीरयन्त, पिप्युषीं इषं धुक्षन्त।
(ऋ. ८।७।३)

मातृभूमिकी सेवा करनेहारे वीर जब हलचल मचाने लगते हैं, तब वे पुष्टिकारक अन्नकी यथेष्ट समृद्धि करते हैं।

(४९) यत् यामं यान्ति, पर्वतान् प्रवेपयन्ति।
(ऋ. ८।७।४)

जब वीर सैनिक दुश्मनोंपर आक्रमण करते हैं, तब वे मार्गपर पडे हुए पहाडोंतक को हिला देते हैं [वीरोंका आक्रमण इसी भाँति प्रबल हो।]

(५०) यामाय विधर्मणे महे शुष्माय गिरिः सिन्धवः नि येमिरे। (ऋ. ८।७।५)

वीरोंके आक्रमणों एवं प्रबल सामर्थ्योंके परिणामस्वरूप मारे भयके पहाड एवं नदियांभी नम्र बन जाती हैं। [शत्रु झुक जायँ इसमें क्या संशय ?]

(५२) वाश्राः यामेभिः स्नुना उदीरते।
(ऋ. ८।७।७)

गरजनेवाले वीर अपने रथोंसे पर्वतों के शिखरतक पार कर चले जाते हैं। [वीरोंके लिए कोई स्थान अगम्य नहीं है।]

(५३) यातवे ओजसा पन्थां सृजन्ति। (ऋ. ८।७।८)

वीर पुरुष जानेके लिए अपनेही बल एवं सामर्थ्यके सहारे मार्गोंका सृजन करते हैं।

ते भानुभिः वि तस्थिरे।

वे तेजोंसे युक्त होकर विशेष स्थिरता पाते हैं। [वे प्रथम तेजस्वी बनते हैं और तेजस्वी होनेसे स्थायी बन जाते हैं।]

(५७) इमे मदे प्रचेतसः स्थ। (ऋ. ८।७।१२)

तुम अपने स्थानमें आनंदित बननेके लिए विशेष बुद्धि

युक्त होकर रहो। [अपना चित्त संस्कारसंपन्न करनेसे तुम्हें आनन्द प्राप्त होगा।]

(५८) मदच्युतं पुरुक्षुं विश्वधायसं रयिं नः आ इयर्त। (ऋ. ८।७।१३)

शत्रुका गर्व हटानेवाले, सबके लिए पर्याप्त, सबको धारणपुष्टि करनेकी क्षमता रखनेवाले धनकी आवश्यकता हमें है। [इसके विपरीत जिससे शत्रुको हर्ष हो, जो सबके लिए अपर्याप्त एवं अल्प जँचे, सबकी धारक शक्ति को जो घटा दे, ऐसा धन यदि हमें मुफ्त भी मिल जाय तोभी उसका स्वीकार नहीं करना चाहिए।]

(५९) गिरीणां अधि यामं अचिध्वं, इन्दुभिः मन्दध्वे। (ऋ. ८।७।१४)

जब पर्वतोंपर जाते हो, तब वहाँ उपलब्ध होनेवाले सोमरसोंसे तुम हृष्ट बनते हो। [पहाडी स्थानोंमें पाये जानेवाले सोम का रस पीकर आनन्दकी उपलब्धि होती है।]

(६०) अदाभ्यस्य मन्मभिः सुम्नं भिक्षेत।
(ऋ. ८।७।१५)

जो वीर न दब जाते हों, उनके संबंधमें किये काव्योंसे सुख पानेकी चाह करनी चाहिए। [शत्रुसे भयभीत होनेवाले मानवका बखान जिसमें किया हो ऐसे काव्योंके पठनसे या सृजनसे सुखकी प्राप्ति होना सुतरां असंभव है।]

(६२) पृश्निमातरः स्वानेभिः स्तोमैः रथैः उदीरते। (ऋ. ८।७।१७)

मातृभूमि के भक्त भाषणोंसे, यशोंसे तथा रथादि साधनोंसे ऊँचे स्थानको पाते हैं। [अपनी प्रगति कर लेते हैं।]

(६४) पिप्युषीः इषः वः वर्धान्। (ऋ. ८।७।१९)

पुष्टिकारक अन्न तुम्हारी वृद्धि करें। [तुम्हें पौष्टिक अन्न एवं भोज्य पदार्थ सदैव उपलब्ध हों।]

(६६) ऋतस्य शर्धान् जिन्वथ। (ऋ. ८।७।२१)

सत्यके दलों को प्रोत्साहित करो। [सत्य का दल प्रबल करो।]

(६७) त्वे वज्रं पर्वशः सं दधुः। (ऋ. ८।७।२२)

वे वीर वज्रको हर गाँठमें नहीं भाँति जोडकर दृढ तथा सुदृढ कर देते हैं। [वीर सैनिक अपने हथियारोंको प्रबल तथा कार्यक्षम बना रखें।]

(६८) वृष्णि पौंस्यं चक्राणाः अराजिनः वृत्रं पर्वतान् पर्वशः वि ययुः। (ऋ. ८।७।२३)

अपना बल बढानेवाले ये संघशासक [जिनमें कोई राजा नहीं रहता है, ऐसे ये वीर] शत्रुको तथा पहाडोंको तिलतिल तोड डालते हैं। पहाडी गढों को भी छिन्नभिन्न कर डालते हैं।

(६९) युध्यतः शुष्मं अनु आवन्। (ऋ. ८।७।२४)

युद्ध करनेवाले वीरके बलकी रक्षा तुमने की है।

(७०) विद्युद्धस्ताः अभिद्यवः शीर्षन् श्रिये हिरण्ययीः शिप्राः व्यञ्जत। (ऋ. ८।७।२५)

बिजलीके समान चमकनेवाले हथियार धारण करनेवाले वीर अपने मस्तकोंपर स्वर्णिलछवियुक्त शिरोवेष्टन शोभाके लिए धर देते हैं।

(७२) हिरण्यपाणिभिः अश्वैः उपागन्तन।
(ऋ. ८।७।२७)

सुवर्णके आभूषणोंसे सजाये हुए घोडे साथ लेकर हमारे समीप आओ। [घोडोंपर स्वर्णके गहने लादनेतक असीम वैभव रहे।]

(७४) नरः निचक्रया ययुः। (ऋ. ८।७।२९)

नेताके पदको सुशोभित करनेवाले ये वीर पहियोंसे रहित [बर्फमय भूविभागोंपर से चलनेवाली] गाडीमें बैठकर जाते हैं।

(७५) नाधमानं विप्रं मार्डीकेभिः गच्छाथ।
(ऋ. ८।७।३०)

सहायताकी इच्छा करनेवाले ज्ञानी पुरुषके समीप सुखवर्धक साधन साथ ले चले जाओ। [सज्जनोंका सुख बढाओ। ' परित्राणाय साधूनां० । ' गीता, ४।८]

(७७) वज्रहस्तैः हिरण्यवाशीभिः सहो अग्निं सु स्तुषे। (ऋ. ८।७।३२)

शस्त्रधारी एवं आभूषणों से अलंकृत वीरोंके साथ रहनेवाले अग्निकी सराहना करता हूँ।

(७८) वृष्णः प्रयज्यून् चित्रवाजान् सुविताय सु आ ववृत्याम्। (ऋ. ८।७।३३)

बलिष्ठ, पूजनीय एवं सामर्थ्यवान वीरोंको धनप्राप्ति के [कार्यमें सहायता के] लिए बुलाता हूँ। [हमारे समीप

आ जानेके लिए उनका मन आकर्षित करता हूँ]

(७९) मन्यमानाः पर्शानासः गिरयः नि जिहते।

(ऋ. ८।७।३४)

[इन वीरोंके सम्मुख] बडेबडे ऊंचे शिखरवाले पहाड भी अपनी जगह से हट जाते हैं। [वीरोंके सामने पर्वत-श्रेणीतक टिक नहीं सकती है।]

(८०) अन्तरिक्षेण पततः वयः धातारः आ वहन्ति। (ऋ. ८।७।३५)

आकाशमार्गसे जानेवाले वाहन अन्नसमृद्धि करनेहारे वीर सैनिकोंको इष्ट स्थानपर पहुँचाते हैं। [वीर सैनिक विमानोंमें बैठ यात्रा करते हैं।]

(८१) ते भानुभिः वि तस्थिरे। (ऋ. ८।७।३६)

वे वीर पुरुष तेजसे युक्त होकर स्थिर बन जाते हैं।

[कण्वपुत्र सोभरि ऋषि।]

(८२) स्थिरा चित् नमयिष्णवः मा अप स्थात।

(ऋ. ८।२०।१)

जो शत्रु अच्छे ढंगसे स्थायी हुए हों उन्हें भी झुकाने-वाले तुम वीर हमसे दूर न हो जाओ। [विजयी वीर हमारे समीप ही रहें।]

(८३) सुदीतिभिः वीळुपविभिः आ गत।

(ऋ. ८।२०।२)

अत्यन्त तीक्ष्ण, प्रबल हथियार साथ ले इधर आओ।

(८४) शिमीवतां उग्रं शुष्मं विद्म। (ऋ. ८।२०।३)

उद्योगशील वीरोंके प्रचण्ड बलकी महत्ताको हम भली भाँति जानते हैं।

(८५) यत् एजथ द्वीपानि वि पापतन्। (ऋ. ८।२०।४)

जब ये वीरसैनिक चले जाते हैं, तब टापू [अर्थात् आश्रय-स्थानों] का पतन हो जाता है। [शत्रु अपने स्थानसे हट जाते हैं।]

(८६) अज्मन् अच्युता पर्वतासः नानदति, यामेषु भूमिः रेजते। (ऋ. ८।२०।५)

[वीरोंकी शत्रुदलपर की हुई] चढाइयोंके समय अडिग एवं अटल पर्वततक स्पन्दमान हो उठते हैं और पृथ्वीभी विकम्पित होती है। [वीरोंको उचित है कि, वे इसी भाँति प्रभावशाली एवं सद्यः फलदायी आक्रमणोंका ताँतासा लगा देवें।]

(८७) अमाय यातवे यत्र बाह्वोजसः नरः स्वक्षांसि तनूषु आ देदिशते, द्यौः उत्तरा जिहीते।

(ऋ. ८।२०।६)

जब सेना की हलचलके लिए अपने बाहुबलसे तुम्हारे वीर जिधर अपनी सारी शक्ति केन्द्रित तथा एकत्रित करके शत्रुपर धावा कर देते हैं उधर ऐसा जान पडता है कि, मानों आकाश स्वयं दूर होते जा रहा है '[अर्थात् उन वीरोंकी प्रगति अबाध रूपसे करनेके लिए एक ओर सडक खुली हो जाती है।]

(८८) त्वेषाः अमवन्तः नरः महि श्रियं वहन्ति।

(ऋ. ८।२०।७)

तेजस्वी, बलयुक्त तथा नेता बने हुए वीर अत्यधिक रूपसे शोभायमान दीख पडते हैं।

(८९) गोबन्धवः सुजातासः महान्तः इषे भुजे स्परसे। (ऋ. ८।२०।८)

गौको बहनके समान माननेवाले कुलीन वीर अन्न, भोग एवं स्फूर्ति देते हैं।

(९०) वृषप्रयाव्णे वृष्णे शर्धाय हव्या प्रति भरध्वम्।

(ऋ. ८।२०।९)

प्रबल आक्रमण करनेहारे बलिष्ठ वीरोंको पर्याप्त अन्न दे दो, ताकि उनका बल वृद्धिंगत हो। [बिना अन्नके सैन्यका बल तथा प्रतिकारक्षमता टिक नहीं सकेगी।]

(९१) वृषणश्वेन रथेन नः आ गत। (ऋ ८।२०।१०)

बलिष्ठ अश्व जिसको खींचते हों, ऐसे रथपर बैठकर हमारे समीप आओ।

(९२) एषां समानं अञ्जि, बाहुषु ऋष्टयः दवि-द्युतति। (ऋ. ८।२०।११)

इन वीरोंकी वरदी (गणवेश) समान है, तथा इनकी भुजाओंपर शस्त्र जगमगा रहे हैं।

(९३) उग्रासः तनूषु नकिः येतिरे। (ऋ. ८।२०।१२)

वीर पुरुष अपने शरीरोंकी पर्वाह नहीं करते हैं, [अर्थात् बिना किसी झिझक या हिचकिचाहटके वे उत्साहसे युद्धमें वीरतापूर्ण कार्य कर दिखलाते हैं और अपने प्राणोंको खतरेमें डाल देते हैं।]

रथेषु स्थिरा धन्वानि, आयुधा, अनीकेषु अधि श्रियः

वीरोंके रथोंपर सुदृढ, न हिलनेवाले एवं स्थायी धनुष

और हथियार रखे जाते हैं तथा येही वीर रणभूमिमें सफलता पाते हैं।

(९४) शश्वत्तं त्वेषं नाम सहः एकम्। (ऋ. ८।२०।१३)

इन शाश्वत वीरोंके तेज, यश एवं सामर्थ्यमें अद्वितीयता पाई जाती है।

(९५) धुनीनां चरमः न। (ऋ. ८।२०।१४)

शत्रुको विचलित करनेवाले वीरोंमें कोई भी निम्न श्रेणीका या हीन नहीं है।

एषां दाना मह्ना। = इनके दान बडे भारी होते हैं, [वे अपने प्राणोंका बलिदान करनेके लिए उद्यत होते हैं, यही इनका बडा दान है। प्राणोंके अर्पणसे बढकर भला और क्या दान हो सकता है ?]

(९६) ऊतिषु सुभगः आस। (ऋ. ८।२०।१५)

सुरक्षिततामें बडा भारी सौभाग्य छिपा रहता है।

(९९) वत्सया हृदा उप आववृध्वम्। (८।२०।१८)

उदार अन्तःकरणपूर्वक हमारे समीप आकर समृद्धि बढाओ।

(१००) चर्कृषत् गाः सु अभि गाय। (ऋ. ८।२०।१९)

हल चलानेवाला किसान गौओं को रिझाने के लिए सुंदर गीत गाया करता है।

यूनः वृष्णः पावकान् नविष्ठया गिरा सु अभि गाय= नवयुवक, तथा बलवान और पवित्रता करनेहारे वीरोंका नया काव्य भली भाँति सुरीली आवाजमें गाते रहो।

(१०१) विश्वासु पृत्सु मुष्टिहा हव्यः। (ऋ.८।२०।२०)

सभी सैनिकोंमें मुष्टियोद्धा सम्माननीय होता है।

सहाः सन्ति तान् वृष्णः गिरा वन्दस्व।

जो वीर सैनिक शत्रुदल का आक्रमण होनेपरभी अपनी जगह अटल एवं अडिग हो खडे रहते हैं, उन बलवान वीरोंकी सराहना अपनी वाणीसे करो तथा उनका अभिवादन करो।

(१०२) सजात्येन सबन्धवः मिथः रिहते। (ऋ.८।२०।२१)

सजातीय एवं बांधव परस्पर मिल जुलकर रहें।

(१०३) मर्तः वः भ्रातृत्वं उपायति, आपित्वं सदा निधुवि। (ऋ. ८।२०।२२)

साधारण कोटिका मनुष्य भी तुमसे भाईचारेका बर्ताव कर सकता है, क्योंकि तुम्हारी मित्रता सदैव अचल एवं स्थिर रहा करती है।

(१०४) मारुतस्य भेषजं आ वहत। (ऋ. ८।२०।२३)

वायुमें जो औषधीगुण विद्यमान है, वह हमें ला दो। [वायुमें रोग हटानेकी शक्ति विद्यमान है।]

(१०५) याभिः ऊतिभिः अवथ, शिवाभिः मयः भूत। (ऋ. ८।२०।२४)

जिन शक्तियोंसे तुम रक्षा करते हो, उन्हीं शुभ शक्तियोंसे हमारा सुख बढाओ।

(१०६) सिन्धौ असिक्न्यां समुद्रेषु पर्वतेषु भेषजम्। (ऋ. ८।२०।२५)

सिन्धु नदी, समुद्र एवं पर्वतोंमें औषधियाँ हैं। [उन औषधियोंकी जानकारी प्राप्त करके रोग हटाने चाहिए।]

(१०७) विश्वं पश्यन्तः, तनूषु आ बिभृथ, आतुरस्य रपः क्षमा, विहुतं इष्कर्त। (ऋ. ८।२०।२६)

विश्वका निरीक्षण करो, शरीरोंको हृष्टपुष्ट बनाओ, रोगसे पीडित व्यक्तियोंके दोष दूर करो और टूटे हुए भागको ठीक करो या जोड दो।

[गोतमपुत्र नोधा ऋषि।]

(१०८) वृष्णे, सुमखाय, वेधसे, शर्धाय सुवृक्तिं प्र भर। (ऋ. १।६४।१)

बल, सत्कर्म, ज्ञान एवं सामर्थ्यका वर्णन करनेके लिए काव्य करो।

(१०९) ऋष्वासः उक्षणः असुराः अरेपसः पावकासः शुचयः सत्वानः दिवः जज्ञिरे। (ऋ. १।६४।२)

उच्च कोटिके, महान्, सत्कार्यके लिए अपने जीवनका बलिदान करनेहारे, पापरहित, पवित्र, शुद्ध एवं सत्ववान जो हों, वे स्वर्गसे पृथ्वीपर आये हैं, ऐसा समझना चाहिए।

(११०) अजराः अभोग्घनः अध्रिगावः दृळ्हा चित् मज्मना प्र च्यावयन्ति। (ऋ. १।६४।३)

क्षीण न होनेवाले, अनुदार शत्रुओंको हटानेवाले, शत्रुसेनापर चढाई करनेवाले वीर सैनिक स्थिर शत्रुओंको भी अपने बलसे हिला देते हैं।

(१११) अंसेषु ऋष्टयः निमिमृक्षुः नरः स्वधया जज्ञिरे। (ऋ. १।६४।४)

कंधेपर शस्त्र रखनेवाले और नेताके पदपर अधिष्ठित वीर पुरुष अपने बलसे विख्यात होते हैं।

(११२) ईशानकृतः धुनयः धूतयः रिशादसः परिज्रयः

दिव्यानि ऊधः दुहन्ति। (ऋ. १।६४।५)

राष्ट्रशासकोंका सृजन करनेवाले, शत्रुको हिला देने, स्थानभ्रष्ट करने तथा विनष्ट कर डालनेकी क्षमता रखनेवाले और उसे घेरनेवाले वीर दिव्य गौका दुग्धाशय दुहकर दूधका सेवन करते हैं। [भाँतिभाँतिके भोग पाते हैं।]

(११३) सुदानवः आभुवः विदथेषु घृतवत् पयः पिन्वन्ति। (ऋ. १।६४।६)

उत्तम दान देनेहारे प्रभावशाली वीर युद्धभूमिमें घृतमिश्रित दूधका सेवन करते हैं। [दूधमें घी की मिलावट करनेपर वह शक्तिवर्धक एवं बलदायक पेय होता है।]

(११४) महिषासः मायिनः स्वतवसः रघुष्यदः तविषीः अयुग्ध्वम्। (ऋ. १।६४।७)

बडे कुशल, तेजस्वी तथा वेगसे जानेहारे वीर अपने बलोंका उपयोग करते हैं।

(११५) प्रचेतसः सुपिशः विश्ववेदसः क्षपः जिन्वन्तः शवसा अहिमन्यवः ऋष्टिभिः सबाधः सं इत्।

(ऋ. १।६४।८)

ज्ञानी, सुन्दर, धनिक, शत्रुविनाशक, सबको सुखी बनानेकी इच्छा करनेहारे, बलवान एवं उत्साही वीर अपने हथियार साथ लेकर पीडित एवं दुःखी लोगोंको सुखसमाधान देनेके लिए इकट्ठे होकर चले जाते हैं।

(११६) गणश्रियः नृषाचः अहिमन्यवः शूराः बन्धुरेषु रथेषु आतस्थौ। (ऋ. १।६४।९)

समुदायके कारण सुहानेवाले, जनताकी सेवा करनेहारे एवं उमंगसे भरे हुए वीर अच्छे रथोंमें बैठकर गमन करते हैं।

(११७) रयिभिः विश्ववेदसः समोकसः तविषीभिः संमिश्लाः विरप्शिनः अस्तारः अनन्तशुष्माः वृषखादयः नरः गभस्त्योः इषुं दधिरे। (ऋ. १।६४।१०)

धनाढ्य, वैभवशाली, एक घरमें निवास करनेवाले, बलसंपन्न, सामर्थ्यपूर्ण, शक्तिमान, शत्रुपर शस्त्र फेंकनेवाले और अच्छे ढंगसे अलंकृत वीर अपने कंधोंपर बाण एवं तूणीर धारण करते हैं।

(११८) अयासः स्वसृतः ध्रुवच्युतः दुध्रकृतः भ्राजत्-ऋष्टयः पर्वतान् पविभिः उज्जिघ्नते। (ऋ. १।६४।११)

प्रगतिशील, अपनी इच्छासे हलचल करनेवाले, सुदृढ दुश्मनोंको भी अपदस्थ करनेकी क्षमता रखनेवाले और जिन्हें कोई घेर नहीं सकता ऐसे तेजस्वी शस्त्र धारण करनेहारे वीर पहाडोंको भी अपने हथियारों से उडा देते हैं।

(११९) घृषुं पावकं विचर्षणिं रजस्तुरं तवसं वृषणं गणं सश्चत। (ऋ. १।६४।१२)

युद्धमें प्रवीण, पवित्रता करनेहारे, ध्यानपूर्वक हलचलोंका सूत्रपात करनेवाले, अपनी वेगवान गतिके कारण धूलिको प्रेरित करनेवाले, बलिष्ठ एवं सामर्थ्ययुक्त वीरोंके संघको समीप बुलाओ।

(१२०) वः ऊती यं प्रावत, सः शवसा जनान् अति।

(ऋ. १।६४।१३)

तुम अपने संरक्षणोंसे जिस पुरुषको सुरक्षित बना देते हो, वह सभी लोगोंमें श्रेष्ठ बनता है।

अर्वद्भिः वाजं, नृभिः धना भरते, पुष्यति।

वह घुडसवारोंकी सहायतासे अन्न प्राप्त करता है, वीरोंकी सहायतासे पौरुषपूर्ण कार्य करके धनवैभव पाता है और पुष्ट बनता है।

आपृच्छ्यं क्रतुं आ क्षेति।

वर्णन करनेयोग्य पुरुषार्थ करके यशस्वी बनता है।

(१२१) चर्कृत्यं, पृत्सु दुष्टरं, द्युमन्तं, शुष्मं, धनस्पृतं, उक्थ्यं, विश्वचर्षणिं तोकं तनयं धत्त।

(ऋ. १।६४।१४)

पुरुषार्थी, युद्धोंमें विजयी बननेवाला तेजस्वी, समर्थ, धनवान, वर्णनीय, समूची जनताका हितकर्ता पुत्र होवे।

(१२२) अस्मासु स्थिरं वीरवन्तं, ऋतीषाहं शतग्विनं रयिं धत्त। (ऋ. १।६४।१५)

हमें स्थिर, वीरोंसे युक्त, शत्रुओंके पराभव करनेकी क्षमतापूर्ण धन प्रदान करो।

[रहूगणपुत्र गोतमऋषि।]

(१२३) सुदंससः ससयः सूनवः यामन् शुभ्राः विदथेषु मदन्ति। (ऋ. १।८५।१)

सत्कर्म करनेहारे एवं प्रगतिशील वीर सुपुत्र शत्रुदलपर धावा करते समय सुशोभित दीख पडते हैं और युद्धस्थलमें बडे ही हर्षित हो उठते हैं।

(१२४) अर्कं अर्चन्तः पृश्निमातरः श्रियः अधि दधिरे, महिमानं आशत। (ऋ. १।८५।२)

एकही पूजनीय देवताकी उपासना करनेहारे मातृभूमिके

भक्त वीर अपना यश बढाते हैं और बडप्पनको पा लेते हैं।

(१२५) गोमातरः विश्वं अभिमातिनं अप बाधन्ते। (ऋ. १।८५।३)

गौको माता समझनेवाले वीर सभी शत्रुओंका पराभव करते हैं तथा उन्हें दूर हटा देते हैं।

(१२६) सुमखासः ऋष्टिभिः विभ्राजन्ते, मनोजुवः वृषव्रातासः रथेषु पृषतीः अयुग्ध्वं, अच्युता चित् ओजसा प्रच्यवयन्तः। (ऋ. १।८५।४)

अच्छे कर्म करनेहारे वीर पुरुष या सैनिक अपने हथियारोंसे सुहाते हैं। मनकी नाईं वेगवान, सांघिक बलसे युक्त ये वीर अपने रथोंमें घोडियों को जोत लेते हैं और अपनी शक्तिसे जो शत्रु अटल तथा अडिग प्रतीत होते हों, उन्हें अपदस्थ कर डालते हैं।

(१२७) वाजे अद्रिं रंहयन्तः। (ऋ. १।८५।५)

अन्नके लिए ये वीर पहाडकोभी विचलित कर डालते हैं।

(१२८) रघुष्यदः सप्तयः वः आ वहन्तु। (ऋ. १।८५।६)

वेगपूर्वक दौडनेवाले घोडे तुम वीरोंको यहाँपर ले आयँ।

रघुपत्वानः बाहुभिः प्र जिगात।

शीघ्रतासे प्रयाण करनेवाले तुम लोग अपने बाहुबलसे प्रगति करो।

वः उरु सदः कृतं = बडा घर तुम्हारे लिए बना रखा है।

बर्हिः आ सीदत, मध्वः अन्धसः मादयध्वम्।

आसनोंपर बैठो और मिठासभरे अन्न का सेवन करके प्रसन्न बनो।

(१२९) ते स्वतवसः अवर्धन्त। (ऋ. १।८५।७)

वे वीर सैनिक अपने बलसे वृद्धिगत होते रहते हैं।

महित्वना नाकं आ तस्थुः।

अपने बडप्पनसे वीर पुरुष स्वर्गमें जा बैठते हैं।

विष्णुः वृषणं मदच्युतं आवत्।

देव बलिष्ठ तथा प्रसन्नचेता वीरोंकी रक्षा करता है। जिसका मन आनन्दसरितामें डूबता उतराता हो, उसकी रक्षा परमात्मा करता है।

(१३०) शूराः युयुधयः श्रवस्यवः पृतनासु येतिरे। (ऋ. १।८५।८)

शूर योद्धा यशस्विता पानेके लिए युद्धोंमें विजयार्थ प्रयत्न करते रहते हैं।

त्वेषसंदृशः नरः विश्वा भुवना भयन्ते।

तेजस्वी वीरोंसे सभी भयभीत हो उठते हैं।

(१३१) स्वपाः त्वष्टा सुकृतं वज्रं अवर्तयत्, नरि अपांसि कर्तवे धत्ते। (ऋ. १।८५।९)

अच्छे कुशल कारीगरने सुघड हथियार बना दिया और एक अत्यन्त वीर पुरुषने युद्धमें विशेष शूरता प्रदर्शित करनेके लिए उसे हाथमें उठा लिया।

(१३२) ते ओजसा ऊर्ध्वं अवतं नुनुद्रे, दादृहाणं पर्वतं बिभिदुः। (ऋ. १।८५।१०)

उन वीरोंने पहाडोंपर विद्यमान जलको नीचे प्रवाहित कर दिया और उसके लिए बीचमें रुकावट खडी करनेवाले पर्वतको भी तोड डाला।

(१३३) तया दिशा अवतं जिह्मं नुनुद्रे। (ऋ. १।८५।११)

उस दिशामें टेढीमेढी राहसे वे पानी को ले गये।

(१३४) नः सुवीरं रयिं धत्त। (ऋ. १।८५।१२)

हमें अच्छे वीरोंसे युक्त धन दे दो। [जिस धनमें वीरभाव न हो, वह हमें नहीं चाहिए।]

(१३५) यस्य क्षये पाथ, स सुगोपातमो जनः। (ऋ. १।८६।१)

जिसके घरमें देवगण रक्षाका भार उठा लेते हैं, वह गौओंका परिपालन अच्छे ढंगसे करनेवाला बन जाता है। [अर्थात् वह सबका भली भाँति संरक्षण करता है।]

(१३६) विप्रस्य मतीनां शृणुत। (ऋ. १।८६।२)

ज्ञानी की सुबुद्धि को सुन लो।

(१३७) यस्य वाजिनः विप्रं अनु अतक्षत, सः गोमति व्रजे गन्ता। (ऋ. १।८६।३)

जिसके बल ज्ञानीके अनुकूल होते हैं वह ऐसे गोठमें चला जाता है कि, जहाँ पर गौओंकी भरमार हो। [वह गोधनसे युक्त बनता है, यथेष्ट धन पाता है।]

(१३८) वीरस्य उक्थं शस्यते। (ऋ. १।८६।४)

वीरकी सराहना की जाती है।

(१३९) यः अभिभुवः अस्य विश्वाः चर्षणीः आश्रोषन्तु। (ऋ. १।८६।५)

जो वीर शत्रुका पराभव करनेकी क्षमता रखता है, उस का काव्य सभी लोग सुन लें।

(१४०) चर्षणीनां अवोभिः वयं ददाशिम। (ऋ. १।८६।६)

किसानोंकी संरक्षणआयोजनाओं से पालित बनकर हम दान दिया करते हैं। [यदि कृषक सुरक्षित रहें, तो सभी प्रगतिशील हो सकते हैं, दरिद्रताको दूर भगा सकते हैं।]

(१४१) यस्य प्रयांसि पर्षथ, सः मर्त्यः सुभगः अस्तु। (ऋ. १।८६।७)

जिसके प्रयत्नोंसे तुम भोग भोगते हो, वह मनुष्य सौभाग्यवान एवं धन्य है।

(१४२) शशमानस्य स्वेदस्य वेनतः कामस्य विद। (ऋ. १।८६।८)

शीघ्रतापूर्वक और पसीनेसे तर हो जानेतक जो कार्य करता हो, उसकी आकांक्षाओंको तुम जान लो। [उसकी उपेक्षा न करो।]

(१४३) यूयं तत् आविष्कर्त, विद्युता महित्वना रक्षः विध्यत। (ऋ. १।८६।९)

तुम अपने उस बलको प्रकट करो और विद्युत् जैसी बडी शक्तिसे दुष्टोंका विनाश करो।

(१४४) गुह्यं तमः गूहत, विश्वं अत्रिणं वि यात, ज्योतिः कर्त। (ऋ. १।८६।१०)

अँधेरेको दूर हटा दो, सभी पेटुओंको बाहर भगा दो और सबको प्रकाश दिलाओ।

(१४५) प्रत्वक्षसः प्रतवसः विरप्शिनः अनानताः अविथुराः ऋजीषिणः जुष्टतमासः नृतमासः वि आनज्रे। (ऋ. १।८७।१)

शत्रुओंका विनाश करनेहारे, बलसंपन्न, वाग्मी, शीश न झुकानेवाले, निडर, सरल, जिनकी सेवा अत्यधिक मात्रामें लोग करते हैं तथा जो अति उच्च कोटिके नेता बननेकी क्षमता रखते हैं, ऐसे वीर तेजसे जगमगाया करते हैं।

(१४६) केन चित्पथा यायि अचिध्वम्। (ऋ. १।८७।२)

किसीभी राहसे शत्रुदलपर की जानेवाली चढाईके पथ पर आकर इकट्ठे बनो।

(१४७) यत् शुभे युञ्जते, अज्मेषु यामेषु भूमिः प्र रेजते। (ऋ. १।८७।३)

तुम जब शुभ कार्य करनेके लिए तैयार होते हो, तब शत्रुसेनापर चढाई करते समय भूमि थरथर काँप उठती है।

ते धुनयः धूतयः भ्राजदृष्टयः महित्वं पनयन्त।

वे शत्रुको हिला देनेवाले तथा शस्त्रधारी वीर अपना महत्त्व प्रकट करते हैं।

(१४८) सः हि गणः स्वसृत् तविषीभिः आवृतः अया ईशानः सत्यः ऋणयावा अनेद्यः वृषा अविता। (ऋ. १।८७।४)

वह वीरोंका समुदाय अपनी निजी प्रेरणा से कर्म करनेहारा, सामर्थ्ययुक्त, अधिकारी बननेयोग्य, सत्यनिष्ठ, ऋण चुकानेवाला, अनिन्दनीय एवं बलवान है, अतः सबकी रक्षा करता है।

(१५०) ते अभीरवः प्रियस्य धाम्नः विद्रे। (ऋ. १।८७।६)

वे निडर वीर आदरका स्थान प्राप्त करते हैं।

(१५१) ऋष्टिमद्भिः रथेभिः आ यात, सुमायाः इषा नः आ पप्तत। (ऋ. १।८८।१)

शस्त्रोंसे सुसज्ज रथोंमें बैठकर वीर सैनिक इधर पधारें और अच्छी कारीगरी बढाकर विपुल अन्न के साथ हमारे समीप आ जायँ।

(१५२) रथतूर्भिः अश्वैः शुभे आ यान्ति, स्वधितिवान् भूम जङ्घनन्त। (ऋ. १।८८।२)

रथ खींचनेवाले घोडोंके साथ वीर सैनिक शुभ कार्य करनेके लिए आ जाते हैं और शस्त्रधारी बनकर पृथ्वीतल विद्यमान शत्रुओंका नाश करते हैं।

(१५३) श्रिये कं वः तनूषु वाशीः, मेधा ऊर्ध्वा कृणवन्ते। (ऋ. १।८८।३)

जो वीर सपत्ति तथा सुख पानेके लिएही शस्त्र धारण करते हैं, वे वीर अपनी बुद्धिको उच्च कोटिकी बना देते हैं।

(१५४) अर्कैः ब्रह्म कृण्वन्तः। (ऋ. १।८८।४)

स्तोत्रों से ज्ञानकी वृद्धि करो।

(१५५) अयोदंष्ट्रान् विधावतः वराहून् पश्यन्, योजनं, न अचेति। (ऋ. १।८८।५)

तीक्ष्ण हथियार लेकर शत्रुदलपर चढाई करनेवाले एवं प्रमुख शत्रुओंका वध करनेवाले वीरोंको देखकर जो आयोजना की जाती है, वह सचमुचही अपूर्व होती है।

(१५६) नमस्योः स्वधां अनु प्रति स्तोभति।

(ऋ. १।८८।६)

वीरोंके बाहुओंमें सामर्थ्य जिस अनुपातमें हो, उसी अनुपातमें उनकी प्रशंसा होती है।

[दिवोदासपुत्र परुच्छेप ऋषि।]

(१५७) तानि सत्रा पौंस्या अस्तु मो सु अभि भूवन्।

(ऋ. १।१२९।८)

वे वीरोंकी शाश्वत शक्तियाँ हमसे दूर न हों।

अस्मत् पुरा मा जारिषुः।

हमारे नगर उजड न हों।

[मित्रावरुणपुत्र अगस्त्य ऋषि।]

(१५८) रभसाय जन्मने तविषाणि कर्तन।

(ऋ. १।१६६।१)

पराक्रमयुक्त जीवन मिले, इसलिए बलोंका सम्पादन ।

(१५९) धृष्वयः विदथेषु उपक्रीळन्ति।

(ऋ. १।१६६।२)

...हुओंसे संघर्ष करनेवाले वीर युद्धक्षेत्रमें क्रीडा करते ...शालामें जिस भाँति लोग आसक्त होते हैं, उसी ...वे वीर योद्धा रणांगणमें मानों खेल समझकर निरत ...।]

...रिषनं अवसा नक्षन्ति, स्वतवसः हविष्कृतं ...ति।

...बलसे, नम्र होनेवालों की रक्षा करनेवाले वे ...सामर्थ्यके सहारे अवदान करनेवाले का मार्ग ...।

...सः ददाशुषे रायः पोषं अरासत।

(ऋ. १।१६६।३)

...दाताओंको अन्न एवं पुष्टि प्रदान करते हैं।

...तः तविषीभिः अव्यत, स्वयतासः ध्राज- ...रष्टिए विश्वा भुवनानि यामः चित्रः

(ऋ. १।१६६।४)

वेगपूर्वक आक्रमण करनेहारे वीर अपनी शक्तियोंसे सबका प्रतिपालन करते हैं अपने आपको सुरक्षित रखकर शत्रुदलपर धावा करते हैं। जिस समय वे अपने हथियारोंको सुसज्ज करते हैं, तब सभी सहम जाते हैं क्योंकि इनका आक्रमण बडाही भीषण होता है।

(१६१) त्वेषयामाः नर्याः यत् पर्वतान् नदयन्त, दिवः पृष्ठं अचुच्यवुः, वः अज्मन् विश्वः वनस्पतिः भयते।

(ऋ. १।१६६।५)

वेगसे हमले करनेवाले तुम लोग, जोकि जनताके हितके लिए आक्रमण कर बैठते हो, जिस समय पर्वतोंपर से गरजते हुए गमन करते हो, तब स्वर्ग का पृष्ठभाग स्पन्दित हो उठता है और तुम्हारी इस चढाईके भीतर समूचे वनस्पति भी भयभीत हो जाते हैं।

(१६३) यत्र वः क्रिविर्दती दिद्युत् रदति, (तत्र) यूयं सुचेतुना अरिष्टग्रामाः नः सुमतिं पिपर्तन।

(ऋ. १।१६६.६)

जब तुम्हारा तीक्ष्ण एवं दन्दानेदार हथियार शत्रुके टुकडे टुकडे कर देता है, उस भीषण संग्राममें तुम अपना चित्त शांत रखकर और अपने नगर सुरक्षित रखकर हमारी बुद्धि की शक्तिको बढाते हो।

(१६४) अनवभ्रराधसः अलातृणासः अर्कं अर्चन्ति, (तानि) वीरस्य प्रथमानि पौंस्या विदुः।

(ऋ. १।१६६।७)

जिनके धनको कोई छीन नहीं सकता, जो दुश्मनों को पूरी तरह से विनष्ट कर डालते हैं, ऐसे वीर उपासनीय देवताकी पूजा करते हैं और उन वीरोंके प्रमुख एवं पौरुष उसी समय प्रकट होते हैं।

(१६५) यं अभिहुतेः अघात् आवत, तं शतभुजिभिः पूर्भिः रक्षत। (ऋ. १।१६६।८)

जिसे नाश या पापसे तुम बचाते हो, उसकी रक्षा सैकडों उपभोगसाधनोंसे युक्त गढ या दुर्गोंसे तुम करते हो। [उसे दुर्गमा निर्भय बना देते हो।]

(१६६) वः रथेषु विश्वानि भद्रा, वः अंसेषु तविषाणि आहिता, प्रपथेषु द्र...वः, ... वक्षः ... विद्धते। (ऋ. १।१६६।९)

...

खानेकी चीजें रखते हो; तुम्हारे रथोंके पहिये उचित अवसरपर उचित ढंगसे घूमते हैं। [तुम शत्रुओंपर ठीक मौके पर ठीक तरह हमले करते हो।]

(१६७) नर्येषु वाहुषु भूरीणि भद्रा, वक्षःसु रुक्माः, अंसेषु रभसासः अञ्जयः, पविषु अधि क्षुराः, अनु श्रियः वि धिरे। (ऋ. १।१६६।१०)

मानवोंके हितकर्ता वीरोंके बाहुओंमें बहुतसी शक्तियाँ हैं, जो कि कल्याणकारक हैं; वक्षस्थलपर सुहरोंके हार हैं, कंधोंपर वीरभूषण हैं उनके वज्रों की धारा अत्यन्त तीक्ष्ण है। ये सभी बातें वीरोंकी सुन्दरता बढाते हैं।

(१६८) विभ्वः विभूतयः दूरेदृशः मन्द्राः सुजिह्वाः आसभिः स्वरितारः परिस्तुभः। (ऋ. १।१६६।११)

ये वीर सामर्थ्यसंपन्न, ऐश्वर्यशाली, दूरदर्शी, हर्षित, सुन्दर वक्ता हैं, अतः अत्यन्त सराहनीय हैं।

(१६९) दात्रं दीर्घं व्रतं, सुकृते जनाय त्यजसा अराध्वम्। (ऋ. १।१६६।१२)

दान देना वीरोंका बडा व्रत है, पुण्यकर्मकर्ता को ये वीर दान देते हैं।

(१७०) जामित्वं शंसं, साकं नरः मनवे दंसनैः श्रुष्टिं आव्य, आ चिकित्रिरे (ऋ. १।१६६।१३)

वीरोंका बंधुप्रेम अत्यन्त सराहनीय है। ये वीर एकत्रित रहकर अपने प्रयत्नों से सबका संरक्षण करते हैं और दोष दूर हटाते हैं।

(१७१) जनासः वृजने आ ततनन्। (ऋ. १।१६६।१४)

वीर युद्धक्षेत्रमें अपना सैन्य फैलाते हैं।

(१७२) इषा तन्वे वयां आ यासिष्ट (ऋ. १।१६६।१५)

अन्नसे शरीरमें सामर्थ्य बढा दो।

इषं वृजनं जीरदानुं विद्याम।

अन्न, बल एवं शीघ्र विजय मिल जाए।

(१७३) सुमायाः अवोभिः आ यान्तु। (ऋ. १।१६७।२)

कुशल वीर अपने संरक्षणके साधनोंसे युक्त हो पधारें।

एषां नियुतः समुद्रस्य पारे धनयन्त।

इनके घोडे (घुडसवार) समुन्दरके पार चले जाकर धन प्राप्त करें।

(१७४) सुधिता कृष्टिः सं मिम्यक्ष (ऋ. १।१६७।३)

अच्छी तलवार इन वीरोंके समीप रहती है।

मनुषः योषा न गुहा चरन्ती, विदथ्या सभावती।

मानवोंकी महिलाओंकी नाईं वह परदेमें रहा करती है (मियानमें छिपी पडी रहती है); पर उचित अवसरपर (सभावती) वह सभामें प्रकट होती है, वैसेही यह तलवार युद्धके समय बाहर आ जाती है।

(१७८) एषां सत्यः महिमा अस्ति, वृषमनाः अहंयुः सुभागाः जनीः वहते। (ऋ. १।१६७।७)

इन वीरोंकी महिमा बहुत बडी है। उनपर जिसका चित्त केन्द्रित हुआ हो, ऐसी अहमहमिकापूर्वक आगे बढनेवाली और सौभाग्यसे युक्त स्त्री वीरप्रजाका सृजन करती है।

(१७९) अच्युता ध्रुवाणि च्यवन्ते, अप्रशस्तान् चयते, दातिवारः ववृधे। (ऋ. १।१६७।८)

ये वीर स्थिरीभूत शत्रुओंको हिला देते हैं, अप्रशस्तोंको एक ओर हटा देते हैं और दानीपन बढा देते हैं।

(१८०) शवसः अन्तं आन्ति आरात्तात् नहि आपुः (ऋ. १।१६७।९)

वीरोंके बलकी थाह समीप या दूरसे नहीं मिलती है।

धृष्णुना शवसा शूशुवांसः धृषता द्वेषः परि स्थुः

शत्रुविध्वंसक, उत्साहपूर्ण बलसे वृद्धिंगत होनेवाले वीर अपनी प्रचण्ड सामर्थ्य से शत्रुओंको घेर लेते हैं।

(१८१) अद्य वयं इन्द्रस्य प्रेष्ठाः, वयं श्वः। (ऋ. १।१६७।१०)

आज हम परमपिता परमात्माके प्यारे हैं, उसी प्रकार कल भी हम प्यारे बनकर रहें।

पुरा वयं महि अनु द्यून् समर्यं वोचमहि।

पहले से हमें बडप्पन मिले, इसलिए हरदिनके संग्राममें घोषणा करते आये हैं।

ऋभुक्षाः नरां नः अनु स्यात्।

वह प्रभु समूची मानवजातिमें हमारे अनुकूल बने।

(१८२) यज्ञायज्ञा समना तुतुर्वणिः। (ऋ. १।१६८।१)

हर कर्ममें मनकी संतुलित दशा (सिद्धिके निकट) त्वरापूर्वक पहुँचानेवाली है।

धियंधियं देवया दधिध्वे।

हर विचारमें देवताविषयक प्रेम धारण करो।

सुविताय अवसे सुवृक्तिभिः आ ववृत्याम्।

सबकी सुस्थितिके लिए तथा सुरक्षाके लिए अर्चनाओंसे वीरोंको बारबार बुलाता हूँ।

(१८४) ये स्वजाः स्वतवसः धूतयः, इषं स्वर् अभिजायन्त। (ऋ. १।१६८।२)

जो स्वयंस्फूर्ति से कार्य करते हैं, अपने बलसे युक्त होते हैं और शत्रुको विचलित करा देनेकी क्षमता रखते हैं, वे धनधान्य एवं तेजस्विता पानेके लिएही उत्पन्न होते हैं।

(१८५) अंसेषु रारभे, हस्तेषु कृतिः संदधे। (ऋ. १।१६८।३)

(वीरोंके) कंधोंपर हथियार तथा हाथोंमें तलवार रहती है।

(१८६) स्वयुक्ताः दिवः अव आ ययुः। (ऋ. १।१६८।४)

स्वयं ही सत्कर्ममें जुट जानेवाले वीर स्वर्ग से भूमंडलपर उतर पडते हैं।

अरेणवः तुविजाताः भ्राजदृष्टयः दृळ्हानि अचुच्यवुः। (ऋ. १।१६८।४)

निष्कलंक, बलिष्ठ, तेजस्वी आयुध धारण करनेवाले वीर सुदृढ शत्रुओंको भी पदभ्रष्ट कर डालते हैं।

(१८७) ऋष्टिविद्युतः इषां पुरुप्रैषाः। (ऋ. १।१६८।५)

शस्त्रों से सुशोभित दीख पडनेवाले वीर अन्नप्राप्तिके लिए बहुतही प्रेरणा करनेवाले होते हैं।

(१८९) वः सातिः रातिः अमवती स्वर्वती त्वेषा विपाका पिपिष्वती भद्रा पृथुज्रयी जञ्जती। (ऋ. १।१६८।७)

तुम्हारी सेवा एवं देन बलवान, सुखदायक, तेजस्वी, परिपक्व, शत्रुदलका विध्वंस करनेवाली, कल्याणकारक, जयिष्णु तथा दुश्मनों से जूझनेवाली है।

(१९१) पृश्निः महते रणाय अयासां त्वेषं अनीकं असूत। (ऋ. १।१६८।९)

मातृभूमिने बडे भारी युद्धके लिए शूरोंके तेजस्वी सैन्यका सृजन किया।

सप्सरासः अभ्वं अजनयन्त।

संघ बनाकर हमले चढानेवाले वीरोंने बडी भारी एवं अनोखी शक्ति प्रकट की।

(१९२) तुराणां सुमतिं भिक्षे। (ऋ. १।१७१।१)

शीघ्रही विजयी बननेवाले वीरोंकी सद्बुद्धि की इच्छा या चाह मैं करता हूँ।

हेळः नि धत्त = द्वेष एक ओर करो। वैरको ताकमें रख दो।

(१९५) यामः चित्रः ऊती चित्रा। (ऋ. १।१७२।१)

वीरोंका शत्रुदलपर जो आक्रमण होता है, वह अनूठा है और उनका संरक्षण भी बडा अनोखा है।

सुदानवः अहिभानवः।

ये वीर बडे ही उत्कृष्ट दानी हैं तथा इनका तेज भी कभी नहीं घटता।

(१९७) तृणस्कन्दस्य विशः परि वृङ्क्त। (ऋ. १।१७२।३)

तिनके की नाईं अपनेआप विनष्ट होनेवाली प्रजाका विनाश न होने पाय, ऐसी आयोजना करो।

जीवसे ऊर्ध्वान् कर्त।

दीर्घकालतक जीवित रहनेके लिए उन्हें उच्चपदपर अधिष्ठित करो।

[शुनकपुत्र गृत्समद ऋषि।]

(१९८) दैव्यं शर्धः उप ब्रुवे। (ऋ. २।३०।११)

दिव्य बलकी मैं प्रशंसा करता हूँ।

सर्ववीरं अपत्यसाचं श्रुत्यं रयिं दिवे दिवे नशामहै।

सभी वीर तथा अपत्योंसे युक्त और कीर्ति प्रदान करनेवाला धन हमें प्रति दिन मिलता रहे।

(१९९) धृष्णु-ओजसः तविषीभिः अर्चिनः शुशुचानाः गाः अप अवृण्वत। (ऋ. २।३४।१)

शत्रुका पराभव करनेवाले, सामर्थ्योंके कारण पूज्य बने हुए तेजस्वी वीर गौओंको (शत्रुके कारागृह से) छुडा देते हैं।

(२०१) अश्वान् उक्षन्ते, आशुभिः आजिषु तुरयन्ते। (ऋ. २।३४।३)

वीर सैनिक घोडोंको बलिष्ठ बनाते हैं और घोडोंपर बैठकर वे युद्धोंमें त्वरापूर्वक चले जाते हैं।

हिरण्यशिप्राः समन्यवः दविध्वतः पृक्षं याथ।

स्वर्णिम शिरोवेष्टन पहननेवाले, उत्साही तथा शत्रुको विकम्पित करनेवाले वीर अन्नको प्राप्त करते हैं।

(२०२) जीरदानवः अनवभ्रराधसः वयुनेषु धूर्षदः विश्वा भुवना आ ववक्षिरे। (ऋ. २।३४।४)

शीघ्र विजयी बननेवाले, ऐसा धन समीप रखनेवाले कि जिसको कोईभी छीन नहीं सकता ऐसे वीर तुरन्त सभी कर्मोंमें अगुआ बनकर सबको आधार देते हैं।

(२०३) इन्धन्वभिः रप्शदूधभिः धेनुभिः आ गन्तन। (ऋ. २।३४।५)

द्योतमान और बडे बडे थनवाली गौओंके झुंडको साथ लिये हुए इधर आओ।

(२०४) धेनुं ऊधनि पिन्वत, वाजपेशसं धियं कर्त। (ऋ. २।३४।६)

गौके दूधकी मात्रा बढाओ और ऐसा कर्म करो कि अन्नसे पुष्टि पाकर सुरूपता बढे।

(२०५) इषं दात, वृजनेषु कारवे सनिं मेधां अरिष्टं दुष्टरं सहः (दात)। (ऋ. २।३४।७)

अन्नका दान करो। युद्धमें कुशलतापूर्वक कर्तव्य करनेहारेको देन, बुद्धि और विनष्ट न होनेवाली अजेय शक्तिका प्रदान करो।

(२०६) सुदानवः रुक्मवक्षसः भगे अश्वान् रथेषु आ युञ्जते, जनाय महीं इषं पिन्वते। (ऋ. २।३४।८)

उत्तम दान देनेहारे, छातीपर स्वर्णहार धारण करनेवाले वीर सैनिक ऐश्वर्यके लिये जब अपने रथोंको अश्व जोतते हैं [युद्धके लिए तैयार बनते हैं] तब जनताको विपुल अन्नका दान देते हैं।

(२०७) रिषः रक्षत, तं तपुषा चक्रिया अभि वर्तयत, अशसः वधः आ हन्तन। (ऋ. २।३४।९)

शत्रुओंसे हमारी रक्षा करो, उन शत्रुओंको तपाये हुए चक्र नामक शस्त्रसे विद्ध करो और पेटू दुश्मनका वध कर डालो।

(२०८) तत् चित्रं याम चेकिते। (ऋ. २।३४।१०)

वह अनूठा आक्रमण स्पष्ट रूपसे दीख पडता है।

आपयः पृश्न्याः ऊधः दुहुः।

मित्र गौके थनका दोहन करते हैं [और उस दुग्धका पान करते हैं।]

(२११) क्षोणीभिः अरुणेभिः अञ्जिभिः ऋतस्य सदनेषु वावृधुः, अत्येन पाजसा सुचन्द्रं सुपेशसं वर्णं दधिरे। (ऋ. २।३४।१३)

केसरिया वरदी पहने हुए वीर यज्ञमंडपमें सम्मानपूर्वक बैठते हैं और अपने विशेष बलसे सुन्दर छवि धारण कर लेते हैं [अर्थात् सुहाने लगते हैं।]

(२१२) अवरान् चक्रिया अवसे आभिष्टये आ ववर्तत्। (ऋ. २।३४।१४)

श्रेष्ठ वीरोंको क्रमसे रक्षणार्थ और अभीष्ट कर्मकी पूर्तिके लिए समीप लाता हूँ।

ऊतये महि वरूथं इयानः।

अपने रक्षणके लिए वीर बडे स्थान या गृहको प्राप्त होता है।

(२१३) अंहः अति पारयथ, निदः मुञ्चथ, ऊतिः अर्वाची सुमतिः ओ सु जिगातु। (ऋ. २।३४।१५)

पापसे बचाओ, निन्दासे छुडाओ। संरक्षण तथा सुबुद्धि हमारे निकट आ पहुँचे।

[गाथिपुत्र विश्वामित्र ऋषि।]

(२१४) वाजाः तविषीभिः प्र यन्तु, शुभे संमिश्लाः पृषतीः अयुक्षत, अदाभ्याः विश्ववेदसः बृहदुक्षः पर्वतान् प्र वेपयन्ति। (ऋ. ३।२६।४)

बलिष्ठ वीर अपने बलोंके साथ शत्रुदलपर चढाई करें; लोककल्याणके लिए इकट्ठे होकर वे अपने घोडोंको रथमें जोत दें (वे तैयार हों।) न दबनेवाले वे वीर सब धनों एवं बलोंसे युक्त हो पर्वततुल्य स्थिर शत्रुओंकोभी कँपा देते हैं।

(२१५) वयं उग्रं त्वेषं अवः आ ईमहे। (ऋ. ३।२६।५)

हम उग्र, तेजस्वी संरक्षक सामर्थ्यकी इच्छा करते हैं।

ते वर्पनिर्णिजः स्वानिनः सुदानवः।

वे वीर स्वदेशी वरदी पहननेवाले हैं और बडे भारी वक्ता तथा विख्यात दानी हैं।

(२१६) गणं-गणं व्रातं-व्रातं भामं ओजः ईमहे। (ऋ. ३।२६।६)

हर वीरसमुदायमें सांघिक बल तथा ओज पनपने लगे यही हमारी चाह है।

अनवभ्रराधसः धीराः विदथेषु गन्तारः।

जिनका धन कोईभी छीन नहीं सकता, ऐसे ये वीर रणभूमिमें जानेवाले ही हैं।

[आत्रिपुत्र श्यावाश्व ऋषि।]

(२१७) यज्ञियाः धृष्णुया अनुष्वधं अद्रोघं श्रवः मदन्ति (ऋ. ५।५२।१)

पूजनीय वीर, शत्रुदलका पराभव करनेहारी शक्तिसे युक्त होकर, वैरभावरहित यश पाकर प्रसन्नचेता हो जाते हैं।

(२१८) ते धृष्णुया स्थिरस्य शवसः सखायः सन्ति। (ऋ. ५।५२।२)

वे वीर शत्रुकी धज्जियाँ उडानेवाले तथा स्थायी बलके सहायक हैं।

ते यामन् शश्वतः धृषद्विनः त्मना आ पान्ति।

वे शत्रुपर आक्रमण करते समय शाश्वत विजयी सामर्थ्यसे स्वयं ही चारों ओर रक्षाका प्रबंध करते हैं।

(२१९) ते स्पन्द्रासः उक्षणः शर्वरीः अति स्कन्दन्ति। (ऋ. ५।५२।३)

वे शत्रुदलको मारे डरके स्पन्दित करनेवाले तथा बलिष्ठ हैं और वीरताके कारण रात्रीके समय भी दुश्मनोंपर धावा कर देते हैं।

महः मन्महे।

इन वीरोंके तेजका मनन करते हैं।

(२२०) विश्वे मानुषा युगा मर्त्यं रिषः पान्ति, धृष्णुया स्तोमं दधीमहि। (ऋ. ५।५२।४)

सभी वीर मानवी स्पर्धाओंमें शत्रुओं से मानवोंको सुरक्षित रखते हैं, इसीलिए हम उन वीरोंके शौर्यपूर्ण काव्य स्मरणमें रखते हैं।

(२२१) अर्हन्तः सुदानवः असामिशवसः दिवः नरः। (ऋ. ५।५२।५)

पूजनीय, दानशूर तथा संपूर्णतया बलिष्ठ वीर जो सचमुच स्वर्गके नेता वीर हैं।

(२२२) रुक्मैः युधा ऋष्वाः नरः ऋष्टीः एनान् असृक्षत, भानुः त्मना अर्त। (ऋ. ५।५२।६)

हारों तथा युद्ध शक्तियोंसे विभूषित बडे भारी नेता वीर अपने शस्त्र इन शत्रुओंपर छोडते हैं, तब उनका तेज स्वयं ही उनके निकट चला जाता है। [वे तेजस्वी दीख पडते हैं।]

(२२४) सत्यशवसं ऋभ्वसं शर्धः उच्छंस, स्पन्द्राः नरः शुभे त्मना प्रयुञ्जत। (ऋ. ५।५२।८)

सत्य बल से युक्त, आक्रामक सामर्थ्यकी सराहना करो। शत्रुको विकम्पित करनेवाले ये वीर शुभ कर्मोंमें स्वयंही जुट जाते हैं।

(२२५) रथानां पव्या ओजसा पर्वतं भिन्दन्ति। (ऋ. ५।५२।९)

अपने रथके पहियों से वीरतापूर्वक पर्वतकोभी छिन्नविच्छिन्न कर डालते हैं।

(२२६) आपथयः विपथयः अन्तःपथाः अनुपथाः विस्तारः यज्ञं ओहते। (ऋ. ५।५२।१०)

समीपवर्ती, विरोधी, गुप्त तथा अनुकूल इत्यादि विभिन्न मार्गोंसे प्रयाण करनेवाले वीर अपना दल विस्तृत करके शुभ कर्मके लिए यज्ञका वहन करते हैं।

(२२७) नरः नियुतः परावतः ओहते, चित्रा रूपाणि दर्श्या। (ऋ. ५।५२।११)

नेता वीर समीप या दूर रहकर यज्ञके लिए मग्न होकर आते हैं, उस समय उनके अनेक रूप बडेही दर्शनीय दीख पडते हैं।

(२२८) कुभन्यवः उत्सं आनूनुः, ऊमाः दृशि त्विषे आसन्। (ऋ. ५।५२।१२)

मातृभूमिकी पूजा करनेहारे वीर जलाशयोंका गुणगान करते हैं; वे संरक्षक वीर आँखोंको चौंधियाते हैं।

(२२९) ये ऋष्वाः ऋष्टिविद्युतः कवयः वेधसः सन्ति, नमस्य, गिरा रमय। (ऋ ५।५२।१३)

जो वीर बडे तेजस्वी आयुध धारण करनेहारे, ज्ञानी तथा कवि हैं, उनका अभिवादन या नमन करना और अपनी वाणी से उन्हें हर्षित रखना चाहिए।

(२३०) ओजसा धृष्णवः धीभिः स्तुताः। (ऋ. ५।५२।१४)

अपनी सामर्थ्यसे शत्रुका विनाश करनेहारे वीर बुद्धिपूर्वक प्रशंसित होनेयोग्य हैं।

(२३१) एषां देवान् अच्छ सूरिभिः यामश्रुतेभिः अञ्जिभिः दाना सचेत। (ऋ. ५।५२।१५)

इन दैवी वीरोंके समीप ज्ञानी तथा आक्रमणकी वेलामें विख्यात और गणवेश से विभूषित वीर दान देकर पहुँचते हैं।

(२३२) गां पृश्निं मातरं प्रवोचन्त। (ऋ. ५।५२।१६)

वे वीर कह चुके हैं कि, गौ तथा भूमि हमारी माता है।

(२३३) श्रुतं गव्यं राधः, अश्व्यं राधः निमृजे। (ऋ. ५।५२।१७)

विख्यात गोधन तथा अश्वधनको भली भाँति धोकर सुस्वच्छ रखता हूँ।

(२३६) मर्याः अरेपसः नरः पश्यन् स्तुहि। (ऋ. ५।५३।३)

इन मानवों निर्दोष वीरोंको देखकर प्रशंसा करो।

(२३७) स्वभानवः अञ्जिषु वाजिषु स्रक्षु रुक्मेषु खादिषु रथेषु धन्वसु श्रायाः (ऋ. ५।५३।४)

तेजस्वी वीर गणवेश पहनकर घोडे, माला, हार, अलंकार, रथ एवं धनुष्यका आश्रय करते हैं।

(२३८) जीरदानवः मुदे रथान् अनुदधे। (ऋ. ५।५३।५)

त्वरित विजयी बननेहारे वीर आनन्दके लिए रथोंपर बैठते हैं।

(२३९) सुदानवः नरः दृदाशुषे यं कोशं आ अचुच्यवुः, धन्वना अनुयन्ति। (ऋ. ५।५३।६)

दानी एवं नेता वीर उदार पुरुष के लिए जो धनभाण्डार भरकर लाते हैं, उसीके साथ वे धनुर्धारी बनकर प्रयाण करते हैं।

(२४४) शर्धं शर्धं व्रातं-व्रातं गणं-गणं सुशस्तिभिः धीतिभिः अनुक्रामेम (ऋ. ५।५३।११)

प्रत्येक सेनाके विभागके साथ अच्छे अनुशासनसहित भले विचारों से युक्त होकर हम क्रमशः चलते हैं।

(२४६) तोकाय तनयाय अक्षितं धान्यं बीजं वहध्वे, विश्वायु सौभगं अस्मभ्यं धत्तन। (ऋ. ५।५३।१३)

बालबच्चोंके लिए नष्ट न होनेवाला धान्य तुम लाओ और दीर्घ जीवन तथा सौभाग्य हमें प्रदान करो।

(२४७) स्वस्तिभिः अवद्यं हित्वा, अरातीः तिरः निदः अतीयाम, योः शं उस्रि भेषजं सह स्याम। (ऋ. ५।५३।१४)

कल्याणकारक साधनोंसे दोष दूर करके शत्रुओं तथा गुप्त निन्दकों को दूर हटा दें और एकतासे पाये जानेवाला शांतिसुख एवं तेजस्विता बढानेवाला औषध हम प्राप्त करें।

(२४८) यं त्रायध्वे, सः मर्त्यः सुदेवः समह, सुवीरः असति। (ऋ. ५।५३।१५)

ये वीर जिसका संरक्षण करते हैं, वह अत्यन्त तेजस्वी, महत्त्वयुक्त वीर बन जाता है।

ते स्याम= हम प्रभुके प्यारे हों

(२४९) पूर्वान् कामिनः सखीन् हुय। (ऋ. ५।५३।१६)

पहलेसे परिचित प्रिय मित्रों को हम अपने समीप बुलाते हैं।

(२५०) स्वभानवे शर्धाय वाचं प्रानज।

द्युम्नश्रवसे महि नृम्णं आर्चत (ऋ. ५।५४।१)

तेजस्वी बलका वर्णन करो और तेजस्वी यश पानेवाले वीरोंको बडी भारी देन देकर उनका सत्कार करो।

(२५१) तविषाः वयोवृधः अश्वयुजः परिज्रयः। (ऋ. ५।५४।२)

बलिष्ठ, वयोवृद्ध एवं घोडोंको रथोंमें जोतनेवाले वीर चारों ओर संचार करते हैं।

(२५२) नरः अश्मदिद्यवः पर्वतच्युतः ह्रादुनिवृतः स्तनयदमाः रभसा उदोजसः मुहुः चित्। (ऋ. ५।५४।३)

हथियारोंसे चमकनेवाले वीर नेता पर्वतोंकोभी हिलानेवाले तथा वज्रोंसे युक्त और वर्णनीय सामर्थ्यसे पूर्ण एवं वेगवान हैं इसलिए विशेष बलिष्ठ होकर बारबार हमले करते हैं।

(२५३) धूतयः शिक्वसः यत् अक्तून् अहानि अन्तरिक्षं रजांसि अज्रान् दुर्गाणि वि, न रिष्यथ। (ऋ. ५।५४।४)

शत्रुओंको हिलानेवाले वीर बलवान हो जब रातदिन अन्तरिक्ष, धूलिमय भूविभाग एवं बीहड स्थलोंमें से दौड जाते हैं, तब वे थकावटकी अनुभूति न करें। [इतनी शक्ति उनमें बढ जाए।]

(२५४) तत् योजनं वीर्यं दीर्घं महित्वनं ततान, यत् यामे अगृभीतशोचिषः अनश्वदां गिरिं नि अयातन। (ऋ. ५।५४।५)

तुम्हारी आयोजना, पराक्रम, बडा भारी पौरुष बहुतों फैल चुका है, जब तुम शत्रुपर चढाई करते हो, तब बड तुम्हारा तेज घटता नहीं, किन्तु जिधर घोडेपर बैठकर जाना भी दूभर प्रतीत हो उधर भी, विकट पहाडपरभी तुम आक्रमण करही डालते हो।

(२५५) शर्धः अभ्राजि, अरमतिं अनु नेषथ। (ऋ. ५।५४।६)

तुम्हारा बल विशोभित हो उठा है, आराम न करते हुए

तुम अनुकूल मार्गसे अपने अनुयायियोंको ले चलो।

(२५६) यं सुहृदय स न जीयते, न हन्यते, न स्रेधति, न व्यथते, न रिष्यति। (ऋ. ५।५४।७)

वीर जिनको सहायता पहुँचाते हैं, वह न पराजित होता है, न किसी से मारा जाता है, न क्षिन्न होता है, न दुःखी बनता है और न क्षीणभी होता है।

(२५७) ग्रामजितः नरः इनासः अस्वरन्। (ऋ. ५।५४।८)

शत्रुके दुर्गोंको जीतकर अपने अधीन करनेवाले वीर जब वेगसे दुश्मनोंपर चढाई कर डालते हैं, तब वे बडी भारी गर्जना करते हैं।

(२५८) इयं पृथिवी अन्तरिक्ष्याः पथ्याः प्रवत्वतीः। (ऋ. ५।५४।९)

वीरोंके लिए इस पृथ्वीपरके तथा अन्तरिक्षके मार्ग सरल होते जाते हैं।

(२५९) समरत्तः स्वर्नरः सूर्ये उदिते मदथ, स्यन्नाः न श्रथयन्त, सद्यः अस्य अध्वनः पारं अश्नुथ। (ऋ. ५।५४।१०)

वलिष्ठ वीर सूर्योदय होनेपर प्रसन्न होते हैं। इनके दौडनेवाले घोडे कभीभी थक नहीं जाते, तत्काल वे अपने स्थानपर पहुँच जाते।

(२६०) अंसेषु ऋष्टयः पत्सु खादयः, वक्षःसु रुक्माः, रथेषु विद्युतः शीर्षसु शिप्राः। (ऋ. ५।५४।११)

वीर सैनिकोंके कंधोंपर भाले, पैरोंमें [illegible] सुवर्णहार, रथोंमें [illegible] और सरपर [illegible] विराजते हैं।

(२६१) अगृभीतशोचिषं रुशत् पिप्पलं विधूनुथ, वृजना समच्यन्त, अतित्विषन्त। (ऋ. ५।५४।१२)

[illegible] तेजस्वी, चमकनेवाले [illegible] (वनस्पतियोंके फल या जानी) [illegible] तेजस्वी बनो।

(२६२) [illegible] रायः स्याम [illegible] सहस्रिणं रणन्। (ऋ. ५।५४।१३)

हमें [illegible] धनोंसे हम [illegible]

(२६३) [illegible] (ऋ. ५।५४।१४)

इस प्रकार उत्साहके साथ जो बीरोंकी पूजा करते हैं, मानवोंका हित करनेवाले तत्वज्ञानीकी रक्षा करो, लोगोंके पोषणकर्ताओंको घोडे देकर पर्याप्त भरपूर दे दो और इसी प्रकार लोकको [illegible] बना दो।

(२६४) तद् द्रविणं यामि, येन नॄन् अभि ततनाम। (ऋ. ५।५४।१५)

वह धन चाहिए, जो सभी लोगोंमें विभक्त किया जा सके।

(२६५) भ्राजदृष्टयः रुक्मवक्षसः बृहद् वयः दधिरे, सुयमेभिः आशुभिः अश्वैः ईयन्ते। (ऋ. ५।५५।१)

चमकीले हथियार धारण करनेवाले और वक्षःस्थलपर स्वर्णमुद्रा रखनेवाले वीर बहुतसा अन्न समीप रखते हैं और अच्छी भाँति सिखाये हुए घोडोंपर बैठकर जाते हैं।

रथाः शुभं यातां अनु अवृत्सत।

तुम्हारे रथ शुभ कार्य के लिए जानेवालेके मार्गका अनुसरण करें।

(२६६) यथा विद स्वयं तविषीं दधिध्वे, महान्तः उर्विया बृहत् विराजथ। (ऋ. ५।५५।२)

[illegible]

(२६७) [illegible] (ऋ. ५।५५।३)

[illegible] है।

(२६८) [illegible] (ऋ. ५।५५।४)

[illegible]

(२६९) [illegible] (ऋ. ५।५५।५)

[illegible]

(२७०) [illegible] (ऋ. ५।५५।६)

तुम वीरोंके मार्गमें पहाड या नदियाँ रुकावट नहीं डाल सकती हैं। जिधर तुम्हें चढाई करनी हो, उधर मजेमें चले जाओ। आकाशसे के भूमितल मन चाहे उधर तुम घूमते चलो।

(२७२) पूर्वं, नूतनं, यत् उद्यते, शस्यते, तस्य नवेदसः भवथ। (ऋ. ५।५५।८)

जो कुछभी बढिया और सराहनीय है, चाहे वह पुराना या नया हो, तुम उससे ठीक ठीक परिचित रहो।

(२७३) अस्मभ्यं बहुलं शर्म वियन्तन, नः मृळत। (ऋ. ५।५५।९)

हमें बहुत सुख दे दो और हमें आनन्दित करो।

(२७४) यूयं अस्मान् अंहतिभ्यः वस्यः अच्छ निः नयत। वयं रयीणां पतयः स्याम (ऋ. ५।५५।१०)

हमें दुर्दशासे छुडानेके लिए तुम, उपनिवेश बसाने योग्य स्थल की ओर हमें ले चलो और ऐसा प्रबंध करो कि, हम धनके अधिपति हों।

(२७५) शर्धन्तं रुक्मेभिः अञ्जिभिः पिंशं गणं अद्य विशः अव ह्वय। (ऋ. ५।५६।१)

शत्रुध्वंसक और आभूषणोंसे अलंकृत वीरोंके दलको प्रजाके हितके लिए इधर बुलाओ।

(२७६) आशसः भीमसंदृशः हृदा वर्ध। (ऋ. ५।५६।२)

प्रशंसाके योग्य और भीषण शरीरवाले इन वीरोंको अंतःकरणपूर्वक संवर्धित करो, [ऐसे भीमकाय तथा सराहनीय वीर जिस प्रकार बढने लगें, ऐसी लगन से व्यवस्था करो।]

(२७७) मीळ्हुष्मती पराहता मदन्ती अस्मत् आ एति। (ऋ. ५।५६।३)

स्नेहयुक्त और जिसे शत्रु पराभूत नहीं कर सके, ऐसी वह सेना सहर्ष हमारी ओरही बढती चली आ रही है।

वः अमः शिमीवान् दुध्रः भीमयुः।

तुम्हारा बल भीषण है, क्योंकि कार्यकुशल शत्रु भी तुम्हें घेर नहीं सकते।

(२७८) ये ओजसा यामभिः अश्मानं गिरिं स्वयं पर्वतं प्र च्यावयन्ति। (ऋ. ५।५६।४)

जो वीर अपने सामर्थ्य से आक्रमण करके पथरीले और अस्मानको छूनेवाले पहाडोंको तोड देते हैं।

(२७९) समुक्षितानां एषां पुरुतमं अपूर्व्यं ह्वये। (ऋ. ५।५६।५)

इकट्ठे बढे हुए इन वीरोंके इस बडे अपूर्व दलकी मैं सराहना करता हूँ।

(२८०) रथे अरुषीः, रथेषु रोहितः आजिरा वहिष्ठा हरी वोळ्हवे धुरि युङ्ग्ध्वम्। (ऋ. ५।५६।६)

तुम रथमें लाल रंगवाली हिरनियाँ, रथोंमें कृष्णसार और वेगवान, खींचनेकी क्षमता रखनेवाले घोडे रथ ढोनेके लिए रथमें जोतते हो।

(२८१) अरुषः तुविस्वनिः दर्शतः वाजी इह धायि स्म वः यामेषु चिरं मा करत्, तं रथेषु प्रचोदत। (ऋ. ५।५६।७)

रक्तवर्णका, हिनहिनानेवाला सुन्दर घोडा यहाँपर जोत रखा है। अब आक्रमण करनेमें देरी न करो, रथमें बैठकर उसे हाँकना शुरु करो।

(२८२) यस्मिन् सुरणानि, श्रवस्युं रथं वयं आ हुवामहे। (ऋ. ५।५६।८)

जिसमें रमणीय वस्तुएँ रखी हैं ऐसे यशस्वी रथकी सराहना हम कर रहे हैं।

(२८३) यस्मिन् सुजाता सुभगा मीळ्हुषी महीयते, तं वः रथेशुभं त्वेषं पनस्युं शर्धं आहुवे। (ऋ. ५।५६।९)

जिसमें अच्छे भाग्ययुक्त तथा प्रशंसनीय शक्तिका महत्व प्रकट होता है, उस तुम्हारे रथमें शोभायमान, तेजस्वी, स्तुत्य बलकी मैं सराहना करता हूँ।

(२८४) सजोषसः हिरण्यरथाः सुविताय आगन्तन। (ऋ. ५।५७।१)

तुम एकही ख्यालसे प्रभावित होकर और सुवर्णके रथमें बैठकर हमारा हित करनेके लिए इधर पधारो।

(२८५) पृश्निमातरः वाशीमन्तः ऋष्टिमन्तः मनीषिणः सुधन्वानः इषुमन्तः निषङ्गिणः स्वश्वाः सुरथाः सुआयुधाः शुभं वियाथन। (ऋ. ५।५७।२)

भूमिको माताकी नाईं आदरपूर्वक देखनेहारे वीर कुल्हाड़ा तथा भाले लेकर, मननशील बनकर, बढिया धनुष्यबाण एवं तूणीर साथमें लेकर उत्कृष्ट घोडे, रथ और हथियार धारण कर जनताका हित करनेके लिए चले जाते हैं।

(२८६) वसु दाशुषे पर्वतान् धूनुथ। वः यामनः भिया वना निजिहीते। यत् शुभे उग्राः पृषतीः अयुग्ध्वं, पृथिवीं कोपयथ। (ऋ. ५।५७।३)

उदार मानवोंको धन देनेके लिए तुम पहाडोंतक को हिला देते हो, तुम्हारी चढाईके भय से वन काँपने लगते हैं. जब कल्याण करनेके लिए तुम जैसे शूर वीर अपने रथको धब्बेवाली हिरनियाँ जोड देते हो, तब समूची पृथ्वी बौखला उठती है।

(२८७) वातत्विषः सुसदृशः सुपेशसः पिशङ्गाश्वाः अरुणाश्वाः अरेपसः प्रत्वक्षसः महिना उरवः। (ऋ. ५।५७।४)

तेजस्वी, समान रूपवाले, आकर्षक रूपवाले, भूरे और लालिमामय घोडे रखनेवाले, दोषरहित तथा शत्रुको विनष्ट करनेवाले वीर अपने महात्म्यसे बहुत बडे हैं।

(२८८) अञ्जिमन्तः सुदानवः त्वेष-संदृशः अनवभ्रराधसः जनुषा सुजातासः रुक्मवक्षसः अर्काः अमृतं नाम भेजिरे। (ऋ. ५।५७।५)

गणवेश पहनकर उदार, तेजस्वी, धन सुरक्षित रखनेवाले, कुलीन परिवारमें पैदा हुए, गलेमें स्वर्णमुद्रानिर्मित हार डाले हुए, सूर्यतुल्य तेजस्वी प्रतीत होनेवाले वीर अमर यश पाते हैं।

(२८९) वः अंसयोः ऋष्टयः, बाह्वोः सहः ओजः बलं अधिहितं, शीर्षसु नृम्णा, रथेषु विश्वा आयुधा, तनूषु श्रीः अधि पिपिशे। (ऋ. ५।५७।६)

तुम्हारे कंधोंपर भाले, बाँहोंमें बल, सरपर साफे, रथोंमें सभी आयुध और शरीरपर शोभा है।

(२९०) गोमत् अश्ववत् रथवत् सुवीरं चन्द्रवत् राधः नः दद. नः प्रशस्तिं कृणुत. वः अवसः भक्षीय। (ऋ. ५।५७।७)

गौओं, घोडों, रथों, वीरपुरुषों से युक्त और विपुल सुवर्ण से पूर्ण धन हमें दो, हमारे वैभवको बढाओ और तुम्हारा संरक्षण हमें मिलता रहे।

(२९१) तुविमघासः ऋतज्ञाः सत्यश्रुतः कवयः युवानः बृहदुक्षमाणाः। (ऋ. ५।५७।८)

बहुत ऐश्वर्यवाले, सत्य जाननेहारे, ज्ञानी, युवक तथा बलवान बनो।

(२९२) स्वराजः आश्वश्वाः अमवत् वहन्ते, उत अमृतस्य ईशिरे. एषां नव्यसीनां तविषीमन्तं गणं स्तुषे। (ऋ. ५।५८।१)

स्वयंशासक होते हुए ये वीर जल्द जानेवाले घोडोंपर चढकर या ऐसे घोडे जोतकर वेगपूर्वक प्रयाण करते हैं, अमरपन पाते हैं। इनके स्तुत्य और बलवान संघकी स्तुति करता हूँ।

(२९३) ये मयोभुवः, महित्वा अमिताः तुविराधसः नूनं तवसं खादिहस्तं धुनिव्रतं मायिनं दातिवारं त्वेषं गणं वंदस्व। (ऋ. ५।५८।२)

सुख देनेहारे, जिनका बडप्पन असीम हो ऐसे, सिद्धि पानेवाले वीर हैं उनके बलिष्ठ आभूषणयुक्त, शत्रुको हिला देनेवाले, कुशल, उदार, तेजस्वी संघको प्रणाम करो।

(२९५) यूयं जनाय इर्यं विभ्वतष्टं राजानं जनयथ युष्मत् मुष्टिहा बाहुजूतः एति। युष्मत् सदश्वः सुवीरः एति। (ऋ. ५।५८।४)

तुम जनताके लिए ऐसे नरेशका सृजन करते हो, जो बडे बडे प्रगतिशील कार्य करनेका आदी बने। तुम जैसे वीरोंमें से ही विशेष बाहुबलसे युक्त मुष्टियोद्धा (Boxer) शूर, विख्यात हो उठता है और तुममें से ही अच्छे घोडोंको समीप रखनेवाला श्रेष्ठ वीर जनताके सम्मुख आ उपस्थित होता है।

(२९६) अचरमाः अकवाः उपमासः रभिष्ठाः पृश्नेः पुत्राः स्वया मत्या सं मिमिक्षुः। (ऋ. ५।५८।५)

समान दशामें रहनेवाले अवर्णनीय, समान कदवाले, वेगशाली और मातृभूमिके सुपुत्र होते हुए ये वीर अपने विचारोंसेही परस्पर मेलसे बर्ताव रखते हैं।

(२९७) यत् पृषतीभिः अश्वैः वीळुपविभिः रथेभिः प्रायासिष्ट, आपः क्षोदन्ते, वनानि रिणते, द्यौः अवक्रन्दतु। (ऋ. ५।५८।६)

जब धब्बेदार घोडे जोतकर सुदृढ पहियोंसे युक्त रथोंमें आरूढ हो तुम आक्रमण शुरू करते हो, तब समद पानीमें भारी खलबली हो जाती है, वन विनष्ट होते हैं और आकाशभी दहाडने लगता है।

(२९८) एषां यामन् पृथिवी प्रथिष्ट, स्वं धावः धुः, वातान् धुरि आयुयुज्रे। (ऋ. ५।५८।७)

इनके आक्रमणोंके फलस्वरूप मातृभूमिकी ख्याति तथा प्रसिद्धि हो चुकी या भूमि समतल हो गयी। उनका बल प्रकट हुआ और इनके चढानेके समय उन्होंने अपने घोडे रथोंमें जोते थे।

(३००) सुवितार्य दावने प्र अक्रन्, पृथिव्यै ऋतं प्रभरे, अश्वान् उक्षन्ते, रजः आ तरुषन्ते, स्वं भानुं अर्णवैः अनुश्रथयन्ते। (ऋ. ५।५९।१)

सबका हित तथा सबकी मदद करने के लिए इस कार्यका प्रारंभ हो चुका है। मातृभूमिका स्तोत्र पढो, घोडे जोत रखो, अन्तरिक्षमेंसे दूर चले जाओ और अपना तेज समुद्र यात्राओंसे चारों ओर फैलाओ।

(३०१) एषां अमात् भियसा भूमिः एजाति। दूरेदृशः ये एमभिः चितयन्ते ते नरः विदथे अन्तः महे येतिरे (ऋ. ५।५९।२)

इन वीरोंके बलसे उत्पन्न भयाकुल भावसे भूमण्डल थर्रा उठता है। जो दूरदर्शी वीर अपने वेगोंसे पहचाने जाते हैं, वे युद्धोंमें महत्त्व पानेके लिए प्रयत्न करते रहते हैं।

(३०२) रजसः विसर्जने सुभ्वः श्रियसे चेतथ। (ऋ. ५।५९।३)

अँधेरा दूर करनेके लिए अच्छे वीर बनकर ये ऐश्वर्य तथा वैभव बढानेके लिए प्रयत्नशील बनते हैं।

(३०३) सुवितार्य दावने प्रभरध्वे, यूयं भूमिं रेजथ। (ऋ. ५।५९।४)

अच्छे ऐश्वर्यका दान करनेके लिए तुम उसे बटोरते हो। इसलिए तुम पृथ्वीकोभी विचलित कर डालते हो।

(३०४) सबन्धवः प्रयुधः प्रयुयुधुः। नरः सुवृधः ववृधुः। (ऋ. ५।५९।५)

परस्पर भ्रातृभावसे रहकर बडे अच्छे योद्धा लडाईमें निरत होते हैं और ये नेता हमेशा बढते रहते हैं।

(३०५) ते अज्येष्ठाः अकनिष्ठासः अमध्यमासः उद्भिदः महसा विवावृधुः। जनुषा सुजातासः पृश्निमातरः दिवः मर्याः नः अच्छ आजिगातन। (ऋ. ५।५९।६)

इन वीरोंमें कोईभी श्रेष्ठ नहीं है, कोई निचले दर्जेका नहीं और न कोई मँझली श्रेणीका है। उन्नतिके लिए संकटोंके जालको तोडनेवाले ये वीर अपने अन्दर विद्यमान बडप्पनसे बढते हैं; कुलीन परिवारमें उत्पन्न और मातृभूमिकी उपासना करनेवाले दिव्य मानव हमारे मध्य आकर निवास करें।

(३०६) ये श्रेणीः ओजसा अन्तान् बृहतः सानुनः परिपप्तुः। एषां अश्वासः पर्वतस्य नभनून् प्राचुच्यवुः। (ऋ. ५।५९।७)

ये वीर कतारमें रहकर वेगपूर्वक पृथ्वीके दूसरे छोरतक या बडे बडे पहाडोंपरभी चले जाते हैं। इनके घोडे पहाडकेभी टुकडे कर डालते हैं।

(३०७) एते दिव्यं कोशं आचुच्यवुः। (ऋ. ५।५९।८)

ये वीर दिव्य भाण्डारको चारों ओर उण्डेल देते हैं, याने सारे धनका विभजन चतुर्दिक् कर देते हैं, ताकि कहींभी विषमता न रहे।

(३०८) ये एकएकः परमस्याः परावतः आयय। (ऋ. ५।६१।१)

ये वीर अकेलेही अत्यन्त सुदूरवर्ती प्रदेशोंसे चले आते हैं।

(३१०) एषां जघने चोदः, नरः सक्थानि वियमुः। (ऋ. ५।६१।३)

जब इन घोडोंकी जंघापर चाबुक लगता है (तब वे अपनी जाँघें तानने लगते हैं) परन्तु ऊपर बैठनेवाले वीर उनका विशेष नियमन करते हैं, (उन घोडोंको अपनी जांघोंसे पकड रखते हैं)।

(३१२) ये आशुभिः वहन्ते, अत्र श्रवांसि दधिरे। (ऋ. ५।६१।११)

जो वीर घोडोंपर चढकर शीघ्र शत्रुओंपर हमला कर देते हैं, वे बहुत संपत्ति धारण करते हैं।

(३१३) श्रिया रथेषु आ विभ्राजन्ते। (ऋ. ५।६१।१२)

ये वीर अपनी सुषमासे रथोंमें चारों ओर चमकते रहते हैं।

(३१४) सः गणः युवा त्वेषरथः, अनेद्यः, शुभंयावा, अप्रतिष्कुतः। (ऋ. ५।६१।१३)

यह वीरोंका संघ नवयौवनसे पूर्ण, तेजस्वी और आभामय रथमें बैठनेवाला, अनिंदनीय, अच्छे कार्यके लिए हलचल करनेवाला तथा सदैव विजयी है।

(३१५) धूतयः ऋतजाताः अरेपसः यत्र मदन्ति कः वेद? (ऋ. ५।६१।१४)

शत्रुको हिला देनेवाले, सत्यके लिए सचेष्ट निष्पाप वीर किस जगह सहर्ष रहते हैं, भला कोई कह सकता है? या कोई जान लेता है?

(३१६) यूयं इत्था मर्तं प्रणेतारः यामहूतिषु धिया श्रोतारः। (ऋ. ५।६१।१५)

तुम इस भाँति मानवोंको ठीक राहसे ले चलनेवाले हो। अतः हमला करते समय अगर तुम्हें पुकारा जाय, तो तुम जानबूझकर उधर ध्यान दो।

(३१७) रिशादसः काम्या वसूनि नः आववृत्तन। (ऋ. ५।६१।१६)

शत्रुविनाशकर्ता तुम वीर हमें अभीष्ट धन लौटा दो।

[अत्रिपुत्र एवयामरुत् ऋषि।]

(३१८) वः मतयः महे विष्णवे प्रयन्तु। (ऋ. ५।८७।१)

तुम्हारी बुद्धियाँ बडे भारी व्यापक देवकी ओर प्रवृत्त हों।

तवसे धुनिव्रताय शवसे शर्धाय प्रयन्तु।

जिसने प्रन किया हो कि, मैं बलिष्ठ शत्रुओंको हिलाकर खदेड दूँगा ऐसे वीरके वेगपूर्ण सामर्थ्यका वर्णन करनेके लिए तुम्हारी वाणियाँ प्रवृत्त हों।

(३१९) ये महिना प्रजाताः, ये च स्वयं विद्मना प्र जाताः, (तेषां) तत् शवः क्रत्वा न आधृषे, मह्ना अधृष्टासः। (ऋ. ५।८७।२)

वे वीर महत्त्वके कारण प्रसिद्ध हुए हैं, अपने ज्ञानसे विख्यात हुए हैं। उनके बडे पराक्रमके कारण उनके बलको कोई पराभव नहीं कर सकता है और अपने अन्दर विद्यमान महत्त्वके कारण शत्रु उनपर हमला करनेका साहस नहीं कर सकते।

(३२०) सुशुक्वानः सुभ्वः, येषां सधस्थे इरी न आ ईष्टे, अग्नयः न स्वविद्युतः धुनीनां प्र स्पन्द्रासः। (ऋ. ५।८७।३)

वे वीर अत्यन्त तेजस्वी एवं बडे हैं, उनके घरमें (अपने क्षेत्रमें) उनपर अधिकार प्रस्थापित करनेवाला कोई नहीं। वे अग्नितुल्य तेजस्वी हैं और अपने तेजसे [illegible] शत्रुओंको भी हिलाकर गिरा देते हैं।

(३२१) सः समानस्मात् सदसः निःचक्रमे, विमहसः शेवृधः विस्पर्धसः जिगाति। (ऋ. ५।८७।४)

यह वीरोंका संघ अपने समान निवासस्थानसे दूसरी समय बाहर निकल आया, सुख बढानेकी [illegible] [illegible] युक्त है और पारस्परिक होड या स्पर्धा छोडकर पराक्रम करनेके लिये आगे बढने लगे।

(३२२) वः अमवान् वृषा त्वेषः ययिः तविषः स्वनः न रेजयत्, सहन्तः स्वरोचिषः स्थारश्मानः हिरण्ययाः सु-आयुधासः इष्मिणः ऋञ्जत। (ऋ. ५।८७।५)

तुम वीरोंका बलयुक्त, समर्थ, तेजस्वी, वेगवान, प्रभावशाली शब्द तुम्हारे अनुयायियोंको भयभीत न करे। तुम शत्रुका पराभव करनेहारे, तेजस्वी सुवर्णालंकारोंसे विभूषित, बढिया हथियार रखनेवाले तथा अन्नभाण्डार साथ रखनेवाले वीर प्रगतिके लिए प्रगतिशील बनते हो।

(३२३) वः महिमा अपारः, त्वेषं शवः अवतु, प्रसितौ संदृशि स्थातारः स्थन, शुशुक्वांसः नः निदः उरुष्यत। (ऋ. ५।८७।६)

तुम्हारी महिमा अपार है, तुम्हारा तेजस्वी बल हमारी रक्षा करे, शत्रुका हमला हो जाय, तो तुम ऐसी जगह रहो कि, हम तुम्हें देख सकें; तुम तेजस्वी वीर हो, इसलिए निंदकोंसे हमें बचाओ।

(३२४) सुमखाः तुविद्युम्नाः अवन्तु। दीर्घं पृथु पार्थिवं सद्म पप्रथे। अद्भुत-एनसां अज्मेषु महः शर्धांसि आ। (ऋ. ५।८७।७)

अच्छे यज्ञ करनेहारे, महातेजस्वी वीर हमारी रक्षा करें। सुविस्तृत [illegible] स्थान पर इन्हीं वीरोंके कारण विख्यात हो चुका है। इन पापसे कोसों दूर रहनेवाले वीरोंके आक्रमणके समय बडे बल दिखाई देने लगते हैं।

(३२५) समन्यवः विष्णोः महः युयोतन, दंसना सनुतः द्वेषांसि अप। (ऋ. ५।८७।८)

हमारी वीर व्यापक परमात्माकी अर्थात [illegible] अपना संबंध जोड दें, अपने पराक्रमसे तुम शत्रुओंको दूर हटा दो।

(३२६) वि-ओमनि ज्येष्ठासः प्रचेतसः निदः दुर्धर्तवः स्यात। (ऋ. ५।८७।९)

[illegible] स्थानमें [illegible] श्रेष्ठ [illegible] ज्ञानी वीर निंदक शत्रुओंके लिए [illegible] हों।

[[illegible]]

(३२७) [illegible] (ऋ. [illegible])

[illegible]

(३२८) या स्वभानवे शर्धाय अमृत्यु श्रवः धुक्षत, तुराणां मृळीके सुम्नैः एवयावरी। (ऋ. ६।४८।१२)

जो गौ, तेजस्वी वीरोंके संघको अमर शक्ति देनेवाला दूध देती है, वह शीघ्रतया कार्य करनेवाले वीरोंके सुखके लिए अनेक प्रकारोंसे संरक्षण करनेवाली बनती है।

(३२९) भरद्वाजाय विश्वदोहसं धेनुं विश्वभोजसं इषं च अवधुक्षत। (ऋ. ६।४८।१३)

जो अन्नका दान पूर्णतया करता है, उसे बढिया दुधारु गौ और पुष्टिकारक अन्न यथेष्ट दे दो।

(३३०) सुक्रतुं मायिनं मन्द्रं सुप्रभोजसं आदिशे स्तुषे। (ऋ. ६।४८।१४)

अच्छे कर्म करनेहारे, कुशल, आनन्दवर्धक, अन्न देनेवाले वीरकी मैं स्तुति करता हूँ, ताकि वह हमारा अच्छा पथ-प्रदर्शक बने।

(३३१) त्वेषं अनर्वाणं शर्धः वसु सुवेदाः, यथा चर्षणिभ्यः सहस्रा आकारिषत्, गूळ्हा वसु आविः-करत्। (ऋ. ६।४८।१५)

तेजस्वी शत्रुरहित बल तथा धन मिल जाय, उसी प्रकार सारे मानवोंको हजारों प्रकारके धन मिलें और छिपा पडा धन प्रकट हो।

(३३२) वामस्य प्रनीतिः सूनृता वामी। (ऋ. ६।४८।२०)

धन प्राप्त करनेकी प्रणाली सत्य एवं प्रशस्त रहे, तोही ठीक।

(३३३) त्वेषं शवः वृत्रहं ज्येष्ठं। (ऋ. ६।६६।१)

तेजस्वी बल शत्रुका मारक ठहरे, तोही वह श्रेष्ठ है।

[बृहस्पतिपुत्र भरद्वाज ऋषि।]

(३३५) अरेणवः नृम्णैः पौंस्येभिः साकं भूवन्। (ऋ. ६।६६।२)

निष्पाप वीर बुद्धि तथा सामर्थ्योंसे पूर्ण बने रहते हैं।

(३३७) सन्तः सन्तः अवद्यानि पुनानाः अयाः जनुषः न ईषन्ते, श्रिया तन्वं अनु उक्षमाणाः शुचयः जोषं अनु नि दुद्रे। (ऋ. ६।६६।४)

सनातनसे रहकर दोषोंको हटाते हुए पवित्रताका पूजन करते हुए वीर अपनी इच्छाओंसे जनतासे दूर नहीं जाते हैं। वे धनसे अपने शरीरोंको बलिष्ठ बनाते हुए, खुद पवित्र होते हुए सबका आनन्द बढाते रहते हैं।

(३३८) येषु धृष्णु, मक्षु अयाः, ते उग्रान् अवयासत्। (ऋ. ६।६६।५)

जिनमें शत्रुविनाशक बल है और जो तुरन्तही हमला करते हैं, ऐसे वीर सैनिक शत्रुओंको पददलित कर देते हैं। भले ही वे भीषण हों।

(३३९) ते शवसा उग्राः धृष्णुसेनाः युजन्त इत्। एषु अमवत्सु स्वशोचिः रोकः न आ तस्थौ। (ऋ. ६।६६।६)

वे अपने बलसे बडे शूर तथा साहसी सैनिक साथ लेकर हमला चढानेवाले वीर हमेशा तैयार रहते हैं। इन बलिष्ठ वीरोंकी राहमें रुकावट डाल सके, ऐसा तेजस्वी प्रति-स्पर्धी कोईभी नहीं मिलता।

(३४०) वः यामः अनेनः अनश्वः अरथीः अजति। अनवसः अनभीशुः रजस्तूः पथ्याः वियाति। (ऋ. ६।६६।७)

तुम्हारा रथ निर्दोष है और घोडों तथा सारथिके न रहनेपरभी वेगपूर्वक जाता है। रक्षणके साधन या लगामके न रहनेपरभी वह रथ गर्द उडाता हुआ राहपरसे चला जाता है।

(३४१) वाजसातौ यं अवथ, अस्य वर्ता न, तरुता नास्ति। सः पार्ये दर्ता। (ऋ. ६।६६।८)

लडाईमें जिसे तुम बचाते हो, उसे घेरनेवाला कोई नहीं, विनष्ट करनेवालाभी कोई नहीं और वह युद्धमें शत्रुओंके गढोंको फोड देता है।

(३४२) ये सहसा सहांसि सहन्ते, मखेभ्यः पृथिवी रेजते, स्वतवसे तुराय चित्रं अर्कं प्रभरध्वम्। (ऋ. ६।६६।९)

जो अपने बलोंसे शत्रुदलके आक्रमणोंको रोकते हैं, उन पूज्य वीरोंके सामने यह पृथिवी थरथर काँपने लगती है। इन बलिष्ठ तथा त्वरापूर्वक कार्य करनेवाले वीरोंकी सराहना करो।

(३४३) त्विषीमन्तः तपुच्यवसः दिद्युत् अत्रंप्रशुनयः भ्राजत्-जन्मानः अधृष्टाः। (ऋ. ६।६६।१०)

तेजस्वी, वेगपूर्वक जानेवाले, प्रकाशमान, पूज्य, भक्ति दिलानेवाले वीर हैं, जिनका पराभव करना शत्रुके लिए दुष्कर है।

(३४६) वृधन्तं भ्राजदृष्टिं आविवासे। शर्धाय उग्राः शुचयः मनीषाः अस्पृध्रन्। (ऋ. ६।६६।११)

बढनेवाले तथा तेजःपूर्ण हथियार धारण करनेवाले वीर स्वागतके लिए सर्वथा योग्य हैं। बल बढानेका हेतु सामने रख ये वीर पवित्र बुद्धिसे युक्त हो, पारस्परिक होड या स्पर्धामें लगे रहते हैं।

[मित्रावरुणपुत्र वसिष्ठऋषि ।]

(३४७) स्वपूभिः मिथः अभिवपन्त। वातस्वनसः अस्पृध्रन्। (ऋ. ७।५६।३)

अपने पवित्र विचारोंके साथ ये वीर इकट्ठे होते हैं और भीषण गर्जना करते हुए एक दूसरेसे स्पर्धा करते हैं।

(३४८) धीरः निण्या चिकेत, मही पृश्निः ऊधः जभार (ऋ. ७।५६।४)

बुद्धिमान वीर गुप्त बातोंको जान सकता है। बडी गौ अपने थनके दूधसे इन वीरोंका पोषण करती है।

(३४९) सा विट् सुवीरा सनात् सहन्ती नृम्णं पुष्यन्ती अस्तु। (ऋ. ७।५६।५)

वह प्रजा अच्छे वीरोंसे युक्त होकर हमेशा शत्रुका पराभव करनेवाली तथा बल बढानेवाली हो जाय।

(३५०) यामं येष्ठाः, शुभा शोभिष्ठाः, श्रिया संमिश्लाः, ओजोभिः उग्राः। (ऋ. ७।५६।६)

ये वीर हमला करनेके लिए जानेवाले, अलंकारोंसे विभूषित, कांतियुक्त तथा सामर्थ्य से भीषण हैं।

(३५१) वः ओजः उग्रं, शवांसि स्थिरा, गणः तुविष्मान्। (ऋ. ७।५६।७)

तुम वीरोंका बल भीषण है, तुम्हारी शक्तियाँ स्थायी हैं और संघ सामर्थ्यवान है।

(३५२) वः शुष्मः शुभ्रः, मनांसि क्रुध्मी, धृष्णोः शर्धस्य धुनिः। (ऋ. ७।५६।८)

तुम्हारा बल दोषरहित तुम्हारे मन क्रोधयुक्त और तुम्हारी शत्रुनाश करनेकी शक्ति वेगयुक्त है।

(३५५) सु-आयुधासः इष्मिणः सुनिष्काः स्वयं तन्वः शुम्भमानाः। (ऋ. ७।५६।११)

बढिया हथियार धारण करनेवाले, वेगपूर्वक जानेहारे और अपने शरीरोंको स्वालंकारोंद्वारा सुशोभित करनेवाले ऐसे ये वीर मरुत् हैं।

(३५६) ऋतसापः शुचिजन्मानः शुचयः पावकाः ऋतेन सत्यं आयन्। (ऋ. ७।५६।१२)

सत्यसे चिपकनेवाले, पवित्र जीवन धारण करनेवाले पवित्र, शुद्ध वीर सरल राहसे सचाई प्राप्त करते हैं।

(३५७) अंसेषु खादयः, वक्षःसु रुक्माः उपशिश्रियाणाः, रुचानाः आयुधैः स्वधां अनुयच्छमानाः। (ऋ. ७।५६।१३)

कंधोंपर आभूषण, छातीपर हार लटकानेवाले, वे तेजस्वी वीर हथियार लेकर अपना बल बढाते हैं।

(३५८) वः बुध्न्या महांसि प्र ईरते, नामानि प्र तिरध्वं, एतं सहस्रियं दम्यं गृहमेधीयं भागं जुषध्वम्। (ऋ. ७।५६।१४)

तुम वीरोंके मौलिक बल प्रकट होते हैं, अपने यशोंको बढाओ, इन सहस्रों गुणोंसे युक्त घरेलू याज्ञिक प्रसादका सेवन करो।

(३५९) वाजिनः विप्रस्य सुवीर्यस्य रायः मक्षु दात। अन्यः अरावा यं आदभत्। (ऋ. ७।५६।१५)

बलवान ज्ञानीको बढिया वीर्ययुक्त धन तुरन्त दे दो, नहीं तो दूसरा कोई शत्रु नाहक उसे छीन ले जाय।

(३६०) सु-अश्वाः शुभ्राः मर्याञ्जिनः शुभयन्त। (ऋ. ७।५६।१६)

वे वीर गतिमान, शोभायमान, सत्पुरुष और खिलाडी बने हुए हैं।

(३६१) दशस्यन्तः सुमेके वरिवस्यन्तः मृळयन्तु। (ऋ. ७।५६।१७)

शत्रुविनाशक, स्थानको महत्त्व देनेवाले वीर जनताको सुख दे दें।

(३६२) ईवतः गोपा अस्ति, सः अद्वयावी। (ऋ. ७।५६।१८)

जो प्रगतिशील लोगोंका संरक्षण करनेवाला हो, वह मनमें एक बात और बाहर कुछ और ऐसा बर्ताव नहीं करता है।

(३६३) तुरं रमयन्ति, इमे सहः सहसः आनमन्ति, इमे शंसं वनुष्यतः नि पान्ति, अररुषे गुरु द्वेषं दधन्ति। (ऋ. ७।५६।१९)

ये त्वरापूर्वक कार्य करनेवालोंको आनन्द देते हैं, अपने सामर्थ्य से बलिष्ठोंको झुकाते हैं, हिंसकोंसे प्रशंसकोंको बचाते हैं और दर्शाते हैं कि, वे कंजूसपर क्रोध करते हैं।

(३६४) इमे रध्रं जुनन्ति, भृमिं जुपन्त, तमांसि अपवाधध्वम् । (ऋ ७।५६।२०)

ये वीर धनिकोंके निकट जैसे जाते हैं, उसी प्रकार भीख-मँगेके समीप भी चले जाते हैं। वे अँधेरा दूर करते हैं।

(३६५) वः सुजातं यत् ई अस्ति, स्पार्हं वसव्ये नः आभजतन । (ऋ. ७।५६।२१)

तुम्हारे समीप जो उच्च कोटिका धन है, उस स्पृहणीय संपत्तिमें हमें सहभागी करो।

(३६६) यत् शूराः जनासः यह्वीषु ओषधीषु विक्षु मन्युभिः सं हनन्त, अध पृतनासु नः त्रातारः भूत। (ऋ. ७।५६।२२)

जब वीर सैनिक नदियोंमें, वनोंमें तथा जनताके मध्य बडे उत्साहसे शत्रुदलपर टूट पडते हैं, तब उन युद्धोंमें तुम हमारे रक्षक बनो।

(३६७) उग्रः पृतनासु साळ्हा, अर्वा वाजं सनिता। (ऋ. ७।५६।२३)

जो उग्र स्वरूपवाला वीर है, वह लडाईमें शत्रुओंको जीतता है और घोडाभी युद्धमें अपना बल दर्शाता है।

(३६८) यः वीरः असु-रः जनानां विधर्ता शुष्मी अस्तु। येन सुक्षितये अपः तरेम, अध स्वं ओकः अभि स्याम। (ऋ. ७।५६।२४)

जो वीर अपना जीवन अर्पित करके जनताका संरक्षण करता है, वह बलवान बन जाता है। उसकी सहायतासे प्रजाका अच्छा निवास हो, इसलिए समुद्रकोभी तैरकर चले जायँ और अपने घरपर सुखपूर्वक रहें।

(३६९) यूयं स्वस्तिभिः सदा नः पात। (ऋ. ७।५६।२५)

तुम हमारी रक्षा हमेशा कल्याणकारक मार्गोंसे करते रहो।

(३७०) यत् उग्राः अयासुः, ते उर्वी रेजयन्ति। (ऋ. ७।५७।१)

जो शूर दुश्मनोंपर धावा करते हैं, वे भूमिको हिला देते हैं।

(३७१) रुक्मैः आयुधैः तनूभिः यथा भ्राजन्ते न एतावत् अन्ये। विश्वपिशः पिशानाः शुभे समानं अञ्जि कं आ अञ्जते। (ऋ. ७।५७।३)

आभूषणों, हथियारों तथा शरीरोंसे ये वीर सैनिक जिस तरह सुहाने लगते हैं, वैसे दूसरे कोईभी नहीं जग-मगाते हैं। सभी भाँति साजसिंगार करनेवाले ये वीर अपनी शोभाके लिए समान वीरभूषा सुखपूर्वक धारण करते हैं।

(३७४) अनवद्यासः शुचयः पावकाः रणन्त, नः सुमतिभिः प्रावत, नः वाजेभिः पुष्यसे प्र तिरत। (ऋ. ७।५७।५)

प्रशंसनीय, शुद्ध, पवित्र बनकर वीर रममाण होते हैं। अपने अच्छे विचारोंसे हमारी रक्षा कीजिए और अन्नोंसे पुष्टि मिल जाए, इस हेतु सारे संकटोंसे पार ले चलो।

(३७५) नः प्रजायै अमृतस्य प्रदात, सूनृता राधांसि मघानि जिगृत। (ऋ. ७।५७।६)

हमारी संतानके लिए अमृतरूपी अन्न दे दो, आनन्ददायक धन तथा सुखवैभवका भी दान करो।

(३७६) विश्वे सर्वताता सूरीन् अच्छ ऊती आजिगात। ये त्मना शतिनः वर्धयन्ति। (ऋ. ७।५७।७)

ये सारे वीर इस यज्ञमें ज्ञानियोंके समीप सीधे अपनी संरक्षक शक्तियोंसहित आ जायँ, क्योंकि ये स्वयंही सैकडों मानवोंका संवर्धन करते हैं।

(३७७) यः दैव्यस्य धाम्नः तुविष्मान्, साकं-उक्षे गणाय प्रार्चत, ते अवंशात् निर्ऋतेः क्षोदन्ति। (ऋ. ७।५८।१)

जो दिव्य स्थान जानता है, उस सामुदायिक बलसे युक्त वीरोंके दलकी पूजा करो। वे वीर वंशनाशरूपी भीषण आपत्तिसे हमें बचाते हैं।

(३७९) गतः अध्वा जन्तुं न तिराति। नः स्पार्हाभिः ऊतिभिः प्र तिरेत। (ऋ. ७।५८।३)

जिस मार्गपर वीर चल चुके हों, वहाँ किसीकोभी दुःख नहीं पहुँचता है, (सभी उधर प्रसन्न हो उठते हैं)। स्पृहणीय रक्षणों से हमारा संवर्धन करो।

(३८०) युष्मा-ऊतः विप्रः शतस्वी सहस्री, युष्मा-ऊतः अर्वा सहुरिः, युष्मा-ऊतः सम्राट् वृत्रं हन्ति, तत् दृष्णं प्र अस्तु। (ऋ. ७।५८।४)

वीरोंके संरक्षणमें रहकर ज्ञानी पुरुष सैकडों तथा हजारों अवधि धनोंको प्राप्त करता है, वीरोंका संरक्षण मिलनेसे घोडा विजयी बनता है और वीरोंकी रक्षा पानेपर सम्राट् शत्रुका पराभव करता है। वीर पुरुष हमें वह दान दें।

(३८१) द्वेषः आरात् चित् युयोत (ऋ. ७।५८।६)

जबतक शत्रु दूर है, तभीतक उसका विनाश करो।

(३८४) यः द्विषः तरति, सः क्षयं प्रतिरते ।
(ऋ. ७।५९।२)

जो शत्रुका पराभव करता है, वह अपने विनाशके परे चले जाता है, याने सुरक्षित बन जाता है।

(३८६) यस्मै अराध्वं, सः ऊतिः पृतनासु नहि मर्धति ।
(ऋ. ७।५९।४)

जिसे तुम अपना संरक्षण देते हो, उसका विनाश युद्धोंमें तुम्हारे संरक्षणोंसे नहीं होता है।

(३८९) तन्वः शुम्भमानाः हंसासः नदन्तः आ अपप्तन्, विश्वं शर्धः मा अभितः निषेद् । (ऋ. ७।५९।७)

अपने शरीरोंको सुशोभित करनेवाले ये वीर हंसपंछियोंकी नाईं कतारमें रहकर प्रसन्नतापूर्वक संचार करते आ पहुँचे हैं; उनका यह सारा दल मेरे चारों ओर संरक्षणार्थ रहे।

(३९०) यः दुर्हणायुः न चित्तानि अभि जिघांसति सः द्रुहः पाशान् प्रतिमुचीष्ट, तं हन्मना हन्तन ।
(ऋ. ७।५९।८)

जो दुष्ट शत्रु हमारे अन्तःकरणोंको चोट पहुँचाता है तथा पारस्परिक द्रोहके भाव हममें फैलायेगा, उसे तुम मार डालो।

(३९२) युष्माक ऊती आगत, मा अपभूतन
(ऋ. ७।५९।९)

तुम अपनी संरक्षक शक्तियोंके साथ हमारे समीप आओ और हमसे दूर न हो जाओ।

(३९४) विक्षु वितिष्ठध्वं, ये वयः भूत्वी नक्ताभिः पतयन्ति, ये रिपः दधिरे, रक्षसः इच्छत, गृभायत, संपिनष्टन । (ऋ. ७।१०४।१८)

प्रजाओंके मध्य विचरण करो, जो पंछियों जैसे बनकर रात्रिके समय हमले चढाते हैं, तथा जो कष्ट पहुँचा देते हैं, उन राक्षसों को ढूँढकर पकडलो और उनका विनाश करो।

[बिन्दु वा आंगिरस ऋषि पूतदक्ष ऋषि ।]

(३९५) माता गौः धयति, एषां रथानां वह्निः ।
(ऋ. ८।९४।१)

गोमाता दूध पिलाती है, उस दूधसे संपुष्ट हो वीर रथोंके संचालक बनते हैं।

(३९७) नः विश्वे अर्यः कारवः सदा तत् सु आ गृणन्ति । (ऋ. ८।९४।३)

हमारे सभी श्रेष्ठ कारीगर सदैव इस ढंगसे बखूबी भली भाँति सराहना करते हैं।

(४००) प्रातः गोमतः अस्य सुतस्य जोषं मत्सति ।
(ऋ. ८।९४।६)

सुबह गौंका दूध मिलाकर तैयार किये हुए इस सोमरसका पान करनेसे आनन्दयुक्त उत्साह बढता है।

(४०१) पूतदक्षसः सूरयः दिवः अर्षन्ति ।
(ऋ. ८।९४।७)

बलवान, ज्ञानवान तथा शत्रुविनाशक वीर हमारी ओर आते हैं।

(४०२) दस्मवर्चसां महानां अवः अद्य वृणे ।
(ऋ. ८।९४।८)

सुन्दर एवं बडे वीरोंकी रक्षाकी मैं आज याचना करता हूँ।

(४०३) ये विश्वा पार्थिवानि आ पप्रथन्, सोमपीतये ।
(ऋ. ८।९४।९)

जिन्होंने सारे पार्थिव क्षेत्रोंका विस्तार किया है, उन वीरोंको सोमपानके लिए मैं बुलाता हूँ।

(४०४) पूतदक्षसः सोमस्य पीतये हुवे ।
(ऋ. ८।९४।१०)

बलिष्ठ वीरोंको सोमपानके लिए बुलाता हूँ।

[भृगुपुत्र स्यूमरश्मि ऋषि ।]

(४०६) अर्हते अस्तोषि, न शोभसे । (ऋ. १०।७७।१)

जो योग्य हैं, उनकी ही स्तुति करता हूँ, सिर्फ बडी शोभाके या मनचलेके कारण कभी सराहना न करूँगा।

(४०८) मर्यासः श्रिये अञ्जीन् अकृण्वत, पूर्वीः क्षपः न अति । (ऋ. १०।७७।२)

ये वीर शोभाके लिए गहने पहनते हैं। बहुतेरे शत्रु या हमारे शत्रु इन्हें परास्त नहीं कर सकते।

(४०९) ये त्मना महिना प्र रिरिच्रे, पाजस्वन्तः पनस्यवः रिशादसः अभिद्यवः । (ऋ. १०।७७।३)

जो अपनी शक्तिसे बडे बन जाते हैं, वे वीर बलवान, प्रशंसनीय शत्रुविनाशक एवं तेजस्वी होते हैं।

(४१०) युष्माकं बुध्ने मही न विथुर्यति, श्रथर्यति, प्रयस्वन्तः सत्राचः आगत । (ऋ. १०।७७।४)

तुम वीरोंके दौडते समयकी भूमि सिर्फ थरथराती नहीं, किन्तु हलचल हो उठती है। यज्ञवेदी वीरोंके द्वार तुम सभी इकट्ठे हो इधर आओ।

(४११) यूयं स्वयशसः रिशादसः परिप्रुषः प्रसितासः। (ऋ. १०।७७।५)

तुम यशस्वी, शत्रुनाशक, पोषक तथा हमेशा तैयार रहनेवाले वीर हो।

(४१२) यूयं यत् पराकात् प्रवहध्वे, महः संवरणस्य राध्यस्य वस्वः विदानासः, सनुतः द्वेषः आरात् चित् युयोत। (ऋ. १०।७७।६)

तुम जब दूरसे वेगपूर्वक आते हो, तो बडे स्वीकारनेयोग्य बढिया धनका दान करो और दूर रहनेवाले द्वेषाओंको दूरसेही खदेड डालो।

(४१३) यः मानुषः ददाशत्, सः रेवत् सुवीरं वयः दधते, देवानां अपि गोपीथे अस्तु। (ऋ. १०।७७।७)

जो मानव दान देता है, वह धन एवं वीरोंसे पूर्ण अन्नको पाता है और वह देवोंके गोरसपानके मौकेपर उपस्थित रहनेयोग्य बनता है।

(४१४) ते ऊमाः यज्ञियासः शंभविष्ठाः, रथतूः महः चकानाः नः मनीषां अवन्तु। (ऋ. १०।७७।८)

वे रक्षा करनेहारे वीर पूजनीय तथा सुख देनेवाले हैं। रणमेंसे त्वरापूर्वक जानेहारे वे वीर महत्त्व पाते हैं। वे हमारी आकांक्षाओंकी रक्षा करें।

(४१५) विप्रासः सु-आध्यः सुअपसः सुसंदृशः अरेपसः। (ऋ. १०।७८।१)

वे वीर ज्ञानी, अच्छे विचारवाले बढिया कर्म करनेहारे, प्रेक्षणीय और निष्पाप हैं।

(४१६) ये रुक्मवक्षसः स्वयुजः सद्यऊतयः, ज्येष्ठाः सुशर्माणः ऋतं यते सुनीतयः। (ऋ. १०।७८।२)

जो वक्षःस्थलपर माला धारण करनेवाले, अपनी अन्तःस्फूर्तिसे काममें जुटनेवाले, तुरन्त रक्षाका भार उठानेवाले तथा श्रेष्ठ सुख देनेवाले वीर होते हैं, वे सीधी राहपरसे चलनेवालेको उच्च कोटिका मार्ग दिखाते हैं।

(२२७) ये धुनयः, जिगत्नवः, विरोकिणः, वर्मण्वन्तः, शिप्रीवन्तः, सुदानवः। (ऋ० १०।७८।३)

ये वीर शत्रुदलको विकंपित करनेहारे, वेगसे आगे बढनेवाले, तेजस्वी, कवचधारी, शिरोवेष्टनसे युक्त हैं तथा बडे अच्छे दानी भी हैं।

(२२८) ये सनाभयः, जिगीवांसः शूराः, अभिद्यवः, वरेयवः सुस्तुभः। (ऋ० १०।७८।४)

ये वीर एकही केन्द्रमें कार्य करनेहारे, विजयेच्छु शूर, तेजस्वी, अभीष्ट प्राप्त करनेहारे हैं, इसलिए स्तुतिके सर्वथैव योग्य हैं।

(२२९) ये ज्येष्ठासः, आशवः, दिधिषवः सुदानवः, जिगत्नवः विश्वरूपाः। (ऋ० १०।७८।५)

ये वीर श्रेष्ठ, त्वरापूर्वक कार्य करनेहारे, तेजस्वी, उदार, बडे वेगसे जानेवाले हैं तथा अनेक रूप धारण करनेवाले भी हैं।

(२३०) सुभ्वः, आददिरासः, विद्वहा, सुमातरः, क्रीळयः यामन् त्विषा। (ऋ० १०।७८।६)

ये वीर विद्वान, शत्रुको फाडनेवाले, [illegible] वध करनेवाले, अपनी माताके पुत्र [illegible] तथा बडाई करनेमद सुहाते हैं।

(२३१) अद्रिभिः वि अद्रियन्त, यदिवः, भ्राजदृष्टयः, रोदसी मामिरे। (ऋ० १०।७८।७)

वीरभूमीमें सुहानेवाले, वेगपूर्वक जानेहारे, तेजस्वी हथियार धारण करनेहारे ये वीर बडे दौडकर [illegible] जाते हैं।

(२३२) अस्मान् सुभगान् सुरत्नान् कृणुत। (ऋ० १०।७८।८)

हमें उत्तम भाग्यसे युक्त तथा अच्छे रत्नोंसे युक्त करो। (वीर [illegible] तथा [illegible] युक्त करो।)

(२३३) शिरस्सु [illegible] ([illegible])

हमें [illegible] करते हैं

[illegible]

(२३४) पृश्निमातरः, शुभं-यावानः, विदथेषु जग्मयः, नरः, सूरचक्षसः, अवसा नः इह आगमन्। (ऋ. अ. २५।२०)

मातृभूमिके उपासक, अच्छे कार्यके लिए जानेवाले, युद्धोंमें आगे बढनेवाले, विचारशील, सूर्यतुल्य तेजस्वी, अपनी शक्तिके साथ हमारे निकट इधर आ जायँ।

(२३५) यदि आशवः रथेषु भ्राजमानाः आवहन्ति, तत्र श्रवांसि कृण्वते। ([illegible])

जहांपर [illegible] वीर चले जाते हैं, वहीं वे कीर्ति-[illegible] करते हैं।

(२३६) नः तनूभ्यः तोकेभ्यः मयः कृधि। ([illegible])

हमारे शरीरोंको और बालबच्चोंको सुखी करो।

(२३७) पृश्निमातरः [illegible] ([illegible])

मातृभूमिके उपासक [illegible] विनाश करो।

(२३८) [illegible]

[illegible]

(२३९) [illegible]

[illegible]

(४३५) असौ परेषां या सेना ओजसा स्पर्धमाना अस्मान् अभ्येति, तां अपव्रतेन तमसा विध्यत, यथा एषां अन्यः अन्यं न जानात्। (अथर्व० ३।२।६)

यह जो शत्रुसेना वेगपूर्वक चढाऊपरी करती हुई हमपर टूट पडती है, उसे तमस्-अस्त्रसे बिंध डालो, जिससे वे किंकर्तव्यमूढ होकर एक दूसरेको पहचान न सकें। (इस भाँति शत्रुसेनापर हमले करने चाहिए।)

(४३६) पर्वतानां अधिपतयः अस्मिन् कर्मणि मा अवन्तु। (अथर्व० ५।२४।६)

पहाडोंके रक्षणकर्ता वीर इस कर्मके अवसरपर मेरी रक्षा करें।

(४३७) यथा अयं अरपा असत्, त्रायन्ताम्। (अथर्व० ४।१३।४)

जिस प्रकारसे यह मानव निर्दोषी होगा, उसी ढंगसे इसका संरक्षण करो।

(४३८) यत् एजथ, तत्र ऊर्जं सुमतिं पिन्वथ। (अथर्व० ६।२२।२)

जिधरभी तुम चले जाओ, उधर बल तथा सुमतिकी वृद्धि करो।

(४४०) ते नः अंहसः मुञ्चन्तु, इमं वाजं अवन्तु। (अथर्व० ४।२७।१)

वे वीर सैनिक हमें पापसे बचाएँ और हमारे इस बलका संरक्षण करें, (बलको बढायें।)

(४४१) पृश्निमातॄन् पुरो दधे। (अथर्व० ४।२७।२)

मातृभूमिकी उपासना करनेहारे वीरोंको मैं अग्रपूजाका सम्मान देता हूँ।

(४४२) ये कवयः धेनूनां पयः ओषधीनां रसं अर्वतां जवं इन्वथ ते नः शग्माः स्योनाः भवन्तु। (अथर्व० ४।२७।३)

जो ज्ञानी वीर गोदुग्ध और औषधियोंका रस पी लेते हैं तथा घोडोंका वेग पाते हैं, वे वीर हमें सामर्थ्य देकर सुख देनेवाले हों।

(४४३) ते ईशानाः चरन्ति। (अथर्व० ४।२७।४)

वे वीरसैनिक अधिपति या स्वामी बनकर संसारमें सञ्चार करते हैं।

(४४४) ते कीलालेन घृतेन च तर्पयन्ति। (अ० ४।२७।५)

वे अन्नरस और घृतसे सबको तृप्त करते हैं।

(४४६) तिग्मं अनीकं सहस्वत् विदितं, पृतनासु उग्रं स्तौमि। (अथर्व० ४।२७।७)

शूरोंकी सेना विरोधियोंका पराभव करनेमें विख्यात है। युद्धके समय वह पराक्रम कर दिखलाती है, इसलिए मैं उनकी सराहना करता हूँ।

(४४७) ते सगणाः, उरुक्षयाः, मानुषासः सान्तपनाः मादयिष्णवः। (अथर्व० ७।८२।२)

ये वीरसैनिक संघ बनाकर रहते हैं, बडे घरमें निवास करते हैं, मानवोंका हित करते हैं, शत्रुओंको परिताप देते हैं और अपने लोगोंको प्रसन्नता प्रदान करते हैं।

(४५०) ये सुखेषु रथेषु आतस्थुः, वः भिया पृथिवी रेजते। (ऋ० ५।६०।२)

ये वीर सुखदायी रथोंमें बैठकर यात्रा करते हैं और इनके भयसे पृथ्वीतक काँप उठती है।

(४५१) ऋष्टिमन्तः यत् सध्र्यञ्चः क्रीळथ, धवध्वे। पर्वतः विभाय। (ऋ० ५।६०।३)

तलवार जैसे हथियार लेकर जब तुम इकट्ठे हो खेलना शुरू करते हो, तब तुम दौडते हो, ऐसी दशामें पहाडतक भयभीत हो जाता है।

(४५२) रैवतासः वरा इव हिरण्यैः तन्वः अभिपिपिश्रे, श्रेयांसः तवसः श्रिये रथेषु, सत्रा तनूषु महांसि चक्रिरे। (ऋ० ५।६०।४)

धनयुक्त दूल्हेोंकी नाईं ये वीर अपने शरीर सुवर्णालंकारों से विभूषित करते हैं, तब श्रेय, बल और यश रथमें बैठनेपर इनके शरीरोंपर दीख पडते हैं।

(४५३) अज्येष्ठासः अकनिष्ठासः एते भ्रातरः सौभगाय सं वावृधुः । (ऋ० ५।६०।५)

ये वीर परस्पर भ्रातृभाव से बर्ताव रखते हुए अपना ऐश्वर्य बढानेके लिए मिलजुलकर प्रयत्न करते हैं और यह इसीलिए संभव है चूँकि इनमें कोईभी श्रेष्ठ नहीं या कनिष्ठ भी नहीं, अर्थात् सभी समान हैं।

(४५४) यत् उत्तमे मध्यमे अवमे स्थ, अतः नः । (ऋ० ५।६०।६)

उत्तम, मँझले या निम्न स्थानमें जहाँ कहींभी तुम हों, वहाँसे तुम हमारे निकट चले आओ।

(४५५) ते मन्दसानाः धुनयः रिशादसः वामं धत्त। (ऋ० ५।६०।७)

वे हर्षित रहनेवाले वीर, शत्रुको पदभ्रष्ट करते हैं और उनका वध करते हैं। वे हमें श्रेष्ठ धन दे दें।

(४५६) शुभयद्भिः गणश्रिभिः पावकेभिः विश्वमिन्वेभिः आयुभिः मन्दसानः। (ऋ० ५।६०।८)

शोभायमान संघके कारण सुशोभित होनेवाले और सबको पवित्र करनेहारे, उत्साहपूर्ण एवं दीर्घ जीवनसे युक्त होकर सबको आनन्दित करो।

(४५७) अदारसृत् भवतु। (अथर्व० १।२०।१)

शत्रु अपनी पत्नीके निकटभी न चला जाए, (शीघ्रही विनष्ट हो।)

नः मृडत= हमें सुख दो।

अभिभाः नः मा विदत्। शत्रु हमें न मिले।

अशस्तिः द्वेष्या वृजिना नः मा विदन्।
अकीर्ति और निन्दनीय पाप हमारे समीप न आयें।

(४६७-४७२) अद्रुहः, उग्राः, ओजसा अनाधृष्टासः, शुभ्राः, घोरवर्पसः, सुक्षत्रासः, रिशादसः। (ऋ. १।१९।३-८)

ये वीर किसीसे विद्रोह नहीं करते, शूर हैं, बहुत बलवान होनेके कारण कोई इन्हें पराभूत नहीं कर सकता है, और दर्पवाले तथा दृढ़ाकार शरीरवाले हैं, अच्छे क्षात्रबलसे युक्त होनेके कारण ये शत्रुका पूर्ण विनाश कर देते हैं।

(४७९) दुःशंसः नः मा ईशत। (ऋ. १।२३।९)

दुरात्माका शासन हमपर कभी प्रस्थापित न हो।

(४८०) सवयसः सनीळाः समान्या वृषणः शुभा शुष्म अर्चन्ति। (ऋ. १।१६५।१)

समान अवस्थाके, एक घरमें रहनेवाले, समान ढंगसे सम्माननीय होते हुए ये बलवान वीर शुभ इच्छासे बलकी पूजा करते हैं।

(४८४) वयं अन्तमेभिः स्वक्षत्रेभिः युजानाः, तन्वं शुम्भमानाः महोभिः उपयुज्महे। (ऋ. १।१६५।५)

हम वीर अपनेमें विद्यमान निजी शूरतासे युक्त होकर अपने शरीरोंको शोभायमान करते हैं तथा सामर्थ्यका उपयोग करते हैं।

(४८५) अहं हि उग्रः, तविषः तुविष्मान् विश्वस्य शत्रोः वधस्नैः अनमम्। (ऋ. १।१६५।६)

मैं शूर तथा बलिष्ठ हूँ, इसलिए मैंने सारे शत्रुओं को झुका दिया है। इस कार्यको हथियारोंसे पूर्ण कर डाला है।

(४८६) युज्येभिः पौंस्येभिः भूरि चकर्थ। (ऋ. १।१६५।७)

उचित सामर्थ्योंके सहारे तुमने बहुत सारे पराक्रम कर दिखाये हैं।

कृत्वा भूरीणि कृणवाम हि= पुरुषार्थ एवं प्रयत्नों की सहायतासे हम बहुत कार्य करके दिखलायेंगे।

(४८७) स्वेन भामेन इन्द्रियेण तविषः बभूवान्। (ऋ. १।१६५।८)

अपने तेजसे और इन्द्रियोंकी शक्तिसे मैं बलवान हो चुका हूँ।

(४८८) ते अनुत्तं नकिः नु आ; त्वावान् विदानः न अस्ति; यानि करिष्या कृणुहि न जायमानः न जातः नशते। (ऋ. १।१६५।९)

तेरी प्रेरणाके विना कुछभी नहीं अस्तित्वमें आता तेरे समान दूसरा कोई ज्ञानी नहीं है; जिन कर्तव्योंको तू करता है, उन्हें पूर्ण करना किसी भी जन्मे हुए तथा जन्म लेनेवाले मानवके लिए असंभव है।

(४८९) मे एकस्य ओजः विभु, या मनीषा दधृष्वान्, कृणवै नु। अहं हि उग्रः विदानः। यानि च्यवं, एषां ईशे। (ऋ. १।१६५।१०)

मेरे अकेलेका सामर्थ्य बहुत बडा है। जो इच्छा मनमें उठ खडी होती है, उसीके अनुसार कार्य करके दर्शाता हूँ। मैं शूर और ज्ञानी भी हूँ तथा जिनके समीप पहुँचता हूँ उनपर प्रभुत्व प्रस्थापित करता हूं।

(४९४) विश्वा अहानि नः कोम्या वनानि सन्तु। जिगीषा ऊर्ध्वा। (ऋ. १।१७१।३)

हमेशा हमारे लिए ये वन कमनीय हों तथा हमारी विजयेच्छा ऊंची हो जाए।

(४९६) उग्रेभिः स्थविरः सहोदाः नः श्रवः धाः। (ऋ. १।१७१।५)

शूर वीर सैनिकोंसे युक्त होकर और हमें बल देकर हमारी कीर्ति बढा दे।

(४९७) त्वं सहीयसः नॄन् पाहि। (ऋ. १।१७१।६)

तू बलवान वीरोंका संरक्षण कर।

अवयातहेळाः सुप्रकेतेभिः ससहिः दधानः इषं वृजनं जीरदानुं विद्याम।

क्रोध न करते हुए उत्तम ज्ञानी वीरोंसे सामर्थ्यवान बनकर हम अन्न, बल तथा दीर्घ आयुष्य प्राप्त करें।

(४९८) आजौ युध्यत। (ऋ. ८।९६।१४)

युद्धमें लडते रहो (पीछे न दौडो)।

यहाँतक हम देख चुके हैं कि, मरुतोंका वर्णन करते हुए मरुद्देवताके मंत्रोंमें सर्वसाधारण क्षात्रधर्मका चित्रण किस भाँति हुआ है। पाठक इस विवरणसे जान सकेंगे कि, मरुतोंके मंत्र पढनेसे क्षात्रधर्मकी जानकारी कैसे प्राप्त हो सकती है। इसी वर्णनको ध्यानमें रखते हुए हम मरुतोंके काव्यमें वीरोंका जो स्वरूप बतलाया गया है, उसका वर्णन प्रस्तावनामें किया है, उसको वहाँ पाठक देख सकते हैं।

मरुत्-देवताके मंत्रोंमें नारी-विषयक उल्लेख ।

[illegible]८) वत्सं न माता सिषक्ति । (ऋ. १।३८।८)

माता जिस प्रकार बालक को अपने समीप रखती है, [उ]सी प्रकार (बिजली मेघवृन्दके समीप रहती है)।

(१२३) प्र ये शुम्भन्ते जनयो न सप्तयः (ऋ. १।८५।१)

प्रगतिशील एवं आगे बढनेकी पूर्ण क्षमता रखनेवाले [वी]र मरुत् (बाहर यात्राके लिए जाते समय) नारियोंके [तु]ल्य अपने आपको सुशोभित तथा अलंकृत करते हैं।

(१४७) प्र पथामज्मेषु (भूमिः) विथुरेव रेजते । (ऋ. १।८७।३)

इन वीरोंके अतिवेगवान हमलोंमें भूमितक अनाथ एवं असहाय महिलाके समान थरथर काँप उठती है।

(१६१) रथीयन्तीव प्र जिहीते ओषधिः । (ऋ. १।१६६।५)

सारी ओषधियाँभी रथमें बैठी नारीके समान विकंपित हो उठती हैं।

(१७४) गुहा चरन्ती मनुषो न योषा । (ऋ. १।१६७।३)

अन्तःपुरमें संचार करती हुई मानवी महिलाकी नाईं (वीरोंकी तलवार कभी कभी अदृश्यसी रहती है।)

(१७५) साधारण्या इव मरुतः सं मिमिक्षुः । (ऋ. १।१६७।४)

साधारण कोटिकी नारीके साथ मानव जिस तरह बर्ताव रखते हैं, उसी प्रकार ([illegible] भी जमीनपर) मरुतोंने वर्षा कर डाली।

(१७६) विषितस्तुका सूर्या इव रथं आ गात् । (ऋ. १।१६७।५)

केश सँवारकर अच्छी भाँति जूडा बाँधी हुई सूर्या[illegible] समान (रोदसी=भूमि या बिजली) [वीरोंकी पत्नी] रथके निकट आ पहुँची।

(१७७) आ अस्थापयन्त युवतिं युवानः शुभे निमिश्लां विदथेषु पज्राम् । (ऋ. १।१६७।६)

इन तरुणवय वीर सदैव सहवासमें रहनेवाली, बलिष्ठ युवतीको- जिस रोदसीको- शुभ कार्योंमें- यज्ञमें स्थापन करते हो- ले आये हो।

(१७८) यद् ई वृषमणा अहंयुः स्थिरा चित् जनीः वहते सुभागाः । (ऋ. १।१६७।७)

यह पृथ्वीतक इनके पीछे चलनेवाली, बलिष्ठोंपर मन केन्द्रित करनेवाली पर वीरपत्नी होनेकी तीव्र लालसा करनेवाली सौभाग्ययुक्त प्रजा धारण करती है- वरण करती है।

(२३०) मित्रं न योषणा (मारुतं गणं अच्छ)। (ऋ. ५।५२।१४)

युवती जिस प्रकार मित्र मित्रके समीप चली जाती है, ठीक उसी प्रकार (वीर सैनिकों के संघके समीप चले जाओ।

(२९८) भर्ता इव गर्भं स्वं इत् शवः धुः । (ऋ. ५।५८।७)

पति जिस भाँति स्त्री में गर्भकी स्थापना करता है, वैसेही इन वीरोंने अपना निजी बल (शत्रुमें) प्रस्थापित किया है।

(३१०) वि सक्थानि नरो यमुः, पुत्रकृथे न जनयः । (ऋ. ५।६१।३)

पुत्रको जन्म देते समय नारियोंकी जाँघाएँ जिस प्रकार तानी जाती हैं, वैसेही तानी हुई अश्वजंघाओंका नियमन ये वीर करते हैं।

(४२०) शिशूलाः न क्रीळाः सुमातरः । (ऋ. १०।७८।६)

उत्कृष्ट माताओंके निर्दोष बालकोंकी नाईं ये वीर सैनिक खिलाडी आनंदपूर्ण हैं।

(४३२) माता इव पुत्रं छन्दांसि पिपृत । (अथर्व० [illegible])

माता जिस प्रकार अपने बालकोंका मनोरथ [illegible] है, उसी प्रकार हमारे मंत्रोंका- इच्छाओंका मनोरथ [illegible]।

(४३३) [illegible] पत्नी, [illegible] कन्या इव, [illegible] पत्या इव जाया [illegible]। (अथर्व० [illegible])

[illegible] हमारे वीर [illegible] नारीके समान [illegible] होती है।

(४३५) अदारसृद् भवतु देव सोम । (अथर्व० १।२०।१)

हे तेजस्वी सोम ! हमारा शत्रु अपनी पत्नीसे न मिले, ऐसा प्रबंध कर दो।

मरुद्देवता-पुनरुक्त-मन्त्राः ।

मरुन्मन्त्रक्रमाङ्कः

मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । मरुतः । गायत्री (ऋ.१।६।९)

[४] अतः परिज्मन्ना गहि **दिवो वा रोचनादधि ।**
समस्मिन्नृञ्जते गिरः ॥ ९ ॥

प्रस्कण्वः काण्वः । उषा । अनुष्टुप् । (ऋ.१।४९।१)

उषो भद्रेभिरा गहि **दिवश्चिद् रोचनादधि ।**
वहन्त्वरुणप्सव उप त्वा सोमिनो गृहम् ॥ १ ॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । बृहती । (ऋ.५।५६।१)

[२७५] अग्ने शर्धन्तमा गणं पिष्टं रुक्मेभिरञ्जिभिः ।
विशो अद्य मरुतामव ह्वये **दिवश्चिद् रोचनादधि** ॥१॥

सध्वंसः काण्वः । अश्विनौ । अनुष्टुप् । (ऋ.८।८।७)

दिवश्चिद् रोचनादधि आ नो गन्तं स्वर्विदा ।
धीभिर्वत्स प्रचेतसा स्तोमेभिर्हवनश्रुता ॥ ७ ॥

मेधातिथिः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ.१।१५।२)

[५] मरुतः पिबत ऋतुना पोत्राद् यज्ञं पुनीतन ।
यूयं हि ष्ठा सुदानवः ॥ २ ॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ.८।७।१२)

[५७] **यूयं हि ष्ठा सुदानवो** रुद्रा ऋभुक्षणो दमे ।
उत प्रचेतसो मदे ॥ १२ ॥

ऋजिश्वा भरद्वाजः । विश्वेदेवाः । उष्णिक् (ऋ.६।५१।१५)

यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः ।
कर्ता नो अध्वन्ना सुगं गोपा अमा ॥ १५ ॥

कुसीदी काण्वः । विश्वेदेवाः । गायत्री (ऋ.८।८३।९)

यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः ।
अधा चिद्व उत ब्रुवे ॥ ९ ॥

कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री (ऋ.१।३७।४)

[९] **प्र वः** शर्धाय घृष्वये त्वेषद्युम्नाय शुष्मिणे ।
देवत्तं ब्रह्म गायत ॥ ४ ॥

मेधातिथिः काण्वः । इन्द्रः । गायत्री (ऋ.८।३२।२७)

प्र व उग्राय निष्टुरेऽषाळ्हाय प्रसक्षिणे ।
देवत्तं ब्रह्म गायत ॥ २७ ॥ (इन्द्रः२०६)

कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री । (ऋ.१।३७।१-५)

[६] **क्रीळं वः शर्धो मारुतं** अनर्वाणं रथेशुभम् ।
कण्वा अभि प्र गायत ॥ १ ॥

[१०] प्र शंसा गोष्वघ्न्यं **क्रीळं यच्छर्धो मारुतम्** ।
जम्भे रसस्य वावृधे ॥ ५ ॥

कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री (ऋ.१।३७।८)

[१३] येषामज्मेषु पृथिवी जुजुर्वाँ इव विश्पतिः ।
भिया **यामेषु रेजते** ॥ ८ ॥

सोभरिः काण्वः । मरुतः । ककुप् (ऋ.८।२०।५)

[८६] अच्युता चिद् वो अज्मन्ना नानदति पर्वतासो वनस्पतिः ।
भूमिर्यामेषु रेजते ॥ ५ ॥

कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री (ऋ.१।३७।११)

[१६] त्यं चिद् घा दीर्घं पृथुं मिहो नपातममृध्रम् ।
प्र च्यावयन्ति यामभिः ॥ ११ ॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । बृहती (ऋ.५।५६।४)

[२७८] नि ये रिणन्त्योजसा वृथा गावो न दुर्धुरः ।
अश्मानं चित्स्वर्यं पर्वतं गिरिं **प्र च्यावयन्ति यामभिः** ॥४॥

कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री (ऋ.१।३७।१२)

[१७] **मरुतो यद्ध वो** बलं जनाँ **अचुच्यवीतन** ।
गिरीँरचुच्यवीतन ॥ १२ ॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ.८।७।११)

[५६] **मरुतो यद्ध वो** दिवः सुम्नायन्तो **हवामहे** ।
आ तू न उप गन्तन ॥११॥

कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री (ऋ.१।३८।१)

[२१] **कद्ध नूनं कधप्रियः** पिता पुत्रं न हस्तयोः ।
दधिध्वे वृक्तबर्हिषः ॥ १ ॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ.८।७।३१)

[७६] **कद्ध नूनं कधप्रियो** यदिन्द्रमजहातन ।
को वः सखित्व ओहते ॥३१॥

कण्वो घौरः । मरुतः । बृहती (ऋ.१।३९।५)

[४०] प्र वेपयन्ति पर्वतान् वि विञ्चन्ति वनस्पतीन् ।
प्रो आरत मरुतो दुर्मदा इव देवासः सर्वया विशा ॥५॥

वसूयव आत्रेयाः । विश्वेदेवाः । गायत्री (ऋ.५।२६।९)

एवं मरुतो अश्विना मित्रः सीदन्तु वरुणः ।
देवासः सर्वया विशा ॥ ९ ॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ.८।७।४)

[४९] वपन्ति मरुतो मिहं प्र वेपयन्ति पर्वतान् ।
यद् यामं यान्ति वायुभिः ॥ ४ ॥

कण्वो घौरः । मरुतः । सतोबृहती (ऋ.१।३९।६)

[४१] उपो रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं प्रष्टिर्वहति रोहितः ।
आ वो यामाय पृथिवी चिदश्रोद् अबीभयन्त मानुषाः ॥६॥

गोतमो राहूगणः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ.१।८५।५)

[१२७] प्र यद् रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं वाजे अद्रिं मरुतो रंहयन्तः ।
उतारुषस्य वि ष्यन्ति धाराः चर्मेवोदभिर्व्युन्दन्ति भूम ॥५॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ.८।७।२८)

[७३] यदेषां पृषती रथे प्रष्टिर्वहति रोहितः ।
यान्ति शुभ्रा रिणन्नपः ॥२८॥

कण्वो घौरः । मरुतः । सतोबृहती (ऋ.१।३९।७)

[४२] आ वो मक्षू तनाय कं रुद्रा अवो वृणीमहे ।
गन्ता नूनं नोऽवसा यथा पुरेत्था कण्वाय बिभ्युषे ॥७॥

कण्वो घौरः । पूषा । गायत्री (ऋ.१।४२।५)

आ तत् ते दस्र मन्तुमः पूषन्नवो वृणीमहे ।
येन पितॄनचोदयः ॥५॥

नोधा गौतमः । मरुतः । जगती (ऋ.१।६४।४)

[१११] चित्रैरञ्जिभिर्वपुषे व्यञ्जते वक्षःसु रुक्माँ अधि येतिरे शुभे । अंसेष्वेषां नि मिमृक्षुर्ऋष्टयः साकं जज्ञिरे स्वधया दिवो नरः ॥४॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । जगती (ऋ.५।५४।११)

[२६०] अंसेषु व ऋष्टयः पत्सु खादयो वक्षःसु रुक्मा मरुतो शुभः । अग्निभ्राजसो विद्युतो गभस्त्योः शिप्राः शीर्षसु रथे वितता हिरण्ययीः ॥११॥

नोधा गौतमः । मरुतः । जगती (ऋ.१।६४।६)

[११३] पिन्वन्त्यपो मरुतः सुदानवः पयो घृतवद् विदथेष्वाभुवः । अत्यं न मिहे वि नयन्ति वाजिनमुत्सं दुहन्ति स्तनयन्तमक्षितम् ॥६॥

हरिमन्त आङ्गिरसः । पवमानः सोमः । जगती (ऋ. ९।७२।६)

अंशुं दुहन्ति स्तनयन्तमक्षितं कविं कवयोऽपसो मनीषिणः । समी गावो मतयो यन्ति संयत ऋतस्य योना सदने पुनर्भुवः ॥६॥

नोधा गौतमः । मरुतः । जगती (ऋ.१।६४।१२)

[११९] घृषुं पावकं वनिनं विचर्षणिं रुद्रस्य सूनुं हवसा गृणीमसि । रजस्तुरं तवसं मारुतं गणमृजीषिणं वृषणं सश्चत श्रिये ॥१२॥

बार्हस्पत्यो भारद्वाजः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ.६।६६।११)

[३४४] तं वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिं रुद्रस्य सूनुं हवसा विवासे । दिवः शर्धाय शुचयो मनीषा गिरयो नाप उग्रा अस्पृध्रन् ॥११॥

नोधा गौतमः । मरुतः । जगती (ऋ.१।६४।१३)

[१२०] प्र नू स मर्तः शवसा जनाँ अति तस्थौ व ऊती मरुतो यमावत । अर्वद्भिर्वाजं भरते धना नृभिरापृच्छ्यं क्रतुमा क्षेति पुष्यति ॥१३॥

अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । मरुतः । जगती (ऋ.१।१६६।८)

[१६५] शतभुजिभिस्तमभिह्रुतेरघात् पूर्भी रक्षता मरुतो यमावत । जनं यमुग्रास्तवसो विरप्शिनः पाथना शंसात् तनयस्य पुष्टिषु ॥८॥

गृत्समदः शौनकः । ब्रह्मणस्पतिः । जगती (ऋ. २।२६।३)

स इज्जनेन स विशा स जन्मना स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः । देवानां यः पितरमाविवासति श्रद्धामना हविषा ब्रह्मणस्पतिम् ॥३॥

सुवेदाः शैरीषिः । इन्द्रः । जगती (ऋ.१०।१४७।४)

स इन्नु रायः सुभृतस्य चाकनन्मदं यो अस्य रंह्यं चिकेतति । त्वावृधो मघवन् दाश्वध्वरो मक्षू स वाजं भरते धना नृभिः ॥४॥

गोतमो राहूगणः । मरुतः । जगती (१।८५।२)

[११४] त उक्षितासो महिमानमाशत दिवि रुद्रासो अधि चक्रिरे सदः । अर्चन्तो अर्कं जनयन्त इन्द्रियमधि श्रियो दधिरे पृश्निमातरः ॥२॥

सुपर्णः काण्वः । इन्द्रावरुणौ । जगती (ऋ. ८।५९ [वाल. ११] । २)

निष्षिध्वरीरोषधीराप आस्तामिन्द्रावरुणा महिमानमाशत ।

[illegible] पर्वतो गिरिः [illegible] सोढ्हते ॥२॥

[illegible] राहूगणः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ.१।८५।५)
[१३०] [illegible] रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं वाजे अद्रिं मरुतो रंहयन्तः ।
[illegible] ॥४॥

[illegible] । मरुतः । सतोबृहती (ऋ.१।३९।६)
[१३१] [illegible] रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं प्रष्टिर्वहति रोहितः ।
[illegible] मानुषाः ॥६॥

[illegible] । मरुतः । गायत्री (ऋ.८।७।२८)
[१३२] [illegible] पृषतीः रथे प्रष्टिर्वहति रोहितः ।
[illegible] ॥२८॥

[illegible] । गायत्री (ऋ. १।८५।८)
[१३३] [illegible]
[illegible] विश्वा भुवना [illegible] राजान [illegible]
[illegible] ॥८॥

[illegible] (ऋ.१।३६।१४)
[illegible]
[illegible] विश्वा भुवनानि [illegible]
[illegible] ॥४॥

[illegible]
[illegible]
[illegible] पूर्वं [illegible]
[illegible] ॥१॥

[illegible]
[illegible]
[illegible] पूर्वं [illegible]
[illegible]

[illegible]

नृमेधोऽङ्गिरसः । इन्द्रः । सतोबृहती (ऋ.८।८९।१)
यो दुध्रो विश्वतार [illegible] ।
स नः शविष्ठ सवना वसो गहि गमेम गोमति व्रजे ॥४॥

श्रुष्टिगुः काण्वः । इन्द्रः । बृहती (ऋ.८।५१ [वाल.३] । ५)
यो नो दाता वसूनामिन्द्रं तं हूमहे वयम् ।
विद्मा ह्यस्य सुमतिं नवीयसीं गमेम गोमति व्रजे ॥५॥

गोतमो राहूगणः । मरुतः । गायत्री (ऋ.१।८६।४)
[१३८] अस्य वीरस्य बर्हिषि सुतः सोमो दिविष्टिषु ।
उक्थं मदश्च शस्यते ॥ ४ ॥

कुरुसुतिः काण्वः । इन्द्रः । गायत्री (ऋ.८।७६।५)
पिबेन्द्र मरुत्सखा सुतं सोमं दिविष्टिषु ।
वज्रं शिशान ओजसा ॥ ९ ॥

वामदेवो गौतमः । इन्द्राबृहस्पती । गायत्री (ऋ.४।४९।१)
इदं वामास्ये हविः प्रियमिन्द्राबृहस्पती ।
उक्थं मदश्च शस्यते ॥१॥

गोतमो राहूगणः । मरुतः । गायत्री (ऋ.१।८६।१)
[१३९] अस्य [illegible] विश्वा यश्चर्षणीरभि ।
सूरं चित् [illegible] ॥ ५ ॥

वामदेवो गौतमः । अग्निः । अनुष्टुप् (ऋ.[illegible])
[illegible] विश्वा यश्चर्षणीरभि ।
[illegible] ॥ ४ ॥
[illegible] । अग्निः । अनुष्टुप् (ऋ.[illegible])

[illegible]
विश्वा यश्चर्षणीरभ्यासा [illegible] ॥२॥

[illegible] राहूगणः । मरुतः । गायत्री (ऋ.[illegible])
[१४०] [illegible]
[illegible] अग्निं [illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]
अग्निं [illegible]
[illegible]

[illegible]
[१४१] [illegible]

ते सप्सरासोऽजनयन्ताभ्वमादित् स्वधामिषिरां पर्यपश्यन् ॥ ९ ॥

भुवन आप्त्यः, साधनो वा भौवनः । विश्वेदेवाः ।
द्विपदा त्रिष्टुप् (ऋ. १०।१५७।५)

प्रत्यञ्चमर्कमनयञ्छचीभिरादित् स्वधामिषिरां पर्यपश्यन् ॥ ५ ॥

अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ. १।१६८।१०)

[१९२] एष वः स्तोमो मरुत इयं गीर्मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः ।
एषा यासीष्ट तन्वे वयां विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥१०॥

[१७२] एष वः ... जीरदानुम् । (ऋ. १।१६६।१५)

[१८१] एष वः ... जीरदानुम् । (ऋ. १।१६७।११)

अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । मरुत्वानिन्द्रः । त्रिष्टुप्
एष वः ... जीरदानुम् ॥१५॥ (ऋ. १।१६५।१५)

गृत्समदः (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद् भार्गवः)
शौनकः । मरुतः । जगती (ऋ. २।३०।११)

[१९८] तं वः शर्धं मारुतं सुम्नयुर्गिरोप ब्रुवे नमसा दैव्यं जनम् ।
यथा रयिं सर्ववीरं नशामहा अपत्यसाचं श्रुत्यं दिवे दिवे ॥११॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । ककुप् (ऋ. ५।५३।१०)
तं वः शर्धं रथानां त्वेषं गणं मारुतं नव्यसीनाम् ।
अनु प्र यन्ति वृष्टयः ॥१०॥

गृत्समदः (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद् भार्गवः)
शौनकः । मरुतः । जगती (ऋ. २।३४।४)

[१०१] पृक्षे ता विश्वा भुवना ववक्षिरे मित्राय वा सदमा जीरदानवः । पृषदश्वासो अनवभ्रराधस ऋजिप्यासो न वयुनेषु धूर्षदः ॥४॥

गाथिनो विश्वामित्रः । मरुतः । जगती (ऋ. ३।२६।६)

[११६] व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिरग्नेर्भामं मरुतामोज ईमहे ।
पृषदश्वासो अनवभ्रराधसो गन्तारो यज्ञं विदथेषु धीराः ॥६॥

गाथिनो विश्वामित्रः । मरुतः । जगती (ऋ. ३।२६।६)

[२१६] व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिरग्नेर्भामं मरुतामोज ईमहे । पृषदश्वासो अनवभ्रराधसो गन्तारो यज्ञं विदथेषु धीराः ॥६॥

गृत्समदः (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद् भार्गवः)
शौनकः । मरुतः । जगती (ऋ. २।३४।४)

[१०१] पृक्षे ता विश्वा भुवना ववक्षिरे मित्राय वा सदमा जीरदानवः । पृषदश्वासो अनवभ्रराधस ऋजिप्यासो न वयुनेषु धूर्षदः ॥४॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । अनुष्टुप् (ऋ. ५।५२।४)

[२२०] मरुत्सु वो दधीमहि स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया ।
विश्वे ये मानुषा युगा पान्ति मर्त्यं रिषः ॥४॥

भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । अग्निः । गायत्री (ऋ. ६।१६।२२)
प्र वः सखायो अग्नये स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया ।
अर्च गाय च वेधसे ॥२२॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । ककुप् (ऋ. ५।५३।१०)

[१८३] तं वः शर्धं रथानां त्वेषं गणं मारुतं नव्यसीनाम् ।
अनु प्र यन्ति वृष्टयः ॥१०॥ (ऋ. ५।५८।१)

[१९१] तमु नूनं तविषीमन्तमेषां स्तुषे गणं मारुतं नव्यसीनाम् ।
य आश्वश्वा अमवद् वहन्त उतेशिरे अमृतस्य स्वराजः ॥१॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । सतोबृहती (ऋ. ५।५३।१६)

[२४९] स्तुहि भोजान्त्स्तुवतो अस्य यामनि रणन् गावो न यवसे ।
यतः पूर्वां इव सखीँरनु ह्वय गिरा गृणीहि कामिनः ॥१६॥

विमद ऐन्द्रः प्राजापत्यो वा, वसुकृद्वा वासुक्रः ।
सोमः । आस्तारपङ्क्तिः (ऋ. १०।२५।१)
भद्रं नो अपि वातय मनो दक्षमुत क्रतुम् ।
अधा ते सख्ये अन्धसो वि वो मदे
रणन् गावो न यवसे विवक्षसे ॥१॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । जगती (ऋ. ५।५४।११)

[१६०] अंसेषु व ऋष्टयः पत्सु खादयो वक्षःसु रुक्मा मरुतो रथे शुभः । अग्निभ्राजसो विद्युतो गभस्त्योः
शिप्राः शीर्षसु वितता हिरण्ययीः ॥११॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ.८।७।२५)
विद्युद्धस्ता अभिद्यवः शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः ।
शुभ्रा व्यञ्जत श्रिये ॥२५॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । जगती (ऋ.५।५५।१)
[२६५] प्रयज्यवो मरुतो भ्राजदृष्टयो बृहद्वयो दधिरे रुक्मवक्षसः ।
ईयन्ते अश्वैः सुयमेभिराशुभिः शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥१॥

[२६६] स्वयं दधिध्वे...
......शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥२॥
[२६७] साकं जाताः...
......शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥३॥
[२६८] आभूषेण्यं वो...
.. ...शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥४॥
[२६९] उदीरयथा मरुतः...
......शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥५॥
[२७०] यदश्वान् धूर्षु...
......शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥६॥
[२७१] न पर्वता न नद्यो ...
......शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥७॥
[२७२] यत् पूर्व्यं...
......शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥८॥
[२७३] मृळत नो...
......शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥९॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । जगती (ऋ. ५।५५।३)
[२६७] साकं जाताः सुभ्वः साकमुक्षिताः श्रिये चिदा प्रतरं वावृधुर्नरः ।
विरोकिणः सूर्यस्येव रश्मयः शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ।

अरुणो वैतहव्यः । अग्निः । जगती (ऋ. १०।९१।४)
प्रजानन्नग्ने तव योनिमृत्वियमिळायास्पदे घृतवन्तमासदः ।
आ ते चिकित्र उपसामिवेतयोऽरेपसः सूर्यस्येव रश्मयः ॥४॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । जगती (ऋ. ५।५५।९)
[२७३] मृळत नो मरुतो मा वधिष्टनाऽस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्तन ।
अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गातन शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ॥९॥

ऋजिश्वा भारद्वाजः । विश्वे देवाः । त्रिष्टुप् (ऋ.६।५१।५)
द्यौष्पितः पृथिवि मातरध्रुगग्ने भ्रातर्वसवो मृळता नः ।
विश्व आदित्या अदिते सजोषा अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्तन ॥५॥

स्यूमरश्मिर्भार्गवः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ.१०।७८।८)
[४११] सुभागान्नो देवाः कृणुता सुरत्नानस्मान्स्तोतॄन् मरुतो वावृधानाः ।
अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गात सनादि वो रत्नधेयानि सन्ति ॥८॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ.५।५५।१०)
[२७४] यूयमस्मान् नयत वस्यो अच्छा निरंहतिभ्यो मरुतो गृणानाः ।
जुषध्वं नो हव्यदातिं यजत्रा वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥१०॥

वामदेवो गौतमः । बृहस्पतिः । त्रिष्टुप् (ऋ.४।५०।६)
एवा पित्रे विश्वदेवाय वृष्णे यज्ञैर्विधेम नमसा हविर्भिः ।
बृहस्पते सुप्रजा वीरवन्तो वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥६॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । बृहती (ऋ.५।५६।१)
[२७५] अग्ने शर्धन्तमा गणं पिष्टं रुक्मेभिरञ्जिभिः ।
विशो अद्य मरुतामव ह्वये दिवश्चिद्रोचनादधि ॥१॥
प्रस्कण्वः काण्वः । उषा । अनुष्टुप् (ऋ.१।४९।१)
उषो भद्रेभिरा गहि दिवश्चिद्रोचनादधि ।
वहन्त्वरुणप्सव उप त्वा सोमिनो गृहम् ॥१॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । बृहती (ऋ.५।५६।४)
[२७८] नि ये रिणन्त्योजसा वृथा गावो न दुर्धुरः ।
अश्मानं चित् स्वर्यं पर्वतं गिरिं प्र च्यावयन्ति यामभिः ॥४॥

कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री (ऋ.१।३७।११)
[१६] त्यं चिद् घा दीर्घं पृथुं मिहो नपातममृध्रम् ।
प्र च्यावयन्ति यामभिः ॥११॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । बृहती । (ऋ. ५।५६।६)
[२८०] युङ्ग्ध्वं ह्यरुषी रथे युङ्ग्ध्वं रथेषु रोहितः ।
युङ्ग्ध्वं हरी अजिरा धुरि वोळ्हवे वहिष्ठा धुरि वोळ्हवे ॥६॥

[illegible]

[illegible] वोऽह्वे वाहिष्ठा छुरि वोऽह्वे । [illegible]

[illegible] मर्तोप वोऽवसो [illegible]

[illegible] हवे नरो मरुतो [illegible]

[illegible] हवे नरो मरुतो . .

[illegible]

[illegible] स्वायुधास इष्मिणः [illegible]

[illegible]

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ. ६।६६।११)
[३४४] तं वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिं रुद्रस्य सूनुं हवसा विवासे ।
दिवः शर्धाय शुचयो मनीषा गिरयो नाप उग्रा अस्पृध्रन् ॥ ११ ॥

नोधा गौतमः । मरुतः । जगती (ऋ.१।६४।१२)
[३१९] घृषुं पावकं वनिनं विचर्षणिं रुद्रस्य सूनुं हवसा गृणीमसि ।
रजस्तुरं तवसं मारुतं गणमृजीषिणं वृषणं सश्चत श्रिये ॥१२॥

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मरुतः । द्विपदा विराट् (ऋ.७।५६।११)
[३५५] स्वायुधास इष्मिणः सुनिष्का उत स्वयं तन्वः शुम्भमानाः ॥११॥

एवयामरुत् आत्रेयः । मरुतः । अति जगती (ऋ.५।८७।५)
[३११] स्वनो न वोऽमवान् रेजयद् वृषा त्वेषो ययिस्तविष एवयामरुत् ।
येना सहन्त ऋञ्जत स्वरोचिषः स्थारश्मानो हिरण्ययाः स्वायुधास इष्मिणः ॥५॥

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ.७।५६।२३)
[३६७] भूरि चक्र मरुतः पित्र्याण्युक्थानि या वः शस्यन्ते पुरा चित् ।
मरुद्भिरुग्रः पृतनासु साळ्हा मरुद्भिरित् सनिता वाजमर्वा ॥२३॥

शुनहोत्रो भारद्वाजः । इन्द्रः । त्रिष्टुप् (ऋ. ६।३३।२)
त्वां हीन्द्रावसे विवाचो हवन्ते चर्षणयः शूरसातौ ।
त्वं विप्रेभिर्वि पणीँरशायस्त्वोत इत् सनिता वाजमर्वा ॥२॥

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ. ७।५६।२५)
[३६९] तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रोऽग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त ।
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२५॥

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । विश्वे देवाः । त्रिष्टुप् (ऋ.७।३४।२५)
तन्न इन्द्रो ...
...सदा नः ॥२५॥

वसुकर्णो वासुक्रः । विश्वे देवाः । जगती (ऋ.१०।६६।११)
द्यावापृथिवी जनयन्नभि व्रताप ओषधीर्वनिनानि यज्ञिया ।
अन्तरिक्षं स्वरा पप्रुरूतये वशं देवासस्तन्वी नि मामृजुः ॥११॥

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ.७।५७।४)
[३७३] ऋधक् सा वो मरुतो दिद्युदस्तु यद् व आगः पुरुषता कराम ।
मा वस्तस्यामपि भूमा यजत्रा अस्मे वो अस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ॥४॥

शङ्खो यामायनः । पितरः । त्रिष्टुप् (ऋ.१०।१५।६)
आच्या जानु दक्षिणतो निषद्येमं यज्ञमभि गृणीत विश्वे ।
मा हिंसिष्ट पितरः केन चिन्नो यद् व आगः पुरुषता कराम ॥६॥

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । अश्विनौ । त्रिष्टुप् (ऋ.७।७०।५)
शुश्रुवांसा चिदश्विना पुरूण्यभि ब्रह्माणि चक्षाथे ऋषीणाम् ।
प्रति प्र यातं वरमा जनायास्मे वामस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ॥५॥

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ. ७।५७।७)
[३७६] आ स्तुतासो मरुतो विश्व ऊती अच्छा सूरीन्त्सर्वताता जिगात ।
ये नस्त्मना शतिनो वर्धयन्ति यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥

अत्रिर्भौमः । विश्वे देवाः । त्रिष्टुप् (ऋ. ५।४३।१०)
आ नामभिर्मरुतो वक्षि विश्वाना रूपेभिर्जातवेदो हुवानः ।
यज्ञं गिरो जरितुः सुष्टुतिं च विश्वे गन्त मरुतो विश्व ऊती ॥१०॥

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ. ७।५८।३)
[३७९] बृहद् वयो मघवद्भ्यो दधात जुजोषन्निन्मरुतः सुष्टुतिं नः ।
गतो नाध्वा वि तिराति जन्तुं प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेत ॥३॥

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । इन्द्रावरुणौ । त्रिष्टुप् (ऋ.७।८४।३)
कृतं नो यज्ञं विदथेषु चारुं कृतं ब्रह्माणि सूरिषु प्रशस्ता ।
उपो रयिर्देवजूतो न एतु प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेतम् ॥ ३ ॥

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ. ७।५८।६)

[३८१] प्र सा वाचि सुष्टुतिर्मघोनामिदं सूक्तं मरुतो जुषन्त ।
आराच्चिद् द्वेषो वृषणो युयोत यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥

ऋषिः भरद्वाजः । इन्द्रः । त्रिष्टुप् (ऋ. ६।४७।१३)
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम ।
स सुत्रामा स्ववाँ इन्द्रो अस्मे आराच्चिद् द्वेषः सनुतर्युयोतु ॥१३॥

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मरुतः । सतोबृहती (ऋ. ७।५९।२)

[३८२] युष्माकं देवा अवसाहनि प्रिय ईजानस्तरति द्विषः ।
प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ॥२॥

कुत्स आङ्गिरसः । ऋभवः । जगती (ऋ. १।११०।७)
ऋभुर्न इन्द्रः शवसा नवीयानृभुर्वाजेभिर्वसुभिर्वसुर्ददिः ।
युष्माकं देवा अवसाहनि प्रियेऽभि तिष्ठेम पृत्सुतीरसुन्वताम् ॥७॥

मनुर्वैवस्वतः । विश्वे देवाः । सतोबृहती (ऋ. ८।२७।१६)
प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्पर्यरिष्टः सर्व एधते ॥१६॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।१)

[४६] प्र यद् वस्त्रिष्टुभमिषं मरुतो विप्रो अक्षरत् ।
वि पर्वतेषु राजथ ॥१॥

प्रियमेध आङ्गिरसः । इन्द्रः । अनुष्टुप् (ऋ. ८।६९।१)
प्रप्र वस्त्रिष्टुभमिषं मन्दद्वीरायेन्दवे ।
धिया वो मेधसातये पुरंध्या विवासति ॥१॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।२)

[४७] यदङ्ग तविषीयवो यामं शुभ्रा अचिध्वम् ।
नि पर्वता अहासत ॥२॥

वत्सः काण्वः । इन्द्रः । गायत्री (ऋ. ८।६।२६)
यदङ्ग तविषीयस इन्द्र प्रराजसि क्षितीः ।
महाँ अपार ओजसा ॥२६॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।१४)

[५३] अधीव यद् गिरीणां यामं शुभ्रा अचिध्वम् ।
सुवानैर्मन्दध्व इन्दुभिः ॥१४॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।३)

[४८] उदीरयन्त वायुभिर्वाश्रासः पृश्निमातरः ।
धुक्षन्त पिप्युषीमिषम् ॥३॥

नारदः काण्वः । इन्द्रः । उष्णिक् (ऋ. ८।१३।२५)
वर्धस्वा सु पुरुष्टुत ऋषिष्टुताभिरूतिभिः ।
धुक्षस्व पिप्युषीमिषमवा च नः ॥२५॥

मातरिश्वा काण्वः । इन्द्रः । बृहती (ऋ. ८।५४[वाल० ६]।७)
सन्ति ह्यर्य आशिष इन्द्र आयुर्जनानाम् ।
अस्मान्नक्षस्व मघवन्नुपावसे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ॥७॥

अमहीयुराङ्गिरसः । पवमानः सोमः । गायत्री (ऋ. ९।६१।१५)
अर्षा णः सोम शं गवे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ।
वर्धा समुद्रमुक्थ्यम् ॥१५॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः गायत्री (ऋ. ८।७।४)

[४९] वपन्ति मरुतो मिहं प्र वेपयन्ति पर्वतान् ।
यद् यामं यान्ति वायुभिः ॥४॥

कण्वो घौरः । मरुतः । बृहती (ऋ. १।३९।५)

[५०] प्र वेपयन्ति पर्वतान् वि विञ्चन्ति वनस्पतीन् ।
प्रो आरत मरुतो दुर्मदा इव देवासः सर्वया विशा ॥५॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।८)

[५१] सृजन्ति रश्मिमोजसा पन्थां सूर्याय यातवे ।
ते भानुभिर्वि तस्थिरे ॥८॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।३६)

[५२] अग्निर्हि जानि पूर्व्यश्छन्दो न सूरो अर्चिषा ।
ते भानुभिर्वि तस्थिरे ॥३६॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।१०)

[५४] त्रीणि सरांसि पृश्नयो दुदुह्रे वज्रिणे मधु ।
उत्सं कवन्धमुद्रिणम् ॥१०॥

प्रियमेध आङ्गिरसः । इन्द्रः । गायत्री (ऋ. ८।६९।६)
इन्द्राय गाव आशिरं दुदुह्रे वज्रिणे मधु ।
यत् सीमुपह्वरे विदत् ॥६॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ.८।७।११)

[५६] मरुतो यद्ध वो दिवः सुम्नायन्तो हवामहे ।
आ तू न उप गन्तन ॥११॥

कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री (ऋ. १।३७।१२)

[१७] मरुतो यद्ध वो बलं जनाँ अचुच्यवीतन ।
गिरीँरचुच्यवीतन ॥१२॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।१२)

[५७] यूयं हि ष्ठा सुदानवो रुद्रा ऋभुक्षणो दमे ।
उत प्रचेतसो मदे ॥१२॥

मेधातिथिः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. १।१५।२)

[५] मरुतः पिबत ऋतुना पोत्राद् यज्ञं पुनीतन ।
यूयं हि ष्ठा सुदानवः ॥२॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ.८।७।१३

[५८] आ नो रयिं मदच्युतं पुरुक्षुं विश्वधायसम् ।
इयर्ता मरुतो दिवः ॥१३॥

ब्रह्मातिथिः काण्वः । अश्विनौ । गायत्री (ऋ. ८।५।१५)
अस्मे आ वहतं रयिं शतवन्तं सहस्रिणम् ।
पुरुक्षुं विश्वधायसम् ॥१५॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ.८।७।१५)

[६०] एतावतश्चिदेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ।
अदाभ्यस्य मन्मभिः ॥१५॥

इरिम्बिठिः काण्वः । आदित्याः । उष्णिक् (ऋ.८।१८।१)
इदं ह नूनमेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ।
आदित्यानामपूर्व्यं सवीमनि ॥१॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।२०)

[६५] क्व नूनं सुदानवो मदथा वृक्तबर्हिषः ।
ब्रह्मा को वः सपर्यति ॥२०॥

वत्सः काण्वः । इन्द्रः । गायत्री (ऋ. ८।६४।१०)
क्व स्य वृषभो युवा तुविग्रीवो अनानतः ।
ब्रह्मा कस्तं सपर्यति ॥१०॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।२२)

[६७] समु त्ये महतीरपः सं क्षोणी समु सूर्यम् ।
सं वज्रं पर्वशो दधुः ॥२२॥

आयुः काण्वः । इन्द्रः । सतोबृहती ।
(ऋ. ८।५२[वाल.४]।१०)
समिन्द्रो रायो बृहतीरधूनुत सं क्षोणी समु सूर्यम् ।
सं शुक्रासः शुचयः सं गवाशिरः सोमा इन्द्रममन्दिषुः ॥१०॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।२३)

[६८] वि वृत्रं पर्वशो ययुर्वि पर्वताँ अराजिनः ।
चक्राणा वृष्णि पौंस्यम् ॥२३॥

वत्सः काण्वः । इन्द्रः । गायत्री (ऋ. ८।६।१३)
यदस्य मन्युरध्वनीद्वि वृत्रं पर्वशो रुजन् ।
अपः समुद्रमैरयत् ॥१३॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।२५)

[७०] विद्युद्धस्ता अभिद्यवः शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः ।
शुभ्रा व्यञ्जत श्रिये ॥२५॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । जगती (ऋ. ५।५४।११)

[१६०] अंसेषु व ऋष्टयः पत्सु खादयो वक्षःसु रुक्मा मरुतो रथे शुभः ।
अग्निभ्राजसो विद्युतो गभस्त्योः शिप्राः शीर्षसु वितता हिरण्ययीः ॥११॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।२६)

[७१] उशना यत् परावत उक्ष्णो रन्ध्रमयातन ।
द्यौर्न चक्रदद्भिया ॥२६॥

परुच्छेपो दैवोदासिः । इन्द्रः । अत्यष्टिः (ऋ. १।१३०।९)
सूरश्चक्रं प्र वृहज्जात ओजसा प्रपित्वे वाचमरुणो मुषायतीशान आ मुषायति ।
उशना यत् परावतोऽजगन्नूतये कवे ।
सुम्नानि विश्वा मनुषेव तुर्वणिरहा विश्वेव तुर्वणिः ॥९॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।२८)

[७२] यदेषां पृषती रथे प्रष्टिर्वहति रोहितः ।
यान्ति शुभ्रा रिणन्नपः ॥२८॥

कण्वो घौरः । मरुतः । बृहती (ऋ. १।३९।६)

[८१] उपो रथेषु पृषतीरयुग्ध्वं प्रष्टिर्वहति रोहितः ।
आ वो यामाय पृथिवी चिदश्रोदबीभयन्त मानुषाः ॥६॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।३१)

[७६] कद्ध नूनं कधप्रियो यदिन्द्रमजहातन ।
को वः सखित्व ओहते ॥३१॥

कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री (ऋ. १।३८।१)

[९१] कद्ध नूनं कधप्रियः पिता पुत्रं न हस्तयोः ।
दधिध्वे वृक्तबर्हिषः ॥१॥

पुनर्वत्सः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. ८।७।३५)

[८०] आक्ष्णयावानो वहन्त्यन्तरिक्षेण पततः ।
धातारः स्तुवते वयः ॥३५॥

आजीगर्तिः शुनःशेपः स कृत्रिमो वैश्वामित्रो देवरातः ।
वरुणः । गायत्री (ऋ. १।२५।७)

वेदा यो वीनां पदमन्तरिक्षेण पतताम् ।
वेद नावः समुद्रियः ॥७॥

सोभरिः काण्वः । मरुतः । ककुप् (ऋ. ८।२०।५)

[८६] अच्युता चिद् वो अज्मन्ना नानदति पर्वतासो वनस्पतिः ।
भूमिर्यामेषु रेजते ॥५॥

कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री (ऋ. १।३७।८)

[९१] येषामज्मेषु पृथिवी जुजुर्वाँ इव विश्पतिः ।
भिया यामेषु रेजते ॥८॥

सोभरिः काण्वः । मरुतः । सतोबृहती (ऋ. ८।२०।८)

[८९] गोभिर्वाणो अज्यते सोभरीणां रथे कोशे हिरण्यये ।
गोबन्धवः सुजातास इषे भुजे महान्तो नः स्परसे नु ॥८॥

सोभरिः काण्वः । अश्विनौ । ककुप् (ऋ. ८।२२।९)

आ हि रुहतमश्विना रथे कोशे हिरण्यये वृषण्वसू ।
युञ्जाथां पीवरीरिषः ॥९॥

सोभरिः काण्वः । मरुतः । [illegible]
(ऋ. ८।२०।[illegible])

[९५] [illegible]
[illegible] दाता मघा [illegible] ॥[illegible]

[illegible] । मरुतः । [illegible] (ऋ. [illegible])

[११६] [illegible]
[illegible] ।

[illegible]
[illegible] ॥[illegible]

सोभरिः काण्वः । मरुतः । सतोबृहती (ऋ. ८।२०।२६)

[१०७] विश्वं पश्यन्तो बिभृथा तनूष्वा तेना नो अधि वोचत ।
क्षमा रपो मरुत आतुरस्य न इष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥२६॥

मत्स्यः साम्मदः, मान्यो मैत्रावरुणिः, बहवो वा मत्स्या जालनद्धाः ।

आदित्याः । गायत्री (ऋ. ८।६७।६)

यद्वः श्रान्ताय सुन्वते वरूथमस्ति यच्छर्दिः ।
तेना नो अधि वोचत ॥६॥

मेधातिथि-मेध्यातिथी काण्वौ । इन्द्रः । बृहती
(ऋ. ८।१।१२)

य ऋते चिदभिश्रिषः पुरा जत्रुभ्य आतृदः ।
संधाता संधिं मघवा पुरूवसुरिष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥१२॥

[illegible]
(ऋ. [illegible])

[१०९] [illegible]
[illegible] ।

[illegible]
[illegible] (ऋ. [illegible])

[illegible] ।
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[११३] [illegible] ।
[illegible]

[illegible]
[illegible]

[११८] [illegible] ।
[illegible]

अत्रिर्भौमः । इन्द्रः । उष्णिक् (ऋ. ५।४०।२)
वृषा ग्रावा वृषा मदो वृषा **सोमो अयं सुतः** ।
वृषन्निन्द्र वृषभिर्वृत्रहन्तम ॥२॥

बिन्दुः पूतदक्षो वा आङ्गिरसः । मरुतः ।
गायत्री (ऋ. ८।९४।८)
[४०१] कद्वो अद्य महानां देवानाम**वो वृणे** ।
त्मना च दस्मवर्चसाम् ॥८॥
श्यावाश्व आत्रेयः । इन्द्राग्नी । गायत्री (ऋ. ८।३८।१०)
आहं सरस्वतीवतोरिन्द्राग्न्योर**वो वृणे** ।
याभ्यां गायत्रमृच्यते ॥१०॥

बिन्दुः पूतदक्षो वा आङ्गिरसः । मरुतः ।
गायत्री (ऋ. ८।९४।१०-१२)
[४०४] त्यान् नु पूतदक्षसो दिवो वो **मरुतो हुवे**।
अस्य सोमस्य पीतये ॥१०॥
[४०५] त्यान् नु ये वि रोदसी तस्तभुर्**मरुतो हुवे**
अस्य सोमस्य पीतये ॥११॥
[४०६] त्यं नु मारुतं गणं गिरिष्ठां वृषणं हुवे ।
अस्य सोमस्य पीतये ॥१२॥
मेधातिथिः काण्वः । मरुतः । गायत्री (ऋ. १।२२।१)
प्रातर्युजा वि बोधयाश्विनावेह गच्छताम् ।
अस्य सोमस्य पीतये ॥१॥
मेधातिथिः काण्वः । इन्द्रवायू । गायत्री (ऋ. १।२३।२)
उभा देवा दिविस्पृशेन्द्रवायू हवामहे ।
अस्य सोमस्य पीतये ॥२॥
वामदेवो गौतमः । इन्द्राबृहस्पती ।
गायत्री (ऋ. ४।४९।५)
इन्द्राबृहस्पती वयं सुते गीर्भिर्हवामहे ।
अस्य सोमस्य पीतये ॥५॥
भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । इन्द्राग्नी । अनुष्टुप् (ऋ. ६।५९।१०)
इन्द्राग्नी उक्थवाहसा स्तोमेभिर्हवनश्रुता ।
विश्वाभिर्गीर्भिरा गतमस्य **सोमस्य पीतये** ॥१०॥
कुरुसुतिः काण्वः । इन्द्रः । गायत्री (ऋ. ८।७६।६)
इन्द्रं प्रत्नेन मन्मना मरुत्वन्तं हवामहे ।
अस्य सोमस्य पीतये ॥६॥
बाहुवृक्त आत्रेयः । मित्रावरुणौ । गायत्री (ऋ. ५।७१।३)
उप नः सुतमा गतं वरुण मित्र दाशुषः ।
अस्य सोमस्य पीतये ॥३॥

स्यूमरश्मिर्भार्गवः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ. १०।७७।६)
[४१२] प्र यद् वहध्वे मरुतः पराकाद् यूयं महः संवरणस्य वस्वः ।
विदानासो वसवो राध्यस्या**ऽऽराच्चिद् द्वेषः सनुत-
र्युयोत** ॥६॥
गर्गो भारद्वाजः । इन्द्रः । त्रिष्टुप् (ऋ. ६।४७।१३)
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम ।
स सुत्रामा स्ववाँ इन्द्रो अस्मे **आराच्चिद् द्वेषः सनुत-
र्युयोत** ॥१३॥

स्यूमरश्मिर्भार्गवः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ. १०।७७।८)
[४१४] ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमा आदित्येन नाम्ना
शंभविष्ठाः ।
ते नोऽवन्तु रथतूर्मनीषां महश्च यामन्नध्वरे चकानाः ॥८॥
वसिष्ठो मैत्रावरुणिः । विश्वे देवाः । त्रिष्टुप् (ऋ. ७।३९।४)
ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमाः सधस्थं विश्वे अभि
सन्ति देवाः ।
ताँ अध्वर उशतो यक्ष्यग्ने श्रुष्टी भगं नासत्या पुरंधिम् ॥४॥

स्यूमरश्मिर्भार्गवः । मरुतः । त्रिष्टुप् (ऋ. १०।७८।८)
[४२२] सुभागान्नो देवाः कृणुत सुरत्नानस्मान्स्तोतॄन् मरुतो
वावृधानाः ।
अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गात सनाद्धि वो रत्न-
धेयानि सन्ति ॥८॥

श्यावाश्व आत्रेयः । मरुतः । जगती (ऋ. ५।५५।९)
[२७३] मृळत नो मरुतो मा वधिष्टनाऽस्मभ्यं बहुलं शर्म वि
यन्तन ।
अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गातन शुभं यातामनु
रथा अवृत्सत ॥९॥

[बडोदरराज्याधीशानां गायकवाडकुलभूषणानां 'सेनाखासखेल-समशेरबहाद्दुरायनेक'-
बिरुदभाजां श्रीमतां प्रतापसिंहमहाराजानां महनीयदानाश्रयेण प्रकाशितः]

ऋग्यजुःसामाथर्वसंहितासूपलभ्यमानानां सर्वेषां

'मरुद्'-देवता-मन्त्राणां

समन्वयः।

एष समन्वयः

भट्टाचार्येण सांतवलेकरकुलजेन दामोदरभट्टसूनुना श्रीपादशर्मणा
स्वाध्याय-मण्डलाध्यक्षेण औंधनगरे संपादितः ।

स च
विक्रमीये २००० संवति, १८६५ शकाब्दे, १९४३ क्रिस्ताब्दे
प्रकाशितः

मुद्रक तथा प्रकाशक
वसन्त श्रीपाद सातवळेकर, B. A.
भारत मुद्रणालय, स्वाध्याय-मण्डल, औंध (जि. सातारा.)

INTRODUCTION.

The greatness of a nation depends upon the greatness of its thinkers and consequently upon its capacity to influence the thoughts of the world, leading to permanent peace and prosperity. A larger purse and a stronger sword may make a nation the conqueror of the world, yet its conquest is bound to be short-living. It may profess to bring peace and prosperity to its own people and to the others whom it conquers; yet in either case, they are only apparent and not deep-rooted. For, in the first case, they are associated with a spirit of selfishness and avarice, while in the latter, they are vitiated by an under-current of discontent kept under check only by a sense of utter helplessness and a loss of spirit. This spirit of selfishness and avarice in the stronger nations coupled with the discontent and loss of spirit in the weaker ones, is the eternal source of all major wars and the consequent miseries which will continue to visit this unhappy globe of ours until man realises the responsibility which is placed upon his shoulders by his Creator.

Man was created with a mixture of the divine and the demonical elements placed side by side in him. In addition to these, he was also endowed with a Free Thought and Will which he may exercise either for his salvation or for his doom. This latter gift is as important as it is dangerous. Being placed in the midst of tempting pleasures and joys which belong to the immediate future, man is invariably led by his demonical nature to exercise this valuable gift in pursuit of them and the result namely, his spiritual downfall is inevitable. Now and then great individual thinkers realise this and try to administer a palliative and cure in the form of a Religion and a Philosophy. This has only a temporary and apparent effect and that too upon those members of the community who really do not count. The leaders, the subtle-witted few, who feel the pulse of their followers, remain mostly unaffected by these remedies and carry on their demonical work of Destruction under different names and pretexts of whatever is beautiful and useful on the surface of the earth, by rousing the feelings of selfishness and avarice in the minds of men around them. On the other hand, if and when these Leading Few happen to be honest and intelligent thinkers, they turn the tide of popular thoughts and feelings from self-aggrandizement towards the realization of the divine qualities of Contentment and Affection. But even here, an unforeseen danger lurks in the back-ground. It is the want of capacity of the masses or ordinary men to grasp the real meaning of these divine qualities which are often exercised in an illogical and unreasonable manner, so as to lead to Meekness of Spirit, Weakness of Body

[illegible] of Mind. In the whole [illegible] [illegible] in this way to [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

activities.

India was such a [illegible] in the V[illegible] days. The Vedic Aryans had [illegible] ostentations like bodily [illegible], they [illegible] problems as they presented themselves [illegible] them. They had a healthy mind [illegible] an equally healthy body. Without [illegible] teach morality, they practised it [illegible] [illegible]. They sought to destroy the [illegible] and [illegible] and establish the [illegible] [illegible] in the mind of human beings. [illegible] [illegible]

ancestors are often sung and approached in a spirit of exultation for the sake of deriving consolation or encouragement; and this is particularly true in the case of a people whose present is neither glorious nor happy, but is darkened by misfortune or by their own acts of omission and commission. Such an approach to the past glories of ancestors is no doubt very useful for rousing feelings of hope and enthusiasm in the hearts of a down-trodden people: but there is also a danger in this and it lies in the attitude of the persons who make such an approach. If such persons are strictly judicious and calmly patient in their work of interpretation and investigation, they may get a vast fund of knowledge and experience, even when the ancestral deeds and words do not happen to be as glorious as they are desired to be. But when learned enthusiasts approach the deeds of their ancestors with a preconceived idea of their superiority in *every respect*, they are apt to see in them much that may not actually exist therein. Interpretation is a powerful instrument which turns ordinary things into extraordinary ones and vice versa. Honest patience is not the watch-word of such men who are out to see and discover *at any cost* everything that is glorious in the doings and the sayings of their ancestors. And the ground is most favourable for such a thing when the words of the ancestors are couched in a language which much differs from its present descendent and representative in respect of vocabulary and syntax. There is ample scope for honest or dishonest mis-interpretation in such a case, where the correct meaning of words and expressions can be arrived at only after a careful and patient research. Such a patient study is however generally neglected for two reasons : firstly because it involves tremendous labour without any corresponding amount of immediate gain; and secondly, because, it may often lead to unexpected and unwanted conclusions. The net result of such an incorrect attitude towards the ancestral deeds and words is that it creates a feeling of vain-gloriousness in the people and makes them apathetic to the study of good and therefore imitable things existing in the civilization of the other peoples with whom they come in contact.

The Vedas – the Samhitas, the Brahmanas, and the Upanishads– are a very highly valued treasure of the Indo-Aryans. They contain a story of the thoughts and deeds of those sturdy Aryans who honestly struggled to put down the forces of Evil which opposed them whether in the field of the external or the sensual world, or in that of the internal or the mental one. A correct and scientific interpretation of the Vedas is therefore most desirable, whether for inspiring hope and enthusiasm in the bosoms of the present down-trodden, neglected, and gloomy descendents of those same Aryans, or for teaching them valuable experience and wisdom which may be useful to them in their heroic struggle out of their present predicament. Such an interpretation is possible only after a careful study of every aspect of the Vedic language, namely, its vocabulary, its grammar, its syntax, as also its style and ornamentation. For this purpose an extensive analysis of this literature must be undertaken. To take the particular case of the Rigveda Samhita, which is the oldest and most difficult of all the Vedic

works, its deities must be separately studied in full details, ascertaining the nature of each, and also of the worship offered to them, of the attitude of the worshipper towards them and of the fruits or results expected from such worship by the worshipper. These and other thought-contents of the Rigveda such as the state of civilization and social conditions obtaining in that period, must carefully be analysed and studied. Similarly an extensive and systematic study of its language and literary merits or defects has yet to be undertaken. A history of Sanskrit Poetics or the Art of Composition as reflected in the Vedic literature and later in the great epics has still to be written. The similes in the Rigveda and the other Vedas have to be collected and studied with reference to their structure and growth and also with reference to the field of poetical observation over which they extend. Among themselves, purely Illustrative similes such as are employed in scientific and technical literature have to be distinguished from the Decorative ones where a past experience is recalled and coupled with or rather flavoured with a little Imagination. The Roopakas and the Utprekshas have to be similarly studied and any other modes of ornamental use of words and expressions have to be carefully noted; for, therein we expect to find the early representatives of our later Alamkaras.

In spite of so great an importance of the Vedic literature, particularly of the Rigveda, it is very painful to find that very few persons are inclined to undertake the study of it. Classical Sanskrit is vastly studied by our University students from an early stage in their course. On the other hand, Vedic Sanskrit is introduced in their studies at a very late stage and that too in a half-hearted manner. The result of this is that an average student of Sanskrit entertains a sort of dislike and fear of the paper on Rigveda. Grown-up people generally are not even aware of the fact that the Vedas can be studied with as much ease and interest as the Shakuntalam of Kalidasa. This state of affairs ought to be changed, and one is delighted to find that efforts in the right direction are being made in this behalf. Moral stories in the Vedas are being written in the provincial languages for children; Marathi translations and criticism of the Vedic works are being published; and other attempts of bringing the contents of the Vedas to the notice of the general reader are being made. But the foundation of a systematic study of the Vedic works is being laid at Swadhyaya Mandal, Aundh, (Dist. Satara) by Bhattacharya Pandit S. D. Satwalekar. In spite of tremendous difficulties, he is publishing several Vedic works in critical editions along with different indices, which are prepared with great care and labour and printed even now at an enormous cost. One is greatly pleased to see that his attempts are directed towards the elucidation and correct interpretation of the difficult Vedic texts. His editions are very carefully prepared and beautifully printed. They are a source of joy and inspiration to the student of the Vedas. They offer him abundant material for patient and unbiassed investigation into the correct meaning and contents of our ancient Vedic treasure. In early days, there were attempts made to publish the Vedic texts in cheap editions but the intention of the publishers mainly seemed to be to

nt the Vedic texts to the followers of the religion for being preserved as their l possession rather than for a critical and matic study of them. Sometimes even a i translation was given: but the materials a critical and systematic study were r offered to the reader who was inclined udy the Vedas independently. To be proud one's ancestral achievements is surely mendable and even necessary: but this e must always be substantiated by a ect understanding of the ancestral words deeds and a bold readiness to face it. n alone would it be possible for a people rofit by them.

The present book is one such attempt andit Satwalekar. It gives an alphabetical d-index of all the Marut-hymns in the ic Samhitas, which have already been rately published by him. All words ther simple or occurring in compounds heir first or subsequent members, are duly rded here. Under nouns, all the case-forms given in their order and under verbs a ilar arrangement is adopted in giving their ious forms. Under each word a complete tence is quoted so that the meaning of t word may be clear without difficulty. letailed study of the Marut-hymns is thus ilitated, whether from a linguistic or a rary point of view. A separate translation Marathi and Hindi together with the rd-order of the verses and an inspiring roduction is also published. Footnotes are ded here and there.

One of the fruitful fields of Vedic Research the study of the stage of the development of the Compositional Art or the Sahitya-Shastra as revealed in the Vedic Samhitas. For the purposes of this study a collection and evaluation of the Vedic similes is necessary and in the following paragraphs I intend to make an attempt to estimate the poetical setting in which the Maruts are placed by the Vedic poets. Thereby I propose to bring out the prominent qualities of the Maruts which attracted the poetical eye of the Vedic bards, and it will also be possible to ascertain the wide range of poetical observation by which the poets have introduced their Upamanas from the different fields and provinces of the Vedic World.

A simile is one of the earliest devices employed by an imaginative mind to convey its meaning with ease and grace. In its earliest stages it was perhaps employed as a mere help to understanding, trying to make a thing clearer by its juxtaposition with an illustration which is selected because of its well-knownness in respect of the particular property which is intended to be conveyed with regard to that thing. This may be called an Illustrative simile or a simile whose main purpose is to convey the meaning with greater ease, force and accuracy. Imagination of the hearer plays an unimportant and negligible part in this simile. Such similes are commonly found in technical and philosophical literature and also in the purely narrative parts of ancient Puranic poetry. In the Rigvedic hymns such similes are naturally few as the poets are concerned more with the imagination than with the [illegible] of the poem. The hymns are poetical productions and they contain the other kind of similes [illegible]

may be called a Decorative simile. Its chief purpose is to rouse the imagination of the hearer and through it to create a mental image or picture with the help of resemblance, the image or picture thus created serving as a decoration to the matter under consideration and making it more enjoyable and delightful. Thus for example, the grace and ease with which the Maruts fly through the mid regions or descend upon the earth to receive the offerings is delightfully understood by the hearer when they are compared with the hawks or the swans, whose mental picture is necessarily awakened in the mind by the simile and is associated with the Maruts. Thus the outstanding qualities which a man's mind generally associates with particular objects by observation or training are with the help of his imagination transferred to or associated with other similar objects, which then become the source of delight in the company of those others. This Decorative simile develops into other Alamkaras owing to the different modes of presentation of the same mental image or picture, and on the whole, it may be properly described as the very foundation stone of the Alamkara Shastra.

Naturally in the early stages of the employment of the Decorative simile, the poet may disclose certain peculiarities and defects from the point of view of the expressional technique; the enthusiastic reader or hearer may not be even conscious of them, because his main object is to have his imagination so roused as to produce an enjoyable image or picture and this can be done even with the help of an imperfectly expressed simile. Th[e] the common property may be found dropp[ed] in the early Decorative similes; or grammatic[al,] syntactical and even structural irregulariti[es] may be found to exist in them. But in cou[rse] of time these irregularities came to correct[ed] as the hearers– who gradually develop in[to] critics– grew more fastidious and exacti[ng] about such matters. The study of the Deco[ra]rative simile in its early stages is quite pr[o]mising in its results and is sure to thro[w] ample light on the different stages in th[e] struggle of the poetic mind to attain express[ional] exactitude. It is also bound to be instructive as regards the inner working of the poet's mind which ultimately built up the lovely edifice of the classical Upama and the other Alamkaras. But such a study can be undertaken only by those who have studied the Vedic litarture carefully and critically and such a study is greatly facilitated by books like the present one.

By the side of the Decorative simile, there exists in the Rigveda in particular another kind of simile, which seems to stand in a category by itself. It may be described as the Emotional simile. The main purpose of this simile is not mere decoration by creating an image or picture; but it goes a step further. It rouses the feelings and passions of the hearer through the medium of this picture or image and appeals to his heart more than his mind. In the Rgvedic hymns, this Emotional simile is primarily intended to serve a distinct purpose, namely, an appeal to a deity's heart in addition to his mind and palate. When the Rigvedic poets were competing with each other to secure the favour of

a deity like Indra, they first tried to do so with the help of external means such as a newer and better hymn or stronger and tastelier Soma or similar other offerings; but these external means have a limited scope of improvement and at a certain stage fail to serve the purpose of a competition. The poets then naturally turned to their inner feelings of love, or friendship, or relationship with which they sought to supplement their external gifts. It is thus that we find the Rigvedic poets requesting a deity to favour them as a father favours his son, or to help them as a mother helps her child. A deity's sakhya or relationship is often mentioned and sought for by the poets. In one of our Marut hymns, the poet compares himself with a loving bride who approaches an affectionate lover with a gift of her own, without expecting anything from the lover as ordinary brides do (Cf. Rv. V. 52. 14 and note on it at JBBRAS., 1940, p. 24). In another he compares himself with a newly born son and requests the Maruts to hold him in their hands like a father. One poet speaks of the Maruts as his well-established friends, while another one thinks that they should visit him as eagerly as a cow visits her calf.

This tendency to supplement an external gift by means of an internal feeling has its legitimate development and culmination in the later sentiment of Bhakti, which may be briefly described as 'a feeling of supreme selfless attachment.' This Bhakti is supposed to have the power not merely to supplement an external gift to a deity, but also of wholly supplanting and replacing it. Such a feeling of Bhakti is not yet noticeable in the Rigvedic hymns, yet the foundation is surely laid down for it in these Emotional similes. For a long time its logical development seems to have been held in abeyance owing to the changed attitude of the Vedic thinkers towards the deities in general, who came to be neglected in view of the utmost importance that came to be attached to the sacrifice itself in the Brahmanas and to the knowledge and realization of the supreme self in the Upanishadic period. But I shall not dwell too long on this absorbing topic of the Emotional simile in the Rigveda. I intend to discuss this in detail in a separate article in the near future. For the present, I shall restrict myself to the similes whether Decorative or Emotional, employed in the poetical description of the Maruts and their imaginary paraphernalia by the Rigvedic poets.

I have arranged the similes under different heads according to the nature of the Upamanas, taking the human beings first, and then the animals, the birds and inanimate Nature in succession. I have given a close translation of the necessary portion of the Ric. with reference at the end given within the brackets. In a very few places I have added brief notes to support my interpretation. About 55 of these similes (all from the Marut hymns in Mandala V) are already fully discussed by me at JBBRAS., 1940, p. 23ff. At the end of the translation, I shall briefly sum up the results.

MARUTS IN THE POETICAL SETTING.

1 Human Beings.

(1) The Maruts are wonderful like the *kings*; but have also awe-inspiring looks like them (X. 78. 1 c ; 6 c). Like *gay youths* they look glorious and like them they are spotlessly dressed (V. 59. 3d: X. 78. 1d.) They

shine brightly by their ornaments like *men on auspicious occasions* and decorate their bodies with golden ornaments like *rich bridegrooms* (X. 78. 7b; V. 60. 4 cd). They are gaudily dressed like *men who go to visit a magical show* and look prosperous like *rich youths* (VII. 56. 16b; V. 59. 5c). They distribute their rich gifts like the *bride-seeking youths* among men (X. 78. 4 c).

(2) Like *the* conquering *brave* and *heroes* who devour their foes, they seek heaven and glory (X. 77. 3d; 78. 4b). They are full of vehemence like *armoured warriors* and like *fighters* whose warring mood is irrepressible, they march forward and forward (X. 78. 3c; I. 39. 5c). Like spirited *warriors*, they long for fame and like *the brave* they are wont to fight and fight alone and never to turn back (X. 77. 3c; V. 59. 5b; I. 85. 8a.). They resemble valiant *riders* who conquer hordes of men and their bodies look formidable like those of the *flag-bearing warriors* (V. 54. 8a; I. 64. 2d). Like fame-seeking *heroes*, they put forth their vigour in the midst of large armies. They are fit to be called for help like a *boxer* and shout out their war-songs like the shouting *warriors* (I. 85. 8b; VIII. 20. 20a; VI. 66. 10c).

(3) They are requested to hold the worshipper in their hands as a *father* does his new-born *son* (I. 38. 1 ab; a new-born son is meant as is clear from VI. 16. 40). They play by his side, accepting his sweet offering as lovingly as one would accept his *own son*. (I. 166. 2ab). Like well-established *friends*, they moisten many regions with water for their worshipper and they go to help him when invited, like old *friends* (I. 166. 3cd; V. 53.16 c. *hitah* are *hitah sakhayah*; cf. X. 135. 4 and also *hitam mitram* at X. 7.5 and *hitamitro raja* at I. 73. 3; III. 55. 21). They sit around the worshipper, enjoying his libations like *holiday-makers* (VII. 59. 7 cd).

(4) Like unknown and strange *robbers*, they suddenly appear with vehemence and like fast *travellers* (in chariots), they break up the mountains and scatter about the dust (V.52. 12cd; I. 64. 11b, where *renum* is to be supplied after *ujjighnantah*; Cf. X. 168. 1).

(5) They are bright-looking like *young boys* living in mansions and like sucking *babies* they are playful (VII. 56. 16cd; X. 78. 6c). Like *twins* they are equally beautiful (V. 57. 4 b). They put their vigour i. e., the rain, in the earth, as a *husband* puts a foetus (in the womb. V. 58. 7ab). They rest in the heart of men like faithful *servants* *(duvas)* and like the Soma *juices* when drunk (I. 168. 3 ab). A worshipper should approach them with a gift (without expecting anything in return), as a loving *bride* approaches an affectionate *youth* (V. 52. 14, also X. 27. 12).

(6) Like an old *partiarch*, the earth trembles in their marches and shakes like a *decrepit woman* (I. 37. 8 ab; 87. 3 a). During their sweeping onrush, plants swiftly move away like a *woman* driving in a *chariot* (I. 166. 5d). Like a *fruit-girl*, who shakes a (fruit-laden) tree, they plunder the wavy cloud (V. 54. 6b). They stretch their legs in riding like *women* in child-labour (V. 61. 3bc). Like fashionable *women*, the vidyuts follow the Maruts (V. 52 6c). Their Rodasi clings close to their shoulders like a *passionate girl*, like a man's *beloved* (I. 167. 3c; 168. 3c).

[2] Animals.

(7) The Maruts repeatedly roar like the *lions* and like them their power consists in their thunder (I. 64. 8a; III. 26. 5d). They devastate and devour the forests like the wild *elephants* (I. 64. 7c). They are possessed of a daring spirit like *ferocious beasts* (II. 34. 1 ab). They gracefully trot like *horses* (VII. 56. 16a). They are ruddy, well-built and lovely like them (V. 59. 5a; 3c). They are great gallopers like the *mares* (X. 78. 5a). They grow powerful like mighty *horses* (*akrah*) and they appear lovely like *horses* yoked together (I. 85. 1a).

(8) They are fit to be bowed to ([illegible]) like the procreating *bulls*; the worshipper should bow to the Maruts as to the lovely procreating *bulls*, which are most famous (I. 168. 2d; VIII. 20. 20 cd). Like the untrained *bulls* (lit. bulls bad at yoke), they dig up their enemy with perfect ease (V. 56. 4 ab), and their onrush is formidable like the untrained *bull* (V.56. 3d) [illegible] who is difficult to train or manage [illegible]. They travel [illegible] through the [illegible] like the travelling *bulls* (V. 52. 3ab). They are [illegible] like the [illegible] of a [illegible] and their great looks unusually [illegible] (V. 56. 3; V. 5[illegible]) [illegible]

worshipper as they do a mare or a cow in her udder (II. 34. 6cd). They rejoice at the worshipper's sacrifice as the *cows* do in pastures (V. 53. 16b). Like a lowing *cow*, their Vidyut clings to the raining cloud (*vristi*), as indeed does a *cow* to her *calf* (I. 38. 8ab).

(9) Like the spotted *deer* ([illegible]), they are bright-coloured (I. 64. 8b). They are possessed of a lustre which cannot be seized. Like the nimble [illegible] (V. 54. 5) and like them they vie with each other (in running) (X. 77. 2a). Their onrush is violent like the [illegible] (V. 5[illegible]. 3c).

[illegible]

(10) [illegible]

[4] Inanimate Nature.

(11) They are vast like the *heavens* and their chariots go to men with showers of rain like the *heavens* (V. 57. 4d; 53. 5c). By their golden Khadis and ornaments, they are visible from afar and clearly recognized like the *heavenly regions* by the *stars* (I. 166 11b; II. 34. 2a). The strange-looking gods are adorned with ornaments like the ruddy *mornings* with *stars* (I. 87.1 cd).

(12) The host of Maruts is wonderful like the *golden ball* [the Sun] and shines in their chariots as the *golden ball* shines up in the heaven (I. 88. 2c; V. 61. 12bc). They are spotless like the eye of the *sun* when free from the clouds (V.59. 3b), and shine resplendent like the rays of the *sun* (V. 55. 3c). They excel the heaven and earth by their greatness as does the *sun*, the *clouds* (X. 77. 3 ab.) and like the sight of the *sun*, their greatness is lovely to look at (V. 54. 4). They bring riches to the worshipper, by which he shines over men like the *sun* (V. 54. 15ab), and give him a treasure which is unfailing like the *star* of the *heaven* (V. 54. 13cd). They punctually visit the sacrifice like the rays of the *dawns* (X. 78. 7a). They are pure and purifying like the *sun* and like the *days* they appear in an unending succession (I. 64. 2c; V. 58 5ab). They put on the robes of showers and their Rodasi has a dazzling face like the onrush of a *cloud* (V. 57. 4a; I. 167 5d). She sits in their chariots like the lightning (I. 64. 9d; VI. 66. 6 cd). The Maruts go to the worshipper as the Vidyuts go to the *raincloud* (*vristi*; I 39. 9d). Possessed of their Khadis they shine like *rains* coming down from the *clouds* (by the lightnings; II. 34. 2b). The Khadis shine on their shoulders as do the *lightnings* on the *rainclouds* (VII. 56. 13 ac). Rodasi clings to them like a *lance* (I. 167. 3b).

(13) Like the *earth* shrinking lower when full of rain, they go away delighted from us (V. 56.3ab). They are resistless, unopposed, invincible and self-strong like the *mountains* (I. 64. 3b; 7b; V.87. 2d; 9cd). Like the *mountain-caves* they are self-born and self-strong (I. 168. 2a). They move up the earth like the *speck* of *dust* (V. 59. 4c.)

(14) Like the blazing *fires,* they are refulgent and self-shining (V. 54. 11c; VI. 66. 2a; X. 78. 2a; V. 87. 3b). They shine resplendent like the *flames of fire* and defend the worshipper from the revilers like the blazing *fires* (X. 78. 3b; V. 87. 6d). Like *fires* they are good fighters, and are quick overthrowers of the enemies like the lolling *tongues* of *fire* (V. 87. 7a; VI. 66. 10b). They are possessed of a shattering lustre like the *flashing weapons* of the *sacrifice* i. e., the fire (VI. 66.10a). They send forward their probing measure (*mana*; this is probably the violent gale which precedes the actual storm),like a piercing *flame* of *fire* (I. 39. 1ab; the idea is : the Maruts send their heralding gale to probe the strength of the objects which they want to attack, just as the fire sends forth a flame for similarly guaging the strength of its fuel).

(15) Like *waters* running in a river they rush forward with speed (V. 60.3d). Like *rivers* they travel without resting and eagerly rush forth like *mountain-streams* with their waters flowing over the slopes

(X. 78. 7c: 5c). They boldly encompass the enemy as they do the *floods* of *water* and rush forward through the opposing forces as through the *water* (I. 167. 9d: VIII. 94. 7ab). Like the waves of *water*, they are thousand-fold and their fame is wide-spreading like a 'flood' of *waters*. (I. 168. 2c; VIII. 20. 13a.)

(16) During the onrush of the Maruts, the earth drizzles like a fully loaded *boat* moving fitfully in water and they cause the plains to shake like the *boats* (V. 59. 2b; 4c).

(17) Like the *spokes* of a *wheel* they are possessed of the same *nabhi* (i. e., relationship and axle), and like these none of the Maruts can be called the *last* (X. 78. 4a V. 58. 5a.)

(18) The worshipper moves them by his hymn as one moves the *jaws* by the *tongue* from within (I. 168. 5ab). They lead the worshipper's devotion to a good path, as the *eye* leads a '*walking man* (V. 54. 6d.) They raise up their golden axes as (sacrificers) raise the *sacrificical posts* (I. 88. 3ab). The Maruts soften the earth by moistening. like the (*tough*) hide (before working on it; I. 85. 5d).

We thus see how the Vedic poet draws his Upamanas from the different spheres of Life and Nature. Among the human beings. it is interesting to note how he picks out among others– (1) a king for his imperative and imposing looks, (2) a chivalrous youth for his love of personal decoration and eagerness to show off, (3) a warrior for his reckless courage. (4) a boxer for his championship of the weak. (5) a friend for his disinterested assistance. (6) a loving girl for her selfless choice of a poor lover, (7) a young child for its innocence, (8) and a father's eager welcome of new-born son. Among animals (9) a horse and (10) a cow are his great favourites, both owing to their beautiful form and usefulness; but he is also attracted by (11) a lion's thunder-roar and (12) an elephant's fancy for wood-eating. He shows a special regard for (13) a stud-bull and is greatly impressed by the motherly affection of (14) a cow for her calf. The swiftness and beauty of (15) the antelope has not escaped him either. From the birds, he picks out only two, namely (16) the high-flying hawk and (17) the charming swan. Perhaps even (18) a peacock has struck his fancy. The group-fiying of the hawks and swans and the herding tendencies of the cows are duly noticed by him. Among the inanimate objects, the vastness of (19) the sky and the beauty of (20) the star-lit heavens have struck him: similarly the golden refulgence of (21) the rising sun and his dazzling brilliance at mid-day have equally appealed to his mind. The punctual visits of (22) the Dawns are a source of wonder to him and finally, the natural independence and strength of (23) the mountains. the defensive and destructive powers of (24) fire, ceaseless movement of (25) the rivers. the unsteadiness of (26) a small boat in a river during rains, the absolute equality of position and common relationship with the axle of (27) a wheel's spokes are all observed and poetically employed by our poet.

In the imaginary figures of the Maruts the poet has observed their– (1) refulgent splendour. (2) halo of light, (3) golden ornaments and weapons. (4) powerful and stately

physique, (5) purity and cleanliness, (6) strange violent looks, but also a playful and lovely countenance, (7) vastness of bodies and countless number, (8) and finally great mutual similarity and absolute equality of status and position. Of their characteristic qualities and actions, he mentions their (1) high-flying, swoop and perch, (2) group-flying and movement in rows, (3) easeful and lovely strolls, (4) resistless onward marches, (5) ceaseless travels, (6) violent and destructive mood, (7) swiftness, daring and ferocity, (8) invincible spirit and irrepressible energy, (9) absolute self-reliance, (10) fondness for fame and decorations, (11) helpfulness and protection of the weak, (12) playful activities and revelry, (13) punctuality and (14) thundering voice.

– *H. D. VELANKAR*, M. A.,
Professor, Wilson College, Bombay.

ग्रन्थसङ्केताः ।

[अस्मिन्समन्वयेऽनिर्दिष्टो ग्रन्थ ऋग्वेदो बोध्यः । यथा- ५, ५४, १५=ऋ. ५, ५४, १५]

अ०= अथर्ववेदीया शौनकीयसंहिता
अथर्व०= ,, ,, ,,
ऋ०= ऋग्वेदीय शाकलसंहिता
ऐ०= ऐतरेयब्राह्मणम्
ऐ० आ०= आरण्यकम्
काठ०= काठकसंहिता (यजु०)
कौ० = कौशीतकीब्राह्मणम्
गो० = गोपथब्राह्मणम्
गो० उ० = ,, ,, (उत्तर०)
गो० पू० = ,, ,, (पूर्व०)
छांदोग्य० = छांदोग्योपनिषद
ताण्ड्य० = ताण्ड्यमहाब्राह्मणम्
तां० = ,, ,,
तै० = तैत्तिरीयब्राह्मणम्
तै० आ०= ,, आरण्यकम्
तै० सं० = ,, संहिता
नृ० पूर्व = नृसिंहपूर्वतापनीयोपनिषद्
बृहदा० = बृहदारण्यकोपनिषद्
भ० गी० = भगवद्गीता
महाना० = महानारायणोपनिषद्
मै० = मैत्रायणीसंहिता
मैत्रा० = मैत्रायणीयोपनिषद्
वा० य० = वाजसनेयीमाध्यन्दिनयजुर्वेदसंहिता
श० = शतपथब्राह्मणम् (वाजसनेयिनां)
सा० = सामवेदसंहिता (कौथुमीया)

वेदोंके समन्वयका उपयोग

अनेक प्रकारोंसे संग्रह हो सकते हैं। परंतु वे सब एक ही पुस्तक में नहीं हो सकते। किसी एक पद्धति को सामने रखकर ही ये समन्वय बनाने चाहिये। यद्यपि ये सब प्रकारके अनेक संग्रह-क्रम उपयोगी हैं, तथापि हमने यहां पूर्वोक्त प्रकार नामोंका संग्रह विभक्ति-क्रमसे और क्रियापदोंका संग्रह लकारानुक्रमसे दिया है। इसी पद्धतिका हमने यहां स्वीकार किया है।

सभी वैदिक संहिताओंका मिलकर इस तरह संपूर्ण समन्वय बनानेकी हमारी इच्छा थी। इस कार्यके लिये करीब करीब एक लाख रुपयोंके व्ययका अंदाजा किया था। यह योजना हमने कई राजे महाराजे और कई धनिकोंके सम्मुख रखी, परंतु अतिशीघ्र वह सारी सहायता मिलेगी ऐसा हमें प्रतीत नहीं हुआ। अन्तमें हमने यह आयोजना **श्रीमान् माननीय श्री प्रतापसिंह महाराज गायकवाड सेनाखासखेल समशेरबहादुर सं० बडोदा,** के सामने रखी। श्रीमानोंने विचार करके इस को विभागशः सहायता देनेका निर्णय किया और सहायता प्रतिवर्ष एक सहस्र रु० देनेके नियमसे देना प्रारंभ भी किया। जिसके फलस्वरूप यह प्रथम विभाग प्रकाशित हो रहा है, जो श्रीमानोंको समर्पण किया जाता है और विद्वानोंके सम्मुख रखा जाता है। आगे द्वितीय विभागमें अश्विनौ देवताके मंत्रों का समन्वय इसी तरह उन्हींके आश्रयसे प्रकाशित होगा।

इस समन्वयमें मरुद्देवताके मंत्रों में जो पद आये हैं, उन सबके संदर्भस्थान दिये ही हैं। केवल 'च, वै, तु' ऐसे पदपूरक अव्ययोंके केवल पते ही दिये हैं। शेष संपूर्ण पदों के आवश्यक वाक्यों का संग्रह यहां है। इतनाही नहीं, अपितु [illegible] पदोंमें से प्रत्येक पद का स्वतंत्र निर्देश यहां पाठकों को दिखाई देगा। अर्थात् 'पृश्निमातरः' पद 'मातृ' में और 'पृश्निमातरः' में, ऐसा दोनों स्थानों में मिलेगा और [illegible] दोनों स्थानों पर रहेंगे। सामासिक पदोंका सर्वत्र [illegible] किया है, जो [illegible] होगा।

परंतु [illegible] जहां समान पद होनेपरभी विभिन्न अर्थ होते [illegible] पृथक् पृथक् अर्थ [illegible] 'To search' और 'इष्' [illegible] पृथक् दिये हैं। इसी तरह विभिन्न अर्थवाले समान पदोंका तथा धातुओंका पृथक् निर्देश सर्वत्र हुआ है।

जितने मरुद्देवताके मंत्र हैं, उन सबका यह पूर्ण समन्वय है, मरुद्भिन्न देवताओंके मंत्रोंमें भी मरुत्पद हैं। अतः उनका संक्षिप्त समन्वय पृथक् किया है। पाठक इसको अन्तमें देख सकते हैं। इसमें जो स्थूल अक्षरवाले पद हैं, वे अकारादि अक्षर क्रमसे रखे हैं। अन्तमें कोष्टमें देवता दिया है, और पताभी दिया है। इससे पाठक इन मंत्रोंको संहिताओंमें देख सकते हैं। इसी तरह ब्राह्मणों, आरण्यकों के तथा भगवद्गीतादि वचनोंका भी इसमें जितना आवश्यक है, उतना संग्रह किया है।

इसके अतिरिक्त मरुन्मत्रोंका संग्रह, इस संग्रहकी पादसूची, इन सब मंत्रोंका पदपाठ, अन्वय, तथा पदशः अर्थ, विस्तृत टिप्पणी, भावार्थ, विस्तृत भूमिका आदि अभ्यासके सब साधन यहां प्रस्तुत किये हैं। मंत्रोंका समन्वय और मंत्रोंका अर्थ ये इसमें साथ साथ होनेसे मंत्रस्थ पदोंका अर्थ निश्चित करनेमें यह ग्रंथ अवश्य ही निर्णायक सिद्ध होगा।

इस समन्वयकी प्रस्तावना लिखनेके लिये हमने श्री प्राध्यापक ह० दा० वेलणकरजी, M. A. (विल्सन कालेज, मुंबई) से प्रार्थना की। आपने सहर्ष इस कार्यको किया। यह उनकी विद्वत्तादर्शक प्रस्तावना आंग्ल भाषामें इसके साथही मुद्रित हुई है। इस प्रस्तावनाके लिये हम इनके हार्दिक धन्यवाद गाते हैं।

अन्तमें हम श्रीमान् माननीय **महाराजासाहेब बडोदा नरेश** महोदयजीका हार्दिक धन्यवाद करते हैं कि जिनकी उदार आर्थिक सहायतासे इस ग्रंथका प्रकाशन हो गया है। इसी तरह आगे भी प्रत्येक देवताका ऐसाही समन्वय अनेक भागोंमें क्रमशः प्रकाशित होगा। जो चारों वेदोंका समन्वय हम इकट्ठा [illegible] विभागोंमें प्रकाशित करना चाहते थे, वही अब इस तरह चालीस विभागोंमें क्रमशः देवतावार प्रकाशित होगा।

हमें पूर्ण आशा है कि इसके प्रकाशनसे वेदकी खोज करने वालोंको सहायता पहुंचेगी और वैदिक संशोधनका मार्ग अधिक सुगम होगा।

निवेदन-कर्ता

औंध २०।११।४३

श्रीपाद दामोदर सातवळेकर

अध्यक्ष, स्वाध्याय-मण्डल, औंध (जि. सातारा)

मरुद्देवतामन्त्राणां समन्वयः।

अंशुः

१८५ सोमासः न ये सुताः तृप्तांशवः १,१६८,३

अंशु-मती

४९८ उपह्वरे नद्यः अंशुमत्याः ८,९६,१४ [इन्द्रः ३२६९]

अंसः

२८९ ऋष्टयः वः मरुतः अंसयोः अधि ५,५७,६
१११ अंसेषु एषां नि मिमृक्षुः ऋष्टयः १,६४,४
१६६ तविषाणि आहिता। अंसेषु आ वः १,१६६,९
१६७ अंसेषु एताः पविषु क्षुराः अधि १,१६६,१०
१८५ आ एषां अंसेषु रम्भिणीव ररभे १,१६८,३
२६० अंसेषु वः ऋष्टयः पत्सु खादयः ५,५४,११
३५७ अंसेषु आ मरुतः खादयः वः ७,५६,१३

अंहतिः

२७४ नयत वस्वः अच्छ। निः अंहतिभ्यः मरुतः गृणानाः ५,५५,१०

अंहस्

२१३ यथा रथं पारयथ अति अंहः २,३४,१५
४४०-४४६ ते नः मुञ्चन्तु अंहसः। अथ० ४,२७,१-७
४२४.१ ऋतपाःच अत्यंहाः। वा० य० १७,८०

अ-कनिष्ठ

३०५ ते अज्येष्ठाः अकनिष्ठासः उद्भिदः ५,५९,६
४५३ अज्येष्ठासः अकनिष्ठासः एते ५,६०,५

अ-कवा

२९६ प्र ये जायन्ते अकवा महोभिः ५,५८,५

अक्त

३४५ के ईं व्यक्ताः नरः सनीळाः ७,५६,१

अक्तुः

२५३ वि अक्तून् रुद्राः वि अहानि शिक्वसः ५,५४,४

अ-क्रः

४०८ आदित्यासः ते अक्राः न वावृधुः १०,७७,२

अक्षः

१६६ अक्षः वः चक्रा समया वि वावृते १,१६६,९

अक्षित

११३ उत्सं दुहन्ति स्तनयन्तं अक्षितम् १,६४,६
२४६ बीजं वहध्वे अक्षितम् ५,५३,१३
६१ उत्सं दुहन्तः अक्षितम् ८,७,१६
४४१ उत्सं अक्षितं व्यचन्ति ये सदा। अथर्व० ४,२७,२

अक्ष्ण-यावन्

८० आ अक्ष्णयावानः वहन्ति। अन्तरिक्षेण पततः ८,७,३५

अ-खिद्र-यामः

३१ यात ईं अखिद्रयामभिः १,३८,११

अ-गृभीत-शोचिस्

२५४ एताः न यामे अगृभीतशोचिषः ५,५४,५
२६१ तं नाकं अर्यः अगृभीतशोचिषम्
रुशत् पिप्पलं मरुतः वि धूनुथ ५,५४,१२

अग्निः

४३४ अग्निः हि एषां दूतः प्रत्येतु विद्वान् ३,१,२
४३४.१ चक्षुषि अग्निः आ दधात् ३,१,३
२९४ अयं यः अग्निः मरुतः समिद्धः ५,५८,३
४५५ अग्निः च यत् मरुतः विश्ववेदसः ५,६०,७
३६९ अग्निः भ्राजः ओषधीः वनिनः जुषन्त ७,५६,२५
८१ अग्निः हि जनि पूर्व्यः ८,७,३६
४१६ अग्निः न ये भ्राजसा रुक्मवक्षसः १०,७८,२
४३२ अयं अग्निः तनूभिः संविदानः। अथ० ४,१५,१०
१९९ अग्नयः न शुशुचानाः ऋजीषिणः २,३४,१
२१४ प्र यन्तु वाजाः तविषीभिः अग्नयः ३,२६,४
३२० अग्नयः न स्वविद्युतः ५,८७,३
३२३ शुशुक्वांसः न अग्नयः ५,८७,३
३२४ ते रुद्रासः सुमखाः अग्नयः यथा ५,८७,७
३३५ ये अग्नयः न शोशुचन् इधानाः ६,६६,२
४६५-४७३ मरुद्भिः अग्ने आ गहि १,१९,१-९
[अग्निः ३३३८-४६]
२८५ अग्ने शर्धन्तं आ गणं। मरुतां अव ह्वये ५,५६,१
४५४ अग्ने वित्तात् हविषः यत् यजाम ५,६०,६

४५६ अग्ने मरुद्भिः शुभयद्भिः ऋक्वभिः सोमं पिब ५,६०,८
३४२ रेजते अग्ने पृथिवी मखेभ्यः ६,६६,९
३८३ तस्मै अग्ने । मरुतः शर्म यच्छत ७,५९,१
४७४ आ अग्ने याहि मरुत्सखा ८,१०३,१४
३३ अग्निं मित्रं न दर्शतम् १,३८,१३
४४९ ईळे अग्निं स्ववसं नमोभिः ५,६०,१
७७ कण्वासः अग्निं मरुद्भिः । स्तुषे ८,७,३२
२१६ अग्नेः भामं मरुतां ओजः ईमहे ३,२६,६
३४३ तृषुच्यवसः जुह्वः न अग्नेः ६,६६,१०
४१७ अग्नीनां न जिह्वाः विरोकिणः १०,७८,३

अग्नि-जिह्वः

४२८ अग्निजिह्वाः मनवः सूरचक्षसः । वा० य० २५,२०

अग्नि-तप्

३११ अग्नितपः यथा असथ ५,६१,४

अग्नि-भ्राजस्

२६० अग्निभ्राजसः विद्युतः गभस्त्योः ५,५४,११

अघम्

१६५ अभिहुतेः अघात् । पूर्भिः रक्षत १,१६६,८

अघ्न्यम्

१० प्र शंस गोषु अघ्न्यम् १,३७,५

अङ्ग

३४६ अङ्ग विद्रे मिथः जनित्रम् ७,५६,२
४७ यत् अङ्ग तविषीयवः यामं शुभ्राः अचिध्वम् ८,७,२

अङ्गिरस्

४१९ विश्वरूपाः अङ्गिरसः न सामभिः १०,७८,५

अच्

२६१ सं अच्यन्त वृजना अतित्विषन्त यत् ५,५४,१२

अ-चरम

२९६ अराः इव इत् अचरमाः ५,५८,५

अच्छ

२ अच्छ विदद्वसुं गिरः । महां अनूषत श्रुतम् १,६,६
३३ अच्छ वद तना गिरा जरायै १,३८,१३
४८३ इमा हरी वहतः ता नः अच्छ १,१६५,४
[इन्द्रः ३२५३]
४९९ प्र यातन सखीन् अच्छ सखायः १,१६५,१३
[इन्द्रः ३२६२]

४९३ ओ सु वर्त मरुतः विप्रं अच्छ १,१६५,१४
[इन्द्रः ३२६३]
१७३ आ नः अवोभिः मरुतः यान्तु अच्छ १,१६७,२
२३० अच्छ ऋषे मारुतं गणम् ५,५२,१४
२३१ देवान् अच्छ न वक्षणा ५,५२,१५
२७४ यूयं अस्मान् नयत वस्यः अच्छ ५,५५,१०
३०५ दिवः मर्याः आ नः अच्छ जिगातन ५,५९,६
३७६ अच्छ सूरीन् सर्वताता जिगात ७,५७,७

अ-च्युत

१२६ प्रच्यवयन्तः अच्युता चित् ओजसा १,८५,४
१७९ उत च्यवन्ते अच्युता ध्रुवाणि १,१६७,८
८६ अच्युता चित् वः अज्मन् आ । नानदति ८,२०,५

अज्

३४० अनश्वः चित् यं अजति अरथीः ६,६६,७
२५३ वि यत् अज्रान् अजथ नावः ईं यथा ५,५४,४
३२७ धेनुं अजध्वं उप नव्यसा वचः ६,४८,११

अजगरः

४६१-४६३ उत्साः अजगराः उत अथर्व० ४,१५,७-९

अजर

११० युवानः रुद्राः अजराः अभोग्घनः १,६४,३

अजिर

२८० युङ्ग्ध्वं हरी अजिरा धुरि वोळ्हवे ५,५६,६

अ-जोष्य:

२५ मा वः मृगः न यवसे जरिता भूत् अजोष्यः १,३८,५

अज्मन्

१६२ विश्वः वः अज्मन् भयते वनस्पतिः १,१६६,५
८६ अच्युता चित् वः अज्मन् आ । नानदति ८,२०,५
१३ येषां अज्मेषु पृथिवी । भिया यामेषु रेजते १,३७,८
१५ काष्ठाः अज्मेषु अत्नत १,३७,१०
१४७ प्र एषां अज्मेषु विथुरेव रेजते । भूमिः १,८७,३
३२४ दीर्घं पृथु पप्रथे सद्म पार्थिवम् । येषां अज्मेषु ५,८७,७

४ अतः परिज्मन् आ गहि १,६,९

अ-ज्येष्ठः

३०५ ते अज्येष्ठाः अकनिष्ठासः उद्भिदः ५,५९,६
४५३ अज्येष्ठासः अकनिष्ठासः एते ५,६०,५

अज्रः

२ वि यत् अज्रान् अजथ नावः ईं यथा ५,५४,४

अञ्च्

१ उत्सं अक्षितं व्यञ्चन्ति ये सदा ।
अथर्व० ४,२७,२

० भूमिं पर्जन्य पयसा सं अङ्ग्धि । अथर्व० ४,१५,६

० अत्यासः न ये मरुतः स्वञ्चः ७,५६,१६

अञ्ज्

१ चित्रैः अञ्जिभिः वपुषे वि अञ्जते १,६४,४

२ समानं अञ्जि अञ्जते शुभे कम् ७,५७,३

० शुभ्राः वि अञ्जत श्रिये ८,७,२५

८ गिरः सं अञ्जे विदथेषु आभुवः १,६४,१

५ वि आनञ्ज के चित् उस्राः इव स्तृभिः १,८७,१

० इमां वाचं अनज पर्वतच्युते ५,५४,१

९ गोभिः वाणः अज्यते सोभरीणाम् ८,२०,८

अञ्जि

७ वक्षःसु रुक्माः रभसासः अञ्जयः १,१६६,१०

८ श्रिये मर्यासः अञ्जीन् अकृण्वत १०,७७,२

१२ समानं अञ्जि अञ्जते शुभे कम् ७,५७,३

१२ समानं अञ्जि एषाम् ८,२०,११

७ अञ्जिभिः । अजायन्त स्वभानवः १,३७,२

११ चित्रैः अञ्जिभिः वपुषे वि अञ्जते १,६४,४

२५ गोमातरः यत् शुभयन्ते अञ्जिभिः १,८५,३

४५ शुष्टतमासः नृतमासः अञ्जिभिः । व्यानज्रे १,८७,१

११ ते क्षोणीभिः अरुणेभिः न अञ्जिभिः २,३४,१३

३१ दाना सचेत सूरिभिः । यामश्रुतेभिः अञ्जिभिः
५,५२,१५

७५ गणम् । पिष्टं रुक्मेभिः अञ्जिभिः
विशः अद्य मरुतां अव ह्वये ५,५६,१

२१ शुभंयवः न अञ्जिभिः वि अश्वितन् १०,७८,७

३७ ये अञ्जिषु ये वाशीषु स्वभानवः ५,५३,४

९० प्रति वः वृषदञ्जयः । वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वम्
८,२०,९

अञ्जि-मत्

८८ पुरद्रप्साः अञ्जिमन्तः सुदानवः ५,५७,५

अतः

४ अतः परिज्मन् आ गहि १,६,९

४८४ अतः वयं अन्तमेभिः युजानाः । स्वक्षत्रेभिः
१,१६५,५ [इन्द्रः ३२५४]

४५४ अतः नः रुद्राः उत वा नु अस्य
अग्ने वित्तात् हविषः यत् यजाम ५,६०,६

९९ अतः चित् आ नः उप वस्यसा हृदा ८,२०,१८

अति

१२० प्र नु सः मर्तः शवसा जनान् अति । तस्थौ १,६४,१३

२१३ यया रध्रं पारयथ अति अंहः २,३४,१५

२१९ अति स्कन्दन्ति शर्वरीः ५,५२,३

२४७ अति इयाम निदः तिरः स्वस्तिभिः ५,५३,१४

४०८ सुमारुतं न पूर्वीः अति क्षपः १०,७७,२

अत्कः

२७० हिरण्ययान् प्रति अत्कान् अमुग्ध्वम् ५,५५,६

अत्यंहस्

४२४.१ ऋतपाः च अत्यंहाः वा० सं० १७,८०

अत्यः

३०२ अत्याः इव सुभ्वः चारवः स्थन ५,५९,३

३६० अत्यासः न ये मरुतः स्वञ्चः ७,५६,१६

११३ अत्यं न मिहे वि नयन्ति वाजिनम् १,६४,६

२०१ उक्षन्ते अश्वान् अत्यान् इव आजिषु २,३४,३

२११ निमेघमानाः अत्येन पाजसा २,३४,१३

अत्र

४९० अमन्दत् मा मरुतः स्तोमः अत्र १,१६५,११
[इन्द्रः ३२६०]

४९२ कः नु अत्र मरुतः ममहे वः १,१६५,१३

३१२ अत्र श्रवांसि दधिरे ५,६१,११

३७४ कृते चित् अत्र मरुतः रणन्त ७,५७,५

अत्रिन्

१४४ वि यात विश्वं अत्रिणम् १,८६,१०

अथ

१४८ अस्याः धियः प्राविता अथ वृषा गणः १,८७,४

अदस्

४३५ असौ या सेना मरुतः परेषां अभ्येति नः ओजसा स्पर्धमाना ।
अथर्व० ३,२,६

अ-दाभ्यः

२०८ त्रितं जराय जुरतां अदाभ्याः २,३४,१०

६० सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः । अदाभ्यस्य मन्मभिः ८,७,१५

अ-दार-सृत्

४२७ अदारसृत् भवतु देव सोम । अथर्व० १,२०,१

अदितिः

३०७ मिमातु द्यौः अदितिः वीतये नः ५,५९,८
१६९ दीर्घं वः दात्रं अदितेः इव व्रतम् १,१६६,१२

अद्भुतैनस्

३१४ येषां अज्मेषु आ महः शर्धांसि अद्भुतैनसाम् ५,८७,७

अद्य

१८१ नयं अद्य इन्द्रस्य प्रेष्ठाः १,१६७,१०
२४५ कस्मै अद्य सुजाताय । रातहव्याय प्र ययुः ५,५३,१२
२७५ विशः अद्य मरुतां अव ह्वये ५,५६,१
२९४ आ वः यन्तु उदवाहासः अद्य ५,५८,३
३७१ अस्माकं अद्य विदथेषु बर्हिः । सदत ७,५७,२
३८५ अस्माकं अद्य मरुतः सुते सचा । विश्वे पिबत कामिनः ७,५९,३
८३ इया नः अद्य आ गत पुरुस्पृहः ८,२०,२
४०२ कत् वः अद्य महानाम् । देवानां अवः वृणे ८,९४,८
४२५ अद्य सभरसः मरुतः यज्ञे अस्मिन् वा० य० १७,८४

अद्रिः

४८३ शुष्मः इयर्ति प्रभृतः मे अद्रिः १,१६५,४ [इन्द्रः ३२५३]
३१९ अधृष्टासः न अद्रयः ५,८७,२
४२० आदर्दिरासः अद्रयः न विश्वहा १०,७८,६
१२७ वाजे अद्रिं मरुतः रंहयन्तः १,८५,५
१५२ तुविद्युम्नासः धनयन्ते अद्रिम् १,८८,३
२२५ अद्रिं भिन्दन्ति ओजसा ५,५२,९
१८८ वि अद्रिणा पतथ त्वेषं अर्णवम् १,१६८,६

अ–द्रुह्

४६७ विश्वे देवासः अद्रुहः १,१९,३ [अग्निः २४४०]

अ–द्रोघ

२१७ ये अद्रोघं अनुस्वधं श्रवः मदन्ति यज्ञियाः ५,५२,१

अ–द्वयाविन्

३६२ सः अद्वयावी हवते वः उक्थैः ७,५६,१८

अ–द्वेष

३२५ अद्वेषः नः मरुतः गातुं आ इतन ५,८७,८

अध

३० अध स्वनात् मरुताम् । अरेजन्त प्र मानुषाः १,३८,१०
१७२ अध यत् एषां नियुतः परमाः । समुद्रस्य चित् धनयन्त पारे १,१६७,२
२२० मरुतां अध महः । दिवि क्षमा च मन्महे ५,५२,३
२२७ अध नरः नि ओहते ५,५२,११
२२७ अध नियुतः ओहते ५,५२,११
२२७ अध पारावताः इति ५,५२,११
२३२ अध पितरं इष्मिणं । रुद्रं वोचन्त शिक्वसः ५,५२,१६
२५५ अध स्म नः अरमतिं सजोषसः । अनु नेषथ ५,५४,६
३३९ अध स्म एषु रोदसी स्वशोचिः ६,६६,६
३४१ सः व्रजं दर्ता पार्ये अध द्योः ६,६६,८
३४५ रुद्रस्य मर्याः अध स्वश्वाः ७,५६,१
३५१ अध मरुद्भिः गणः तुविष्मान् ७,५६,७
३६६ अध स्म नः मरुतः रुद्रियासः । त्रातारः भूत ७,५६,२२
३६८ अध स्वं ओकः अभि वः स्याम ७,५६,२४

अधि

४ दिवः वा रोचनात् अधि १,६,९
४७० ये नाकस्य अधि रोचने । दिवि देवासः आसते १,१९,६ [अग्निः २४४३]
३९ नहि वः शत्रुः विविदे अधि द्यवि १,३९,४
१११ वक्षःसु रुक्मान् अधि येतिरे शुभे १,६४,४
१२४ दिवि रुद्रासः अधि चक्रिरे सदः १,८५,२
१२४ अधि श्रियः दधिरे पृश्निमातरः १,८५,२
१२९ वयः न सीदन् अधि बर्हिषि प्रिये १,८५,७
१३४ त्रिधातूनि दाशुषे यच्छत अधि १,८५,१२
१५३ श्रिये कं वः अधि तनूषु वाशीः १,८८,३
१६७ अंसेषु एताः पविषु क्षुराः अधि १,१६६,१०
२३३ यमुनायां अधि श्रुतम् । उत् राधः गव्यं मृजे ५,५२,१७
२७३ अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गातन ५,५५,९
२७५ दिवः चित् रोचनात् अधि ५,५६,१
२८९ ऋष्टयः वः मरुतः अंसयोः अधि ५,५७,६
२८९ विश्वा वः श्रीः अधि तनूषु पिपिशे ५,५७,६
४५५ दिवः वहध्वे उत्तरात् अधि स्नुभिः ५,६०,७
३१३ येषां श्रिया अधि रोदसी ५,६१,१२
३२१ यदा अयुक्त त्मना स्वात् अधि स्नुभिः ५,८७,४
५२ चित्राः यामेभिः ईरते । वाश्राः अधि स्नुना दिवः ८,७,७
९२ वि भ्राजन्ते रुक्मासः अधि बाहुषु ८,२०,११
९३ अनीकेषु अधि श्रियः ८,२० १२
१०३ अधि नः गात मरुतः सदा हि वः ८,२०,२२
१०७ तेन नः अधि वोचत ८,२०,२६
४२१ अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गात १०,७८,८
४४० मरुतां मन्वे अधि मे ब्रुवन्तु । अथर्व० ४,२७,१

अधि-इ

१५९ [illegible] अधीथ ७.५३.१५

अधि-इव

५९ अधीव [illegible] । [illegible] अधिवन् ८.७.१४

अधिप

४३४ [illegible] अधिपाः [illegible] । अथर्व० ४.१५.१०

अधिपतिः

४३३ [illegible] अधिपतयः । अथर्व० ५.२४.३

अ-धृष्ट

३११ अधृष्टासः न [illegible] ५.८७.३

३४३ [illegible] अधृष्टाः ३.६३.१०

अध्रि-गुः

११० [illegible] अध्रिगावः [illegible] १.६४.३

अध्वन्

३७१ [illegible] अध्वा [illegible] ७.५८.३

३४० [illegible] अध्वनः [illegible] ५.५३.७

३५१ [illegible] अध्वनः [illegible] ५.५४.१०

१८ [illegible] अध्वन् [illegible] १.३७.१३

अध्वरः

४३५ [illegible] अध्वरं । [illegible]

१.१९.१ [[illegible]]

३५६ [illegible] अध्वरे [illegible] ७.५६.१२

३४३ [illegible] अध्वरस्य [illegible] ६.६६.१०

४८१ [illegible] अध्वरे [illegible] १.१६५.३

[[illegible]]

३६४ [illegible] अध्वरे ७.१०४.१८

५१ [illegible] अध्वरे ८.७.३

४१४ [illegible] अध्वरे [illegible] १०.७७.८

अध्वर-श्रीः

४११ [illegible] अध्वरश्रिय [illegible] १०.७८.७

अध्वरे-स्थ

४१३ [illegible] अध्वरेस्था [illegible] १०.७७.७

अ-ध्वस्मन्

३०३ अध्वस्मभिः [illegible]

[illegible] ६.३३.५

अनन्त-शुष्म

११७ [illegible] १.६४.१०

अनपस्फुरा

३२७ [illegible] । [illegible]

अनपस्फुराम् ६.४८.११

अनभीशुः

३४० [illegible] अनभीशुः [illegible] ६.६६.७

अनर्वन्

३ [illegible] । अनर्वाणं [illegible] १.३७.१

३३१ [illegible] । अनर्वाणं [illegible]

६.४८.१५

अनवद्य

३७४ अनवद्यासः [illegible] ७.५७.५

३ अनवद्यैः [illegible] ।[illegible]

१.६.८

अनवभ्र-राधस्

१३४ [illegible] अनवभ्रराधसः १.१६६.७

३०३,३२३ [illegible] अनवभ्रराधसः ३.३४.४;

३.६६.६

२८८ [illegible] अनवभ्रराधसः ५.५७.५

अनवसः

३४० अनवसः [illegible] ६.६६.७

अनश्वः

३४० [illegible] ६.६६.७

अनश्व-दा

[illegible] ५.५४.५

अनानुद

४२८ [illegible] अनानुदासः

[illegible] १.१६.४ [[illegible]]

अनानतः

१३४ [illegible] १.८७.१

अनिन्द्-ना

[illegible]

५.६३.१

अनीकम्

[illegible] १.१६८.९

[illegible]

[illegible]

अनु

१ आत् अह स्वधां अनु पुनः गर्भत्वं एरिरे १,६,४
४७५ अविन्दः उस्रियाः अनु १,६,५ [इन्द्रः ३२४५]
१४ यत् सीं अनु क्रिता शवः १,३७,९
३१ रोधस्वतीः अनु । यात ईं अखिद्रयामभिः १,३८,११
१२५ वर्त्मानि एषां अनु रीयते घृतम् १,८५,३
१३७ अनु विप्रं अतक्षत १,८६,३
१५६ अनु स्वधां गभस्त्योः १,८८,६
४८४ इन्द्र स्वधां अनु हि नः बभूथ १,१६५,४ [इन्द्रः ३२५४]
१६७ वयः न पक्षान् वि अनु श्रियः धिरे १,१६६,१०
१८१ वोचेमहि समर्ये । वयं पुरा महि च नः अनु द्यून् १,१६७,१०
१८१ तत् नः ऋभुक्षाः नरां अनु स्यात् १,१६७,१०
२२२ अनु एनान् अह विद्युतः ५,५२,६
२३५ कस्मै सस्रुः सुदासे अनु आपयः ५,५३,२
२३८ युष्माकं स्म रथान् अनु । मुदे दधे ५,५३,५
२३९ वि पर्जन्यं सृजन्ति रोदसी अनु ५,५३,६
२४३ अनु प्र यन्ति वृष्टयः ५,५३,१०
२४४ व्रातंव्रातं गणंगणं । अनु क्रामेम धीतिभिः ५,५३,११
२४९ यतः पूर्वान् इव सखीन् अनु ह्वय ५,५३,१६
२५५ चक्षुः इव यन्तं अनु नेषथ सुगम् ५,५४,६
२६५--२७३ शुभं यातां अनु रथाः अवृत्सत ५,५५,१--९
३०० अनु स्वं भानुं श्रथयन्ते अर्णवैः ५,५९,१
३३७ निः यत् दुह्रे शुचयः अनु जोषम् ६,६६,४
३३७ अनु श्रिया तन्वं उक्षमाणाः ६,६६,४
१५७ अनु स्वधां आयुधैः यच्छमानाः ७,५६,१३
६१ धमन्ति अनु वृष्टिभिः ८,७,१६
६९ अनु त्रितस्य युध्यतः । शुष्मं आवन् ८,७,२४
६९ अनु इन्द्रं वृत्रतूर्ये ८,७,२४
८८ स्वधां अनु श्रियं नरः । वहन्ते ८,२०,७
४५८ संर्गाः वर्षस्य वर्षतः । वर्षन्तु पृथिवीं अनु अथर्व० ४,१५,४
...द्भिः प्रच्युताः मेघाः । वर्षन्तु पृथिवीं अनु अथर्व० ४,१५,७
...द्भिः प्रच्युताः मेघाः । सं यन्तु पृथिवीं अनु अथर्व० ४,१५,८
४६३ मरुद्भिः प्रच्युताः मेघाः । प्र अवन्तु पृथिवीं अनु अथर्व० ४,१५,९

अनुत्त

४८८ अनुत्तं आ ते मघवन् नकिः नु १,१६५,९ [इन्द्रः ३२५८]

अनु-पथ

२२६ आपथयः विपथयः अन्तःपथा अनुपथाः ५,५२,१०

अनु-भर्त्री

१५६ अनुभर्त्री । प्रति स्तोभति वाघतः न वाणी १,८८,६

अनु-वर्त्मन्

४२७ इन्द्रं दैवीः विशः मरुतः अनुवर्त्मानः अभवन् वा० य० १७,८६
४२७ दैवीः च विशः मानुषीः च अनुवर्त्मानः भवन्तु वा० य० १७,८६

अनु-स्वधम्

२१७ ये अद्रोघं अनुस्वधं । श्रवः मदन्ति यज्ञियाः ५,५२,१

अ-नेद्य

१४८ असि सत्यः ऋणयावा अनेद्यः १,८७,४
४९१ अनेद्यः श्रवः आ इषः दधानाः १,१६५,१२ [इन्द्रः ३२६१]
३१४ मारुतः गणः त्वेषरथः अनेद्यः ५,६१,१३

अनेनस्

३४० अनेनः वः मरुतः यामः अस्तु ६,६६,७

अन्तम

४८४ अतः वयं अन्तमेभिः युजानाः । स्वक्षत्रेभिः १,१६५,५ [इन्द्रः ३२५४]

अन्तरिक्षम्

२५३ वि अन्तरिक्षं वि रजांसि धूतयः ५,५४,४
२६६ उत अन्तरिक्षं ममिरे वि ओजसा ५,५५,२
८० आ अरुणयावानः वहन्ति । अन्तरिक्षेण पततः ८,७,३५
२४१ आ यात मरुतः दिवः । आ अन्तरिक्षात् ५,५३,८
४८१ श्येनान् इव ध्रजतः अन्तरिक्षे १,१६५,२ [इन्द्रः ३२५१]
२२३ ये ववृधन्त पार्थिवाः । ये उरौ अन्तरिक्षे आ ५,५२,७

अन्तरिक्ष्य
२५८ प्रवत्वतीः पथ्याः अन्तरिक्ष्याः ५,५४,९

अन्तः (मर्यादायां, end)
११ यत् सीं अन्तं न धूनुथ १,३७,६
१८० नहि। आरातात् चित् शवसः अन्तं आपुः १,१६७,९
३०६ अन्तान् दिवः बृहतः सानुनः परि ५,५९,७

अन्तः (अन्तर्=मध्ये, in the middle)
१८७ कः वः अन्तः मरुतः ऋष्टिविद्युतः। रेजति १,१६८,५
३०१ अन्तः महे विदथे येतिरे नरः ५,५९,२
३३७ अन्तः सन्तः अवद्यानि पुनानाः ६,६६,४

अन्तः-पथः
२२६ अन्तःपथाः अनुपथाः ५,५२,१०

अन्ति
१८० नहि नु वः मरुतः अन्ति अस्मे। शवसः अन्तं आपुः १,१६७,९

अन्ति-मित्र
४२४-४ अन्तिमित्रः च दूरेऽमित्रः। वा० य० १७,८३

अन्धस्
३८७ यातन अन्धांसि पीतये ७,५९,५
२५७ वि उदन्ति पृथिवीं मध्वः अन्धसा ५,५४,८
१२८ मादयध्वं मरुतः मध्वः अन्धसः १,८५,६

अन्यः
३५९ नु चित् यं अन्यः आदभत् अरावा ७,५६,१५
…३५ यथा एषां अन्यः अन्यं न जानात्। अथर्व० ३,२,६
…९२ न एतावत् अन्ये मरुतः यथा इमे। भ्राजन्ते ७,५७,३
…५ यथा एषां अन्यः अन्यं न जानात्। अथर्व० ३,२,६
…४ मर्तेषु अन्यत् दोहसे पीपाय ६,६६,१

अन्यत्र
…७ मो सु अन्यत्र गन्तन ७,५९,५

अन्यादृक्
…२ ईदृङ् च अन्यादृङ् च। वा० य० १७,८१

अप्
…स्वरन्ति आपः अवना परिज्मः ५,५४,२
…क्षोदन्ते आपः रिणते वनानि ५,५८,६
…आपः इव सध्र्यञ्चः धवध्वे ५,६०,३
…गिरयः न आपः उग्राः अस्पृध्रन् ६,६६,११
…पृथ्वी शं द्यौः आपः शमि मेधन्। स्याम मरुतः सह ७,५६,१९

३६९ आपः ओषधीः वनिनः जुषन्त ७,५६,२५
४०१ तिरः आपः इव स्रिधः ८,९४,७
४१९ आपः न निम्नैः उदभिः जिगत्नवः १०,७८,५
४५९ वाश्राः आपः पृथिवीं तर्पयन्तु। अथर्व० ४,१५,५
४३३ आपः विद्युत् अभ्रं वर्षं। सं वः अवन्तु। अथर्व० ४,१५,९
१०८ अपः न धीरः मनसा सुहस्त्यः। गिरः सं अञ्जे १,६४,१
११३ पिन्वन्ति अपः मरुतः सुदानवः १,६४,६
४८७ सुगाः अपः चकर वज्रबाहुः १,१६५,८ [इन्द्रः ३२५७]
३६८ अपः येन सुक्षितये तरेम ७,५६,२४
६७ सनु त्ये महतीः अपः। दधुः ८,७,२२
७३ यान्ति शुभ्राः रिणन् अपः ८,७,२८
४४३ अपः समुद्रात् दिवं उत् वहन्ति। अथर्व० ४,२७,४
४३८ पयस्वतीः कृणुथ अपः ओषधीः शिवाः अथर्व० ६,२२,२
४४३ ये अद्भिः ईशानाः मरुतः चरन्ति। अथर्व० ४,२७,४
४४४ ये अद्भिः ईशानाः मरुतः वर्षयन्ति। अथर्व० ४,२७,५
१३१ अहन् वृत्रं निः अपां औब्जत् अर्णवम् १,८५,९
१८४ सहस्रियासः अपां न ऊर्मयः १,१६८,२
४१० युष्माकं शुभ्रे अपां न यामनि। विथुर्यति न मही श्रथर्यति १०,७७,४
४६४ अपां अग्निः तनूभिः संविदानः। अथर्व० ४,१५,१०
४१ यं अवथ वाजसातौ। तोके वा गोषु तनये यं अप्सु ६,६६,८

अप
१२५ बाधन्ते विश्वं अभिमातिनं अप १,८५,३
१७५ न रोदसी अप नुदन्त घोराः १,१६७,४
१९९ नूमि धनन्तः अप गाः अवृण्वत २,३४,१
२१० उषाः न रामीः अरुणैः अप ऊर्णुते २,३४,१२
३२५ स्मत् रथ्यः न दंसना अप। द्वेषांसि सनुतः ५,८७,८
३६४ अप बाधध्वं वृषणः तमांसि ७,५६,२०
३९२ मरुतः मा अप भूतन ७,५९,१०
८२ प्रस्थावानः मा अप स्थात समन्यवः ८,२०,१

अपत्य-साच
१९८ यथा रयिं सर्ववीरं नशामहै। अपत्यसाचम् २,३०,११

अप-व्रत
४३५ तां विध्यत तमसा अपव्रतेन। अथर्व० ३,२,६

अपस्
१३१ यत् इन्द्रः नरि अपांसि कर्तवे १,८५,९

अनु

१ आत् अह स्वधां अनु पुनः गर्भत्वं एरिरे १,६,४

४७५ अविन्दः उस्रियाः अनु १,६,५ [इन्द्रः ३२४५]

१४ यत् सीं अनु द्विता शवः १,३७,९

३१ रोधस्वतीः अनु । यात ईं अखिद्रयामभिः १,३८,११

१२५ वर्त्मानि एषां अनु रीयते घृतम् १,८५,३

१३७ अनु विप्रं अतक्षत १,८६,३

१५६ अनु स्वधां गभस्त्योः १,८८,६

४८४ इन्द्र स्वधां अनु हि नः बभूथ १,१६५,४ [इन्द्रः ३२५४]

१६७ वयः न पक्षान् वि अनु श्रियः धिरे १,१६६,१०

१८१ वोचेमहि समर्ये । वयं पुरा महि च नः अनु द्यून् १,१६७,१०

१८१ तत् नः ऋभुक्षाः नरां अनु स्यात् १,१६७,१०

२२२ अनु एनान् अह विद्युतः ५,५२,६

२३५ कस्मै सस्रुः सुदासे अनु आपयः ५,५३,२

२३८ युष्माकं स्म रथान् अनु । मुदे दधे ५,५३,५

२३९ वि पर्जन्यं सृजन्ति रोदसी अनु ५,५३,६

२४३ अनु प्र यन्ति वृष्टयः ५,५३,१०

२४४ व्रातंव्रातं गणंगणं । अनु क्रामेम धीतिभिः ५,५३,११

२४९ यतः पूर्वान् इव सखीन् अनु ह्वय ५,५३,१६

२५५ चक्षुः इव यन्तं अनु नेषथ सुगम् ५,५४,६

२६५--२७३ शुभं यातां अनु रथाः अवृत्सत ५,५५,१--९

३०० अनु स्वं भानुं श्रथयन्ते अर्णवैः ५,५९,१

३२७ निः यत् दुह्रे शुचयः अनु जोषम् ६,६६,४

३३७ अनु श्रिया तन्वं उक्षमाणाः ६,६६,४

३५७ अनु स्वधां आयुधैः यच्छमानाः ७,५६,१३

६१ धमन्ति अनु वृष्टिभिः ८,७,१६

६९ अनु त्रितस्य युध्यतः । शुष्मं आवन् ८,७,२४

६९ अनु इन्द्रं वृत्रतूर्ये ८,७,२४

८८ स्वधां अनु श्रियं नरः । वहन्ते ८,२०,७

४५८ सर्गाः वर्षस्य वर्षतः । वर्षन्तु पृथिवीं अनु अथर्व० ४,१५,४

४६१ मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः । वर्षन्तु पृथिवीं अनु अथर्व० ४,१५,७

४६२ मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः । सं यन्तु पृथिवीं अनु अथर्व० ४,१५,८

४६३ मरुद्भिः प्रच्युताः मेघाः । प्र अवन्तु पृथिवीं अनु अथर्व० ४,१५,९

अनुत्त

४८८ अनुत्तं आ ते मघवन् नकिः नु १,१६५,९ [इन्द्रः ३२५८]

अनु-पथ

२२६ आपथयः विपथयः अन्तःपथा अनुपथाः ५,५२,१०

अनु-भर्त्री

१५६ अनुभर्त्री । प्रति स्तोभति वाघतः न वाणी १,८८,६

अनु-वर्त्मन्

४२७ इन्द्रं दैवीः विशः मरुतः अनुवर्त्मानः अभवन् वा० य० १७,८६

४२७ दैवीः च विशः मानुषीः च अनुवर्त्मानः भवन्तु वा० य० १७,८६

अनु-स्वधम्

२१७ ये अद्रोघं अनुस्वधं । श्रवः मदन्ति यज्ञियाः ५,५२,१

अ-नेद्य

१४८ असि सत्यः ऋणयावा अनेद्यः १,८७,४

४९१ अनेद्यः श्रवः आ इषः दधानाः १,१६५,१२ [इन्द्रः ३२६१]

३१४ मारुतः गणः त्वेषरथः अनेद्यः ५,६१,१३

अनेनस्

३४० अनेनः वः मरुतः यामः अस्तु ६,६६,७

अन्तम

४८४ अतः वयं अन्तमेभिः युजानाः । स्वक्षत्रेभिः १,१६५,५ [इन्द्रः ३२५५]

अन्तरिक्षम्

२५३ वि अन्तरिक्षं वि रजांसि धूतयः ५,५४,४

२६६ उत अन्तरिक्षं ममिरे वि ओजसा ५,५५,२

८० आ अरुणप्सवः वहन्ति । अन्तरिक्षेण पततः ८,७,३५

२४१ आ यात मरुतः दिवः । आ अन्तरिक्षात् ५,५३,८

४८१ श्येनान् इव ध्रजतः अन्तरिक्षे १,१६५,२ [इन्द्रः ३२५१]

२२३ ये ववृधन्त पार्थिवाः । ये उरौ अन्तरिक्षे आ ५,५२,७

अन्तरिक्ष

१२८ [illegible] अन्तरिक्षात् ४,४३,६

अन्तः [illegible]

११ [illegible] अन्तं न [illegible] १,३७,३

१८० [illegible] अन्तं [illegible] १,१६७,६

१२६ अन्तात् [illegible] परि ४,४३,७

अन्तः [illegible] in the middle

१८७ [illegible] अन्तः [illegible] १,१३८,२

१०१ अन्तः [illegible] ४,४३,१

११७ अन्तः [illegible] ३,३३,३

अन्तः-पथः

१११ अन्तःपथाः [illegible] ४,४२,१०

अन्ति

१८० [illegible] अन्ति [illegible] ऋतु० १,१६७,६

अन्ति-मित्र

४११-३ अन्तिमित्रः [illegible] १७,८१

अन्वत्

१८७ [illegible] अन्वांति [illegible] ७,५२,४

१४७ [illegible] अन्वता ४,४३,८

११८ [illegible] अन्वताः १,८४,३

अन्धः

१४१ [illegible] अन्धः [illegible] ७,४३,१४

३३४ [illegible] अन्धः [illegible] अथर्व० ३,२,३

३७१ [illegible] अन्धे [illegible] ७,४३,३

३३४ [illegible] अन्धं न [illegible] अथर्व० ३,२,३

३३३ [illegible] अन्धत् [illegible] ६,३३,१

अन्यत्र

८७ [illegible] अन्यत्र [illegible] ७,४२,४

अन्याहत्

१२.३ [illegible] अन्याहत् [illegible] १७,८१

अप्

१ [illegible] आपः [illegible] ४,४३,३

७ [illegible] आपः [illegible] ४,४८,३

२ आपः [illegible] ४,३०,३

८ [illegible] आपः [illegible] ३,३३,११

[illegible] आपः [illegible] ७,४३,१३

अपस्

३३६ आपः [illegible] ७,४३,१४

४०१ [illegible] आपः [illegible] ८,१४,७

४११ आपः न [illegible] १०,७८,४

४४१ [illegible] आपः [illegible] अथर्व० ३,१४,४

४११ आपः [illegible] अथर्व० ३,१४,३

१०८ अपः न [illegible] १,३२,१

१११ [illegible] अपः [illegible] १,३२,३

४८७ [illegible] अपः [illegible] १,१३५,८ [illegible]

१६८ अपः [illegible] ७,४३,३३

३७ [illegible] अपः [illegible] ८,७,११

७१ [illegible] अपः ८,७,२८

४४१ अपः [illegible] अथर्व० ३,१७,३

४४८ [illegible] अपः [illegible]

४४१ [illegible] अथर्व० ३,११,१

४४४ [illegible] अथर्व० ३,२७,२

१११ [illegible] अपां [illegible] अथर्व० ३,३७,४

१८४ [illegible] अपां न [illegible] १,८४,६

४१० [illegible] अपां न [illegible] अथर्व० १०,७७,३

४६४ अपां [illegible] अथर्व० ३,१४,१०

४१ [illegible] ३,३३,८

अप

१११ [illegible] अप १,८४,३

१७१ [illegible] अप [illegible] १,१३७,३

१११ [illegible] अप [illegible] १,३२,१

११० [illegible] अप [illegible] ३,३२,११

१११ [illegible] अप [illegible] ४,८७,८

१११ [illegible] अप [illegible] ७,४३,१०

८१ [illegible] अप [illegible] ७,४३,१०

अपन्य-साच

१२८ [illegible] अपन्यसाचम् १,३०,११

अप-क्रतु

४३४ [illegible] अथर्व० ३,२,३

अपस्

१११ [illegible] अपांसि [illegible] १,८४,६

१३१ त्वष्टा यत् वज्रं सुकृतं हिरण्ययम् । सहस्रभृष्टिं स्वपाः अवर्तयत् १,८५,९
४५३ युवा पिता स्वपाः रुद्रः एषाम् ५,६०,५

अ-पारः

३२३ अपारः वः महिमा वृद्धशवसः ५,८७,६

अपि

२०८ पृश्न्याः यत् ऊधः अपि आपयः दुहुः २,३४,१०
३७३ मा वः तस्यां अपि भूम यजत्राः ७,५७,४
४१३ सः देवानां अपि गोपीथे अस्तु १०,७७,७

अपि-वातयत्

४९२ मन्मानि चित्राः अपिवातयन्तः १,१६५,१३
[इन्द्रः ३२६२]

अ-पूर्व्य

२७९ मरुतां पुरुतमं अपूर्व्यं । गवां सर्गं इव ह्वये ५,५६,५

अप्नस्

४१५ देवाव्यः न यज्ञैः स्वप्नसः १०,७८,१

अ-प्रति-स्कुतः

३१४ शुभंयावा अप्रतिष्कुतः ५,६१,१३

अ-प्रशस्तः

१७९ चयते ईं अर्यमो अप्रशस्तान् १,१६७,८

अ-विभ्युस्

४७६ इन्द्रेण सं हि दृक्षसे । संजग्मानः अबिभ्युषा १,६,७
[इन्द्रः ३२४३]

अब्दया

२५२ अब्दया चित् मुहुः आ ह्रादुनिवृतः ५,५४,३

अभि

४३२ अभि त्वा पूर्वपीतये । सृजामि सोम्यं मधु १,१९,९
[अग्निः २४४३]
६ कण्वाः अभि प्र गायत १,३७,१
१३९ विश्वाः यः चर्षणीः अभि १,८६,५
१५७ मो षु वः अस्मत् अभि तानि पौंस्या १,१३९,८
१७१ एभिः यज्ञेभिः तत् अभि इष्टिं अश्याम् १,१६६,१४
२०७ वर्तयत तपुषा चक्रिया अभि तम् २,३४,९
२६४ येन स्वः न ततनाम नॄन् अभि ५,५४,१५
२९२ अभि स्वधाभिः तन्वः पिपिश्रे ५,६०,४
३२७ अभि स्वपूभिः मिथः वपन्त ७,५६,३
३३८ यत स्वं ओकः अभि वः स्याम ७,५६,२२
३८६ अभि वः आ अवर्त् सुमतिः नवीयसी ७,५९,४
३९० यः नः मरुतः अभि दुर्हृणायुः ७,५९,८
९७ अभि सः द्युम्नैः । द्युम्ना वः धूतयः नशत ८,२०,
१०० वृष्णः पावकान् अभि सोभरे गिरा । गाय ८,२०,
४३४ स्थ अभि प्र इत मृणत सहध्वम् । अथर्व० ३,१,
४३५ अस्मान् ऐति अभि ओजसा स्पर्धमाना । अथर्व० ३,
४६० अभि क्रन्द स्तनय अर्दय उदधिम् । अथर्व० ४,१
४४३ दिवः पृथिवीं अभि ये सृजन्ति । अथर्व० ४,२७,

अभि-जा

१८४ इयं स्वः अभिजायन्त धूतयः १,१६८,२

अभिज्ञु

१५ बाधाः अभिज्ञु यातवे १,३७,१०

अभितः

३८९ विश्वं शर्धः अभितः मा नि सेद ७,५९,७

अभिद्युः

७० विद्युद्धस्ताः अभिद्यवः वि अव्रत श्रिये ८,७,२५
४०९ रिशादसः न मर्याः अभिद्यवः १०,७७,३
४१८ जिगीवांसः न शूराः अभिद्यवः १०,७८,४
२ अनवद्यैः अभिद्युभिः । गणैः इन्द्रस्य काम्यैः १,६,

अभि-भाः

४५७ मा नः विदत् अभिभाः मो अशस्तिः । अथर्व० १,२०,

अभि-मातिन्

१२५ बाधन्ते विश्वं अभिमातिनं अप १,८५,३

अभि-युग्वन्

४९६.१ अभियुग्वा च विक्षिपः स्वाहा । वा० य० ३९,

अभि-स्वर्तृ

४१८ अभिस्वर्तारः अर्कं न सुष्टुभः १०,७८,४

अभि-हुतिः

१६५ शतभुजिभिः तं अभिहुतेः अघात् १,१६६,८

अ-भीरुः

२५० ते वाशीमन्तः इष्मिणः अभीरवः १,८७,६

अभीशुः

३९ सुसंस्कृताः अभीशवः १,३८,१२
३०९ क्व वः अश्वाः क्व अभीशवः ५,६१,२
३४० अनवसः अनभीशुः रजस्तूः ६,६६,७

अभीष्टिः
२१२ नितः न यान् पञ्च होतॄन् अभीष्टये आववर्तन् २,३४,१४

अ-भोक्-हन्
११० युवानः रुद्राः अजराः अभोग्घनः। ववक्षुः १,६४,३

अभ्र-प्रुष्
४०७ अभ्रप्रुषः न वाचा प्रुष वसु १०,७७,१

अभ्रम्
४६३ आपः विद्युत् अभ्रं वर्षं सं वः अवन्तु। अथर्व० ४,१५,९
४०९ त्मना रिरिच्रे अभ्रात् न सूर्यः १०,७७,३

अभ्रिया
२०० वि अभ्रियाः न द्युतयन्त वृष्टयः २,३४,२
१९० यत् अभ्रियां वाचं उदीरयन्ति १,१६८,८

अभ्व
४३ आ यः नः अभ्वः ईषते। तं युयोत १,३९,८
१९१ ते सप्सरासः अजनयन्त अभ्वम् १,१६८,९

अ-मतिः
११६ आ वन्धुरेषु अमतिः न दर्शता। विद्युत् न तस्थौ १,६४,९

अ-मध्यम
३०५ अमध्यमासः महसा वि वावृधुः ५,५९,६

अ-मर्त्य
१८६ अमर्त्याः कशया चोदत त्मना १,१६८,४
१५७ यत् वः चित्रं युगेयुगे नव्यं घोषात् अमर्त्यं। दिधृत १,१३९,८

अमः
२७७ ऋक्षः न वः मरुतः शिमीवान् अमः ५,५६,३
८७ अमाय वः मरुतः यातवे द्यौः। जिहीते उत्तरा बृहत् ८,२०,६
२४१ आ अन्तरिक्षात् अमात् उत ५,५३,८
३०१ अमात् एषां भियसा भूमिः एजति ५,५९,२
२५२ स्तनयत्अमाः रभसाः उदोजसः ५,५४,३

अम-वत्
३२२ स्तनः न वः अमवान् रेजयत् वृषा ५,८७,५
२७ सत्यं त्वेषाः अमवन्तः। मिहं कृण्वन्ति अवाताम् १,३८,७
८८ महि त्वेषाः अमवन्तः वृषप्सवः ८,२०,७
३३९ आ अमवत्सु तस्थौ न रोकः ६,६६,६
१८९ सातिः न वः अमवती स्वर्वती १,१६८,७
२९२ ये आश्वश्वाः अमवत् वहन्ते ५,५८,१

अ-मित
२९३ मयोभुवः ये अमिताः महित्वा ५,५८,२

अ-मित्रः
४२४.४ दूरे-अमित्रः च गणः। वा० य० १७,८३

अ-मृत
२४ मर्तासः स्यातन। स्तोता वः अमृतः स्यात् १,३८,४
१६० यस्मै ऊमासः अमृताः अरासत। रायः पोषम् १,१६६,३
२९१ मृळत नः तुविमघासः अमृताः ऋतज्ञाः ५,५७,८; ५८,८
१७० पुरु यत् शंसं अमृतासः आवत १,१६६,१३
२८८ दिवः अर्काः अमृतं नाम भेजिरे ५,५७,५
४६४ प्राणं प्रजाभ्यः अमृतं दिवः परि। अथर्व० ४,१५,१०
२९२ उत ईशिरे अमृतस्य स्वराजः ५,५८,१
३७५ ददात नः अमृतस्य प्रजायै ७,५७,६

अ-मृत-त्वम्
२६८ उतो अस्मान् अमृतत्वे दधातन ५,५५,४

अ-मृत्यु
३२८ मारुताय स्वभानवे श्रवः अमृत्यु धुक्षत ६,४८,१२

अ-मृध्रम्
१६ मिहः नपातं अमृध्रं। प्र च्यावयन्ति यामभिः १,३७,११

अय्
१०३ मतः चित्। उप आनूकं आ अयति ८,२०,२२
३५६ ऋतेन सत्यं ऋतसापः आयन् ७,५६,१२

अयः
३३८ मक्षु न येषु दोहसे चित् अयाः ६,६६,५
११८ मखाः अयासः स्वसृतः ध्रुवच्युतः १,६४,११
१७५ अयासः यव्या। साधारण्या इव मरुतः मिमिक्षुः १,१६७,४
३३८ न ये स्तौनाः अयासः मह्ना। नु चित् सुदानुः ६,६६,५
३७८ मरुतः। भीमासः तुविमन्यवः अयासः ७,५८,२
१९१ असूत पृश्निः। त्वेषं अयासां मरुतां अनीकम् १,१६८,९

अया
१४८ अया ईशानः तविषीभिः आवृतः १,८७,४
१७० अया धिया मनवे श्रुष्टिं आव्य १,१६६,१३

३३७ न ये ईषन्ते जनुषः अया नु ६,६६,४

अयो-दंष्ट्र

१५५ पश्यन् हिरण्यचक्रान् अयोदंष्ट्रान् १,८८,५

अ-रक्ष

३२६ श्रोतं हवं अरक्षः एवयामरुत् ५,८७,९

अ-रथीः

३४० अनश्वः चित् यं अजति अरथीः ६,६६,७

अ-रपस्

४३७ यथा अयं अरपाः असत् । अथर्व० ४,१३,४

अ-रमतिः

२५५ अध स्म नः अरमतिं सजोषसः । अनु नेषथ सुगम् ५,५४,६

अ-ररुस्

३६३ गुरु द्वेषः अररुषे दधन्ति ७,५६,१९

अरः

२९६ अराः इव इत् अचरमाः ५,५८,५
४१८ रथानां न ये अराः सनाभयः १०,७८,४
९५ अराणां न चरमः तत् एषाम् ८,२०,१४

अ-राजिन्

६८ वि पर्वतान् अराजिनः । चक्राणाः पौंस्यम् ८,७,२३

अराणः

४८२ सं पृच्छसे समराणः शुभानैः १,१६५,३[इन्द्रः३२५२]

अ-रातिः

२४७ अति इयाम तिरः। हित्वा अवद्यं अरातीः ५,५३,१४

अ-रावन्

३५९ नु चित् यं अन्यः आदभत् अरावा ७,५६,१५

अ-रिष्ट

२०५ सनिं मेधां अरिष्टं दुस्तरं सहः २,३४,७

अ-रिष्ट-ग्राम

१६३ अरिष्टग्रामाः सुमतिं पिपर्तन १,१६६,६

अरुण

१५२ ते अरुणेभिः आ पिशङ्गैः । यान्ति रथतूर्भिः अश्वैः १,८८,२

२११ ते क्षोणीभिः अरुणेभिः न अञ्जिभिः २,३४,१३
२१० उस्राः न रामीः अरुणैः अप ऊर्णुते २,३४,१२

अरुण-प्सुः

७२ उत् उ त्ये अरुणप्सवः । यामेभिः ईरते ८,७,७

अरुणाश्व

२८७ पिशङ्गाश्वाः अरुणाश्वाः अरेपसः ५,५७,४

अरुष

२८१ उत स्यः वाजी अरुषः तुविस्वनिः ५,५६,७
३०४ अश्वाः इव इत् अरुषासः सबन्धवः ५,५९,५
१२७ उत अरुषस्य वि ष्यन्ति धाराः १,८५,५
२८० युङ्ग्ध्वं हि अरुषीः रथे । रथेषु रोहितः ५,५६,६

अ-रेणुः

१८६ अरेणवः तुविजाताः अचुच्यवुः दृळ्हानि चित् १,१६८,४

३३५ अरेणवः हिरण्ययासः एषाम् ६,६६,२

अ-रेपस्

१०९ रुद्रस्य मर्याः असुराः अरेपसः १,६४,२
२३६ नरः मर्याः अरेपसः । इमान् स्तुहि ५,५३,३
२८७ पिशङ्गाश्वाः अरुणाश्वाः अरेपसः ५,५७,४
३१५ मदन्ति धूतयः । ऋतजाताः अरेपसः ५,६१,१४
४१५ क्षितीनां न मर्याः अरेपसः १०,७८,१

अर्क

१७७ अर्कः यत् वः मरुतः हविष्मान् १,१६७,६
४५९ त्वेषः अर्कः नभः उत् पातयाथ । अथर्व० ४,१५,५
२८८ दिवः अर्काः अमृतं नाम भेजिरे ५,५७,५
४४७ संवत्सरीणाः मरुतः स्वर्काः । अथर्व० ७,८२,३
४६८ ये उग्राः अर्कं आनृचुः १,१९,४ [अग्निः २२२१]
१२४ अर्चन्तः अर्कं जनयन्तः इन्द्रियम् १,८५,२
१६४ अर्चन्ति अर्कं मदिरस्य पीतये १,१६६,७
३४२ प्र चित्रं अर्कं गृणते तुराय ६,६६,९
४१८ अभिस्वर्तारः अर्कं न सुस्तुभः १०,७८,४
१५४ ब्रह्म कृण्वन्तः गोतमासः अर्कैः १,८८,४
१५१ आ विद्युन्मद्भिः मरुतः स्वर्कैः । रथेभिः यात १,८८,१

आर्किन्

३५ वन्दस्व मारुतं गणं। त्वेषं पनस्युं आर्किणम् १,३८,१५

अर्च्

३ मखः सहस्वत् अर्चति । गणैः इन्द्रस्य १,६,८
२४६ आ घृतं । उक्षन्त मधुवर्णं अर्चते १,८७,२
४८० अर्चन्ति शुष्मं वृषणः वसुया १,१६५,२[इन्द्रः३२५०]
१६४ अर्चन्ति अर्कं मदिरस्य पीतये १,१६६,७
४६८ ये उग्राः अर्कं आनृचुः १,१९,४[अग्निः२२२१]
२६७ प्र श्यावाश्व । अर्च मरुद्भिः ऋक्वभिः ५,५२,१

[illegible]
[illegible] अर्चन् [illegible] १,१६७,१४ [illegible]

अर्चत्

१२६ अर्चन्तः [illegible] १,८५,२

अर्चत्रिः

१६३ अर्चत्रयः [illegible] ६,६६,१०

आर्चिन्

१९९ [illegible] आर्चिनः ५,५२,१

आर्चिन्

८१ [illegible] आर्चिना ८,७,३६

अर्णवः

४७१ [illegible] अर्णवम् १,१९,७ [illegible]
१३१ [illegible] अर्णवम् १,८५,९
१८८ [illegible] अर्णवम् १,१६८,६
३२० [illegible] अर्णवैः ५,५५,१

अर्णस्

१८० अर्णः न [illegible] १,१६७,९
९४ [illegible] अर्णः न [illegible] ८,२०,१३
२५५ [illegible] अर्णसं । [illegible] ५,५४,६
३१० आ [illegible] । [illegible] अर्णसा १,३४,१२

अर्थम्

२२ क्व नूनं [illegible] अर्थम् । [illegible] १,३८,२

अर्द्

४६० अभि क्रन्द स्तनय अर्दय [illegible] । अथर्व० ४,१५,६

अर्यः

२६१ तं नाकं अर्यः [illegible] ५,५४,१२
३६६ [illegible] । [illegible] अर्यः ७,५६,२२
३९७ दिवे अर्यः आ । [illegible] ८,९४,३

अर्यमन्

१७१ [illegible] अर्यमो [illegible] १,१६७,८
३९९ पिबन्ति मित्रः अर्यमा । [illegible] ८,९४,५
२५७ अर्यमणः न मरुतः कबन्धिनः ५,५४,८
३८३ मित्र अर्यमन् मरुतः शर्म यच्छत ७,५९,१
३६० अर्यमणं न मन्द्रं [illegible] ६,४८,१४

*

अर्वन्

३३७ [illegible] अर्वा ३,२६,३३
३६० [illegible] अर्वा ३,२८,४
२३३ [illegible] अर्वन्तं [illegible] । [illegible] ५,५४,१४
१४० अर्वद्भिः [illegible] १,३४,१३
४४२ [illegible] अर्वतां [illegible] । [illegible] ४,३७,३
२ [illegible] अर्वतां [illegible] १,३७,१

अर्वाच्

४१० [illegible] अर्वाञ्च [illegible] १०,७७,४
१८३ [illegible] अर्वाञ्चः [illegible] १,१६८,१
२१३ अर्वाची [illegible] ३,३४,१५

अर्ह्

९९ [illegible] अर्हन्ति [illegible] ८,२०,१८

अर्हत्

२२१ अर्हन्तः [illegible] । [illegible] ५,५२,५

अर्हस्

४०७ [illegible] अर्हसे [illegible] १०,७७,१

अला-तृणः

१६४ अलातृणासः [illegible] १,१६६,७

अ-वंश:

३७७ [illegible] अवंशान् ७,५८,१

अव्

१६१ आ ये रजांसि तविषीभिः अव्यत १,१६६,४
६६ येन आव तुर्वशं यदुम् । येन कण्वम् ८,७,१८
३३३ [illegible] अवतु [illegible] ५,८७,३
३३४ [illegible] अवन्तु [illegible] ५,८७,७
४१४ ते नः अवन्तु [illegible] १०,७७,८
४६१ ते वः अवन्तु [illegible] । अथर्व० ४,१५,७
४६३ प्र अवन्तु पृथिवीं अनु । अथर्व० ४,१५,९
४६३ ते वः अवन्तु [illegible] । अथर्व० ४,१५,९
४४० प्र इमं वाजं [illegible] अवन्तु । अथर्व० ४,२७,१
४६३ मरुतः पर्वतानां अधिपतयः ते मा अवन्तु ।
अथर्व० ५,२४,६

३७४ प्र नः अवत [illegible] ७,५७,५
३८८ आ च नः बर्हिः सदत अवित च नः ७,५९,६
२६२ [illegible] अवथ [illegible] ५,५४,१४
३४१ मरुतः यं अवथ वाजसातौ ६,६६,८
१०५ याभिः [illegible] अवथ [illegible] ८,२०,२४

१९० तस्थौ नः ऊती मरुतः यं आवत १,६४,१३
१६५ पूर्भिः रक्षत मरुतः यं आवत १,१६६,८
१७० पुरु यत् शंसं अमृतासः आवत १,१६६,१३
१२९ विष्णुः यत् ह आवत् वृषणं मदच्युतम् १,८५,७
६९ त्रितस्य । शुष्मं आवन् उत क्रतुम् ८,७,२४
१७० अया धिया मनवे श्रुष्टिं आव्य १,१६६,१३

अव

१८६ अव स्वयुक्ताः दिवः आ वृथा ययुः १,१६८,४
१९० अव स्मयन्त विद्युतः पृथिव्याम् १,१६८,८
२०७ अव रुद्राः अशसः हन्तन वधः २,३४,९
२४१ आ यात । मा अव स्थात परावतः ५,५३,८
२७५ विशः अद्य मरुतां अव ह्वये ५,५६,१
२९७ अव उस्रियः वृषभः क्रन्दतु द्यौः ५,५८,६
३२९ भरद्वाजाय अव धुक्षत द्विता ६,४८,१३
३३८ नु चित् सुदानुः अव यासत् उग्रान् ६,६६,५
३८१ अव तत् एनः ईमहे तुराणाम् ७,५८,५

अवतः

१३२ ऊर्ध्वं नुनुद्रे अवतं ते ओजसा १,८५,१०
१३३ जिह्मं नुनुद्रे अवतं तया दिशा १,८५,११

अव-तस्थिवस्

४९८ नभः न कृष्णं अवतस्थिवांसम् ८,९६,१४

अवद्यम् [इन्द्रः३२६९]

२४७ अति द्याम निदः । तिरः अवद्यं अरातीः ५,५३,१४
३३७ अन्तः सन्तः अवद्यानि पुनानाः ६,६६,४
१७९ पान्ति मित्रावरुणौ अवद्यात् १,१६७,८
३ अनवद्यैः अभिद्युभिः । गणैः इन्द्रस्य काम्यैः १,६,८

अवनिः

२५१ स्वरन्ति आपः अवना परिज्रयः ५,५४,२

अवम

४१४ यत् वा अवमे सुभगासः दिवि स्थ ५,६०,६

अव-यात-हेळः

४९७ भव मरुद्भिः अवयातहेळाः १,१७१,६[इन्द्रः३२६८]

अ-वर

२१२ आववर्तत् अवरान् चक्रिया अवसे २,३४,१४
१८८ क्व अवरं मरुतः यस्मिन् आयय १,१६८,६

अवस्

४२ तनाय कम् । रुद्राः अवः वृणीमहे १,३९,७
२१५ आ तोरं उग्रं अवः ईमहे वयम ३,२६,५
४०२ अद्य महानां । देवानां अवः वृणे ८,९४,८
४२ गन्त नूनं नः अवसा यथा पुरा १,३९,७
१३३ आ गच्छन्ति ईं अवसा चित्रभानवः १,८५,११
१५९ नक्षन्ति रुद्राः अवसा नमस्विनम् १,१६६,२
३८४ युष्माकं देवाः अवसा अहनि प्रिये ७,५९,२
४२८ विश्वे नः देवाः अवसा आ अगमन् इह वा० य० २५,२०
१४० ददाशिम वयं । अवोभिः चर्षणीनाम् १,८६,६
१७३ आ नः अवोभिः मरुतः यान्तु अच्छ १,१६७,२
१८३ महे ववृत्यां अवसे सुवृक्तिभिः १,१६८,१
२१२ आववर्तत् अवरान् चक्रिया अवसे २,३४,१४
२९० भक्षीय वः अवसः दैव्यस्य ५,५७,७
३४० अनवसः अनभीशुः रजस्तूः । पथ्याः याति ६,६६,७
४४१ ईळे अग्निं स्ववसं नमोभिः ५,६०,१

अ-वाता

२७ मन्वन् चित् । मिहं कृण्वन्ति अवाताम् १,३८,७

अवित्

२४८ अस्याः धियः प्राविता अथ वृषा गणः १,८७,५

अ-विथुर

१४५ अनानताः अविथुराः ऋजीषिणः १,८७,१

अव्य

४१५ देवाव्यः न यज्ञैः स्वप्नसः १०,७८,१

अश्

२५९ सद्यः अस्य अध्वनः पारं अश्नुथ ५,५४,१०
३०३ कः वः महान्ति महतां उत् अश्नवत् ५,५९,४
१२४ ते उक्षितासः महिमानं आशत १,८५,२
१४९ यत् ई इन्द्रं शमि ऋक्वाणः आशत १,८७,५
१७१ एभिः यज्ञेभिः तत् अभि इष्टिं अश्याम् १,१६६,१४

अशस्

२०७ अव रुद्राः अशसः हन्तन वधः २,३४,९

अ-शस्तिः

४५७ मा नः विदत् अभिभाः मो अशस्तिः अथर्व० १,२०,१

अश्म-दिद्युः

२५२ विद्युन्महसः नरः अश्मदिद्यवः ५,५४,३

अश्मन्

१९६ आरे शरुः । आरे अश्मा यं अस्यथ १,१७२,२

२७८ अश्मानं चित् स्वर्यं पर्वतं गिरिं । प्र च्यावयन्ति यामभिः ५,५६,४

अश्वः

२४० स्वनः अश्वाः इव अध्वनः विमोचने ५,५३,७
२५९ न वः अश्वाः श्रथयन्त अह सिस्रतः ५,५४,१०
३०९ क्व वः अश्वाः क्व अभीशवः ५,६१,२
३०४ अश्वाः इव इत् अरुषासः सबन्धवः ५,५९,५
३२ स्थिराः वः सन्तु नेमयः । रथाः अश्वासः एषाम् । १,३८,१२
३०६ अश्वासः एषां उभये यथा विदुः ५,५९,७
४१९ अश्वासः न ये ज्येष्ठासः आशवः १०,७८,५
१९३ नि हेळः धत्त वि मुचध्वं अश्वान् १,१७१,१
२०१ उक्षन्ते अश्वान् अत्यान् इव आजिषु २,३४,३
२०६ अश्वान् रथेषु भगे आ सुदानवः २,३४,८
२७० यत् अश्वान् धूर्षु पृषतीः अयुग्ध्वम् ५,५५,६
२९८ सातान् हि अश्वान् धुरि आयुयुज्रे ५,५८,७
३०० उक्षन्ते अश्वान् तरुषन्ते आ रजः ५,५९,१
१५२ शुभे कं यान्ति रथतूर्भिः अश्वैः १,८८,२
२६५ ईयन्ते अश्वैः सुयमेभिः आशुभिः ५,५५,१
२९७ यत् प्र अयासिष्ट पृषतीभिः अश्वैः ५,५८,६
७२ अश्वैः हिरण्यपाणिभिः । उप गन्तन ८,७,२७
२०४ अश्वां इव पिप्यत धेनुं ऊधनि २,३४,६
३४० अनश्वः चित् यं अजति अरथीः ६,६६,७
१४८ सः हि स्वसृत् पृषदश्वः युवा गणः १,८७,४
२९५ युष्मत् सदश्वः मरुतः सुवीरः ५,५८,४
२६७ प्र श्यावाश्व धृष्णुया । अर्च मरुद्भिः ५,५२,१
२८७ पिशङ्गाश्वाः अरुणाश्वाः अरेपसः ५,५७,४
२९२ ये आश्वश्वाः अमवत् वहन्ते ५,५८,१
४२८ पृषदश्वाः मरुतः पृश्निमातरः । वा० य० २५,२०
२८५ स्वश्वाः स्थ सुरथाः पृश्निमातरः ५,५७,२
३४५ रुद्रस्य मर्याः अध स्वश्वाः ७,५६,१
२०२,२१६ पृषदश्वासः अनवभ्रराधसः २,३४,४;३,२६,६
९१ पृषदश्वेन मरुतः वृषप्सुना । रथेन वृषनाभिना ८,२०,१०

अश्व-पर्ण

१५१ रथेभिः यात ऋष्टिमद्भिः अश्वपर्णैः १,८८,१

अश्व-युज्

२५१ वयोवृधः अश्वयुजः परिज्रयः ५,५४,२

अश्व-वत्

२९० गोमत् अश्ववत् रथवत् सुवीरम् ५,५७,७

अश्विन्

३९८ पिबन्ति अस्य मरुतः । उत स्वराजः अश्विना ८,९४,५

अश्व्यम्

२३३ यमुनायां अधि । नि राधः अश्व्यं मृजे ५,५२,१७

अस् (भुवि, to be)

२४८ सुदेवः समह असति सुवीरः ५,५३,१५
९६ यः वा नूनं उत असति ८,२०,१५
२० अस्ति हि स्म मदाय वः १,३७,१५
४८८ न त्वावान् अस्ति देवता विदानः १,१६५,९ [इन्द्रः ३२५८]
१७८ मरुतां महिमा सत्यः अस्ति १,१६७,७
३४१ न अस्य वर्ता न तरुता नु अस्ति ६,६६,८
३३२ यः ईवतः वृषणः अस्ति गोपाः ७,५६,१८
३३५ यत् ईं सुजातं वृषणः वः अस्ति ७,५६,२१
१०३ यः [illegible] अस्ति [illegible] ८,२०,२२
३९८ अस्ति सोमः अयं सुतः ८,९४,४
१९ सन्ति कण्वेषु वः दुवः १,३७,१४
१३४ या वः शर्म शशमानाय सन्ति १,८५,१२
२१८ [illegible] सन्ति [illegible] ५,५२,२
२२९ ये [illegible] । [illegible] सन्ति [illegible] ५,५२,१३
३३६ [illegible] सन्ति [illegible] ६,६६,३
३७८ [illegible] सन्ति ७,५८,२
१०१ [illegible] सन्ति [illegible] ८,२०,२०
४२२ [illegible] सन्ति १०,७८,८
१४८ असि [illegible] १,८७,४
४२४ [illegible] असि [illegible] । वा० य० ७,३६
४२५ [illegible] असि [illegible] । वा० य० ७,३६
३११ [illegible] । [illegible] अस्मय ५,६१,४
५,४५७ [illegible] स्थ [illegible] १,१५,२;८,७,१२
१९४ [illegible] स्थ [illegible] १,१७१,२
२८५ [illegible] स्थ [illegible] ५,५७,२
३०४ [illegible] स्थ ५,६०,६
३०८ [illegible] स्थ [illegible] ५,६१,१

४३४ **स्थ** अभि प्र इत मृणत सहध्वम् । अथर्व० ३,१,२
३०२ अत्याः इव सुभ्वः चारवः **स्थन** ५,५९,३
३२३ स्थातारः हि प्रसितौ संदृशि **स्थन** ५,८७,६
२३४ कः वा पुरा सुम्नेषु **आस** मरुताम् ५,५३,१
९६ वः ऊतिषु । **आस** पूर्वासु मरुतः व्युष्टिषु ८,२०,१५
३७ युष्माकं **अस्तु** तविषी पनीयसी १,३९,२
३९ युष्माकं **अस्तु** तविषी तना युजा १,३९,४
१४१ सुभगः सः प्रयज्यवः मरुतः **अस्तु** मर्त्यः १,८६,७
४८९ मे विभु **अस्तु** ओजः १,१६५,१० [इन्द्रः ३२५९]
१९५ चित्रः वः **अस्तु** यामः । चित्रः ऊती १,१७२,१
२४२ अस्मे इत् सुम्नं **अस्तु** वः ५,५३,९
३३२ प्रणीतिः **अस्तु** सूनृता देवस्य वा मर्त्यस्य । ६,४८,२०
३३४ वपुः नु तत् चिकितुषे चित् **अस्तु** ६,६६,१
३४० अनेनः वः मरुतः यामः **अस्तु** ६,६६,७
३४९ सा विट् सुवीरा मरुद्भिः **अस्तु** ७,५६,५
३६१ आरे गोहा नृहा वधः वः **अस्तु** ७,५६,१५
३६८ अस्मे वीरः मरुतः शुष्मी **अस्तु** ७,५६,२४
३७३ ऋधक् सा वः मरुतः दिद्युत् **अस्तु** ७,५७,४
३७३ अस्मे वः **अस्तु** सुमतिः चनिष्ठा ७,५७,४
३८० प्र तत् वः **अस्तु** धूतयः देष्णम् ७,५८,४
४१३ सः देवानां अपि गोपीथे **अस्तु** १०,७७,७
३२ स्थिराः वः **सन्तु** नेमयः । रथाः अश्वासः १,३८,१२
३७ स्थिरा वः **सन्तु** आयुधा पराणुदे १,३९,२
४९४ ऊर्ध्वा नः **सन्तु** कोम्या वनानि १,१७१,३ [इन्द्रः ३२६५]
४८५ क्व वः मरुतः स्वधा **आसीत्** १,१६५,६ [इन्द्रः ३२५५]
४९५ हव्या निशितानि **आसन्** १,१७१,४ [इन्द्रः ३२६६]
२२८ के चित् । उमाः **आसन्** दृशि त्विषे ५,५२,१२
२४ यूयं मर्तासः । स्तोता वः अमृतः **स्यात्** १,३८,४
१८१ तत् नः ऋभुक्षाः नरां अनु **स्यात्** १,१६७,१०
९८ युवानः तथा इत् **असत्** ८,२०,१७
४३७ यथा अयं अरपाः **असत्** । अथर्व० ४,१३,४
३५ अस्मे वृद्धाः **असन्** इह १,३८,१५
३२६ प्रचेतसः । **स्यात** दुर्धर्तवः निदः ५,८७,२
२४ यत् यूयं पृश्निमातरः । मर्तासः **स्यातन** १,३८,४
२४७ आपः उस्रि भेषजम् । **स्याम** मरुतः सह ५,५३,१४
२४८ यं त्रायध्वे **स्याम** ते ५,५३,१५
२६२ रायः **स्याम** रथ्यः वयस्वतः ५,५४,१३
२७४ वयं **स्याम** पतयः रयीणाम् ५,५५,१०
३६८ अध स्वं ओकः अभि वः **स्याम** ७,५६,२४
३६९ शर्मन् **स्याम** मरुतां उपस्थे ७,५६,२५

अस् (क्षेपणे, to throw)

३६ परावतः । शोचिः न मानं **अस्यथ** १,३९,१
१९६ आरे शरुः । आरे अश्मा यं **अस्यथ** १,१७२,२
२७० विश्वाः इत् स्पृधः मरुतः वि **अस्यथ** ५,५५,६

अ-सच-द्विष्

१०५ ऊतिभिः मयोभुवः शिवाभिः **असचद्विषः** ८,२०,२४

अ-सामि

४४ **असामि** हि प्रयज्यवः । कण्वं दद प्रचेतसः १,३९,९
४५ **असामि** ओजः बिभृथ सुदानवः १,३९,१०
४५ विभृथ सुदानवः । **असामि** धूतयः शवः १,३९,१०
४४ **असामिभिः** मरुतः आ नः ऊतिभिः । गन्त १,३९,९

अ-सामि-शवस्

२२१ ये सुदानवः । नरः **असामिशवसः** ५,५२,५

असिक्नी

१०६ यत् सिन्धौ यत् **असिक्न्याम्** ८,२०,२५

असु-रः

३६८ जनानां यः **असुरः** विधर्ता ७,५६,२४
१०९ रुद्रस्य मर्याः **असुराः** अरेपसः १,६४,२
९८ दिवः वशन्ति **असुरस्य** वेधसः ८,२०,१७

असुर्या

१७६ जोषत् यत् ईं **असुर्या** सचध्यै १,१६७,५
१८९ पृथुज्रयी **असुर्या** इव जञ्जती १,१६८,७

अस्तम्

४६० आशारैषी कृशगुः एतु **अस्तम्** । अथर्व० ४,१५,६

अस्तृ

११७ **अस्तारः** इषुं दधिरे गभस्त्योः १,६४,१०

अस्मद्

४८५ **अहं** हि उग्रः तविषः तुविष्मान् १,१६५,६ [इन्द्रः ३२५५]
४८७ **अहं** एताः मनवे विश्वचन्द्राः । सुगाः अपः चकर १,१६५,८ [इन्द्रः ३२५७]
४८९ **अहं** हि उग्रः मरुतः विदानः १,१६५,१० [इन्द्रः ३२५९]
१९३ प्रति नः एना नमसा **अहं** एमि १,१७१,१
४९५ अस्मान् **अहं** ईषमाणः १,१७१,४ [इन्द्रः ३२६६]
२० मदाय वः । स्मसि स्म **वयं** एषाम् १,३७,१५

अस्मद्

१४० पूर्वीभिः हि ददाशिम । शरद्भिः मरुतः वयम् १,८६,६
४८४ अतः वयं अन्तमेभिः युजानाः १,१६५,५ [इन्द्रः ३२५४]
१८१ वयं अद्य इन्द्रस्य प्रेष्ठाः १,१६७,१०
१८१ वयं श्वः वोचेमहि समर्ये १,१६७,१०
१८१ वयं पुरा महि च नः अनु द्यून् १,१६७,१०
२१५ आ त्वेषं उग्रं अवः ईमहे वयम् ३,२६,५
२७४ वयं स्याम पतयः रयीणाम् ५,५५,१०
२८२ रथं नु मारुतं वयं श्रवस्युं आ हुवामहे ५,५६,८
४८५ मां एकं समधत्त अहिहत्ये १,१६५,६ [इन्द्रः ३२५५]
४९० अमन्दत् मा मरुतः स्तोमः अत्र १,१६५,११; [इन्द्रः ३२६०]
४९१ एव इत् एते प्रति मा रोचमानाः १,१६५,१२; [इन्द्रः ३२६१]
३८९ विश्वं शर्धः अभितः मा नि सेद ७,५९,७
४३६ मरुतः पर्वतानां अधिपतयः ते मा अवन्तु । अथर्व० ५,२४,६
४९३ अस्मान् चक्रे मान्यस्य मेधा १,१६५,१४ [इन्द्रः ३२६३]
२६८ उतो अस्मान् अमृतत्वे दधातन ५,५५,४
२७४ यूयं अस्मान् नयत वस्यः अच्छ ५,५५,१०
४२२ अस्मान् स्तोतॄन् मरुतः ववृधानाः १०,७८,८
४३५ अस्मान् ऐति अभि ओजसा स्पर्धमाना। अथर्व०३,२,६
४७९ हत वृत्रं । मा नः दुःशंसः ईशत १,२३,९
२६ मो षु नः परापरा । निर्ऋतिः दुर्हणा वधीत् १,३८,६
४२ गन्त नूनं नः अवसा यथा पुरा १,३९,७
४३ आ यः नः अभ्वः ईषते १,३९,८
४४ असामिभिः मरुतः आ नः ऊतिभिः गन्त १,३९,९
१३४ रयिं नः धत्त वृषणः सुवीरम् १,८५,१२
१५१ आ वर्षिष्ठया नः इषा। वयः न पप्तत सुमायाः १,८८,१
४८२ वोचेः तत् नः हरिवः यत् ते अस्मे १,१६५,३; [इन्द्रः ३२५२]
४८३ इमा हरी वहतः ता नः अच्छ १,१६५,४; [इन्द्रः ३२५३]
१७३ आ नः अवोभिः मरुतः यान्तु अच्छ १,१६७,२
१८१ वयं पुरा महि च नः अनु द्यून् १,१६७,१०
१८१ तत् नः ऋभुक्षाः नरां अनु स्यात् १,१६७,१०
४९४ स्तुतासः नः मरुतः मृळयन्तु १,१७१,३ [इन्द्रः ३२६५]
४९५ तानि आरे चकृम मृळत नः १,१७१,४ [इन्द्रः ३२६६]
४९६ स नः मरुद्भिः वृषभ श्रवः धाः १,१७१,५; [इन्द्रः ३२६७]

अस्मद्

१९७ ऊर्ध्वान् नः कर्त जीवसे १,१७२,३
२०५ तं नः दात मरुतः वाजिनं रथे २,३४,७
२१० ते नः हिन्वन्तु उषसः व्युष्टिषु २,३४,१२
२५५ अध स्म नः अरमतिं सजोषसः । अनु नेषथ ५,५४,६
२७३ मृळत नः मरुतः मा वधिष्टन ५,५५,९
३७४ प्र वाजेभिः तिरत पुष्यसे नः ५,५७,५
२९० चन्द्रवत् राधः मरुतः ददा नः ५,५७,७
२९१,२९९ हये नरः मरुतः मृळत नः ५,५७,८;५८,८
३०५ दिवः मर्याः आ नः अच्छ जिगातन ५,५९,६
४५४ अतः नः रुद्राः उत वा नु अस्य । अग्ने वित्तात् हविषः ५,६०,६
३२३ ते नः उरुष्यत निदः । शुशुक्वांसः ५,८७,६
३२५ अद्वेषः नः मरुतः गातुं आ इतन ५,८७,८
३३१ सुवेदा नः वसु करत् ६,४८,१५
३५३ मा वः दुर्मतिः इह प्रणक् नः ७,५६,९
३६१ दशस्यन्तः नः मरुतः मृळन्तु ७,५६,१५
३६५ आ नः स्पार्हे भजतन वसव्ये ७,५६,२१
३६९ यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ७,५६,२५
३७४ प्र नः अवत सुमतिभिः यजत्राः ७,५७,५
३७५ ददात नः अमृतस्य प्रजायै ७,५७,६
३७६ ये नः त्मना शतिनः वर्धयन्ति ७,५७,७
३७६;३८२ यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ७,५७,७;५८,६
३७९ प्र नः स्पार्हाभिः ऊतिभिः तिरेत ७,५८,३
३८१ कुवित् नंसन्ते मरुतः पुनः नः ७,५८,५
३८८ आ च नः बर्हिः सदत अवित च नः ७,५९,६
५६ मरुतः । आ तु नः उप गन्तन ८,७,११
९९ अतः चित् आ नः वस्यसा हृदा । आ वक्षणम् ८,२०,१८
१०५ मयः नः भूत ऊतिभिः मयोभुवः ८,२०,२४
१०७ तेन नः अधि वोचत । इष्कर्त विहुतम् ८,२०,२६
४१४ ते नः अवन्तु रथतूः मनीषाम् १०,७७,८
४२२ सुभागान् नः देवाः कृणुत सुरत्नान् १०,७८,८
४५७ मा नः विदत् अभिभाः मो अशस्तिः अथर्व०१,२०,१
४५७ मा नः विदत् वृजिना द्वेष्या या । अथर्व० १,२०,१
४५७ अस्मिन् यज्ञे मरुतः मृडत नः । अथर्व० १,२०,१
४३० यूयं नः प्रवतः नपात् । शर्म यच्छाथ सप्रथाः अथर्व० १,२६,३
४३१ सुषूदत मृडत मृडय नः । अथर्व० १,२६,४
४३४ सः नः वर्षं वनुतां जातवेदाः । अथर्व० ४,१५,१०

४४०-४४६ ते नः मुञ्चन्तु अंहसः । अथर्व० ४,२७,१-७
४९० इन्द्राय वृष्णे सुमखाय मह्यम् १,१६५,११; [इन्द्रः ३२६०]
२२६ एतेभिः मह्यं नामभिः यज्ञं विष्टारः ओहते ५,५२,१०
१३४ अस्मभ्यं तानि मरुतः वि यन्त १,८५,१२
२४६ अस्मभ्यं तत् धत्तन यत् वः ईमहे ५,५३,१३
२७३ अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्तन ५,५५,९
५८ आ नः रयिं मदच्युतम् । इयर्त ८,७,१३
१०४ मरुतः मारुतस्य नः । आ भेषजस्य वहत सुदानवः ८,२०,२३
४७८ विश्वे मम श्रुत हवम् १,२३,८; [इन्द्रः ३२४८]
४८३ ब्रह्माणि मे मतयः शं सुतासः १,१६५,४; [इन्द्रः ३२५३]
४८३ शुष्मः इयर्ति प्रभृतः मे अद्रिः १,१६५,४; [इन्द्रः ३२५३]
४८९ एकस्य चित् मे विभु अस्तु ओजः १,१६५,१०; [इन्द्रः ३२५९]
४९० यत् मे नरः श्रुत्यं ब्रह्म चक्र १,१६५,११; [इन्द्रः ३२६०]
४९१ अच्छान्त मे छदयाथ च नूनम् १,१६५,१२; [इन्द्रः ३२६१]
४९२ एवा भूत नवेदाः मे ऋतानाम् १,१६५,१३; [इन्द्रः ३२६२]
२२८ ते मे के चित् न तायवः ५,५२,१२
२३२ प्र ये मे बन्ध्वेषे गां वोचन्त सूरयः ५,५२,१६
२३३ सप्त मे सप्त शाकिनः एकमेका शता ददुः ५,५२,१७
२३६ ते मे आहुः ये आययुः ५,५३,३
२६४ इदं सु मे मरुतः हर्यत वचः ५,५४,१५
२७६ तत् इत् मे जग्मुः आशसः ५,५६,२
१५७ सो षु वः अस्मत् अभि तानि पौंस्या सना भूवन् १,१३९,८
१५७ अस्मत् पुरा उत जारिषुः १,१३९,८
२३३ [illegible] अस्मत् आ ५,५३,३
२८४ इदं वः अस्मत् प्रति हर्यते मतिः ५,५७,१
३५३ [illegible] अस्मत् सुवीर्य [illegible] ७,५६,९
५४ [illegible] मे मरुतः [illegible] । वहत ८,७,९
५५ [illegible] । इदं मे वहत हवम् ८,७,९
४४० [illegible] अधि मे [illegible] । अथर्व० ४,२७,१
४४७ ते अस्मत् [illegible] प्रमुञ्चन्तु एनसः । अथर्व० ७,८२,३
३७१ अस्माकं अद्य [illegible] बर्हिः । मरुत ७,५७,२
३८५ अस्माकं अद्य मरुतः सुते सचा ७,५९,३
४८४ इन्द्र स्वधां अनु हि नः बभूथ १,१६५,५; [इन्द्रः ३२५४]
१६३ यूयं नः उग्राः मरुतः । सुमतिं पिपर्तन १,१६६,६
४९४ ऊर्ध्वा नः सन्तु कोम्या वनानि १,१७१,३; [इन्द्रः ३२६४]
२०४ आ नः ब्रह्माणि मरुतः समन्यवः । सवनानि गन्तन २,३४,६
२०७ यः नः मरुतः वृकताति मर्त्यः । रिपुः दधे २,३४,९
२७४ जुषध्वं नः हव्यदातिं यजत्राः ५,५५,१०
२९० प्रशस्तिं नः कृणुत रुद्रियासः ५,५७,७
३०७ मिमातु द्यौः अदितिः वीतये नः ५,५९,८
४४९ इह प्रसत्तः वि चयत् कृतं नः ५,६०,१
३१७ ते नः वसूनि काम्या । आ यज्ञियासः ववृत्तन ५,६१,१६
३२६ गन्त नः यज्ञं यज्ञियाः सुशमि ५,८७,९
३६६ अध स्म नः मरुतः रुद्रियासः ७,५६,२२
३६९ तत् नः इन्द्रः वरुणः मित्रः अग्निः जुषन्त ७,५६,२५
३७९ जुजोषन् इत् मरुतः सुष्टुतिं नः ७,५८,३
३८८ आ च नः बर्हिः सदत । अवित च ७,५९,६
३९० यः नः मरुतः अभि दुर्हृणायुः ७,५९,८
७२ आ नः मखस्य दावने । देवासः उप गन्तन ८,७,१३
७७ सहो षु नः वज्रहस्तैः । स्तुषे हिरण्यवाशीभिः ८,७,३२
८३ इषा नः अद्य आ गत पुरुस्पृहः ८,२०,१
८९ इषे भुजे । महान्तः नः स्परसे नु ८,२०,८
९१ वृथा नरः । हव्या नः वीतये गत ८,२०,१०
१०३ अधि नः गात मरुतः सदा हि वः ८,२०,२२
१०७ क्षमा रपः मरुतः आतुरस्य नः इष्कर्त ८,२०,२६
३३७ तत् सु नः विश्वे अर्यः आ । सदा गृणन्ति कारवः ८,९४,३
४२५ नः आ इतन यज्ञे अस्मिन् । वा० य० १७,८४
४२५ आ इतन नः अद्य मरुतः यज्ञे अस्मिन् । वा० य० १७,८४
४२८ विश्वे नः देवाः अवसा आ अगमन् इह । वा० य० [illegible]
१२९ ऋतिषहं रयिं अस्मासु धत्त १,६४,१५
१५७ अस्मासु तत् मरुतः यत् च दुष्टरं । दिद्यृत १,१३९,८
३५ अस्मे वृद्धाः असन् इह १,३८,१५
४८१ वोचेः तत् नः हरिवः यत् ते अस्मे १,१६५,३; [इन्द्रः ३२५१]
४८६ भूरि चकर्थ युज्येभिः अस्मे १,१६५,७ [इन्द्रः ३२५६]
१८० यदि अस्मे आरात् [illegible] १,१६९,[illegible]

२४२ अस्मे इत् सुम्नं अस्तु वः ५,५३,९
२६२ अस्मे ररन्त मरुतः सहस्रिणम् ५,५४,१३
३६१ सुम्नेभिः अस्मे वसवः नमध्वम् ७,५६,१७
३६४ धत्त वित्तं तनयं तोकं अस्मे ७,५६,२०
३६८ अस्मे वीरः मरुतः शुष्मी अस्तु ७,५६,२४
३७३ अस्मे वः अस्तु सुमतिः चनिष्ठा ७,५७,४

अहं-युः

१७८ सचा यत् ईं वृषमणाः अहंयुः १,१६७,७

अह

१ आत् अह स्वधां अनु। पुनः गर्भत्वं एरिरे १,६,४
२२२ अनु एनान् अह विद्युतः। भानुः अर्त ५,५२,६
२५३ वि दुर्गाणि मरुतः न अह रिष्यथ ५,५४,४
२५९ न वः अश्वाः श्रथयन्त अह सिस्रतः ५,५४,१०
१०१ वृष्णः गिरा। वन्दस्व मरुतः अह ८,२०,२०

अ-हता

२७७ मीळ्हुष्मतीव पृथिवी पराऽहता ५,५६,३

अहन्

१५४ अहानि गृध्राः परि आ वः आ अगुः १,८८,४
४९४ कर्वा नः सन्तु कोम्या वनानि। अहानि १,१७१,३ [इन्द्रः ३२३५]
२५३ वि अक्तून् रुद्राः वि अहानि शिक्वसः ५,५४,४
२९३ अहा इव प्र जायन्ते। महोभिः ५,५८,५
३८४ अहनि प्रिये। ईजानः तरति द्विषः ७,५९,२

अ-हन्यः

१८७ पुरुप्रैषाः अहन्यः न एतशः १,१६८,५

अहि-भानुः

१९५ सुदानवः। मरुतः अहिभानवः १,१७२,१

अहि-मन्युः

११५ सं इत् सबाधः शवसा अहिमन्यवः १,६४,८
११६ रथावः सुराः स्वतवसः अहिमन्यवः १,६४,९

अहि-हत्यम्

४८५ नो सनयन्त अहिहत्ये १,१६५,६ [इन्द्रः ३२५५]

अहुत-प्सुः

८८ स्वधां अनु श्रियं नरः। वहन्ते अहुतप्सवः ८,२०,७

आ

(४) १,३,९; (४३५-४३७) १,१९,१-९ [अग्निः
मरुद्° ३

२४३८-४६]; (४७७) १,२३,७ [इन्द्रः ३२४७]; (११, १८) १,३७,३.१३; (२७,३०) १,३८,७.१०; (४१-४४) १,३९,३-९; (११६,१२०) १,६४,९ (द्वि). १३; (१२६, १२८-२९,१३३) १,८५,४. ६ (द्विः).७.११; (१३९) १,८६,५; (१४६) १,८७,६; (१५१-५२,१५४) १,८८,१ (द्विः). २. ४ (द्विः); (४८१,४८३,४८८,४९१,४९३) १,१६५,२.४.९.१२.१४ [इन्द्रः ३२५१,३२५३,३२५८, ३२६१, ३२६३]; (१६१,१६६,१७०-७२) १,१६६,४.९. १३-१५ (१८२) १,१६७,११; (१७३,१७६-७७)१,१६७.२. ५-६; (१८३,१८५-८६,१९२) १,१६८,१.३-४.१०; (१९४) १,१७१.२; (२०२-४,२०६) २,३४,४-६.८; (२१५) ३,२६,५; (२१८) ५,५२,२; (२२२-२३,२२८) ५,५२,६ (द्विः).७.१२; (२३५,२३९,२४१) ५,५३,२.६.८ (द्विः); (२५०,२५२) ५,५४,१.३; (२६७) ५,५५,३; (२७५, २७७,२८२-८३) ५,५६,१.३.८(द्विः).९; (२८४) ५,५७,१; (२९४) ५,५८,३; (३००,३०५,३०७) ५,५९,१.६.८; (४५०) ५,६०,२; (३१३) ५,६१,१२; (३१७) ५,८६,१६; (३२०,३२४-२५) ५,८७,३.७-८; (३२७,३३१) ६,४८,११.१५; (३३६,३३८-३९,३४४) ६,६६,३.५.६.११; (३५४,३५७,३६२-६३,३६५) ७,५६,१०.१३.१८-१९.२१; (३७१-७२,३७३) ७,५७,२-३.७; (३८१) ७,५८,५; (३८३,३८८-८९,३९२-९३) ७,५९,४.६-७.१०-११; (५६, ५८,७२,७८,८०) ८,७,११.१३.२७.३३.३५; (८२-८३, ८६-८७,९१,९७,९९.१०२-४.१०७) ८,२०,१-२ (द्विः). ५-६.१०.१३.१८ (द्विः).२२-२३.२६; (११७,४००,४०२) ८,९४,३.६.९; (४७४) ८,१०३,१४ [अग्निः २४४७]; (४१०) १०,७७,४; (४१५) वा० य० १७,८४; (४१८) वा० य० २५,२०; (४२९) ताण्ड्य० २५,३; (४३४.१) अथर्व० ३,१,३; (४६०) आर्षे० ४,१५,३; (४३३) अथर्व० १३,१,३

आ-इ

४३५ अस्मन् एति ... १,३,६

आ-इत

४८० ... एतासः ... १,१६५,१ [इन्द्रः ३२५०]

आ-ईर्

१ स्वधां अनु। पुनः गर्भत्वं एरिरे १,६,४

आकृतिः

४३६ ... आकृत्याम्। ...

आ-गम्

२७६ ये ते नेदिष्ठं हवनानि आगमन् ५,५६,१

आगस्

३७३ यत् वः आगः पुरुषता कराम ५,५७,४

आजिः

४९८ इष्यामि वः वृषणः युध्यत आजौ ८,९६,१४
[इन्द्रः ३१६१]

२०१ उक्षन्ते अश्वान् अत्यान् इव आजिषु १,३४,३

आत्

१ आत् अह स्वधां अनु । गर्भत्वं एरिरे १,६,४
१४९ आत् इत् नामानि यज्ञियानि दधिरे १,८७,५
१९१ आत् इत् स्वधां इषिरां परि अपश्यन् १,१६८,९

आतुरः

१०७ क्षमा रपः मरुतः आतुरस्य नः ८,२०,२६

आ-दभ्

३५९ नु चित् यं अन्यः आदभत् अरावा ७,५६,१५

आदर्दिरः

४२० आदर्दिरासः अद्रयः न विश्वहा १०,७८,६

आदित्यः

४०८ आदित्यासः ते अक्राः न ववृधुः १०,७७,२
४१४ आदित्येन नाम्ना शंभविष्ठाः १०,७७,८

आदिश्

३३० विष्णुं न स्तुषे आदिशे ६,४८,१४

आधृष्

३९ रुद्रासः नु चित् आधृषे १,३९,४
३१९ क्रत्वा तत् वः मरुतः न आधृषे शवः ५,८७,२

आध्य

४१५ विप्रासः न मन्मभिः स्वाध्यः १०,७८,१

आनत

१४५ अनानताः अविथुराः ऋजीषिणः १,८७,१

आप्

१८० आरात्तात् चित् शवसः अन्तं आपुः १,१६७,९

आपथिः

२२६ आपथयः विपथयः अन्तःपथाः ५,५२,१०

आपथ्य

११८ उत् जिघ्नन्ते आपथ्यः न पर्वतान् १,६४,११

आपान

१०५ आपानं ब्रह्म चितयत् दिवेदिवे ८,३४,७

आपित्वम्

१०३ वः । आपित्वं अस्ति निध्रुवि ८,२०,२२

आपिः

१०८ पृश्न्याः यत् ऊधः अपि आपयः दुहुः ८,३४,१०
२३५ कस्मै सस्रुः सुदासे अनु आपयः ५,५३,२

आपृच्छ्य

१२० आपृच्छ्यं क्रतुं आ क्षेति पुष्यति १,६४,१३.

आभूः

१०८ गिरः सं अञ्जे विदथेषु आभुवः १,६४,१
११३ पयः घृतवत् विदथेषु आभुवः १,६४,६

आभूपेण्य

२६८ आभूपेण्यं वः मरुतः महित्वनम् ५,५५,४

आ-या

१८८ क्व अवरं मरुतः यस्मिन् आयय १,१६८,६
३०८ श्रेष्ठतमाः ये एकएकः आयय ५,६१,१
२३६ ते मे आहुः ये आययुः । इमान् स्तुहि ५,५३,३

आयु

२० वयं एषां । विश्वं चित् आयुः जीवसे १,३७,१५
४५६ पावकेभिः विश्वमिन्वेभिः आयुभिः ५,६०,८
२४६ वः ईमहे । राधः विश्वायु सौभगम् ५,५३,१३

आयुधम्

३७ स्थिरा वः सन्तु आयुधा पराणुदे १,३९,२
२८९ नृम्णा शीर्षसु आयुधा रथेषु वः ५,५७,६
९३ स्थिरा धन्वानि आयुधा रथेषु वः ८,२०,१२
३५७ अनु स्वधां आयुधैः यच्छमानाः ७,५६,१३
३७२ भ्राजन्ते रुक्मैः आयुधैः तनूभिः ७,५७,३
२८५ स्वायुधाः मरुतः याथन शुभम् ५,५७,२
३२१ हिरण्ययाः स्वायुधासः इष्मिणः ५,८७,५
३५५ स्वायुधासः इष्मिणः सुनिष्काः ७,५६,११

आरात्

३८१ आरात् चित् द्वेषः वृषणः युयोत ७,५८,६
४१२ आरात् चित् द्वेषः सनुतः युयोत १०,७७,६

आरात्तात्

१८० आरात्तात् चित् शवसः अन्तं आपुः १,१६७,९

आरुजत्नुः
४७५ वीळु चित् आरुजत्नुभिः । अविन्दः उस्रियाः अनु १,६,५; [इन्द्रः ३२४५]

आरुणी
११४ यत् आरुणीषु तविषीः अयुग्ध्वम् १,६४,७

आरे
४९५ तानि आरे चकृम मृळत नः १,१७१,४ [इन्द्रः ३३३३]
१९६ आरे सा वः सुदानवः मरुतः ऋञ्जती शरुः १,१७२,२
१९६ सुदानवः । आरे अश्मा यं अस्यथ १,१७२,२
३६१ आरे गोहा नृहा वधः वः अस्तु ७,५६,१७

आर्जीकः
७४ सुषोमे शर्यणावति आर्जीके पस्त्यावति ८,७,२९

आविस्
१४३ सत्यशवसः । आविः कर्त महित्वना १,८६,९
३३१ आविः गूळ्हा वसु करत् ६,४८,१५
३८१ यत् सस्वर्ता जिहीळिरे यत् आविः ७,५८,५

आ-वृत्
२११ आववर्तत् अवरान् चक्रिया अवसे २,३४,१४

आ-वृत
१४८ अधा ईशानः तविषीभिः आवृतः १,८७,४

आशस्
२७६ तत् इत् मे जग्मुः आशसः ५,५३,२

आशा
४३३ आशामाशां वि द्योतताम् । अथर्व० ४,१५,८
३८ वि याथन वनिनः पृथिव्याः । वि आशाः पर्वतानाम् १,३९,३

आशारैषिन्
४३८ आशारैषी कृशगुः एतु अर्वाक् । अथर्व० ४,१५,६

आशिस्
४३६ ते मा अवन्तु अस्यां आशिषि । अथर्व० ५,२४,६

आशुः
४१६ अश्वासः न ये ज्येष्ठासः आशवः १०,७८,५
४२६ यदि वहन्ति आशवः । [illegible] । साम० ३५६
४४० आशूनिव सुयमान् अह्व ऊतये । अथर्व० ४,२७,१
१९ [illegible] ईं आशुभिः १,३७,१४
२०१ नदस्य कर्णैः तुरयन्ते आशुभिः २,३४,३
२६५ ईयन्ते अश्वैः सुयमेभिः आशुभिः ५,५५,१
३१९ ये ईं वहन्ते आशुभिः । श्रवांसि दधिरे । ५,६१,११

आश्वश्वः
२९२ ये आश्वश्वाः अमवत् वहन्ते ५,५८,१

आस्
४७० दिवि देवासः आसते १,१९,६; [अग्निः २४४३]
१८५ हृत्सु पीतासः दुवसः न आसते १,१६८,३

आसन्
१६८ मन्द्राः सुजिह्वाः स्वरितारः आसभिः १,१६६,११

आसा
१८४ आसा गावः वन्द्यासः न उक्षणः १,१६८,२

आ-सिञ्च्
४४१ ये आसिञ्चन्ति रसं ओषधीषु । अथर्व० ४,२७,३

आस्यम्
३४ निमिंहि श्लोकं आस्ये । पर्जन्यः इव ततनः १,३८,१४

आ-हित
१६६ रथेषु वः मिथस्पृध्या इव तविषाणि आहिता १,१६६,९

इ
२७७ मदन्ती एति अस्मत् आ ५,५६,३
२९५ युष्मत् एति मुष्टिहा बाहुजूतः ५,५८,४
३३३ परि यां देवः न एति सूर्यः ६,४८,२१
३२६ रोदसी अनु । धन्वना यन्ति वृष्टयः ५,५३,६
३४३ तं वः शर्धं । अनु प्र यन्ति वृष्टयः ५,५३,१०
१९३ प्रति वः एना नमसा अहं एमि १,१७१,१
४३४.१ पुरः एतु [illegible] । अथर्व० ३,१,३
४३० [illegible] बहुलं आ एतु वर्षम् । अथर्व० ४,१५,५
,, आशारैषी कृशगुः एतु अर्वाक् । अथर्व० ४,१५,६
२१४ प्र यन्तु वाजाः तविषीभिः अग्नयः ३,२६,४
२९४ आ वः यन्तु उदवाहासः अद्य ५,५८,३
३१८ प्र वः महे मतयः यन्तु विष्णवे ५,८७,१
४३६ ते यन्तु वृष्टिं अनु । अथर्व० ४,१५,८
४३३ [illegible] अभि प्र इत मृणत सहध्वम् । अथर्व० ३,१,२
३११ परा वीरासः इतन मर्यासः ५,६१,४
३१५ अद्वेषः नः मरुतः गातुं आ इतन ५,८७,८
४२५ [illegible] आ इतन । [illegible]
३२७ अति इयाम निदः तिरः स्वस्तिभिः ५,५३,१४
३३० [illegible] । [illegible] इयक्षत ५,५४,१२
३४६ यदि स्तुतस्य मरुतः अधीथ ७,५६,१५

४३५ अस्मान् **एति** अभि ओजसा स्पर्धमाना । अथर्व० ३,२,६
४३४ अग्निः हि एषां दूतः **प्रत्येतु** विद्वान् । अथर्व० ३,१,२

इळा (डा)

२३५ वक्षे सस्तुः । **इळाभिः** वृष्टयः सह ५,५३,२

इत्

(११५) १,६४,८; (१३०) १,८५,८; (१४९) १,८७,५; (४८९,४९१) १,१६५,१०.१२; (१९१) १,१६८,९; (१९४) १,१७१;२; (२१२) २,३४,१४; (४४५) ४,२७,६; (२४२) ५,५३,९; (२७०-७१) ५,५५,६-७; (२७६) ५,५६,२; (२९६,२९८) ५,५८,५.७; (३०४) ५,५९,५; (४५२) ५,६०,४;(३३६,३३९) ६,६६,३.६; (३६७) ७,५६,२३; (३७९) ७,५८,३; (९४,९८) ८,२०,१३.१७

इत

४८० कया मती कुतः **एतासः** एते १,१६५,१
[इन्द्रः ३२५०]
२५९ सूर्ये **उदिते** मदथ दिवः नरः ५,५४,१०

इति

२२७ अध पारावताः **इति** । चित्रा रूपाणि दर्श्या ५,५२,११
२३६ अरेपसः । इमान् पश्यन् **इति** स्तुहि ५,५३,३

इतिः

१७६ त्वेषप्रतीका नभसः न **इत्या** १,१६७,५

इत्था

३६ प्र यत् **इत्था** परावतः । मानं अस्यथ १,३९,१
४२ यथा पुरा । **इत्था** कण्वाय बिभ्युषे १,३९,७
४८२ एकः यासि सत्पते किं ते **इत्था** १,१६५,३
[इन्द्रः ३२५२]
३१६ विपन्यवः । प्रणेतारः **इत्था** धिया ५,६१,१५
३५९ **इत्था** विप्रस्य वाजिनः हवीमन् ७,५६,१५
७५ कदा गच्छाथ । **इत्था** विप्रं हवमानम् ८,७,३०

इदम्

२९४ **अयं** यः अग्निः मरुतः समिद्धः ५,५८,३
३९८ अस्ति सोमः **अयं** सुतः । पिबन्ति मरुतः ८,९४,४
४१० विश्वप्सुः यज्ञः अर्वाक् **अयं** सु वः १०,७७,४
४३७ यथा **अयं** अरपाः असत् । अथर्व० ४,१३,४
३६३ **इमे** तुरं मरुतः रमयन्ति । नि पान्ति ७,५६,१९
,, **इमे** सहः सहसः आ नमन्ति ७,५६,१९
,, **इमे** शंसं वनुष्यतः नि पान्ति ७,५६,१९
३६४ **इमे** रध्रं चित् मरुतः जुनन्ति ७,५६,२०
३७२ न एतावत् अन्ये मरुतः यथा **इमे** ७,५७,३
४३४ अमीमृणन् वसवः नाथिताः **इमे** । अथर्व० ३,१,२
५४ **इमं** स्तोमं ऋभुक्षणः । **इमं** मे वनत हवम् ८,७,९
४२७ **इमं** यजमानं अनुवर्त्मानः भवन्तु । वा० य० १७,८६
४३७ त्रायन्तां **इमं** देवाः । अथर्व० ४,१३,४
४४० प्र **इमं** वाजं वाजसाते अवन्तु । अथर्व० ४,२७,१
२३६ अरेपसः । **इमान्** पश्यन् इति स्तुहि ५,५३,३
१७१ **एभिः** यज्ञेभिः तत् अभि इष्टिं अश्याम् १,१६६,१४
१६० उक्षन्ति **अस्मै** मरुतः हिताः इव १,१६६,३
४९५ **अस्मात्** अहं तविषात् ईषमाणः १,१७१,४
[इन्द्रः ३२६६]
१३८ **अस्य** वीरस्य बर्हिषि । सुतः सोमः १,८६,४
१३९ **अस्य** श्रोषन्तु आ भुवः १,८६,५
१८८ क्व स्वित् **अस्य** रजसः महः परम् १,१६८,६
२४९ स्तुहि भोजान् स्तुवतः **अस्य** यामनि ५,५३,१६
२५६ न **अस्य** रायः उप दस्यन्ति न ऊतयः ५,५४,७
२५९ सद्यः **अस्य** अध्वनः पारं अश्नुथ ५,५४,१०
४५४ अतः नः रुद्राः **अस्य** । अग्ने वित्तात् हविषः ५,६०,६
३४१ न **अस्य** वर्ता न तरुता नु अस्ति ६,६६,८
३९८ अयं सुतः । पिबन्ति **अस्य** मरुतः ८,९४,४
४०० उतो नु **अस्य** जोषं आ । होतेव मत्सति ८,९४,६
४०४-६ **अस्य** सोमस्य पीतये ८,९४,१०-१२
८ इहेव शृण्वे **एषां** । कशाः हस्तेषु यत् वदान् १,३७,३
१४ स्थिरं हि जानं **एषाम्** । द्विता शवः १,३७,९
१८ अध्वन् आ । शृणोति कः चित् **एषाम्** १,३७,१३
२० अस्ति मदाय वः । स्मसि स्म वयं **एषाम्** १,३७,१५
२८ विद्युत् मिमाति । यत् **एषां** वृष्टिः असर्जि १,३८,८
३२ स्थिराः वः । रथाः अश्वासः **एषाम्** १,३८,१२
१११ अंसेषु **एषां** नि मिमृक्षुः ऋष्टयः १,६४,४
१२५ वर्त्मानि **एषां** अनु रीयते घृतम् १,८५,३
१४७ प्र **एषां** अज्मेषु विथुरेव रेजते । भूमिः १,८७,३
४८९ यानि च्यवं इन्द्रः इत् ईशे **एषाम्** १,१६५,१०
[इन्द्रः ३२५९]
४९२ **एषां** भूत नवेदाः मे ऋतानाम् १,१६५,१३
[इन्द्रः ३२६२]
१७३ अध यत् **एषां** नियुतः परमाः १,१६७,२
१७८ प्र तं विवक्मि वक्म्यः यः **एषाम्** १,१६७,७
१८५ आ **एषां** अंसेषु रम्भिणीव ररभे १,१६८,३
२३१ नु मन्वानः **एषां** देवान् अच्छ ५,५२,१५

२३४ कः वेद जानं एषाम् । कः जुजोष आस ५,५३,१
२४४ शर्धंशर्धं वः एषां । व्रातंव्रातम् ५,५३,११
२७६ तत् तिष्ठ नूनं एषां । स्तोमैः समुक्षितानाम् ५,५३,५
२९२ तविषीमन्तं एषां । स्तुषे गणं मारुतम् ५,५८,१
२९८ प्रथिष्ट यामन् पृथिवी चित् एषाम् ५,५८,७
३०१ अमात् एषां भियसा भूमिः एजति ५,५९,२
३०६ अश्वासः एषां उभये यथा विदुः ५,५९,७
४५३ युवा पिता स्वपाः रुद्रः एषाम् ५,६०,५
३१० जघने चोदः एषां । वि सक्थानि नरः यमुः ५,६१,३
३१५ कः वेद नूनं एषां । यत्र मदन्ति धूतयः ५,६१,१४
३१९ न आधृषे शवः । दाना मह्ना तत् एषाम् ५,८७,२
३३५ अरेणवः हिरण्ययासः एषाम् ६,६६,२
३४६ नकिः हि एषां जनूंषि वेद ते ७,५६,२
६० एतावतः चित् एषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ८,७,१५
७३ यत् एषां पृषतीः रथे । प्रष्टिः वहति रोहितः ८,७,२८
९१ समानं अञ्जि एषां । रुक्मासः अधि बाहुषु ८,२०,११
९५ दाना मह्ना तत् एषाम् ८,२०,१४
,, अराणां न चरमः तत् एषाम् ८,२०,१४
४०७ गणं अस्तोषि एषां न शोभसे १०,७७,१
४३४ अग्निः हि एषां दूतः प्रत्येतु विद्वान् । अथर्व० ३,१,२
४३५ यथा एषां अन्यः अन्यं न जानात् । अथर्व० ३,२,६
४ आ गहि । सं अस्मिन् ऋञ्जते गिरः १,६,९
४२५ आ इतन मरुतः यज्ञे अस्मिन् । वा० य० १७,८४
४५७ अस्मिन् यज्ञे मरुतः मृडत नः । अथर्व० १,२०,१
४३६ ते मा अवन्तु अस्मिन् कर्मणि । अथर्व० ५,२४,६
,, ते मा अवन्तु अस्मिन् ब्रह्मणि । अथर्व० ५,२४,६
३३६ अध स्म एषु रोदसी स्वशोचिः ६,६६,६
१७२:१८२:१९२ एषः वः स्तोमः मरुतः इयं गीः
१,१६६,१५: १६७,११: १६८,१०
२५८ प्रवत्वती इयं पृथिवी मरुद्भ्यः ५,५४,९
२८४ इयं वः अस्मत् प्रति हर्यते मतिः ५,५७,१
१५४ इमां धियं वार्कार्यां च देवीम् १,८८,४
५४ इमां मे मरुतः गिरं । इमं मे वनत हवम् ८,७,९
२५० इमां वाचं अनज पर्वतच्युते ५,५४,१
६४ इमाः उ वः सुदानवः । पिप्युषीः इषः ८,७,१९
१४८ अस्याः धियः प्राविता अथ वृषा गणः १,८७,४
१५३ वाणी । अस्तोभयत् वृथा आसाम् १,८८,६
४३६ ते मा अवन्तु अस्यां पुरोधायाम्, अस्यां प्रतिष्ठायाम्, अस्यां चित्त्याम्, अस्यां आकूत्याम्, अस्यां आशिषि, अस्यां देवहूत्यां स्वाहा । अथर्व०५,२४,६

२३४ इदं सु मे मरुतः हर्यत वचः ५,५४,१५
३८२ इदं सूक्तं मरुतः जुषन्त ७,५८,६
३८३ यं त्रायध्वे इदमिदं । देवासः ७,५९,१
३९१ सान्तपनाः इदं हविः । मरुतः तत् जुजुष्टन ७,५९,९
४४५ यदि इत् इदं मरुतः मारुतेन । अथर्व० ४,२७,७
४८३ इमा हरी वहतः ता नः अच्छ १,१६५,४
[इन्द्रः ३२५३]
४९३ इमा ब्रह्माणि जरिता वः अर्चत् १,१६५,१४
[इन्द्रः ३२६३]
३८७ इमा वः हव्या मरुतः ररे हि कम् ७,५९,५

इधानः

३३५ ये अग्नयः न शोशुचन् इधानाः ६,६६,२

इद्धः

२९४ अयं यः अग्निः मरुतः समिद्धः ५,५८,३

इनः

२५७ पिन्वन्ति उत्सं यत् इनासः अस्वरन् ५,५४,८

इन्दुः

५९ अवीव गिरीणां । सुवानैः मन्दध्वे इन्दुभिः ८,७,१४

इन्द्रः

१३१ धत्ते इन्द्रः नरि अपांसि कर्तवे १,८५,९
४८९ इन्द्रः इत् ईशे एषाम् १,१६५,१०: [इन्द्रः ३२५९]
१६९ इन्द्रः चन त्यजसा वि ह्रुणाति तत् १,१६६,१२
३६९ तत् नः इन्द्रः वरुणः मित्रः । जुषन्त ७,५६,२५
४०० सोमं आ । इन्द्रः सुतस्य गोमतः ८,९४,६
४३४.१ इन्द्रः सेनां मोहयतु । मरुतः घ्नन्तु । अथर्व० ३,१,६
४७१ गुहा चित् इन्द्र वह्निभिः १,६,५: [इन्द्रः ३२४५]
४८२ कुतः त्वं इन्द्र माहिनः सन् १,१६५,३
[इन्द्रः ३२५२]
४८४ इन्द्र स्वधां अनु हि नः बभूथ १,१६५,५
[इन्द्रः ३२५४]
४८६ इन्द्र कत्या मरुतः यत् वशाम १,१६५,७
[इन्द्रः ३२५६]
४९७ त्वं पाहि इन्द्र सहीयसः नॄन् १,१७१,६
[इन्द्रः ३२६८]
४७७ मरुत्वन्तं हवामहे । इन्द्रं आ सोमपीतये १,२३,७
[इन्द्रः ३२४७]
१४९ यत् ईं इन्द्रं शम ऋक्वाणः आशत १,८७,५
३३० तं वः इन्द्रं न सुक्रतुं । वरुणं इव ६,४८,१४

६९ शुष्मं आवन । अनु इन्द्रं वृत्रतूर्ये ८,७,२५
७६ कत् ह नूनं । यत् इन्द्रं अजहातन ८,७,३१
४९७ इन्द्रं दैवीः विशः अनुवर्त्मानः अभवन् ।
वा० य० १७,८६
४७६ इन्द्रेण सं हि दृक्षसे १,६,७; [इन्द्रः ३२४६]
४७९ इन्द्रेण सहसा युजा १,२३,९; [इन्द्रः ३२४९]
४३३ इन्द्रेण युजा प्र मृणीत शत्रून्। अथर्व० १३,१,३
४९० इन्द्राय वृष्णे सुमखाय मह्यम् १,१६५,११
[इन्द्रः ३२६०]
४२४ इन्द्राय त्वा मरुत्वते । वा० य० ७,३६ (द्विः)
४९५ इन्द्रात् भिया मरुतः रेजमानः १,१७१,४
[इन्द्रः ३२६६]
३ अनवद्यैः अभिद्युभिः । गणैः इन्द्रस्य काम्यैः १,६,८
१८१ वयं अद्य इन्द्रस्य प्रेष्ठाः । वयं श्वः १,१६७,१०
१६८ संमिश्लाः इन्द्रे मरुतः परिस्तुभः १,१६६,११

इन्द्र-ज्येष्ठ

४७८ इन्द्रज्येष्ठाः मरुद्गणाः १,२३,८; [इन्द्रः ३२४८]

इन्द्र-वत्

२८४ आ रुद्रासः इन्द्रवन्तः सजोषसः ५,५७,१

इन्द्रियम्

१२४ अर्चन्तः अर्कं जनयन्तः इन्द्रियम् १,८५,२
४८७ वर्धी वृत्रं मरुतः इन्द्रियेण १,१६५,८
[इन्द्रः ३२५७]

इन्धन्वन्

२०३ इन्धन्वभिः धेनुभिः रप्शदूधभिः २,३४,५

इन्व्

४४२ जवं अर्वतां कवयः ये इन्वथ । अथर्व० ४,२७,३

इन्व

२९६ पावकेभिः विश्वमिन्वेभिः आयुभिः ५,६०,८

इयानः

२१२ तान् इयानः महि वरूथं ऊतये २,३४,१४

इरिन्

३२० न येषां इरी सधस्थे ईष्टे आ ५,८७,३

इर्य

२५५ यूयं राजानं इर्यं जनाय । जनयथ ५,५८,४

इव

२८ इह इव शृण्वे एषां । कशाः हस्तेषु यत् वदान् १,३७,३

१३ जुजुर्वान् इव विश्पतिः भिया यामेषु रेजते १,३७,८
२८ वाश्रा इव विद्युत् मिमाति । यत् वृष्टिः १,३८,८
३४ मिमीहि श्लोकं आस्ये । पर्जन्यः इव ततनः १,३८,१४
४० प्रो आरत मरुतः दुर्मदाः इव १,३९,५
१०९ पावकासः शुचयः सूर्याः इव १,६४,२
११० ववक्षुः अध्रिगावः पर्वताः इव १,६४,३
११४ मृगाः इव हस्तिनः खादथ वना १,६४,७
११५ सिंहाः इव नानदति प्रचेतसः १,६४,८
,, पिशाः इव सुपिशः विश्ववेदसः १,६४,८
१२७ चर्म इव उदभिः वि उन्दन्ति भूम १,८५,५
१३० शूराः इव इत् युयुधयः न जग्मयः १,८५,८
,, राजानः इव त्वेषसंदृशः नरः १,८५,८
१४५ वि आनज्रे के चित् उस्राः इव स्तृभिः १,८७,१
१४६ वयः इव मरुतः केन चित् पथा १,८७,२
१४७ प्र एषां अज्मेषु विथुरा इव रेजते भूमिः १,८७,३
४८१ श्येनान् इव ध्रजतः अन्तरिक्षे १,१६५,२; [इन्द्रः ३२५१]
१५८ ऐधा इव यामन् मरुतः तुविस्वनः १,१६६,१
,, युधा इव शक्राः तविषाणि कर्तन १,१६६,१
१६० उक्षन्ति अस्मै मरुतः हिताः इव १,१६६,३
१६२ रथियन्ती इव प्र जिहीते ओषधिः १,१६६,५
१६३ रिणाति पश्वः सुधिता इव बर्हणा १,१६६,६
१६६ रथेषु वः मिथस्पृध्या इव तविषाणि आहिता १,१६६,९
१६८ दूरेदृशः ये दिव्याः इव स्तृभिः १,१६६,११
१६९ दीर्घं वः दात्रं अदितेः इव व्रतम् १,१६६,१२
१७४ सभावती विदथ्या इव सं वाक् १,१६७,३
१७५ साधारण्या इव मरुतः मिमिक्षुः १,१६७,४
१७६ आ सूर्या इव विधतः रथं गात् १,१६७,५
१८५ आ एषां अंसेषु रम्भिणी इव ररभे १,१६८,३
१८७ रेजति त्मना हन्वा इव जिह्वया १,१६८,५
१८८ यत् च्यवयथ विथुरा इव संहितम् १,१६८,६
१८९ वः रातिः । पृथुज्रयी असुर्या इव जञ्जती १,१६८,७
२०१ उक्षन्ते अश्वान् अत्यान् इव आजिषु २,३४,३
२०४ अश्वा इव पिप्यत धेनुं ऊधनि २,३४,६
२१३ ओ षु वाश्रा इव सुमतिः जिगातु २,३४,१५
२२२ अह विद्युतः । मरुतः जज्झतीः इव ५,५२,६
२३८ जीरदानवः । वृष्टी द्यावः यतीः इव ५,५३,५
२४० स्यन्नाः अश्वाः इव अध्वनः विमोचने ५,५३,७
२४९ यतः पूर्वान् इव सखीन् अनु ह्वय ५,५३,१६
२५५ मोषथ वृक्षं कपना इव वेधसः ५,५४,६

चक्षुः इव यन्तं अनु नेषथ सुगम् ५,५४,६
विरोकिणः सूर्यस्य इव रश्मयः ५,५५,३
दिदृक्षेण्यं सूर्यस्य इव चक्षणम् ५,५५,४
मीळ्हुष्मती इव पृथिवी पराहता ५,५६,३
समः। शुभ्रः गौः इव भीमयुः ५,५६,३
मरुतां। गवां सर्गं इव ह्वये ५,५६,५
यमाः इव सुसदृशः सुपेशसः ५,५७,४
प्रत्वक्षसः महिना द्यौः इव उरवः ५,५७,४
अराः इव इत् अचरमाः। प्रृक्षेः पुत्राः ५,५८,५
अहा इव प्रप्र जायन्ते। अकवा ५,५८,५
भर्ता इव गर्भं स्वं इत् शवः धुः ५,५८,७
गवां इव श्रियसे शृङ्गं उत्तमम् ५,५९,३
सत्वाः इव सुभ्वः चारवः स्थन ५,५९,३
मर्याः इव श्रियसे चेतथ नरः ५,५९,३
अश्वाः इव इत् अरुषासः सबन्धवः ५,५९,५
शूराः इव प्रयुधः प्र उत युयुधुः ५,५९,५
मर्याः इव सुवृधः ववृधुः नरः ५,५९,५
रथैः इव प्र भरे वाजयद्भिः ५,६०,१
आपः इव सध्र्यञ्चः धवध्वे ५,६०,३
वराः इव इत् रैवतासः हिरण्यैः ५,६०,४
विभ्राजन्ते। दिवि रुक्मः इव उपरि ५,६१,१२
इन्द्रं न सुक्रतुं। वरुणं इव मायिनम् ६,४८,१४
त्विषिमन्तः अध्वरस्य इव दिद्युत् ६,६६,१०
धुनिः मुनिः इव शर्धस्य धृष्णोः ७,५६,८
अधि इव यत् गिरीणां। यामं अचिध्वम् ८,७,१४
ये द्रप्साः इव रोदसी धमन्ति ८,७,१६
कृष्णः पावकान्। गाय गाः इव चर्कृषत् ८,२०,१९
सहाः ये सन्ति मुष्टिहा इव हव्यः ८,२०,२०
अस्य जोषं आ। प्रातः होता इव मत्सति ८,९४,६
आ त्विषन्त सूरयः। तिरः आपः इव स्रिधः ८,९४,७
आगृत् इव सुदनान् अहि जतवे। अथर्व० ४,२७,१
माता इव पुत्रं पिपृत इह युक्ताः। अथर्व० ५,२६,५
एजाति ग्लहा कन्या इव तुन्ना। अथर्व० ६,२२,३
एरं तुन्दाना पत्या इव जाया। अथर्व० ६,२२,३

इष् (अन्वेषणे, to search)

वि तिष्ठध्वं मरुतः विक्षु इच्छत ७,१०४,१८
इष्यामि वः वृषणः युध्यत आजौ ८,९६,१४
[इन्द्रः ३३३९]

इष् (अन्नम्)

१८४ इषं स्वः अभिजायन्त धूतयः १,१६८,२
१७१;१८२;१९२; ४९७ विद्याम इषं वृजनं जीरदानुम्।
१,१६६,१५;१६७,११;१६८,१०;१७१,६[इन्द्रः ३२३८]
२०५ इषं स्तोतृभ्यः वृजनेषु कारवे २,३४,७
२०६ पिन्वते जनाय रातहविषे महीं इषम् २,३४,८
३२९ धेनुं च। इषं च विश्वभोजसम् ६,४८,१३
४६ प्र यत् वः त्रिष्टुभं इषं दिवः अक्षरत् ८,७,१
४८ पृश्निमातरः। धुक्षन्त पिप्युषीं इषम् ८,७,३
१३९ चर्षणीः अभि। सूरं चित् सस्रुषीः इषः १,८६,५
४३१ अनेद्यः श्रवः आ इषः दधानाः १,१६५,१२;
[इन्द्रः ३२३१]
२८४ प्र सः क्षयं तिरते वि महीः इषः ७,५९,२
६४ घृतं न पिप्युषीः इषः वर्धान् ८,७,१९
१५१ आ वर्षिष्ठया नः इषा। वयः न पप्तत १,८८,१
१७२;१८२;१९२ आ इषा यासिष्ट तन्वे वयाम् १,१६६,१५;
१६७,११;१६८,१०
८३ इषा नः अद्य आ गत पुरुस्पृहः ८,२०,२
८९ गोबन्धवः सुजातासः इषे भुजे ८,२०,८
१८७ धन्वच्युतः इषां न यामनि। पुरुप्रैषाः १,१६८,५

इषित

४३ युष्मेषितः मरुतः मर्त्येषितः। यः अश्वः १,३९,८

इषिरा

१९१ आत् इत् स्वधां इषिरां परि अपश्यन् १,१६८,९

इषु-मत्

२८५ सुधन्वानः इषुमन्तः निषङ्गिणः ५,५७,२

इषुः

४५ परिमन्यवे। इषुं न सृजत द्विषम् १,३९,१०
११७ अस्तारः इषुं दधिरे गभस्त्योः १,६४,१०

इष्कृ

१०७ आतुरस्य नः। इष्कर्त विह्रुतं पुनः ८,२०,२६
१७१ एभिः यज्ञेभिः तत् अभि इष्टिं अश्याम् १,१६६,१४
३३८ नक्षे नरः दिष्टये। पुष्टिमतः स्ववसे। ५,८७,२

इष्मिन्

१५० ते वाशीमन्तः इष्मिणः अभीरवः १,८७,६
३३३ स्वनुस्वनाः हिरण्ययाः स्वयुक्ताः इष्मिणः ५,८७,५
३५५ स्वयुक्ताः इष्मिणः सुनिष्काः ७,५६,११
३६३ अप तिष्ठे इष्मिणः नरः चेकितान ५,५७,१३

इह

८ इह इव शृण्वे एषां। कशाः हस्तेषु यत् वदान् १,३७,३
३५ अस्मे वृद्धाः असन् इह १,३८,१५
२८१ स्यः वाजी। इह स्म धायि दर्शतः ५,५६,७
४४९ इह प्रसत्तः वि चयत् कृतं नः ५,६०,१
३५३ मा वः दुर्मतिः इह प्रणक् नः ७,५६,९
३८८ सौम्ये मधौ। स्वाहा इह मादयाध्वै ७,५९,६
३९३ इहइह वः स्वतवसः यज्ञं मरुतः आ वृणे ७,५९,११
४२८ देवाः अवसा आ अगमन् इह। वा० य० २५,२०
४३२ मातेव पुत्रं पिपृत इह युक्ताः। अथर्व० ५,२६,५

ई

२६५ ईयन्ते अश्वैः सुयमेभिः आशुभिः ५,५५,१
२०९ ब्रह्मण्यन्तः शंस्यं राधः ईमहे २,३४,११
२१५ आ त्वेषं उग्रं अवः ईमहे वयम् ३,२६,५
२१६ अग्नेः भामं मरुतां ओजः ईमहे ३,२६,६
२४६ अस्मभ्यं तत् धत्तन यत् वः ईमहे ५,५३,१३
३८१ अव तत् एनः ईमहे तुराणाम् ७,५८,५

ईङ्ख्

४७१ ये ईङ्खयन्ति पर्वतान्। तिरः समुद्रम् १,१९,७
[अग्निः २४४४]

ईजानः

३८४ अहनि प्रिये। ईजानः तरति द्विषः ७,५९,२
३३२ प्रणीतिः अस्तु सूनृता। मर्त्यस्य वा ईजानस्य ६,४८,२०

ईड्

४४९ ईळे अग्निं स्ववसं नमोभिः। चयत् कृतं नः ५,६०,१

ईदृक्

४२४.२ ईदृङ् च अन्यादृङ् च। वा० य० १७,८१
४४५ यदि देवाः दैव्येन ईदृक् आर। अथर्व० ४,२७,६

ईदृक्ष

४२५ ईदृक्षासः एतादृक्षासः। आ इतन यज्ञे अस्मिन्
वा० य० १७,८४

ईदृश

४३४ यूयं उग्राः मरुतः ईदृशे स्थ। अथर्व० ३,१,२

ईम्

(३१) १,३८,११; (१३३) १,८५,११; (१४९) १,८७,५; (१७६,१७८-७९) १,१६७,५.७-८ (द्विः); (१९४) १,१७१,२; (२५३) ५,५४,४; (३१२) ५,६१,११; (३४५, ३६५) ७,५६,१.२१;

ईर्

३५८ प्र बुध्न्या वः ईरते महांसि ७,५६,१४
५२ अरुणप्सवः। मित्राः यामेभिः ईरते ८,७,७
६२ उत् ऊ स्वानेभिः ईरते। उत् रथैः ८,७,१७
१९० यत् अभ्रियां वाचं उदीरयन्ति १,१६८,८
४८ उत् ईरयन्त वायुभिः। वाश्रासः ८,७,३
२६९ उत् ईरयथ मरुतः समुद्रतः ५,५५,५
४५९ उत् ईरयत मरुतः समुद्रतः। अथर्व० ४,१५,५
८५ प्र धन्वानि ऐरत शुभ्रखादयः ८,२०,४

ईवत्

३६२ यः ईवतः वृषणः अस्ति गोपाः ७,५६,१८

ईश्

३२० न येषां इरी सधस्थे ईष्टे आ ५,८७,३
४४५ यूयं ईशिध्वे वसवः तस्य निष्कृतेः। अथर्व० ४,२७,६
४८९ यानि च्यवं इन्द्रः इत् ईशे एषाम् १,१६५,१०
[इन्द्रः ३२५१]
२९२ उत ईशिरे अमृतस्य स्वराजः ५,५८,१
४७९ मा नः दुःशंसः ईशत १,२३,९ [इन्द्रः ३२४१]

ईशानः

१४८ अया ईशानः तविषीभिः आवृतः १,८६,४
४४३ ये अद्भिः ईशानाः मरुतः चरन्ति। अथर्व० ४,२७,३
४४४ ये अद्भिः ईशानाः मरुतः वर्षयन्ति। अथर्व० ४,२७,४

ईशान-कृत्

११२ ईशानकृतः धुनयः रिशादसः। वातान् अक्रत १,६४,५

ईष्

४३ मरुतः। आ यः नः अभ्वः ईषते १,३९,८
३३७ न ये ईषन्ते जनुषः अया नु ६,६६,४

ईषमाणः

४९५ अस्मात् तविषात् ईषमाणः १,१७१,४ [इन्द्रः ३२६६]

उक्तम्

३८२ इदं सूक्तं मरुतः जुषन्त। द्वेषः युयोत ७,५८,६
१९३ सूक्तेन भिक्षे सुमतिं तुराणाम् १,१७१,१

उक्थम्

१३८ दिविष्टिषु। उक्थं मदः च शस्यते १,८६,४
४८३ आ शासते प्रति हर्यन्ति उक्था १,१६५,४
[इन्द्रः ३२४३]

३३७ भूरि चक्र मरुतः पित्र्याणि उक्थानि ७,५६,२३
३३९ सः सहस्रावी हवते वः उक्थैः ७,५६,१८

उक्थ्यम्

३४ मिमीहि श्लोकं आस्ये । गाय गायत्रं उक्थ्यम् १,३८,१४
१११ धनस्पृतं उक्थ्यं विश्वचर्षणिम् । तोकं पुष्येम १,६४,१४

उक्ष्

१६० उक्षन्ति अस्मै मरुतः हिताः इव १,१६६,३
२०१ उक्षन्ते अश्वान् अत्यान् इव आजिषु २,३४,३
३०० उक्षन्ते अश्वान् तरुषन्ते आ रजः ५,५९,१
१४३ आ वृत्तं । उक्षत मधुवर्णं अर्चते १,८७,२
२१४ बृहदुक्षः मरुतः विश्ववेदसः । प्र वेपयन्ति ३,२६,४

उक्षन्

१०९ ते जज्ञिरे दिवः ऋष्वासः उक्षणः १,६४,२
१८४ आसा गावः वन्द्यासः न उक्षणः १,१६८,२
२६९ ते स्यन्द्रासः न उक्षणः अति स्कन्दन्ति शर्वरीः ५,५२,३
७१ परावतः उक्षणः रन्ध्रं अयातन ८,७,२६

उक्षमाण

२९१;२९९ बृहद्गिरयः बृहत् उक्षमाणाः ५,५७,८;५८,८
३३७ अनु श्रिया तन्वं उक्षमाणाः ६,६६,४

उक्षित

१२४ ते उक्षितासः महिमानं आशत १,८५,२
२८७ साकं जाताः सुभ्वः साकं उक्षिताः ५,५५,३
२७२ नूनं एनां [illegible] अनुक्षितानाम् ५,५६,५

उग्रः

४८५ अयं हि उग्रः [illegible] १,१६५,६
[इन्द्रः ३२५५]
४८९ अयं हि उग्रः [illegible] १,१६५,१०
[इन्द्रः ३२५९]
४९६ उग्रः उग्रेभिः स्थविरः सहोदाः १,१७१,५
[इन्द्रः ३२६६]
३६७ [illegible] उग्रः [illegible] ७,५६,२३
४२६,१ उग्रः [illegible] ३६,७
४६८ ते उग्राः [illegible] १,१६,१; [अग्निः ३६६२]
१९३ [illegible] उग्राः [illegible] १,१६६,६
१६५ [illegible] उग्राः [illegible] १,१६६,८
२८३ [illegible] उग्राः [illegible] ५,५३,३
१५० [illegible] उग्राः [illegible] ५,६०,३
३३९ [illegible] उग्राः [illegible] ६,६६,६

३४४ गिरयः न स्वतवः उग्राः अस्पृध्रन् ६,६६,११
३५० स्थिरा चित् [illegible] उग्राः ७,५६,६
३७० [illegible] उग्राः ७,५७,१
४३४ यूयं उग्राः मरुतः ईदृशे स्थ । अथर्व० ३,१,२
४३३ यूयं उग्राः मरुतः पृश्निमातरः । अथर्व० १३,१,३
९३ ते उग्रासः वृषणः उग्रबाहवः ८,२०,१२
२२५ आ त्वेषं उग्रं अवः ईमहे वयम् ३,२६,५
३५१ उग्रं वः ओजः स्थिरा शवांसि ७,५६,७
८४ शुष्मं उग्रं मरुतां [illegible] ८,२०,३
४४६ मरुतः [illegible] उग्रम् । अथर्व० ४,२७,७
२२८ नु चित् [illegible] उग्रान् ३,३६,५
४३६ उग्रः उग्रेभिः स्थविरः सहोदाः १,१७१,५
[इन्द्रः ३२६७]
१२ [illegible] उग्राय [illegible] १,३९,७

उग्र-बाहुः

९३ ते उग्रासः वृषणः उग्रबाहवः ८,२०,१२

उज्जेषिन्

४४३ [illegible] उज्जेषी । [illegible] १,९,८२

उत्

[illegible]

उत्-ईरय्

१६० [illegible] उदीरयन्ति १,१६६,८

उत

[illegible]

उतो

२२८ उतो [illegible]
४०० उतो [illegible] ८,९४,७

उत्तम

३०२ गवां इव श्रियसे शृङ्गं उत्तमम् ५,५९,३
४५४ यत् उत्तमे मरुतः मध्यमे वा । दिवि स्थ ५,६०,६

उत्तरा

८७ वः यातवे । द्यौः जिहीते उत्तरा बृहत् ८,२०,६

उत्तरात्

४५५ दिवः वहध्वे उत्तरात् अधि स्नुभिः ५,६०,७

उत्सधिः

१५४ ऊर्ध्वं नुनुद्रे उत्सधिं पिबध्यै १,८८,४
२८४ तृष्णजे न दिवः उत्साः उदन्यवे ५,५७,१
४६१;४६३ उत्साः अजगराः उत ४,१५,७.९
११३ उत्सं दुहन्ति स्तनयन्तं अक्षितम् १,६४,६
१३३ असिञ्चन् उत्सं गोतमाय तृष्णजे १,८५,११
२१८ कुभन्यवः । उत्सं आ कीरिणः नृतुः ५,५२,१२
२५७ पिन्वन्ति उत्सं यत् इनासः अस्वरन् ५,५४,८
३७० पिन्वन्ति उत्सं यत् अयासुः उग्राः ७,५७,१
५५ दुदुहे वज्रिणे मधु । उत्सं कवन्धं उद्रिणम् ८,७,१०
६१ अनु वृष्टिभिः उत्सं दुहन्तः अक्षितम् ८,७,१६
४४१ उत्सं अक्षितं व्यचन्ति ये सदा । अथर्व० ४,२७,२

उदधिः

४६० अभि क्रन्द स्तनय अर्दय उदधिम् । अथर्व० ४,१५,६

उदन्

१२७ चर्म इव उदभिः वि उन्दन्ति भूम १,८५,५
४१९ आपः न निम्नैः उदभिः जिगत्नवः १०,७८,५

उदन्युः

२५१ प्र वः मरुतः तविषाः उदन्यवः ५,५४,२
२८४ तृष्णजे न दिवः उत्साः उदन्यवे ५,५७,१

उदप्रुत्

४३९ उदप्रुतः मरुतः तान् इयर्त । अथर्व० ६,२२,३

उदवाहः

२९४ आ वः यन्तु उदवाहासः अद्य ५,५८,३
२९ दिवा चित् तमः कृण्वन्ति । पर्जन्येन उदवाहेन १,३८,९

उदित

२५९ सूर्ये उदिते मदथ दिवः नरः ५,५४,१०

उदच्

४२३ यः उदचि यज्ञे अध्वरेष्ठाः । ददाशत् १०,७८,७

उदोजस्

२५२ स्तनयत् अमाः रभसाः उदोजसः ५,५४,३

उद्भिद्

३०५ ते अज्येष्ठाः अकनिष्ठासः उद्भिदः ५,५९,६

उद्रिन्

५५ दुदुहे वज्रिणे मधु । उत्सं कवन्धं उद्रिणम् ८,७,१०

उन्द्

१२७ चर्म इव उदभिः वि उन्दन्ति भूम १,८५,५
२५७ वि उन्दन्ति पृथिवीं मध्वः अन्धसा ५,५४,८

उप

(२५) १,३८,५; (१४६) १,८७,२; (४८४) १,१६५,४ [इन्द्रः ३२५४]; (१५९) १,१६६,२; (१९४) १,१७१,१; (१९८) २,३०,११; (२१२) २,३४,१४; (२३६) ५,५३,३; (२५६) ५,५४,७; (२६९) ५,५५,५; (३२७) ६,४८,११; (५६,७२) ८,७,११.२७; (९५,९९,१०३) ८,२०,१४. १८ २२; (४७४) ८,१०३,१४ [अग्निः २४४७]; (४५८) अथर्व० ४,१५,४

उपम

२९६ पृश्नेः पुत्राः उपमासः रभिष्ठाः ५,५८,५
४४८ पदं यत् विष्णोः उपमं निधायि ५,३,३

उपयाम-गृहीत

४२४ उपयामगृहीतः असि इन्द्राय त्वा मरुत्वते । वा० य० ७,३६
” उपयामगृहीतः असि मरुतां त्वा ओजसे । वा० य० ७,३६

उपरा

१७४ हिरण्यनिर्णिक् उपरा न ऋष्टिः १,१६७,३

उपरि

३१३ विभ्राजन्ते । दिवि रुक्मः इव उपरि ५,६१,१२

उप-शिश्रियाण

३५७ वक्षःसु रुक्माः उपशिश्रियाणाः ७,५६,१३

उपस्थः

३६९ शर्मन् स्याम मरुतां उपस्थे ७,५६,२५
३९६ यस्याः देवाः उपस्थे व्रता विश्वे धारयन्ते ८,९४,२

उपह्वरः

४९८ उपह्वरे नद्यः अंशुमत्याः ८,९६,१४; [इन्द्रः ३२३३]
१४६ उपह्वरेषु यत् अचिध्वं ययिम् । वयः इव १,८७,२

उपो
४१ उपो रथेषु पृषतीः अयुग्ध्वम् १,३९,६

उब्ज्
१३१ अहन् वृत्रं निः अपां औब्जत् अर्णवम् १,८५,९

उभ
३३९ धृष्णुसेनाः। उभे युजन्त रोदसी सुमेके ६,६६,६
८५ तिष्ठत् दुच्छुना उभे युजन्त रोदसी ८,२०,४

उभय
३०६ अश्वासः एषां उभये यथा विदुः ५,५९,७

उरु
२८७ प्रत्वक्षसः महिना द्यौः इव उरवः ५,५७,४
३७० ये रेजयन्ति रोदसी चित् उर्वी ७,५७,१
१२८ सीदत आ बर्हिः उरु वः सदः कृतम् १,८५,६
१२९ नाकं तस्थुः उरु चक्रिरे सदः १,८५,७
२२३ ववृधन्त। ये उरौ अन्तरिक्षे आ ५,५२,७

उरु-क्रमः
३२१ सः चक्रमे महतः निः उरुक्रमः ५,८७,४

उरु-क्षयः
४४७ उरुक्षयाः सगणाः मानुषासः। अथर्व० ७,८२,३

उरुष्यति (नामधातुः)
३२३ ते नः उरुष्यत निदः शुशुक्वांसः ५,८७,६

उर्विया
२६६ बृहत् महान्तः उर्विया वि राजथ ५,५५,२

उशना
७६ उशना यत् परावतः। उक्ष्णः रन्ध्रं अयातन ८,७,२६

उषस्
२१० उषाः न रामीः अरुणैः अप ऊर्णुते २,३४,१२
३०७ सं दानुचित्राः उषसः यतन्ताम् ५,५९,८
२१० ते नः हिन्वन्तु उषसः व्युष्टिषु २,३४,१२
४२१ उषसां न केतवः अध्वरश्रियः १०,७८,७

उस्र
१४५ वि जानन्ति के चित् उस्राः इव स्तृभिः १,८७,१
४९६ येन मानासः चितयन्ते उस्राः १,१७१,५
[इन्द्रः ३२६७]

उस्रिन्
२४७ पृथ्वी यं योः आपः उस्रि भेषजम् ५,५३,१४

उस्रिय
२९७ अव उस्रियः वृषभः क्रन्दतु द्यौः ५,५८,६
४७१ अविन्दः उस्रियाः अनु १,६,५; [इन्द्रः ३२४५]

उष्टिः
४९६ येन मानासः चितयन्ते उस्राः व्युष्टिषु १,१७१,५
[इन्द्रः ३२६७]
४११ ज्योतिष्मन्तः न भासा व्युष्टिषु १०,७७,५

ऊत
३८० युष्मा ऊतः विप्रः मरुतः शतस्वी ७,५८,४
" युष्मा ऊतः अर्वा सहुरिः सहस्री ७,५८,४
" युष्मा ऊतः सम्राट् उत हन्ति वृत्रम् ७,५८,४

ऊतिः
२१३ अर्वाची सा मरुतः या वः ऊतिः २,३४,१५
३८६ नहि वः ऊतिः पृतनासु मर्धति ७,५९,४
१२० तस्थौ वः ऊती मरुतः यं आवत १,६४,१३
१९५ चित्रः यामः। चित्रः ऊती सुदानवः १,१७२,१
३७६ आ स्तुतासः मरुतः विश्वे ऊती ७,५७,७
३९१ हविः जुजुष्टन। युष्माक ऊती रिशादसः ७,५९,९
३९२ आ गत। युष्माक ऊती सुदानवः ७,५९,१०
२५६ न अस्य रायः उप दस्यन्ति न ऊतयः ५,५४,७
४३ वि ओजसा वि युष्माकाभिः ऊतिभिः १,३९,८
४४ असामिभिः मरुतः आ नः ऊतिभिः गन्त १,३९,९
३७९ प्र नः स्पार्हाभिः ऊतिभिः तिरेत ७,५८,३
१०५ मयः नः भूत ऊतिभिः मयोभुवः ८,२०,२४
२१२ तान् इयानः महि वरूथं ऊतये २,३४,१४
५१ युष्मान् उ नक्तं ऊतये। हवामहे ८,७,६
४४० आशून् इव सुयमान् अह्ने ऊतये। अथर्व० ४,२७,१
९६ सुभगः सः वः ऊतिषु। आस मरुतः ८,२०,१५
२३४ तत् वः यामि द्रविणं सद्य ऊतयः ५,५४,१५
४१६ यतासः न स्वयुजः सद्य ऊतयः १०,७८,२

ऊधस्
११२ दुहन्ति ऊधः दिव्यानि धूतयः १,६४,५
२०८ पृश्न्याः यत् ऊधः अपि आपयः दुदुः २,३४,१०
३३४ सहस्र ह्रकं दुदुहे पृश्निः ऊधः ६,६६,१
३४८ पृश्निः यत् ऊधः मही जभार ७,५६,४
२०० वृषा अजनि पृश्न्याः शुक्रे ऊधनि २,३४,२
२०४ अश्वामिव पिप्यत धेनुं ऊधनि २,३४,६
२०३ रुधन्वभिः धेनुभिः रप्शदूधभिः २,३४,५

ऊमः

१६० यस्मै ऊमासः अमृताः अरासत १,१६६,३
२२८ ऊमाः आसन् दृशि त्विषे ५,५२,१२
४२४ ते हि यज्ञेषु यज्ञियासः ऊमाः १०,७७,८

ऊर्जम्

४३८ ऊर्जं च तत्र सुमतिं च पिन्वत । अथर्व० ६,२२,२

ऊर्णा

२२५ ते परुष्ण्यां । ऊर्णाः वसत शुन्ध्यवः ५,५२,९

ऊर्णु

२१० उषाः न रामीः अरुणैः अप ऊर्णुते २,३४,१२

ऊर्ध्व

१५४ ऊर्ध्वं नुनुद्रे उत्साधिं पिबध्यै १,८८,४
१३२ ऊर्ध्वं नुनुद्रे अवतं ते ओजसा १,८५,१०
१९७ ऊर्ध्वान् नः कर्त जीवसे १,१७२,३
१५३ मेधा वना न कृणवन्ते ऊर्ध्वा १,८८,३
४९४ ऊर्ध्वा नः सन्तु कोम्या वनानि १,१७१,३
[इन्द्रः ३२६५]

ऊर्मिः

१८४ सहस्रियासः अपां न ऊर्मयः १,१६८,२

ऊह्

२१० ते दशग्वाः प्रथमाः यज्ञं ऊहिरे २,३४,१२

ॐ

(१५) १,३७,१०; (१८३) १,१६८,१; (२७१) ५,५५,७; (२९२) ५,५८,१; (५१–५२,६२,६४,६७) ८,७,६–७.१७ (द्विः). १९.२२ (द्विः); (१००) ८.२०,१९

ॐऽत्यूँ

४२५ ईदृक्षासः एतादृक्षासः ॐऽत्यूँ । वा० य० १७,८४

ऋ

४८३ शुष्मः इयर्ति प्रभृतः मे अद्रिः १,१६५,४
[इन्द्रः ३२५३]
२२२ अह विद्युतः । भानुः अर्त त्मना दिवः ५,५२,६
३६५ मा वः दात्रात् मरुतः निः अराम ७,५६,२१
४४५ यदि देवाः दैव्येन ईदृक् आर । अथर्व० ४,२७,६
४० प्रो आरत मरुतः दुर्मदाः इव १,३९,५
[illegible] नः रयिं । इयर्त मरुतः दिवः ८,७,१३
[illegible] मरुतः तान् इयर्त । अथर्व० ६,२२,३

ऋक्वन्

१५० ते रश्मिभिः ते ऋक्वभिः सुखादयः १,८७,६
२१७ श्यावाश्व । अर्च मरुद्भिः ऋक्वभिः ५,५२,१
४५६ अग्ने मरुद्भिः शुभयद्भिः ऋक्वभिः ५,६०,८

ऋक्वाण

१४९ यत् ईं इन्द्रं शमि ऋक्वाणः आशत १,८७,५

ऋक्षः

२७७ ऋक्षः न वः मरुतः शिमीवान् अमः ५,५६,३

ऋच्

४१३ यः उदृचि यज्ञे अध्वरेष्ठाः । ददाशत् १०,७७,७

ऋजिप्य

२०२ ऋजिप्यासः न वयुनेषु धूर्षदः २,३४,४

ऋजीषिन्

१४५ अनानताः अविथुराः ऋजीषिणः १,८७,१
१९९ अग्नयः न शुशुचानाः ऋजीषिणः २,३४,१
११९ ऋजीषिणं वृषणं सश्चत श्रिये १,६४,१२

ऋञ्ज्

४ आ गहि । सं अस्मिन् ऋञ्जते गिरः १,६,९
८ कशाः हस्तेषु । नि यामन् चित्रं ऋञ्जते १,३७,३
३२२ येन सहन्तः ऋञ्जत स्वरोचिषः ५,८७,५

ऋञ्जत्

१९६ आरे सा । मरुतः ऋञ्जती शरुः १,१७२,२

ऋण-यावन्

१४८ असि सत्यः ऋणयावा अनेद्यः १,८७,४

ऋतम्

३०० अर्च दिवे प्र पृथिव्यै ऋतं भरे ५,५९,१
४१६ सुशर्माणः न सोमाः ऋतं यते १०,७८,२
३५६ ऋतेन सत्यं ऋतसापः आयन् ७,५६,१२
२११ रुद्राः ऋतस्य सदनेषु ववृधुः २,३४,१३
६६ वृक्तबर्हिषः । शर्धान् ऋतस्य जिन्वथ ८,७,२१
४९२ एषां भूत नवेदाः मे ऋतानाम् १,१६५,१३
[इन्द्रः ३२६२]

ऋतः

४२४.२ ऋतः च सत्यः च । वा० य० १७,८२

ऋतजात

३१५ मदन्ति धूतयः । ऋतजाताः अरेपसः ५,६१,१४

ऋतजित्

४२४.४ ऋतजित् च सत्यजित् च । वा० य० १७,८३

ऋतज्ञ

२९१; २९९ तुविमघासः अमृताः ऋतज्ञाः ५,५७,८; ५८,८

ऋतपा

४२४.१ शुक्रः च ऋतपाः च । वा० य० १७,८०

ऋत-युः

२६१ सरन्ति घोषं विततं ऋतयवः ५,५४,१२

ऋत-साप्

३५६ ऋतेन सत्यं ऋतसापः आयन् ७,५६,१२

ऋतिः

३७७ नक्षन्ते नाकं निर्ऋतेः अवंशात् ७,५८,१

ऋति-सह

१२२ ऋतिसहं रयिं अस्मासु धत्त १,६४,१५

ऋतुः

५ मरुतः पिबत ऋतुना । पोत्रात् १,१५,२

ऋध्

४४९ प्रदक्षिणित् मरुतां स्तोमं ऋध्याम् ५,६०,१

ऋधक्

३७३ ऋधक् सा वः मरुतः दिद्युत् अस्तु ७,५७,४

ऋभुक्षन्

१८१ तत् नः ऋभुक्षाः नरां अनु स्यात् १,१६७,१०
५४ इमं स्तोमं ऋभुक्षणः । वनत ८,७,९
५७ रुद्राः ऋभुक्षणः दमे । उत प्रचेतसः मदे ८,७,१२
८३ वीळुपविभिः मरुतः ऋभुक्षणः ८,२०,२

ऋभ्वस्

२२४ उत् शंस । सत्यशवसं ऋभ्वसम् ५,५२,८

ऋष्

४०१ तिरः आपः इव स्रिधः । अर्षन्ति पूतदक्षसः ८,९४,७

ऋषभः

४५९ महर्षभस्य नदतः नभस्वतः । अथर्व० ४,१५,५

ऋषि-द्विष्

४५ ऋषिद्विषे परिमन्यवे । इषुं न सृजत द्विषम् १,३९,१०

ऋषिः

२२६ तं ऋषे मारुतं गणं नमस्य रमय गिरा ५,५२,१३
२३० अच्छ ऋषे मारुतं गणम् ५,५२,१४
३०७ ऋषे रुद्रस्य मरुतः गृणानाः ५,५९,८
२५६ ऋषिं वा यं राजानं वा सुसूदथ ५,५४,७
२६३ यूयं ऋषिं अवथ सामविप्रम् ५,५४,१४

ऋष्टिः

१७४ हिरण्यनिर्णिक् उपरा न ऋष्टिः १,१६७,३
१११ अंसेषु एषां नि मिमृक्षुः ऋष्टयः १,६४,४
२६० अंसेषु वः ऋष्टयः पत्सु खादयः ५,५४,११
२८९ ऋष्टयः वः मरुतः अंसयोः अधि ५,५७,६
९२ रुक्मासः अधि बाहुषु । दविद्युतति ऋष्टयः ८,२०,११
२२२ नरः । ऋष्वा ऋष्टीः असृक्षत ५,५२,६
७ ये पृषतीभिः ऋष्टिभिः । अजायन्त स्वभानवः १,३७,२
११५ क्षपः जिन्वन्तः पृषतीभिः ऋष्टिभिः १,६४,८
१२६ वि ये भ्राजन्ते सुमखासः ऋष्टिभिः १,८५,४
१६१ चित्रः वः यामः प्रयतासु ऋष्टिषु १,१६६,४
११८ शुभ्रकृतः मरुतः भ्राजदृष्टयः १,६४,११
१४७ ते क्रीळयः धुनयः भ्राजदृष्टयः १,८७,३
१८६ अच्युच्युतः । मरुतः भ्राजदृष्टयः १,१६८,४
२०३ अध्वस्मभिः पथिभिः भ्राजदृष्टयः २,३४,५
२६५ प्रयज्यवः मरुतः भ्राजदृष्टयः ५,५५,१
४२१ सिन्धवः न ययियः भ्राजदृष्टयः १०,७८,७
३४४ तं वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिम् ६,६६,११

ऋष्टि-मत्

२८५ वाशीमन्तः ऋष्टिमन्तः मनीषिणः ५,५७,२
४५१ यत् क्रीळथ मरुतः ऋष्टिमन्तः ५,६०,३
१५१ रथेभिः यात ऋष्टिमद्भिः अश्वपर्णैः १,८८,१

ऋष्टि-विद्युत्

१८७ कः वः अन्तः मरुतः ऋष्टिविद्युतः १,१६८,५
२२९ ये ऋष्वाः ऋष्टिविद्युतः । कवयः सन्ति ५,५२,१३

ऋष्वः

१०९ ते जज्ञिरे दिवः ऋष्वासः उक्षणः १,६४,२
२२२ आ रुक्मा नरः । ऋष्वाः ऋष्टीः असृक्षत ५,५२,६
२२९ ये ऋष्वाः ऋष्टिविद्युतः । कवयः सन्ति ५,५२,१३

एकः

४८२ एकः यासि सत्पते किं ते इत्था १,१६५,३
[इन्द्रः ३२५२]
४८५ यत् मां एकं समधत्त अहिहत्ये १,१६५,६
[इन्द्रः ३२५५]

९४ नाम त्वेषं शश्वतां **एकं** इत् भुजे ८,२०,१३
४८९ **एकस्य** चित् मे विभु अस्तु ओजः १,१६५,१० [इन्द्रः ३२५९]
३०८ के स्थ। ये **एकएकः** आयय ५,६१,१
२३३ शाकिनः। **एकमेका** शता ददुः ५,५२,१७

एज्

३०१ अमात् एषां भियसा भूमिः **एजति** ५,५९,२
४३९ **एजाति** ग्लहा कन्या इव तुन्ना। अथर्व० ६,२२,३
८५ शुभ्रखादयः। यत् **एजथ** स्वभानवः ८,२०,४
४३८ यत् **एजथ** मरुतः रुक्मवक्षसः। अथर्व० ६,२२,२

एत

१६७ अंसेषु **एताः** पविषु क्षुराः अधि १,१६६,१०

एतद्

१७२,१८२;१९२ **एषः** वः स्तोमः मरुतः इयं गीः १,१६६,१५;१६७,११;१६८,१०
१९४ **एषः** वः स्तोमः मरुतः नमस्वान् १,१७१,२
४२४ इन्द्राय त्वा मरुत्वते **एषः** ते योनिः। वा० य० ७,३६
४८० कया मती कुतः एतासः **एते** १,१६५,१ [इन्द्रः ३२५०]
४९१ एव इत् **एते** प्रति मा रोचमानाः १,१६५,१२ [इन्द्रः ३२६१]
३०७ आ अचुच्यवुः दिव्यं कोशं **एते** ५,५९,८
४५३ अज्येष्ठासः अकनिष्ठासः **एते** ५,६०,५
२९४ **एतं** जुषध्वं कवयः युवानः ५,५८,३
३५८ सहस्रियं दम्यं भागं **एतं** जुषध्वम् ७,५६,१४
४८४ महोभि **एतान्** उप युज्महे नु १,१६५,५ [इन्द्रः ३२५४]
२३५ आ **एतान्** रथेषु तस्थुषः। कः शुश्राव ५,५३,२
२२२ अनु **एनान्** अह विद्युतः। भानुः अर्त ५,५२,६
२२६ **एतेभिः** मह्यं नामभिः। यज्ञं ओहते ५,५२,१०
१५६ **एषा** स्या वः मरुतः अनुभर्त्री १,८८,६
४८७ अहं **एताः** मनवे विश्वचन्द्राः १,१६५,८ [इन्द्रः ३२५७]
१५५ **एतत्** त्यत् न योजनं अचेति १,८८,५
३४८ **एतानि** धीरः निण्या चिकेत ७,५६,४
१९३ प्रति वः **एना** नमसा अहं एमि १,१७१,१
२१२ उप घ इत् **एना** नमसा गृणीमसि २,३४,१४
२४५ रातहव्याय प्र ययुः। **एना** यामेन मरुतः ५,५३,१२

एतः

२५४ **एताः** न यामे अगृभीतशोचिषः ५,५४,५
४०८ दिवः पुत्रासः **एताः** न येतिरे १०,७७,२

एतशः

१८७ पुरुप्रैषाः अहन्यः न **एतशः** १,१६८,५

एतादृक्ष

४२५ ईदृक्षासः **एतादृक्षासः**। आ इतन। वा०य० १७,८५

एतावत्

६० **एतावतः** चित् एषां सुम्नं भिक्षेत ८,७,१५
३७२ न **एतावत्** अन्ये मरुतः यथा इमे ७,५७,३

एनस्

३८१ अव तत् **एनः** ईमहे तुराणाम् ७,५८,५
४४७ ते असत् पाशान् प्र मुञ्चन्तु **एनसः**। अथर्व० ७,८२,१
३२४ येषां अज्मेषु आ महः। शर्धांसि अद्भुतैनसाम् ५,८७,७
३४० **अनेनः** वः मरुतः यामः अस्तु ६,६६,७

एनी

२४० अश्वाः इव। वि यत् वर्तन्ते **एन्यः** ५,५३,७

एमन्

३०१ दूरेदृशः ये चितयन्ते **एमभिः** ५,५९,२

एरुः

४३९ **एरुं** तुन्दाना पत्या इव जाया। अथर्व० ६,२२,३

एव

४९१ **एव** इत् एते प्रति मा रोचमानाः १,१६५,१२ [इन्द्रः ३२६१]

एवम्

४२७ **एवं** इमं यजमानं अनुऽवर्त्मानः भवन्तु। वा० य० १७,८६

एवयामरुत्

३१८ मरुत्वते गिरिजाः **एवयामरुत्** ५,८७,१
३१९ प्र विद्मना ब्रुवते **एवयामरुत्** ५,८७,२
३२० सुशुक्वानः सुभ्वः **एवयामरुत्** ५,८७,३
३२१ समानस्मात् सदसः **एवयामरुत्** ५,८७,४
३२२ त्वेषः ययिः तविषः **एवयामरुत्** ५,८७,५
३२३ त्वेषं शवः अवतु **एवयामरुत्** ५,८७,६
३२४ तुविद्युम्नाः अवन्तु **एवयामरुत्** ५,८७,७
३२५ श्रोत हवं जरितुः **एवयामरुत्** ५,८७,८
३२६ श्रोत हवं अरक्षः **एवयामरुत्** ५,८७,९

एवयावन्

२०९ तान् वः महः मरुतः एवयान्नः २,३४,११

एवयावरी

३२८ मरुतां तुराणां। या सुम्नैः एवयावरी ६,४८,१२

एवः

१६१ प्र वः एवासः स्वयतासः अध्रजन् १,१६६,४

एषः

२०९ विष्णोः एषस्य प्रभृथे हवामहे २,३४,११
८४ विष्णोः एषस्य मीळ्हुषाम् ८,२०,३
२३२ प्र ये मे बन्ध्वेषे। पृश्निं वोचन्त मातरम् ५,५२,१६
४६० आशीरैषी कृशगुः एतु अस्तम्। अथर्व० ४,१५,६

ऐधा

१५८ ऐधा इव यामन् मरुतः तुविष्वणः १,१६६,१

ओ

(४९३) १,१६५,१४ [इन्द्रः ३२६३]; (२१३) २,३४,१५; (३८७) ७,५९,५; (७८) ८,७,३३

ओकस्

३६८ अध स्वं ओकः अभि वः स्याम ७,५६,२४
११७ विश्ववेदसः रयिभिः समोकसः १,६४,१०

ओजस्

४८९ एकस्य चित् मे विभु अस्तु ओजः १,१६५,१० [इन्द्रः ३२५९]
३५१ उग्रं वः ओजः स्थिरा शवांसि ७,५६,७
२८९ सहः ओजः बाह्वोः वः बलं हितम् ५,५७,६
४५ अस्मानि ओजः विन्तृप हुदानवः १,३९,१०
२१६ अग्नेः भामं मरुतां ओजः ईमहे ३,२६,६
३५० श्रिया संमिश्लाः ओजोभिः उग्राः ७,५६,६
४६८ अर्कं आनृचुः। अनाधृष्टासः ओजसा १,१९,४ [अग्निः २४४१]
४७२ आ ये तन्वन्ति रश्मिभिः। तिरः समुद्रं ओजसा १,१९,८ [अग्निः २४४५]
४३ वि तं युयोत शवसा वि ओजसा १,३९,८
१२६ प्रच्यवयन्तः अच्युता चित् ओजसा १,८५,४
१३२ ऊर्ध्वं नुनुद्रे अवतं ते ओजसा १,८५,१०
२२५ पव्या रथानां। अद्रिं भिन्दन्ति ओजसा ५,५२,९
२३० दिवः वा धृष्णवः ओजसा ५,५२,१४
२६६ उत अन्तरिक्षं ममिरे वि ओजसा ५,५५,२
२७८ नि ये रिणन्ति ओजसा ५,५६,४
३०६ वयः न ये श्रेणीः पप्तुः ओजसा ५,५९,७
३७८ प्र ये महोभिः ओजसा उत सन्ति ७,५८,२
५३ सृजन्ति रश्मिं ओजसा ८,७,८
४३४.१ मरुतः घ्नन्तु ओजसा। अथर्व० ३,१,६
४३५ अस्मान् एति अभि ओजसा स्पर्धमाना। अथर्व० ३,२,६
४२४ उपयामगृहीतः। मरुतां त्वा ओजसे। वा० य० ७,३६
२५२ स्तनयदमाः रभसाः उदोजसः ५,५४,३
१९९ धारावराः मरुतः धृष्णवोजसः २,३४,१
८७ नरः देदिशते तनूषु। आ त्वक्षांसि बाह्वोजसः ८,२०,६

ओमन्

३२६ ज्येष्ठासः न पर्वतासः व्योमनि ५,८७,९

ओषधिः

१६२ रथियन्ती इव प्र जिहीते ओषधिः १,१६६,५
३६९ आपः ओषधीः वनिनः जुषन्त ७,५६,२५
४३८ पयस्वतीः कृणुथ अपः ओषधीः शिवाः। अथर्व०६,२२,२
४६४ यः ओषधीनां अधिपाः बभूव। अथर्व० ४,१५,१०
४४२ पयः धेनूनां रसं ओषधीनाम्। अथर्व० ४,२७,३
३६६ शूराः यह्वीषु ओषधीषु विक्षु ७,५६,२२
४४१ ये आसिञ्चन्ति रसं ओषधीषु। अथर्व० ४,२७,२

ओहते (वह्-धातुर्द्रष्टव्यः।)

ककुप्

१०२ गावः चित्। रिहते ककुभः मिथः ८,२०,२१

ककुह

२०९ हिरण्यवर्णान् ककुहान् यतस्रुचः २,३४,११

कण्वः

६ कण्वाः अभि प्र गायत १,३७,१
७७ कण्वासः अग्निं मरुद्भिः स्तुषे हिरण्यवाशीभिः ८,७,३२
४४ प्रचेतसः। कण्वं दद प्रचेतसः १,३९,९
६३ येन आव तुर्वशं यदुं। येन कण्वं धनस्पृतम् ८,७,१८
४२ यथा पुरा। इत्था कण्वाय बिभ्युषे १,३९,७
१९ सन्ति कण्वेषु वः दुवः १,३७,१४

कत्

२१ कत् ह नूनं कधप्रियः। हस्तयोः दधिध्वे १,३८,१
२२ क्व नूनं कत् वः अर्थं गन्त १,३८,२
७६ कत् ह नूनं कधप्रियः। यत् इन्द्रं अजहातन ८,७,३१
४०१ कत् आविदन्त सूरयः। तिरः आपः इव ८,९४,७
४०२ कत् वः अद्य महतां देवानां अवः वृणे ८,९४,८

कथम्

३०२, कथं शेक कथा यय ५,६१,२

कथा

२३१ कः शुश्राव कथा ययुः ५,५३,२
३०९ कथं शेक कथा यय ५,६१,२

कद्धा

७१ कद्धा गच्छाथ मरुतः । इत्था विप्रम् ८,७,३०

कधप्रिय

२२ कद् ह नूनं कधप्रियः । दधिध्वे वृक्तबर्हिषः १,३८,१
७६ कद् ह नूनं कधप्रियः । यत् इन्द्रं अजहातन ८,७,३१

कनिष्ठ

३०१ ते अज्येष्ठाः अकनिष्ठासः उद्भिदः ५,५९,६
४५३ अज्येष्ठासः अकनिष्ठासः एते ५,६०,५

कन्या

४३९ एजाति ग्लहा कन्या इव तुन्ना । अथर्व० ६,२२,३

कपनः

२५५ मोषथ वृक्षं कपना इव वेधसः ५,५४,६

कम्

४१ आ वः मक्षु तनाय कम् १,३९,७
१५० श्रियसे कं भानुभिः सं मिमिक्षिरे १,८७,६
१५२ शुभे कं यान्ति रथतूर्भिः अश्वैः १,८८,२
१५३ श्रिये कं वः अधि तनूषु वाशीः १,८८,३ (द्विः)
३८७ इमा वः हव्या मरुतः ररे हि कम् ७,५९,५
३९६ सूर्यामासा दृशे कम् ८,९४,२

करम्भः

४२३ मरुतः च रिशादसः। करम्भेण सजोषसः। वा०य०३,४४

करिष्यस्

४८८ यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध १,१६५,९ [इन्द्रः३२५८]

कर्णः

२०१ नदस्य कर्णैः तुरयन्ते आशुभिः २,३४,३

कर्तवे

१३१ धत्ते इन्द्रः नरि अपांसि कर्तवे १,८५,९

कर्मन्

४३६ ते मा अवन्तु। अस्मिन् कर्मणि। अथर्व० ५,२४,६

कवन्धः

५५ दुदुहे वज्रिणे मधु। उत्सं कवन्धं उद्रिणम् ८,७,१०

कनिक्नत्

२१७ अश्मानः न मरुतः कनिक्नतः ५,५३,८

कविः

२२९ कवयः सन्ति वेधसः ५,५२,१३
२९१;२९९ सत्यश्रुतः कवयः युवानः ५,५७,८; ५८,८
२७४ एतं तुराणं कवयः युवानः ५,५८,३
३९३ स्वतवसः । कवयः सूर्यत्वचः ७,५९,११
४४२ जवं अर्वतां कवयः ये इन्वथ । अथर्व० ४,२७,३

कशा

८ कशाः हस्तेषु यत् वदान् १,३७,३
१८६ अमर्त्याः कशया चोदत त्मना १,१६८,४

काण्वः

६४ वर्धान् काण्वस्य मन्मभिः ८,७,१९

कामः

१३३ कामं विप्रस्य तर्पयन्त धामभिः १,८५,११
१४२ स्वेदस्य सत्यशवसः विद कामस्य वेनतः १,८६,८

कामिन्

२४९ अनु ह्वय । गिरा गृणीहि कामिनः ५,५३,१६
३८५ सुते सचा । धिये पिबत कामिनः ७,५९,३

काम्य

३ अर्चन्ति । गणैः इन्द्रस्य काम्यैः १,६,८
३१७ ते नः वसूनि काम्या । वनुतन ५,६१,१६

कारुः

४९३ आ यत् दुवस्यात् दुवसे न कारुः १,१६५,१४
[इन्द्रः ३२६३]
३९७ विश्वे अर्यः आ । सदा गृणन्ति कारवः ८,९४,३
२०५ इषं स्तोतृऽभ्यः वृजनेषु कारवे २,३४,७
१७२;१८२;१९२ मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः १,१६६,१५;
१६७,११; १६८,१०

काव्यम्

३०३ कः काव्या मरुतः कः ह पौंस्या ५,५९,४

काष्ठा

१५ सूनवः गिरः । काष्ठाः अज्मेषु अत्नत १,३७,१०

कित्

३४८ एतानि धीरः निण्या चिकेत ७,५६,४
२०८ चित्रं तत् वः मरुतः याम चेकिते २,३४,१०
१७० साकं नरः दंसनैः आ चिकित्रिरे १,१६६,१३

किम्

११ कः वः वर्षिष्ठः आ नरः १,३७,६
१८ शृणोति कः चित् । एषाम् १,३७,१३
४८१ कः अध्वरे मरुतः आ ववर्त १,१६५,२; [इन्द्रः३२५१]
४९२ कः नु अत्र मरुतः ममहे वः १,१६५,१३ [इन्द्रः ३२६२]
१८७ कः वः अन्तः मरुतः ऋष्टिविद्युतः । रेजति १,१६८,५
२३४ कः वेद जानं एषाम् ५,५३,१
,, कः वा पुरा सुम्नेषु आस मरुताम् ५,५३,१
२३५ कः शुश्राव कथा ययुः ५,५३,२
३०३ कः वः महान्ति महतां उत् अश्नवन् ५,५९,४
,, कः काव्या मरुतः कः ह पौंस्या ५,५९,४ (द्विः)
३१५ कः वेद नूनं एषाम् ५,६१,१४
६५ ब्रह्मा कः वः सपर्यति ८,७,२०
७६ कः वः सखित्वे ओहते ८,७,३१
१४५ वि आनजे के चित् उस्राः इव स्तृभिः १,८७,१
२२८ ते मे के चित् न तायवः ५,५२,१२
३०८ के स्थ नरः श्रेष्ठतमाः ५,६१,१
३४५ के ईं व्यक्ताः नरः सनीळाः ७,५६,१
३६ कं याथ कं ह धूतयः १,३९,१ (द्विः)
१४६ वयः इव मरुतः केन चित् पथा १,८७,२
४८१ केन मही मनसा रीरमाम १,१६५,२; [इन्द्रः ३२५१]
२३५ कस्मै सस्रुः सुदासे अनु आपयः ५,५३,२
२४५ कस्मै अद्य सुजाताय रातहव्याय प्र ययुः ५,५३,१२
३६ कस्य क्रत्वा मरुतः कस्य वर्पसा १,३९,१ (द्विः)
४८१ कस्य ब्रह्माणि जुजुषुः युवानः १,१६५,२ [इन्द्रः ३२५१]
४८० कया मती कुतः एतासः एते १,१६५,१
कया शुभा सनीळाः ,, [इन्द्रः३२५०] (द्विः)
४८२ एकः यासि सत्पते किं ते इत्था १,१६५,३ [इन्द्रः ३२५२]

किरणः

३०२ नूनं ह भूमिं किरणं न रेजथ ५,५९,४

किलासी

२३४ कः वेद जानं एषाम् । यत् युयुज्रे किलास्यः ५,५३,१

कीरिन्

२२८ उत्सं आ कीरिणः नृतुः ५,५२,१२

कीलालम्

४४४ ये कीलालेन तर्पयन्ति ये घृतेन । अथर्व० ४,२७,५
मरुद्दै० ५

कुतः

४८० कया मती कुतः एतासः एते १,१६५,१; [इन्द्रः ३२५०]
४८२ कुतः त्वं इन्द्र माहिनः सन् एकः यासि १,१६५,३ [इन्द्रः ३२५२]

कुप्

२८६ कोपयथ पृथिवीं पृश्निमातरः ५,५७,३

कुभन्युः

२२८ छन्दःस्तुभः कुभन्यवः । उत्सं आ कीरिणः नृतुः ५,५२,१२

कुभा

२४२ मा वः रसा अनितभा कुभा क्रुमुः । नि रीरमत् ५,५३,९

कुवित्

३८१ कुवित् नंसन्ते मरुतः पुनः नः ७,५८,५

कृ

४२९ पिबन्तः मदिरं मधु । तत्र श्रवांसि कृण्वते । साम० ३५६
१५३ मेधा वना न कृणवन्ते ऊर्ध्वा १,८८,३
२७ धन्वन् चित् । मिहं कृण्वन्ति अवाताम् १,३८,७
२९ दिवा चित् तमः कृण्वन्ति १,३८,९
४३८ पयस्वतीः कृणुथ अपः ओषधीः शिवाः । अथर्व० ६,२२,२
३७३ यत् वः आगः पुरुषता कराम ७,५७,४
४८७ सुगाः अपः चकर वज्रबाहुः १,१६५,८ [इन्द्रः ३२५७]
४९३ अस्मान् चक्रे मान्यस्य मेधा १,१६५,१४ [इन्द्रः ३२६३]
१९३ रोदसी हि मरुतः चक्रिरे वृधे १,८५,१
१९४ दिवि रुद्रासः अधि चक्रिरे सदः १,८५,२
१९५ नाकं तस्थुः उरु चक्रिरे सदः १,८५,७
१९६ मदे सोमस्य रण्यानि चक्रिरे १,८५,१०
२९८ वर्धं रोदसे चक्रिरे [illegible] ५,५८,७
४५२ सत्रा महांसि चक्रिरे तनूषु ५,६०,४
४८३ भूरि चकर्थ युज्येभिः अस्मे १,१६५,७ [इन्द्रः ३२५६]
४९० यत् मे नरः श्रुत्यं ब्रह्म चक्र १,१६५,११ [इन्द्रः ३२६०]
३६७ भूरि चक्र मरुतः पित्र्याणि । उक्थानि ७,५६,२३
४९५ तानि आरे चकृम मृळत नः १,१७१,४ [इन्द्रः ३२६५]
४९८ यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध १,१६५,९ [इन्द्रः ३२५

कृ

४३१ नः तनूभ्यः मयः तोकेभ्यः **कृधि** । अथर्व० १,२६,४
१४३ यूयं तत् । आविः **कर्त** महित्वना १,८६,९
१४४ ज्योतिः **कर्त** यत् उश्मसि १,८६,१०
१९७ ऊर्ध्वान् नः **कर्त** जीवसे १,१७२,३
२०४ **कर्त** धियं जरित्रे वाजपेशसम् २,३४,६
१५८ युधा इव शक्राः तविषाणि **कर्तन** १,१६६,१
२९० प्रशस्तिं नः **कृणुत** रुद्रियासः ५,५७,७
४२२ सुभागान् नः देवाः **कृणुत** सुरत्नान् १०,७८,८
४८९ या नु दधृष्वान् **कृणवै** मनीषा १,१६५,१०
[इन्द्रः ३२५९]
४८६ भूरीणि हि **कृणवाम** शविष्ठ १,१६५,७
[इन्द्रः ३२५६]
४०८ श्रिये मर्यासः अञ्जीन् **अकृण्वत** १०,७७,२
११२ वातान् विद्युतः तविषीभिः **अक्रत** १,६४,५
३०० प्र वः स्पट् **अक्रन्** सुविताय दावने ५,५९,१
२८१ मा वः यामेषु मरुतः चिरं **करत्** ५,५६,७
३३१ आविः गूळ्हा वसु **करत्** ६,४८,१५
,, सुवेदा नः वसु **करत्** ६,४८,१५
,, सं सहस्रा **कारिषत्** चर्षणिभ्यः आ ६,४८,१५
११२ ईशानकृतः धुनयः रिशादसः १,६४,५
११८ दुध्रकृतः मरुतः भ्राजदृष्टयः १,६४,११
१५९ न मर्धन्ति स्वतवसः हविष्कृतम् १,१६६,२

कृण्वत्

१५४ ब्रह्म **कृण्वन्तः** गोतमासः अर्कैः १,८८,४

कृतम्

१२८ सीदत आ बर्हिः उरु वः सदः **कृतम्** १,८५,६
४४९ इह प्रसत्तः वि चयत् **कृतं** नः ५,६०,१
३७४ **कृते** चित् अत्र मरुतः रणन्त ७,५७,५
१३१ त्वष्टा यत् वज्रं **सुकृतं** हिरण्ययम् १,८५,९
१६९ जनाय यस्मै **सुकृते** अराध्वम् १,१६७,१२

कृतिः

१८५ हस्तेषु खादिः च **कृतिः** च सं दधे १,१६८,३

कृथम्

३१० सक्थानि नरः यमुः ! **पुत्रकृथे** न जनयः ५,६१,३

कृशगुः

४६० आशारैषी **कृशगुः** एतु अस्तम् । अथर्व० ४,१५,६

कृष्टिः

२१५ अग्निश्रियः मरुतः **विश्वकृष्टयः** ३,२६,५

कृष्णः

४९८ नभः न **कृष्णं** अवतस्थिवांसम् ८,९६,१
[इ

केतुः

४११ उषसां न **केतवः** अध्वरश्रियः १०,७८,७
४५६ वैश्वानर प्रदिवा **केतुना** सजूः ५,६०,८
१५८ पूर्वं महित्वं वृषभस्य **केतवे** १,१६६,१

कोम्य

४९४ ऊर्ध्वा नः सन्तु **कोम्या** वनानि । अहानि
[इन्

कोशः

१४६ श्चोतन्ति **कोशाः** उप वः रथेषु आ घृतम्
२३९ सुदानवः । दिवः **कोशं** अचुच्यवुः ५,५३
३०७ आ अचुच्यवुः दिव्यं **कोशं** एते ५,५९,८
८९ वाणः अज्यते । रथे **कोशे** हिरण्यये ८,२०

क्रतुः

४६६ न मर्त्यः । महः तव **क्रतुं** परः १,१९,१
[अग्नि
१२० आपृच्छ्यं **क्रतुं** आ क्षेति पुष्यति १,६४,१
६९ शुष्मं आवन् उत **क्रतुं** । अनु ८,७,२४
३६ कस्य **क्रत्वा** मरुतः कस्य वर्पसा १,३९,१
४८६ इन्द्र **क्रत्वा** मरुतः यत् वशाम १,१६५,७
[इन्द्र
३१९ **क्रत्वा** तत् वः मरुतः न आधृषे शवः ५,८
३३० तं वः इन्द्रं न **सुक्रतुम्** ६,४८,१४
२१५ सिंहाः न **हेषक्रतवः** सुदानवः ३,२६,५

क्रन्द्

७१ द्यौः न **चक्रदत्** भिया ८,७,२६
२९७ अव उस्रियः वृषभः **क्रन्दतु** द्यौः ५,५८,६
४६० अभि **क्रन्द** स्तनय अर्दय उदधिम् । अथर्व०

क्रम्

२४४ गणंगणं । अनु **क्रामेम** धीतिभिः ५,५३,११
३११ सः **चक्रमे** महतः निः उरुक्रमः ५,८७,४

क्रमः

,, सः चक्रमे महतः निः **उरुक्रमः** ५,८७,४

क्रिविर्दती

१६३ यत्र वः दिद्युत् रदति **क्रिविर्दती** १,१६६,

क्रिविः

१०५ याभिः तूर्वथ । याभिः दशस्यथ क्रिविम् ८,२०,२४

क्रीळ्

१५९ क्रीळन्ति क्रीळाः विदथेषु घृष्वयः १,१६६,२
४५१ यत् क्रीळथ मरुतः ऋष्टिमन्तः ५,६०,३

क्रीळ

१५९ क्रीळन्ति क्रीळाः विदथेषु घृष्वयः १,१६६,२
६ क्रीळं वः शर्धः मारुतं । कण्वाः १,३७,१
१० क्रीळं यत् शर्धः मारुतम् १,३७,५

क्रीडिन्

४२६ गृहमेधी च । क्रीडी च शाकी च । वा० य० १७,८५

क्रीळिन्

३६० वत्सासः न प्रक्रीळिनः पयोधाः ७,५६,१६

क्रीळिः

१४७ ते क्रीळयः धुनयः भ्राजदृष्टयः १,८७,३
४२० शिशूलाः न क्रीळयः सुमातरः १०,७८,६

क्रुध्मिन्

३५२ शुभ्रः वः शुष्मः क्रुध्मी मनांसि ७,५६,८

क्रुमुः

२४१ मा वः रसा अनितभा । कुभा क्रुमुः ५,५३,९

क्व

(२२–२३) १,३८,२ (द्विः); ३ (द्विः); (१८५) १,१६५,६ [इन्द्रः३२५५]; (१८८) १,१६८,६ (द्विः); (२०९) ५,६१,२ (द्विः); (६५) ८,७,२०

क्वो

२३ मरुतः वः । क्वो विश्वानि सौभगा १,३८,३

क्षत्रः

४६९ सुक्षत्रासः रिशादसः १,१९,५; [अग्निः ४४४२]
४८४ स्वक्षत्रेभिः तन्वः शुम्भमानाः १,१६५,५ [इन्द्रः३२४५]

क्षप्

११५ क्षपः जिन्वन्तः पूर्वीभिः अहभिः १,६४,८
४०८ कुमारनं न पूर्वीः अति क्षपः १०,७७,२

क्षमा

१०७ क्षमा रपः मरुतः आतुरस्य नः ८,२०,२६
२१९ अध महः । दिवि क्षमा च मन्महे ५,५२,३

क्षयः

३८४ [illegible] क्षयं [illegible] ७,५६,२

१३५ मरुतः यस्य हि क्षये । पाथ १,८६,१
४४७ उरुक्षयाः सगणाः मानुषासः । अथर्व० ७,८२,३

क्षर्

२०१ नौः न पूर्णा क्षरति व्यथिः यती ५,५९,२
४६ इषं । मरुतः विप्रः अक्षरत् ८,७,१

क्षि

१२० आपृच्छ्यं क्रतुं आ क्षेति पुष्यति १,६४,१३

क्षितिः

४१५ क्षितीनां न मर्याः अरेपसः १०,७८,१
३६८ अपः येन सुक्षितये तरेम ७,५६,२४

क्षिप्

४२६.१ अभियुग्वा च विक्षिपः स्वाहा । वा० य० ३९,७

क्षुद्

२९७ क्षोदन्ते आपः रिणते वनानि ५,५९,६
३७७ उत क्षोदन्ति रोदसी महित्वा ७,५८,१

क्षुरः

१६७ अंसेषु एताः पविषु क्षुराः अधि १,१६६,१०

क्षोणी

६७ सं क्षोणी सं उ सूर्यं । रजः ८,७,२२
२११ ते क्षोणीभिः अरुणेभिः न अञ्जिभिः २,३४,१३

क्षोदस्

२४० [illegible] क्षोदसा [illegible]

खाद्

११४ मृगाः इव हस्तिनः खादथ वना १,६४,७

खादिः

१८५ [illegible] खादिः [illegible] १,१६८,३
१६६ अंसेषु आ वः प्रपथेषु खादयः १,१६६,९
२६० अंसेषु वः ऋष्टयः पत्सु खादयः ५,५४,११
३५७ अंसेषु आ मरुतः खादयः वः ७,५६,१३
२६७ रुक्मेषु खादिषु श्रायाः रथेषु धन्वसु ५,५३,४
११७ अनन्तशुष्माः वृषखादयः नरः १,६४,१०
८५ प्र धन्वानि ऐरत शुभ्रखादयः । [illegible] ८,२०,४
१५० ते [illegible] सुखादयः १,८५,३
३१८ प्र शर्धाय प्रयज्यवे सुखादये । [illegible] ५,८७,१

खादिन्

२०२ द्यावः न स्तृभिः चितयन्त खादिनः २,३४,२

खादि-हस्त

२९३ त्वेषं गणं तवसं **खादिहस्तम्** ५,५८,२

गणश्रीः

११६ रोदसी आ वदत **गणश्रियः** १,६४,९
४५६ सोमं पिब मन्दसानः **गणश्रिभिः** ५,६०,८

गणः

१४८ सः हि स्वसृत् पृषदश्वः युवा **गणः** १,८७,४
१४८ अस्याः श्रियः प्राविता अथ वृषा **गणः** १,८७,४
३१४ युवा स मारुतः **गणः** । त्वेषरथः ५,६१,१३
३५१ अथ मरुद्भिः **गणः** तुविष्मान् ७,५६,७
४२४.४ दूरे अमित्रः न **गणः** । वा० य० १७,८३
४३७ त्रायन्तां मरुतां **गणाः** । अथर्व० ४,१३,४
४५८ **गणाः** त्वा उप गायन्तु मारुताः । अथर्व० ४,१५,४
३५ वन्दस्व मारुतं **गणं** । त्वेषं पनस्युम् १,३८,१५
११० रजस्तुरं तवसं मारुतं **गणं** । ऋजीषिणम् १,६४,१२
२२९ तं ऋषे मारुतं **गणं** । नमस्य ५,५२,१३
२३० अच्छ ऋषे मारुतं **गणं** । दाना मित्रं न ५,५२,१४
२४३ त्वेषं **गणं** मारुतं नव्यसीनाम् ५,५३,१०
२७५ अग्ने शर्धन्तं आ **गणं** मरुतां अव ह्वये ५,५६,१
२९२ स्तुषे **गणं** मारुतं नव्यसीनाम् ५,५८,१
२९३ त्वेषं **गणं** तवसं खादिहस्तं । वन्दस्व ५,५८,२
४०६ त्यं नु मारुतं **गणं** । वृषणं हुवे ८,९४,१२
४०७ **गणं** अस्तोषि एषां न शोभसे १०,७७,१
२१६ व्रातंव्रातं **गणंगणं** सुशस्तिभिः । ओजः ईमहे ३,२६,६
२४४ व्रातंव्रातं **गणंगणं** सुशस्तिभिः । अनु कामेम ५,५३,११
४७७ सजूः **गणेन** तृम्पतु १,२३,७; [इन्द्रः ३२४७]
३ मखः सहस्वत् अर्चति । **गणैः** इन्द्रस्य काम्यैः १,६,८
३७७ प्र साकमुक्ष अर्चत **गणाय** ७,५८,१
४७८ इन्द्रज्येष्ठाः मरुद्गणाः १,२३,८; [इन्द्रः ३२४८]
४४७ उरुक्षयाः सगणाः मानुषासः । अथर्व० ७,८२,३

गम्

१३३ आ **गच्छन्ति** ईं अवसा चित्रभानवः १,८५,११
२७१ यत्र अचिध्वं मरुतः । **गच्छथ** इत् तत् ५,५५,७
७५ कदा **गच्छाथ** मरुतः । इत्था विप्रं हवमानम् ८,७,३०
९७ आ हव्या वीतये **गथ** ८,२०,१६
२७५ तत् इत् मे **जग्मुः** आशसः ५,५६,२
४ अतः परिज्मन् आ **गहि** १,६,९
४६५-४७३ मरुद्भिः अग्ने आ **गहि** १,१९,१-९
[अग्निः १४३८-४६]

३९२ गृहमेधासः आ **गत** । मरुतः ७,५९,१०
८३ वृषा नः अग्र आ **गत** पुरुस्पृहः ८,२०,२
९१ हव्या नः वीतये **गत** ८,२०,१०
४१० प्रयस्वन्तः न सत्राचः आ **गत** १०,७७,४
२२ **गन्त** दिवः न पृथिव्याः १,३८,२
४१ **गन्त** नूनं नः अवसा यथा पुरा १,३९,७
४४ **गन्त** वृष्टिं न विद्युतः १,३९,९
३२६ **गन्त** नः यज्ञं यज्ञियाः सुशमि ५,८७,९
८१ आ **गन्त** मा रिषण्यत ८,२०,१
२०३ आ हंसासः न स्वसराणि **गन्तन** २,३४,५
२०४ नरां न शंसः सवनानि **गन्तन** २,३४,६
२८४ हिरण्यरथाः सुविताय **गन्तन** ५,५७,१
३८७ मो षु अन्यत्र **गन्तन** ७,५९,५
५६ आ तु नः उप **गन्तन** ८,७,११
७२ मखस्य दावने । देवासः उप **गन्तन** ८,७,२७
४२८ देवाः अवसा आ **अगमन्** इह । वा० य० २५,२०
२५ पथा यमस्य **गात्** उप १,३८,५
१७६ आ सूर्याइव विधतः रथं **गात्** १,१६७,५
१२२ प्रातः मक्षु धियावसुः **जगम्यात्** १,६४,१५
१५४ अहानि गृध्राः परि आ वः आ **अगुः** १,८८,४
२७६ ये ते नेदिष्ठं हवनानि **आगमन्** ५,५६,२
४८७ सुगाः अपः चकर वज्रबाहुः १,१६५,८; [इन्द्रः ३२५७]
२५५ चक्षुः इव यन्तं अनु नेषथ **सुगम्** ५,५४,६

गत

३७९ **गतः** न अध्वा वि तिराति जन्तुम् ७,५८,३

गन्तृ

१३७ सः **गन्ता** गोमति व्रजे १,८६,३
२१६ **गन्तारः** यज्ञं विदथेषु धीराः ३,२६,६

गभस्तिः

११७ अस्तारः इषुं दधिरे **गभस्त्योः** १,६४,१०
१५६ अस्तोभयत् वृथा आसां । अनु स्वधां **गभस्त्योः** १,८८,६
२६० अग्निभ्राजसः विद्युतः **गभस्त्योः** ५,५४,११

गर्भत्वम्

१ स्वधां अनु । पुनः **गर्भत्वं** एरिरे १,६,४

गर्भः

२९८ भर्ता इव **गर्भं** स्वं इत् शवः धुः ५,५८,७
३३६ सा इत् पृश्निः सुभ्वे **गर्भं** आ अधात् ६,६६,३

गा

१४९ सोमस्य जिह्वा प्र **जिगाति** चक्षसा १,८७,५

३२१ विमहसः । जिगाति शेवृधः नृभिः ५,८७,४
११३ ओ षु वाश्रा इव सुमतिः जिगातु २,३४,१५
१२८ रघुपत्वानः प्र जिगात बाहुभिः १,८५,६
३७६ अच्छ सूरीन् सर्वताता जिगात ७,५७,७
३०५ दिवः मर्याः आ नः अच्छ जिगातन ५,५९,६

गाथः

१७७ गाथन् गाथं सुतसोमः दुवस्यन् १,१६७,६

गायत्रम्

३४ मिमीहि श्लोकं । गाय गायत्रं उक्थ्यम् १,३८,१४

गिर्

१७१;१८२;१९२ एषः वः स्तोमः मरुतः इयं गीः १,१६६,
१५;१६७,११;१६८,१०
२ अच्छ विदद्वसुं गिरः । अनूषत श्रुतम् १,६,६
४ सं अस्मिन् ऋञ्जते गिरः १,६,९
५४ इमां मे मरुतः गिरं । वनत ८,७,९
१०८ गिरः सं अञ्जे विदथेषु आभुवः १,६४,१
३३ अच्छ वद तना गिरा १,३८,१३
११८ तं वः शर्धं मारुतं सुम्नयुः गिरा । उप ब्रुवे २,३०,११
२२९ मारुतं गणं । नमस्य रमय गिरा ५,५२,१३
२४९ अनु स्वध । गिरा गृणीहि कामिनः ५,५३,१६
३२० प्र वे दिवः बृहतः शृण्विरे गिरा ५,८७,३
१०० शुभ्नः पावकान् अभि सोभरे गिरा ८,२०,१९
१०१ सुश्रवस्तमान् गिरा । वन्दस्व मरुतः अह ८,२०,२०
१५ उत ऊ स्वे सूनवः गिरः १,३७,१०

गिरिज

३१८ यन्तु विष्णवे । मरुत्वते गिरिजाः एवयामरुत् ५,८७,१

गिरिः

१२ उग्राय मन्यवे । जिहीत पर्वतः गिरिः १,३७,७
५० नि यत् यामाय वः गिरिः नि सिन्धवः । येमिरे ८,७,५
११४ गिरयः न स्वतवसः रघुष्यदः १,६४,७
३४४ गिरयः न आपः उग्राः अस्पृध्रन् ६,६६,११
७९ गिरयः चित् नि जिहते ८,७,३४
२५४ अनश्वदां यत् नि अयातन गिरिम् ५,५४,५
२७८ अत्यानं चित् स्वर्ं पर्वतं गिरिम् ५,५६,४
१७ वः बलं । गिरीन् अचुच्यवीतन १,३७,१२
५९ आवि इव यत् गिरीणां । यामं शुभ्राः अचिध्वम् ८,७,१४
२९१;२९९ उतगिरयः वृहत् उक्षमाणाः ५,५७,८;५८,८

गिरिस्थ

४०६ मर्तं । गिरिष्ठां दुवर्णं हुवे ८,९४,१२

गुरु

३८ स्थिरं हथ । नरः वर्तयथ गुरु १,३९,३
३६३ गुरु द्वेषः अररुषे दधन्ति ७,५६,१९

गुहा

४७५ गुहा चित् इन्द्र वह्निभिः अविन्दः १,६,५
[इन्द्रः ३२४५]
१७४ गुहा चरन्ती मनुषः न योषा १,१६७,३

गुह्य

१४४ गूहत गुह्यं तमः । वि यात विश्वं अत्रिणम् १,८६,१०
४४८ तेन पासि गुह्यं नाम गोनाम् ५,३,३

गूह्

१४४ गूहत गुह्यं तमः । वि यात अत्रिणम् १,८६,१०

गूळ्ह

३३१ आविः गूळ्हा वसु करत् ६,४८,१५

गृ

३७५ जिगृत रायः सूनृता मघानि ७,५७,६

गृण्

३९७ विश्वे अर्यः आ । सदा गृणन्ति कारवः ८,९४,३
११९ रुद्रस्य सूनुं हवसा गृणीमसि १,६४,१२
२१२ उप घ इत् एना नमसा गृणीमसि २,३४,१४
२४९ अनु स्वध । गिरा गृणीहि कामिनः ५,५३,१६

गृणत्

३७१ निचेतारः हि मरुतः गृणन्तम् ७,५७,२
३४२ प्र चित्रं अर्कं गृणते तुराय ६,६६,९

गृणान

३६२ सत्राची रातिं मरुतः गृणानः ७,५६,१८
२७४ निः अंहतिभ्यः मरुतः गृणानाः ५,५५,१०
२०७ ऋषे रुद्रस्य मरुतः गृणानाः ५,५२,८

गृध्र

१५४ अहानि गृध्राः परि आ वः आ अगुः १,८८,४

गृहमेधः

३६२ गृहमेधासः आ गत मरुतः ७,५६,१०

गृहमेधिन्

४२६ गृहमेधी च कोटी च । वा० सं० १७,८५

गृहमेधीयम्

३५८ मर्मं एवं । गृहमेधीयं मरुतः जुजुष्टन् ७,५९,१४

गृहीत
४२४ उपयामगृहीतः असि इन्द्राय त्वा मरुत्वते वा० य० ७,३६
,, उपयामगृहीतः असि मरुतां त्वा ओजसे वा० य० ७,३६
४५८ गणाः त्वा उप गायन्तु मारुताः । अथर्व० ४,१५,४
३४ श्लोकं । गाय गायत्रं उक्थ्यम् १,३८,१४
१०० वृष्णः पावकान् । गाय गाः इव चर्कृपत् ८,२०,१९
१०३ अधि नः गात मरुतः सदा हि वः ८,२०,२२
४२१ अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गात १०,७८,८
२७३ अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गातन ५,५५,९
६ कण्वाः अभि प्र गायत १,३७,१
९ त्वेषद्युम्नाय शुष्मिणे देवत्तं ब्रह्म गायत १,३७,४
१७७ गायत् गाथं सुतसोमः दुवस्यन् १,१६७,६
३२५ अद्वेषः नः मरुतः गातुं आ इतन ५,८७,८

गौः
२७७ शिमीवान् अमः । दुध्रः गौः इव भीमयुः ५,५६,३
३९५ गौः धयति मरुतां । श्रवस्युः माता मघोनाम् ८,९४,१
२२ क्व वः गावः न रण्यन्ति १,३८,२
१८४ आसा गावः वन्द्यासः न उक्षणः १,१६८,२
२४९ रणन् गावः न यवसे ५,५३,१६
२७८ वृथा गावः न दुर्धुरः ५,५६,४
१०२ गावः चित् घ समन्यवः ८,२०,२१
२३२ गां वोचन्त सूरयः । पृश्निं वोचन्त मातरम् ५,५२,१६
१९९ भूमिं धमन्तः अप गाः अवृण्वत २,३४,१
१०० वृष्णः पावकान् । गाय गाः इव चर्कृपत् ८,२०,१९
८९ गोभिः वाणः अज्यते सोभरीणाम् ८,२०,८
२७९ गवां सर्गं इव ह्वये ५,५६,५
३०२ गवां इव श्रियसे शृङ्गं उत्तमम् ५,५९,३
४४८ तेन पासि गुह्यं नाम गोनाम् ५,३,३
१० प्र शंस गोषु अघ्न्यं । क्रीळं यत् शर्धः मारुतम् १,३७,५
३४१ तोकं वा गोषु तनये यं अप्सु ६,६६,८
११० ववक्षुः अध्रिगावः पर्वताः इव १,६४,३
४६० आशारैषी कृशगुः एतु अस्तम् । अथर्व० ४,१५,६
२१० ते दशग्वाः प्रथमाः यज्ञं ऊहिरे २,३४,१२

गव्यम्
२३३ उत् राधः गव्यं मृजे ५,५२,१७

गो-अर्णस्
२१० महः ज्योतिषा शुचता गो।अर्णसा २,३४,१२

१५५ सस्वः ह यत् मरुतः गोतमः वः १,८८,५
१५४ ब्रह्म कृण्वन्तः गोतमास अर्कैः १,८८,४
१३३ असिञ्चन् उत्सं गोतमाय तृष्णजे १,८५,११

गोपातमः
१३५ यस्य हि क्षये । सः सुगोपातमः जनः १,८

गोपा
३६२ यः ईवतः वृषणः अस्ति गोपाः ७,५६,१८

गोपीथः
४६५ गोपीथाय प्र हूयसे १,१९,१; [अग्निः २४
४१३ सः देवानां अपि गोपीथे अस्तु १०,७७,७

गोबन्धुः
८९ गोबन्धवः सुजातासः इषे भुजे ८,२०,८

गोमत्
४०० जोषं आ । इन्द्रः सुतस्य गोमतः ८,९४,६
१३७ सः गन्ता गोमति व्रजे १,८६,३
२९० गोमत् अश्ववत् रथवत् सुवीरम् ५,५७,७

गोमातृ
१२५ गोमातरः यत् शुभयन्ते अञ्जिभिः १,८५,३

गोहा
३६१ आरे गोहा नृहा वधः वः अस्तु ७,५६,१७

ग्मा
११ दिवः च ग्मः च धूतयः १,३७,६

ग्रभ्
३९४ गृभायत रक्षसः सं पिनष्टन ७,१०४,१८

ग्रामः
४२० महाग्रामः न यामन् उत त्विषा १०,७८,६
१६३ अरिष्टग्रामाः सुमतिं पिपर्तन १,१६६,६

ग्राम-जित्
२५७ नियुत्वन्तः ग्रामजितः यथा नरः ५,५४,८

ग्रावन्
४२० ग्रावाणः न सूरयः सिन्धुमातरः १०,७८,६

ग्लहा
४३९ एजाति ग्लहा कन्या इव तुन्ना ६,२२,३

घ
(१६) १,३७,१२; (२१२) २,३४,१४; (१०२) ८,२०,

घर्मस्तुभ्
२५० घर्मस्तुभे दिवः आ पृष्ठयज्वने नृम्णं अर्चत ५,५४

घासिन्

४२६ स्वतवान् च प्रघासी च। वा० य० १७,८५
४९३ प्रघासिनः हवामहे। मरुतः च रिशादसः।
वा० य० ३,४४

घृत

१९५ वर्त्मानि एषां अनु रीयते घृतम् १,८५,३
६४ घृतं न पिप्युषी इषः ८,७,१९
१४३ आ घृतं। उक्षत मधुवर्णं अर्चते १,८७,२
१९० यदि घृतं मरुतः प्रुष्णुवन्ति १,१६८,८
४४४ ये कीलालेन तर्पयन्ति ये घृतेन। अथर्व० ४,२५,५

घृत-प्रुष्

४१८ वरेयवः न मर्याः घृतप्रुषः १०,७८,४

घृत-वत्

११३ पिन्वन्ति। पयः घृतवत् विदथेषु आभुवः १,६४,६

घृताची

१७४ मिम्यक्ष येषु सुधिता घृताची १,१६७,३

घृषुः

१२३ मदन्ति वीराः विदथेषु घृष्वयः १,८५,१
१५९ क्रीळन्ति क्रीळाः विदथेषु घृष्वयः १,१६६,२
११९ घृषुं पावकं वनिनं विचर्षणिम् १,६४,१२
९ प्र वः शर्धाय घृष्वये। त्वेषद्युम्नाय शुष्मिणे। ब्रह्म गायत १,३७,४

घृष्वि-राधस्

३८७ ओ षु घृष्विराधसः। यातन अन्धांसि पीतये ७,५९,५

घोर

१७५ न रोदसी अप नुदन्त घोराः १,१६७,४

घोर-वर्पस्

४६९ ये शुभ्राः घोरवर्पसः १,१९,५; [अग्निः २४४९]
१०९ ते सत्वानः न द्रप्सिनः घोरवर्पसः १,६४,२

घोषः (स्वरः Proclamation)

२६१ स्वरन्ति घोषं विततं ऋतयवः ५,५४,१२

घोषः (पल्ली Hamlet)

१५७ चित्रं तुगेतुगे। नव्यं घोषात् अमर्त्यम् १,१३९,८

घोषिन्

४५८ गायन्तु मारुताः। पर्जन्य घोषिणः। अथर्व०४,१५,४

च

(११) १,३७,६ (द्विः); (१३८) १,८६,४; (१५४) १,८८,४; (१५७) १,१३९,८ (द्विः); (४९१) १,१६५, १२ [इन्द्रः ३२६१]; (१६०) १,१६६,३; (१८१) १,१६७,१०; (१८५) १,१६८,३ (द्विः); (२१९-२०) ५,५२,३-४; (२७२) ५,५५,८ (द्विः); (४५५) ५,६०,७; (३१९) ५,८७,२; (३२९) ६,४८,१३ (द्विः); (३३५) ६,६६,२; (३८३, ३८८) ७,५९,१.८ (द्विः); (९९) ८,२०,१८; (४०२) ८,९४,८; (४१४) १०,७७,८; (४९३) वा० य० ३,४४; (४२४.१) वा० य० १७,८० (पङ्क्त्वः); (४२४.२) वा० य० १७,८१ (पङ्क्त्वः); (४२४.३) वा० य० १७,८२ (पङ्क्त्वः); (४२४.४) वा० य० १७,८३ (पङ्क्त्वः); (४२५) वा० य० १७,८४; (४२६) वा० य० १७,८५ (पङ्क्त्वः); (४२६.१) वा० य० ३९,७ (पङ्क्त्वः); (४२७) वा० य० १७,८६ (द्विः); (४३८) अथर्व० ६,२२,२ (द्विः);

चकानः

४१४ महः च यामन् अध्वरे चकानाः १०,७७,८

चक्रम्

१६६ अक्षः वः चक्रा समया वि वावृते १,१६६,९
१५५ पश्यन् हिरण्यचक्रान् अयोदंष्ट्रान् १,८८,५

चक्रा

७४ आर्जीके पस्त्यावति। ययुः निचक्रया नरः ८,७,२९

चक्राण

६८ अराजिनः। चक्राणाः वृष्णि पौंस्यम् ८,७,२३

चक्रिया

२०७ वर्तयत तपुषा चक्रिया अभि तम् २,३४,९
२१२ आववर्तत् अवरान् चक्रिया अवसे २,३४,१४

चक्ष्

४९१ संचक्ष्य मरुतः चन्द्रवर्णाः १,१६५,१२ [इन्द्रः ३२६१]

चक्षणम्

२६८ दिदृक्षेण्यं सूर्यस्य इव चक्षणम् ५,५५,४

चक्षस्

१४९ सोमस्य जिह्वा प्र जिगाति चक्षसा १,८७,५
४२८ अग्निजिह्वाः मनवः सूरचक्षसः। वा० य० २५,२०

चक्षुस्

३०२ सूर्यः न चक्षुः रजसः विसर्जने ५,५९,३
३०४ सूर्यस्य चक्षुः प्र मिनन्ति वृष्टिभिः ५,५९,५
२५५ चक्षुः इव यन्तं अनु नेषथ सुगम् ५,५४,६
४३४.१ चक्षूंषि अग्निः आ दत्ताम्। अथर्व० ३,१,६

चन

१६९ इन्द्रः **चन** । त्यजसा वि ह्रुणाति तत् १,१६६,१२
३८५ नहि वः चरमं **चन** । वसिष्ठः परिमंसते ७,५९,३

चनिष्ठ

३७३ अस्मे वः अस्तु सुमतिः **चनिष्ठा** ७,५७,४

चन्द्र–वत्

२९० **चन्द्रवत्** राधः मरुतः दद नः ५,५७,७

चन्द्र–वर्ण

४९१ संचक्ष्य मरुतः **चन्द्रवर्णाः** १,१६५,१२
[इन्द्रः ३२६१]

चन्द्रः

१०१ वृष्णः **चन्द्रान्** न सुश्रवस्तमान् गिरा ८,२०,२०
३१७ वसूनि काम्या । पुरु**चन्द्राः** रिशादसः। ववृत्तन ५,८६,१६
४८७ अहं एताः मनवे विश्व**चन्द्राः** अपः चकर १,१६५,८
[इन्द्रः ३२५७]
२११ सु**चन्द्रं** वर्णं दधिरे सुपेशसम् २,३४,१३

चर्

९९ स्मत् मीळ्हुषः **चरन्ति** ये ८,२०,१८
४४३ ये अद्भिः ईशानाः मरुतः **चरन्ति** । अथर्व० ४,२७,४

चरत्

४९८ द्रप्सं अपश्यं विषुणे **चरन्तम्** ८,९६,१४ [इन्द्रः३२६९]
१७४ गुहा **चरन्ती** मनुषः न योषा १,१६७,३

चरम

९५ अराणां न **चरमः** तत् एषाम् ८,२०,१४
२९६ अराः इव इत् अ**चरमाः** अहा इव ५,५८,५
३८५ नहि वः **चरमं** चन वसिष्ठः परिमंसते ७,५९,३

चर्कृतिः

३३३ सद्यः चित् यस्य **चर्कृतिः** ६,४८,२१

चर्कृत्यः

१११ **चर्कृत्यं** मरुतः पृत्सु दुस्तरम् १,६४,१४

चर्कृपत्

१०० वृष्णः पावकान् । गाय गाः इव **चर्कृपत्** ८,२०,१९

चर्मन्

१२७ **चर्म** इव उदभिः वि उन्दन्ति भूम १,८५,५

चर्षणिः

११९ घृषुं पावकं वनिनं वि**चर्षणिम्** १,६४,१२
१११ धनस्पृतं उक्थ्यं विश्व**चर्षणीम्** १,६४,१४
१३९ विश्वाः य **चर्षणीः** अभि १,८६,५
३३१ सं सहस्रा कारिषत् **चर्षणिभ्यः** आ ६,४८,१५
१४० पूर्वीभिः हि ददाशिम । अवोभिः **चर्षणीनाम्** १,८६

चारु

३०२ अश्वाः इव सुभ्वः **चारवः** स्थन ५,५९,३
४६५ प्रति त्यं **चारुं** अध्वरम् १,१९,१ [अग्निः १४३८]
४४८ रुद्र यत् ते जनिम **चारु** चित्रम् ५,३,३

चि

१७९ **चयते** ई अर्यमो अप्रशस्तान् १,१६७,८
१४६ उपह्वरेषु यत् **अचिध्वं** यथिं । वयः इव १,८७,२
२७१ यत्र **अचिध्वं** मरुतः गच्छथ इत् उ तत् ५,५५,७
४७ तविषीयवः । यामं शुभ्राः **अचिध्वम्** ८,७,२
५९ अधि इव यत् गिरीणां । यामं शुभ्राः **अचिध्वम्** ८,७,१४
४४९ इह प्रसत्तः वि **चयत्** कृतं नः ५,६०,१

चिकित्वस्

३३४ वपुः नु तत् **चिकितुषे** चित् अस्तु ६,६६,१

चित्

४९६ येन मानासः **चितयन्ते** उस्राः १,१७१,५
[इन्द्रः ३२६७]
३०१ दूरेदृशः ये **चितयन्ते** एमभिः ५,५९,२
२०० द्यावः न स्तृभिः **चितयन्त** खादिनः २,३४,२
३०२ मर्याः इव श्रियसे **चेतथ** नरः ५,५९,३
१५५ एतत् त्यत् न योजनं **अचेति** १,८८,५

चितयत्

२०५ आपानं ब्रह्म **चितयत्** दिवेदिवे २,३४,७

चित्

(४७५) १,६,५ [इन्द्रः ३२४५] (द्विः); (१६,१८,२०) १,३७,११.१३.१५; (२७,२९) १,३८,७.९; (३९,४१) १,३९,४.६; (११०) १,६४,३; (१२६,१३९) १,८५,३. १०; (१३९) १,८६,५; (१४५–४६) १,८७,१–२; (४८९) १,१६५,१०; [इन्द्रः ३२५९]; (१७३,१७८,१८०) १,१६७,२.७.९; (१८६) १,१६८,४; (२२८) ५,५२,१२; (२५२) ५,५४,३; (२६७) ५,५५,३; (२७५-७६,२७८) ५,५६,१–२.४; (२९८) ५,५८,७; (४५०) ५,६०,२ (त्रिः) ३ (द्विः); (३३३) ६,४८,२१; (३३४,३३८,३४०) ६,६६,१. ५ (द्विः). ७ (३५९,३६४,३६७) ७,५६,१५.२० (त्रिः). २३; (३७०,३७३) ७,५७,१.५; (३७८,३८२) ७,५८,२. ६;

(३८९) ७,५९,७; (६०,७९) ८,७,२५. ३४ (द्विः) (८२,८३,९९,१०२,१०३) ८,२०,१.५.१८.२१.२२; (४१२) १०,७७,६

चित्तम्

२९० तिरः चित्तानि वसवः जिघांसति ७,५९,८

चित्तिः

४३६ ते मा अवन्तु । अस्यां चित्त्याम् । अथर्व० ५,२४,३

चित्र

१५२ रुक्मः न चित्रः स्वधितीवान् १,८८,२
१६१ चित्रः वः यामः प्रयतासु ऋष्टिषु १,१६६,४
१९५ चित्रः वः अस्तु यामः १,१७२,१
,, चित्रः ऊती सुदानवः १,१७२,१
४९२ मन्मानि चित्राः अपिवातयन्तः १,१६५,१३
[इन्द्रः ३२६२]
५२ अरुणप्सवः । चित्राः यामेभिः ईरते ८,७,७
४१५ राजानः न चित्राः सुसंदृशः १०,७८,१
१११ चित्रैः अञ्जिभिः वपुषे वि अञ्जते १,६४,४
३१ चित्राः रोधस्वतीः अनु । यात १,३८,११
१५७ यत् वः चित्रं युगेयुगे १,१३९,८
२०८ चित्रं तत् वः मरुतः याम चेकिते २,३४,१०
४४८ रुद्र यत् ते जनिम चारु चित्रम् ५,३,३
२२७ अध परावतः इति । चित्रा रूपाणि दर्श्या ५,५२,११
८ नि यामन् चित्रं ऋञ्जते १,३७,३
३४२ प्र चित्रं अर्कं गृणते तुराय ६,६६,९
३०७ सं भानुचित्राः उषसः यतन्तान् ५,५९,८

चित्र-ज्योतिः

४१४.१ चित्रज्योतिः च सत्यज्योतिः च । वा० य० १७,८०

चित्र-भानुः

११४ महिषासः मायिनः चित्रभानवः १,६४,७
१२३ आ गच्छन्ति ईं अवसा चित्रभानवः १,८५,११

चित्र-वाज

७८ वयां चित्रवाजान् ८,७,३३

चिरम्

२८१ मा वः यामेषु मरुतः चिरं करत् ५,५६,७

चुद्

१८३ [illegible] मरुतः चोदत [illegible] १,१६८,४
२८१ प्र तं रथेषु चोदत ५,५६,६

चेतस्

११५ सिंहाः इव नानदति प्रचेतसः १,६४,८
२२३ यूयं तस्य प्रचेतसः । स्यात दुर्धर्तवः निदः ५,८७,९
५७ ऋभुक्षणः दमे । उत प्रचेतसः मदे ८,७,१२
२६२ युष्मादत्तस्य मरुतः विचेतसः । रायः स्याम ५,५४,१३

चेतु

१६३ यूयं नः उग्राः मरुतः सुचेतुना १,१६६,६

चेत्

३७१ निचेतारः हि मरुतः गृणन्तम् ७,५७,२

चो

३३६ यत् चो तु धृष्णवः भरध्वे ६,६६,२

चोदः

३१० अश्वैः चोदः एवां । वि सक्थानि नरः यमुः ५,६१,३

च्यवस्

३२३ नृच्यवसः जुदः न अग्नेः ६,६६,१०

च्यु

१६ निरः नदं । प्र च्यावयन्ति यामभिः १,३७,११
११० भुवनानि । प्र च्यावयन्ति दिव्यानि मज्मना १,६४,३
२७८ गिरिं । प्र च्यावयन्ति यामभिः ५,५६,४
१७१ उत च्यवन्ते अच्युता ध्रुवाणि १,१६७,८
१८८ यत् च्यावयथ विथुरा इव संहितम् १,१६८,६
४८६ यानि च्यवं इन्द्रः इत् ईशे एषाम् १,१६५,१०
[इन्द्रः ३२५९]
१७ यः वर्तं नयत अचुच्यवीतन । गिरिम् अचुच्यवीतन १,३७,१२
१६० दिवः वा पृष्ठं नर्याः अचुच्यवुः १,१६६,५
१८६ औरेणवः तुविस्वनाः अचुच्यवुः [illegible] १,१६८,४
२६६ [illegible] । दिवः कोशं अचुच्यवुः ५,५३,६
३०६ प्र वेपयन्ति पर्वतान् अचुच्यवुः ५,५९,७
३०७ आ अचुच्यवुः दिव्यं कोशं एते ५,५९,८
१२६ च्यावयन्तः अच्युता चित् ओजसा १,८५,४

च्युत्

१६७ धन्वच्युतः इषां न [illegible] १,१६८,५
११८ [illegible] अच्युतच्युतः १,६४,११
२५२ [illegible] पर्वतच्युतः ५,५४,३
२५० [illegible] पर्वतच्युते ५,५४,१
१२६ [illegible] अच्युतम् १,८५,३

५८ आ नः रयिं मदच्युतं । इयर्त मरुतः दिवः ८,७,१३

च्युत

४६१-६३ मरुद्भिः प्रच्युताः मेघाः । अथर्व० ४,१५,७-९
१७९ उत च्यवन्ते अच्युता ध्रुवाणि १,१६७,८

छद्

४९१ अच्छान्त मे छदयाथ च नूनम् १,१६५,१२
[इन्द्रः ३१६१]

छन्द

८१ पूर्व्यः । छन्दः न सूरः अर्चिषा ८,७,३६

छन्दस्

४३२ छन्दांसि यज्ञे मरुतः स्वाहा । अथर्व० ५,२६,५

छन्द-स्तुभ्

२२८ छन्दस्तुभः कुभन्यवः । उत्सं आ कीरिणः ५,५२,१२

जग्मन्

४७६ इन्द्रेण सं हि दृक्षसे । सञ्जग्मानः १,६,७
[इन्द्रः ३२४६]

जग्मिः

१३० शूराः इव इत् युयुधयः न जग्मयः १,८५,८
४२८ शुभंयावानः विदथेषु जग्मयः । वा० य० २५,२०

जघनम्

३१० जघने चोदः एषां । वि सक्थानि नरः यमुः ५,६१,३

जञ्झती

२२२ अनु एनान् अह विद्युतः । मरुतः जञ्झतीः इव ५,५२,६

जञ्जती

१८९ पृथुज्रयी असुर्या इव जञ्जती १,१६८,७

जन्

२९६ प्र ये जायन्ते अकवा महोभिः ५,५८,५
१०९ ते जज्ञिरे दिवः ऋष्वासः उक्षणः १,६४,२
१११ साकं जज्ञिरे स्वधया दिवः नरः १,६४,४
७ साकं वाशीभिः अञ्जिभिः । अजायन्त स्वभानवः
१,३७,२
२०० इया अजनि पृश्न्याः शुक्रे ऊधनि २,३४,२
८२ अग्निः हि जनि पूर्व्यः ८,७,३६
२९५ विश्ववर्षं जनयथ यजत्राः ५,५८,४
१९१ ते सप्सरासः अजनयन्त अभ्वम् १,१६८,९
१८४ दर्श स्वः अभिजायन्त धूतयः १,१६८,२
३१८ मरुत्वते गिरिजाः एवयामरुत् ५,८७,१
२८४ तृष्णजे न दिवः उत्साः उदन्यवे ५,५७,१
१८४ वव्रासः न ये स्वजाः स्वतवसः १,१६८,२

जनयत्

१२४ अर्चन्तः अर्कं जनयन्तः इन्द्रियम् १,८५,२

जनः

१३५ सः सुगोपातमः जनः १,८६,१
१७१ आ यत् ततनन् वृजने जनासः १,१६६,१४
३६६ सं यत् हनन्त मन्युभिः जनासः ७,५६,२२
१६५ जनं यं उग्राः तवसः विरप्शिनः १,१६६,८
१९८ उप ब्रुवे नमसा दैव्यं जनम् २,३०,११
१७ वः बलं । जनान् अचुच्यवीतन १,३७,१२
१२० प्र नु सः मर्तः शवसा जनान् अति । तस्थौ १,६४,१३
१६९ जनाय यस्मै सुकृते अराध्वम् १,१६६,१२
२०६ पिन्वते । जनाय रातहविषे महीं इषम् २,३४,८
२९५ यूयं राजानं इर्यं जनाय । जनयथ ५,५८,४
३६८ जनानां यः असुरः विधर्ता ७,५६,२४

जनित्रम्

३४६ अङ्ग विद्रे मिथः जनित्रम् ७,५६,२

जनिमन्

४४८ रुद्र यत् ते जनिम चारु चित्रम् ५,३,३

जनिः

१२३ प्र ये शुम्भन्ते जनयः न सप्तयः १,८५,१
३१० पुत्रकृथे न जनयः ५,६१,३
१७८ स्थिरा चित् जनीः वहते सुभागाः १,१६७,७

जनुस्

३७८ जनूः चित् वः मरुतः त्वेष्येण ७,५८,२
३४६ नकिः हि एषां जनूंषि वेद ते ७,५६,२
२८८ सुजातासः जनुषा रुक्मवक्षसः ५,५७,५
३०५ सुजातासः जनुषा पृश्निमातरः ५,५९,६
३२७ न ये ईषन्ते जनुषः अया नु ६,६६,४

जन्तुः

३७१ गतः न अध्वा वि तिराति जन्तुम् ७,५८,३

जन्मन्

१४९ पितुः प्रत्नस्य जन्मना वदामसि १,८७,५
१५८ तत् नु वोचाम रभसाय जन्मने १,१६६,१
३२३ भ्राजज्जन्मानः मरुतः अधृष्टाः ६,६६,१०
३५६ शुचिजन्मानः शुचयः पावकाः ७,५६,१२

जम्भः

१० रायैः मारतं । जम्भे रक्षस्य वधे १,३७,५

जरः

२०८ क्षितं जराय जुरतां अदाभ्याः २,३४,१०

जरा

१३ अस्थ ददः । जरायै मरुतः पतिम् १,३८,१३

जरितृ

१५ मा वः मृगः न यवसे । जरिता भूत् अजोष्यः १,३८,५

४९३ इमा ब्रह्माणि जरिता वः अर्चत् १,१६५,१४ [इन्द्रः ३२२३]

२०४ करो धियं जरित्रे वाजपेशसम् २,३४,६

३१५ धेनुं न इषं जरितुः एवयामरुत् ५,८७,८

जर्वः

४४२ जर्वं [illegible] ये [illegible] । अथर्व० ४,२७,३

जात

४८८ न जायमानः नशते न जातः १,१६५,९ [इन्द्रः ३२५८]

२६७ साकं जाताः सुभ्वः साकं उक्षिताः ५,५५,३

३१९ प्र ये जाताः महिना ये च नु स्वयम् ५,८७,२

२२५ [illegible] । स्वजाताः अरेपसः ५,५३,१४

१८३ अरेणवः तुविजाताः अचुच्यवुः दृळ्हानि चित् १,१६८,४

१५३ सुमन्यं [illegible] सुजाताः १,८८,३

१६९ तत् वः सुजाताः मरुतः महित्वनम् १,१६६,१२

२८८ सुजातासः जनुषा रुक्मवक्षसः ५,५७,५

३०५ सुजातासः जनुषा पृश्निमातरः ५,५९,६

८९ [illegible] सुजातासः [illegible] ८,२०,८

२४५ [illegible] सुजाताय । [illegible] ५,५३,१२

२८३ [illegible] सुजाता [illegible] ५,५६,९

३६५ [illegible] सुजातं [illegible] ६,५६,२१

जात-वेदस्

४३४ [illegible] जातवेदाः । अथर्व० ४,२७,१०

जात्यम्

१०२ [illegible] जात्येन [illegible] ८,२०,२१

जानम्

१४ [illegible] जानं [illegible] १,३७,९

२१२ [illegible] जानं [illegible] ५,५२,१

जानिः

२२१ [illegible] जानिः ५,६१,३

जानुस्

४०७ हविष्मन्तः न वज्राः विजानुषः १०,७७,१

जामित्वम्

१७० तत् वः जामित्वं मरुतः परे युगे १,१६६,१३

जायमान

४८८ न जायमानः नशते न जातः १,१६५,९ [इन्द्रः ३२५८]

जाया

४३९ एवं तुन्दाना पत्या इव जाया । अथर्व० ३,२२,३

जावत्

३९९ पिबन्ति मित्रः अर्यमा । त्रिषधस्थस्य जावतः ८,९४,५

जि

२५६ न सः जीयते मरुतः न हन्यते ५,५४,७

४२४.४ [illegible] जित् च [illegible] जित् च [illegible] जित् च ।
वा० य० १७,८३

२५७ नियुत्वन्तः ग्रामजितः यथा नरः ५,५४,८

जित

४३४.२ पुनः एतु पराजिता । अथर्व० ३,१,३

जिगत्नुः

४१७ [illegible] जिगत्नवः १०,७८,३

४१९ [illegible] जिगत्नवः १०,७८,५

जिगीवस्

४१८ जीगीवांसः न शूराः अभिद्यवः १०,७८,४

जिगीषा

४९४ [illegible] जिगीषा १,१७१,३ [इन्द्रः ३२६४]

जिन्व्

३३ [illegible] । [illegible] जिन्वथ ८,७,२१

जिन्वत्

११५ [illegible] जिन्वन्तः [illegible] १,६४,८

जिह्म

१३३ जिह्मं नुनुद्रे [illegible] १,८५,११

जिह्वा

१४९ [illegible] जिह्वा [illegible] १,८७,५

४१७ [illegible] जिह्वाः [illegible] १०,७८,३

१८७ [illegible] जिह्वया १,१६८,५

४३८ [illegible] जिह्वाः [illegible] ४,२७,१०

१६८ [illegible] जिह्वाः [illegible] १,१६६,११

जीर-दानुः
२०२ मित्राय वा सदं आ जीरदानवः २,३४,४
२३८ सुदे दधे मरुतः जीरदानवः ५,५३,५
२५८ प्रवत्वन्तः पर्वताः जीरदानवः ५,५४,९
१७२;१८२;१९२;४९७ विद्याम इषं वृजनं जीरदानुम् १,१६६,१५;१६७,११;१६८,१०;१७१,६;
[इन्द्रः ३२६८]

जीवसे
२० विश्वं चित् आयुः जीवसे १,३७,१५
१९७ ऊर्ध्वान् नः कर्त जीवसे १,१७२,३

जुजुर्वान्
१३ जुजुर्वान् इव विश्पतिः । भिया यामेषु रेजते १,३७,८

जुन्
२९४ वृष्टिं ये विश्वे मरुतः जुनन्ति ५,५८,३
३६४ इमे रध्रं चित् मरुतः जुनन्ति ७,५६,२०

जुरत्
२०८ त्रितं जराय जुरतां अदाभ्याः २,३४,१०

जुष्
१७५ जुषन्त वृधं सख्याय देवाः १,१६७,४
३६४ नूर्मिं चित् यथा वसवः जुषन्त ७,५६,२०
३६९ आपः ओषधीः वनिनः जुषन्त ७,५६,२५
३८२ इदं सूक्तं मरुतः जुषन्त ७,५८,६
४८१ कस्य ब्रह्माणि जुजुषुः युवानः १,१६५,२
[इन्द्रः ३२५१]
३९१ इदं हविः । मरुतः तत् जुजुष्टन १,१६५,९
२७४ जुषध्वं नः हव्यदातिं यजत्राः ५,५५,१०
२९४ एतं जुषध्वं कवयः युवानः ५,५८,३
३५८ गृहमेधीयं मरुतः जुषध्वम् ७,५६,१४
१७६ जोषत् यत् ईं असुर्या सचध्यै १,१६७,५
३७९ जुजोषन् इत् मरुतः सुष्टुतिं नः ७,५८,३

जुषाणः
१९४ उप ईं आ यात मनसा जुषाणाः १,१७१,२

जुष्टतमः
१४५ जुष्टतमासः नृतमासः अञ्जिभिः १,८७,१

जुहूः
३४३ तृषुच्यवसः जुह्वः न अग्नेः ६,६६,१०

जूतः
२९५ द्युमान् एति मुष्टिहा बाहुजूतः ५,५८,४

जूः
१२६ मनोजुवः यत् मरुतः रथेषु आ । वृषव्रातासः पृषतीः अयुग्ध्वम् १,८५,४

जृ
१५७ मा उत जारिषुः । अस्मत् पुरा उत जारिषुः १,१३९,८

जेषिन्
४२६ क्रीडी च । शाकी च उज्जेषी । वा० य० १७,८५

जोषस्
२५५ अव स्म नः अरमतिं सजोषसः । अनु नेषथ ५,५४,६
२८४ आ रुद्रासः इन्द्रवन्तः सजोषसः ५,५७,१
४२३ रिशादसः । करम्भेण सजोषसः । वा० य० ३,४४

जोषः
३३७ निः यत् दुहे शुचयः अनु जोषम् ६,६६,४
४०० उतो अस्य जोषं आ । प्रातः होता इव मत्सति ८,९४,६

ज्ञा
४३५ यथा एषां अन्यः अन्यं न जानात् । अथर्व० ३,१,६
२९१;२९८ तुविमघासः अमृताः ऋतज्ञाः ५,५७,८;५८,८

ज्ञातृ
४१६ प्रज्ञातारः न ज्येष्ठाः सुनीतयः १०,७८,२

ज्येष्ठ
४१६ प्रज्ञातारः न ज्येष्ठाः सुनीतयः १०,७८,२
३२६ ज्येष्ठासः न पर्वतासः व्योमनि ५,८७,९
४१९ अश्वासः न ये ज्येष्ठासः आशवः १०,७८,५
३३३ दधिरे नाम यज्ञियं । ज्येष्ठं ब्रह्म शवः ६,४८,२१
१७३ ज्येष्ठेभिः वा बृहद्दिवैः सुमायाः १,१६७,२
३०५ ते अज्येष्ठाः अकनिष्ठासः उद्भिदः ५,५९,६
४५३ अज्येष्ठासः अकनिष्ठासः एते । सं भ्रातरः ५,६०,५
४७८ इन्द्रज्येष्ठाः मरुद्गणाः १,२३,८; [इन्द्रः ३२४८]

ज्योतिस्
१४४ ज्योतिः कर्त यत् उश्मसि १,८६,१०
२१० मदः ज्योतिषा शुचता गो-अर्णसा २,३४,१२
४२४-१ शुक्रज्योतिः च चित्रज्योतिः च सत्यज्योतिः च वा० य० १७,८०

ज्योतिष्मत्
४२४.१ सत्यज्योतिः च ज्योतिष्मान् च । वा०य० १७,८०
४११ ज्योतिष्मन्तः न भासा व्युष्टिषु १०,७७,५

ज्रयी

१८९ पृथुज्रयी असुर्येव जञ्जती १,१६८.७

ज्रिः

११२ भूमिं पिन्वन्ति पयसा परिज्रयः १,६४,५
२५१ वरोयुधः अश्वयुजः परिज्रयः ५,५४,२
.. सरन्ति [illegible] परिज्रयः ५,५४,२

तक्ष्

१३७ रथं वाजिनः । अनु विष्टं अतक्षत १,८६.२

तत

२६१ स्तरन्ति येन विततं [illegible] ५,५४,१२

तवृदान

२४० तवृदानाः [illegible] ५,५३,७

तत्र

४२९ [illegible] तत्र [illegible] । [illegible] ३५३
४३८ [illegible] तत्र [illegible] । अथर्व० ३,३१,१

तत्रो

११ [illegible] । तत्रो [illegible] १,३७,१४

तथा

९८ [illegible] तथा [illegible] ८,२०,१७

तद्

११० प्र नु सः मर्तः शवसा जनान् अति । तस्थौ १,६४,१३
१३५ विमहसः । सः सुगोपातमः जनः १,८६,१
१३७ सः गन्ता गोमति व्रजे १,८६,३
१४१ सुभगः सः प्रयज्यवः । मरुतः १,८६,७
१४८ सः हि स्वसृत् पृषदश्वः युवा गणः १,८७,४
४९३ सः नः मरुद्भिः वृषभ श्रवः धाः १,१७१,५
[इन्द्रः ११६७]
२४८ सुवीरः । नरः मरुतः सः मर्तः ५,५३,१५
२५३ न सः जीयते मरुतः न हन्यते ५,५४,७
३१४ युवा सः मारुतः गणः ५,६१,१३
३३१ सः चक्रमे महतः निः उरुक्रमः ५,८७,४
३४१ सः [illegible] ६,६६,८
३६२ सः [illegible] ७,५६,१८
३८५ प्र सः क्षयं तिरते वि महीः इषः ७,५९,२
३९० [illegible] सः [illegible] ७,५८,४
९३ [illegible] सः वः [illegible] ८,२०,१५
९७ [illegible] सः [illegible] ८,२०,१६
४१३ [illegible] सः [illegible] १० ७७,७
४६३ सः देवानां अपि गोपीथे अस्तु १०,७७,७
४६४ सः नः वर्षि वनुतां जातवेदाः । अथर्व० ४,२५,१०
१०९ ते जज्ञिरे दिवः ऋष्वासः उक्षणः १,६४,२
१२४ ते अक्षितासः महिमानं आशत १,८५,२
१२९ ते अवर्धन्त स्वतवसः महित्वना आ १,८५,७
१३१ ऊर्ध्वं नुनुद्रे अवतं ते ओजसा १,८५,१०
१४७ ते क्रीळयः धुनयः भ्राजदृष्टयः १,८७,३
१५० ते रश्मिभिः ते ऋक्वभिः सुखादयः १,८७,६
.. ते वाशीमन्तः इष्मिणः अभीरवः १,८७,६
१५२ ते अरुणेभिः वरं आ पिशङ्गैः १,८८,२
१८० ते धृष्णुना शवसा शूशुवांसः १,१६७,९
१९३ ते सप्सरासः अजनयन्त अभ्वम् १,१६८,९
२१० ते नः हिन्वन्तु उषसः व्युष्टिषु २,३४,१२
.. ते दशग्वाः प्रथमाः यज्ञं ऊहिरे २,३४,१२
२११ ते क्षोणीभिः अरुणेभिः न अञ्जिभिः २,३४,१३
२१५ ते स्वानिनः रुद्रियाः वर्षनिर्णिजः ३,२६,५
२३८ ते हि स्थिरस्य शवसः । सखायः सन्ति ५,५२,२
.. ते यामन् आ धृषद्विनः ५,५२,२
२३९ ते स्यन्द्रासः न उक्षणः । अति स्कन्दन्ति ५,५२,३
२४४ उत स्म ते शुभे नरः । प्र स्यन्द्राः ५,५२,८
२४५ उत स्म ते परुष्ण्यां । ऊर्णाः वसत ५,५२,९
२४८ ते मे के चित् न तायवः ५,५२,१२
२५३ ते मे आहुः ये आययुः ५,५३,३
२६८ यं त्रायध्वे स्याम ते ५,५४,१४
२६९ ते [illegible] ५,५६,३
३०४ ते अज्येष्ठाः अकनिष्ठासः उद्भिदः ५,५९,६
३०५ ते [illegible] ५,६०,५
३१७ ते नः [illegible] ५,६१,१६
३३३ ते नः उरुष्यत निदः ५,८७,९
३३४ ते रुद्रासः सुमखाः अग्नयः यथा ५,८७,७
३३९ ते इत् उग्राः शवसा धृष्णुषेणाः ६,६६,६
३५३ नकिः हि एषां जूंषि वेद ते ७,५६,२
३६० ते [illegible] ७,५६,१६
४१,४२ ते [illegible] ८,७,३६
९३ ते [illegible]
८,२०,१४
४०८ [illegible] ते [illegible] १०,७७,३
४१४ ते हि [illegible] १०,७७,८
.. ते नः [illegible] १०,७७,८
४२०-४२१ ते [illegible] । अथर्व० [illegible]

२५४ दीर्घं ततान सूर्यः न योजनम् ५,५४,५
३४ मिमीहि श्लोकं आस्ये । पर्जन्यः इव ततनः १,३८,१४
१५ सूनवः गिरः । काष्ठाः अज्मेषु अत्नत १,३७,१०
३३ अच्छ वद तना गिरा । जरायै १,३८,१३
३९ युष्माकं अस्तु तविषी तना युजा १,३९,४

तनयः

२११ तोकं पुष्येम तनयं शतं हिमाः १,६४,१४
३६४ धत्त विश्वं तनयं तोकं अस्मे ७,५६,२०
२४३ येन तोकाय तनयाय धान्यं । बीजं वहध्वे ५,५३,१३
१६५ पायत शंसात् तनयस्य पुष्टिषु १,१६६,८
३२१ तोके वा गोषु तनये यं अप्सु ६,६६,८

तनः

४१ मा वः मक्षु तनाय कम् १,३९,७

तना

३९९ पिबन्ति मित्रः अर्यमा । तना पूतस्य वरुणः ८,९४,५

तनूः

३३७ अनु श्रिया तन्वं उक्षमाणाः ६,६६,४
४८४ स्वक्षत्रेभिः तन्वः शुम्भमानाः १,१६५,५
[इन्द्रः ३२५४]
४५२ अभि स्वधाभिः तन्वः पिपिश्रे ५,६०,४
३५५ उत स्वयं तन्वः शुम्भमानाः ७,५६,११
३८९ सद्यः चित् हि तन्वः शुम्भमानाः ७,५९,७
४९० सख्ये सखायः तन्वे तनूभिः १,१६५,११
[इन्द्रः ३२६०]
३७२ भ्राजन्ते रुक्मैः आयुधैः तनूभिः ७,५७,३
४६४ अपां अग्निः तनूभिः संविदानः । अथर्व० ४,१५,१०
१७२;१८२;१९२ आ इषा यासिष्ट तन्वे वयाम् १,१६५,१५; १६७,११;१६८,१०
४३१ सुहवत मृडत मृडय नः तनूभ्यः । साम० १,३३,४
१२५ तनूषु शुभ्राः दधिरे विरुक्मतः १,८५,३
१५३ श्रियः वः अधि तनूषु वाशीः १,८८,३
२८९ विश्वा वः श्रीः अधि तनूषु पिपिशे ५,५७,६
४५३ स्वक्षा महांसि चक्रिरे तनूषु ५,६०,४
८७ यत् नरः देदिशते तनूषु ८,२०,३
९३ [illegible] । तनूषु येमिरे ८,२०,१२
१०७ विश्वं पश्यन्तः बिभृथ तनूषु आ ८,२०,२६

तप्

३११ [illegible] । [illegible] ५,६६,५

तपनः

४२३ प्रघासी न सान्तपनः । वा० य० १७,८५
३९१ सान्तपनाः इदं हविः । तत् जुजुष्टन ७,५९,९
४४७ सान्तपनाः मत्सराः मादयिष्णवः । अथर्व० ७,८२,३

तपिष्ठम्

३९० तपिष्ठेन हन्मना हन्तन तम् ७,५९,८

तपुस्

२०७ वर्तयत तपुषा चक्रिया अभि तम् २,३४,९

तमस्

२९ दिवा चित् तमः कृण्वन्ति १,३८,९
१२४ गूहत गुह्यं तमः । वि यात विश्वं अत्रिणम् १,८६,१०
३६४ अप बाधध्वं वृषणः तमांसि ७,५६,२०
४३५ तां विध्यत तमसा अपव्रतेन । अथर्व० ३,२,६

तरस्

२६४ यस्य तरेम तरसा शतं हिमाः ५,५४,१५

तरुतृ

३२१ न अस्य वर्ता न तरुता नु अस्ति ६,६६,८

तरुषन्ते [नामधातुः]

३०० वक्षन्ते अस्मत् तरुषन्ते आ रजः ५,५९,१

तवस्

१६५ [illegible] तवसः विरप्शिनः १,१६६,८
४५२ प्रिये प्रियासः तवसः स्याम ५,६०,४
१२९ रजस्तुरं तवसं मारुतं गणम् १,६४,१२
२९२ त्वेषं गणं तवसं खादिहस्तम् ५,५८,२
३१८ प्रयज्यवे सुखादये तवसे भन्ददिष्टये ५,८७,१
१६४ प्रत्वक्षसः प्रतवसः विरप्शिनः १,८७,१
४२३ स्वतवान् च प्रघासी च । वा० य० १७,८५
११४ गिरयः न स्वतवसः रघुष्यदः १,६४,७
१३७ ते अवर्धन्त स्वतवसः महित्वना आ १,८५,७
१५९ न मर्धन्ति स्वतवसः हविष्कृतम् १,१६६,२
१८४ [illegible] स्वतवसः १,१६८,२
३९३ इहेह वः स्वतवसः आ वृणे ७,५९,११
३२२ तुराय । मारुताय स्वतवसे भरध्वम् ६,६६,९

तविषः

४८० अहं हि उग्रः तविषः तुविष्मान् १,१६५,६
[इन्द्रः ३२५६]
४८३ स्वेन भामेन तविषः बभूवान् १,१६५,८
[इन्द्रः ३२५९]

३२२ त्वेषः ययिः तविषः एवयामरुत् ५,८७,५
२५१ प्र वः मरुतः तविषाः उदन्यवः ५,५४,२
४९५ अस्मात् अहं तविषात् ईषमाणः १,१७१,४
[इन्द्रः ३२६६]
१५८ युधा इव शक्राः तविषाणि कर्तन १,१६६,१
१६६ मिथस्पृध्या इव तविषाणि आहिता १,१६६,९
३७ युष्माकं अस्तु तविषी पनीयसी १,३९,२
३९ युष्माकं अस्तु तविषी तना युजा १,३९,४
२६६ स्वयं दधिध्वे तविषीं यथा विद ५,५५,२
११४ यत् आरुणीषु तविषीः अयुग्ध्वम् १,६४,७
११२ वातान् विद्युतः तविषीभिः अक्रत १,६४,५
११७ संमिश्लासः तविषीभिः विरप्शिनः १,६४,१०
१४८ अया ईशानः तविषीभिः आवृतः १,८७,४
१६१ आ ये रजांसि तविषीभिः अव्यत १,१६६,४
१९९ मृगाः न भीमाः तविषीभिः अर्चिनः २,३४,१
२१४ प्र यन्तु वाजाः तविषीभिः अग्नयः ३,२६,४

तविषी-मत्
२९२ तं उ नूनं तविषीमन्तं एषाम् ५,५८,१

तविषी-युः
४७ यत् अङ्ग तविषीयवः। यामं अचिध्वम् ८,७,२

तष्ट
१९४ हृदा तष्टः मनसा धायि देवाः १,१७१,२
२९५ विभ्वतष्टं जनयथ यजत्राः ५,५८,४

तस्थिवस्
२३५ आ एतान् रथेषु तस्थुषः। कः शुश्राव ५,५३,२

ताति
२०७ यः नः मरुतः वृकताति मर्त्यः २,३४,९
३७६ अच्छ सूरीन् सर्वताता जिगात ७,५७,७

तायुः
२२८ ते मे के चित् न तायवः ५,५२,१२

तिग्मम्
४२६ तिग्मं अनीकं विदितं सहस्वत्। अथर्व० ४,२७,७

तिरस् [कुटिलगत्यर्थे]
४०१ सूरयः। तिरः आपः इव स्रिधः ८,९४,७

तिरस् [गर्हः]
३८ तिरः चित्तानि वसवः जिघांसति ७,५९,८

तिरस् [गुप्तः]
२४७ अति इयाम निदः तिरः स्वस्तिभिः ५,५३,१४

तिष्ठत्
८५ वि द्वीपानि पापतन् तिष्ठत् दुच्छुना ८,२०,४

तिष्यः
२६२ न यः युच्छति तिष्यः यथा दिवः ५,५४,१३

तु
५६ आ तु नः उप गन्तन ८,७,११

तुतुर्वणिः
१८३ यज्ञायज्ञा वः समना तुतुर्वणिः १,१६८,१

तुन्दान
४३९ एरं तुन्दाना पत्या इव जाया। अथर्व० ६,२२,३

तुन्न
४३९ एजाति ग्लहा कन्या इव तुन्ना। अथर्व० ६,२२,३

तुर्
२०१ नदस्य कर्णैः तुरयन्ते आशुभिः २,३४,३

तुरः
१७१ युष्माकेन परीणसा तुरासः १,१६६,१४
३६३ इमे तुरं मरुतः रमयन्ति ७,५६,१९
३४२ प्र चित्रं अर्कं गृणते तुराय ६,६६,९
१९३ सूक्तेन भिक्षे सुमतिं तुराणाम् १,१७१,१
३१८ या मृळीके मरुतां तुराणाम् ६,४८,१२
३५४ प्रिया वः नाम हुवे तुराणाम् ७,५६,१०
३८१ अव तत् एनः ईमहे तुराणाम् ७,५८,५
११९ रजस्तुरं तवसं मारुतं गणम् १,६४,१२

तुर्व्
१०५ याभिः सिन्धुं अवथ याभिः तूर्वथ १,६३,२४

तुर्वशः
६३ येन आव तुर्वशं यदुम् ८,७,१८

तुवि-जात
१८६ अरेणवः तुविजाताः अचुच्यवुः दृळ्हानि चित्
१,१६८,४

तुवि-द्युम्नः
१५३ तुविद्युम्नासः धनयन्ते अद्रिम् १,८८,३
३०४ तुविद्युम्नाः अवन्तु एवयामरुत् ५,८७,७

तुवि-मघः
२९१;२९९ तुविमघासः अमृताः ऋतज्ञाः ५,५६,८;५८,८

तुवि-मन्युः
३७८ भीमासः तुविमन्यवः अयासः ७,५८,२

तुवि-राधस्
२९३ वन्दस्व विप्र तुविराधसः नॄन् ५,५८,२

तुविष्मत्
४८५ अहं हि उग्रः तविषः तुविष्मान् १,१६५,६ [इन्द्रः ३२५५]
३५१ अध मरुद्भिः गणः तुविष्मान् ७,५६,७
३७७ यः दैव्यस्य धाम्नः तुविष्मान् ७,५८,१

तुवि-स्वन
१५८ ऐधा इव यामन् मरुतः तुवि-स्वनः १,१६६,१

तुवि-स्वनिः
२८१ उत स्यः वाजी अरुषः तुवि-स्वनिः ५,५६,७
३३१ त्वेषं शर्धः न मारुतं तुवि-स्वनि ६,४८,१५

तूयम्
३८६ सुमतिः नवीयसी । तूयं यात पिपीषवः ७,५९,४

तुर्
३४० अनवसः अनभीशुः रजस्तूः ६,६६,७
१५२ शुभे कं यान्ति रथतूर्भिः अश्वैः १,८८,२

तूर्य
६९ शुष्णं आवन् । अनु इन्द्रं वृत्रतूर्ये ८,७,२४

तृण
१६४ अलातृणासः विदथेषु सु-स्तुताः १,१६६,७

तृण-स्कन्द
१९७ तृणस्कन्दस्य नु विशः परि वृङ्क्त १,१७२,३

तृप्
४४४ ये कीलालेन तर्पयन्ति ये घृतेन । अथर्व० ४,२७,५
४५९ वाश्राः आपः पृथिवीं तर्पयन्तु । अथर्व० ४,१५,५
३५४ आ यत् तृपत् मरुतः वावशानाः ७,५६,१०
१३३ कामं विप्रस्य तर्पयन्त धामभिः १,८५,११

तृप्तांशुः
१८५ सोमासः न ये सुताः तृप्तांशवः १,१६८,३

तृम्प्
४७७ सद्यः गव्येन तृम्पतु १,२३,७; [इन्द्रः ३३४६]

तृपु-च्यवस्
३४३ तृपुच्यवसः जुहः न अग्नेः ७,५६,१०

तृष्णज्
१३३ असिञ्चन् उत्सं गोतमाय तृष्णजे १,८५,११
२८४ तृष्णजे न दिवः उत्साः उदन्यवे ५,५७,१

तृष्णा
२६ निर्ऋतिः । पदीष्ट तृष्णया सह १,३८,६

तॄ
३८४ अहनि प्रिये । ईजानः तरति द्विषः ७,५९,२
३८४ प्र सः क्षयं तिरते वि महीः इषः ७,५९,२
३७३ गतः न अश्वा वि तिराति जन्तुम् ७,५८,३
२५४ यस्य तरेम तरसा शतं हिमाः ५,५४,१५
३६८ अपः येन सुक्षितये तरेम ७,५६,२४
३७४ प्र वाजेभिः तिरत पुष्यसे नः ७,५७,५
३५८ प्र नामानि प्रयज्यवः तिरध्वम् ७,५६,१४
३७९ प्र नः स्पार्हाभिः ऊतिभिः तिरेत ७,५८,३
४७१ ये ईङ्खयन्ति पर्वतान् । तिरः समुद्रं अर्णवम् १,१९,७ [अग्निः २४४४]
४७२ आ ये तन्वन्ति रश्मिभिः । तिरः समुद्रं ओजसा १,१९,८ [अग्निः २४४५]
१२१ चर्कृत्यं मरुतः पृत्सु दुस्तरम् १,६४,१४
१५७ दिद्युत् यत् च दुस्तरम् १,१३९,८
२०५ सनिं मेधां अरिष्टं दुस्तरं सहः २,३४,७

तोकम्
१२१ तोकं पुष्येम तनयं शतं हिमाः १,६४,१४
३६४ धत्त विश्वं तनयं तोकं अस्मे ७,५६,२०
२४३ येन तोकाय तनयाय धान्यं । बीजं ५,५३,१३
४३६ नः तनूभ्यः मयः तोकेभ्यः कृधि । अथर्व० १,२६,४
३४१ तोके वा गोषु तनये यं अप्सु ६,६६,८

त्मन्
१८६ अमर्त्याः कशया चोदत त्मना १,१६८,४
१८७ रेजति त्मना हन्वा इव जिह्वया १,१६८,५
२६८ धृषज्जिनः । त्मना पान्ति शश्वतः ५,५२,२
२६९ मरुतः शर्धं त्मना दिवः ५,५२,३
२७४ प्र स्कन्धः युञ्जत त्मना ५,५२,८
३२१ यत् बहुला त्मना तत् अपि वृद्धिः ५,८७,४
३६६ ये नः त्मना शतिनः वर्धयन्ति ७,५७,७
४०६ अधः स्ये । त्मना च द्युम्नैः वर्धयन् ८,२०,८

४०९ त्मना रिरिचे अभ्रात् न सूर्यः १०,७७,३

त्यजस्

१६९ इन्द्रः चन त्यजसा वि हुणाति १,१६६,१२

त्यद्

१५ उत उ त्ये सूनवः गिरः १,३७,१०
५२ उत उ त्ये अरुणप्सवः ८,७,७
६७ सं उ त्ये महतीः अपः । दधुः ८,२०,२२
४६५ प्रति त्यं चारुं अध्वरम् १,१९,१; [अग्निः २४३८]
१६ त्यं चित् घ दीर्घं पृथुं । प्र च्यवयन्ति १,३७,११
४०६ त्यं नु मारुतं गणं । हुवे ८,९४,१२
४०४ त्यान् नु पूतदक्षसः । हुवे ८,९४,१०
४०५ त्यान् नु ये वि रोदसी । तस्तभुः हुवे ८,९४,११
१५५ एतत् त्यत् न योजनं अचेति १,८८,५

त्रातृ

३६६ त्रातारः भूत पृतनासु अर्यः ७,५६,२२

त्रि

५५ त्रीणि सरांसि पृश्नयः । दुदुहे वज्रिणे मधु ८,७,१०

त्रिः

३३५ द्विः यत् त्रिः मरुतः ववृधन्त ६,६६,२

त्रितः

२१२ त्रितः न यान् पञ्च होतॄन् अभिष्टये । आववर्तत् २,३४,१४
२५१ सं विद्युता दधाति वाशति त्रितः ५,५४,२
२०८ त्रितं जराय जुरतां अदाभ्याः २,३४,१०
६९ अनु त्रितस्य युध्यतः । शुष्मं आवन् ८,७,२४

त्रि-धातु

१३४ त्रिधातूनि दाशुषे यच्छत अधि १,८५,१२

त्रि-सधस्थ

३९९ पिबन्ति मित्रः अर्यमा । त्रि-सधस्थस्य जावतः ८,९४,५

त्रिष्टुप्

४६ प्र यत् वः त्रिष्टुभं इषं । अक्षरत् ८,७,१

त्रि-सप्त

४३२ त्रि-सप्तासः मरुतः स्वादुसंमुदः । अथर्व० १३,१,३

त्रै

२२८ यं त्रायध्वे स्याम ते ५,५३,१५
३८३ यं त्रायध्वे इदमिदं । देवासः ७,५९,१
४३७ त्रायन्तां इमं देवाः । त्रायन्तां मरुतां गणाः । त्रायन्तां विश्वा भूतानि । अथर्व० ४,१३,४

त्वक्षस्

८७ तनूषु । आ त्वक्षांसि बाह्वोजसः ८,२०,६
१४५ प्रत्वक्षसः प्रतवसः विरप्शिनः १,८७,१
२८७ प्रत्वक्षसः महिना द्यौः इव उरवः ५,५७,४

त्वच्

३९३ स्वतवसः । कवयः सूर्यत्वचः ७,५९,११

त्वचस्

४३० मरुतः सूर्यत्वचसः । शर्म यच्छाथ । अथर्व० १,२६,

त्वष्टृ

१३१ त्वष्टा यत् वज्रं सुकृतं हिरण्ययं । अवर्तयत् १,८५,९

त्वावत्

४८८ न त्वावान् अस्ति देवता विदानः १,१६५,९ [इन्द्रः ३३५८]

त्विष्

२६१ सं अच्यन्त वृजना अतित्विषन्त यत् ५,५४,१२
४०१ कत् अत्विषन्त सूरयः । तिरः आपः इव ८,९४,७
४२० महाग्रामः न यामन् उत त्विषा १०,७८,६
२२८ क्षमाः आसन् दृशि त्विषे ५,५२,१२
२५२ वातत्विषः मरुतः पर्वतच्युतः ५,५४,३
२८७ वातत्विषः मरुतः वर्षनिर्णिजः ५,५७,४

त्विषि-मत्

३४३ त्विषिमन्तः अध्वरस्य इव दिद्युत् ६,६६,१०

त्वेष

३२२ त्वेषः ययिः तविषः एवयामरुत् ५,८७,५
४५९ त्वेषः अर्कः नभः उत् पातयाथ । अथर्व० ४,१५,५
२७ सत्यं त्वेषाः अमवन्तः । मिहं कृण्वन्ति १,३८,७
८८ महि त्वेषाः अमवन्तः वृषप्सवः ८,२०,७
३५ क्रन्दस्व । त्वेषं पनस्युं अर्किणम् १,३८,१५
१८८ वि अद्रिणा पतथ त्वेषं अर्णवम् १,१६८,६
२४३ त्वेषं गणं मारुतं नव्यसीनाम् ५,५३,१०
२९३ त्वेषं गणं तवसं खादिहस्तम् ५,५८,२
१८९ त्वेषा विपाका मरुतः पिपिष्वती १,१६८,७
१९१ त्वेषं अयासां मरुतां अनीकम् १,१६८,९
२१५ आ त्वेषं उग्रं अवः ईमहे वयम् २,३४,५
२८३ तं वः शर्धं रथेशुभं त्वेषम् ५,५६,९

त्वेष

३३३ त्वेषं शवः अवतु एवयामरुत् ५,८७,६
३३१ त्वेषं शर्धः न मारुतं तुवि-स्वनि ६,४८,१५
३३२ त्वेषं शवः दधिरे नाम यज्ञियम् ६,४८,२१
९४ नाम त्वेषं शश्वतां एकं इत् भुजे ८,२०,१३

त्वेष-द्युम्न

९ त्वेषद्युम्नाय शुष्मिणे। देवत्तं ब्रह्म गायत १,३७,५

त्वेष-प्रतीका

१७६ त्वेषप्रतीका नभसः न इत्या १,१६७,५

त्वेष-याम

१६२ यत् त्वेषयामाः नदयन्त पर्वतान् १,१६६,५

त्वेष-रथः

२१४ मारुतः गणः। त्वेषरथः अनेद्यः ५,६१,१३

त्वेष-संदृश्

१३० राजानः इव त्वेषसंदृशः नरः १,८५,८
२८८ सुदानवः। त्वेषसंदृशः अनवभ्रराधसः ५,५७,५

त्वेष्य

३७८ अनुः चित् वः मरुतः त्वेष्येण ७,५८,२

दंष्ट्रा

१५५ पावकान् हिरण्यचक्रान् अयोदंष्ट्रान् १,८८,५

दंसनम्

३२५ [illegible] न दंसना। अप द्वेषांसि ५,८७,८
१७० [illegible] नरः दंसनैः आ चिकित्रिरे १,१६६,१३

दंसस्

१२३ [illegible] दंससः १,८५,१

दक्षम्

४०१ [illegible] दक्षसः ८,९४,७
४०४ [illegible] पूतदक्षसः। [illegible] ८,९४,१०

दक्षिणा

१८९ [illegible] दक्षिणा १,१६८,७
४४९ प्रदक्षिणित् [illegible] ५,६०,१

दत्र [धनम्]

१६३ [illegible] १,१६६,३

दत्त

१६६ [illegible] दत्तस्य [illegible] ५,५६,१३

ददाश्वस्

१६० [illegible] ददाशुषे १,१६६,३
१६१ [illegible]

दद्दहाणः

१३१ दद्दहाणं चित् बिभिदुः वि पर्वतम् १,८५,१०

दधानः

४५७ सुमकेतेभिः ससहिः दधानः १,१७१,३; [इन्द्रः ३२६८]
१ गर्भत्वं एरिरे। दधानाः नाम यज्ञियम् १,६,४
४९१ अनेद्यः श्रवः आ इषः दधानाः १,१६५,१२ [इन्द्रः ३२६१]
३३८ आ नाम धृष्णु मारुतं दधानाः ६,६६,५

दधृष्वत्

४८९ यः नु दधृष्वान् कृणवै मनीषा १,१६५,१० [इन्द्रः ३२५९]

दभ्

३५९ नु चित् यं अन्यः आदभत् अरावा ७,५६,१५

दमम्

५७ सुदानवः। [illegible] दमे ८,७,१६

दम्य

३५८ [illegible] दम्यं [illegible] ७,५६,१४

दत्नु

३६१ [illegible] ६,६६,८

दर्दिर

६०० [illegible] १०,७८,[illegible]

दशत

२८१ [illegible] ५,५६,७
६६ [illegible] दशग्वम् १,३८,१०
११३ [illegible] १,६४,६

दस्य

[illegible]

दस्विन्नत्

[illegible]

दस्मन्तः

[illegible]

दस्मन्तम्

[illegible]

दस्म

[illegible]
[illegible]

दस्म-वर्चस्

४०१ देवानां अवः वृणे । त्मना च **दस्मवर्चसाम्** ८,९४,८

दस्र

२६९ न यः **दस्राः** उप दस्यन्ति धेनवः ५,५४,५

दा

२३३ शाकिनः । एकमेका शता **ददुः** ५,५२,१७
४३४.१ चक्षूंषि अग्निः आ **दत्ताम्** । अथर्व० ३,१,६
४४ प्रयज्यवः । कृण्वं **दद** प्रचेतसः १,३९,९
२९० चन्द्रवत् राधः मरुतः **दद** नः ५,५६,७
२०५ तं नः **दात** मरुतः वाजिनं रथे २,३४,७
३५९ मक्षु रायः सुवीर्यस्य **दात** ७,५६,१५
३७५ **ददात** नः अमृतस्य प्रजायै ७,५७,६
१३४ त्रिधातूनि दाशुषे **यच्छत** अधि १,८५,१२
३८३ मित्र अर्यमन् । मरुतः शर्म **यच्छत** ७,५९,१
४३० शर्म **यच्छाथ** सप्रथाः । अथर्व० १,२६,३
१४० पूर्वीभिः हि **ददाशिम** शरद्भिः १,८६,६
४१३ मरुद्भ्यः न मानुषः **ददाशत्** १०,७७,७
४९६ उग्रः उग्रेभिः स्थविरः सहोदाः १,१७१,५
[इन्द्रः ३२६७]
२५४ अनश्वदां यत् नि अयातन गिरिम् ५,५४,५

दातवे

३८८ अवित च नः । स्पार्हाणि **दातवे** वसु ७,५९,६

दाति-वारः

१७९ वव्रधे ईं मरुतः **दातिवारः** १,१६७,८
२९३ खादिहस्तं । धुनिव्रतं मायिनं **दातिवारम्** ५,५८,२

दातिः

२७४ जुषध्वं नः हव्य**दातिं** यजत्राः ५,५५,१०

दात्रम्

१६९ दीर्घं वः **दात्रं** अदितेः इव व्रतम् १,१६६,१२
३६५ मा वः **दात्रात्** मरुतः निः अराम ७,५६,२१

दाधृविः

३३६ यान् चो नु **दाधृविः** भरध्यै ६,६६,३

दानम्

२३० मार्दतं गणं । **दाना** मित्रं न योषणा ५,५२,१४
२३१ **दाना** सचेत सूरिभिः यामश्रुतेभिः ५,५२,१५
३२९;३५ **दाना** मह्ना तत् एषाम् ५,८७,२;८,२०,१४
४१९ दस्माः । **विदानासः** वसवः राध्यस्य १०,७७,६

दानु-चित्र

३०७ सं **दानुचित्राः** उषसः यतन्ताम् ५,५९,८

दानुः

२०२ मित्राय वा सदं आ जीर**दानवः** २,३४,४
२३८ मुदे दधे मरुतः जीर**दानवः** ५,५३,५
२५८ प्रवत्वन्तः पर्वताः जीर**दानवः** ५,५४,९
१७२;१८२;१९२;४९७ विद्याम इषं वृजनं जीर**दानुम्**
१,१६६,१५;१६७,११;१६८,१०;१७१,६ [इन्द्रः ३२६
३३८ नु चित् सु**दानुः** अव यासत् उग्रान् ६,६६,५
५ यूयं हि स्थ सु**दानवः** १,१५,२
४७९ हत वृत्रं सु**दानवः** १,२३,९; [इन्द्रः ३२४९]
४५ असामि ओजः विभृथ सु**दानवः** १,३९,१०
११३ पिन्वन्ति अपः मरुतः सु**दानवः** १,६४,६
१३२ धमन्तः वाणं मरुतः सु**दानवः** १,८५,१०
१९५ चित्रः ऊती सु**दानवः** । अहिभानवः १,१७२,१
१९६ आरे सा वः सु**दानवः** । शरुः १,१७२,२
१९७ तृणस्कन्दस्य नु विशः परि वृङ्क्त सु**दानवः** १,१७२,
२०६ अश्वान् रथेषु भगे आ सु**दानवः** २,३४,८
२१५ सिंहाः न हेषक्रतवः सु**दानवः** ३,२६,५
२२१ अर्हन्तः ये सु**दानवः** । नरः ५,५२,५
२३९ आ यं नरः सु**दानवः** ददाशुषे ५,५३,६
२८८ पुरुद्रप्साः अञ्जिमन्तः सु**दानवः** ५,५७,५
३९२ आ गत । युष्माक ऊती सु**दानवः** ७,५९,१०
५७ यूयं हि स्थ सु**दानवः** । रुद्राः ८,७,१२
६४ इमाः उ वः सु**दानवः** । पिप्युषीः इषः ८,७,१९
६५ क्व नूनं सु**दानवः** । मदथ वृक्तबर्हिषः ८,७,२०
९९ ये च अर्हन्ति मरुतः सु**दानवः** ८,२०,१८
१०४ आ भेषजस्य वहत सु**दानवः** ८,२०,२३
४१९ दिधिषवः न रथ्यः सु**दानवः** १०,७८,५
४६१;४६३ सं वः अवन्तु सु**दानवः** । अथर्व० ४,१५,७.९
४३३ आ वः रोहितः शृणवत् सु**दानवः** । अथर्व० १३,१,३

दाभ्य

२०८ त्रितं जराय जुरतां अ**दाभ्याः** २,३४,१०
६० सुम्नं भिक्षेत । अ**दाभ्यस्य** मन्मभिः ८,७,१५

दावनम्

३०० प्र वः स्पट् अक्रन् सुविताय **दावने** ५,५९,१
३०३ प्र यत् भरध्वे सुविताय **दावने** ५,५९,४
७९ आ नः मखस्य **दावने** । देवासः उप गन्तन ८,७,२७

दाश्
२८४ महीः इषः । यः वः वराय दाशति ७,५६,२
४०५ याभिः तृक्षिं । याभिः दशस्यथ क्रिविम् ८,२०,२४

दाश्वस्
१३४ निधातुनि दाशुषे यच्छत अधि १,८५,१२
२८६ धूनुथ द्यां पर्वतान् दाशुषे वसु ५,५७,३

दास्
२३५ कस्मै सस्नुः सुदासे अनु आपयः ५,५३,२

दिदृक्षेण्य
२३८ सदृशं । दिदृक्षेण्यं सूर्यस्य इव चक्षणम् ५,५३,४

दिद्युत्
१३३ यत्र वः दिद्युत् रदति क्रिविर्दती १,१६६,६
३४३ त्विषिमन्तः अध्वरस्य इव दिद्युत् ६,६६,१०
३७३ ऋधक् सा वः मरुतः दिद्युत् अस्तु ७,५७,४

दिद्युः
३५३ सनेमि अस्मत् युयोत दिद्युम् ७,५६,९
२५२ विद्युन्महसः नरः अश्मदिद्यवः ५,५४,३

दिधिषुः
४१९ दिधिषवः न रथ्यः सुदानवः १०,७८,५

दिनम्
४५३ सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः ५,६०,५

दिव्
१०९ ते जज्ञिरे दिवः ऋष्वासः उक्षणः १,६४,२
१११ साकं जज्ञिरे स्वधया दिवः नरः १,६४,४
२२१ यज्ञियेभ्यः । दिवः अर्च मरुद्भ्यः ५,५२,५
२२२ विद्युतः [illegible] । मनुः अति त्मना दिवः ५,५२,६
२३० दिवः वा धृष्णवः ओजसा । स्तुताः ५,५२,१४
२८८ दिवः अर्काः अमृतं नाम भेजिरे ५,५७,५
३०५ दिवः मर्याः आ नः अच्छ जिगातन ५,५९,६
३४४ दिवः स्पर्शि [illegible] मर्याः ६,६६,११
२४९ सूर्ये उदिते मदथ दिवः नरः ५,५४,१०
२८४ [illegible] न दिवः [illegible] ५,५५,१
४०४ [illegible] । दिवः वः मरुतः हुवे ८,९४,१०
४३३ अतः समुद्रात् दिवं उद् वहन्ति । अथर्व० ४,२७,४
३०० अर्वं दिवे प्र पृथिव्यै ऋतं भरे ५,५९,१
४ आ गहि । दिवः वा रोचनात् अधि १,६,९
११ दिवः वा [illegible] १,१९,६
२२ क्व नूनं । यन्त दिवः न पृथिव्याः १,३८,२
१३५ यस्य हि क्षये । पाथ दिवः विमहसः १,८६,१
१३९ दिवः वा पृष्ठं नर्याः अचुच्यवुः १,१६६,५
१८३ अव स्वयुक्ताः दिवः आ वृथा ययुः १,१६८,४
२२३ सचस्वे वा महः दिवः ५,५२,७
२३२ दशस्यथ । दिवः कोशं अचुच्यवुः ५,५३,६
२४१ आ यात मरुतः दिवः । आ अन्तरिक्षात् ५,५३,८
२५० सर्वेस्तुभे दिवः आ पृष्ठयज्वने ५,५४,१
२६२ न वः दुच्छति स्रिधः यथा दिवः ५,५४,१३
२७५ अव हुवे । दिवः चित् रोचनात् अधि ५,५६,१
३०६ अस्तात् दिवः बृहतः सानुनः परि ५,५९,७
४५१ दिवः चित् सानु रेजत स्वने वः ५,६०,३
४५५ दिवः वहध्वे उत्तरात् अधि स्नुभिः ५,६०,७
३६० प्र ये दिवः बृहतः शृण्विरे गिरा ५,८७,३
५१ वक्षः अधि स्नुना दिवः ८,७,७
५३ मरुतः यत् ह वः दिवः । हवामहे ८,७,११
५८ आ नः रयिं । इयर्त मरुतः दिवः ८,७,१३
९८ दिवः वदन्ति असुरस्य वेधसः ८,२०,१७
४०३ पर्थिवाने । यन्मद् रोचन दिवः ८,९४,९
४०८ दिवः पुत्रासः एताः न येतिरे १०,७७,२
४०९ प्र ये दिवः पृथिव्याः न बर्हणा १०,७७,३
४३४ प्रनं प्रवन्दः अनुनं दिवः परि । अथर्व० ४,१५,१०
४४३ दिवः पृथिवीं अभि ये सृजन्ति । अथर्व० ४,२७,४
४७० दिवि देवतः अग्ने १,१९,६ [अग्निः २४४३]
१२४ दिवि रुक्मः अधि यन्तिरे शुभे १,८५,३
२२९ अव महः । दिवि क्षमा च मन्महे ५,५२,३
४५४ यत् वा अग्ने सुभगासः दिवि स्थ ५,६०,६
३१३ विक्रम्य । दिवि रुक्मः इव उपरि ५,६१,१२
४५६ वैश्वानर प्रदिवा केतुना सजूः ५,६०,८

दिव
१७३ [illegible] न [illegible]दिवः [illegible] १,१६७,२

दिवा
२९ दिवा चित् तमः कृण्वन्ति । पर्जन्येन १,३८,९
५१ नरं अस्मे । युवत् दिवा [illegible] ८,७,६

दिविष्टिः
१३८ [illegible] । [illegible] दिविष्टिषु १,८६,४

दिवे-दिवे
३३८ [illegible] । [illegible] दिवे-दिवे ३,३०,११?
३०५ [illegible] दिवे-दिवे ६,३६,७

दिव्य
१६८ दूरेदृशः ये दिव्याः इव स्तृभिः १,१६६,११
२०७ आ अनुच्यवुः दिव्यं कोशं एते ५,५९,८
११० प्र च्यवयन्ति दिव्यानि मज्मना १,६४,३
११२ दुहन्ति ऊधः दिव्यानि धूतयः १,६४,५

दिश्
८७ यत्र नरः देदिशते तनूषु । आ त्वक्षांसि ८,२०,६
३३० नृप्रभोजसं । विष्णुं न स्तुषे आदिशे ६,४८,१४

दिशा
१३३ जिह्मं नुनुद्रे अवतं तया दिशा १,८५,११
४६२ वाताः वान्तु दिशोदिशः । अथर्व० ४,१५,८

दीतिः
८३ ऋभुक्षणः । आ रुद्रासः सुदीतिभिः ८,२०,२

दीर्घ
१६ त्यं चित् घ दीर्घं पृथुं । प्र च्यवयन्ति १,३७,११
१६९ दीर्घं वः दात्रं अदितेः इव व्रतम् १,१६६,१२
१७१ येन दीर्घं मरुतः शूशवाम १,१६६,१४
२५४ दीर्घं ततान सूर्यः न योजनम् ५,५४,५
३२४ दीर्घं पृथु पप्रथे सद्म पार्थिवम् ५,८७,७

दुच्छुना
८५ वि द्वीपानि पापतन् तिष्ठत् दुच्छुना ८,२०,४

दु-ध्र-कृत्
११८ ध्रुवच्युतः । दुध्रकृतः मरुतः भ्राजदृष्टयः १,६४,११

दु-ध्रः
२७७ शिमीवान् अमः । दुध्रः गौः इव भीमयुः ५,५६,३

दुर्गम्
२५३ वि दुर्गाणि मरुतः न अह रिष्यथ ५,५४,४

दुर्धर्तुः
३२६ तस्य प्रचेतसः । स्यात दुर्धर्तवः निदः ५,८७,९

दुर्धुर्
२७८ रिणन्ति ओजसा । वृथा गावः न दुर्धुरः ५,५६,४

दुर्मतिः
३५३ मा वः दुर्मतिः इह प्रणक् नः ७,५६,९

दुर्मद
४० प्रो आरत मरुतः दुर्मदाः इव १,३९,५

दुर्हणा
२६ परापरा । निर्ऋतिः दुर्हणा वधीत् १,३८,६

दुवस्
१८५ हृत्सु पीतासः दुवसः न आसते १,१६८,३
१९ सन्ति कण्वेषु वः दुवः १,३७,१४
४९३ आ यत् दुवस्यात् दुवसे न कारुः १,१६५,१४
[इन्द्रः ३२३३]

दुवस्य
४९३ आ यत् दुवस्यात् दुवसे न कारुः १,१६५,१४
[इन्द्रः ३२३३]

दुवस्यत्
१७७ गायत गाथं सुतसोमः दुवस्यन् १,१६७,६

दुःशंसः
४७९ मा नः दुःशंसः ईशत १,२३,९ [इन्द्रः ३२४९]

दुस्तर
१२१ चर्कृत्यं मरुतः पृत्सु दुस्तरम् १,६४,१४
१५७ अस्मासु तत् मरुतः यत् च दुस्तरं । दिधृत १,१३९,८
,, अस्मासु तत् । दिधृत यत् च दुस्तरम् १,१३९,८
२०५ सनिं मेधां अरिष्टं दुस्तरं सहः २,३४,७

दुह्
११२ दुहन्ति ऊधः दिव्यानि धूतयः १,६४,५
११३ उत्सं दुहन्ति स्तनयन्तं अक्षितम् १,६४,६
३२८ मारुताय स्वभानवे । श्रवः अमृत्यु धुक्षत ६,४८,१२
३२९ भरद्वाजाय अव धुक्षत द्विता ६,४८,१३
४८ पृश्निमातरः । धुक्षन्त पिप्युषीं इषम् ८,७,३
३३४ सकृत् शुक्रं दुदुहे पृश्निः ऊधः ६,६६,१
५५ दुदुह्रे वज्रिणे मधु । उत्सं कवन्धं उद्रिणम् ८,७,१०
२०८ पृश्न्याः यत् ऊधः अपि आपयः दुहुः २,३४,१०
३३७ निः यत् दुह्रे शुचयः अनु जोषम् ६,६६,४
४५३ सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः ५,६०,५
३२७ आ सखायः सबर्दुघां । धेनुं अजध्वम् ६,४८,११

दुहत्
६१ ये द्रप्साः इव । उत्सं दुहन्तः अक्षितम् ८,७,१६

दुर्हणायुः
३९० यः नः मरुतः अभि दुर्हणायुः ७,५९,८

दूतः
४३४ अग्निः हि एषां दूतः प्रत्येतु विद्वान् । अथर्व० ३,१,२

दूरे-अमित्रः
४३४.४ दूरे-अमित्रः च गणः । वा०य० १७,८६

३२९ धेनुं च विश्वदोहसं। इषं च विश्वभोजसम् ६,४८,१३

द्यावा-पृथिवी

२७१ उत द्यावापृथिवी याथन परि ५,५५,७

द्यु

२३६ ये आययुः । उप द्युभिः विभिः मदे ५,५३,३
४०९ रिशादसः न मर्याः अभिद्यवः १०,७७,३
४१८ जीगीवांसः न शूराः अभिद्यवः १०,७८,४
३ अनवद्यैः अभिद्युभिः। मखः सहस्वत् अर्चति १,६,८

द्युत्

९२ रुक्मासः अधिः बाहुषु। दविद्युतति ऋष्टयः ८,२०,११
२०० वि अभ्रियाः न द्युतयन्त वृष्टयः २,३४,२
४६२ आशामाशां वि द्योतताम् । अथर्व० ४,१५,८

द्यु-मत्

१२१ द्युमन्तं शुष्मं मघवत्सु धत्तन १,६४,१४

द्युम्न

१५७ तानि पौंस्या सना भूवन् द्युम्नानि १,१३९,८
९७ अभि सः द्युम्नैः उत वाजसातिभिः ८,२०,१६
१५३ सुजाताः । तुविद्युम्नासः धनयन्ते अद्रिम् १,८८,३
३२४ अग्नयः यथा। तुविद्युम्नाः अवन्तु एवयामरुत् ५,८७,७
९ त्वेषद्युम्नाय शुष्मिणे । देवत्तं ब्रह्म गायत १,३७,४

द्युम्न-श्रवस्

२५० द्युम्नश्रवसे महि नृम्णं अर्चत ५।५४।१

द्यो

१८१ वयं पुरा महि च नः अनु द्यून् १,१६७,१०
२५८ प्रवत्वती द्यौः भवति प्रयद्भ्यः ५,५४,९
२९७ अव उस्रियः वृषभः क्रन्दतु द्यौः ५,५८,६
३०७ मिमातु द्यौः अदितिः वीतये नः ५,५९,८
७१ उक्ष्णः रन्ध्रं अयातन। द्यौः न चक्रदत् भिया ८,७,२६
८७ अमाय वः मरुतः यातवे द्यौः जिहीते उत्तरा ८,२०,६
२८७ प्रत्वक्षसः महिना द्यौः इव उरवः ५,५७,४
२०० द्यावः न स्तृभिः चितयन्त खादिनः २,३४,२
२३८ वृष्टी द्यावः यतीः इव ५,५३,५
२८६ धूनुथ द्यां पर्वतान् दाशुषे वसु ५,५७,३
३३३ परि द्यां देवः न एति सूर्यः ६,४८,२१
३४१ सः व्रजं दर्ता पार्ये अध द्योः ६,६६,८
३९ नहि वः शत्रुः विविदे अधि द्यवि १,३९,४

द्रप्स

६१ ये द्रप्साः इव रोदसी। धमन्ति अनु वृष्टिभिः ८,२०,
४९८ द्रप्सं अपश्यं विषुणे चरन्तम् ८,९६,१४
[इन्द्रः ३१६

२८८ पुरुद्रप्साः अञ्जिमन्तः सुदानवः ५,५७,५

द्रप्सिन्

१०९ सत्वानः न द्रप्सिनः घोरवर्पसः १,६४,२

द्रविणम्

२६४ तत् वः यामि द्रविणं सद्य-ऊतयः ५,५४,१५

द्रुह्

३९० द्रुहः पाशान् प्रति सः मुचीष्ट ७,५९,८
४६७ विश्वे देवासः अद्रुहः १,१९,३; [अग्निः २४४०]

द्रोघ

११७ ये अद्रोघं अनुस्वधं। श्रवः मदन्ति ५,५२,१

द्वयाविन्

३६२ सः अद्वयावी हवते वः उक्थैः ७,५६,१८

द्विता

१४ यत् सीं अनु द्विता शवः १,३७,९
३२९ भरद्वाजाय अव धुक्षत द्विता ६,४८,१३

द्विष्

४५ परिमन्यवे। इषुं न सृजत द्विषम् १,३९,१०
३८४ अहनि प्रिये। ईजानः तरति द्विषः ७,५९,२
१०५ ऊतिभिः मयोभुवः। शिवाभिः असचद्विषः ८,२०,
४५ ऋषिद्विषे मरुतः परिमन्यवे। सृजत द्विषम् १,३९,

द्विः

३३५ द्विः यत् त्रिः मरुतः ववृधन्त ६,६६,२

द्वीपम्

८५ वि द्वीपानि पापतन् तिष्ठत् दुच्छुना ८,२०,४

द्वेषस्

१८० अर्णः न द्वेषः धृषता परि स्थुः १,१६७,९
३८२ आरात् चित् द्वेषः वृषणः युयोत ७,५८,६
४११ आरात् चित् द्वेषः सनुतः युयोत १०,७७,६
३२५ रथ्यः न दंसना। अप द्वेषांसि सनुतः ५,८७,८
३२५ अद्वेषः नः मरुतः गातुं आ इतन ५,८७,८

द्वेषः

३ उरु द्वेषः [illegible] ७,५३,१९

द्वेष्य

७ मा नः विदत् वृजिना द्वेष्या या। अथर्व० १,२०,१

धनयते (नामधातुः)

५३ सुजाताः। [illegible] धनयन्ते [illegible] १,८७,३
७३ [illegible] [illegible] धनयन्त [illegible] १,१६७,२

धन-स्पृत्

२१ धनस्पृतं [illegible] विश्वचर्षणिं। [illegible] १,६४,१४
६३ [illegible] [illegible] धनस्पृतम् ८,७,१८

धनम्

११० [illegible] धना [illegible] १,६४,१३

धन्व-च्युत्

१८७ धन्वच्युतः [illegible] न [illegible]। [illegible] १,१६८,५

धन्वन्

८५ प्र धन्वानि [illegible] ८,२०,४
९३ [illegible] धन्वानि [illegible] ८,२०,१२
११२ [illegible] धन्वना [illegible] ५,५३,६
२७ धन्वन् [illegible] १,३८,७
११७ [illegible] धन्वसु ५,५३,४
१८५ [illegible] सुधन्वानः [illegible] ५,५७,२

धरुणः

४२४.१ धरुणः [illegible] १७,८१

धर्तुः

११६ [illegible] सुधर्तवः [illegible] ५,८९,१

धर्तृ

४१४.१ [illegible] धर्ता [illegible] १७,८१
१६८ [illegible] विधर्ता ६,५३,१२
४१४.१ विधर्ता [illegible] १७,८१

धर्मन्

५० [illegible] विधर्मणे [illegible] ८,९४

धा

२५१ [illegible] दधाति [illegible] ५,५६,२
४१६ [illegible] दधाति [illegible] १०,६६,६
१११ [illegible] [illegible] [illegible]
११६ [illegible] दधाति [illegible] ६,५३,११
६१ [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible]

१८३ [illegible] दधिध्वे १,१३८,१
१६६ [illegible] दधिध्वे [illegible] ५,५५,१
११० [illegible] दधीमहि। [illegible] ५,५६,४
११५ [illegible] दधुः [illegible] ७,५७,११
१८५ [illegible] दधे १,१३८,३
१०७ [illegible] दधे [illegible] १,३४,९
११८ [illegible] दधे [illegible] ५,५३,५
४४१ [illegible] दधे [illegible]। अथर्व० ४,१७,१
११७ [illegible] दधिरे [illegible] १,३४,१०
११४ [illegible] दधिरे [illegible] १,८५,२
११५ [illegible] दधिरे [illegible] १,८५,३
१२३ [illegible] दधिरे १,८७,५
११९ [illegible] दधिरे [illegible] १,३४,१३
११५ [illegible] दधिरे [illegible] ५,५५,१
११६ [illegible] दधिरे ५,३६,११
१११ [illegible] दधिरे [illegible] ६,४८,१२
११४ [illegible] दधिरे [illegible] ७,१०४,१८
६७ [illegible] [illegible] ८,७,११
११८ [illegible] [illegible] ५,५८,७
४१६ [illegible] [illegible] १,१०१,५
[illegible]

[illegible]

धातृ

८० अन्तरिक्षेण पततः । **धातारः** स्तुवते वयः ८,७,३५

धान्यम्

२४६ येन तोकाय तनयाय **धान्यं** । बहुवे ५,५३,१३

धामन्

१३३ कामं विप्रस्य तर्पयन्त **धामभिः** १,८५,११
१५० अमीरवः । विद्रे प्रियस्य मारुतस्य **धाम्नः** १,८७,६
३७७ यः दैव्यस्य **धाम्नः** तुविष्मान् ७,५८,२

धारा

१२७ उत अश्वस्य वि स्यन्ति **धाराः** १,८५,५

धारा-वरः

१९९ **धारावराः** मरुतः धृष्ण्वोजसः । भीमाः २,३४,१

धावत्

१५५ हिरण्यचक्रान् अयोदंष्ट्रान् । **विधावतः** वराहून् १,८८,५

धित

१७४ मिम्यक्ष येषु सुधिता घृताची १,१६७,३

धियावसुः

१२२ प्रातः मक्षु **धियावसुः** जगम्यात् १,६४,१५

धीतिः

२४४ गणंगणं सुशस्तिभिः । अनु क्रामेम **धीतिभिः** ५,५३,११

धीर

१०८ वारः न **धीरः** मनसा सुहस्त्यः । गिरः सं अञ्जे १,६४,१
३४८ एतानि **धीरः** निण्या चिकेत ७,५६,४
२१६ अनवभ्रराधसः । गन्तारः यज्ञं विदथेषु **धीराः** ३,२६,६

धीः

१५३ इमां **धियं** वार्कार्यां च देवीं । ब्रह्म कृण्वन्तः १,८८,४
२०४ [illegible] **धियं** जरित्रे वाजपेशसम् २,३४,६
१८३ **धियंधियं** वः देवयाः उ दधिध्वे १,१६८,१
१७० अधा **धिया** मनवे श्रुष्टिं आव्य १,१६६,१३
३१६ [illegible] **धिया** । श्रोतारः यामहूतिषु ५,६१,१५
२३० धृष्णवः ओजसा । स्तुताः **धीभिः** इषण्यत ५,५२,१४
१४८ [illegible] **धियः** [illegible] १,८७,४

धुनिः

३४५ क्रुध्मी मनांसि । **धुनिः** मुनिः इव शर्धस्य धृष्णोः ७,५६,८
४३३-१ [illegible] न **धुनिः** च । वा० य० ३३,७
१११ ईशानकृतः **धुनयः** रिशादसः । वातान् अक्रत १,६४,५
१४६ ते क्रीळयः **धुनयः** भ्राजदृष्टयः १,८७,३
४५५ ते मन्दसानाः **धुनयः** रिशादसः । वामं धत्त ५,६०,८
३४३ अर्चत्रयः **धुनयः** न वीराः । भ्राजज्जन्मानः ६,६६,१०
४१७ वातासः न ये **धुनयः** जिगत्नवः १०,७८,३
३२० अग्नयः न स्वविद्युतः प्र स्यन्द्रासः **धुनीनाम्** ५,८७,३
९५ तेषां हि **धुनीनां** । अराणां न चरमः ८,२०,१४

धुनि-व्रतम्

२९३ स्वादिहस्तं । **धुनिव्रतं** मायिनं दातिवारम् ५,५८,२
३१८ तवसे भन्ददिष्टये **धुनिव्रताय** शवसे ५,८७,१

धुर्

२८० युङ्ग्ध्वं हरी अजिरा **धुरि** वोळ्हवे ५,५६,६
,, युङ्ग्ध्वं हरी । वहिष्ठा **धुरि** वोळ्हवे ५,५६,६
२९८ वातान् हि अश्वान् **धुरि** आयुयुज्रे ५,५८,७
२७० यत् अश्वान् **धूर्षु** पृषतीः अयुग्ध्वम् ५,५५,६
४११ यूयं **धूर्षु** प्रयुजः न रश्मिभिः १०,७७,५
२७८ रिणन्ति ओजसा । वृथा गावः न **दुर्धुरः** ५,५६,४

धू [धाव् ?]

११ धूतयः । यत् सीं अन्तं न **धूनुथ** १,३७,६
२६१ दशत् पिप्पलं मरुतः वि **धूनुथ** ५,५४,१२
२८६ **धूनुथ** द्यां पर्वतान् दाशुषे वसु ५,५७,३
४५१ क्रीळिमन्तः । आपः इव सध्र्यञ्चः **धवध्वे** ५,६०,३

धूतिः

११ आ नरः । दिवः च ग्मः च **धूतयः** १,३७,६
३६ कस्य वर्पसा । कं याथ कं ह **धूतयः** १,३९,१
४५ विसृथ सुदानवः । असामि **धूतयः** शवः १,३९,१०
११० दुहन्ति ऊधः दिव्यानि **धूतयः** । भूमिं पिन्वन्ति १,६४,५
१४७ भ्राजदृष्टयः । स्वयं महित्वं पनयन्त **धूतयः** १,८७,३
१८४ स्वनवसः । रूपं स्वः अभिजायन्त **धूतयः** १,१६८,२
२५३ वि अन्तरिक्षं वि रजांसि **धूतयः** ५,५४,४
३१५ यत्र मदन्ति **धूतयः** । [illegible] ५,६१,१३
३३९ वामी वामस्य **धूतयः** । प्रणीतिः अस्तु सूनृता ६,४८,२०
३८० प्र सः [illegible] **धूतयः** [illegible] ७,५८,४
९७ वाजसातिभिः । शुम्भा वः **धूतयः** [illegible] ८,२०,१६

धूर्षद्

२०४ अनवभ्रराधसः । [illegible] **धूर्षदः** [illegible]

धृ [धारणे]

१९ [illegible] १,३७,[illegible]

धृ [धारणे]

३२६ [illegible] । [illegible] **धारयन्ते** ८,[illegible]

१५७ अस्माद्ध तद् । द्विधृत यद् च वरूथम् १,१६६,८
१६७ वयः न पक्षान् वि अनु श्रियः धिरे १,१६६,१०
४२४.३ विधर्ता च विधारयः । वा० य० १७,८२

धृष्

३१९ क्रत्वा तद् वः मरुतः न आधृषे शवः ५,८७,२

धृषत्

१८० अग्निः न द्वेषः धृषता परि स्थुः १,१६७,९

धृषद्विन्

२१८ ते यामन् आ धृषद्विनः । त्मना पान्ति शश्वतः ५,५२,२

धृष्ट

३१९ प्र ये जाताः महिना । अधृष्टासः न अद्रयः ५,८७,२
३४३ वीराः । प्र अवस्मनसः मरुतः अधृष्टाः ६,६६,१०
४३८ अनाधृष्टासः ओजसा १,१९,४; [अग्निः २४४१]

धृष्णु

२३० दिवः वा धृष्णवः ओजसा । इयन्त ५,५२,१४
३५२ शुभ्रः वः शुष्मः क्रुध्मी मनांसि । धुनिः मुनिः इव शर्धस्य धृष्णोः ७,५६,८
३३८ आ नाम धृष्णु मारुतं दधानाः ६,६६,५
१८० ते धृष्णुना शवसा शूशुवांसः । परि स्थुः १,१६७,९

धृष्णु-ओजस्

१९९ धारावराः मरुतः धृष्ण्वोजसः । मृगाः न २,३४,१

धृष्णु-या

२१७ प्र श्यावाश्व धृष्णुया । अर्च मरुद्भिः ऋक्वभिः ५,५२,१
२१८ स्थिरस्य शवसः । सखायः सन्ति धृष्णुया ५,५२,२
२२० दधीमहि । स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया ५,५२,४

धृष्णु-सेन:

३३९ ते इत् उग्राः शवसा धृष्णुसेनाः ६,६६,६

धे

३९५ गौः धयति मरुतां । श्रवस्युः माता ८,९४,१
३६० वाहनः न क्रीळिनः पर्येधाः ७,५६,१६
५८ रयिं मदच्युतं । पुरुक्षुं विश्वधायसम् ८,७,१३

धेनु:

२०३ धेनुः न शिश्वे स्वसरेषु पिन्वते २,३४,८
२४० रजः । प्र सद्यः धेनवः यथा ५,५३,७
२३९ न वः दस्राः उप दस्यन्ति धेनवः ५,५५,५
२०४ अश्वां इव पिप्यत धेनुं ऊधनि २,३४,६
३२७ धेनुं अजध्वं उप नव्यसा वचः ६,४८,११
३२९ धेनुं च विश्वदोहसं । इषं च ६,४८,१३

२०३ इन्धन्वभिः धेनुभिः रप्शदूधभिः । गन्तन २,३४,५
४४२ पयः धेनूनां रसं ओषधीनाम् । अथर्व० ४,२७,३
३३४ समानं नाम धेनु पत्यमानम् ६,६६,१

धेयम्

४२२ सनात् हि वः रत्नधेयानि सन्ति १०,७८,८

ध्मा

६१ रोदसी । धमन्ति अनु वृष्टिभिः ८,७,१६

धमत्

१३२ धमन्तः वाणं मरुतः सुदानवः १,८५,१०
१९९ भूमिं धमन्तः अप गाः अवृण्वत २,३४,१

ध्यै

६३ येन आव तुर्वशं । राये सु तस्य धीमहि ८,७,१८

ध्रजत्

४८१ श्येनान् इव ध्रजतः अन्तरिक्षे १,१६५,२
[इन्द्रः ३२५१]

ध्रुव

४२४.३ ध्रुवः च धरुणः च । वा० य० १७,८२
१७१ उत च्यवन्ते अच्युता ध्रुवाणि १,१६७,८
१०३ मदा हि वः । न वेत्वं अस्ति निःक्षवि ८,२०,२२

ध्रुव-च्युत्

११८ मरुतः ... ध्रुवच्युतः १,६४,११

ध्वस्मन्

२०३ अध्वस्मभिः पथिभिः भ्राजदृष्टयः । गन्तन २,३४,५

ध्वान्त

४२३.१ उग्रः च भीमः च ध्वान्तः च । वा० य० ३९,७

न [उपमार्थकः]

(११) १,३७,१; (२१,२५,२८,३३) १,३८,१,५,८,१३; (३६,४२-४५) १,३९,१,९-१०; (१०८-९,११३-१४, ११६,११८) १,६४,१-२,३-७,९ (द्विः), ११; (१३२, १३६-१३०) १,८५,१,७-८ (द्विः); (१४२-१४३) १,८८,१-३; (१४६,१६७) १,१६६,२,१०; (१७४, १७६,१८०) १,१६७,३ (द्विः), ५,९; (१८२-८५,१८७, १८९) १,१६८,३ (द्विः), ३ (द्विः), ५ (द्विः), ७ (द्विः); (१९९-२००,२०२-२०४,२०६,२१०-११) २,३४,१ (द्विः)-२ (द्विः), ४-६,८,१३-१४; (२२५) ३,२६,५; (२२८,२३०-३१) ५,५२,११,१३-१४; (२४७, ५,५३,११; (२५५,२५७,२६३) ५,५४,५ (द्विः), ८,१४

(२७७-७८) ५,५६,३-४; (२८४) ५,५७,१; (३०१-३०३,३०६) ५,५९,२.४.७; (३१०) ५,६१,३; (३१९-२०,३२३,३२५-३२६) ५,८७,२-३.६.८-९; (३३०, ३३३) ६,४८,१४ (त्रिः). २१; (३३५,३४३-४४) ६,६६,२.१० (द्विः). ११; (३५७,३६०) ७,५६,१३.१६ (चतुःकृत्वः); (३८१) ७,५९,७; (६४,७१,८१) ८,७,१९.२६.३६; (९१,९४-९५,१०१) ८,२०,१०.१३ (द्विः). १४.२०; (४९८) ८,९६,१४ [इन्द्रः ३२६९]; (४०७-११,४१३) १०,७७,१ (त्रिः)- २ (द्विः)- ३ (चतुःकृत्वः)- ४ (द्विः)- ५ (चतुःकृत्वः).७; (४१५-२१) १०,७८,१-७ (चतुःकृत्वः)

न [निषेधार्थकः]

(४६६) १,१९,२ [अग्निः २४३९]; (२२)१,३८,२ (द्विः); (३९) १,३९,४; (१५५) १,८८,५; (४८८) १,१६५,९ [इन्द्रः ३२५८] (त्रिः); (१५९) १,१६६,२; (१७५) १,१६७,४; (२५३,२५६,२५९,२६२) ५,५४,४.७ (सप्तकृत्वः).१०.१३; (२६९,२७१) ५,५५,५.७ (द्विः); (३१९-२०,३२२) ५,८७,२-३.५; (३३७,३३९,३४१) ६,६६, ४.६.८ (द्विः);(३७२) ७,५७,३; (३७९) ७,५८,३;(४०७-८,४१०) १०,७७,१-२.४; (४३५) अथर्व० ३,२,६

न [समुच्चयार्थकः]

(२११) २,३४,१४; (२१९) ५,५२,३; (३३८) ६,६६,५

न [सम्प्रत्यर्थे प्रयुक्तः]

(१५६) १,८८,६; (४९३) १,१६५,१४ [इन्द्रः ३२६३]; (३३१) ६,४८,१५; (३३८) ६,६६,५

नकिः

४८८ अनुत्तं आ ते मघवन् नकिः नु १,१६५,९ [इन्द्रः ३२५८]
३४६ नकिः हि एषां जनूंषि वेद ते ७,५६,२
९३ वृषणः उग्रबाहवः नकिः । तनूषु येतिरे ८,२०,१२

नक्तन्

३९४ वयः ये भूत्वी पतयन्ति नक्तभिः ७,१०४,१८

नक्तम्

५१ युष्मान् उ नक्तं ऊतये । हवामहे ८,७,६

नक्ष्

१५९ नक्षन्ति रुद्राः अवसा नमस्विनम् १,१६६,२
३७७ महित्वा । नक्षन्ते नाकं निर्ऋतेः अवंशात् ७,५८,१

नद्

११५ सिंहाः इव नानदति प्रचेतसः । विश्ववेदसः १,६४,८
८६ अज्मन् आ । नानदति पर्वतासः ८,२०,५
१६२ यत् त्वेषयामाः नदयन्त पर्वतान् १,१६६,५

नदत्

४५९ महर्षभस्य नदतः नभस्वतः । अथर्व० ४,१५,५

नदः

२०१ आजिषु । नदस्य कर्णैः तुरयन्ते आशुभिः २,३४,३

नदी

२७१ न पर्वताः न नद्यः वरन्त वः ५,५५,७
४९८ उपह्वरे नद्यः अंशुमत्याः [इन्द्रः ३२६९]
२१३ ये वावृधन्त पार्थिवाः । वृजने वा नदीनाम् ५,५२,७

नपात्

४३० यूयं नः प्रवतः नपात् । अथर्व० १,२६,३
१६ मिहः नपातं अमृध्रं । प्र च्यवयन्ति १,३७,११

नभनुः

३०६ प्र पर्वतस्य नभनून् अचुच्यवुः ५,५९,७

नभस्

४९८ नभः न कृष्णं अवतस्थिवांसम् ८,९६,१४ [इन्द्रः३२६९]
४५९ त्वेषः अर्कः नभः उत् पातयाथ । अथर्व० ४,१५,५
१७६ त्वेषप्रतीका नभसः न इत्या १,१६७,५

नभस्वत्

४५९ महर्षभस्य नदतः नभस्वतः । अथर्व० ४,१५,५

नम्

३६३ इमे सहः सहसः आ नमन्ति ७,५६,१९
३८१ कुवित् नंसन्ते मरुतः पुनः नः ७,५८,५
२२९ मारुतं गणं । नमस्य रमय गिरा ५,५२,१३
३६१ सुम्नेभिः अस्मे वसवः नमध्वम् ७,५६,१७
४८५ विश्वस्य शत्रोः अनमं वधस्नैः १,१६५,६ [इन्द्रः ३२५५]

नमयिष्णुः

८२ मा अप स्थात । स्थिरा चित् नमयिष्णवः ८,२०,१

नमस्

१९३ प्रति वः एना । नमसा अहं एमि १,१७१,१
१९८ उप ब्रुवे नमसा दैव्यं जनम् २,३०,११
११२ उप घ इत् एना नमसा गृणीमसि २,३४,१४

नमस्
४६१ ईळे अग्निं स्ववसं नमोभिः ५,६०,१
१९४ [illegible] हि स्म नमसः [illegible] १,१७१,२

नमस्वत्
१९४ एषः वः स्तोमः मरुतः नमस्वान् १,१७१,२

नमस्विन्
१५९ नक्षन्ति रुद्राः अवसा नमस्विनम् १,१६६,२

नर्यः
१६१ दिवः वा पृष्ठं नर्याः अचुच्यवुः १,१६६,५
१६७ भूरीणि भद्रा नर्येषु बाहुषु १,१६६,१०

नवमान
२०८ यत् वा निदे नवमानस्य रुद्रियाः २,३४,१०

नविष्ठा
१०० यूनः ऊ षु नविष्ठया । वृष्णः पावकान् ८,२०,१९

नवीयस्
३८६ अभि वः [illegible] सुमतिः नवीयसी ७,५९,४

नवेदस्
४९२ एवां भूत नवेदाः मे ऋतानाम् १,१६५,१३
[इन्द्रः ३३६१]
३७१ विद्वांसः तस्य भवथ नवेदसः ५,५५,८

नव्यम्
१५७ [illegible] । नव्यं [illegible] अमर्त्यम् १,१६६,८

नव्यस्
२३ [illegible] नव्यांसि । मरुतः १,३८,३
३२७ [illegible] नव्यसा [illegible] ६,४८,११
७८ [illegible] नव्यसे [illegible] । [illegible] ८,७,३३

नव्यसी
२४३ [illegible] नव्यसीनाम् ५,५३,१०
२६२ [illegible] नव्यसीनाम् ५,५८,१

नश्
४८८ न [illegible] नशते न [illegible] १,१६५,९
[इन्द्रः ३३५८]
१९८ [illegible] नशामहै । [illegible] १,१७०,११
९७ [illegible] । [illegible] नशत् ८,२०,१६

नस्
३०६ [illegible] । [illegible] नसोः [illegible] ५,६१,२

नहि
(४३३) १,१९,२ [illegible] [illegible] १,३९,४

(१८०) १,१६७,९; (३८५-८६) ७,५६,३-४; (३३) ८,७,३१

नाकम्
१९६ नाकं तस्थुः उरु चक्रिरे सदः १,८५,७
३३१ तं नाकं अर्यः अगृभीतशोचिषम् ५,५४,१२
३७७ महित्वा । नक्षन्ते नाकं निर्ऋतेः अवंशात् ७,५८,१
४७० ये नाकस्य अधि रोचने १,१९,६; [अग्निः २४४३]

नाथितः
४४६ स्तौमि मरुतः नाथितः जोहवीमि । अथर्व० ४,२७,७
४३४ [illegible] नाथिताः इमे । अथर्व० ३,१,२

नाधमानः
७५ [illegible] मरुतः । मार्डीकेभिः नाधमानम् ८,७,३०

नाभिः
९१ वृषणश्वेन मरुतः । रथेन वृषनाभिना ८,२०,१०
४१८ रथानां न ये अराः सनाभयः १०,७८,४

नामन्
३३४ [illegible] नाम [illegible] ३,३६,१
३७० मध्वः वः नाम मारुतं यजत्राः ७,५७,१
९४ नाम [illegible] ८,२०,१३
१ गर्भत्वम् एरिरे । दधानाः नाम यज्ञियम् १,६,४
३३८ [illegible] नाम [illegible] ६,६६,५
३५४ [illegible] नाम [illegible] ७,५६,१०
४४८ [illegible] नाम [illegible] ५,३,३
३८८ [illegible] नाम [illegible] ५,५७,५
३३३ [illegible] नाम [illegible] ६,४८,२१
१२९ [illegible] नामानि [illegible] १,८७,५
३५८ [illegible] नामानि [illegible] ७,५६,१४
४१४ [illegible] । [illegible] नाम्ना [illegible] १०,७७,८
३३६ [illegible] नामभिः [illegible] ५,५२,१०
३७५ [illegible] । [illegible] नामभिः [illegible] ७,५७,६

नि
[illegible] १,३७,३, [illegible] १,३९,२; [illegible] १,६४,२; (२२७,२३३) ५,५२,११,१७; [illegible] ५,५३,७; (२५२) ५,५४,५; (२७८) ५,५६,३; (२८३) ५,५७,३; (२९०) ५,६०,२; (३३३) ६,४८,१९; (३८२) ७,५६,७; (६६,७०,७२) ८,७,२१ [illegible]

नि-चेरा
३४ [illegible] ८,७,२१

नि-चेतृ
३७१ **निचेतारः** हि मरुतः गृणन्तम् ७,५७,२

निण्य
३४८ एतानि धीरः **निण्या** चिकेत ७,५६,४

नित्यः
१५९ **नित्यं** न सूनुं मधु बिभ्रतः उप । क्रीळन्ति १,१६६,२

निद्
२०८ यत् वा **निदे** नवमानस्य रुद्रियाः २,३४,१०
२४७ अति इयाम **निदः** तिरः स्वस्तिभिः ५,५३,१४
२१३ यया **निदः** मुञ्चथ वन्दितारम् २,३४,१५
३२३ ते नः उरुष्यत **निदः** । शुशुक्वांसः ५,८७,६
३२६ तस्य प्रचेतसः । स्यात दुर्धर्तवः **निदः** ५,८७,९

नि-ध्रुविन्
१०३ सदा हि वः । आपित्वं अस्ति **निध्रुवि** ८,२०,२२

नि-मिश्ल
१७७ शुभे **निमिश्लां** विदथेषु पज्राम् १,१६७,६

नि-मेघमानः
२११ **निमेघमानाः** अत्येन पाजसा । वर्णं दधिरे २,३४,१३

निम्न
४१९ आपः न **निम्नैः** उदभिः जिगत्नवः १०,७८,५

नियुत्
१७३ अध यत् एषां **नियुतः** परमाः १,१६७,२
२२७ अध **नियुतः** ओहते । अध पारावताः ५,५२,११

नियुत्वत्
२५७ **नियुत्वन्तः** ग्रामजितः यथा नरः ५,५४,८

निर्ऋतिः
२६ **निर्ऋतिः** दुर्हणा वधीत् । पदीष्ट तृष्णया १,३८,६
३७७ महित्वा । नक्षन्ते नाकं **निर्ऋतेः** अवंशात् ७,५८,१

निर्णिज्
२१५ ते स्वानिनः रुद्रियाः वर्ष**निर्णिजः** ३,२६,५
२८७ वातत्विषः मरुतः वर्ष**निर्णिजः** ५,५७,४
१७४ हिरण्य**निर्णिक्** उपरा न ऋष्टिः १,१६७,३

निवत्
४३९ वृष्टिः या विश्वाः **निवतः** पृणाति । अथर्व० ६,२२,३

नि-शित
४९५ तुभ्यं हव्या **निशितानि** आसन् १,१७१,४
[इन्द्रः ३२६६]

निषङ्गिन्
१८५ सुधन्वानः इषुमन्तः **निषङ्गिणः** । स्वश्वाः ५,५७,२

निष्कम्
३५५ स्वायुधासः इष्मिणः सु**निष्काः** ७,५६,११

निष्कृतिः
४४५ यूयं ईशिध्वे वसवः तस्य **निष्कृतेः** । अथर्व० ४,२७,६

निः
(१३१) १,८५,९; (२७४) ५,५५,१०; (३२१) ५,८७,४; (३३७) ६,६६,४; (३६५) ७,५६,२१

निः-एतवे
१४ वयः मातुः **निरेतवे** । द्विता शवः १,३७,९

नी
११३ अत्यं न मिहे वि **नयन्ति** वाजिनम् १,६४,६
३८३ यं त्रायध्वे । देवासः यं च **नयथ** ७,५९,१
२७४ यूयं अस्मान् **नयत** वस्यः अच्छ ५,५५,१०
२५५ चक्षुः इव यन्तं अनु **नेषथ** सुगम् ५,५४,६

नीड (ळ) म्
४८० कया शुभा सवयसः स**नीळाः** १,१६५,१
[इन्द्रः ३२५०]
३४५ के ईं व्यक्ताः नरः स**नीळाः** ७,५६,१

नीतिः
३३२ प्र-**नीतिः** अस्तु सूनृता । देवस्य वा मरुतः ६,४८,२०
४१६ प्रज्ञातारः न ज्येष्ठाः सु**नीतयः** १०,७८,२

नील-पृष्ठ
३८९ शुम्भमानाः । आ हंसासः **नीलपृष्ठाः** अपप्तन् ७,५९,७

नु [स्तुतौ]
२ विदद्वसुं गिरः । मह्यं **अनूषत** श्रुतम् १,६,६

नु
(३९) १,३९,४; (१२०,१२२) १,६४,१३.१५; (४८४, ४८८-८९,४९२) १,१६५,५.९-१०.१३ [इन्द्रः ३२५४, ३२५८-५९,३२६२]

१५८ तत् **नु** वोचाम रभसाय जन्मने १,१६६,१
१८० नहि **नु** वः मरुतः अन्ति अस्मे १,१६७,९
१९७ तृणस्कन्दस्य **नु** विशः परि वृङ्क्त सुदानवः १,१७२,३
२३१ **नु** मन्वानः एषाम् ५,५२,१५
२८२ रथं **नु** मारुतं वयं । श्रवस्युं आ हुवामहे ५,५६,८
४५४ अतः नः रुद्राः उत वा **नु** अस्य ५,६०,६

३२६ प्र ये जाताः महिना ये च नु स्वयम् ५,८७,२
३३४, बहुः नु तत् चिकितुषे चित् अस्तु ३,६६,१
३३३-३८,३४२ ३,३३,३-५,८
३५३ नु चित् यं अन्यः आदभत् अरावा ७,५३,१५
८२ महान्तः नः स्परसे नु ८,२०,८
(४००,४०४-६) ८,९४,३,१०-१२

नुद्

३३२ कर्वे नुनुद्रे अवतं ते ओजसा १,८५,१०
३३३ जिह्मं नुनुद्रे अवतं तया दिशा १,८५,११
१५४ वार्वं नुनुद्रे वसाधि निष्कै १,८८,४
१७५ न रोदसी अप नुदन्त घोराः १,१६७,४

नूतनम्

२७१ यत् पूर्व्यं मरुतः यत् च नूतनम् ५,५५,८

नूनम्

(३१-३२) १,३८,१-२; (४२) १,३९,७; (४२२) १,१३५,१२ [इन्द्रः १२३२]; (२७६) ५,५६,५; (२९२) ५,५८,१; (३१५) ५,६१,१४; (३५,७३) ८,७,३०,३१; (९३) ८,२०,१५

नृ

१११ अर्कं जनीरे स्वधा दिवः नरः १,६४,४
११७ अनन्तशुष्माः अनुष्वधं नरः १,६४,१०
१३८ रजनाः इव त्वेषसंदृशः नरः १,८५,८
१७० सर्गं नरः दंस्नैः अ चिकित्रिरे १,११६,११
२२१ ये शुभ्रयावः । नरः कनकेरुवाः ५,५३,५
२२२ अ रश्मैः आ युध नरः ५,५२,६
२२४ वद स्म ते हुवे नरः । युवत कवा ५,५२,८
२२७ अध नरः नि ओहते । अध नियुतः ५,५२,११
२३६ नरः मर्याः अरेपसः । इमान् पश्यन् ५,५३,३
२३९ अ यं नरः सुदानवः ददाशुषे ५,५३,६
२५२ विद्युन्महसः नरः अश्मदिद्यवः । वातत्विषः ५,५४,३
२५७ निवृत्त्वन्तः अत्रिणः यथ नरः ५,५४,८
२६७ प्रैते चित् अ प्रत्वं वहत नरः ५,५५,३
३१२ अन्ताः मघे विद्ये देदिरे नरः ५,५६,५
३१४ मर्याः इव सुवृधः ववृधुः नरः ५,५६,५
३१० तूर्यं । नि अस्मा ते नरः प्र ५,६१,३
३१५ ते ईं सखायः नरः अर्कैः ७,५६,१
३७५ अनु । निर्वहिः नरः हवे ७,५७,३
३८९ नरः न रण्वाः सवने मदन्तः ७,५९,७
७३ स्वरयति । यज्ञः निचेतन नरः ८,७,१२
८७ यत्र नरः देदिशते तनूषु । आ त्वक्षांसि ८,२०,१२
८८ स्वधां अनु श्रियं नरः । महि त्वेषाः ८,२०,७
११ कः वः वर्षिष्ठः आ नरः । धूतयः १,३७,६
३८ स्थिरं हथ । नरः वर्तयथ गुरु १,३९,३
१४२ शरमनस्य वा नरः । स्वेदस्य सत्यशवसः १,८६,८
४३० यत् मे नरः श्रुत्यं ब्रह्म चक्र १,१६५,११ [इन्द्रः १२३०]
२४८ ववृते सुदीरः । नरः मरुतः यः नर्यः ५,५३,१५
२५९ धूर्षु वाहिते मदथ विश्वः नरः ५,५४,१०
२६१,२६९ हवे नरः मरुतः मृळत नः ५,५७,८;५८,८
३०१ मर्याः इव श्रियसे चेतथ नरः ५,५९,३
३०८ ये स्य नरः श्रेष्ठतमाः । ये आवय ५,६१,१
३८३ धृतव्रतः मर्यैः । यस्मै अराधं नरः ७,५६,४
९१ आ इडेन्यः न पठिमिः वृथा नरः ८,२०,१०
९७ यस्य वा यूयं प्रति वाजिनः नरः ८,२०,१६
४३८ यत्र नरः मरुतः ० निवृत्त मनु । अरदये ३,२२,२
४६७ त्वं पाहि इन्द्र सहीयसः नॄन् १,१७१,६ [इन्द्रः १२३८]
२९३ वन्दस्व विप्र तुविराधसः नॄन् ५,५८,२
२३४ येन तोकं न तनयाय नॄन् अस्मि ५,५४,१४
१९० अर्केभिः वरं मरुते धना नृभिः १,१३४,१३
२२१ विश्ववेदः विमहसः । विभाति देवयुः नृभिः ५,८७,४
१८२ यत् वः अश्वदिनः नरां अनु श्याम् १,१६७,१०
२०४ नरां न शंसः सवनानि गन्तन १,१३४,६
१३३ घने दस्माः नारि अर्वाणि कर्ते १,८५,६
२५९ यत् मरुतः सभरसः स्वर्णरः । मदथ ५,५४,१०
४७२ ये मर्याः वा दु-स्तुति मरुतस्य स्वर्णरे ८,१०३,१४
[अग्निः १४४७]

नृत्

२२८ मुखान्यः । उर्वं सः सीं रेसः नृतुः ५,५२,१२

नृतुः

१०३ नृतः चित् वः नृतवः रुक्मवक्षसः ८,२०,२२

नृतन

१६४ सस्वेदिनः । पुरुविषः नृतनासः अवीचिभिः १,८७,१

नृ-मनम्

१७३ वनद्र वसुन्धरा । सिद्धिवस्तु रोदसी नृमनाः १,१६७,५

नृम्णम्

२५० पुरुस्पृहे । नृम्णस्पदे मरुद् नृम्णं सर्व ५,५४,१
३६९ अर्चत । मरुत् वसुरे युष्मे नृम्णम् ७,५६,५
२८९ नृम्णा सवितुः नुदुषि सोमं न ५,७३,३
३३५ मर्त नृम्णेः दिदिवः च मृत्य ३,३६,०

नृ-साच्

११६ **नृसाचः** शूराः शवसा अहिमन्यवः १,६४,९

नृ-हा

३६१ आरे गोहा **नृहा** वधः नः अस्तु ७,५६,१७

नेतृ

३१६ विपन्यवः । प्र-**नेतारः** इत्था धिया ५,६१,१५
३७१ प्र-**नेतारः** यजमानस्य मन्म । वीतये सदत ७,५७,२

नेदिष्ठ

२७६ ये ते **नेदिष्ठं** हवनानि आगमन् ५,५६,२

नेद्यः

१४८ असि सत्यः ऋणयावा **अनेद्यः** । वृषा गणः १,८७,४
४९१ **अनेद्यः** श्रवः आ इषः दधानाः १,१६५,१२
[इन्द्रः ३२६१]
३१४ युवा सः मारुतः गणः । त्वेषरथः **अनेद्यः** ५,६१,१३

नेमिः

३२ स्थिराः वः सन्तु **नेमयः** । रथाः अश्वासः १,३८,१२

नोधस्

१०८ **नोधः** सुवृक्तिं प्र भर मरुद्भ्यः १,६४,१

नौ

३०१ **नौः** न पूर्णा क्षरति व्यथिः यती ५,५९,२
२५३ वि यत् अज्रान् अजथ **नावः** ईं यथा ५,५४,४

पक्षः

१६७ वयः न **पक्षान्** वि अनु श्रियः धिरे १,१६६,१०

पक्षिन्

९१ आ श्येनासः न **पक्षिणः** वृथा नरः ८,२०,१०

पज्र

१७७ शुभे निमिश्लां विदथेषु **पज्राम्** १,१६७,६

पञ्चन्

२१२ त्रितः न यान् **पञ्च** होतॄन् अभिष्टये। आववर्तत् २,३४,१४

पत्

३९४ वयः ये भूत्वी **पतयन्ति** नक्ताभिः ७,१०४,१८
१८८ वि अद्रिणा **पतथ** त्वेषं अर्णवम् १,१६८,६
१५१ नः इषा । वयः न **पप्तत** सुमायाः १,८८,१
४५९ त्वेषः अर्कः नभः उत् **पातयाथ** । अथर्व० ४,१५,५
३०६ वयः न ये श्रेणीः **पप्तुः** ओजसा ५,५९,७
३८९ शुम्भमानाः । आ हंसासः नीलपृष्ठाः **अपप्तन्** ७,५९,७
८५ वि द्वीपानि **पापतन्** तिष्ठत् दुच्छुना ८,२०,४

पतत्

८० आ अक्ष्णयावानः वहन्ति । अन्तरिक्षेण **पततः** ८,७,३५
२७४ वयं स्याम **पतयः** रयीणाम् ५,५५,१०
३३ अच्छ वद । जरायै ब्रह्मणः **पतिम्** १,३८,१३
४३९ एरुं तुन्दाना **पत्या इव** जाया । अथर्व० ६,२२,३
४३६ मरुतः पर्वतानां अधि**पतयः** ते मा अवन्तु ।
अथर्व० ५,२४,६
४८२ एकः यासि सत्**पते** किं ते इत्था १,१६५,३
[इन्द्रः ३२५१]

पत्यमान

३३४ समानं नाम धेनु **पत्यमानम्** ६,६६,१

पत्वन्

१२८ रघुस्यदः । रघु**पत्वानः** प्र जिगात बाहुभिः १,८५,६

पथिन्

५३ सृजन्ति रश्मिं । **पन्थां** सूर्याय यातवे ८,७,८
२५ अजोष्यः । **पथा** यमस्य गात् उप १,३८,५
१४६ वयः इव मरुतः केन चित् **पथा** १,८७,२
२०३ धेनुभिः । अध्वस्मभिः **पथिभिः** भ्राजदृष्टयः २,३४,५
२२६ विपथयः । अन्तः**पथाः** अनु**पथाः** ५,५२,१०
१६६ अंसेषु आ वः प्र**पथेषु** खादयः १,१६६,९

पथिः

२२६ **आपथयः** वि**पथयः** । अन्तःपथाः ५,५२,१०

पथ्य

२५८ प्रवत्वतीः **पथ्याः** अन्तरिक्ष्याः । प्रवत्वन्तः ५,५४,९
३४० वि रोदसी **पथ्याः** याति साधन् ६,६६,७
११८ उत् जिघ्नन्ते आ**पथ्यः** न पर्वतान् १,६४,११

पद् [पादः]

२६० अंसेषु वः ऋष्टयः **पत्सु** खादयः ५,५४,११

पद् [गतौ]

२६ निर्ऋतिः । **पदीष्ट** तृष्णया सह १,३८,६

पदम्

४४८ **पदं** यत् विष्णोः उपमं निधायि ५,३,३

पन्

१४७ स्वयं महित्वं **पनयन्त** धूतयः १,८७,३

पनस्युः

४०९ पाजस्वन्तः न वीराः **पनस्यवः** । रिशादसः १०,७७,३
३५ गणं । त्वेषं **पनस्युं** अर्किणम् १,३८,१५
२८३ रथेशुभं त्वेषं । **पनस्युं** आ हुवे ५,५६,९

पनीयस्

३७ युष्माकं अस्तु तविषी **पनीयसी** १,३९,२

पयस्

११३ **पयः** घृतवत् विदथेषु आभुवः १,६४,६
४४२ **पयः** धेनूनां रसं ओषधीनाम् । अथर्व० ४,२७,३
११२ भूमिं पिन्वन्ति **पयसा** परिज्रयः १,६४,५
१६० पुरु रजांसि **पयसा** मयोभुवः १,१६६,३
४६० भूमिं पर्जन्य **पयसा** सं अङ्ग्धि । अथर्व० ४,१५,६

पयस्वत्

४३८ **पयस्वतीः** कृणुथ अपः ओषधीः शिवाः। अथर्व० ३,३१,३

पयो-धाः

३६० वत्सासः न प्रक्रीळिनः **पयोधाः** ७,५६,१६

पयो-वृध्

११८ हिरण्ययेभिः पविभिः **पयोवृधः** । उत् जिघ्नन्ते १,६४,११

पर

४६६ महः तव क्रतुं **परः** १,१९,२; [अग्निः ३४३६]
१८८ क्व स्वित् अस्य रजसः महः **परम्** १,१६८,६
४६५ असौ या सेना मरुतः **परेषाम्** । अथर्व० ३,२,६
१७० तत् वः जामित्वं मरुतः **परे** युगे १,१६६,१३

परम

१७२ अथ यत् एषां नियुतः **परमाः** १,१६७,२
३०८ ये पृषत्यः [illegible] **परमस्याः** परावतः ५,६१,१

परा

(३८) १,३९,१, (१७१) १,१६७,१; (३११) ५,६१,५

पराक

४१६ प्र यत् [illegible] **पराकात्** १०,७७,६

परा-जित

४३४.१ [illegible] **पराजिता** । अथर्व० ३,१,३

परा-नुद्

३७ [illegible] **पराणुदे** १,३९,२

परापर

३६ [illegible] **परापरा** । [illegible] १,३८,६

परावत्

३६ [illegible] **परावतः** । [illegible] १,३९,१
३४१ [illegible] **परावतः** ५,५३,८
३०८ ये [illegible] **परावतः** ५,६१,१
[illegible]

७१ उशना यत् **परावतः** । उक्ष्णः रन्ध्रं अयातन ८,७,२६
४२१ [illegible] । **परावतः** न योजनानि ममिरे १०,७८,७

पराहत

२७७ मीळ्हुष्मती इव पृथिवी **पराहता** । [illegible] ५,५६,३

परि

(२५४) १,८८,४; (१८०) १,१६७,९; (१९१) १,१६८,९; (१९७) १,१७२,३; (२४२) ५,५३,९; (२७१) ५,५५,७; (३०६) ५,५९,७; (३३३) ३,४८,२१; (४३४) अथर्व० ४,१५,१०

परि-ज्मा

४ अतः परिज्मन् आ गहि । [illegible] १,६,९

परि-ज्रिः

११२ भूमिं पिन्वन्ति पयसा **परिज्रयः** १,६४,५
[illegible] **परिज्रयः** १,१४२,२
[illegible] **परिज्रयः** ५,५४,९

परि-तुप्

४११ [illegible] **परिप्रुषः** १०,७७,५

परि-मन्

३८० [illegible] **परिमंसीष्ट** ७,५७,३

परि-मन्युः

[illegible]

परि-[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

४५० पृथिवी चित् रेजते **पर्वतः** चित् ५,६०,२
४५१ **पर्वतः** चित् महि वृद्धः बिभाय ५,६०,३
११० अभ्रोपघनः । ववक्षुः अध्रिगावः **पर्वताः** इव १,६४,३
२५८ मरुत्वः । प्रवत्वन्तः **पर्वताः** जीरदानवः ५,५४,९
२७१ न **पर्वताः** न नद्यः वरन्त वः ५,५५,७
४७ यामं शुभ्राः अचिध्वं । नि **पर्वताः** अहासत ८,७,२
७९ मन्यमानाः । **पर्वताः** चित् नि येमिरे ८,७,३४
३२६ ज्येष्ठासः न **पर्वतासः** व्योमनि ५,८७,९
८६ अज्मन् आ । नानदति **पर्वतासः** वनस्पतिः ८,२०,५
१३२ दृहाणं चित् बिभिदुः वि **पर्वतम्** १,८५,१०
२७८ स्वर्थं **पर्वतं** गिरिं । प्र च्यवयन्ति ५,५६,४
४७१ ये ईङ्खयन्ति **पर्वतान्** १,१९,७; [अग्निः २४४४]
४० प्र वेपयन्ति **पर्वतान्** । वि विञ्चन्ति वनस्पतीन् १,३९,५
११८ उत् जिघ्नन्ते आपथ्यः न **पर्वतान्** १,६४,११
१६२ यत् त्वेपयामाः नदयन्त **पर्वतान्** १,१६६,५
२८६ धूनुथ द्यां **पर्वतान्** दाशुषे वसु ५,५७,३
४९ प्र वेपयन्ति **पर्वतान्** । यत् यामं यान्ति ८,७,४
६८ वि वृत्रं पर्वशः ययुः । वि **पर्वतान्** अराजिनः ८,७,२३
३०६ अश्वासः । प्र **पर्वतस्य** नभनून् अचुच्यवुः ५,५९,७
३८ वि याथन वनिनः । वि आशाः **पर्वतानाम्** १,३९,३
४३६ मरुतः **पर्वतानां** अधिपतयः ते मा अवन्तु ।
अथर्व० ५,२४,६
४६ विप्रः अक्षरत् । वि **पर्वतेषु** राजथ ८,७,१
१०६ यत् समुद्रेषु । यत् **पर्वतेषु** भेषजम् ८,२०,२५

पर्वत--च्युत्

२५२ अश्मदिद्यवः । वातत्विषः मरुतः **पर्वतच्युतः** ५,५४,३
२५० स्वभानवे । इमां वाचं अनज **पर्वतच्युते** ५,५४,१

पर्वशः

६७ सं सूर्ये । सं वज्रं **पर्वशः** दधुः ८,७,२२
६८ वि वृत्रं **पर्वशः** ययुः । वि पर्वतान् ८,७,२३

पर्शानः

७३ नि जिहते । **पर्शानासः** मन्यमानाः ८,७,३४

पर्ष्

१४१ सुभगः सः । यस्य प्रयांसि **पर्षथ** १,८६,७

पविः

१४२ स्वधितिवान् । **पव्या** रथस्य जङ्घनन्त भूम १,८८,२
२९५ उत **पव्या** रथानां । अद्रिं भिन्दन्ति ५,५२,९
११८ हिरण्ययेभिः **पविभिः** पयोवृधः उत् जिघ्नन्ते १,६४,११
१९० प्रति स्तोभन्ति सिन्धवः **पविभ्यः** १,१६८,८
१६७ अंसेषु एताः **पविषु** क्षुराः अधि १,१६६,१०
२९७ अश्वैः । वीळुपविभिः मरुतः रथेभिः ५,५८,६
८३ **वीळुपविभिः** मरुतः ऋभुक्षणः । आ गत ८,२०,२

पशुः

१६३ रिणाति **पश्वः** सुधिता इव बर्हणा १,१६६,६

पश्चात्

३६५ मा **पश्चात्** दध्म रथ्यः विभागे ७,५६,२१

पश्यत्

१५५ गोतमः वः । **पश्यन्** हिरण्यचक्रान् अयोदंष्ट्रान् १,८८,५
२३६ अरेपसः । इमान् **पश्यन्** इति स्तुहि ५,५३,३
१०७ विश्वं **पश्यन्तः** बिभृथ तनूषु आ ८,२०,२६

पस्त्यवत्

७४ आर्जीके **पस्त्यवति** । ययुः निचक्रया नरः ८,७,२९

पा (रक्षणे, to protect)

१७९ **पान्ति** मित्रावरुणौ अवद्यात् । चयते ईम् १,१६७,८
२१८ आ धृषद्विनः । त्मना **पान्ति** शश्वतः ५,५२,२
२२० मानुषा युगा । **पान्ति** मर्त्यं रिषः ५,५२,४
३६३ इमे शंसं वनुष्यतः नि **पान्ति** ७,५६,१९
४४८ तेन **पासि** गुह्यं नाम गोनाम् ५,३,३
४९७ त्वं **पाहि** इन्द्र सहीयसः नॄन् १,१७१,६
[इन्द्रः ३१६८]
३६९,३७६,३८२ यूयं **पात** स्वस्तिभिः सदा नः ७,५६,२५;
५७,८;५८,६
१६५ **पाथन** शंसात् तनयस्य पुष्टिषु १,१६६,८
४६४ यः ओषधीनां **अधिपाः** बभूव । अथर्व० ४,१५,१०
४२४.१ शुक्रः च **ऋतपाः** च । वा० य० १७,८०

पा (पाने, to drink)

३९८ अस्ति सोमः अयं सुतः । **पिबन्ति** अस्य मरुतः ८,९४,४
३९९ **पिबन्ति** मित्रः अर्यमा । तना पूतस्य वरुणः ८,९४,५
१३५ मरुतः यस्य हि क्षये । **पाथ** दिवः विमहसः १,८६,१
४५६ सोमं **पिब** मन्दसानः गणश्रिभिः ५,६०,८
५ मरुतः **पिबत** ऋतुना । पोत्रात् यज्ञं पुनीतन १,१५,२
३८५ मरुतः सुते सचा । विश्वे **पिबत** कामिनः ७,५९,३

पाकः

१८९ त्वेषा **विपाका** मरुतः पिपिष्वती १,१६८,७

पाजस्

२११ निमेघमानाः अत्येन **पाजसा** । वर्णं दधिरे २,३४,१३

पाजस्वत्

४०९ पाजस्वन्तः न वीराः पनस्यवः रिशादसः १०,७७,३

पाणिः

३१ मरुतः वीळुपाणिभिः यात ईं अखिद्रयामभिः १,३८,११

७९ अश्वैः हिरण्यपाणिभिः । देवासः उप गन्तन ८,७,२७

पारः

२५९ सद्यः अस्य अध्वनः पारं अश्नुथ ५,५४,१०

१७३ निधुवः । समुद्रस्य चित् धनयन्त पारे १,१६७,२

पारावतः

२२७ अध स्मितः । अध पारावताः इति ५,५२,११

पार्थिवम्

२२३ ये ववृधन्त पार्थिवाः । ये उरौ अन्तरिक्षे ५,५२,७

३० विश्वं आ सद्म पार्थिवं । अरेजन्त प्र मानुषाः १,३८,१०

२२४ दीर्घं पृथु पप्रथे सद्म पार्थिवम् ५,८७,७

११० दृळ्हा चित् विश्वा भुवनानि पार्थिवा १,६४,३

४०३ आ ये विश्वा पार्थिवानि । पप्रथन् रोचना दिवः ८,९४,९

पार्य

१४१ सः [illegible] दर्ता पार्ये अध द्योः १,१६६,८

पावकः

१०९ पावकासः शुचयः सूर्याः इव । घोरवर्पसः १,६४,२

३५३ ऋतसापः । शुचिजन्मानः शुचयः पावकाः ७,५६,१२

३७४ मरुतः रुक्मः । अनवद्यासः शुचयः पावकाः ७,५७,५

११९ शुभ्रं पावकं वनिनं विचर्षणिम् १,६४,१२

१०० [illegible] पावकान् अभि सोभरे गिरा । [illegible] ८,२०,१९

४५६ [illegible] पावकेभिः विश्वमिन्वेभिः आयुभिः ५,६०,८

पिबत्

३१८;४२९ पिबन्तः मदिरं मधु ५,६१,११; म० सं० ३५६

पीत

१८५ हृत्सु पीतासः दुवसः न आसते १,१६८,३

पाशः

३९० द्रुहः पाशान् प्रति सः मुचीष्ट ७,५९,८

४४७ ते अस्मत् पाशान् प्र मुञ्चन्तु एनसः । अथर्व० ७,८२,३

पितृ

३१ पिता पुत्रं न हस्तयोः । दधिध्वे वृक्तबर्हिषः १,३८,१

४५३ युवा पिता स्वपाः रुद्रः एषाम् ५,६०,५

२३३ अध पितरं इष्मिणं । रुद्रं वोचन्त ५,५२,१६

१६९ पितुः प्रत्नस्य जन्मना वदामसि १,८७,५

४६७ पितॄणां न शंसाः सुरातयः १०,७८,३

पित्र्य

९४ नाम त्वेषं । वयः न पित्र्यं सहः ८,२०,१३

३६७ भूरि चक्र मरुतः पित्र्याणि । उक्थानि ७,५६,२३

पिन्व्

११२ घृतवत् । भूमिं पिन्वन्ति पयसा परिज्रयः १,६४,५

११३ पिन्वन्ति अपः मरुतः सुदानवः १,६४,६

२५७ पिन्वन्ति उत्सं यत् इनासः अस्वरन् ५,५४,८

३७० पिन्वन्ति उत्सं यत् अयासुः उग्राः ७,५७,१

२०६ धेनुः न शिश्वे स्वसरेषु पिन्वते २,३४,८

४३८ ऊर्जं च तत्र सुमतिं च पिन्वत । [illegible]

पिपिष्वत्

१८६ त्वेषा विपाका मरुतः पिपिष्वती १,१६८,७

पिपीषु

३८६ सुमतिः नवीयसी । [illegible] पिपीषवः ७,५९,४

पिप्पलम्

२६१ स्वदत् पिप्पलं मरुतः वि धूनुथ ५,५४,१२

पिप्युषी

४८ [illegible] । धुक्षन्त पिप्युषीं इषम् ८,७,३

६४ [illegible] । [illegible] पिप्युषीः इषः ८,७,१९

पिप्रियाण

३७१ [illegible] पिप्रियाणाः ७,५७,२

पिबध्यै

१५४ ऊर्ध्वं नुनुद्रे [illegible] पिबध्यै १,८८,४

पिश्

[illegible] [illegible] पिपिशे ५,५३,३

४५२ [illegible] पिपिशे ५,६०,४

३७६ [illegible] पिपिशः [illegible] ७,५७,३

१२५ [illegible] सुपिशः [illegible] १,६४,८

पिष्

१३५ [illegible] । पिषाः [illegible]

पिशङ्ग

१५३ ते [illegible] पिशङ्गैः [illegible] १,८८,२

पिशङ्गाश्वः

२८७ पिशङ्गाश्वाः [illegible] ५,५७,४

पिशान

३६३ [illegible] पिशानाः [illegible] ७,[illegible]

छ

पिपृ
२९४ इच्छत । गृभायत रक्षसः सं पिनष्टन ७,१०४,१८

पिष्ट
२७५ आ गणं । पिष्टं रुक्मेभिः अञ्जिभिः ५,५६,१

पीतिः
१६४ सु-स्तुताः । अर्चन्ति अर्कं मदिरस्य पीतये १,१६६,७
३८७ वृष्विराधसः । यातन अन्धांसि पीतये ७,५९,५
४७३ अभि त्वा पूर्वपीतये । सृजामि सोम्यं मधु १,१९,९
[अग्निः २४४६]
४०४-६ अस्य सोमस्य पीतये ८,९४,१०-१२
४७७ मरुत्वन्तं हवामहे । इन्द्रं आ सोमपीतये १,२३,७
[इन्द्रः ३२४७]
३९७;४०३ मरुतः सोमपीतये ८,९४,३;९
४७४ मरुत्सखा । रुद्रेभिः सोमपीतये ८,१०३,१४
[अग्निः २४४७]

पीथः
४६५ गोपीथाय प्र हूयसे १,१९,१; [अग्निः २४३८]
४१३ सः देवानां अपि गोपीथे अस्तु १०,७७,७

पुत्रः
२९६ पृश्नेः पुत्राः उपमासः रभिष्ठाः । मिमिक्षुः ५,५८,५
३३६ रुद्रस्य ये मीळ्हुषः सन्ति पुत्राः ६,६६,३
४०८ दिवः पुत्रासः एताः न येतिरे १०,७७,२
२१ पिता पुत्रं न हस्तयोः । दधिध्वे वृक्तबर्हिषः १,३८,१
४३२ माता इव पुत्रं पिपृत इह युक्ताः । अथर्व० ५,२६,५

पुत्र-कृथ
३१० नरः यमः । पुत्रकृथे न जनयः ५,६१,३

पुनः
(१) १,६,४; (३८१) ७,५८,५; (१०७) ८,२०,२६;
(४३४.१) अथर्व० ३,१,६

पुनान
३३७ अधा नु । अन्तः सन्तः अवद्यानि पुनानाः ६,६६,४

पुर्
१६५ पूर्भिः रक्षत मरुतः यं आवत १,१६६,८

पुरः
४४१ पुरः दधे मरुतः पृश्निमातॄन् । अथर्व० ४,२७,१

पुरा
(२२) १,३९,५ (१५५) १,१३६,८ (१८१) १,१६७,१०;
(२३४) ५,५३,१; (३६७) ७,५६,२३; (६६) ८,७,२१

पुरीषिन्
१६९ मरुतः । यूयं वृष्टिं वर्षयथ पुरीषिणः ५,५५,५
२४२ मा वः परि स्थात् सरयुः पुरीषिणी ५,५३,९

पुरु
१६० हिताः इव । पुरु रजांसि पयसा मयोभुवः १,१६६,३
१७० पुरु यत् शंसं अमृतासः आवत १,१६६,१३

पुरु-क्षु
५८ रयिं मदच्युतं । पुरुक्षुं विश्वधायसं इयर्त ८,७,१३

पुरु-चन्द्र
३१७ पुरुचन्द्राः रिशादसः । यज्ञियासः ववृत्तन ५,६१,१६

पुरुतम
२७९ मरुतां पुरुतमं । गवां सर्गं इव ह्वये ५,५६,५

पुरु-द्रप्स
२८८ पुरुद्रप्साः अञ्जिमन्तः सुदानवः ५,५७,५

पुरु-प्रैष
१८७ यामनि । पुरुप्रैषाः अहन्यः न एतशः १,१६८,५

पुरुषता
३७३ यत् वः आगः पुरुषता कराम ७,५७,४

पुरु-स्पृह्
८३ इषा नः अद्य आ गत पुरुस्पृहः ८,२०,१

पुरो-धा
४३६ ते मा अवन्तु अस्यां पुरोधायाम् । अथर्व० ५,२४,६

पुष्
१२० आपृच्छ्यं क्रतुं आ क्षेति पुष्यति १,६४.१३
१२१ तोकं पुष्येम तनयं शतं हिमाः १,६४,१४

पुष्टिः
१६५ पाथन शंस्यात् तनयस्य पुष्टिषु १,१६६,८

पुष्यत्
३४९ सा विट् । सनात् सहन्ती पुष्यन्ती नृम्णम् ७,५६,५

पुष्यसे
३७४ यजत्रा । प्र वाजेभिः तिरत पुष्यसे नः ७,५७,५

पू
५ मरुतः पिबत ऋतुना । यज्ञं पुनीतन १,१५,२
३४७ अभि स्वपूभिः मिथः वपन्त ७,५६,३

पूत

१९ विरन्ति मित्रः अर्यमा । तना पूतस्य वरुणः ८,९४,५

पूत-दक्ष

२०१ तिरः आपः इव स्निधः । अर्षन्ति पूतदक्षसः ८,९४,७
२०४ त्यान् नु पूतदक्षसः । मरुतः हुवे ८,९४,१०

पूर्ण

३०१ नौः न पूर्णा क्षरति व्यथिः यती ५,५९,२

पूर्व

१५८ पूर्व महित्वं वृषभस्य केतवे १,१६६,१
२४९ यतः पूर्वान् इव सखीन् अनु ह्वय ५,५३,१६
४०८ तुमारतं न पूर्वाः अति क्षपः १०,७७,२
१४० पूर्वाभिः हि ददाशिम । शरद्भिः मरुतः वयम् १,८६,६
९६ क्षितिषु । आत पूर्वासु मरुतः व्युष्टिषु ८,२०,१५

पूर्व-पीतिः

४७३ अभि त्वा पूर्वपीतये १,१९,९; [अग्निः २४४३]

पूर्व्य

८१ अग्निः हि जनि पूर्व्यः । छन्दः न ८,७,३६
२७२ यत् पूर्व्यं मरुतः यत् च नूतनम् ५,५५,८
२७९ मरुतां पुरुतमं अपूर्व्यं । गवां सर्गं इव ह्वये ५,५६,५

पूषन्

३३२ अन्तर्वाणं पूषणं सं यथा शता ३,४८,१५

पूष-रातिः

४७८ देवासः पूषरातयः १,२३,८; [इन्द्रः २०४८]

पॄ

४३९ वृष्टिः वः विश्वाः निवतः पृणाति । अथर्व० ३,२२,३
४३२ माता इव पुत्रं पिपृत रुद्र युक्तः । अथर्व० ५,२६,५
२१२ यत्र रथं पारयथ अति अंहः २,३४,१५

पृक्षम्

२०१ पृक्षं याथ पृषतीभिः समन्यवः २,३४,३
२०२ पृक्षे ता विश्वा भुवना ववक्षिरे २,३४,४

पृणत्

१८२ भद्रा वः रातिः पृणतः न दक्षिणा १,१६८,७

पृत्

१२१ वहन्ति मरुतः पृत्सु दुष्टरम् १,६४,१४
१०१ सुहिता इव हव्यः । विद्युत् पृत्सु होतृषु ८,२०,२०

पृतना

१३० ह्वयन्तः । धनयन्तः न पृतनासु येतिरे १,८५,८
३३३ रुद्रियासः । त्रातारः भूत पृतनासु अर्यः ७,५६,२२
३३७ मरुद्भिः उग्रः पृतनासु साह्ळा ७,५६,२३
३८३ नहि वः कातिः पृतनासु मर्धति ७,५९,४
४४३ मारुतं शर्धः पृतनासु उग्रम् । अथर्व० ४,२७,७

पृथक्

४५८ गायन्तु मारुताः । पर्जन्य घोषिणः पृथक् । अथर्व० ४,१५,४

पृथिवी

१३ येषां अज्मेषु पृथिवी । यामेषु रेजते १,३७,८
४१ आ वः यामाय पृथिवी चित् अश्रोत् १,३९,६
२५८ प्रवत्वती इयं पृथिवी मरुद्भ्यः ५,५४,९
२७७ मीळ्हुष्मती इव पृथिवी पराहता । एति ५,५६,३
२९८ प्रथिष्ट यामन् पृथिवी चित् एषाम् ५,५८,७
४१० पृथिवी चित् रेजते पर्वतः चित् ५,६०,२
३४२ रेजते अग्ने पृथिवी मखेभ्यः ६,६६,९
२९ पर्जन्येन उदवाहेन । यत् पृथिवीं व्युन्दन्ति १,३८,९
२५७ वि उन्दन्ति पृथिवीं मध्वः अन्धसा ५,५४,८
२८६ वृत्रं द्यां । कोपयथ पृथिवीं पृश्निमातरः ५,५७,३
४५८ प्रवर्षन्तु पृथिवीं अनु । अथर्व० ४,१५,४
४५९ वाश्राः आपः पृथिवीं तर्पयन्तु । अथर्व० ४,१५,५
४६१ वर्षन्तु पृथिवीं अनु । अथर्व० ४,१५,७
४६२ सं यन्तु पृथिवीं अनु । अथर्व० ४,१५,८
४४३ दिवः पृथिवीं अभि ये सृजन्ति । अथर्व० ४,२७,४
२७१ उत द्यावापृथिवी याथन परि ५,५५,७
४६३ प्र नवन्तु पृथिवीं अनु । अथर्व० ४,१५,९
३०० अर्चं दिवे प्र पृथिव्यै ऋतं भरे ५,५९,१
२२ यन्त दिवः न पृथिव्याः । कत् वः गावः १,३८,२
३८ वि यायन वनिनः पृथिव्याः । वि आशाः १,३९,३
४०९ प्र ये दिवः पृथिव्याः न बर्हणा १०,७७,३
१९० अव स्यन्त विद्युतः पृथिव्याम् १,१६८,८

पृथु

१६ सं चित् य दीर्घं पृथुं । प्र च्यवयन्ति १,३७,११
३१४ दीर्घं पृथु पप्रथे सद्म पार्थिवम् ५,८७,७

पृथु-ज्रयी

१८९ वः रातिः । पृथुज्रयी असुर्या इव जञ्जती १,१६

पृश्निः

१९१ स्यन्त पृश्निः महते रणाय । त्वेषं अयासां १,१
४७३ मह्यम पृश्निः नदिन मरुतः ५,६०,५
३३५ सप्त दुर्गे दुहे पृश्निः ऊधः ६,६६,१

३३६ सा इत् **पृश्निः** सुभ्वे गर्भं आ अधात् ६,६६,३
३४८ **पृश्निः** यत् ऊधः मही जभार ७,५६,४
५५ त्रीणि सरांसि **पृश्नयः** । दुदुह्रे मधु ८,७,१०
२३२ गां वोचन्त सूरयः । **पृश्निं** वोचन्त मातरम् ५,५२,१६
२०० वृषा अजनि **पृश्न्याः** शुक्रे ऊधनि २,३४,२
२०८ **पृश्न्याः** यत् ऊधः अपि आप्यः दुहुः २,३४,१०
२९६ **पृश्नेः** पुत्राः उपमासः रभिष्ठाः । मिमिक्षुः ५,५८,५

पृश्नि-मातृ

२४ यत् यूयं **पृश्निमातरः** । मर्तासः स्यातन १,३८,४
१२४ अधि श्रियः दधिरे **पृश्निमातरः** १,८५,२
२८५ सश्वाः स्थ सुरथाः **पृश्निमातरः** ५,५७,२
२८६ धूनुथ द्यां । पोपयथ पृथिवीं **पृश्निमातरः** ५,५७,३
३०५ सुजातासः जनुषा **पृश्निमातरः** । नः अच्छ ५,५९,६
४८ उत् ईरयन्त वायुभिः । वाश्रासः **पृश्निमातरः** ८,७,३
६२ स्वानेभिः ईरते । उत् स्तोमैः **पृश्निमातरः** ८,७,१७
४१८ पृषदश्वाः मरुतः **पृश्निमातरः** । वा० य० २५,२०
४३३ यूयं उग्राः मरुतः **पृश्निमातरः** । अथर्व० १३,१,३
४४१ पुरः दधे मरुतः **पृश्निमातॄन्** । अथर्व० ४,२७,२

पृषती

४१ उपो रथेषु **पृषतीः** अयुग्ध्वम् १,३९,६
१२६ रथेषु आ । वृषव्रातासः **पृषतीः** अयुग्ध्वम् १,८५,४
१२७ प्र यत् रथेषु **पृषतीः** अयुग्ध्वम् १,८५,५
२१४ शुभे संमिश्लाः **पृषतीः** अयुक्षत ३,२६,४
२७० यत् अश्वान् धूर्षु **पृषतीः** अयुग्ध्वम् ५,५५,६
२८६ शुभे यत् उग्राः **पृषतीः** अयुग्ध्वम् ५,५७,३
७३ यत् एषां **पृषतीः** रथे । प्रष्टिः वहति रोहितः ८,७,२८
७ ये **पृषतीभिः** ऋष्टिभिः । अजायन्त स्वभानवः १,३७,२
११५ क्षपः जिन्वन्तः **पृषतीभिः** ऋष्टिभिः १,६४,८
२०१ पृक्षं याथ **पृषतीभिः** समन्यवः २,३४,३
२९७ यत् प्र अयासिष्ट **पृषतीभिः** अश्वैः ५,५८,६
४५० आ ये तस्थुः **पृषतीषु** श्रुतासु ५,६०,२

पृषदश्वः

१४८ सः हि स्वसृत् **पृषदश्वः** युवा गणः १,८७,४
२०२ जीरदानवः । **पृषदश्वासः** अनवभ्रराधसः २,३४,४
२१६ **पृषदश्वासः** अनवभ्रराधसः गन्तारः ३,२६,६
४१८ **पृषदश्वाः** मरुतः पृश्निमातरः । वा० य० २५,२०

पृष्ठम्

१६२ दिवः वा **पृष्ठं** नर्याः अचुच्यवुः १,१६६,५
३०९ कथा यय । **पृष्ठे** सदः नसोः यमः ५,६१,२
३८९ आ हंसासः नीलपृष्ठाः अपप्तन् ७,५९,७

पृष्ठ-यज्वन्

२५० घर्मस्तुभे दिवः आ **पृष्ठयज्वने** ५,५४,१

पॄ

१६२ सुचेतुना । अरिष्टग्रामाः सुमतिं **पिपर्तन** १,१६६,६

पेशस्

२०४ कर्त धियं जरित्रे वाज**पेशसम्** २,३४,६
२८७ वाताात्विषः । यमाः इव सुसदृशः सु**पेशसः** ५,५७,४
२११ सुचन्द्रं वर्णं दधिरे सु**पेशसम्** २,३४,१३

पोत्रम्

५ मरुतः पिबत ऋतुना । **पोत्रात्** यज्ञं पुनीतन १,१५,२

पोषः

१६० अरासत । रायः **पोषं** च हविषा ददाशुषे १,१६६,३

पौंस्यम्

६८ वृत्रं पर्वशः ययुः । चक्राणाः वृष्णि **पौंस्यम्** ८,७,२३
१५७ मो सु वः अस्मत् अभि तानि **पौंस्या** १,१३९,८
१६४ सु-स्तुताः विदुः वीरस्य प्रथमानि **पौंस्या** १,१६६,७
३०३ अश्ववत् । कः काव्या मरुतः कः ह **पौंस्या** ५,५९,४
४८६ समानेभिः वृषभ **पौंस्येभिः** १,१६५,७; [इन्द्रः३१५६]
३३५ साकं नृम्णैः **पौंस्येभिः** च भूवन् ६,६६,२

प्यै

३३४ मर्तेषु अन्यत् दोहसे **पीपाय** ६,६६,१
२०४ अश्वां इव **पिप्यत** धेनुं ऊधनि २,३४,६

प्र

(४६५) १,१९,१ [अग्निः २४३८]; (६,९-१०,१६,१९) १,३७,१.४-५.११.१४; (३०) १,३८,१०; (३६,४०) १,३९,१.५; (१०८,११०,१२०) १,६४,१.३.१३; (१२३, १२७-२८) १,८५,१.५-६; (१४७,१४९) १,८७,३.५; (४९२) १,१६५,१३ [इन्द्रः ३१६२]; (१६१-१६२, १६४) १,१६६,४-५.७; (१७८) १,१६७,७; (२१४) ३,२६,४, (२१७,२२१,२२४,२३२) ५,५२,१.५.८.१६; (२४०,२४३,२४५) ५,५३,७. १०.१२; (२५०-५१) ५,५४,१--२; (२७८,२८१) ५,५६,४.७; (२९७) ५,५८,६; (३००,३०३-४,३०६) ५,५९,१ (द्विः). ४-५ (द्विः). ७; (४४९) ५,६०,१; (३१८--२०) ५,८७,१ (द्विः)-२ (द्विः)-३ (द्विः); (३४२) ६,६६,६;

(३५८) ७,५६,१४ (द्विः); (३७०,३७४) ७,५७,१-५ (द्विः); (३७७-३८०,३८२) ७,५८,१-४.६; (३८४) ७,५९,२; (४६,४९) ८,७,१.४; (८५) ८,२०, ४; (४०९,४१२) १०,७७,३.६; (४१२) १०,७७,६; (४३४) अथर्व० ३,१,२; (४६३) अथर्व० ४,१५,९; (४४०) अथर्व० ४,२७,१; (४४७) अथर्व० ७,८२,३; (४३३) अथर्व० १३,१,३

प्र-अवितृ

१४८ अस्याः धियः प्राविता अथ वृषा गणः १,८७,४

प्रकेत

४९७ सुप्रकेतेभिः ससहिः दधानः १,१७१,६ [इन्द्रः ३२६८]

प्र-क्रीळिन्

३६० शुभ्राः । वत्सासः न प्रक्रीळिनः पयोधाः ७,५६,१६

प्र-घासिन्

४२६ स्वतवान् च प्रघासी च । वा० य० १७,८५

४११ प्रघासिनः हवामहे मरुतः च रिशादसः । वा० य० ३,४४

प्र-चेतस्

४४ असामि हि प्रयज्यवः । कण्वं दद प्रचेतसः १,३९,९

११५ सिंहाः इव नानदति प्रचेतसः विश्ववेदसः १,६४,८

३२६ नूनं तस्य प्रचेतसः । स्यात दुर्धर्तवः निदः ५,८७,९

५७ ऋभुक्षणः दमे । उत प्रचेतसः मदे ८,७,१२

प्रच्छ्

४८१ सं पृच्छसे समराणः शुभानैः १,१६५,३ [इन्द्रः ३२५२]

प्र-च्यवयत्

११६ प्रच्यवयन्तः अच्युता चित् ओजसा । मनोजुवः १,८५,४

प्र-च्युत

४६१-६३ मरुद्भिः प्रच्युताः मेघाः । अथर्व० ४,१५,७-९

प्रजा

३७१ ददात नः अमृतस्य प्रजायै । जिगृत रायः ७,५७,६

४३४ प्राणं प्रजाभ्यः अमृतं दिवः परि । अथ० ४,१५,१०

प्र-ज्ञातृ

४१६ प्रज्ञातारः न ज्येष्ठाः सुनीतयः । सुशर्माणः १०,७८,२

प्रतर

२६७ श्रिये चित् आ प्रतरं ववृधुः नरः ५,५५,३

प्र-तवस्

१४१ प्रत्वक्षसः प्रतवसः विरप्शिनः । अनानताः १,८७,१

प्रति

(४६५) १,१९,१ [अग्निः २४३८]; (१५६) १,८८,६; (४८३,४९१) १,१६५,४.१२; [इन्द्रः ३२५३,३२६१] (१९०) १,१६८,८; (१९३) १,१७१,१; (२७०) ५,५५,६; (२८४) ५,५७,१; (३९०) ७,५९,८; (९०,९७) ८,२०,९,१६

प्रति-इ

४३४ अग्निः हि एषां दूतः प्रत्येतु विद्वान् । अथर्व० ३,१,२

प्रतिष्ठा

४३६ ते मा अवन्तु । अस्यां प्रतिष्ठायाम् । अथर्व०५,२४,६

प्रति-सदृक्

४२४-२ सदृङ् च प्रतिसदृङ् च । वा० य० १७,८१

प्रति-सदृक्ष

४२५ सदृक्षासः प्रतिसदृक्षासः आ इतन । वा०य०१७,८४

प्रति-स्कम्भः

३७ अयुधा पराणुदे । वीळु उत प्रतिस्कम्भे १,३९,२

प्रतीकम्

१७३ रथं गात् । त्वेषप्रतीका नभसः न इत्या १,१६७,५

प्रत्न

१४९ पितुः प्रत्नस्य जन्मना वदामसि १,८७,५

प्र-त्वक्षस्

१४५ प्रत्वक्षसः प्रतवसः विरप्शिनः । अनानताः १,८७,१

२८७ प्रत्वक्षसः महिना द्यौः इव उरवः ५,५७,४

प्रथ्

३२४ दीर्घं पृथु पप्रथे सद्म पार्थिवम् ५,८७,७

२९८ प्रथिष्ट यामन् पृथिवी चित् एषाम् ५,५७,७

४०३ आ ये विश्वा पार्थिवानि । पप्रथन् रोचना दिवः ८,९४,९

४३० मरुतः सूर्यत्वचसः शर्म यच्छाथ सप्रथाः अथर्व० १,२६,३

प्रथम

२१० ते दशग्वाः प्रथमाः यज्ञं ऊहिरे २,३४,१२

१६४ सु-स्तुताः । विदुः वीरस्य प्रथमानि पौंस्या १,१६६,७

प्रदक्षिणित्

४३९ प्रदक्षिणित् मरुतां स्तोमं ऋध्याम् ५,६०,१

प्रादिव्

४५६ योजनं चित् । वैश्वानर प्रादिवा केतुना सजूः ५,६०,८,

प्र—नश्

३१३ मा नः [illegible] प्रणक् नः ७,१६,२

प्र—नीतिः

३६३ [illegible] । प्रणीतिः [illegible] ६,४८,२०

प्र—नेतृ

३६३ [illegible] । प्र नेतारः [illegible] ५,६१,१५

३७१ [illegible] । प्रनेतारः [illegible] ७,१७,२

प्र—पथः

१६६ [illegible] आ नः प्रपथेषु [illegible] १,१६६,९

प्रप्र

२९६ प्रप्र [illegible] ५,५८,५

प्र--भृतः

४८३ [illegible] प्रभृतः मे [illegible] १,१६५,४ [इन्द्रः३१५३]

प्र--भृथ

२०९ [illegible] प्रभृथे [illegible] २,३४,११

प्र--यज्युः

४४ अहानि हि प्रयज्यवः । कण्वं दद प्रचेतसः १,३९,९

१४१ सुभगः सः प्रयज्यवः । मरुतः अस्तु मर्त्यः १,८६,७

२६५ प्रयज्यवः मरुतः भ्राजदृष्टयः । रुक्मवक्षसः ५,५५,१

३३२ मरुतः मर्त्यस्य वा । ईजानस्य प्रयज्यवः ६,४८,२०

३५८ महांसि । प्र नामानि प्रयज्यवः तिरध्वम् ७,५६,१४

७८ ओ सु वृष्णः प्रयज्यून् । वव्रत्याम् ८,७,३३

३१८ प्र शर्धाय प्रयज्यवे सुखादये । तवसे ५,८७,१

प्र--यत्

२५८ मरुद्भ्यः । प्रवत्वती द्यौः भवति प्रयद्भ्यः ५,५४,९

५१ युष्मान् दिवा हवामहे । युष्मान् प्रयति अध्वरे ८,७,६

प्र--यत

१६१ चित्रः वः यामः प्रयतासु ऋष्टिषु १,१६६,४

प्रयस्

१४१ सुभगः सः । प्रयज्यवः यस्य प्रयांसि पर्षथ १,८६,७

प्रयस्वत्

४१० प्रयस्वन्तः न सत्राचः आ गत १०,७७,४

प्र--यावन्

९० शर्धाय मारुताय भरध्वं । हव्या वृषप्रयाव्ने ८,२०,९

प्र--युज्

४११ [illegible] प्रयुजः न रश्मिभिः १०,७७,५

प्र--युध्

३०४ [illegible] प्रयुधः न [illegible] ५,५९,५

प्रवत्

४३० [illegible] प्रवतः [illegible] । अथर्व० १,२६,३

प्रवत्वत्

२५८ [illegible] । प्रवत्वन्तः पर्वताः जीरदानवः ५,५४,९

,, प्रवत्वती इयं पृथिवी मरुद्भ्यः । प्रवत्वती द्यौः [illegible]

,, मरुद्भ्यः प्रवत्वती द्यौः भवति प्रयद्भ्यः ५,५४,[illegible]

,, प्रवत्वतीः पथ्याः अन्तरिक्ष्याः । जीरदानवः [illegible]

प्रवासः

४११ रिशादसः । प्रवासः न प्रसितासः परिप्रुषः १०,[illegible]

प्र–वृद्ध

४८८ यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध १,१६५,९; [इन्द्रः[illegible]

प्र-शस्त

१७१ नयते ई अर्यमो अप्रशस्तान् १,१६७,८

प्र–शस्तिः

२९० मरुतः । प्रशस्तिं नः कृणुत रुद्रियासः ५,५७,७

प्रष्टिः

४१,७१ प्रष्टिः वहति रोहितः १,३९,६; ८,७,२८

प्र–सक्त

४४९ इह प्रसक्तः वि चयत् कृतं नः ५,६०,१

प्र--सित

४११ रिशादसः । प्रवासः न प्रसितासः परिप्रुषः १०,[illegible]

प्र–सितिः

३२३ स्थातारः हि प्रसितौ संदृशि स्थन ५,८७,६

प्र–स्थावन्

८२ प्रस्थावानः मा अप स्थात समन्यवः ८,२०,१

प्राणः

४६४ प्राणं प्रजाभ्यः अमृतं दिवः परि । अथर्व० ४,१५,[illegible]

प्रातः

१२२ प्रातः मक्षु धियावसुः जगम्यात् १,६४,१५

४०० जोषं आ । प्रातः होता इव मत्सति ८,९४,६

प्रिय

३५४ प्रिया वः नाम हुवे तुराणाम् ७,५६,१०

प्रिय

१५० समोरवः । विद्रे प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः १,८७,६
१२९ वयः न सीदन् अधि बर्हिषि प्रिये १,८५,७
१२९ वयः न सीदन् अधि बर्हिषि प्रिये ७,५९,१
३८४ युष्माकं देवाः अवसा अहनि प्रिये १,३८,१
२१ कत् ह नूनं कधप्रियः । दधिध्वे वृक्तबर्हिषः ८,७,२१
७६ कत् ह नूनं कधप्रियः । यत् इन्द्रं अजहातन ८,७,३१ [?]

प्रुत्

४३९ उदप्रुतः मरुतः तान् इयर्त । अथर्व० ६,२२,३

प्रुष्

१९० पृथिव्यां । यदि घृतं मरुतः प्रुष्णुवन्ति १,१६८,८
४०७ सत्रप्रुषः न वाचा प्रुष वसु १०,७७,१
४१८ अमिथवः । वरेयवः न मर्याः घृतप्रुषः १०,७८,४
४११ रिशादसः । प्रवासः न प्रसितासः परिप्रुषः १०,७७,५

प्रेष्ठ

१८१ वयं अद्य इन्द्रस्य प्रेष्ठाः । वयं श्वः १,१६७,१०

प्रैष

१८७ धन्वच्युतः इषां न यामनि पुरुप्रैषाः १,१६८,५

प्रो

४० प्रो आरत मरुतः दुर्मदाः इव । देवासः १,३९,५

प्सुः

४१० तिग्मप्सुः यज्ञः अर्वाक् अयं सु वः १०,७७,४

बन्धुः

८९ गोबन्धवः सुजातासः इषे भुजे । महान्तः ८,२०,८
३०४ अश्वाः इव इत् अरुषासः सबन्धवः ५,५९,५
१०२ समन्यवः । सजातेन मरुतः सबन्धवः ८,२०,२१

बन्धेषः

२२९ प्र ये मे बन्ध्वेषे । गां वोचन्त सूरयः ५,५२,१६

बभूवस्

४८७ येन मघोन तविषः बभूवान् १,१६५,८
[इन्द्रः ३३५९]

बर्हण

१६२ रिणाति पश्वः सुधिता इव बर्हणा १,१६६,६
४०९ प्र ये दिवः पृथिव्याः न बर्हणा १०,७७,३

बर्हिस्

१२८ [illegible] बर्हिः [illegible] १,८५,६
३०१ [illegible] बर्हिः [illegible] ५,४६,५ [?]
३८८ [illegible] बर्हिः [illegible]
[illegible]

---

१२९ वयः न सीदन् अधि बर्हिषि प्रिये १,८५,७
१३८ अस्य वीरस्य बर्हिषि । सुतः सोमः दिविष्टिषु १,८६,४
२१ कत् ह नूनं कधप्रियः । दधिध्वे वृक्तबर्हिषः ८,७,२०
५५ क्व नूनं सुदानवः । मदथ वृक्तबर्हिषः ८,७,२१
६६ स्तोमेभिः वृक्तबर्हिषः । दधानि ऋतस्य जिन्वथ ८,२०,२१ [?]
१०६ यत् आसिक्न्यां । यत् समुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः १,३७,१२ [?]

बलम्

१७ मरुतः यत् ह वः बलं । जनान् अचुच्यवीतन १,३७,१२
२८९ सहः ओजः बाह्वोः वः बलं हितम् ५,५७,६

बहुलम्

४६० त्वया नृष्टं बहुलं आ एतु वर्षम् । अथर्व० ४,१५,६ [?]
२७३ अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्तन ५,५५,९

बाध्

१२५ बाधन्ते विश्वं अभिमातिनं अप १,८५,३
३३४ अप बाधध्वं वृषणः तमांसि । [illegible]
३३४ अप बाधध्वं वृषणः तमांसि १,३९,८ [?]
११५ सं इत् सबाधः शवसा अहिमन्यवः १,६४,८ [?]

बाहुः

१२८ [illegible] । [illegible] व [illegible] बाहुभिः १,८५ [illegible]
२८९ सहः ओजः बाह्वोः वः बलं हितम् ५,५७,६
३६९ [illegible] बाहुषु । [illegible] १,१६६ [illegible]
१६७ [illegible] बाहुषु ८,२०,११ [?]
९२ [illegible] ८,२०,१ [illegible]
९३ [illegible] १,१६७,८ [illegible]
४८७ [illegible] बाहुः [illegible]

बाहु-जूत

२६५ [illegible] बाहुजूतः । [illegible]

बाहोजस्

८७ [illegible] बाहोजसः ८ [illegible]

बिभ्युस्

२१ [illegible] बिभ्युषे १,३ [illegible]
४५६ [illegible] बिभ्युषा १,६,७ [illegible]

बिभ्रत्

१०६ [illegible] बिभ्रतः [illegible]
२८२ [illegible] बिभ्रती [illegible]

बीजम्

३५६ [illegible] बीजं [illegible]

बुध्नः

४९० [illegible] बुध्ने [illegible] १० [illegible]

बुध्न्य

३५८ प्र बुध्न्या वः ईरते महांसि ७,५६,१४

बृहत्

२६५ प्रयज्यवः । बृहत् वयः दधिरे रुक्मवक्षसः ५,५५,१

२६६ यथा विद । बृहत् महान्तः उर्विया वि राजथ ५,५५,२

२९१;२९९ बृहद्गिरयः बृहत् उक्षमाणाः ५,५७,८;५८,८

३७९ बृहत् वयः मघवद्भ्यः दधात । ऊतिभिः ७,५८,३

८७ [illegible] द्यौः । जिहीते उत्तरा बृहत् ८,२०,६

३०६ [illegible] दिवः बृहतः सानुनः परि ५,५९,७

३६० प्र ये दिवः बृहतः शृण्विरे गिरा ५,८७,३

बृहदुक्

२१४ बृहदुक्षः मरुतः विश्ववेदसः । प्र वेपयन्ति ३,२६,४

बृहद्गिरिः

२९१;२९९ बृहद्गिरयः [illegible] उक्षमाणाः ५,५७,८;५८,८

बृहद्दिव

२९७ [illegible] वा बृहद्दिवैः शुभायाः १,१६७,२

ब्रह्मण्यन्

२०९ [illegible] । ब्रह्मण्यन्तः शंस्यं राधः ईमहे १,३४,११

ब्रह्मन् [[illegible]]

६ [illegible] । देवत्तं ब्रह्म गायत १,३७,४

२०३ ब्रह्म [illegible] । नूनं उक्थमिय १,८८,४

२०८ [illegible] ब्रह्म [illegible] १,१६५,११

[[illegible] ३०६०]

२३४ [illegible] ब्रह्म [illegible] १,३४,७

२४२ [illegible] ब्रह्माणि [illegible] १,१६५,५

[[illegible] ३०७१]

२४३ ब्रह्माणि [illegible] १,१६५,४

[[illegible] ३०७३]

२४३ [illegible] ब्रह्माणि [illegible] १,१६५,१३

[[illegible] ३०८३]

[illegible] ब्रह्माणि [illegible] १,३४,६

[illegible] ब्रह्माणः [illegible] १,३८,१३

[illegible] ब्रह्माणि [illegible] ५,५३,६

ब्रह्मन् [[illegible]]

[illegible] १०,७,१०

[illegible] १०,७७,१

ब्रू

[illegible] ब्रुवते [illegible] १,३३,१३

३१९ स्वयं । प्र विप्रना ब्रुवते एवयामरुत् ५,८७,१

१९८ उप ब्रुवे नमसा दैव्यं जनम् १,३०,११

२३६ ते मे आहुः ये आययुः । उप द्युभिः ५,५३,३

४४० मरुतां मन्वे अधि मे ब्रुवन्तु । अथर्व० ४,२७,१

भक्ष्

१९० हविष्मासः भक्षीय वः अवसः दैव्यस्य ५,५७,७

भगम्

२०६ अश्वान् रथेषु भगे आ सुदानवः १,३४,८

९६ सुभगः सः वः ऊतिषु । आस ८,२०,१५

४१४ यत् वा भगवे सुभगासः दिवि स्थ ५,६०,६

२८३ यस्मिन् सुजाता सुभगा महीयते । मीळ्हुषी [illegible]

भज्

२८८ दिवः शर्धाः अमृतं नाम भेजिरे ५,५७,५

३५५ आ नः स्पार्हे भजतन वसव्ये ७,५९,११

भद्र

१८९ भद्रा वः रातिः पृणतः न दक्षिणा १,११८,७

१६६ विश्वानि भद्रा मरुतः रथेषु वः १,१६६,९

१६७ भूरीणि भद्रा नर्येषु बाहुषु १,१६६,१०

भद्र-जानिः

३११ परा वीरासः इतन । मर्यासः भद्रजानयः ५,६१,४

भन्ददिष्टिः

३१८ प्र शर्धाय प्रयज्यवे सुखादये । तवसे भन्ददिष्टये ५,८७,१

भन्युः

४०८ [illegible] । [illegible] आ [illegible] [illegible]

भरतः

४६३ युवं अग्निं भरताय वाजं । [illegible] २,५४,१४

भरद्वाजः

३४९ भरद्वाजाय अव धुक्षत द्विता ६,४८,१३

भर्गः

३३३ [illegible] । [illegible] भरध्वे १,११,५

भर्

४२८ [illegible] ५,६८,९

१०६ [illegible] [illegible]

भविष्ठ

२२२ [illegible] भविष्ठः १,१९१,३

[[illegible] ३११०]

४१४ रूनाः । आदित्येन नाम्ना शंभविष्ठाः १०,७७,८

भागः

३५८ सहस्रियं दम्यं भागं एतं । जुषध्वम् ७,५६,१४
३६५ मा पश्चात् दघ्म रथ्यः विभागे ७,५६,२१

भागम्

४२२ सुभागान् नः देवाः कृणुत सुरत्नान् १०,७८,८
१७८ स्थिरा चित् जनीः वहते सुभागाः १,१६७,७

भानुः

२२२ मरुतः जञ्झतीः इव । भानुः अर्त त्मना दिवः ५,५२,६
३०० अनु स्वं भानुं श्रथयन्ते अर्णवैः ५,५९,१
१५० श्रियसे कं भानुभिः सं मिमिक्षिरे १,८७,६
५३;८१ ते भानुभिः वि तस्थिरे ८,७,८;३६
१९५ चित्राः ऊती सुदानवः । मरुतः अहिभानवः १,१७२,१
११४ महिषासः मायिनः चित्रभानवः । रघुस्यदः १,६४,७
१३३ आ गच्छन्ति ईं अवसा चित्रभानवः १,८५,११
७ साकं वाशीभिः अञ्जिभिः । अजायन्त स्वभानवः १,३७,२
२३७ ये अञ्जिषु ये वाशीषु स्वभानवः ५,५३,४
८५ शुभ्रखादयः । यत् एजथ स्वभानवः ८,२०,४
२५० प्र शर्धाय मारुताय स्वभानवे । दार्व अनज ५,५४,१
२१८ वा शर्धाय मारुताय स्वभानवे । श्रवः पृक्षत ६,४८,१२

भामम्

२१६ सुशस्तिभिः । अग्नेः भामं मरुतां ओजः ईमहे ३,२६,६
४८७ स्वेन भामेन तविषः बभूवान् १,१६५,८
[इन्द्रः ३२५७]

भास्

४११ रश्मिभिः । ज्योतिष्मन्तः न भासा व्युष्टिषु १०,७८,५
४५७ मा नः विदत् अभिभाः मो अशस्तिः ।
अथर्व० १,२०,१

भिक्ष्

१९३ नमसा एमि । सूक्तेन भिक्षे सुमतिं तुराणाम् १,१७१,१
६० एतावतः चित् एषां । सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ८,७,१५

भिद्

२६५ उत पव्या रथानां । अद्रिं भिन्दन्ति ओजसा ५,५२,९
१३२ दादृहाणं चित् बिभिदुः वि पर्वतान् १,८५,१०
३०५ ये अग्नेः [illegible] । [illegible] ५,५९,६

भियस्

३०१ [illegible] भियसा [illegible] ५,५९,६

भी

१६२ विश्वः वः अज्मन् भयते वनस्पतिः १,१६६,५
३७८ विश्वः वः यामन् भयते स्वर्दृक् ७,५८,२
१३० भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यः । राजानः इव १,८५,८
१६१ भयन्ते विश्वा भुवनानि हर्म्या १,१६६,४
४५१ पर्वतः चित् महि वृद्धः बिभाय । दिवः चित् सानु रेजत ५,६०,३
४१ वः यामाय पृथिवी चित् । अबीभयन्त मानुषाः १,३९,६

भीः

१३ देवां अज्मेषु पृथिवी । भिया यामेषु रेजते १,३७,८
४९५ इन्द्रात् भिया मरुतः रेजमानाः १,१७१,४
[इन्द्रः ३२३६]
२८३ नि वः वना जिहते यामनः भिया ५,५७,३
४५० वना चित् उग्राः जिहते नि वः भिया ५,६०,२
७१ रन्ध्रे अयातन । द्यौः न चक्रदत् भिया ८,७,२६

भीमः

४२३.१ उग्रः न भीमः च । वा० सं० ३९,७
१९९ मृगाः न भीमाः तविषीभिः अर्चिनः २,३४,१
३७८ मन्नः [illegible] । भीमासः तु [illegible] ७,५८,२

भीम-युः

२७७ [illegible] । [illegible] भीमयुः ५,५६,३

भीम-संदृशः

२७६ [illegible] । [illegible] भीमसंदृशः ५,५६,२

भीरुः

१५० [illegible] अभीरवः १,८७,६

भुज्

८९ [illegible] भुजे । [illegible] ८,२०,८
९४ [illegible] भुजे ८,२०,२३

भुजिः

१६४ [illegible] भुजिभिः [illegible] १,१६६,८

भुवनम्

१३० [illegible] भुवना [illegible] १,८५,८
२०२ [illegible] भुवना [illegible] २,३४,४
१६० [illegible] भुवनानि [illegible]
१,१६६,३
१६१ [illegible] भुवनानि [illegible]
१,१६६,४

भू

२५८ मरुद्भ्यः। प्रवत्वतीः द्यौः **भवाति** प्रयद्भ्यः ५,५४,९
४६४ यः ओषधीनां अधिपाः **बभूव** । अथर्व० ४,१५,१०
४५७ अदारसृत् **भवतु** देव सोम । अथर्व० १,२०,१
४२७ मरुतः अनुवर्त्मानः **भवन्तु** । वा० य० १७,८६
४४२ शग्माः **भवन्तु** मरुतः नः स्योनाः। अथर्व० ४,२७,३
४९७ **भव** मरुद्भिः अवयातहेळाः १,१७१,६
[इन्द्रः ३२६८]
४८४ इन्द्र स्वधां अनु हि नः **बभूथ** १,१६५,५
[इन्द्रः ३२५४]
२७२ यत् च शसते। विश्वस्य तस्य **भवथ** नवेदसः ५,५५,८
४९२ एषां **भूत** नवेदाः मे ऋतानाम् १,१६५,१३
[इन्द्रः ३२६२]
३६६ मरुतः रुद्रियासः। त्रातारः **भूत** पृतनासु अर्यः ७,५६,२२
१०५ मयः नः **भूत** ऊतिभिः मयोभुवः ८,२०,२४
३९२ आ गत । मरुतः मा अप **भूतन** ७,५९,१०
४२७ इन्द्रं अनुवर्त्मानः **अभवन्** । वा० य० १७,८६
२५ मृगः न यवसे । जरिता **भूत्** अजोष्यः १,३८,५
१५७ तानि पौंस्या । सना **भूवन्** द्युम्नानि १,१३९,८
३३५ साकं नृम्णैः पौंस्येभिः च **भूवन्** ६,६६,२
३७३ मा वः तस्यां अपि **भूम** यजत्राः ७,५७,४
३९४ वयः ये **भूत्वी** पतयन्ति नक्तभिः ७,१०४,१८
१३९ अस्य श्रोपन्तु आ **भुवः**। चर्षणीः अभि १,८६,५
१०८ गिरः सं अञ्जे विदथेषु आ**भुवः** १,६४,१
११३ सुदानवः । पयः घृतवत् विदथेषु आ**भुवः** १,६४,६
१६० हिताः इव । पुरु रजांसि पयसा मयो**भुवः** १,१६६,३
२९३ मयो**भुवः** ये अमिताः महित्वा । तुविराधसः ५,५८,२
१०५ मयः नः भूत ऊतिभिः मयो**भुवः** ८,२०,२४
१६८ महान्तः मह्ना विभ्वः विभूतयः । दूरेदृशः १,१६६,११
२६७ साकं जाताः सुभ्वः साकं उक्षिताः ५,५५,३
३०२ अत्याः इव सुभ्वः चारवः स्थन । मर्याः इव ५,५९,३
३२० शृण्विरे गिरा । शुशुक्वानः सुभ्वः एवय.मरुत् ५,८७,३
३२६ सा इत् पृश्निः सुभ्वे गर्भं आ अधात् ६,६६,३

भूतम्

४३७ त्रायन्तां विश्वा **भूतानि** । अथर्व० ४,१३,४

भूतिः

१६८ महान्तः मह्ना विभ्वः वि**भूतयः** १,१६६,११

भूमन्

१२७ चर्म इव उदभिः वि उन्दन्ति **भूम** १,८५,५

१५२ पव्या रथस्य जङ्घनन्त **भूम** १,८८,२

भूमिः

१४७ प्र एषां अज्मेषु विथुरा इव रेजते । **भूमिः** १,८७,३
३०१ अमात् एषां भियसा **भूमिः** एजति ५,५९,२
८६ नानदति पर्वतासः। **भूमिः** यामेषु रेजते ८,२०,५
११२ धूतयः। **भूमिं** पिन्वन्ति पयसा परिज्रयः १,६४,५
३०३ यूयं ह **भूमिं** किरणं न रेजथ ५,५९,४
४६० **भूमिं** पर्जन्य पयसा सं अङ्ग्धि । अथर्व० ४,१५,६
३९ अधि द्यवि । न **भूम्यां** रिशादसः १,३९,४

भूरि

४८६ **भूरि** चकर्थ युज्येभिः अस्मे १,१६५,७ [इन्द्रः ३२५६]
३६७ **भूरि** चक्र मरुतः पित्र्याणि । उक्थानि ७,५६,२३
४८६ **भूरीणि** हि कृणवाम शविष्ठ १,१६५,७ [इन्द्रः ३२५६]
१६७ **भूरीणि** भद्रा नर्येषु बाहुषु । वक्षःसु रुक्माः १,१६६,१०

भूपेण्यम्

२६८ आ**भूषेण्यं** वः मरुतः महित्वनम् ५,५५,४

भृ

१२० अर्वद्भिः वाजं **भरते** धना नृभिः १,६४,१३
४५ असामि ओजः **बिभृथ** सुदानवः १,३९,१०
१०७ विश्वं पश्यन्तः **बिभृथ** तनूषु आ ८,२०,२६
३०३ प्र यत् **भरध्वे** सुविताय दावने ५,५९,४
३०० अर्च दिवे प्र पृथिव्यै ऋतं **भरे** ५,५९,१
४४९ रथैः इव प्र **भरे** वाजयद्भिः। स्तोमं ऋध्याम् ५,६०,१
३४८ पृश्निः यत् ऊधः मही **जभार** ७,५६,४
१०८ नोधः सुवृक्तिं प्र **भर** मरुद्भ्यः १,६४,१
९० वृष्णे शर्धाय मारुताय **भरध्वं** हव्या वृषप्रयाव्णे ८,२०,९
३४२ गृणते तुराय । मारुताय स्वतवसे **भरध्वम्** ६,६६,९
४२४.२ संमितः च **सभराः** । वा० य० १७,८२
२४९ यत् मरुतः **सभरसः** स्वर्णरः । मदथ ५,५४,१०
४२५ आ इतन। **सभरसः** मरुतः यज्ञे अस्मिन् । वा० य० १७,८४

भृत

४८३ शुष्मः इयर्ति प्र**भृतः** मे अद्रिः १,१६५,४
[इन्द्रः ३२५३]

भृथ

२०९ एवयाव्नः । विष्णोः एषस्य प्र**भृथे** हवामहे २,३४,११

भृमिः

१९९ **भृमिं** धमन्तः अप गाः अवृण्वत २,३४,१

[illegible] भूमिं चित् [illegible] ७,५६,२० [illegible]

भृष्टिः

[illegible] सहस्रभृष्टि [illegible] १,८५,९

भेषजम्

[illegible] भेषजम् ८,७,१५

[illegible] भेषजम् ५,५३,१४

[illegible] भेषजस्य [illegible] ८,२०,२३

भोजस्

[illegible] विश्वभोजसम् ६,४८,१३

[illegible] भोजसं [illegible] ३,४८,१४

भोजः

[illegible] भोजान् [illegible] ५,५३,१३

भ्राज्

[illegible] भ्राजन्ते [illegible] १,८५,४

[illegible] भ्राजन्ते [illegible]

[illegible] वि भ्राजन्ते [illegible] ८,२०,११

[illegible] विभ्राजन्ते [illegible] ५,६१,१२

[illegible] अभ्राजि [illegible] ५,५४,३

भ्राजत्-ऋष्टिः

[illegible] भ्राजदृष्टयः [illegible]

[illegible] भ्राजदृष्टयः [illegible]

[illegible] भ्राजदृष्टयः [illegible]

[illegible] भ्राजदृष्टयः [illegible]

[illegible] भ्राजदृष्टय [illegible]

[illegible]

[illegible]

भ्राजत्-जन्मन्

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

मक्षु

[illegible] मक्षु [illegible] १,३६,७

[illegible] मक्षु [illegible] १,३४,१५

[illegible] मक्षु [illegible] १,३३,५

[illegible] मक्षु [illegible] ७,५३,१५

मखः

३ मखः [illegible] १,६,८

[illegible] मखाः [illegible] १,६४,११

[illegible] मखेभ्यः ३,३३,९,

[illegible] मखस्य [illegible] ८,७,२७

[illegible] ५,८७,७

[illegible] १,८५,४

[illegible] १,३४,१

[illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

२१३ ओ षु नावा इव सुमतिः जिगातु २,३४,१५
३७३ अस्मे नः अस्तु सुमतिः चनिष्ठा ७,५७,४
३८६ अभि वः आ अवर्त् सुमतिः नवीयसी ७,५९,४
१६३ सुकेतुना । अरिष्टग्रामाः सुमतिं पिपर्तन १,१६६,६
१९३ एना नमसा । सूक्तेन भिक्षे सुमतिं तुराणाम् १,१७१,१
४३८ ऊर्जं च तत्र सुमतिं च पिन्वत । अथर्व० ६,२२,२
३७४ प्र नः अवत सुमतिभिः यजत्राः । प्र वाजेभिः ७,५७,५

मत्सरः

४४७ सान्तपनाः मत्सराः मादयिष्णवः । अथर्व० ७,८२,३

मद्

४०० ओषं आ । इन्द्रः यासः होता इव मत्सति ८,९४,६
१२३ रुद्रस्य सूनवः । मदन्ति वीराः विदथेषु घृष्वयः १,८५,१
२१७ अद्रोघं अनुस्वधं । श्रवः मदन्ति यज्ञियाः ५,५२,१
३१५ कः वेद नूनं । यत्र मदन्ति धूतयः ५,६१,१४
३७० यजत्राः । प्र यज्ञेषु शवसा मदन्ति ७,५७,१
२५९ सूर्ये उदिते मदथ दिवः नरः ५,५४,१०
६५ क्व नूनं सुदानवः । मदथ वृक्तबर्हिषः ८,७,२०
४७४ सोभर्याः उप सु-स्तुतिं मादयस्व स्वर्णरे ८,१०३,१४
[अग्निः २४४७]
१२८ रघुपत्वानः । मादयध्वं मरुतः मध्वः अन्धसः १,८५,६
१९ सन्ति कण्वेषु वः दुवः । तत्रो षु मादयाध्वै १,३७,१४
३८८ सोम्ये मधौ । स्वाहा इह मादयाध्वै ७,५९,६

मदः

१३८ दिविष्टिषु । उक्थं मदः च शस्यते १,८६,४
२० अस्ति हि स्म मदाय वः । स्मसि स्म १,३७,१५
२०३ गन्तन । मधोः मदाय मरुतः समन्यवः २,३४,५
१३२ सुदानवः । मदे सोमस्य रण्यानि चक्रिरे १,८५,१०
२३६ आयवः । उप शुभ्रेभिः विभिः मदे ५,५३,३
५७ ऋभुक्षणः दमे । उत प्रचेतसः मदे ८,७,१२

मद-च्युत्

१२९ विष्णुः यत् ह आवत् वृषणं मदच्युतम् १,८५,७
५८ आ नः रयिं मदच्युतं । इयर्त मरुतः दिवः ८,७,१३

मदत्

३८९ नरः न रण्वाः सवने मदन्तः ७,५९,७

मदन्ती

२७७ पृथिवी पराहता । मदन्ती एति अस्मत् आ ५,५६,३

मदिरम्

३१२;४२९ पिबन्तः मदिरं मधु ५,६१,११; सा.म० ३५६
१६४ सु-स्तुता । अर्चन्ति अर्कं मदिरस्य पीतये १,१६६,७

मधु

४७३ पूर्वपीतये । सृजामि सोम्यं मधु १,१९,९
[अग्निः २४४६]
१५९ नित्यं न सूनुं मधु बिभ्रतः उप । क्रीळन्ति १,१६६,२
३१२;४२९ पिबन्तः मदिरं मधु ५,६१,११; साम० ३५६
५५ त्रीणि सरांसि पृश्नयः । दुदुह्रे वज्रिणे मधु ८,७,१०
४३८ यत्र नरः मरुतः सिञ्चथ मधु । अथर्व० ६,२२,२
२०३ गन्तन । मधोः मदाय मरुतः समन्यवः २,३४,५
१२८ रघुपत्वानः । मादयध्वं मरुतः मध्वः अन्धसः १,८५,६
२५७ नि उन्दन्ति पृथिवीं मध्वः अन्धसा ५,५४,८
३७० मध्वः वः नाम मारुतं यजत्राः ७,५७,१
३८८ अस्रेधन्तः मरुतः सोम्ये मधौ । मादयाध्वै ७,५९,६

मधु-वर्णः

१४६ रथेषु आ घृतं । उक्षत मधुवर्णं अर्चते १,८७,२

मध्यम

४१४ यत् उत्तमे मरुतः मध्यमे वा । सुभगासः ५,६०,६
३०५ उद्भिदः । अमध्यमासः महसा वि वावृधुः ५,५९,६

मन्

३८५ नहि वः चरमं चन । वसिष्ठः परिमंसते ७,५९,३
२७६ यथा चित् मन्यसे हृदा । तत् इत् ५,५६,२
४४० मरुतां मन्वे अधि मे ब्रुवन्तु । अथर्व० ४,२७,१

मनस्

३५१ शुभ्रः वः शुष्मः क्रुध्मी मनांसि ७,५६,८
१०८ अपः न धीरः मनसा सुहस्त्यः १,६४,१
४८१ केन महा मनसा रीरमाम १,१६५,२; [इन्द्रः ३१५१]
१९४ नमस्वान् । हृदा तष्टः मनसा धायि देवाः १,१७१,२
,, उप ईं आ यात मनसा जुषाणाः १,१७१,२
१७६ असुर्या सचध्यै । विषितस्तुका रोदसी नृ-मनाः १,१६७,५
१७८ सचा यत् ईं वृषमनाः अहंयुः १,१६७,७

मनीषा

४८९ या नु दधृष्वान् कृणवै मनीषा १,१६५,१०
[इन्द्रः ३१५९]
४१४ ते नः अवन्तु रथतूः मनीषाम् १०,७७,८
३४४ दिवः शर्धाय शुचयः मनीषाः । अस्पृध्रन् ६,६६,११

मनीषिन्

१८५ वाशीमन्तः ऋष्टिमन्तः मनीषिणः । सुधन्वानः ५,५७,२

मनुः

२१८ अग्निजिह्वाः **मनवः** सूरचक्षसः । वा० य० २५,२०
४८७ अहं एताः **मनवे** विश्वचन्द्राः १,१६५,८ [इन्द्रः३२५७]
४७० अया धिया **मनवे** श्रुष्टिं आव्य १,१६६,१३

मनुषः

४७४ गुहा चरन्ती **मनुषः** न योषा १,१६७,३

मनो-जूः

१२६ **मनोजुवः** यत् मरुतः रथेषु आ १,८५,४

मन्द्

५९ अक्षीव गिरीणां । सुवानैः **मन्दध्वे** इन्दुभिः ८,७,१४
४९० **अमन्दत्** मा मरुतः स्तोमः अत्र १,१६५,११
[इन्द्रः३२६०]

मन्दसानः

३५६ सोमं पिब **मन्दसानः** गणश्रिभिः ५,६०,८
३५५ ते **मन्दसानाः** धुनयः रिशादसः । वामं धत्त ५,६०,७

मन्दू

२७६ सहस्वानः अविभ्युषा **मन्दू** समानवर्चसा १,६,७
[इन्द्रः ३२४६]

मन्द्र

१६८ **मन्द्राः** सुजिह्वाः स्वरितारः आसभिः १,१६६,११
२३० अर्यमणं न **मन्द्रं** सृप्रभोजसं । स्तुषे ६,४८,१४

मन्मन्

३७१ मरुतः गृणन्तं । प्र-नेतारः यजमानस्य **मन्म** ७,५७,२
४९२ **मन्मानि** विप्राः अपिवातयन्तः १,१६५,१३
[इन्द्रः३२६२]
६० सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः । अदाभ्यस्य **मन्मभिः** ८,७,१५
६४ विद्युद्भिः इयः । वर्धान् काण्वस्य **मन्मभिः** ८,७,१९
४१५ विप्रासः न **मन्मभिः** स्वाध्यः । स्वनसः १०,७८,१

मन्महे [नामधातुः]

२१९ अध महः । दिवि क्षमा च **मन्महे** ५,५२,३

मन्यमानः

७९ गिरयः चित् नि जिहते । पर्शानासः **मन्यमानाः** ८,७,३४

मन्युः

३६६ तं यत् हनन्त **मन्युभिः** जनासः ७,५६,२२
१२ नि वः यामाय मानुषः । दध्रे उग्राय **मन्यवे** १,३७,७
११५ सं इत् समधः शवसा अहिमन्यवः १,६४,८
११६ नृषाचः शूराः शवसा **अहिमन्यवः** १,६४,९
३७८ मरुतः त्वेषेण । भीमासः **तुविमन्यवः** अयासः ७,५८,२
२०१ दविध्वतः । पृक्षं याथ पृषतीभिः **समन्यवः** २,३४,३
२०३ स्वसराणि गन्तन । मधोः मदाय मरुतः **समन्यवः** २,३४,५
२०४ आ नः ब्रह्माणि मरुतः **समन्यवः** २,३४,६
३२५ विष्णोः महः **समन्यवः** युयोतन ५,८७,८
१०२ गावः चित् घ **समन्यवः** । रिहते ककुभः मिथः ८,२०,२१

मन्वानः

२३१ नु **मन्वानः** एषां । देवान् अच्छ न वक्षणा ५,५२,१५

मयस्

१०५ **मयः** न भूत ऊतिभिः मयोभुवः ८,२०,२४
४३१ तनूभ्यः **मयः** तोकेभ्यः कृधि । अथर्व० १,२६,४

मयो-भूः

१६० हिताः इव । पुरु रजांसि पयसा **मयोभुवः** १,१६६,३
२९३ **मयोभुवः** ये अमिताः महित्वा । वन्दस्व ५,५८,२
१०५ मयः नः भूत ऊतिभिः **मयोभुवः** ८,२०,२४

मरुत्

१८ यत् ह यान्ति **मरुतः** । सं ह ब्रुवते अध्वन् आ १,३७,१३
११३ पिन्वन्ति अपः **मरुतः** सुदानवः १,६४,६
११८ ध्रुवच्युतः । दुध्रकृतः **मरुतः** भ्राजदृष्टयः १,६४,११
१२३ रोदसी हि **मरुतः** चक्रिरे वृधे १,८५,१
१३२ धमन्तः वाणं **मरुतः** सुदानवः १,८५,१०
४८० कया शुभा । समान्याः **मरुतः** सं मिमिक्षुः १,१६५,१
[इन्द्रः३२५०]
४८६ इन्द्र क्रत्वा **मरुतः** यत् वशाम १,१६५,७
[इन्द्रः ३२५६]
१६० उक्षन्ति अस्मै **मरुतः** हिताः इव १,१६६,३
१६८ संमिश्लाः इन्द्रे **मरुतः** परि-स्तुभः १,१६६,११
१७३ आ नः अवोभिः **मरुतः** यान्तु अच्छ १,१६७,२
१७५ यव्या । साधारण्या इव **मरुतः** मिमिक्षुः १,१६७,४
१८६ धनुच्युतः इत्यहानि चित् । **मरुतः** भ्राजदृष्टयः १,१६८,४
१९० पृथिव्यां । यदि घृतं **मरुतः** प्रुष्णुवन्ति १,१६८,८
४९४ स्तुतासः नः **मरुतः** मृळयन्तु १,१७१,३
[इन्द्रः ३२६५]
१९९ धारावराः **मरुतः** धृष्णुओजसः । मृगाः न २,३४,१
२०६ यत् युञ्जते **मरुतः** रुक्मवक्षसः । अश्वान् रथेषु २,३४,८
२१५ अग्निश्रियः **मरुतः** विश्वकृष्टयः ३,२६,५
४४८ त्वं श्रिये **मरुतः** मर्जयन्त ५,३,३

२२२ अनु एनान् अह विद्युतः। मरुतः जज्झतीः इव५,५२,६
२४५ रातहव्याय प्र ययुः। एना यामेन मरुतः ५,५३,१२
२५२ अश्मदिद्यवः। वातत्विषः मरुतः पर्वतच्युतः ५,५४,३
२५७ अर्यमणः न मरुतः कवन्धिनः। पिन्वन्ति ५,५४,८
२६५ प्रयज्यवः मरुतः भ्राजदृष्टयः। वयः दधिरे ५,५५,१
२८७ वातत्विषः मरुतः वर्षनिर्णिजः ५,५७,४
२९४ वृष्टिं ये विश्वे मरुतः जुनन्ति ५,५८,३
२९४ अयं वः अग्निः मरुतः समिद्धः ५,५८,३
२९६ त्वया मत्ता मरुतः सं मिमिक्षुः ५,५८,५
३०७ अनुस्वधः कोशं। रूपे रुद्रस्य मरुतः गृणानाः ५,५९,८
४१० सुषेणु रुद्राः मरुतः रथेषु। रेजते पर्वतः ५,६०,२
३३३ दधिरे नाम यज्ञियं। मरुतः वृत्रहं शवः ६,४८,२१
३३५ [illegible]। [illegible] मरुतः ववृधन्त ६,६६,२
३४३ वीराः। भ्राजज्जन्मानः मरुतः अधृष्टाः ६,६६,१०
३६० [illegible] न ये मरुतः [illegible] ७,५६,१६
३६१ [illegible] नः मरुतः मृळन्तु। [illegible] ७,५६,१७
३६३ इमे तुरं मरुतः रमयन्ति। इमे [illegible] ७,५६,१९
३६४ इमे [illegible] मरुतः जुनन्ति। [illegible] ७,५६,२०
३७२ न [illegible] मरुतः यथा इमे। भ्राजन्ते ७,५७,३
३७४ [illegible] मरुतः रणन्त। अनवद्यासः ७,५७,५
३७५ [illegible] मरुतः [illegible]। नरः हवींषि ७,५७,६
३८१ [illegible]। [illegible] मरुतः पुनः नः ७,५८,५
३८२ [illegible] मरुतः [illegible]। [illegible] ७,५८,६
८६ [illegible] मरुतः [illegible]। [illegible] ८,७,४
२९८ [illegible] अस्य मरुतः ८,९४,४
[illegible] मरुतः [illegible]। वा० य० १७,८६
[illegible] मरुतः [illegible]। वा० य० २५,२०
[illegible] मरुतः [illegible]। अथर्व० ३,१,६
[illegible] मरुतः नः [illegible]। अथर्व० ४,२७,३
[illegible] मरुतः [illegible]। अथर्व० ४,२७,४
[illegible] मरुतः [illegible]। अथर्व० ४,२७,५
[illegible] मरुतः [illegible]
अथर्व० ५,२४,६
[illegible] मरुतः [illegible]। अथर्व० ७,८२,३
[illegible] मरुतः [illegible] १,३९,८
[illegible] मरुतः [illegible] १,३७,१५
[illegible] मरुतः [illegible] १,३८,३
[illegible] मरुतः [illegible] १,३८,११
[illegible] मरुतः [illegible] १,३९,१
[illegible] मरुतः [illegible] १,३९,५

४३ युष्मेषितः मरुतः मर्त्येषितः। अभ्वः ईषते १,[illegible]
४४ असामिभिः मरुतः आ नः ऊतिभिः। गन्त [illegible]
४५ ऋषिद्विषे मरुतः परिमन्यवे। सृजत द्विषम् १,[illegible]
११६ विद्युत् न तस्थौ मरुतः रथेषु वः १,६४,९
१२० तस्थौ वः ऊती मरुतः यं आवत १,६४,१३
१२१ चर्कृत्यं मरुतः पृत्सु दुस्तरं। मघवत्सु धत्तन १,[illegible]
१२२ नु स्थिरं मरुतः वीरवन्तं। अस्मासु धत्त १,६४,[illegible]
१२६ यत् मरुतः रथेषु आ। पृषतीः अयुग्ध्वम् १,८[illegible]
१२७ वाजे अद्रिं मरुतः रंहयन्तः। वि उन्दन्ति भूम १,[illegible]
१२८ मादयध्वं मरुतः मध्वः अन्धसः १,८५,६
१३४ अस्मभ्यं तानि मरुतः वि यन्त। रयिं नः १,८[illegible]
१३५ मरुतः यस्य हि क्षये। पाथ दिवः विमहसः १,८[illegible]
१३६ विप्रस्य वा मतीनां। मरुतः शृणुत हवम् १,८[illegible]
१४० पूर्वीभिः हि ददाशिम। शरद्भिः मरुतः वयम् १,[illegible]
१४१ सुभगः सः प्रयज्यवः। मरुतः अस्तु मर्त्यः १,८[illegible]
१४६ वयः इव मरुतः केन चित् पथा १,८७,२
१५१ आ विद्युन्मद्भिः मरुतः स्वर्कैः। रथेभिः यात १,८[illegible]
१५३ युष्मभ्यं कं मरुतः सुजाताः। तुविद्युम्नासः १,८[illegible]
१५५ [illegible] ह यत् मरुतः गोतमः वः १,८८,५
१५६ एषा स्या वः मरुतः अनुभर्त्री। प्रति स्तोभति १,८[illegible]
१५७ अस्मासु तत् मरुतः यत् च दुस्तरं। [illegible] १,१३[illegible]
४८५ कत् त्या वः मरुतः स्वधा आसीत् १,१६५,६
[इन्द्रः ३[illegible]
४८७ वधीं वृत्रं मरुतः इन्द्रियेण १,१६५,८
[इन्द्रः ३[illegible]
४८९ अहं हि उग्रः मरुतः विदानः १,१६५,१०
[इन्द्रः ३[illegible]
४९० अमन्दत् मा मरुतः स्तोमः अत्र १,१६५,११
[इन्द्रः ३[illegible]
४९१ [illegible] मरुतः [illegible] १,१६५,१२ [इन्द्रः ३[illegible]
४९२ कः नु अत्र मरुतः ममहे वः १,१६५,१३
[इन्द्रः ३[illegible]
४९३ आ नु [illegible] मरुतः [illegible] १,१६५,१४
[इन्द्रः ३[illegible]
[illegible] मरुतः [illegible] १,१[illegible]
[illegible] मरुतः [illegible] १,१६६,३
[illegible] मरुतः [illegible] १,१६६,८
[illegible] मरुतः [illegible] १,१६६,९
[illegible] मरुतः [illegible] १,१६६,१[illegible]
[illegible] मरुतः [illegible] १,१६६,१[illegible]

१७१ येन दीर्घं मरुतः शूशवाम । तुरासः १,१६६,१४
१७२;१८२;१९२ एषः वः स्तोमः मरुतः इयं गीः
१,१६६,१५;१६७,११;१६८,१०
१७७ अर्कैः यत् वः मरुतः हविष्मान् । गायत् १,१६७,३
१७९ वधे ईं मरुतः दातिवारः १,१६७,८
१८० नहि नु वः मरुतः अन्ति अस्मे १,१६७,९
१८७ कः वः अन्तः मरुतः ऋष्टिविद्युतः १,१६८,५
१८८ क्व अवरं मरुतः यस्मिन् आयय १,१६८,६
१८९ त्वेषा विपाका मरुतः पिपिष्वती । या रातिः १,१६८,७
१९३ रराणता मरुतः वेद्याभिः । नि हेळः धत्त १,१७१,१
१९४ एषः वः स्तोमः मरुतः नमस्वान् १,१७१,२
४९४ अहानि विश्वा मरुतः जिगीषा १,१७१,३
[इन्द्रः ३३३५]
४९५ इन्द्रात् भिया मरुतः रेजमानः १,१७१,४
[इन्द्रः ३३३६]
१९५ चित्रः ऊती सुदानवः । मरुतः अहिभानवः १,१७२,१
१९६ आरे सा वः सुदानवः । मरुतः ऋञ्जती शरुः १,१७२,२
२०० रुद्रः यत् वः मरुतः रुक्मवक्षसः २,३४,२
२०१ हिरण्यशिप्राः मरुतः दविध्वतः । पृक्षं याथ २,३४,३
२०३ स्वसराणि गन्तन मधोः मदाय मरुतः समन्यवः २,३४,५
२०४ आ नः ब्रह्माणि मरुतः समन्यवः । गन्तन २,३४,६
२०५ तं नः दात मरुतः वाजिनं रथे २,३४,७
२०७ यः नः मरुतः वृकताति मर्त्यः । रिपुः दधे २,३४,९
२०८ चित्रं तत् वः मरुतः याम चेकिते २,३४,१०
२०९ तान् वः महः मरुतः एवयाव्नः । हवामहे २,३४,११
२१३ अर्वाची सा मरुतः या वः ऊतिः २,३४,१५
२३८ स्यात् अह । सुदे दधे मरुतः मीळ्हदानवः ५,५३,५
२४१ आ यात मरुतः दिवः । आ अन्तरिक्षात् ५,५३,८
२४७ आपः उस्रि भेषजं । स्याम मरुतः सह ५,५३,१४
२४८ असति सुवीरः । नरः मरुतः सः मर्त्यः ५,५३,१५
२५१ प्र वः मरुतः तविषाः उदन्यवः ५,५४,२
२५३ वि दुर्गाणि मरुतः न अह रिष्यथ ५,५४,४
२५४ तत् वीर्यं वः मरुतः महित्वनम् ५,५४,५
२५५ अभ्राजि शर्धः मरुतः यत् अर्णसम् ५,५४,६
२५६ न सः जीयते मरुतः न हन्यते ५,५४,७
२५९ यत् मरुतः सभरसः स्वर्णरः । सूर्ये ५,५४,१०
२६० वक्षःसु रुक्माः मरुतः रथे शुभः ५,५४,११
२६१ तं नाकं । स्वत् पिप्पलं मरुतः वि धुनुथ ५,५४,१२
२६२ युष्मादत्तस्य मरुतः विचेतसः रायः स्याम ५,५४,१३
" अस्मे धत्त मरुतः सहस्रिणम् ५,५४,१३
मरुत्॰ सं॰ ११

२६३ यूयं रयिं मरुतः स्पार्हवीरं । यूयं ऋषिम् ५,५४,१४
२६४ इदं सु मे मरुतः हर्यत वचः ५,५४,१५
२६८ आभूषेण्यं वः मरुतः महित्वनम् ५,५५,४
२६९ उत् ईरयथ मरुतः समुद्रतः । यूयं वृष्टिम् ५,५५,५
२७० विश्वाः इत् स्पृधः मरुतः वि अस्यथ ५,५५,६
२७१ यत्र अचिध्वं मरुतः गच्छथ इत् उ तत् ५,५५,७
२७२ यत् पूर्व्यं मरुतः यत् च नूतनम् ५,५५,८
२७३ मृळत नः मरुतः मा वधिष्टन ५,५५,९
२७४ अस्मान् नयत । अंहतिभ्यः मरुतः गृणानाः ५,५५,१०
२७७ ऋक्षः न वः मरुतः शिमीवान् अमः ५,५६,३
२८१ मा वः यामेषु मरुतः चिरं करत् ५,५६,७
२८२ पृश्निमातरः । स्वायुधाः मरुतः याथन शुभम् ५,५७,२
२८९ ऋष्टयः वः मरुतः अंसयोः अधि ५,५७,६
२९० सुवीरं । चन्द्रवत् राधः मरुतः ददा नः ५,५७,७
२९१;२९९ हये नरः मरुतः मृळत नः ५,५७,८;५८,८
२९५ युष्मत् सदश्वः मरुतः सुवीरः ५,५८,४
२९७ न यथासित । वीळुपविभिः मरुतः रथेभिः ५,५८,६
३०३ उत् अक्षन् । कः स्वधा मरुतः कः ह पौंस्या ५,५९,४
४५१ यत् क्रीळथ मरुतः ऋष्टिमन्तः । धवध्वे ५,६०,३
४५४ यत् उत्तमे मरुतः मध्यमे वा ५,६०,६
४५५ अग्निः च यत् मरुतः विश्ववेदसः । दिवः वहध्वे ५,६०,७
३११ क्रत्वा तत् वः मरुतः न आधृषे शवः ५,८७,२
३१५ अद्वेषः नः मरुतः गातुम् आ इतन ५,८७,८
३३६ देवस्य वा मरुतः मर्त्यस्य वा । ईजानस्य ६,४८,२०
३४० अनेनः वः मरुतः यामः अस्तु । अनश्वः चित् ६,६६,७
३४१ न तरुता । मरुतः यं अवथ वाजसातौ ६,६६,८
३५४ आ यत् तृषत् मरुतः वावशानाः ७,५६,१०
३५६ शुची वः हव्या मरुतः शुचीनाम् ७,५६,१२
३५७ अंसेषु आ मरुतः खादयः वः ७,५६,१३
३५८ भागं एतं । पृक्षेभिः वं मरुतः तुराणम् ७,५६,१४
३५९ यदि स्तुतस्य मरुतः अधीथ ७,५६,१५
३६१ स्पार्हां रयिं मरुतः गृणानः ७,५६,१८
३६४ मा वः दात्रात् मरुतः निः अराम ७,५६,२१
३६६ अध स्म नः मरुतः रुद्रियासः । त्रातारः भूत ७,५६,२२
३६७ भूरि चक्र मरुतः पित्र्याणि । उक्थानि ७,५६,२३
३६८ अस्मे वीरः मरुतः शुष्मी अस्तु ७,५६,२४
३७१ निचेतारः हि मरुतः गृणन्तं । प्रणेतारः ७,५७,२
३७३ ऋधक् सा वः मरुतः दिद्युत् अस्तु ७,५७,४
३७६ आ स्तुतासः मरुतः विश्वे ऊती ७,५७,७
३७८ जनूः चित् वः मरुतः त्वेष्येण ७,५८,२

३७९ जुजोषन् इत् **मरुतः** सु-स्तुतिं नः ७,५८,३
३८० गृणीतः विप्रः **मरुतः** शतस्वी। अर्वा सहुरिः ७,५८,४
३८३ मित्र अर्यमन्। **मरुतः** शर्म यच्छत ७,५९,१
३८५ अस्माकं अद्य **मरुतः** सुते सचा। पिबत ७,५९,३
३८७ इमा वः हव्या **मरुतः** ररे हि कम् ७,५९,५
३८८ अत्नेधन्तः **मरुतः** सोम्ये मधौ मादयाध्वै ७,५९,६
३९० यः नः **मरुतः** अभि दुर्हृणायुः। जिघांसति ७,५९,८
३९१ सांतपनाः इदं हविः। **मरुतः** तत् जुजुष्टन ७,५९,९
३९२ गृहमेधासः आ गत। **मरुतः** मा अप भूतन ७,५९,१०
३९३ कवयः सूर्यत्वचः। यज्ञं **मरुतः** आ वृणे ७,५९,११
३९४ वि तिष्ठध्वं **मरुतः** विक्षु इच्छत ७,१०४,१८
४६ वः त्रिष्टुभं इषं। **मरुतः** विप्रः अक्षरत् ८,७,१
५४ इमां मे **मरुतः** गिरं। वनत ८,७,९
५६ **मरुतः** यत् ह वः दिवः सुम्नयन्तः हवामहे ८,७,११
५८ आ नः रयिं। इयर्त **मरुतः** दिवः ८,७,१३
७५ कदा गच्छाथ **मरुतः**। इत्था विप्रं हवमानम् ८,७,३०
८३ वीळुपविभिः **मरुतः** ऋभुक्षणः। अद्य आ गत ८,२०,२
८७ अनाय वः **मरुतः** यातवे द्यौः। जिहीते ८,२०,६
९१ वृषणश्वेन **मरुतः** वृषप्सुना रथेन वृषनाभिना ८,२०,१०
९६ वः ऊतिषु। आस पूर्वासु **मरुतः** व्युष्टिषु ८,२०,१५
१०२ सजात्येन **मरुतः** सबन्धवः। रिहते ककुभः ८,२०,२१
१०३ अधि नः गात **मरुतः** सदा हि वः ८,२०,२२
१०४ **मरुतः** मारुतस्य नः। आ भेषजस्य वहत ८,२०,२३
१०६ यत् समुद्रेषु **मरुतः** सुबर्हिषः। यत् पर्वतेषु ८,२०,२५
१०७ क्षमा रपः **मरुतः** आतुरस्य नः। इष्कर्त ८,२०,२६
३९७ सदा गृणन्ति कारवः। **मरुतः** सोमपीतये ८,९४,३
४१२ प्र यत् वहध्वे **मरुतः** पराकात् १०,७७,६
४२२ अस्मान् स्तोतॄन् **मरुतः** वावृधानाः १०,७८,८
४२५ आ इतन। **मरुतः** यज्ञे अस्मिन्। वा० य० १७,८४
४५७ अस्मिन् यज्ञे **मरुतः** मृडत नः। अथर्व० १,२०,१
४३० प्रवतः नपात्। **मरुतः** सूर्यत्वचसः। अथर्व० १,२६,३
४३४ यूयं उग्राः **मरुतः** ईदृशे। अथर्व० ३,१,२
४३५ असौ या सेना **मरुतः** परेषाम्। अथर्व० ३,२,६
४५९ उत् ईरयत **मरुतः** समुद्रतः। अथर्व० ४,१५,५
४४५ यदि इत् इदं **मरुतः** मारुतेन। अथर्व० ४,२७,६
४३१ छन्दांसि यज्ञे **मरुतः** स्वाहा। अथर्व० ५,२६,५
४३८ यत् एजथ **मरुतः** रुक्मवक्षसः। अथर्व० ६,२२,२
,, यत्र नरः **मरुतः** सिञ्चथ मधु। अथर्व० ६,२२,२
४३९ उदप्रुतः **मरुतः** तान् इयर्त। अथर्व० ६,२२,३
४३३ यूयं उग्राः **मरुतः** पृश्निमातरः। अथर्व० १३,१,३
४३३ त्रिसप्तासः **मरुतः** स्वादुसंमुदः। अथर्व० १३,१,
४८१ कः अध्वरे **मरुतः** आ ववर्त १,१६५,२ [इन्द्रः ३
९५ तान् वन्दस्व **मरुतः** तान् उप स्तुहि ८,२०,१४
९९ ये च अर्हन्ति **मरुतः** सुदानवः ८,२०,१८
१०१ युष्मवत्तमान् गिरा। वन्दस्व **मरुतः** अह ८,२०,
४०३ पप्रथन् रोचना दिवः। **मरुतः** सोमपीतये ८,९४,
४०४ त्यान् नु पूतदक्षसः। दिवः वः **मरुतः** हुवे ८,९४
४०५ त्यान् नु ये वि रोदसी तस्तभुः **मरुतः** हुवे ८,९४
४२३ प्रघासिनः हवामहे **मरुतः** च रिशादसः। वा० य० ३
४४१ पुरः दधे **मरुतः** पृश्निमातॄन्। अथर्व० ४,२७,२
४४६ स्तौमि **मरुतः** नाथितः जोहवीमि। अथर्व० ४,२७
४६५-७३ **मरुद्भिः** आ गहि १,१९,१-९ [अग्निः २४३८-
४९६ सः नः **मरुद्भिः** वृषभ श्रवः धाः १,१७१,५
[इन्द्रः ३९
४९७ भव **मरुद्भिः** अवयातहेळाः १,१७१,६ [इन्द्रः ३९
२१७ प्र श्यावाश्व धृष्णुया। अर्च **मरुद्भिः** ऋक्वभिः ५,५
४५६ अग्ने **मरुद्भिः** शुभयद्भिः ऋक्वभिः ५,६०,८
३४९ सा विट् सुवीरा **मरुद्भिः** अस्तु ७,५६,५
३५१ स्थिरा शवांसि। अध **मरुद्भिः** गणः तुविष्मान् ७,५६
३६७ **मरुद्भिः** उग्रः पृतनासु साळ्हा। वाजं अर्वा ७,५६,२
,, **मरुद्भिः** इत् सनिता वाजं अर्वा ७,५६,२३
७७ कण्वासः अग्निं **मरुद्भिः** स्तुषे हिरण्यवाशीभिः ८,७,
४६१–६३ **मरुद्भिः** प्रच्युताः मेघाः। अथर्व० ४,१५,७-९
१०८ नोधः सुवृक्तिं प्र भर **मरुद्भ्यः** १,६४,१
२२१ प्र यज्ञं यज्ञियेभ्यः। दिवः अर्च **मरुद्भ्यः** ५,५९,५
२५८ प्रवत्वती इयं पृथिवी **मरुद्भ्यः** ५,५४,९
४५३ सुदुघा पृश्निः सुदिना **मरुद्भ्यः** ५,६०,५
४१३ यज्ञे अध्वरे-स्थाः **मरुद्भ्यः** न मानुषः ददाशत् १०,७७,
१३० भयन्ते विश्वा भुवना **मरुद्भ्यः**। राजानः इव १,८५,
३० अध स्वनात् **मरुतां**। अरेजन्त प्र मानुषाः १,३८,१
१७८ यः एषां। **मरुतां** महिमा सत्यः अस्ति १,१६७,७
१९१ असूत पृश्निः। त्वेषं अयासां **मरुतां** अनीकम् १,१६८,
२१६ सुशस्तिभिः। अग्नेः भामं **मरुतां** ओजः ईमहे ३,२६,६
२१९ **मरुतां** अध महः। दिवि क्षमा च मन्महे ५,५२,३
२३४ कः वा पुरा सुम्नेषु आस **मरुताम्** ५,५३,१
२७५ विशः अद्य **मरुतां** अव ह्वये ५,५६,१
२७९ **मरुतां** पुरुतमं अपूर्व्यं। गवां सर्गमिव ५,५६,५
४४९ प्रदक्षिणित् **मरुतां** स्तोमं ऋध्याम् ५,६०,१
३२८ श्रवः धुक्षत। या मृळीके **मरुतां** तुराणाम् ६,४८,१२

३३९ शर्धन् स्मान मरुतां वचस्ये । यूयं पात ७,५६,२५
८४ रथिनां । शुभ्रं उग्रं मरुतां शिमीवताम् ८,२०,३
३९५ गौः धयति मरुतां । श्रवस्युः माता मघोनाम् ८,९४,१
४२४ तव्यान्प्रहोतः अरि मरुतां त्वा जोत्से । वा०य० ७,३६
४३७ अवन्तां मरुतां गणाः । अथर्व० ४,१३,४
४४० मरुतां मन्वे अधि मे ब्रुवन्तु । अथर्व० ४,२७,१
३३० मरुत्सु वः दधीमहि । स्तोमं यज्ञं च ५,५२,४
२८२ आ यस्मिन् तस्थौ सवः मरुत्सु रोदसी ५,५६,८
२८३ सुमगा महीयते । सचा मरुत्सु मीळ्हुषी ५,५६,९

मरुत्वत्

४७७ मरुत्वन्तं हवामहे । इन्द्रं आ १,२३,७ [इन्द्रः ३२४७]
३१८ ममत्तु मन्तु । मरुत्वते गिरिजाः एवयामरुत् ५,८७,१
४२४ इन्द्राय त्वा मरुत्वते एषः ते योनिः । इन्द्राय त्वा मरुत्वते वा०य० ७,३६

मरुत्-सखा

४७४ आ अग्ने याहि मरुत्सखा ८,१०३,१४
[अग्निः २४४७]

मरुद्गणः

४७८ इन्द्रज्येष्ठाः मरुद्गणाः १,२३,८: [इन्द्रः ३२४८]

मर्तः

१३० प्र नु सः मर्तः शवसा जनान् अति । तस्थौ १,६४,१३
१३३ मर्तः चित् वः नृतवः रुक्मवक्षसः ८,२०,२२
२४ यत् यूयं पृश्निमातरः । मर्तासः स्यातन १,३८,४
३१६ यूयं मर्तं विपन्यवः । प्रनेतारः इत्था ५,६१,१५
३३४ मर्तेषु अन्यत् दोहसे पीपाय ६,६६,१

मर्त्यः

४३३ नहि देवः न मर्त्यः १,१९,२: [अग्निः २४३३]
१४१ सुभगः सः प्रयज्यवः । मरुतः अस्तु मर्त्यः १,८६,७
१०७ यः नः मरुतः वृकताति मर्त्यः । रिपुः दधे २,३४,९
२४८ अस्ति सुवीरः । मरुतः यः मर्त्यः ५,५३,१५
६० एतावतः चित् एषां । सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ८,७,१५
२२८ ये मारुतं मुखं । यन्ति मर्त्यं रिषः ५,५२,६
३७ नहि वः शत्रुः विविदे । न मर्त्यस्य न चित् १,३९,४
३३२ देवस्य वा मरुतः मर्त्यस्य वा ईजानस्य ६,४८,२०
१८३ वृषा वसुः । अमर्त्याः अपाम् यत्र १,१६८,३
१५७ सः चित्रं शुशुचे । न यो पीपय अमर्त्यम् १,१६२,८

मर्त्येषितः

४३ शुष्मः एषः नरः मर्त्येषितः । अनयः ऋषिः १,३९,८

मर्यः

१०९ क्रत्वाः इमयः । स्वर्य मर्याः अतुराः अरेपसः १,६४,२
२३३ नरः मर्याः अरेपसः । इमान् स्तुहि ५,५३,३
३०२ यारवः स्तन । मर्याः इव श्रियसे चेतथ नरः ५,५९,३
३०४ सबन्धवः मर्याः इव सुवृधः ववृधुः नरः ५,५९,५
३०५ दिवः मर्याः आ नः अच्छ जिगातन ५,५९,६
३४५ नरः सनीळाः । रुद्रस्य मर्याः अध स्वश्वाः ७,५६,१
३६० मरुतः स्वश्वाः । यशसः न शुम्भयन्त मर्याः ७,५६,१६
४०९ प्रत्नवः । रिशादसः न मर्याः अभिद्यवः १०,७७,३
४१५ शुभंयवः । क्षितीनां न मर्याः अरेपसः १०,७८,१
४१८ वरेयवः न मर्याः घृतप्रुषः । अभिस्वर्तारः १०,७८,४
३११ यत वीरासः इतन । मर्यासः भद्रजानयः ५,६१,४
४०८ श्रिये मर्यासः अञ्जीन् अकृण्वत आदित्यासः १०,७७,२
१८१ इन्द्रस्य प्रेष्ठाः । वयं श्वः वोचेमहि समर्ये १,१६७,१०

मह् [पूजायाम्]

२८३ यस्मिन् सुजाता सुभगा महीयते ५,५६,९
४९१ कः नु अत्र मरुतः ममहे वः १,१६५,१३
[इन्द्रः ३२३२]

मह् [महत्]

४८१ केन महा मनसा रीरमाम १,१६५,२ [इन्द्रः ३२२१]
१८३ महे यत्सां अवसे सुवृक्तिभिः १,१६८,१
३०१ अत्नाः महे विदथे येतिरे नरः ५,५९,२
३१८ प्र वः महे मतयः यन्तु विष्णवे ५,८७,१
५० यन्मय वः । महे सुमन येमिरे ८,७,२

महत्

१६८ महान्तः मन्त्र मिमानः विद्युतः पृश्निमातरः १,१६६,११
२३६ यथा चित् दधृ महान्तः दर्शि चित् रथात् ५,५४,१
८९ उरे युजे । महान्तः वः सदनं तु ८,२०,८
३०३ वः वः महान्ति महतां ५,५९,४
३७ यं च वे महतीः ८,७,३३
१९१ अत्र इषिः महते ... १,१६८,९
३२१ सः चक्रे महतः नि ५,८७,४

महन्

१६८ ... महा जिन्नः विद्युतः ... १,१६६,११
३१९,१४ ... महा ... ५,८७,२ ८,२०,१४
३३८ ... महा ... ६,६६,५

महर्षभः

४४६ महर्षभस्य ... । अथर्व० ४,१५,४

महस्

४६६ **महः** तव क्रतुं परः १,१९,२ [अग्निः २४३९]
४६७ ये **महः** रजसः विदुः १,१९,३ [अग्निः २४४०]
१८८ क्व स्वित् अस्य रजसः **महः** परम् १,१६८,६
२०९ तान् वः **महः** मरुतः एवयाव्नः । हवामहे २,३४,११
२१० अप ऊर्णुते । **महः** ज्योतिषा शुचता गो-अर्णसा २,३४,१२
२१९ मरुतां अध **महः** । दिवि क्षमा च मन्महे ५,५२,३
२२३ ये ववृधन्त । सधस्थे वा **महः** दिवः ५,५२,७
३२४ येषां अज्मेषु आ **महः** । शर्धांसि अद्भुतैनसाम् ५,८७,७
३२५ श्रोत हवं । विष्णोः **महः** समन्यवः युयोतन ५,८७,८
३३६ विदे हि माता **महः** मही सा ६,६६,३
४१२ यूयं **महः** संवरणस्य वस्वः । विदानासः १०,७७,६
४१४ **महः** च यामन् अध्वरे चकानाः १०,७७,८
४५२ तवसः रथेषु । सत्रा **महांसि** चक्रिरे तनूषु ५,६०,४
३५८ प्र बुध्न्या वः ईरते **महांसि** । प्र नामानि ७,५६,१४
३०५ अमध्यमासः **महसा** वि वावृधुः ५,५९,६
४८४ **महोभिः** एतान् उप युज्महे नु १,१६५,५ [इन्द्रः ३२५४]
२९६ अहा इव । प्रप्र जायन्ते अकवाः **महोभिः** ५,५८,५
३७८ प्र ये **महोभिः** ओजसा उत सन्ति ७,५८,२
२५२ **विद्युन्महसः** नरः अश्मदिद्यवः वातत्विषः ५,५४,३
१३५ यस्य हि क्षये । पाथ दिवः **विमहसः** १,८६,१
३२१ विस्पर्धसः **विमहसः** जिगाति शेवृधः नृभिः ५,८७,४

महः

४०२ कत् वः अद्य **महानां** । देवानां अवः वृणे ८,९४,८

महा

२ देवयन्तः यथा मतिं । **महां** अनूषत श्रुतम् १,६,६

महा-ग्रामः

४२० **महाग्रामः** न यामन् उत त्विषा १०,७८,६

महि

१८९ वयं पुरा **महि** च नः अनु द्यून् १,१६७,१०
२१२ तान् इयानः **महि** वरूथं ऊतये २,३४,१४
२४० पृष्ठयज्वने । द्युम्नश्रवसे **महि** नृम्णं अर्चत ५,५४,१
४५१ पर्वतः चित् **महि** वृद्धः बिभाय । सानु रेजत ५,६०,३
८८ स्थिरं नरः । **महि** त्विषः अमवन्तः वृषप्सवः ८,२०,७
२८३ [illegible] । प्रत्वक्षसः **महिना** द्यौः इव उरवः ५,५९,४
३१२ प्र ये जाताः **महिना** ये च नु स्वयम् ५,८७,२

महित्वनम्

१६९ तत् वः सुजाताः मरुतः **महित्वनम्** १,१६६,१२
२५४ तत् वीर्यं वः मरुतः **महित्वनं** । सूर्यः न ५,५४,५
२६८ आभूषेण्यं वः मरुतः **महित्वनं** । दिदृक्षेण्यम् ५,५५,४
१२९ ते अवर्धन्त स्वतवसः **महित्वना** आ १,८५,७
१४३ तत् सत्यशवसः । आविः कर्त **महित्वना** १,८६,९

महित्वम्

१४७ भ्राजदृष्टयः । स्वयं **महित्वं** पनयन्त धूतयः १,८७,३
१५८ पूर्वं **महित्वं** वृषभस्य केतवे १,१६६,१
२९३ मयोभुवः ये अमिताः **महित्वा** वन्दस्व विप्र ५,५८,२
३७७ उत क्षोदन्ति रोदसी **महित्वा** नक्षन्ते नाकम् ७,५८,१

महिमन्

१७८ यः एषां । मरुतां **महिमा** सत्यः अस्ति १,१६७,७
३२३ अपारः वः **महिमा** वृद्धशवसः । त्वेषं शवः ५,८७,६
१२४ ते उक्षितासः **महिमानं** आशत । दिवि रुद्रासः १,८५,२

महिषः

११४ **महिषासः** मायिनः चित्रभानवः । रघुष्यदः १,६४,७

मही [महती]

३३६ विदे हि माता महः **मही** सा ६,६६,३
३४८ पृश्निः यत् ऊधः **मही** जभार ७,५६,४
२०६ स्वसरेषु पिन्वते जनाय रातहविषे **महीं** इषम् २,३४,८
३८४ प्र सः क्षयं तिरते वि **महीः** इषः ७,५९,२

मही [पृथ्वी]

४१० युष्माकं बुध्ने । विधुर्यति न **मही** श्रथयति १०,७७,४

मा

(४७९) १,२३,९ [इन्द्रः ३२४३]; (१५) १,३८,५; (३७) १,३९,२; (१५७) १,१३९,८; (२४१-४२) ५,५३,८-९ (त्रिः); (२७३) ५,५५,९; (२८१) ५,५६,७ (३५३;३६५) ७,५६,९.२१ (द्विः); (३७३) ७,५७,४; (३९२) ७,५९,१०; (८२) ८,२०,१ (द्विः); (४५१) अथर्व० १,२०,१ (द्विः);

मा [माने]

१८ विद्युत् **मिमाति** । यत् वृष्टिः असर्जि १,३८,८
२६६ उत अन्तरिक्षं **ममिरे** वि ओजसा ५,५५,२
४२१ भ्राजदृष्टयः । परावतः न योजनानि **ममिरे** १०,७८,७
३०७ **मिमातु** द्यौः अदितिः वीतये नः ५,५९,८
३४ **मिमीहि** श्लोकं आस्ये । पर्जन्यः इव ततनः १,३८,१४
२९६ पृश्नेः पुत्राः उपमासः रभिष्ठाः । सं मिमिक्षुः ५,५८,५

मातिन्

१२५ इन्वन्ते अश्विभिः । व पन्ने विश्वे अभिमातिनं वन्न १,८५,३

मातृ

२८ विहुद् मिमाति । वर्णं न माता मिमेति १,३८,८
३३१ विद्ये हि माता महः मही न ६,६१,३
३६५ गौः पतति महनो । अवस्तु माता मघवेतन् ८,९४,१
४११ माता हव इव दुर्ग मिहन् इव दुग्धः । अवरि० ५,६३,५
३३२ नी बोधन्त सूर्यः । इषं नेक्षन्त मातरम् ५,५२,१६
१४ शिरं हि वर्न दुर्ग । वत्सः मातुः नैतेते १,३९,६
१२५ गोमातरः यद् इन्वन्ते अश्विभिः १,८५,३
२४ यद् दुर्ग इश्निमातरः । नर्मिदः मन्त्र १,३८,४
१२४ अधि शिवः दर्विरे इश्निमातरः १,८५,२
२८५ कवः इव इध्वाः इश्निमातरः ५,५७,३
२८३ इदृद् वी । कैवन्य इषिरां इश्निमातरः ५,५९,३
३१५ इदन्तः नदुष इश्निमातरः । विन्वन्त ५,५९,६
४८ यद् ईद्धन्त वर्तुभिः । वाजकः इश्निमातरः ८,७,३
६१ यद् रथैः । यद् नेतैः इश्निमातरः ८,७,१७
४१८ इनवहः मनतः इश्निमातरः । व० इ० ३५,३०
४३३ इषं वश्वः मनतः इश्निमातरः । अवरि० १३,१,३
४४१ इरः वधी मनतः इश्निमातृन् । अवरि० ४,३७,३
४७० प्रचलतः न सूरवः सिन्धुमातरः १०,७८,६
" सिन्धवः न कीडनः सुमातरः [illegible] १०,७८,६

मादयिष्णुः

४४७ [illegible] मादयिष्णवः । [illegible] ७,८५,३

मानम्

३३ [illegible] मानं [illegible] १,३९,१

मानः

४१६ [illegible] १,१६१,५
[illegible] ३३०८]

मानुषः

१३ [illegible] मानुष [illegible] १,३८,८
४१३ [illegible] मानुषा [illegible] १०,७८,१
३२ [illegible] मानुषे [illegible] १,३९,१०
४१ [illegible] मानुषा [illegible] १,३९,६
४४७ [illegible] मानुषाणाम् [illegible] ७,८५,३
१७० [illegible] मानुषे [illegible]
[illegible]
२२० [illegible] मानुषा [illegible]

मान्दार्यः

१७२:१८५:१९१ इदं मीः । मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः १,१६५,१५:१६७,११:१६८,१०

मान्यः

४३३ अस्मात् वके मान्यस्य मेधा १,१६५,१४
[इन्द्रः ३२११]
१७२:१८५:१९१ इदं मीः । मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः १,१६६,१५:१६७,११:१६८,१०

माया

१५१ नः इव । वृषः न वनन सुमायाः १,८८,१
१७१ अहिनेमिः व सूरिभिः सुमायाः १,१६७,२

मायिन्

११४ नविनमः मायिनः चित्रभानवः । दुहन्तः १,६४,७
३३३ [illegible] । [illegible] मायिनं [illegible] ५,५८,२
३३० [illegible] । [illegible] मायिनम् ३,२६,१४
३७ नहिनि [illegible] । [illegible] मायिनः १,३९,७

मारुत

३१६ [illegible] मारुतः [illegible] । [illegible] ५,६१,१६
४७८ [illegible] मारुताः । अवरि० ४,१७,३
३ [illegible] मारुतं । [illegible] १,३७,१
१० [illegible] । [illegible] मारुतम् १,३७,५
३४ [illegible] मारुतं [illegible] १,३८,१५
११३ [illegible] मारुतं [illegible] १,६४,१२
१९८ [illegible] मारुतं [illegible] २,३०,११
२२१ [illegible] मारुतं [illegible] ५,५२,८
२२१ [illegible] मारुतं [illegible] ५,५३,१३
२३० [illegible] मारुतं [illegible] ५,५४,१४
२३३ [illegible] मारुतं [illegible] ५,५३,१०
२८१ [illegible] मारुतं [illegible] ५,५६,८
३०१ [illegible] मारुतं [illegible] ५,५८,१
३३१ [illegible] मारुतं [illegible] ३,२६,११
३३८ [illegible] मारुतं [illegible] ३,३६,५
३३२ [illegible] मारुतं [illegible] ३,३३,११
३३० [illegible] मारुतं [illegible] ७ ४३ १
३३१ [illegible] मारुतं [illegible] ८,९४,१२
३३३ मारुतं [illegible] ६,३,७
३३५ [illegible] मारुतेन [illegible] ६,३०,३
[illegible]
[illegible]

३४१ गृणते तुराय । **मारुताय** स्वतवसे भरध्वम् ६,६६,९
९० वृष्णे शर्धाय **मारुताय** भरध्वं । हव्या वृषप्रयाने ८,२०,९
१५० अभीरवः । विद्रे प्रियस्य **मारुतस्य** धाम्नः १,८७,६
१०४ मरुतः **मारुतस्य** नः । आ भेषजस्य वहत ८,२०,२३
४०७ सु**मारुतं** न ब्रह्माणं अर्हसे । अस्तोषि १०,७७,१
४०८ सु**मारुतं** न पूर्वीः अति क्षपः १०,७७,२

मार्डीकम्

७५ कदा गच्छाथ मरुतः । **मार्डीकेभिः** नाधमानम् ८,७,३०

माहिनः

४८१ कुतः त्वं इन्द्र **माहिनः** सन् । एकः यासि १,१६५,३
[इन्द्रः ३२५२]

मि

३०४ सूर्यस्य चक्षुः प्र **मिनन्ति** वृष्टिभिः ५,५९,५

मिक्ष्

१७४ **मिम्यक्ष** येषु सुधिता घृताची । उवरा न १,१६७,३
४८० समान्या मरुतः सं **मिमिक्षुः** १,१६५,१
[इन्द्रः ३२५०]
१७५ साधारण्या इव मरुतः **मिमिक्षुः** । जुषन्त वृषम्
१,१६७,४
२९६ खया मला मरुतः सं **मिमिक्षुः** ५,५८,५
१५० श्रियसे कं भानुभिः सं **मिमिक्षिरे** १,८७,६

मिश्लः

१६८ सं**मिश्लाः** इन्द्रे मरुतः परि-स्तुभः १,१६६,११
२१४ शुभे सं**मिश्लाः** पृषतीः अयुक्षत ३,२६,४
३५० शोभिष्ठाः । श्रिया सं**मिश्लाः** ओजोभिः उग्राः ७,५६,६
११७ सगोकसः । सं**मिश्लासः** तविषीभिः विरप्शिनः
१,६४,१०
१७७ शुभे नि**मिश्लां** विदथेषु पज्राम् १,१६७,६

मित

४२४.२ **मितः** च स**म्मितः** च । वा० य० १७,८१
४२५ आ इतन **मितासः** च स**म्मितासः** । वा० य० १७,८४
२९३ मयोभुवः ये अ**मिताः** महित्वा । वन्दस्व ५,५८,२

मित्रम्

२३० मारुतं गणं । दाना **मित्रं** न योषणा ५,५२,१४
२०१ **मित्राय** वा सदं आ जीरदानवः २,३४,४
४२४.४ अन्ति**मित्रः** च दूरे-अ**मित्रः** च गणः ।
वा० य० १७,८३

मित्रः

३६१ तत् नः इन्द्रः वरुणः **मित्रः** अग्निः ७,५६,२५
३९९ पिबन्ति **मित्रः** अर्यमा । तना पूतस्य वरुणः ८,९...
३८३ तस्मै अग्ने वरुण **मित्र** अर्यमन् ७,५९,१
३३ ब्रह्मणः पतिं । अग्निं **मित्रं** न दर्शतम् १,३८,१३

मित्रा-वरुणौ

१७९ पान्ति **मित्रावरुणौ** अवद्यात् चयते अर्यमो १,१६...

मिथः

३४६ जनूंषि ते । अङ्ग विद्रे **मिथः** जनित्रम् ७,५६,२
३४७ अभि स्वपूभिः **मिथः** वपन्त । वातस्वनसः ७,५६,३
१०२ गावः चित् घ समन्यवः रिहते ककुभः **मिथः** ८,२०,...

मिथ-स्पृध्य

१६६ रथेषु **मिथस्पृध्या** इव तविषाणि आहिता १,१६...

मिह्

२७ धन्वन् चित् **मिहं** कृण्वन्ति अवाताम् १,३८,७
४१ वपन्ति मरुतः **मिहं** । वेपयन्ति पर्वतान् ८,७,४
११३ अत्यं न **मिहे** वि नयन्ति वाजिनम् १,६४,६
१६ **मिहः** नपातं अमृध्रं । प्र च्यवयन्ति १,३७,११

मीळ्हुष्

३३६ रुद्रस्य ये **मीळ्हुषः** सन्ति पुत्राः ६,६६,३
३८१ तान् आ रुद्रस्य **मीळ्हुषः** विवासे ७,५८,५
९९ ये अर्हन्ति । स्मत् **मीळ्हुषः** चरन्ति ये ८,२०,१८
८४ शुष्मं उग्रं विष्णोः एषस्य **मीळ्हुषाम्** ८,२०,३
२८३ सुभगा महीयते । सचा मरुत्सु **मीळ्हुषी** ५,५६,९

मीळ्हुष्मती

२७७ **मीळ्हुष्मती** इव पृथिवी पराहता । एति ५,५६,३

मुच्

२१३ यया निदः **मुञ्चथ** वन्दितारं । वः ऊतिः २,३४,१५
४४०-४६ ते नः **मुञ्चन्तु** अंहसः । अथर्व० ४,२७,१-७
४४७ ते अस्मत् पाशान् प्र **मुञ्चन्तु** एनसः
अथर्व० ७,८२,३
१९३ नि हेळः धत्त वि **मुचध्वं** अश्वान् १,१७१,१
२७० हिरण्ययान् प्रति अत्कान् अ**मुग्ध्वम्** ५,५५,६
३९० द्रुहः पाशान् प्रति सः **मुचीष्ट** ७,५९,८

मुद्

२३८ रथान् अनु । **मुदे** दधे मरुतः जीरदानवः ५,५३,५

मुनिः

१५१ कृण्वी मनांसि । मुनिः मुनिः इव [illegible] ७,[illegible],८

मुष्

१५५ अर्णं । मोषथ [illegible] इव [illegible] ५,५४,६

मुष्टि-हा

१०५ [illegible] मुष्टिहा [illegible] ५,५८,४

१०६ [illegible] मुष्टिहा इव [illegible] ८,२०,२०

मुह्

४३४,१ इन्द्रः [illegible] मोहयतु । अथर्व० ३,१,६

मुहुः

१५१ [illegible] मुहुः [illegible] ५,५४,३

मृगः

[illegible] मा [illegible] मृगाः [illegible] १,३८,५

१६४ मृगाः इव [illegible] १,६४,८

१६६ मृगाः न [illegible] १,६६ [illegible]

मृज्

४४८ [illegible] ५,५,६,३

१११ [illegible] मृजे [illegible]

[illegible]

[illegible]

मेघः

४६२-६३ [illegible] मेघाः । अथर्व० ४,१५,७-९

मेघमान

२२१ [illegible] मेघमानाः [illegible] १,३८,१३

मेदस्

४४४ [illegible] मेदसा [illegible] । अथर्व० ४,१,७,५

मेधः

३६१ [illegible] ७,५६,१०

मेधा

१५३ मेधा [illegible] १,८८,३

१९३ [illegible] मेधा १,१६०,१२

[illegible]

[illegible]

[illegible]

३७३ मा वः तस्यां अपि भूम यजत्राः ७,५७,४
३७४ प्र नः अवत सुमतिभिः यजत्राः ७,५७,५

यजमानः

४१७ यजमानं विशः अनुवर्त्मानः भवन्तु । वा० य० १७,८६
५१२ रिशादसः । कर्त धन यजमानाय सुन्वते ?,१२०,७
३७१ सुम्ने । प्रणेतारः यजमानस्य मन्म ७,५७,२

यज्ञः

४१० विश्वः यज्ञः अर्वाक् अयं सु वः १०,७७,४
४०७ हविष्मन्तः न यज्ञाः विजानुषः १०,७७,१
१ पिबत ऋतुना । पोत्रात् यज्ञं पुनीतन १,१५,२
२१० ते दशग्वाः प्रथमाः यज्ञं ऊहिरे २,३४,१२
२२६ गन्तारः यज्ञं विदथेषु धीराः ३,२६,६
२३० दधीमहि । स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया ५,५२,४
२३१ प्र यज्ञं यज्ञियेभ्यः । दिवः अर्च ५,५२,५
२३६ यामभिः । यज्ञं विदथाः ओहते ५,५९,१०
३२६ गन्त नः यज्ञं यज्ञियाः सुशमि ५,८७,९
३९३ कवयः सूर्यत्वचः । यज्ञं मरुतः आ वृणे ७,५९,११
८३ आ गत । यज्ञं आ शोभरीयवः ८,२०,२
१७१ एभिः यज्ञेभिः तत् अभि इष्टिं अश्याम १,१६६,१४
१३६ यज्ञैः वा यज्ञवाहसः । शृणुत हवम् १,८६,२
४१५ स्वाध्यः । देवाव्यः न यज्ञैः स्वप्नसः १०,७८,१
४१३ यः उदृचि यज्ञे अध्वरे-स्थाः । ददाशत् १०,७७,७
४९५ आ इतन । मरुतः यज्ञे अस्मिन् । वा० य० १७,८४
५५७ अस्मिन् यज्ञे मरुतः मृडत नः । अथर्व० १,२०,१
४३२ छन्दांसि यज्ञे मरुतः स्वाहा । अथर्व० ५,२६,५
३७० यजत्राः । प्र यज्ञेषु शवसा मदन्ति ७,५७,१
४१४ ते हि यज्ञेषु यज्ञियासः ऊमाः १०,७७,८
१८३ यज्ञायज्ञा वः समना तुतुर्वणिः १,१६८,१

यज्ञ-वाहस्

१३६ यज्ञैः वा यज्ञवाहसः । शृणुत हवम् १,८६,२

यज्ञिय

२१७ ये अद्रोघं । श्रवः मदन्ति यज्ञियाः ५,५२,१
३२६ गन्त नः यज्ञं यज्ञियाः सुशमि ५,८७,९
३१७ नः वसूनि । आ यज्ञियासः ववृत्तन ५,६१,१६
४१४ ते हि यज्ञेषु यज्ञियासः ऊमाः १०,७७,८
२२१ प्र यज्ञं यज्ञियेभ्यः । दिवः अर्च मरुद्भ्यः ५,५२,५
१ पुनः गर्भत्वं एरिरे । दधानाः नाम यज्ञियम् १,६,४
३३३ त्वेषं शवः दधिरे नाम यज्ञियम् ६,४८,२१
१४९ आत् इत् नामानि यज्ञियानि दधिरे १,८७,५

यज्युः

२३१ प्रयज्यवः मरुतः भ्राजत्-ऋष्टयः । बृहत् वयः दधिरे ५,५५,१
३३२ मरुतः मर्त्येन वा । ... प्रयज्यवः ६,४८,२०
३१८ मर्डीम । प्र नामानि प्रयज्यवः तिरध्वम् ७,५६,१४
३२८ प्र शर्धाय प्रयज्यवे सुखादये । तवसे ५,८७,१

यज्वन्

२४० घर्मस्तुभे दिवः आ पृष्ठयज्वने । द्युम्नश्रवसे ५,५४,१

यत्

४३ मर्त्येषितः । आ यः नः अभ्वः ईषते १,३९,८
१३० पाथ । दिवः यः ... अभि १,८६,१
१७८ प्र तं विविक्मि वक्म्यः यः एषाम् १,१६७,७
२०७ यः नः मरुतः वृकताति मर्त्यः २,३४,९
२६१ न यः युच्छति तिष्यः यथा दिवः ५,५४,१३
२९४ अयं यः अग्निः मरुतः समिद्धः । जुषध्वम् ५,५८,३
३६२ यः ईवतः वृषणः अस्ति गोपाः ७,५६,१८
३६८ शुष्मी अस्तु । जनानां यः असुरः विधर्ता ७,५६,२४
३७७ गणाय । यः दैव्यस्य धाम्नः तुविष्मान् ७,५८,२
३८४ मही: इषः । यः वः वराय दाशति ७,५९,२
३९० यः नः मरुतः अभि दुर्हृणायुः । जिघांसति ७,५९,८
९६ वः ऊतिषु । यः वा नूनं उत असति ८,२०,१५
४१३ यः उदृचि यज्ञे अध्वरे-स्थाः । ददाशत् १०,७७,७
४३४ यः ओषधीनां अधिपाः बभूव । अथर्व० ४,१५,१०
४६७ ये महः रजसः विदुः १,१९,३; [अग्निः २४४०]
४६८ ये उग्राः अर्कं आनृचुः १,१९,४; [अग्निः २४४१]
४६९ ये शुभ्राः घोरवर्पसः १,१९,५; [अग्निः २४४२]
४७० ये नाकस्य अधि रोचने १,१९,६; [अग्निः २४४३]
४७१ ये ईङ्खयन्ति पर्वतान् १,१९,७; [अग्निः २४४४]
४७२ आ ये तन्वन्ति रश्मिभिः १,१९,८; [अग्निः २४४५]
७ ये पृषतीभिः ऋष्टिभिः । अजायन्त स्वभानवः १,३७,२
१२३ प्र ये शुम्भन्ते जनयः न सप्तयः १,८५,१
१२६ वि ये भ्राजन्ते सुमखासः ऋष्टिभिः १,८५,४
१६१ आ ये रजांसि तविषीभिः अव्यत १,१६६,४
१६८ विभूतयः । दूरेदृशः ये दिव्याः इव स्तृभिः १,१६६,११
१८४ वव्रासः न ये स्वजाः स्वतवसः १,१६८,२
१८५ सोमासः न ये सुताः तृप्तांशवः । आसते १,१६८,३
२१७ ये अद्रोघं । अनुस्वधं श्रवः मदन्ति ५,५२,१
२२० विश्वे ये मानुषा । युगा पान्ति मर्त्यम् ५,५२,४
२२१ अर्हन्तः ये सुदानवः । नरः असामिशवसः ५,५२,५

२१३ ये वऋधन्त पार्थिवाः । ये उरौ अन्तरिक्षे ५,५२,७
२२६ ये ऋष्वाः ऋष्टिविद्युतः । कवयः सन्ति ५,५२,१३
२३१ प्र ये मे बन्ध्वेषे । गां वोचन्त सूरयः ५,५२,१६
२३६ ते मे आहुः ये आययुः । उप द्युभिः ५,५३,३
२३७ ये अञ्जिषु ये वाशीषु स्वभानवः ५,५३,४
२७६ ये ते नेदिष्ठं हवनानि आगमन ५,५६,२
२७८ नि ये रिणन्ति ओजसा । वृथा ५,५६,४
२९२ ये आश्वश्वाः अमवत् वहन्ते । उत ईशिरे ५,५८,१
२९३ मयोभुवः ये अमिताः महित्वा । वन्दस्व ५,५८,२
२९४ उदवाहासः । वृष्टिं ये विश्वे मरुतः जुनन्ति ५,५८,३
३०१ दूरेदृशः ये चितयन्ते एमभिः । अन्तः महे ५,५९,२
३०६ वयः न ये श्रेणीः पप्तुः ओजसा ५,५९,७
४५० आ ये तस्थुः पृषतीषु श्रुतासु ५,६०,२
३०८ ये एकएकः आयय परमस्याः परावतः ५,६१,१
३११ ये ईं वहन्ते आशुभिः । अत्र श्रवांसि दधिरे ५,६१,११
३१९ प्र ये जाताः महिना ये च नु स्वयम् ५,८७,२
३२० प्र ये दिवः बृहतः शृण्विरे गिरा ५,८७,३
३३५ ये अग्नयः न शोशुचन् इधानाः ६,६६,२
३३६ रुद्रस्य ये मीळ्हुषः सन्ति पुत्राः ६,६६,३
३३७ न ये ईषन्ते जनुषः अया नु ६,६६,४
३३८ न ये स्तौनाः अयासः मह्ना ६,६६,५
३४२ स्वतवसे भरध्वं । ये सहांसि सहसा सहन्ते ६,६६,९
३६० अत्यासः न ये मरुतः स्वञ्चः ७,५६,१६
३७० ये रेजयन्ति रोदसी चित् उर्वी ७,५७,१
३७६ ये नः त्मना शतिनः वर्धयन्ति ७,५७,७
३७८ प्र ये महोभिः ओजसा उत सन्ति ७,५८,१
३९४ वयः ये भूत्वी पतयन्ति नक्तभिः ७,१०४.१८
२९४ ये वा रिपः दधिरे देवे अध्वरे ७,१०४,१८
६१ ये द्रप्साः इव रोदसी । धमन्ति ८,७,१६
९९ ये च अर्हन्ति मरुतः सुदानवः चरन्ति ये ८,२०,१८
१०१ सहाः ये सन्ति मुष्टिहा इव हव्यः ८,२०,२०
४०३ आ ये विश्वा पार्थिवानि पप्रथन् ८,९४,९
४०५ त्यान् नु ये वि रोदसी । तस्तभुः ८,९४,११
४०९ प्र ये दिवः पृथिव्याः न बर्हणा १०,७७,३
४१६ अग्निः न ये भ्राजसा रुक्मवक्षसः १०,७८,२
४१७ वातासः न ये धुनयः जिगत्नवः १०,७८,३
४१८ रथानां न ये अराः सनाभयः १०,७८,४
४१९ अश्वासः न ये ज्येष्ठासः आशवः १०,७८,५
४४१ उत्सं अक्षितं व्यचन्ति ये सदा । अथर्व० ४,२७,२
,, ये आसिञ्चन्ति रसं ओषधीषु । अथर्व० ४,२७,२
मरुत्० स० १२

४४२ जवं अर्वतां कवयः ये इन्वथ । अथर्व० ४,२७,३
४४३ दिवः पृथिवीं अभि ये सृजन्ति । अथर्व० ४,२७,४
,, ये अद्भिः ईशानाः मरुतः चरन्ति । अथर्व० ४,२७,४
४४४ ये कीलालेन तर्पयन्ति ये घृतेन । ये वा वयः मेदसा संसृजन्ति ये अद्भिः ईशानाः । अथर्व० ४,२७,५
१२० तस्थौ वः ऊती मरुतः यं आवत १,६४,१३
१६५ पूर्भिः रक्षत मरुतः यं आवत १,१६६,८
१९६ सुदानवः । आरे अश्मा यं अस्यथ १,१७२,२
२३९ आ यं नरः सुदानवः ददाशुषे ५,५३,६
२४८ नरः मरुतः । यं त्रायध्वे स्याम ते ५,५३,१५
२५६ ऋषिं वा यं राजानं वा सुसूदथ ५,५४,७
३४० अनश्वः चित् यं अजति अरथीः ६,६६,७
३४१ मरुतः यं अवथ वाजसातौ । यं अप्सु ६,६६,८
३५९ नु चित् यं अन्यः आदभत् अरावा ७,५६,१५
३८३ यं त्रायध्वे । देवासः यं च नयथ ७,५९,१
२१२ त्रितः न यान् पञ्च होतॄन् अभिष्टये २,३४,१४
३३६ यान् चो नु दाधृविः भरध्यै ६,६६,३
१६० यस्मै ऊमासः अमृताः अरासत १,१६६,३
१६९ वः दात्रं । जनाय यस्मै सुकृते अराध्वम् १,१६६,१२
३८६ पृतनासु मर्धति । यस्मै अराध्वं नरः ७,५९,४
१३५ मरुतः यस्य हि क्षये । पाथ १,८६,१
१३७ उत वा यस्य वाजिनः । अनु विप्रम् १,८६,३
१४१ सुभगः सः प्रयज्यवः । यस्य प्रयांसि पर्षथ १,८६,७
३३३ सद्यः चित् यस्य चर्कृतिः । परि द्याम् ६,४८,२१
९७ यस्य वा यूयं प्रति वाजिनः नरः ८,२०,१६
१३ येषां अज्मेषु पृथिवी । भिया यामेषु रेजते १,३७,८
३१३ येषां श्रिया अधि रोदसी । दिवि रुक्मः इव ५,६१,१२
३२० न येषां इरी सधस्थे ईष्टे आ ५,८७,३
३२४ येषां अज्मेषु आ महः । शर्धांसि अद्भुतैनसाम् ५,८७,७
९४ येषां अर्णः न सप्रथः । नाम त्वेषम् ८,२०,१३
२८२ आ यस्मिन् तस्थौ सुरणानि बिभ्रती ५,५६,८
२८३ यस्मिन् सुजाता सुभगा महीयते ५,५६,९
१७४ मिम्यक्ष येषु सुधिता घृताची १,१६७,३
३३८ मक्षु न येषु दोहसे चित् अयाः ६,६६,५
४८९ या नु दक्ष्वान् कृणवे मनीषा १,१६५,१०
[इन्द्रः ३२५३]
२१३ अर्वाची सा मरुतः या वः ऊतिः २,३४,१५
३२८ या शर्धाय मारुताय । या मर्त्याके मरुतां । या नृम्णैः एवयावरी ६,४८,१२
४३५ असौ या सेना मरुतः परेषाम् । अथर्व० ३,२,६

४३९ वृष्टिः या विश्वाः निवतः पृणाति । अथर्व० ६,२२,३
२१२ यया रध्रं पारयथ अति अंहः । यया निदः मुञ्चथ २,३४,१५
१०५ याभिः सिन्धुं अवथ याभिः तूर्वथ । याभिः दशस्यथ क्रिविम् ८,२०,२४
३९६ यस्याः देवाः उपस्थे । व्रता धारयन्ते ८,९४,२
१० गोषु अघ्न्यं । क्रीळं यत् शर्धः मारुतम् १,३७,५
११ आ नरः । यत् सीं अन्तं न धूनुथ १,३७,६
१७ यत् ह वः बलं । जनान् अचुच्यवीतन १,३७,१२
१२६ मनोजुवः यत् मरुतः रथेषु । पृषतीः अयुग्ध्वम् १,८५,४
१५७ यत् वः चित्रं युगयुगे । यत् च दुस्तरं । दिधृत यत् च दुस्तरम् १,१३९,८
४४८ रुद्र यत् ते जनिम चारु चित्रम् ५,३,३
,, पदं यत् विष्णोः उपमं निधायि ५,३,३
२४० स्यताः अश्वाः इव । वि यत् वर्तन्ते एन्यः ५,५३,७
२७२ यत् पूर्व्यं मरुतः यत् च नूतनं । यत् उद्यते वसवः यत् च शस्यते ५,५५,८
३३५ त्रिः यत् त्रिः मरुतः ववृधन्त ६,६६,२
३३७ निः यत् दुहे शुचयः अनु जोषम् ६,६६,४
३६५ यत् ईं सुजातं वृषणः वः अस्ति ७,५६,२१
१०६ यत् सिन्धौ यत् असिक्न्यां । यत् समुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः यत् पर्वतेषु भेषजम् ८,२०,२५
८ इब्धे एषां । कशाः हस्तेषु यत् वदान् १,३७,३
११९ विष्णुः यत् ह आवत् वृषणं मदच्युतम् १,८५,७
१२१ त्वष्टा यत् वज्रं सुकृतं हिरण्ययम् १,८५,९
१४४ गूहत तमः । ज्योतिः कर्त यत् उश्मसि १,८६,१०
१५० [illegible] ह यत् मरुतः गोतमः वः १,८८,५
२८० [illegible] नः [illegible] यत् ते अस्मे १,१६५,३
[इन्द्रः ३०५१]
२८१ यत् मां [illegible] अहिहत्ये १,१६५,६
[इन्द्रः ३०५५]
२८३ [illegible] मरुतः यत् वशाम १,१६५,७
[इन्द्रः ३०५८]
२९० यत् मे नरः श्रुत्यं ब्रह्म चक्र १,१६५,११
[इन्द्रः ३०६०]
२९३ [illegible] यत् [illegible] १,१६५,१४
[इन्द्रः ३०६३]
[illegible] यत् [illegible] ५,६०,६
[illegible] यत् [illegible] ३,५६,९
[illegible] यत् [illegible] ३,५६,१०

३८१ यत् सस्वर्ता जिहीळिरे यत् आविः ७,५८,५
२४ यत् यूयं पृश्निमातरः । मर्तासः स्यातन १,३८,४
११४ यत् आरुणीषु तविषीः अयुग्ध्वम् १,६४,७
१७० पुरु यत् शंसं अमृतासः आवत १,१६६,१३
१७१ आ यत् ततनन् वृजने जनासः १,१६६,१४
१७३ अध यत् एषां नियुतः परमाः १,१६७,२
१७६ जोषत् यत् ईं असुर्या सचध्यै १,१६७,५
२०० रुद्रः यत् वः मरुतः रुक्मवक्षसः २,३४,२
२०८ पृश्न्याः यत् ऊधः अपि आपयः दुहुः २,३४,१०
,, यत् वा निदे नवमानस्य रुद्रियाः २,३४,१०
२४६ अस्मभ्यं तत् धत्तन यत् वः ईमहे ५,५३,१३
२५४ अनश्वदां यत् नि अयातन गिरिम् ५,५४,५
२५५ अभ्राजि शर्धः मरुतः यत् अर्णसम् ५,५४,६
२५९ यत् मरुतः सभरसः । स्वर्णरः मदथ ५,५४,१०
२६१ सं अच्यन्त वृजना अतित्विषन्त यत् ५,५४,१२
४५४ यत् उत्तमे मरुतः मध्यमे वा ५,६०,६
,, यत् वा अवमे सुभगासः दिवि स्थ ५,६०,६
४५५ अग्निः च यत् मरुतः विश्ववेदसः । दिवः वहध्वे ५,६०,७
३७३ यत् वः आगः पुरुषता कराम ७,५७,४
६६ नहि स्म यत् ह वः पुरा ८,७,२१
७६ कत् ह नूनं । यत् इन्द्रं अजहातन ८,७,३१
१४ मातुः निरेतवे । यत् सीं अनु द्विता शवः १,३७,९
१८ यत् ह यान्ति मरुतः । सं ह ब्रुवते १,३७,१३
२८ विद्युत् मिमाति । यत् एषां वृष्टिः असर्जि १,३८,८
२९ पर्जन्येन उदवाहेन । यत् पृथिवीं व्युन्दन्ति १,३८,९
३६ प्र यत् इत्था परावतः । मानं अस्यथ १,३९,१
३८ परा ह यत् स्थिरं हथ । वर्तयथ गुरु १,३९,३
११५ गोमातरः यत् शुभयन्ते अञ्जिभिः । बाधन्ते विश्वम् १,८५,३
११७ प्र यत् रथेषु पृषतीः अयुग्ध्वं । वि ष्यन्ति धाराः १,८५,५
१४६ उपह्वरेषु यत् अचिध्वं ययिं । वयः इव १,८७,२
१४७ रेजते । भूमिः यामेषु यत् ह युञ्जते शुभे १,८७,३
१४९ यत् ईं इन्द्रं शमि ऋक्वाणः आशत १,८७,५
१६२ यत् त्वेषयामाः नदयन्त पर्वतान् १,१६६,५
१७७ अर्कः यत् वः मरुतः हविष्मान् । गायत् गाथम् १,१६७,६
१७८ सचा यत् ईं वृषमणाः अहंयुः १,१६७,७
१८८ यत् [illegible] विद्युतः इव [illegible] १,१६८,?
१९० यत् अभ्रियां वाचं उदीरयन्ति १,१६८,८

२०३ यत् युञ्जते मरुतः रुक्मवक्षसः । अश्वान् रथेषु २,३४,८
२३४ कः वेद जानं एषां । यत् युयुज्रे किलास्यः ५,५३,१
२५३ नि यत् [illegible] नावः ईं यथा ५,५४,४
२५७ भिन्दन्ति [illegible] यत् इनासः अस्वरन् ५,५४,८
२७० यत् अश्वान् धूर्षु पृषतीः अयुग्ध्वम् ५,५५,६
२८३ शुभे यत् उग्राः पृषतीः अयुग्ध्वम् ५,५७,३
२९७ यत् प्र अयासिष्ट पृषतीभिः अश्वैः ५,५८,६
३०३ प्र यत् भरध्वे सुविताय दावने ५,५९,४
४५३ यत् क्रीळथ मरुतः ऋष्टिमन्तः । आपः इव ५,६०,३
३३६ ई यत् इनन्त मन्युभिः जनासः ७,५६,२२
३६० भिन्दन्ति [illegible] यत् अयासुः उग्राः ७,५७,१
४३ प्र यत् वः त्रिष्टुभं इषं । अक्षरत् ८,७,१
४७ यत् अङ्ग तविषीयवः । यामं अचिध्वम् ८,७,२
४९ वेपयन्ति पर्वतान् । यत् यामं यान्ति वायुभिः ८,७,४
५० नि यत् यामाय वः गिरिः नि सिन्धवः ८,७,५
५३ मरुतः यत् ह वः दिवः । हवामहे ८,७,११
५६ आपि इव यत् गिरीणां । यामं अचिध्वम् ८,७,१४
७१ उशना यत् परावतः । उक्ष्णः रन्धं अयातन ८,७,२६
७३ यत् एषां पृषतीः रथे । प्रष्टिः वहति रोहितः ८,७,२८
८५ शुभ्रखादयः । यत् एजथ स्वभानवः ८,२०,४
४१३ प्र यत् वहध्वे मरुतः पराकात् १०,७७,६
४३८ यत् एथ मरुतः रुक्मवक्षसः । अध्वे० ३,२६,२
४८८ यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध १,१६५,९

[इन्द्रः ३६५८]

४८९ यानि च्यवं इन्द्रः इत् ईशे एषाम् १,१६५,१०

[इन्द्रः ३६५९]

१३४ या वः शर्म शशमानाय सन्ति १,८५,१२
३६७ [illegible] या वः [illegible] ७,५६,२३
४५७ या नः [illegible] या । अध्वे० १,३१,१
१७१ येन दीर्घं मरुतः शूशवाम १,१६६,१४
४९३ येन मानासः चितयन्ते उस्राः १,१७१,५

[इन्द्रः ३६६७]

२४३ येन तोकाय तनयाय धान्यं । बीजं ५,५३,१३
२६४ येन [illegible] ५,५४,१५
२६६ येन [illegible] । [illegible] ५,८७,५
३६८ [illegible] येन [illegible] । [illegible] ७,५६,२४
६३ येन अव तुर्वशं यदुं । येन कण्वं ८,७,१८
३६९ यस्य [illegible] ५,५६,१५
१८८ [illegible] १,१६८,३

६

यत् [प्रयत्ने]

१११ वक्षःसु रुक्मान् अधि येतिरे शुभे १,६४,४
१३० श्रवस्यवः न पृतनासु येतिरे । भयन्ते विश्वा १,८५,८
३०१ [illegible] । अन्यः मही विदथे येतिरे नरः ५,५९,२
९३ वृषणः उग्रबाहवः नकिः । तनूषु येतिरे ८,२०,१२
४०८ दिवः पुत्रासः एताः न येतिरे आदित्यासः ते १०,७७,२
३०७ [illegible] । तं वायु [illegible] यतन्ताम् ५,५९,८

यत् [नियमने]

२५५ चक्रः इव यन्तं अनु नेषथ सुगम् ५,५४,६
२६१ यतः पूर्वान् इव सखीन् अनु ह्वय ५,५३,१६
४१३ सुशर्माणः न सोमाः ऋतं यते १०,७८,२
३०२ गौः न धुर्यि [illegible] यती ५,५९,२
२३८ नरः [illegible] । वृष्टी [illegible] यतीः इव ५,५३,५

यव

१६१ प्र वः एवासः स्वयतासः अभ्रजन् १,१६६,४
१६९ शिवः वः [illegible] स्वयतास्तु [illegible] १,१६६,९

यत-स्रुच्

२०९ [illegible] । [illegible] यतस्रुचः १,३९,११

यत्र

१६३ यत्र वः दिद्युत् रदति क्रिविर्दती १,१६६,६
२७१ यत्र अचिध्वं मरुतः [illegible] ५,५५,७
३१५ कः वेद नूनं । यत्र मदथ [illegible] ५,६१,१४
८७ यत्र [illegible] । [illegible] ८,२०,३
४३८ यत्र [illegible] । [illegible] ३,२६,२

यथा

२ [illegible] यथा [illegible] १,६,३
४३ [illegible] यथा [illegible] १,३९,७
१९८ यथा [illegible] । [illegible] २,३०,११
२४० [illegible] यथा ५,५३,७
२४३ [illegible] यथा ५,५३,८
२५७ [illegible] यथा [illegible] ५,५४,८
२६२ [illegible] यथा [illegible] ५,५४,१६
२६६ [illegible] यथा [illegible] ५,५५,३
२७६ यथा [illegible] ५,५६,२
२८७ [illegible] यथा [illegible] ५,५७,७
३११ [illegible] यथा [illegible] ५,६१,४
३२४ [illegible] यथा ५,८७,७
३३१ [illegible] यथा [illegible] ६,४८

३६४ मर्मिं चित् **यथा** वसवः जुषन्त ७,५६,२०
३७२ न एतावत् अन्ये मरुतः **यथा** इमे ७,५७,३
९८ **यथा** रुद्रस्य सूनवः। दिवः वशन्ति ८,२०,१७
४३५ **यथा** एषां अन्यः अन्यं न जानात्। अथर्व० ३,२,६
४३७ **यथा** अयं अरपाः असत्। अथर्व० ४,१३,४

यदा

३२१ **यदा** अयुक्त त्मना स्वात् अधि स्नुभिः ५,८७,४

यदि

१९० पृथिव्यां । **यदि** घृतं मरुतः प्रुष्णुवन्ति १,१६८,८
३५९ **यदि** स्तुतस्य मरुतः अधीथ। इत्था विप्रस्य ७,५६,१५
४२२ **यदि** वहन्ति आशवः। भ्राजमानाः रथेषु। साम० ३५६
४४५ **यदि** इत् इदं मरुतः मारुतेन। अथर्व० ४,२७,६
,, **यदि** देवाः दैव्येन ईदृक् आर। अथर्व० ४,२७,६

यदुः

६३ येन आव तुर्वशं **यदुं**। येन कण्वम् ८,७,१८

यम्

३१० एषां । वि सक्थानि नरः **यमुः** ५,६१,३
५० नि सिन्धवः विधर्मणे। महे शुष्माय **येमिरे** ८,७,५
७९ पर्शानासः मन्यमानाः। पर्वताः चित् नि **येमिरे** ८,७,३४
१३४ अस्मभ्यं तानि मरुतः वि **यन्त** १,८५,१२
२७३ अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि **यन्तन** ५,५५,९
४४० आशून् इव **सुयमान्** अह्वे ऊतये। अथर्व० ४,२७,१
२६५ रुक्मवक्षसः। ईयन्ते अश्वैः **सुयमेभिः** आशुभिः ५,५५,१

यमः

३०९ कथा यय पृष्ठे सदः नसोः **यमः** ५,६१,२
२८७ वर्णनिर्णिजः। **यमाः** इव सुसदृशः सुपेशसः ५,५७,४
२५ जरिता भूत् अजोष्यः। पथा **यमस्य** गात् उप १,३८,५

यमुना

२३३ **यमुनायां** अधि श्रुतं। उत् राधः गव्यं मृजे ५,५२,१७

ययिः

३२२ रेजयत् वृषा त्वेषः **ययिः** तविषः एवयामरुत् ५,८७,५
४२१ सिन्धवः न **ययियः** भ्राजदृष्टयः। परावतः न १०,७८,७
१२६ उपह्वरेषु यत् अचिध्वं **ययिं**। वयः इव १,८७,२

यवस्

२५ मा वः मृगः न **यवसे**। जरिता भूत् अजोष्यः १,३८,५
२४२ अस्य यामनि। रणन् गावः न **यवसे** ५,५३,१६

यव्यम्

१९५ पर्वा शुभ्राः अयासः **यव्या**। मिमिक्षुः १,१६७,४

यशस्

४११ श्येनासः न **स्वयशसः** रिशादसः। प्रवासः न १०,७७,५

यस्

३३८ नु चित् सुदानुः अव **यासत्** उग्रान् ६,६६,५

यह्वी

३६६ सं यत् हनन्त। शूराः **यह्वीषु** ओषधीषु विक्षु ७,५६,२२

या

३४० वि रोदसी पथ्याः **याति** साधन् ६,६६,७
१८ यत् ह **यान्ति** मरुतः। सं ह ब्रुवते १,३७,१३
१५२ पिशङ्गैः। शुभे कं **यान्ति** रथतूर्भिः अश्वैः १,८८,२
४९ वेपयन्ति पर्वतान्। यत् यामं **यान्ति** वायुभिः ८,७,४
७३ पृषतीः रथे। **यान्ति** शुभ्राः रिणन् अपः ८,७,२८
४८२ एकः **यासि** सत्पते किं ते इत्था १,१६५,३
[इन्द्रः ३२५२]

३६ कस्य वर्पसा। कं **याथ** कं ह धूतयः १,३९,१
२०१ पृक्षं **याथ** पृषतीभिः समन्यवः २,३४,३
३८ वि **याथन** वनिनः पृथिव्याः। वि आशाः १,३९,३
२७१ उत द्यावापृथिवी **याथन** परि ५,५५,७
२८५ पृश्निमातरः। स्वायुधाः मरुतः **याथन** शुभम् ५,५७,२
२६४ तत् वः **यामि** द्रविणं सद्यऊतयः ५,५४,१५
३०९ क्व अर्भाशवः। कथं शेक कथा **यय** ५,६१,२
१८६ अव स्वयुक्ताः दिवः आ वृथा **ययुः** १,१६८,४
२३५ रथेषु तस्थुषः। कः शुश्राव कथा **ययुः** ५,५३,२
२४५ कस्मै अद्य सुजाताय। रातहव्याय प्र **ययुः** ५,५३,१२
६८ वि वृत्रं पर्वशः **ययुः**। वि पर्वतान् ८,७,२३
७४ आर्जीके पस्त्यवति। **ययुः** निचक्रया नरः ८,७,२९
१७३ आ नः अवोभिः मरुतः **यान्तु** अच्छ १,१६७,२
४७४ आ अग्ने **याहि** मरुत्सखा ८,१०३,१४ [अग्निः२४४७]
१९ प्र **यात** शीभं आशुभिः। तत्रो सु मादयाध्वै १,३७,१४
३१ रोधस्वतीः अनु। **यात** ईं अखिद्रयामभिः १,३८,११
१४४ वि **यात** विश्वं अत्रिणं। ज्योतिः कर्त १,८६,१०
१५१ स्वर्कैः। रथेभिः **यात** ऋष्टिमद्भिः अश्वपर्णैः १,८८,१
१९४ उप ईं आ **यात** मनसा जुषाणाः १,१७१,२
२४१ आ **यात** मरुतः दिवः। आ अंतरिक्षात् ५,५३,८
३८६ सुमतिः नवीयसी। तूयं **यात** पिपीषवः ७,५९,४
४९२ प्र **यातन** सखीन् अच्छ सखायः १,१६५,१३
[इन्द्रः ३२६२]

३८७ घृष्विराधसः। **यातन** अन्धांसि पीतये ७,५९,५
२५४ अनथर्दां यत् नि **अयातन** गिरिम् ५,५४,५

[illegible] अयातन ८,७,३३
[illegible] अयासिष्ट [illegible] ५,५८,३
[illegible] अयासुः [illegible] ७,५७,१
[illegible] यासिष्ट [illegible]
[illegible] १,१३३,१५:१६७,११:१६८,१०
[illegible] ५,६१,१
[illegible] ५,५२,३
[illegible] अयपुः [illegible] १,१६८,१
[illegible] ५,५६,१
[illegible] ५,५६,२
[illegible] ५,५६,४
[illegible] १,१६४,१
[illegible]
[illegible] १,१६८,२

[illegible] ५,५५,१-६

यात्

[illegible] याताँ [illegible]

यातवे

[illegible] यातवे १,३७,१०
[illegible] यातवे ८,७,८
[illegible] ८,२०,३
८९ [illegible] यातवे [illegible]

यानः

[illegible] यानः [illegible] १,१३३,४
[illegible] यानः [illegible] १,१६६,१
[illegible] यानः [illegible] ३,३३,७
[illegible] यानं [illegible] ८,७,३
[illegible] यानं [illegible] यानं [illegible] ८,७,३
[illegible] यानं [illegible] ८,७,१३
[illegible] यानं [illegible]
[illegible] यानेन [illegible] ८,७,७
[illegible] यानेभिः [illegible] १,३७,७
[illegible] १,३३,३
[illegible] यानाय [illegible]
[illegible] यानाय [illegible] ८,७,५
[illegible] यानाय [illegible]
[illegible] याने [illegible] यानेषु [illegible] १,३७,८
[illegible] यानेषु [illegible] १,८७,१
[illegible] यानेषु [illegible] ५,५३,७
[illegible] यानेषु [illegible] यानेषु [illegible]
[illegible]
[illegible]

यामन्

[illegible] यान [illegible] १,३७,१०
[illegible] यानभिः १,३७,११
[illegible] यानभिः ५,५३,४
[illegible] यामनः [illegible] ५,५७,३
[illegible] यामन् [illegible] १,३७,३
[illegible] यामन् [illegible]
[illegible] १,८५,१
[illegible] १,१६६,१
[illegible] यामन् [illegible] ५,५३,६
[illegible] यामन् [illegible] ५,५८,७
[illegible] यामन् [illegible] ७,५८,३
[illegible] यामन् [illegible] १०,७७,८
[illegible] यामन् [illegible] १०,७८,३
[illegible] यामन् [illegible] १,१६८,५
[illegible] यामनि [illegible]
[illegible] यामनि ५,५३,१३
[illegible] यामनि १०,७७,३
[illegible] यामभिः १,३८,११
[illegible] ५,५४,१५

याम–श्रुत

[illegible] यामश्रुतेभिः [illegible] ५,५४,१५

याम–हूतिः

[illegible] यामहूतिषु ५,६१,१५
[illegible]

यावन्

[illegible] यावया [illegible] १,८७,३
[illegible] यावया [illegible] ५,६१,१३
[illegible]
[illegible]
[illegible] १,३४,११
[illegible]

यावरी

[illegible] यावरी [illegible]

यु

[illegible] १,३१,८
[illegible] युयोत [illegible]
[illegible] युयोत [illegible]
[illegible] युयोत १०,७७,३
[illegible] युयोत [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

४१८ वेरयवः न मर्याः घृतप्रुषः । अभिस्वर्तारः १०,७८,४
४२१ अध्वरश्रियः । शुभंयवः न अञ्जिभिः वि अश्वितन् १०,७८,७
२४७ पृथ्वी शं योः आपः उस्रि भेषजम् ५,५३,१४

युक्त

४३२ माता इव पुत्रं पिपृत इह युक्ताः । अथर्व० ५,२६,५
३९५ श्रवस्युः माता मघोनां । युक्ता वह्निः रथानाम् ८,९४,१
१८६ अव स्वयुक्ताः दिवः आ वृथा ययुः १,१६८,४

युगम्

२२० विश्वे ये मानुषा युगा । पान्ति मर्त्यम् ५,५२,४
१७० तत् वः जामित्वं मरुतः परे युगे १,१६६,१३
१५७ यत् वः चित्रं युगेयुगे । नव्यं घोषात् १,१३९,८

युग्वन्

४२६.१ धुनिः च अभियुग्वा च विक्षिपः स्वाहा । वा० य० ३९,७

युच्छ्

२६१ न वः युच्छति तिष्यः यथा दिवः ५,५४,१३

युज्

१४७ रेजते । भूमिः यामेषु यत् ह युञ्जते शुभे १,८७,३
२०६ यत् युञ्जते मरुतः रुक्मवक्षसः । अश्वान् रथेषु २,३४,८
२१४ शुभे नरः । प्र स्पन्द्राः युजत त्मना ५,५२,८
३३९ धृष्णुसेनाः । उभे युजन्त रोदसी सुमेके ६,६६,६
८५ [illegible] । उभे युजन्त रोदसी ८,२०,४
४८४ महोभिः एतान् उप युज्महे नु १,१६५,५ [इन्द्रः ३२५४]
२३४ कः वेद जानं एषां । यत् युयुज्रे किलास्यः ५,५३,१
२९८ [illegible] हि अश्वान् शुभि आयुयुज्रे ५,५८,७
२८० युङ्ग्ध्वं हि अरुषीः रथे । युङ्ग्ध्वं रोहितः ५,५६,६
,, युङ्ग्ध्वं हरी अजिरा धुरि वोळ्हवे ५,५६,६
३८१ यदा अयुक्त त्मना स्वात् अधि स्नुभिः ५,८७,४
३१४ शुभे संमिश्लाः पृषतीः अयुक्षत । विश्ववेदसः ३,२६,४
४१ रथेषु पृषतीः अयुग्ध्वं । प्रष्टिः वहति १,३९,६
११४ [illegible] पृषतीः अयुग्ध्वम् १,६४,७
१२३ रथेषु आ । वृषव्रातासः पृषतीः अयुग्ध्वम् १,८५,४
१२७ प्र यत् रथेषु पृषतीः अयुग्ध्वम् १,८५,५
२५२ यत् अश्वान् धूर्षु पृषतीः अयुग्ध्वम् ५,५५,६
२८३ [illegible] पृषतीः अयुग्ध्वम् ५,५७,३
[illegible] अयुयुज्रन् [illegible]

४११ यूयं धूर्षु प्रयुजः न रश्मिभिः १०,७७,५
४१६ रुक्मवक्षसः । वातासः न स्वयुजः सद्यऊतयः १०,७८,२
४७९ इन्द्रेण सहसा युजा १,२३,९; [इन्द्रः ३२४९]
३९ युष्माकं अस्तु तविषी तना युजा १,३९,४
४३३ इन्द्रेण युजा प्र मृणीत शत्रून् । अथर्व० १३,१,३

युजानः

४८४ अतः वयं अन्तमेभिः युजानाः १,१६५,५ [इन्द्रः ३२५४]

युज्य

४८६ भूरि चकर्थ युज्येभिः अस्मे १,१६५,६ [इन्द्रः ३२५६]

युत्

१७३ अध यत् एषां नियुतः परमाः धनयन्त १,१६७,२
२२७ अध नियुतः ओहते । अध पारावताः इति ५,५२,११

युध्

३०४ शूराः इव प्रयुधः प्र उत युयुधुः ५,५९,५
४९८ इष्यामि वः वृषणः युध्यत आजौ ८,९६,१४ [इन्द्रः ३२६९]
१५८ तुवि-स्वनः युधा इव शक्राः तविषाणि कर्तन १,१६६,१
२२२ आ रुक्मैः आ युधा नरः ऋष्टीः असृक्षत ५,५२,६
३०४ शूराः इव प्रयुधः प्र उत युयुधुः ५,५९,५

युध्यत्

६९ अनु त्रितस्य युध्यतः । शुष्मं आवन् ८,७,२४

युयुधिः

१३० शूराः इव इत् युयुधयः न जग्मयः १,८५,८

युवतिः

१७७ आ अस्थापयन्त युवतिं युवानः १,१६७,६

युवन्

१४८ सः हि स्वसृत् पृषदश्वः युवा गणः १,८७,४
२५३ युवा पिता स्वपाः रुद्रः एषाम् ५,६०,५
३१४ युवा सः मारुतः गणः । त्वेषरथः ५,६१,१३
११० युवानः रुद्राः अजराः अभोग्घनः । ववक्षुः १,६४,३
४८१ कस्य ब्रह्माणि जुजुषुः युवानः १,१६५,२ [इन्द्रः ३२५१]
१७७ आ अस्थापयन्त युवतिं युवानः १,१६७,६
[illegible] युवानः [illegible]
[illegible] युवानः [illegible]
९८ [illegible] युवानः [illegible] ८,२०,१८

९९ वयसा कृता । युवानः आ ववृत्वन् ८,२०,१८
१०८ यूनः ऊ षु नविष्ठया । वृष्णः पावकान् ८,२०,१९

युष्मद्

४८१ कुतः त्वं इन्द्र माहिनः सन् । एकः यासि १,१६५,३ [इन्द्रः ३२५२]
४९७ त्वं पाहि इन्द्र सहीयसः नॄन् १,१७१,६ [इन्द्रः ३२५८]
५ यज्ञं पुनीतन । यूयं हि स्थ सुदानवः १,१५,२
२४ यत् यूयं पृश्निमातरः । मर्तासः स्यातन १,३८,४
१४३ यूयं तत् सत्यशवसः । आविः कर्त १,८६,९
१६३ यूयं नः उग्राः मरुतः सुचेतुना १,१६६,६
१९४ यूयं हि स्थ नमसः इत् वृधासः १,१७१,२
२६३ यूयं रयिं मरुतः स्पार्हवीरं । यूयं ऋषिं अवथ सामविप्रं । यूयं अर्वन्तं भरताय वाजं । यूयं धत्थ राजानं श्रुष्टिमन्तम् ५,५४,१४
२६९ यूयं वृष्टिं वर्षयथ पुरीषिणः ५,५५,५
२७४ यूयं अस्मान् नयत वस्यः अच्छ ५,५५,१०
२९५ यूयं राजानं इर्यं जनाय । जनयथ ५,५८,४
३०३ यूयं ह भूमिं किरणं न रेजथ ५,५९,४
३१६ यूयं मर्तं विपन्यवः । प्रणेतारः इत्था ५,६१,१५
३२६ यूयं तस्य प्रचेतसः । स्यात दुर्धर्तवः निदः ५,८७,९
३६९;३७६;३८१ यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ७,५६,२५; ५७,७;५८,६
५७ यूयं हि स्थ सुदानवः । रुद्राः ८,७,१२
९७ यस्य वा यूयं प्रति वाजिनः नरः ८,२०,१६
१०४ भेषजस्य वहत सुदानवः । यूयं सखायः सप्तयः ८,२०,२३
४११ यूयं धूर्षु प्रयुजः न रश्मिभिः १०,७७,५
४१२ यूयं महः संवरणस्य वस्वः १०,७७,६
४३० यूयं न प्रवतः नपात् । अथर्व० १,२६,३
४३४ यूयं उग्राः मरुतः ईदृशे । अथर्व० ३,१,२
४४५ यूयं ईशिध्वे वसवः तस्य निष्कृतेः । अथर्व० ४,२७,६
४३३ यूयं उग्राः मरुतः पृश्निमातरः । अथर्व० १३,१,३
४७३ अग्नि त्वा पूर्वपीतये १,१९,९; [अग्निः २४२६]
४२४ इन्द्राय त्वा मरुत्वते (द्विः) मरुतां त्वा ओजसे । वा० य० ७,३६
४५८ गणाः त्वा उप गायन्तु मारुताः । अथर्व० ४,१५,४
५१ युष्मान् उ नक्तं ऊतये । युष्मान् दिवा हवामहे । युष्मान् प्रयति अध्वरे ८,७,६
१२८ आ वः वहन्तु सप्तयः रघुष्यदः १,८५,६
१५५ योजनं अचेति सस्वः ह यत् मरुतः गोतमः वः १,८८,५
१५६ एषा स्या वः मरुतः अनुभर्त्री प्रति स्तोभति १,८८,६
४९२ कः नु अत्र मरुतः ममहे वः १,१६५,१३ [इन्द्रः ३२६२]
४९३ इमा ब्रह्माणि जरिता वः अर्चत् १,१६५,१४ [इन्द्रः ३२६३]
१७७ अर्कः यत् वः मरुतः हविष्मान् गायत् गाथम् १,१६७,६
१८३ धियंधियं वः देवयाः उ दधिध्वे १,१६८,१
,, आ वः अर्वाचः सुविताय रोदस्योः १,१६८,१
१९३ प्रति वः एना नमसा अहं एमि १,१७१,१
२०० रुद्रः यत् वः मरुतः रुक्मवक्षसः अजनि २,३४,२
२२० मरुत्सु वः दधीमहि । स्तोमं यज्ञम् ५,५२,४
२४१ मा वः रसा अनितभा कुभा क्रुमुः । मा वः सिन्धुः नि रीरमत् । मा वः परि स्थात् सरयुः पुरीषिणी । अस्मे इत् सुम्नं अस्तु वः ५,५३,९
२७१ न पर्वताः न नद्यः वरन्त वः ५,५५,७
२८४ इयं वः अस्मत् प्रति हर्यते मतिः ५,५७,१
२९४ आ वः यन्तु उदवाहासः अद्य ५,५८,३
३३२ आ वः होता जोहवीति सत्तः । वः उरथैः ७,५६,१८
३९३ इह इह वः स्वतवसः । कवयः सूर्यत्वचः ७,५९,११
५६ मरुतः यत् ह वः दिवः । हवामहे ८,७,११
६४ इमाः उ वः सुदानवः । वर्धान् ८,७,१९
६५ वृक्तबर्हिषः । अध्वा कः वः सपर्यति ८,७,२०
६६ नहि स्म यत् ह वः पुरा ८,७,२१
४०४ पूतदक्षसः । दिवः वः मरुतः हुवे ८,९४,१०
४९८ इष्मिणः वः वृषणः शुष्मिण आशीः ८,९६,१४ [इन्द्रः ३२६९]
४६० त्वया वयं बहुलं आ एतु वर्षन् । अथर्व० ४,१५,६
१५३ युष्मभ्यं कं मरुतः सुजाताः । तुविद्युम्नासः १,८८,३
४९५ युष्मभ्यं हव्या निशितानि आसन् १,१७१,४ [इन्द्रः ३२६६]
३८७ इमा वः हव्या मरुतः ररे हि कम् ७,५९,५
४६ प्र यत् वः त्रिष्टुभं इषं । मरुतः ८,७,१
२९५ युष्मत् एति मुष्टिहा । युष्मत् सदश्वः ५,५८,४
४६६ महः तव क्रतुं परः १,१९,२; [अग्निः २४३९]
४४८ तव श्रिये मरुतः मर्जयन्त । रुद्र ५,३,३
४८१ एकः यासि सत्पते किं ते इत्था १,१६५,३ [इन्द्रः ३२५२]
४८१ केभिः नः हरिवः ते अस्मे १,१६५,३ [इन्द्रः ३२५

रक्ष्

२३१ घृष्मिः रक्षत मरुतः यं आवत १,१६६,८
२०७ मर्त्तः । रिपुः दधे वसवः रक्षत रिषः २,३४,९

रक्षस्

२३३ अग्निः नवे महित्वना । विध्यत विद्युता रक्षः १,८६,९
२२४ [illegible] । गृभायत रक्षसः सं पिनष्टन ७,१०४,१८

रक्षा

३९३ [illegible] । [illegible] अरक्षः [illegible] ५,८७,९

रघु-पत्वन्

१९८ [illegible] रघुपत्वानः प्र जिगात बाहुभिः १,८५,६

रघु-स्यद्

[illegible] । [illegible] रघुस्यदः १,६४,७
[illegible] रघुस्यदः १,८५,६

[illegible]

रण्वः

३८९ नि सेद । नरः न रण्वाः सवने मदन्तः ७,[illegible]

रत्नम्

४२१ सुभागान् नः देवाः कृणुत सुरत्नान् १०,७[illegible]

रत्न-धेयम्

४२२ सनात् हि वः रत्नधेयानि सन्ति १०,७[illegible]

रथः

३२ रथाः अश्वासः एषां सुसंस्कृताः अभीशवः १[illegible]
२६५-७२ शुभं याताम् अनु रथाः अवृत्सत [illegible]
१७६ आ सूर्या इव विधतः रथं गात । [illegible]
२८९ रथं नु मारुतं वयं । [illegible]
२३८ [illegible] रथान् अनु । [illegible]
९१ रथेन वृषनाभिना । [illegible]
११२ [illegible] । रथेभिः यात [illegible]
२९७ [illegible] । [illegible] रथेभिः [illegible]
४४९ रथैः इव प्र भरे [illegible]
६० [illegible] । [illegible] रथैः [illegible]
[illegible] । [illegible] रथस्य [illegible]
[illegible] रथानां । [illegible]
[illegible] रथानां । [illegible]
३०५ [illegible] । [illegible] रथानाम्
[illegible] रथानां न ये अराः [illegible] १०,७८,४

[illegible]

२८१ रथः वाजी । प्र तं रथेषु चोदत ५,५६,७
२८९ नृम्णा शीर्षसु आयुधा रथेषु वः ५,५७,६
३५० ये तस्थुः । सुखेषु रुद्राः मरुतः रथेषु ५,६०,२
३५२ तन्वः पिपिश्रे श्रिये श्रेयांसः तवसः रथेषु ५,६०,४
३१३ विभ्राजन्ते रथेषु आ दिवि रुक्मः इव ५,६१,१२
९३ स्थिरा धन्वानि आयुधा रथेषु वः ८,२०,१२
३२९ यदि वहन्ति आशवः । भ्राजमानाः रथेषु आ ।
सा॰ ३५६

३१४ सः मारुतः गणः । त्वेषरथः अनेद्यः ५,६१,१३
२८५ स्वश्वाः स्थ सुरथाः पृश्निमातरः । स्वायुधाः ५,५७,२
२८४ सजोषसः । हिरण्यरथाः सुविताय गन्तन ५,५७,१

रथ-तुर्

३१४ ते नः अवन्तु रथतूः मनीषाम् १०,७७,८
१५२ पिशङ्गैः । शुभे कं यान्ति रथतूर्भिः अश्वैः १,८८,२

रथ-वत्

२९० गोमत् अश्ववत् रथवत् सुवीरं । राधः दद ५,५७,७

रथियन्ती

१६२ वनस्पतिः रथियन्ती इव प्र जिहीते ओषधिः १,१६६,५

रथी

२६२ विचेतसः । रायः स्याम रथ्यः वयस्वतः ५,५४,१३
३२५ सनन्यवः युयोतन । स्मत् रथ्यः न दंसना ५,८७,८
३६५ मा पश्चात् दघ्म रथ्यः विभागे ७,५६,२१
२१९ आशवः । दिधिषवः न रथ्यः सुदानवः १०,७८,५
३४० अनश्वः चित् यं अजति अरथीः ६,६६,७

रथे-शुभम्

६ अनर्वाणं रथेशुभं । कण्वाः अभि प्र गायत १,३७,१
२८३ तं वः शर्धं रथेशुभं त्वेषम् ५,५६,९

रद्

१६३ यत्र वः दिद्युत् रदति क्रिविर्दती १,१६६,६

रध्रः

२१३ यथा रध्रं पारयथ अति अंहः २,३४,१५
३६४ इमे रध्रं चित् मरुतः जुनन्ति । भृमिं चित् ७,५६,२०

रन्ध्रम्

७१ यत् परावतः । उक्ष्णः रन्ध्रं अयातन ८,७,२६

रपस्

१०७ क्षमा रपः मरुतः आतुरस्य नः । इष्कर्त ८,२०,२६

रप्शदूधस्

१०३ इन्धन्वभिः धेनुभिः रप्शदूधभिः । अध्वस्मभिः २,३४,५

रप्शिन्

११७ समोकसः संमिश्लासः तविषीभिः विरप्शिनः १,६४,१०
१४५ प्रत्वक्षसः प्रतवसः विरप्शिनः । अनानताः १,८७,१
१६५ जनं यं उग्राः तवसः विरप्शिनः १,१६६,८

रभ्

१८५ आ एषां अंसेषु रम्भिणी इव ररभे १,१६८,३

रभस्

१६७ वक्षःसु रुक्माः रभसासः अञ्जयः १,१६६,१०
२५२ ह्रादुनिवृतः । स्तनयदमाः रभसाः उदोजसः ५,५४,३
१५८ तत् नु वोचाम रभसाय जन्मने १,१६६,१

रभिष्ठ

२९६ पृश्नेः पुत्राः उपमासः रभिष्ठाः । सं मिमिक्षुः ५,५८,५

रम्

३६३ इमे तुरं मरुतः रमयन्ति । नि पान्ति ७,५६,१९
२२९ मारुतं गणं । नमस्य रमय गिरा ५,५२,१३
२६२ विचेतसः । अस्ते ररन्त मरुतः सहस्रिणम् ५,५४,१३
४८१ केन महा मनसा रीरमाम १,१६५,२; [इन्द्रः ३२५१]
२४२ क्रुमुः क्रुमुः । मा वः सिन्धुः नि रीरमत् ५,५३,९

रमतिः

२५५ अध स्म नः अरमतिं सजोषसः ५,५४,६

रम्भिणी

१८५ आ एषां अंसेषु रम्भिणी इव ररभे १,१६८,३

रयिः

१२२ वीरवन्तं । ऋतिषहं रयिं अस्मासु धत्त १,६४,१५
१३४ रयिं नः धत्त वृषणः सुवीरम् १,८५,१२
१९८ यथा रयिं सर्ववीरं नशामहै । अपत्यसाचं २,३०,११
२६३ यूयं रयिं मरुतः स्पार्हवीरं । ऋषिं अवथ ५,५४,१४
५८ आ नः रयिं मदच्युतं । इयर्त मरुतः ८,७,१३
११७ विश्ववेदसः रयिभिः समोकसः । संमिश्लासः १,६४,१०
२७४ यजत्राः । वयं स्याम पतयः रयीणाम् ५,५५,१०

रराणत्

१९३ रराणता मरुतः वेद्याभिः । नि हेळः धत्त १,१७१,१

रश्मिः

२६६ वावृधुः नरः । विरोकिणः सूर्यस्य इव रश्मयः ५,५५,३
५३ सृजन्ति रश्मिं ओजसा । पन्थां सूर्याय यातवे ८,७,८
४६२ आ ये तन्वन्ति रश्मिभिः १,१९,८; [अग्निः ३३४५]
१५० ते रश्मिभिः ते ऋक्वभिः सुखादयः १,८७,६

४११ यूयं धूर्षु प्रयुजः न **रश्मिभिः**। ज्योतिष्मन्तः १०,७७,५
३२२ **स्वारश्मानः** हिरण्ययाः। स्वायुधासः इष्मिणः ५,८७,५

रसः

४४१ ये आसिञ्चति **रसं** ओषधीषु। अथर्व० ४,२७,२
४४२ पयः धेनूनां **रसं** ओषधीनाम्। अथर्व० ४,२७,३
१० शर्धः मारुतं। जम्भे **रसस्य** ववृधे १,३७,५

रसा

२४२ मा वः **रसा** अनितभा कुभा क्रुमुः ५,५३,९

रा

३८७ इमा वः हव्या मरुतः **ररे** हि कम् ७,५९,५
१६० यस्मै ऊमासः अमृताः **अरासत**। रायः पोषम् १,१६६,३
१६९ वः दात्रं। जनाय यस्मै सुकृते **अराध्वम्** १,१६६,१२
३८६ पृतनासु मर्धति। यस्मै **अराध्वं** नरः ७,५९,४

राज्

२६६ यथा विद। बृहत् महान्तः उर्विया वि **राजथ** ५,५२,२
४६ प्र यत् वः त्रिष्टुभं इषं। वि पर्वतेषु **राजथ** ८,७,१
३८० युष्मोतः सम्राट् उत हन्ति वृत्रम् ७,५८,४
२९२ ये आश्वश्वाः उत ईशिरे अमृतस्य **स्वराजः** ५,५८,१
३९८ पिबन्ति अस्य मरुतः। उत **स्वराजः** अश्विना ८,९४,४

राजन्

१३० पृतनासु येतिरे। **राजानः** इव त्वेषसंदृशः नरः १,८५,८
४१५ **राजानः** न चित्राः सुसंदृशः। अरेपसः १०,७८,१
२५६ ऋषिं वा यं **राजानं** वा सुसूदथ ५,५४,७
२६३ यूयं धत्थ **राजानं** श्रुष्टिमन्तम् ५,५४,१४
२९५ यूयं **राजानं** इर्यं जनाय। जनयथ ५,५८,४

रात-हविस्

२०६ पिन्वते। जनाय **रातहविषे** महीं इषम् २,३४,८

रात-हव्यः

२४५ कस्मै अद्य सुजाताय। **रातहव्याय** प्र ययुः ५,५३,१२

रातिः

१८९ भद्रा वः **रातिः** पृणतः न दक्षिणा १,१६८,७
३६२ होता जोहवीति। सत्राचीं **रातिं** मरुतः गृणानः ७,५६,१८
४७८ देवासः पूषरातयः १,२३,८; [इन्द्रः ३२४८]
४१७ शिमीवन्तः। पितॄणां न शंसाः **सुरातयः** १०,७८,३

राधस्

२०९ यन्स्रुचः। ब्रह्मण्यन्तः शंस्यं **राधः** ईमहे २,३४,११
२३३ यमुनायां अधि। उत **राधः** गव्यं मृजे ५,५२,१७
,, यमुनायां अधि। नि **राधः** अश्व्यं मृजे ५,५२,१७
२४६ वः ईमहे। **राधः** विश्वायु सौभगम् ५,५३,१३
२९० सुवीरं। चन्द्रवत् **राधः** मरुतः दद नः ५,५७,७
१६४ प्र स्कम्भदेष्णाः अनवभ्र**राधसः** अलातृणासः १,१६६,७
२०२ पृषदश्वासः अनवभ्र**राधसः**। ऋजिप्यासः २,३४,४
२१६ पृषदश्वासः अनवभ्र**राधसः**। गन्तारः यज्ञम् ३,२६,६
२८८ सुदानवः। त्वेषसंदृशः अनवभ्र**राधसः** ५,५७,५
३८७ ओ सु घृष्वि**राधसः**। यातन अन्धांसि पीतये ७,५९,५
२९३ मयोभुवः। वन्दस्व विप्र तुवि**राधसः** नॄन् ५,५८,२

राध्य

४१२ संवरणस्य वस्वः। विदानासः वसवः **राध्यस्य** १०,७७,६

रामी

२१० उषाः न **रामीः** अरुणैः अप ऊर्णुते २,३४,१२

रिच्

४०९ ये दिवः। त्मना **रिरिच्रे** अभ्रात् न सूर्यः १०,७७,३

रिण्

१६३ **रिणाति** पश्वः सुधिता इव बर्हणा १,१६६,६
२७८ नि ये **रिणन्ति** ओजसा। गावः न ५,५६,४
२९७ क्षोदन्ते आपः **रिणते** वनानि। क्रन्दतु द्यौः ५,५८,६
७३ प्रष्टिः वहति। यान्ति शुभ्राः **रिणन्** अपः ८,७,२८

रिप्

३९४ ये वा **रिपः** दधिरे देवे अध्वरे ७,१०४,१८

रिपुः

२०७ **रिपुः** दधे वसवः रक्षत रिपः २,३४,९

रिशादस्

४६९ सुक्षत्रासः **रिशादसः** १,१९,५; [अग्निः २४४२]
११२ ईशानकृतः धुनयः **रिशादसः**। वातान् अक्रत १,६४,५
४५५ ते मन्दसानाः धुनयः **रिशादसः**। वामं धत्त ५,६०,७
४०९ पनस्यवः। **रिशादसः** न मर्याः अभिद्यवः १०,७७,३
४११ श्येनासः न स्वयशसः **रिशादसः** प्रवासः न १०,७७,५
३९ वः शत्रुः। न भूम्यां **रिशादसः** १,३९,४
३१७ नः वसूनि काम्या। पुरुचन्द्राः **रिशादसः** ५,६१,१६
३९१ सांतपनाः इदं हविः युष्माक ऊती **रिशादसः** ७,५९,९
४२३ हवामहे। मरुतः च **रिशादसः**। वा० य० ३,४४

रिष्

२५६ न स्रेधति न व्यथते न **रिष्यति** ५,५४,७
२५३ वि दुर्गाणि मरुतः न अह **रिष्यथ** ५,५४,४
८२ आ गन्त मा **रिषण्यत**। प्रस्थावानः ८,२०,१
२०७ रिपुः दधे वसवः रक्षत **रिषः** २,३४,९

४११ यूयं धूर्षु प्रयुजः न रश्मिभिः । ज्योतिष्मन्तः १०,७७,५
३२२ स्वारश्मानः हिरण्ययाः । स्वायुधासः इष्मिणः ५,८७,५

रसः

४४१ ये आसिञ्चाति रसं ओपधीषु । अथर्व० ४,२७,२
४४२ पयः धेनूनां रसं ओषधीनाम् । अथर्व० ४,२७,३
१० शर्धः मारुतं । जम्भे रसस्य वनृधे १,३७,५

रसा

२४२ मा वः रसा अनितभा कुभा क्रुमुः ५,५३,९

रा

३८७ इमा वः हव्या मरुतः ररे हि कम् ७,५९,५
१६० यस्मै ऊमासः अमृताः अरासत । रायः पोषम् १,१६६,३
१६९ वः दात्रं । जनाय यस्मै सुकृते अराध्वम् १,१६६,१२
३८६ पृतनासु मर्धति । यस्मै अराध्वं नरः ७,५९,४

राज्

२६६ यथा-विद । बृहत् महान्तः उर्विया वि राजथ ५,५२,२
४६ प्र यत् वः त्रिष्टुभं इषं । वि पर्वतेषु राजथ ८,७,१
३८० युष्मोतः सम्राट् उत हन्ति वृत्रम् ७,५८,४
२९२ ये आश्वश्वाः उत ईशिरे अमृतस्य स्वराजः ५,५८,१
३९८ पिबन्ति अस्य मरुतः । उत स्वराजः आश्विना ८,९४,४

राजन्

१३० पृतनासु येतिरे । राजानः इव त्वेषसंदृशः नरः १,८५,८
४१५ राजानः न चित्राः सुसंदृशः । अरेपसः १०,७८,१
२५६ ऋषिं वा यं राजानं वा सुसूदथ ५,५४,७
२६३ यूयं धत्थ राजानं श्रुष्टिमन्तम् ५,५४,१४
२९५ यूयं राजानं इर्यं जनाय । जनयथ ५,५८,४

रात-हविस्

२०६ पिन्वते । जनाय रातहविषे महीं इषम् २,३४,८

रात-हव्यः

२४५ कस्मै अद्य सुजाताय । रातहव्याय प्र ययुः ५,५३,१२

रातिः

१८९ भद्रा वः रातिः पृणतः न दक्षिणा १,१६८,७
३६२ होता जोहवीति । सत्राचीं रातिं मरुतः गृणानः ७,५६,१८
४७८ देवासः पूषरातयः १,२३,८; [इन्द्रः ३२४८]
४१७ शिमीवन्तः । पितृणां न शंसाः सुरातयः १०,७८,३

राधस्

२०९ यतस्रुचः । ब्रह्मण्यन्तः शंस्यं राधः ईमहे २,३४,११
२३३ यमुनायां अधि । उत् राधः गव्यं मृजे ५,५२,१७
,, यमुनायां अधि । नि राधः अश्व्यं मृजे ५,५२,१७
२४६ वः ईमहे । राधः विश्वायु सौभगम् ५,५३,१३
२९० सुवीरं । चन्द्रवत् राधः मरुतः दद नः ५,५७,७
१६४ प्र स्कम्भदेष्णाः अनवभ्रराधसः अलातृणासः १,१६६,७
२०२ पृषदश्वासः अनवभ्रराधसः । ऋजिप्यासः २,३४,४
२१६ पृषदश्वासः अनवभ्रराधसः । गन्तारः यज्ञम् ३,२६,६
२८८ सुदानवः । त्वेषसंदृशः अनवभ्रराधसः ५,५७,५
३८७ ओ सु घृष्विराधसः । यातन अन्धांसि पीतये ७,५९,५
२९३ मयोभुवः । वन्दस्व विप्र तुविराधसः नॄन् ५,५८,२

राध्य

४१२ संवरणस्य वस्वः । विदानासः वसवः राध्यस्य १०,७७,६

रामी

२१० उषाः न रामीः अरुणैः अप ऊर्णुते २,३४,१२

रिच्

४०९ ये दिवः । त्मना रिरिच्रे अभ्रात् न सूर्यः १०,७७,३

रिण्

१६३ रिणाति पश्वः सुधिता इव बर्हणा १,१६६,६
२७८ नि ये रिणन्ति ओजसा । गावः न ५,५६,४
२९७ क्षोदन्ते आपः रिणते वनानि । क्रन्दतु द्यौः ५,५८,६
७३ प्रष्टिः वहति । यान्ति शुभ्राः रिणन् अपः ८,७,२८

रिप्

३९४ ये वा रिपः दधिरे देवे अध्वरे ७,१०४,१८

रिपुः

२०७ रिपुः दधे वसवः रक्षत रिपः २,३४,९

रिशादस्

४६९ सुक्षत्रासः रिशादसः १,१९,५; [अग्निः २४४१]
११२ ईशानकृतः धुनयः रिशादसः । वातान् अक्रत १,६४,५
४५५ ते मन्दसानाः धुनयः रिशादसः । वामं धत्त ५,६०,७
४०९ पनस्यवः । रिशादसः न मर्याः अभिद्यवः १०,७७,३
४११ श्येनासः न स्वयशसः रिशादसः प्रवासः न १०,७७,५
३९ वः शत्रुः । न भूम्यां रिशादसः १,३९,४
३१७ नः वसूनि काम्या । पुरुचन्द्राः रिशादसः ५,६१,१६
३९१ सांतपनाः इदं हविः युष्माक ऊती रिशादसः ८,९४,१
४२३ हवामहे । मरुतः च रिशादसः । वा० य० ३,४४

रिष्

२५६ न सेधति न व्यथते न रिष्यति ५,५४,७
२५३ वि दुर्गाणि मरुतः न अह रिष्यथ ५,५४,४
८२ आ गन्त मा रिषण्यत । प्रस्थावानः ८,२०,१
२०७ रिपुः दधे वसवः रक्षत रिषः २,३४,९

रेज्

१८७ ऋष्टिविद्युतः । रेजति त्मना हन्वा इव जिह्वया १,१६८,५
१३ जुजुर्वान् इव विश्पतिः । भिया यामेषु रेजते १,३७,८
१४७ प्र एषां अज्मेषु विथुरा इव रेजते । भूमिः १,८७,३
४५० पृथिवी चित् रेजते पर्वतः चित् ५,६०,२
४५१ दिवः चित् सानु रेजते स्वने वः ५,६०,३
३४१ मारुताय स्वतवसे । रेजते अग्ने पृथिवि मखेभ्यः ६,६६,९
८६ वः अज्मन् आ । भूमिः यामेषु रेजते ८,२०,५
३७० ये रेजयन्ति रोदसी चित् उर्वी ७,५७,१
३०३ यूयं ह भूमिं किरणं न रेजथ ५,५९,४
३० विश्वं आ सद्म पार्थिवं अरेजन्त प्र मानुषाः १,३८,१०
३११ स्वनः न वः अमवान् रेजयत् वृषा ५,८७,५

रेजमानः

४९५ इन्द्रात् भिया मरुतः रेजमानः १,१७१,४
[इन्द्रः ३१६६]

रेणुः

१८६ अरेणवः तुविजाताः अचुच्यवुः दृळ्हानि चित् १,१६८,४
३३५ अरेणवः हिरण्ययासः एषां । साकं नृम्णैः ६,६६,२

रेपस्

२३६ नरः मर्याः अरेपसः । इमान् पश्यन् ५,५३,३
२८७ [illegible] अरेपसः । प्रत्वक्षसः ५,५७,४
३१५ [illegible] अरेपसः ५,६१,१४
४१७ [illegible] । [illegible] न मर्ताः अरेपसः १०,७८,१

रेभन्

४३३ रेभन् [illegible] १०,७७,१

रै

२०३ [illegible] रायः [illegible] ५,५४,७
३५० [illegible] रायः [illegible] ७,५७,६
६६ [illegible] रायि [illegible] ८,७,१८
१६० [illegible] रायः [illegible] १,१६६,३
२३३ [illegible] रायः [illegible] ५,५४,१३
३७३ [illegible] रायः [illegible] ७,५८,१०

रैवत:

३७१ [illegible] ७,६०,४

रोक:

३३६ [illegible] रोकः ६,६६,६

रोकिन्

२६७ वक्षुः नरः । विरोकिणः सूर्यस्य इव रश्मयः ५,५५,३
४१७ जिगत्नवः । अग्नीनां न जिह्वाः विरोकिणः १०,७८,३

रोचन

४०३ ये विश्वा पार्थिवानि । पप्रथन् रोचना दिवः ८,९४,९
४ आ गहि । दिवः वा रोचनात् अधि १,६,९
२७५ अव ह्वये । दिवः चित् रोचनात् अधि ५,५६,१
४७० ये नाकस्य अधि रोचने १,१९,६ [इन्द्रः १४४३]

रोचमानः

४९१ एव इत् एते प्रति मा रोचमानाः १,१६५,१२
[इन्द्रः ३१११]

रोचिस्

३११ येन सहन्तः ऋञ्जत स्वरोचिषः स्थारश्मानः ५,८७,५

रोदसी

११६ रोदसी आ वदत गणश्रियः । नृषाचः १,६४,९
१२३ रोदसी हि मरुतः चक्रिरे वृधे १,८५,१
१७५ न रोदसी अप नुदन्त घोराः १,१६७,४
१७६ विषितस्तुका रोदसी नृमनाः । रथं गात् १,१६७,५
२३९ वि पर्जन्यं सृजन्ति रोदसी अनु ५,५३,६
२८१ पुरूणि बिभ्रती । सचा मरुत्सु रोदसी ५,५६,८
३१३ येषां श्रिया अभि रोदसी । विभ्राजन्ते ५,६१,१२
३३१ धृष्णुसेनाः । उभे युजन्त रोदसी सुमेके ६,६६,६
,, अध स्म एषु रोदसी स्वशोचिः ६,६६,६
३४० नि रोदसी पथ्याः याति साधन् ६,६६,७
३६१ मरुतः मृळन्तु वरिवस्यन्तः रोदसी सुमेके ७,५६,२१
३७० ये रेजयन्ति रोदसी चित् उर्वी ७,५७,१
३७१ आ रोदसी विश्वपिशः पिशानाः ७,५७,३
३७७ उत क्षोदन्ति रोदसी महित्वा नक्षन्ते नाकम् ७,५८,१
६१ ये द्रप्साः इव रोदसी । धमन्ति अनु वृष्टिभिः ८,७,१६
८१ [illegible] । उभे युजन्त रोदसी ८,२०,४
४०५ [illegible] नु ये वि रोदसी । [illegible] ८,९४,११
१८३ आ वः अर्वाचः सुविताय रोदस्योः [illegible] १,१६८,९

रोधस्वती

३१ [illegible] रोधस्वतीः अनु । [illegible] १,३८,११

रोहितः

४१, ७३ [illegible] रोहितः १,३९,६ ८,७,२८

वनस्पतिः

१६६ [illegible] वनस्पतिः १,१६६,५
८६ [illegible] । [illegible] वनस्पतिः ८,२०,५
७८ प्र वेपयन्ति पर्वतान् वि विञ्चन्ति वनस्पतीन् १,३९,५

वनिन्

३६३ [illegible] । [illegible] वनिनः सचन्त ७,५६,२५
११३ [illegible] वनिनं [illegible] । [illegible] १,६४,१२
३८ वि याथन वनिनः पृथिव्याः । वि आशाः १,३९,३

वनुष्यत्

३६१ इमे शंसं वनुष्यतः नि पान्ति ७,५६,२३

वन्द्

३१ वन्दस्व मारुतं गणं । त्वेषं पनस्युम् १,३८,१५
२३३ महित्वना । वन्दस्व विप्र तुविराधसः नॄन् ५,५८,२
९१ तान् वन्दस्व मरुतः तान् उप स्तुहि ८,२०,१४
१०१ सुभगस्य [illegible] । वन्दस्व मरुतः अह ८,२०,२०

वन्दितृ

११३ [illegible] सुषाम वन्दितारं । [illegible] १,३९,१५

वन्यः

१८४ आपः [illegible] वन्यासः न उग्राः १,१६८,२

वन्धुरः

११२ आ वन्धुरेषु अमतिः न दर्शता १,६४,९

वप्

४१ वपन्ति मरुतः मिहं । प्र वेपयन्ति पर्वतान् ८,७,४
३४७ अभि स्वपूभिः मिथः वपन्त । वातस्वनसः ७,५६,३

वपुः

३३४ वपुः नु तत् चिकितुषे चित् अस्तु ६,६६,१
१११ चित्रैः अञ्जिभिः वपुषे वि अञ्जते १,६४,४

वयस् [पक्षिन्]

१४ स्थिरं हि जानं । वयः मातुः निरेतवे १,३७,९
१२९ वयः न सीदन् अधि बर्हिषि प्रिये १,८५,७
१४६ अचिध्वं । वयः इव मरुतः केन चित् पथा १,८७,२
१५१ नः इषा । वयः न पप्तत सुमायाः १,८८,१
१६७ वयः न पक्षान् वि अनु श्रियः धिरे १,१६७,१०
३०६ वयः न ये श्रेणीः पप्तुः ओजसा ५,५९,७
४४४ ये वा वयः मेदसा संसृजन्ति । अथर्व० ४,२७,५

वयस् [अन्नम्]

९४ एकं इत् भुजे वयः न पित्र्यं सहः ८,२०,१३
८२ [illegible] । [illegible] वयः ८,७,३१
४२३ [illegible] वयः [illegible] १०,७७,७

वयस् [वर्ष, आयुः]

२६५ [illegible] । [illegible] वयः [illegible] ५,५५,१
३३४ [illegible] वयांसि ७,१०४,१८
३७३ [illegible] वयः [illegible] ७,५८,३
४८० [illegible] वयः [illegible] १,१६५,१

[[illegible] ३९५०]

वयस्वत्

२६१ [illegible] । [illegible] वयस्वतः ५,५३,१३

वया

२७१;२८१;२९२ आ इषा यासीष्ट तन्वे वयाम् १,१६६,१५;
१६७,११;१६८,१०

वयुनम्

१०२ अनवभ्रराधसः । [illegible] न वयुनेषु भूर्वणः २,३४,४

वयो-वृध्

२११ उरुक्षयाः । वयोवृधः अश्वयुजः परिज्रयः ५,५४,२

वर

१५१ ते अरुणेभिः वरं आ पिशङ्गैः । अश्वैः १,८८,२
३८४ मही: इषः । यः वः वराय दाशति ७,५९,२
४५१ वराः इव इत् रैवतासः हिरण्यैः । तन्वः पिपिश्रे५,६०,४
१९९ धारावराः मरुतः धृष्णोजसः । मृगाः न २,३४,१

वरणम्

४१२ यूयं महः संवरणस्य वस्वः । विदानासः १०,७७,६

वराहुः

१५५ हिरण्यचक्रान् अयोदंष्ट्रान् विधावतः वराहून् १,८८,५

वरिवस्यन्

३६१ मरुतः मृळन्तु । वरिवस्यन्तः रोदसी सुमेके ७,५६,१७

वरुणः

३६९ तत् नः इन्द्रः वरुणः मित्रः अग्निः ७,५६,२५
३९९ पिबन्ति मित्रः अर्यमा । तना पूतस्य वरुणः ८,९४,५
३८३ तस्मै अग्ने वरुण मित्र अर्यमन् । शर्म यच्छत ७,५९,१
३३० इन्द्रं न सुक्रतुं । वरुणं इव मायिनम् ६,४८,१४
१७९ पान्ति मित्रावरुणौ अवद्यात् । चयते ईम् १,१६७,८

वरूथम्

२१२ तान् इयानः महि वरूथं ऊतये २,३४,१४

संकलन पृष्ठ १,२,२

या १,१३५,१ [[illegible]]

[illegible]

[illegible] [illegible] ५,५९,१० [illegible]

६६ [illegible] ८,२०,१८

वह्

[illegible] [illegible] १,३९,६

७३ [illegible] ८,७,२८

१०८ [illegible] १,१६७,७

२६६ [illegible] ओहते ५,५२,१०

२६७ [illegible] ओहते । [illegible] ओहते ५,५२,११

७६ [illegible] । [illegible] ओहते ८,७,३१

७८३ [illegible] १,१६१,४

[[illegible]]

८२ [illegible] ८,२०,३१

४२६ [illegible] । [illegible]

४४३ [illegible] । [illegible] ४,२७,४

८८ [illegible] । वहन्ते [illegible] ८,२०,७

२६९ [illegible] । वहन्ते । [illegible] ५,५८,१

३१२ [illegible] वहन्ते [illegible] । [illegible] ५,६१,११

२४६ [illegible] । [illegible] वहध्वे [illegible] ५,५३,१३

४२६ प [illegible] वहध्वे [illegible] । १०,७७,६

४५५ [illegible] वहध्वे [illegible] अभि स्तुभिः ५,६०,७

११० अमोभिनः । वक्षथुः अभिणासः पर्वताः इव १,६४,३

२०२ युधे वा विश्वा भुवना ववक्षिरे । [illegible] २,३४,४

१२८ आ वः वहन्तु सप्तयः रघुस्यदः । रघुपत्वानः १,८५,६

१०४ मारुतस्य नः आ भेषजस्य वहत सुदानवः ८,२०,२३

वहिष्ठ

२८० अजिरा धुरि वोळ्हवे । वहिष्ठा वोळ्हवे ५,५६,६

वह्निः

२९५ अवस्युः माता मघोनां । युक्ता वह्निः रथानाम् ८,९४,१

४७५ गुहा चित् इन्द्र वह्निभिः १,६,५[इन्द्रः३२४५]

वा

(४)१,६,९;(१३६-३७;१४२) १,८६,२(द्विः)-३,८; (१६२) १,१६६,५; (१७३)१,१६७,२; (२०२;२०८) २,३४,४,१०; (२२३;२३०)५,५२,७(द्विः),१४; (२३४)५,५३,१; (२५६) ५,५४,७(द्विः);(४५४)५,६०,६(त्रिः);(३३२)६,४८,२०(द्विः); (३४१)६,६६,८; (३९४)७,१०४,१८;(९६-९७)८,२०,१५-१६;(४४४)अथर्व०४,२७,५

वा (गतिगन्धनयोः)

४६२ वि द्योततां वाताः वान्तु दिशोदिशः । अथर्व० ४,१५,८

वाघत्

१५८ [illegible] वाघतः [illegible] वाणी १,८८,६

वाच्

१७४ [illegible] वाचं १,१६७,३

१३० [illegible] । [illegible] वाचं [illegible] १,१६८,८

२१० [illegible] वाचं । [illegible] ५,५४,१

४०७ [illegible] वाचा [illegible] १०,७७,१

३८२ [illegible] वाचि [illegible] ७,५८,६

वाज

२२४ [illegible] वाजाः [illegible] ३,२६,४

१२० [illegible] वाजं [illegible] १,६४,१३

२६३ [illegible] वाजं । [illegible] ५,५४,१३

३६७ [illegible] वाजं [illegible] ७,५६,२३

४४० प इमं वाजं वाजसाते अवन्तु । अथर्व०४,२७,१

३७४ [illegible] वाजेभिः [illegible] नः ७,५७,५

१२७ [illegible] वाजे अद्रिं मरुतः रंहयन्तः १,८५,५

७८ आ [illegible] वरुणं चित्रवाजान् ८,७,३३

३२१ भरद्वाजाय अव धुक्षत द्विता ६,४८,१३

वाज-पेशस्

२०४ [illegible] वाजपेशसम् २,३४,६

वाजयत्

४४१ रथैः इव प्र भरे वाजयद्भिः सोमं कृण्याम् ५,६०,१

वाज-सातम्

४४० प्र इमं वाजं वाजसाते अवन्तु । अथर्व०४,२७,१

वाज-सातिः

९७ अभि सः द्युम्नैः उत वाजसातिभिः ८,२०,१६

३४१ मरुतः यं अवथ वाजसातौ । सः व्रजं दर्ता ६,६६,८

वाजिन् (अश्वः)

२८१ उत स्यः वाजी अरुषः तुविस्वनिः ५,५६,७

वाजिन् (बलवान्,अन्नवान् वा)

११३ अत्यं न मिहे वि नयन्ति वाजिनम् १,६४,६

२०५ तं नः दात मरुतः वाजिनं रथे २,३४,७

१३७ उत वा यस्य वाजिनः । अनु विप्रं अतक्षत १,८६,३

३५९ अधीव इत्था विप्रस्य वाजिनः हवीमन् ७,५६,१५

९७ यस्य वा यूयं प्रति वाजिनः नरः ८,२०,१६

वाणः

८९ गोभिः वाणः अज्यते सोभरीणां । रथे ८,२०,८

१३२ धमन्तः वाणं मरुतः सुदानवः रण्यानि चक्रिरे १,८५,१०

...य दिवः विमहसः १,८६,१

...ः जिगाति शेवृधः नृभिः५,८७,ह

...त्रिने ५,५३,७

वि--क्षिप्

४२६-१ अभियुग्वा च **विक्षिपः** स्वाहा । वा०य०३९,७

विच्

४० प्र वेपयन्ति पर्वतान् वि **विञ्चन्ति** वनस्पतीन् १,३९,५

विचर्षणिः

११९ धृषुं पावकं वनिनं **विचर्षणिं** । गृणीमसि १,६४,१२
१११ धनस्पृतं उक्थ्यं **विश्वचर्षणिं** । तोकं पुष्येम १,६४,१०

वि-चेतस्

२६२ युष्मादत्तस्य मरुतः **विचेतसः** । रायः स्याम ५,५४,१३

वि-जानुस्

४०७ प्रुप वसु हविष्मन्तः न यज्ञाः **विजानुषः** १०,७७,१

वि-तत

२६१ अतित्विषन्तः यत् । स्वरन्ति घोषं **विततं** ऋतयवः ५,५४,१२
२६० शिप्राः शीर्षसु **वितताः** हिरण्ययीः ५,५४,११

विथुर

१४७ प्र एषां अज्मेषु **विथुरा** इव रेजते । भूमिः १,८७,३
१८८ यत् च्यवयथ **विथुरा** इव संहितं । व्येपं अर्णवम् १,१६८,६
१४५ विराप्शिनः अनानताः **अविथुराः** ऋजीषिणः १,८७,१

विथुर्यति [नामधातुः]

४१० यामनि । **विथुर्यति** न मही श्रथर्यति १०,७७,४

विद् [ज्ञाने]

२३४ कः **वेद** जानं एषां । यत् युयुज्रे किलास्यः ५,५३,१
३१५ कः **वेद** नूनं एषां । यत्र मदन्ति धूतयः ५,६१,१४
३४६ नकिः हि एषां जनूंषि **वेद** ते ७,५६,२
१६४ **विदुः** वीरस्य प्रथमानि पौंस्या १,१६६,७
३०६ अश्वासः एषां उभये यथा **विदुः** ५,५९,७
४६७ ये महः रजसः **विदुः** १,१९,३ [अग्निः २४४०]
८४ **विद्म** हि रुद्रियाणां । शुष्मं उग्रम् ८,२०,३
३३६ **विदे** हि माता महः मही सा ६,६६,३
३४६ वेद ते । अङ्ग **विद्रे** मिथः जनित्रम् ७,५६,२
१४२ स्वेदस्य सत्यशवसः **विद** कामस्य वेनतः १,८६,८
४५४ अस्य । अग्ने **वित्तात्** हविषः यत् यजाम ५,६०,६

विद् [लाभे]

२६६ स्वयं दधिध्वे तविषीं यथा **विद** ५,५५,२
१५० अभीरवः । **विद्रे** प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः १,८७,६

१७२;१८२;१९२;४९७ **विद्याम** इषं वृजनं जीरदानुम् १,१६६,१५;१६७,११;१६८,१०;१७१,६ [इन्द्रः ३२६८]
४७५ गुहा चित् । **अविन्दः** उस्रियाः अनु १,६,५ [इन्द्रः ३२८५]
४५७ मा नः **विदत्** अभिभाः मो अशस्तिः । अथर्व० १,२०,१
४५७ मा नः **विदत्** वृजिना द्वेष्या या । अथर्व० १,२०,१
३३१ चर्षणिभ्यः आ । **सुवेदा** नः वसु करत् ६,४८,१५

विद् [सत्तायाम्]

३९ नहि वः शत्रुः **विविदे** अधि द्यवि १,३९,४

विदथम्

३०१ अन्तः महे **विदथे** येतिरे नरः ५,५९,२
१०८ गिरः । सं अञ्जे **विदथेषु** आभुवः १,६४,१
११३ सुदानवः । पयः घृतवत् **विदथेषु** आभुवः १,६४,६
१२३ सुदंससः मदन्ति । वीराः **विदथेषु** घृष्वयः १,८५,१
१५९ क्रीळन्ति क्रीळाः **विदथेषु** घृष्वयः १,१६६,२
१६४ अनवभ्रराधसः । अलातृणासः **विदथेषु** सु-स्तुताः १,१६६,७
१७७ शुभे निमिश्लां **विदथेषु** पज्राम् १,१६७,६
२१६ अनवभ्रराधसः । गन्तारः यज्ञं **विदथेषु** धीराः ३,२६,६
३७१ अस्माकं अद्य **विदथेषु** बर्हिः । सदत ७,५७,२
४२८ शुभंयावानः **विदथेषु** जग्मयः । वा० य० ३५,२०

विदथ्य

१७४ सभावती **विदथ्या** इव सं वाक् १,१६७,३

विदद्वसुः

२ अच्छ **विदद्वसुं** गिरः महां अनूषत श्रुतम् १,६,६

विदानः

४८८ न त्वावान् अस्ति देवता **विदानः** १,१६५,९ [इन्द्रः ३२५८]
४८९ अहं हि उग्र मरुतः **विदानः** १,१६५,१० [इन्द्रः ३२५९]
४१२ संवरणस्य वस्वः **विदानासः** वसवः राध्यस्य १०,७७,६
४६४ अपां अग्निः तनूभिः **संविदानः** । अथर्व० ४,१५,१०

विदित

४४६ तिग्मं अनीकं **विदितं** सहस्वत् । अथर्व० ४,२७,७

विभ्वन्

३१९ ये जाताः महिना । प्र **विभ्वना** ब्रुवते एवयामरुत् ५,८७,१

वि-रप्शिन्

१६७ समोकसः संमिश्लासः तविषीभिः विरप्शिनः १,६४,१०
१८५ प्रत्वक्षसः प्रतवसः विरप्शिनः । अनानताः १,८७,१
१६५ जनं यं उग्राः तवसः विरप्शिनः १,१६६,८

विरुक्मत्

१९५ गोमातरः । तनूषु शुभ्राः दधिरे विरुक्मतः १,८५,३

वि-रोकिन्

२६७ वावृधुः नरः विरोकिणः सूर्यस्य इव रश्मयः ५,५५,३
४१७ जिगत्नवः । अग्नीनां न जिह्वाः विरोकिणः १०,७८,३

वि-वच्

१७८ प्र तं विवक्मि वक्म्यः यः एषां । महिमा १,१६७,७

वि-वस्

३४४ भ्राजदृष्टि । रुद्रस्य सूनुं हवसा आ विवासे ६,६६,११
३८१ तान् आ रुद्रस्य मीळ्हुषः विवासे ७,५८,५

विश्

३४९ सा विट् सुवीरा मरुद्भिः अस्तु ७,५६,५
४२७ दैवीः विशः मरुतः अनुवर्त्मानः अभवन् । वा० य० १७,८६
४२७ दैवीः च विशः मानुषीः च । वा० य० १७,८६
२७५ विशः अद्य मरुतां अव ह्वये ५,५६,१
४० मरुतः दुर्मदाः इव । देवासः सर्वया विशा १,३९,५
१९७ तृणस्कन्दस्य नु विशः परि वृङ्क्त १,१७२,३
३६६ इनन्त मन्युभिः शूराः यह्वीषु ओषधीषु विक्षु ७,५६,२२
३९४ वि तिष्ठध्वं मरुतः विक्षु इच्छत ७,१०४,१८

विश्पतिः

१३ जुजुर्वान् इव विश्पतिः । भिया यामेषु रेजते १,३७,८

विश्व

१६२ विश्वः वः अज्मन् भयते वनस्पतिः १,१६६,५
३७८ विश्वः वः यामन् भयते स्वर्दृक् ७,५८,२
४६७ विश्वे देवासः अद्रुहः १,१९,३; [अग्निः २४४०]
४७८ विश्वे मम श्रुत हवम् १,२३,८; [इन्द्रः ३२४८]
२२० विश्वे ये मानुषा युगा । पान्ति मर्त्यम् ५,५२,४
२९४ वृष्टिं ये विश्वे मरुतः जुनन्ति ५,५८,३
३७६ आ स्तुतासः मरुतः विश्वे ऊती ७,५७,७
३८५ मरुतः सुते सचा । विश्वे पिबत कामिनः ७,५९,३
३९६ यस्याः देवाः उपस्थे । व्रता विश्वे धारयन्ते ८,९४,२
३९७ तत् सु नः विश्वे अर्यः आ । सदा गृणन्ति ८,९४,३
४२८ विश्वे नः देवाः अवसा आ गमन् इह । वा० य० ३५,२१
१९५ गोमातरः । बाधन्ते विश्वं अभिमातिनं अप १,८५,३
१४४ वि यात विश्वं अत्रिणं ज्योतिः कर्त १,८६,१०
३६४ यात विश्वं तनयं तोकं अस्मे ७,५६,२०
४८५ विश्वस्य शत्रोः अनमं वधस्नैः १,१६५,६ [इन्द्रः ३२५५]
२८० विश्वा वः श्रीः अधि तनूषु पिपिशे ५,५७,६
१३९ विश्वाः यः चर्षणीः अभि सस्रुषीः इषः १,८६,५
२७० विश्वाः इत् स्पृधः मरुतः वि अस्यथ ५,५५,६
१०२ सुषिता इव हर्म्यः । विश्वासु पृत्सु होतृषु ८,२०,२०
४३९ वृष्टिः या विश्वाः निवतः पृणाति । अथर्व० ६,२२,३
२० वयं एषां । विश्वं चित् आयुः जीवसे १,३७,१५
३० विश्वं आ सद्म पार्थिवं अरेजन्त प्र मानुषाः १,३८,१०
३८९ विश्वं शर्धः अभितः मा नि सेद ७,५९,७
१३० भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यः । राजानः इव १,८५,८
१६१ भयन्ते विश्वा भुवनानि हर्म्या १,१६६,४
४९४ अहानि विश्वा मरुतः जिगीषा १,१७१,३ [इन्द्रः३२६५]
४३७ त्रायन्तां विश्वा भूतानि । अथर्व० ४,१३,४
२३ क्व सुविता । क्वो विश्वानि सौभगा १,३८,२
१६३ विश्वानि भद्रा मरुतः रथेषु वः १,१६६,९
१०७ विश्वं पश्यन्तः बिभृथ तनूषु आ ८,२०,२६
११० दृळ्हा चित् विश्वा भुवनानि पार्थिवा १,६४,३
२०२ पृक्षे ता विश्वा भुवना ववक्षिरे । जीरदानवः २,३४,४
४०३ आ ये विश्वा पार्थिवानि । पप्रथन् रोचना ८,९४,९
३७५ व्यन्तु । विश्वेभिः नामभिः नरः हवींषि ७,५७,६
२७२ विश्वस्य तस्य भवथ नवेदसः ५,५५,८

विश्व-कृष्टिः

२१५ अग्निश्रियः मरुतः विश्वकृष्टयः । वर्पनिर्णिजः ३,२६,५

विश्व-चन्द्रः

४८७ अहं एताः मनवे विश्वचन्द्राः १,१६५,८ [इन्द्रः३२५७]

विश्व-दोहस्

३२९ धेनुं च विश्वदोहसं इषं च ६,४८,१३

विश्व-धायस्

५८ रयिं मदच्युतं । पुरुक्षुं विश्वधायसम् ८,७,१३

विश्व-पिश्

३७२ आ रोदसी इति विश्वपिशः पिशानाः । अञ्जि अञ्जते ७,५७,३

वि-रप्शिन्

११७ समोकसः संमिश्लासः तविषीभिः विरप्शिनः १,६४,१०
१४५ प्रत्वक्षसः प्रतवसः विरप्शिनः । अनानताः १,८७,१
१६५ जनं यं उग्राः तवसः विरप्शिनः १,१६६,८

विरुक्मत्

१२५ गोमातरः । तनूषु शुभ्राः दधिरे विरुक्मतः १,८५,३

वि-रोकिन्

२६७ वव्रधुः नरः विरोकिणः सूर्यस्य इव रश्मयः ५,५५,३
४१७ जिगत्नवः । अग्नीनां न जिह्वाः विरोकिणः १०,७८,३

वि-वच्

१७८ प्र तं विवक्मि वक्म्यः यः एषां । महिमा १,१६७,७

वि-वस्

३४४ आजद्दष्टिं । रुद्रस्य सूनुं हवसा आ विवासे ६,६६,११
३८१ तान् आ रुद्रस्य मीळ्हुषः विवासे ७,५८,५

विश्

३४९ सा विट् सुवीरा मरुद्भिः अस्तु ७,५६,५
४२७ दैवीः विशः मरुतः अनुवर्त्मानः अभवन् । वा० य० १७,८६
४२७ दैवीः च विशः मानुषीः च । वा० य० १७,८६
२७५ विशः अद्य मरुतां अव ह्वये ५,५६,१
४० मरुतः दुर्मदाः इव । देवासः सर्वया विशा १,३९,५
१९७ तृणस्कन्दस्य नु विशः परि वृङ्क्त १,१७२,३
३६६ हनन्त मन्युभिः शूराः यह्वीषु ओषधीषु विक्षु ७,५६,२२
३९४ वि तिष्ठध्वं मरुतः विक्षु इच्छत ७,१०४,१८

विश्पतिः

१३ जुजुर्वान् इव विश्पतिः । भिया यामेषु रेजते १,३७,८

विश्व

१६२ विश्वः वः अज्मन् भयते वनस्पतिः १,१६६,५
३७८ विश्वः वः यामन् भयते स्वर्दृक् ७,५८,२
४६७ विश्वे देवासः अद्रुहः १,१९,३; [अग्निः २४४०]
४७८ विश्वे मम श्रुत हवम् १,२३,८; [इन्द्रः ३२४८]
२२० विश्वे ये मानुषा युगा । पान्ति मर्त्यम् ५,५२,४
२९४ वृष्टिं ये विश्वे मरुतः जुनन्ति ५,५८,३
३७६ आ स्तुतासः मरुतः विश्वे ऊती ७,५७,७
३८५ मरुतः सुते सचा । विश्वे पिबत कामिनः ७,५९,३
३९६ यस्याः देवाः उपस्थे । व्रता विश्वे धारयन्ते ८,९४,२
३९७ तत् नु नः विश्वे अर्यः आ । सदा गृणन्ति ८,९४,३
४२८ विश्वे नः देवाः अवसा आ अगमन् इह । वा० य० २५,२१
१२५ गोमातरः । बाधन्ते विश्वं अभिमातिनं अप १,८५,३
१४४ वि यात विश्वं अत्रिणं ज्योतिः कर्त १,८६,१०
३६४ धत्त विश्वं तनयं तोकं अस्मे ७,५६,२०
४८५ विश्वस्य शत्रोः अनमं वधस्नैः १,१६५,६ [इन्द्रः ३२५५]
२८९ विश्वा वः श्रीः अधि तनूषु पिपिशे ५,५७,६
१३९ विश्वाः यः चर्षणीः अभि सस्रुषीः इषः १,८६,५
२७० विश्वाः इत् स्पृधः मरुतः वि अस्यथ ५,५५,६
१०१ मुष्टिहा इव हव्यः । विश्वासु पृत्सु होतृषु ८,२०,२०
४३९ वृष्टिः या विश्वाः निवतः पृणाति । अथर्व० ६,२२,३
२० वयं एषां । विश्वं चित् आयुः जीवसे १,३७,१५
३० विश्वं आ सद्म पार्थिवं अरेजन्त प्र मानुषाः १,३८,१०
३८९ विश्वं शर्धः अभितः मा नि सेद ७,५९,७
१३० भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यः । राजानः इव १,८५,८
१६१ भयन्ते विश्वा भुवनानि हर्म्या १,१६६,४
४९४ अहानि विश्वा मरुतः जिगीषा १,१७१,३ [इन्द्रः३२६५]
४३७ त्रायन्तां विश्वा भूतानि । अथर्व० ४,१३,४
२३ क्व सुविता । क्वो विश्वानि सौभगा १,३८,२
१६६ विश्वानि भद्रा मरुतः रथेषु वः १,१६६,९
१०७ विश्वं पश्यन्तः बिभृथ तनूषु आ ८,२०,२६
११० दृळ्हा चित् विश्वा भुवनानि पार्थिवा १,६४,३
२०२ पृक्षे ता विश्वा भुवना ववक्षिरे । जीरदानवः २,३४,४
४०३ आ ये विश्वा पार्थिवानि । पप्रथन् रोचना ८,९४,९
३७५ व्यन्तु । विश्वेभिः नामभिः नरः हवींषि ७,५७,६
२७२ विश्वस्य तस्य भवथ नवेदसः ५,५५,८

विश्व-कृष्टिः

२१५ अभिश्रियः मरुतः विश्वकृष्टयः । वर्पनिर्णिजः ३,२६,५

विश्व-चन्द्रः

४८७ अहं एताः मनवे विश्वचन्द्राः १,१६५,८ [इन्द्रः ३२५७]

विश्व-दोहस्

३२९ धेनुं च विश्वदोहसं इषं च ६,४८,१३

विश्व-धायस्

५८ रयिं मदच्युतं । पुरुक्षुं विश्वधायसम् ८,७,१३

विश्व-पिश्

३७२ आ रोदसी इति विश्वपिशः पिशानाः । अभि अञ्जि ७,५७,३

वृ [वरणे]

८०१ देवानां अवः वृणे । मना न दस्मवर्चसाम् ८,९४,८
५१ तनाय कं । रुद्राः अवः वृणीमहे १,३९,७

वृ [आवरणे]

२७१ न पर्वताः न नद्यः वरन्त वः । गच्छथ इत ५,५५,७
१९९ भूमिं धमन्तः अप गाः अवृणत २,३४,१

वृक-ताति

२०७ यः नः मरुतः वृकताति मर्त्यः । रिपुः दधे २,३४,९

वृक्त-बर्हिस्

२१ पिता पुत्रं न हस्तयोः । दधिध्वे वृक्तबर्हिषः १,३८,१
६५ क्व नूनं सुदानवः मदथ वृक्तबर्हिषः ८,७,२०
६६ स्तोमेभिः वृक्तबर्हिषः । शर्धान् ऋतस्य जिन्वथ ८,७,२१

वृक्तिः

१०८ नोधः सुवृक्तिं प्र भर मरुद्भ्यः १,६४,१
१८३ महे ववृत्यां अवसे सुवृक्तिभिः १,१६८,१

वृक्षः

२५५ यत् अर्णवं । मोषथ वृक्षं कपना इव वेधसः ५,५४,६

वृजनम्

१७९;१८२;१९२;४९७ विद्याम इषं वृजनं जीरदानुम्
१,१६६,१५;१६७,११;१६८,१०;१७१,६
[इन्द्रः ३२६८]
२६१ सं अच्यन्त वृजना अतित्विषन्त यत् ५,५४,१२
१७१ आ यत् ततनन् वृजने जनासः १,१६६,१४
२२३ उरौ अन्तरिक्षे आ वृजने वा नदीनाम् ५,५२,७
२०५ इषं स्तोतृभ्यः वृजनेषु कारवे । सनिं मेधाम् २,३४,७

वृजिनम्

४५७ मा नः विदत् वृजिना द्वेष्या या । अथर्व० १,२०,१

वृञ्ज्

१९७ तृणस्कन्दस्य नु विशः परि वृङ्क्त १,१७२,३

वृण्

३९३ कवयः सूर्यत्वचः यज्ञं मरुतः आ वृणे ७,५९,११

वृत्

२४० सध्वनः विमोचने । वि यत् वर्तन्ते एन्यः ५,५३,७
४८१ कः अध्वरे मरुतः आ ववर्त १,१६५,२ [इन्द्रः ३२५१]
१६६ अक्षः वः चक्रा समया वि ववृते १,१६६,९
४९३ ओ सु वर्त्त मरुतः विप्रं अच्छ १,१६५,१४
[इन्द्रः ३२६३]
२०७ वर्तयत तपुषा चक्रिया अभि तम् २,३४,९
३८ स्थिरं हथ । नरः वर्तयथ गुरु १,३९,३
३१७ पुरुश्चन्द्राः रिशादसः आ यज्ञियासः ववृत्तन ५,६१,१६
१३१ सुकृतं हिरण्ययं । सहस्रभृष्टिं स्वपाः अवर्तयत् १,८५,९
२६५-२७३ शुभं यातां अनु रथाः अवृत्सत ५,५५,१-९
३८३ अभि वः आ अवर्त् सुमतिः नवीयसी ७,५९,२
१८३ महे ववृत्यां । अवसे सुवृक्तिभिः १,१६८,१
७८ आ नक्षस्य सुविताय ववृत्यां चित्रवाजान् ८,७,३३
२४२ अश्वया चित् मुहुः आ पर्ववृतः ५,५२,३

वृत

१३८ युवा गणः । अया ईशानः तविषीभिः आवृतः १,८७,४

वृत्रः

४७९ हत वृत्रं सुदानवः १,२३,९ [इन्द्रः ३३३१]
१३१ अहन् वृत्रं निः अपां औब्जत् अर्णवम् १,८५,९
४८७ वधीं वृत्रं मरुतः इन्द्रियेण १,१६५,८ [इन्द्रः ३२५७]
३८० शुष्मेतः सम्राट् उत हन्ति वृत्रम् ७,५८,४
६८ वि वृत्रं पर्वशः ययुः । वि पर्वतान् ८,७,२३

वृत्र-तूर्यम्

६९ शुष्मं आवन् उत क्रतुं अनु इन्द्रं वृत्रतूर्ये ८,७,२४

वृत्र-ह

३३३ मरुतः वृत्रहं शवः । ज्येष्ठं वृत्रहं शवः ६,४८,२१

वृथा

१५६ वाघतः न वाणी अस्तोभयत् वृथा आसन् १,८८,६
१८६ अव स्ववृत्तः दिवः आ वृथा ययुः १,१६८,४
२७८ रिणन्ति ओजसा । वृथा गावः न दुर्धुरः ५,५६,४
९१ आ श्येनासः न पक्षिणः वृथा नरः ८,२०,१०

वृद्धः

४११ पर्वतः चित् महि वृद्धः बिभाय ५,६०,३
३५ वन्दस्व मारुतं गणं । अस्मे वृद्धाः असन् इह १,३८,१५
४८८ यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध १,१६५,९ [इन्द्रः ३२५८]

वृद्ध-शवस्

३२३ अपारः वः महिमा वृद्धशवसः । त्वेषं शवः ५,८७,६

वृध्

३७३ ये नः त्मना शतिनः वर्धयन्ति ७,५७,७
१० यत् शर्धः मारुतं । जम्भे रसस्य ववृधे १,३७,५
१७२ ववृधे ईं मरुतः दातिवारः १,१६७,८
२११ अग्निभिः । स्तवाः ऋतस्य सदनेषु ववृधुः २,३४,१३

२६७ श्रिये चित् आ प्रतरं ववृधुः नरः ५,५५,३
३०४ सघन्धवः मर्याः इव सुवृधः ववृधुः नरः ५,५९,५
३०५ उद्भिदः अमध्यमासः महसा वि ववृधुः ५,५९,६
४५३ सं भ्रातरः ववृधुः सौभगाय ५,६०,५
४०८ आदित्यासः ते अक्राः न ववृधुः १०,७७,२
२७६ हवनानि आगमन्। तान् वर्ध भीमसंदृशः ५,५६,२
९९ वत्सला हृदा। युवानः आ ववृध्वम् ८,२०,१८
२२३ ये ववृधन्त पार्थिवाः। ये उरौ अन्तरिक्षे ५,५२,७
३३५ इधानाः। त्रिः यत् त्रिः मरुतः ववृधन्त ६,६६,२
१२९ ते अवर्धन्त स्वतवसः महित्वना आ १,८५,७
६४ पिप्युषीः इषः वर्धान् काण्वस्य मन्मभिः ८,७,१९
१७५ जुषन्त वृधं सख्याय देवाः १,१६७,४
१२३ रोदसी हि मरुतः चक्रिरे वृधे १,८५,१
११८ हिरण्ययेभिः पविभिः पयोवृधः। उत् जिघ्नन्ते १,६४,११
२५१ उदन्ववः। पयोवृधः अश्वयुजः परिज्रयः ५,५४,२
३११ विस्पर्धसः विमहसः जिगाति शेवृधः नृभिः ५,८७,४
३०४ उत सुवृधुः मर्याः इव सुवृधः ववृधुः नरः ५,५९,५

वृध

१९४ यूयं हि स्थ नमतः इत् वृधासः १,१७१,२

वृधत्

३४४ तं वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिं। आ विवासे ६,६६,११

वृध्

४४४ ये अद्भिः ईशानाः मरुतः वर्षयन्ति। अथर्व० ४,२७,५
४५८;४६१ वर्षन्तु पृथिवीं अनु। अथर्व० ४,१५,४.७
२६९ यूयं वृष्टिं वर्षयथ पुरीषिणः ५,५५,५

वृष-खादिः

११७ विरप्शिनः अनन्तशुष्माः वृषखादयः नरः १,६४,१०

वृषणश्वः

९१ वृषणश्वेन मरुतः वृषप्सुना। रथेन वृषनाभिना ८,२०,१०

वृषदञ्जिः

९० प्रति वः वृषदञ्जयः। हव्या वृषप्रयाव्णे ८,२०,९

वृषन्

१४८ अस्याः धियः प्राविता अथ वृषा गणः १,८७,४
२०० वृषा अजनि पृश्न्याः शुक्रे ऊधनि २,३४,२
३२२ रेजयत् वृषा त्वेषः ययिः तविषः एवयामरुत् ५,८७,५
४८० अर्चन्ति शुष्मं वृषणः वसूया १,१६५,१ [इन्द्रः ३२५०]
मरुद्० दे० १५

९३ ते उग्रासः वृषणः उग्रबाहवः। आधि श्रियः ८,२०,१२
१३४ रयिं नः धत्त वृषणः सुवीरम् १,८५,१२
३६१ यः ईवतः वृषणः अस्ति गोपाः ७,५६,१८
३६४ अप बाधध्वं वृषणः तमांसि। धत्त विश्वं तनयम् ७,५६,२०
३६५ यत् ईं सुजातं वृषणः वः अस्ति ७,५६,२१
३८१ आरात् चित् द्वेषः वृषणः युयोत ७,५८,६
४९८ इष्यामि वः वृषणः युध्यत आजौ ८,९६,१४ [इन्द्रः ३२६९]
११९ मारुतं गणं। ऋजीषिणं वृषणं सश्चत श्रिये १,६४,१२
१२९ विष्णुः यत् ह आवत् वृषणं मदच्युतम् १,८५,७
४०६ मारुतं गणं। गिरिस्थां वृषणं हुवे ८,९४,१२
७८ ओ सु वृष्णः प्रयज्यून्। ववृत्यां चित्रवाजान् ८,७,३३
१०० वृष्णः पावकान् अभि सोभरे गिरा ८,२०,१९
१०१ वृष्णः चन्द्रान् न सुश्रवस्तमान् गिरा वन्दस्व ८,२०,२०
१०८ वृष्णे शर्धाय सुमखाय वेधसे। सुवृक्ति भर १,६४,१
४९० इन्द्राय वृष्णे सुमखाय मह्यम् १,१६५,११ [इन्द्रः ३२६०]
९० वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वं हव्या वृषप्रयाव्णे ८,२०,९

वृष–नाभिः

९१ वृषणश्वेन मरुतः वृषप्सुना रथेन वृषनाभिना ८,२०,१०

वृष–प्रयावन्

९० वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वं हव्या वृषप्रयाव्णे ८,२०,९

वृष-प्सुः

८८ श्रियं नरः महि त्वेषाः अमवन्तः वृषप्सवः ८,२०,७
९१ वृषणश्वेन मरुतः वृषप्सुना रथेन वृषनाभिना ८,२०,१०

वृषभः

२९७ अव उस्रियः वृषभः क्रन्दतु द्यौः ५,५८,६
४८६ समानेभिः वृषभ पौंस्येभिः १,१६५,७; [इन्द्रः ३२५६]
४९६ सः नः मरुद्भिः वृषभ श्रवः धाः १,१७१,५ [इन्द्रः ३२६७]
१५८ पूर्वं महित्वं वृषभस्य केतवे १,१६६,१

वृष–मनस्

१७८ यथा यत् ईं वृषमनाः अहंयुः १,१६७,७

वृष-व्रातः

१२६ रथेषु आ। वृषव्रातासः पृषतीः अयुग्ध्वम् १,८५,४

वृष्टिः

२८ वाश्रा इव विद्युत् मिमाति। यत् एषां वृष्टिः असर्जि १,३८,८

वृष्टिः   शंसः

४३१ वृष्टिः [illegible] । अथर्व० ६,२२,३
२३८ [illegible] वृष्टी [illegible] ५,५३,५
२४० [illegible] वृष्टयः ५,५४,२
२३० [illegible] वृष्टयः [illegible] ५,५३,२
२३६ [illegible] । [illegible] वृष्टयः ५,५३,६
२४३ [illegible] वृष्टयः ५,५३,१०
७७ [illegible] । [illegible] वृष्टिं न [illegible] १,३९,९
२३६ [illegible] । [illegible] वृष्टिं [illegible] ५,५३,५
२३४ वृष्टिं [illegible] ५,५३,३
३०३ [illegible] वृष्टिभिः ५,५९,१
३५१ [illegible] वृष्टिभिः [illegible] । [illegible] ७,५६,१३
६६ [illegible] । [illegible] वृष्टिभिः ८,७,१६

वृष्टी

२४१ वृष्टी [illegible] ५,५३,१४
६८ [illegible] वृष्ट्या [illegible] ८,७,२२

वेदस्

४६४ [illegible] । अथर्व० ४,२५,१०
१६५ [illegible] । [illegible] विश्ववेदसः १,६४,८
१६७ विश्ववेदसः [illegible] १,६४,१०
४४५ [illegible] विश्ववेदसः [illegible] ५,६०,७

वेध

१७३ [illegible] वेधाभिः । नि हेळः धत्त १,१७१,१

वेधस्

२११ [illegible] । [illegible] वेधसः ५,५२,१३
२५५ अर्चत । गोबध वृक्षं कपना इव वेधसः ५,५४,६
९८ रुद्रस्य सूनवः दिवः वशन्ति असुरस्य वेधसः८,२०,१७
१०८ वृष्णे शर्धाय सुमखाय वेधसे । सुवृक्तिं भर १,६४,१

वेनत्

१४२ स्वेदस्य सत्यशवसः विद कामस्य वेनतः १,८६,८

वेप्

४० प्र वेपयन्ति पर्वतान् वि विचन्ति वनस्पतीन् १,३९,५
४९ वपन्ति मरुतः मिहं । प्र वेपयन्ति पर्वतान् ८,७,४

वैश्वानरः

४५६ सोमं पिब । वैश्वानर प्रदिवा केतुना सजूः ५,६०,८

वोळहवे

२८० अजिरा धुरि वोळहवे वहिष्ठा धुरि वोळहवे५,५६,६

व्यक्त

३४५ के ईं व्यक्ताः नरः सनीळाः । स्वश्वाः ७,५६,१

व्यथ्

२९३ न दस्यते । न [illegible] न [illegible] न [illegible] ५,५४,७

व्यथिः

३०२ [illegible] न [illegible] व्यथिः [illegible] ५,५९,३

व्यन्

१५३ [illegible] । विष्यन [illegible] १,८६,१
४३१ तां विष्यत तमसा [illegible] । अथर्व० ३,२,६

व्युष्टिः

४९६ व्युष्टिषु [illegible] १,१७१,५; [illegible]
२१० [illegible] व्युष्टिषु २,३४,१२
१०३ [illegible] । [illegible] व्युष्टिषु ८,२०,१५
४११ [illegible] व्युष्टिषु [illegible] १०,७७,२

व्योमन्

३०६ [illegible] व्योमनि [illegible] ५,५९,१

व्रजः

३४१ [illegible] व्रजं [illegible] ६,६६,८
१३७ अनु त्रिते [illegible] गोमति व्रजे १,८६,३

व्रतम्

१५९ दीर्घं वः दात्रं अदितेः इव व्रतम् १,१६६,१२
३१६ यस्याः देवाः उपस्थे । व्रता विश्वे धारयन्ते ८,९४,२
४३५ तां विष्यत तमसा अपव्रतेन । अथर्व० ३,२,६
२२३ खादिहस्तं । धुनिव्रतं मायिनं दातिवारम् ५,५८,२
३१८ तवसे भन्ददिष्टये । धुनिव्रताय शवसे ५,८७,१

व्रातः

२१६ व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिः ओजः ईमहे ३,२६,६
२४४ व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिः । अनु क्रामेम ५,५३,११
१२६ रथेषु आ । वृषव्रातासः पृषतीः अयुग्ध्वम् १,८५,४

शंस्

१३८ अस्य वीरस्य बर्हिषि उक्थं मदः च शस्यते १,८६,४
२७१ यत् उच्यते वसवः यत् च शस्यते ५,५५,८
३६७ उक्थानि या वः शस्यन्ते पुरा चित् ७,५६,२३
१० प्र शंस गोषु अघ्न्यं । क्रीळं यत् शर्धः १,३७,५
२२४ शर्धः मारुतं उत् शंस । सत्यशवसम् ५,५२,८

शंसः

२०४ समन्यवः । नरां न शंसः सवनानि गन्तन २,३४,६
४१७ शिमीवन्तः । पितॄणां न शंसाः सुरातयः १०,७८,३
१७० परे युगे । पुरु यत् शंसं अमृतासः आवत १,१६६,१३

३३३ इमे शंसं वनुष्यतः नि पान्ति ७,५६,१९
१६५ ततं यं । पाथन शंसात् तनयस्य पुष्टिषु १,१६६,८
४७६ मा नः दुःशंसः ईशत १,२३,९ [इन्द्रः ३२४६]

शंस्यम्

२०६ यतस्रुचः । ब्रह्मण्यन्तः शंस्यं राधः ईमहे २,३४,११

शक्

३०६ क्वाभीशवः । कथं शेक कथा यय ५,६१,२

शक्राः

१५८ तुवि-स्वनः । सुधा इव शक्राः तविषाणि कर्तन १,१६६,१

शग्मः

४४२ शग्माः भवन्तु मरुतः नः स्योनाः । अथर्व० ४,२७,३

शतम्

१२१ तोकं पुष्येम तनयं शतं हिमाः १,६४,१४
२६४ वयं तरेम तरसा शतं हिमाः ५,५४,१५
२३३ सप्त साकिनः । एकमेका शता ददुः ५,५२,१७
३३१ तुवि-स्वनि । अनर्वाणं पूषणं सं यथा शता ६,४८,१५

शत-भुजिः

१६५ शतभुजिभिः तं अभिहुतेः अघात् । रक्षत १,१६६,८

शत-स्विन्

३८० युष्मोतः विप्रः मरुतः शतस्वी । अर्वा सहुरिः ७,५८,४

शतिन्

१२२ रयिं अस्मासु धत्त सहस्रिणं शतिनं शूशुवांसम् १,६४,१५
३७३ ये नः त्मना शतिनः वर्धयन्ति ७,५७,७

शत्रुः

२६ नहि वः शत्रुः विविदे अधि द्यवि १,३९,४
४३३ इन्द्रेण युजा प्र मृणीत शत्रून् । अथर्व० १३,१,३
४८५ विघ्नन् शत्रोः अवनं वधस्नैः १,१६५,६ [इन्द्रः ३२५५]

शम् [illegible]

१४६ यत् ईं इन्द्रं शमि ऋक्वाणः आशत १,८७,५
३३३ [illegible] नः [illegible] शमानि ५,८७,९

शम् [illegible]

४८३ ब्रह्माणि मे मतयः शं सुतासः १,१६५,४ [इन्द्रः ३२५३]
२४७ [illegible] शं योः आपः उस्रि भेषजम् ५,५३,१४

शंभविष्ठ

४६६ उत स्तुतः मघवा शंभविष्ठः १,१७१,३
[इन्द्रः ३२६५]

८

४१४ [illegible] । आदित्येन नाम्ना शंभविष्ठाः १०,७७,८

शरद्

१४० पूर्वीभिः हि ददाशिम शरद्भिः मरुतः वयम् १,८६,६

शरुः

१९३ वः सुदानवः । मर्तः ऋजुती शरुः १,१७२,२

शर्धः

१९८ तं वः शर्धं मारुतं सुम्नयुः गिरा २,३०,११
२४३ तं वः शर्धं रथानां । अनु प्र यन्ति वृष्टयः ५,५३,१०
२८३ तं वः शर्धं रथेशुभं त्वेषं । आ हुवे ५,५६,९
२४४ शर्धंशर्धं वः एषां । अनु क्रमेम धीतिभिः ५,५३,११
३६३ स्तोमेभिः वृक्तबर्हिषः शर्धान् ऋतस्य जिन्वथ ८,७,२१
९ प्र वः शर्धाय घृष्वये । त्वेषद्युम्नाय शुष्मिणे १,३७,४
१०८ वृष्णे शर्धाय सुमखाय वेधसे । सुवृक्तिं भर १,६४,१
२५० प्र शर्धाय मारुताय स्वभानवे । पर्वतच्युते ५,५४,१
३१८ प्र शर्धाय प्रयज्यवे सुखादये । तवसे ५,८७,१
३२८ आ शर्धाय मारुताय स्वभानवे श्रवः सुम्नं ६,४८,१२
३३४ [illegible] दिवः शर्धाय शुचयः मनीषाः ७,५६,११
९० वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वं हव्या वृषप्रयाव्णे ८,२०,९
३५२ वः । [illegible] शर्धस्य शुष्मैः ७,५६,८

शर्धत्

२७५ अग्ने शर्धन्तं आ गणं । पिष्टं रुक्मेभिः ५,५६,१

शर्धस्

६ क्रीळं वः शर्धः मारुतं । अनर्वाणं रथेशुभं १,३७,१
१० क्रीळं यत् शर्धः मारुतं जम्भे रसस्य वावृधे १,३७,५
२२४ शर्धः मारुतं उत् शंस । सत्यशवसं ५,५२,८
२५५ अभ्राजि शर्धः मरुतः यत् अर्णसं । मोषथ ५,५४,६
३३१ त्वेषं शर्धः न मारुतं तुवि-स्वनि ६,४८,१५
३८२ विश्वं शर्धः अभितः मा नि षेद ७,५६,७
४४३ मारुतं शर्धः पृतनासु उग्रम् । अथर्व० ४,२७,७
३२४ [illegible] । शर्धांसि [illegible] ५,८७,७

शर्मन्

१३४ या वः शर्म शशमानाय सन्ति । त्रिधातूनि १,८५,१२
२७६ अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्तन ५,५५,९
३८३ मिहः आ नेत । मरुतः शर्म यच्छत ७,५६,२
४३० मरुतः सूर्यत्वचसः । शर्म यच्छाथ सप्रथाः
अथर्व० १,२६,३
३३९ शर्मन् स्याम मरुतां उपस्थे ७,५६,२५

४१६ सुशर्माणः न सोमाः ऋतं यते १०,७८,२

शर्यणावत्

७९ सुषोमे शर्यणावति । आर्जीके पस्त्यावति ८,७,२९

शर्वरी

२२९ ते स्यन्द्रासः । अति स्कन्दन्ति शर्वरीः ५,५२,३

शवस्

२४ स्थिरं हि जानं एषां । द्विता शवः १,३७,९
३२६ क्रत्वा तत् वः मरुतः न आधृषे शवः ५,८७,२
३२३ वृद्धशवसः । त्वेषं शवः अवतु एवयामरुत् ५,८७,६
४५ असामि ओजः बिभृथ सुदानवः । असामि धूतयः शवः १,३९,१०
२९८ भर्ता इव गर्भं स्वं इत् शवः धुः ५,५८,७
३३३ त्वेषं शवः दधिरे नाम यज्ञियं । मरुतः वृत्रहं शवः । ज्येष्ठं वृत्रहं शवः ६,४८,२१
३५२ उग्रं वः ओजः स्थिरा शवांसि ७,५६,७
४३ वि तं युयोत शवसा वि ओजसा १,३९,८
११५ सं इत् सबाधः शवसा अहिमन्यवः १,६४,८
११६ नृषाचः शूराः शवसा अहिमन्यवः १,६४,९
१२० प्र नु सः मर्तः शवसा जनान् अति तस्थौ १,६४,१३
१८० ते धृष्णुना शवसा शुशुवांसः । अर्णः न १,१६७,९
४९६ क्षुधिषु शवसा शश्वतीनाम् १,१७१,५ [इन्द्रः३२६७]
३२९ ते इत् उग्राः शवसा धृष्णुषेणाः ६,६६,६
३७० यजत्राः । प्र यज्ञेषु शवसा मदन्ति ७,५७,१
३१८ तवसे भन्ददिष्टये । धुनिव्रताय शवसे ५,८७,१
१८० नहि । आरात्तात् चित् शवसः अन्तं आपुः १,१६७,९
२१८ ते हि स्थिरस्य शवसः । सखायः सन्ति ५,५२,२
२२१ ये सुदानवः । नरः असामिशवसः ५,५२,५
३३३ अपारः वः महिमा वृद्धशवसः । त्वेषं शवः ५,८७,६
१४१ स्वेदस्य सत्यशवसः विद कामस्य वेनतः १,८६,८
१४२ यूयं तत् सत्यशवसः । आविः कर्त १,८६,९
२२४ मारुतं उत् शंस । सत्यशवसं ऋभ्वसम् ५,५२,८

शविष्ठ

४८६ भूरीणि हि कृणवाम शविष्ठ १,१६५,७;[इन्द्रः३२५६]

शशमानः

१३४ या वः शर्म शशमानाय सन्ति । यच्छत १,८५,१२
१४१ शशमानस्य वा नरः । विद कामस्य वेनतः १,८६,८

शश्वत्

२१८ आ धूपद्विनः । त्मना पान्ति शश्वतः ५,५२,२
९४ नाम त्वेषं शश्वतां एकं । इत् भुजे ८,२०,१३
४९६ नूचित् शवसा शश्वतीनाम् १,१७१,५ [इन्द्रः ३२६७]

शस्

२७३ तत् इत् मे जग्मुः आशसः ५,५३,२

शस्तिः

४२७ मा नः विदत् अभिभाः मो अशस्तिः । अथर्व० १,२०,१
३५० मरुतः । पराशस्ति नः कृणुत हरितामः ७,५७,७
२१६ व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिः । ओजः ईमहे ३,२६,६
२४५ व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिः । अनु क्रामेम ५,५३,११

शाकिन्

४९९ उज्जेषी च । क्रीडी च शाकी च । वा० य० १७,८५
२३३ सप्त मे सप्त शाकिनः । एका शता ददुः ५,५२,१७

शास्

४८३ आ शासते प्रति हर्यन्ति उक्था १,१६५,४ [इन्द्रः ३२५३]

शिक्वस्

२३२ पितरं इष्मिणं । रुद्रं वोचन्त शिक्वसः ५,५२,१६
२५३ वि अक्तून् रुद्राः वि अहानि शिक्वसः ५,५४,४

शित

४०५ युष्मभ्यं हव्या निशितानि आसन् १,१७१,४ [इन्द्रः ३२६६]

शिप्रा

२६० शिप्राः शीर्षसु वितताः हिरण्ययीः ५,५४,११
७० शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः । अञ्जत श्रिये ८,७,२५
२०१ हिरण्यशिप्राः मरुतः दविध्वतः । पृक्षं याथ २,३४,३

शिमी-वत्

२७७ अक्षः न वः मरुतः शिमीवान् अमः ५,५६,३
४१७ वर्मण्वन्तः न योधाः शिमीवन्तः सुरातयः १०,७८,३
८४ रुद्रियाणां । शुष्मं उग्रं मरुतां शिमीवताम् ८,२०,३

शिव

४३८ पयस्वतीः कृणुथ अपः ओषधीः शिवाः । अथर्व० ६,२२,२
१०५ ऊतिभिः मयोभुवः । शिवाभिः असचद्विषः ८,२०,२४

शिशुः

३६० ते हर्म्येष्ठाः शिशवः न शुभ्राः वत्सासः न ७,५६,१६
२०६ धेनुः न शिश्वे स्वसरेषु पिन्वते । मही इषम् २,३४,८

शिशूलः

४१० शिशूलाः न क्रीळयः सुमातरः उत त्विषा १०,७८,६

शिश्रियाणः

३५७ वक्षःसु रुक्मा उपशिश्रियाणाः । वृष्टिभिः रुचानाः ७,५६,१३

शीभम्

१९ प्र यात शीभं आशुभिः । तत्रो षु मादयाध्वै १,३७,१४

शीर्षन्

३६० शिप्राः शीर्षसु वितताः हिरण्ययीः ५,५४,११
३८९ नृम्णा शीर्षसु आयुधा रथेषु वः ५,५७,६
७० शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः । वि अञ्जत श्रिये ८,७,२५

शुक्र

४२४.१ शुक्रः च ऋतपाः च । वा० सं० १७,८०
३१४ सकृत् शुक्रं दुदुहे पृश्निः ऊधः ६,६६,१
३०० [illegible] अजनि पृश्न्याः शुक्रे ऊधनि ६,४८,२२

शुक्र-ज्योतिः

४२४.१ शुक्रज्योतिः च चित्रज्योतिः च । वा० सं० १७,८०

शुक्वन्

३३० शुम्भिरे गिरा । शुक्वानः [illegible] ५,८७,३

शुच्

३२५ ये आपयः न शोशुचन् [illegible] ६,६६,२

शुचत्

३६० [illegible] । [illegible] शुचता [illegible] ३,३६,११

शुचि

१०९ [illegible] शुचयः [illegible] । [illegible] १,६४,२
२३७ [illegible] शुचयः [illegible] ६,६६,१
३४४ [illegible] शुचयः [illegible] ६,६६,११
३५६ [illegible] । [illegible] शुचयः [illegible] ७,५६,१२
३६४ [illegible] । [illegible] शुचयः [illegible] ७,५६,[illegible]
३५६ शुचीं [illegible] । शुचीनां [illegible] शुचि [illegible] ७,५६,१२

शुचि-जन्मन्

३५६ [illegible] शुचिजन्मानः [illegible] ७,५६,१२

शुचि-प्रिः

३३७ [illegible] । [illegible] शुचिप्रिः [illegible] ५,८७,६

शुभ् [illegible]

३३५ [illegible] शुभयन्ते [illegible]
३४२ [illegible] शुभयन्त [illegible]

३६० वक्षःसु रुक्मा मरुतः रथे शुभः । शिप्राः शीर्षसु ५,५४,११
६ अनवानं रथेशुभं । कण्वाः अभि प्र गायत १,३७,१
३८३ तं वः शर्धं रथेशुभं त्वेषम् ५,५६,९

शुभ् [शोभायाम्]

४८० कदा शुभा सवयसः सनीळाः १,१६५,१
[इन्द्रः ३३५०]
३५० यामं येष्ठाः शुभा शोभिष्ठाः । श्रिया संमिश्लाः ७,५६,६
१११ वक्षःसु रुक्मान् अधि येतिरे शुभे १,६४,४
१४७ भूमिः यामेषु यत् ह युञ्जते शुभे १,८७,३
१५२ शुभे कं यान्ति रथतूर्भिः अश्वैः १,८८,२
१७७ शुभे निमिश्लां विदथेषु पज्राम् १,१६७,६
२६४ शुभे संमिश्लाः पृषतीः अयुक्षत ३,२६,४
३७४ उत स्म ते शुभे नरः । प्र स्यन्द्राः युजत ५,५२,८
३८६ शुभे यत् उग्राः पृषतीः अयुग्ध्वम् ५,५७,३
३६२ [illegible] शुभे कम् ७,५७,३

शुभं-यावन्

३१४ [illegible] । शुभंयावा [illegible] ५,६१,१३
३१८ शुभंयावान [illegible]

शुभं-युः

३३१ शुभंयवः [illegible]

शुभ्र

[illegible]

शुभ्र-खादि

[illegible]

शुभ्र-[illegible]

[illegible]

शुभ्रः

[illegible]

४१९ पिबन्तः मदिरं मधु तत्र श्रवांसि कृण्वते । साम० ३५६
२५० पृष्ठयज्वने । द्युम्नश्रवसे महि नृम्णं अर्चत ५,५४,१

श्रवस्युः

१३० श्रवस्यवः न पृतनासु येतिरे । राजानः इव १,८५,८
२८२ रथं मारुतं वयं । श्रवस्युं हुवामहे ५,५६,८
३९५ गौः धयति मरुतां । श्रवस्युः माता मघोनाम् ८,९४,१

श्रायः

३३७ रुक्मः रुक्मेषु खादिषु । श्रायाः रथेषु धन्वसु ५,५३,४

श्रियस्

१५० श्रियसे कं भानुभिः सं मिमिक्षिरे १,८७,६
३०२ गवां इव श्रियसे शृङ्गं मर्याः इव श्रियसे चेतथ ५,५९,३

श्रीः

२८९ विश्वा वः श्रीः अधि तनूषु पिपिशे ५,५७,६,
९३ आयुधा रथेषु वः । अनीकेषु अधि श्रियः ८,२०,१२
८८ स्वधां अनु श्रियं नरः । वहन्ते अहुतप्सवः ८,२०,७
१२४ चक्रिरे सदः । अधि श्रियः दधिरे पृश्निमातरः १,८५,२
१६७ वयः न पक्षान् वि अनु श्रियः धिरे १,१६६,१०
३१३ येषां श्रिया अधि रोदसी । विभ्राजन्ते ५,६१,१२
३३७ जोषं । अनु श्रिया तन्वं उक्षमाणाः ६,६६,४
३५० श्रिया संमिश्लाः ओजोभिः उग्राः ७,५६,६
११९ गणं । ऋजीषिणं वृषणं सश्चत श्रिये १,६४,१२
१५३ श्रिये कं वः अधि तनूषु वाशीः १,८८,३
४४८ तव श्रिये मरुतः मर्जयन्त । रुद्र ५,३,३
२६७ श्रिये चित् आ प्रतरं वव्रुः नरः ५,५५,३
४५२ श्रिये श्रेयांसः तवसः रथेषु । महांसि चक्रिरे ५,६०,४
७० शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः शुभ्राः वि अञ्जत श्रिये
८,७,२५
४०८ श्रिये मर्यासः अञ्जीन् अकृण्वत दिवः पुत्रासः१०,७७,२
४११ उषसां न केतवः अध्वरश्रियः शुभंयवः १०,७८,७
११६ रोदसी आ वदत गणश्रियः । नृषाचः १,६४,९
४५६ सोमं पिब मन्दसानः गणश्रिभिः । पावकेभिः ५,६०,८

श्रु

१८ हुवते आवन् आ । शृणोति कः चित् एषाम् १,३७,१३
८ इहेव शृण्वे एषां । कशाः हस्तेषु यत् वदान् १,३७,३
३३५ रथेषु तस्थुषः । कः शुश्राव कथा ययुः ५,५३,२
३६० प्र ये दिवः बृहतः शृण्विरे गिरा ५,८७,३
१३९ अस्य श्रोषन्तु आ भुवः । चर्षणीः अभि १,८६,५
१२६ विप्रस्य वा मतीनां । मरुतः शृणुत हवम् १,८६,२

४७८ विश्वे मम श्रुत हवम् १,२३,८ [इन्द्रः ३२४८]
३२५ आ इतन । श्रोत हवं जरितुः एवयामरुत् ५,८७,८
३२६ यज्ञियाः । श्रोत हवं अरक्षः एवयामरुत् ५,८७,९
४१ आ वः यमाय पृथिवी चित् अश्रोत् १,३९,६
४३३ आ वः रोहितः शृणवत् सुदानवः । अथर्व० १३,१,३

श्रुत

२ अच्छ विदद्वसुं गिरः महां अनूषत श्रुतम् १,६,६
२३३ यमुनायां अधि श्रुतं । उत् राधः गव्यं मृजे ५,५२,१७
४५० आ ये तस्थुः पृषतीषु श्रुतासु सुखेषु ५,६०,२
२३१ सचेत सूरिभिः । यामश्रुतेभिः अञ्जिभिः ५,५२,१५
२९१;२९९ सत्यश्रुतः कवयः युवानः । बृहद्गिरयः
५,५७,८; ५८,८

श्रुत्यम्

४९० यत् मे नरः श्रुत्यं ब्रह्म चक्र १,१६५,११[इन्द्रः३२६०]
१९८ यथा रयिं । अपत्यसाचं श्रुत्यं दिविदिवे २,३०,११

श्रुष्टिः

१७० अया धिया मनवे श्रुष्टिं आव्य १,१६६,१३

श्रुष्टि-मत्

२६३ ऋषिं अवथ । यूयं धत्थ राजानं श्रुष्टिमन्तं ५,५४,१४

श्रेणिः

३०६ वयः न ये श्रेणीः पप्तुः ओजसा ५,५९,७

श्रेयस्

४५२ श्रिये श्रेयांसः तवसः रथेषु । महांसि चक्रिरे ५,६०,४

श्रेष्ठ–तम

३०८ के स्थ नरः श्रेष्ठतमाः । आयय ५,६१,१

श्रोतृ

३१६ प्रणेतारः इत्था धिया श्रोतारः यामहूतिषु ५,६१,१५

श्लोकः

३४ मिमीहि श्लोकं आस्ये । पर्जन्यः इव ततनः १,३८,१४

श्वस्

१८१ वयं पुरा । वयं श्वः [illegible] १,१६७,१०

श्वि

१७१ [illegible] १,१६६,१२

श्वित्

६१३ [illegible] । [illegible] वि [illegible]
१०,७८,१

सं-राज्

३८० दुर्मोतः सम्राट् उत हन्ति वृत्रम् ७,५८,४

संवत्सरीणः

४४७ संवत्सरीणाः मरुतः स्वर्काः । अथर्व० ७,८२,३

संवरणम्

४११ दूरे मदः संवरणस्य वस्वः विदानासः वसवः १०,७७,३

सं-विदानः

७३४ अग्ने अग्निः मरुद्भिः संविदानः । अथर्व० ४,१५,१०

सं-सृज्

७२७ ये वा वयः मेदसा संसृजन्ति । अथर्व० ४,२७,५

सं-शितम्

१८८ [illegible] विद्युत् इव संशितं नि अशिना १,१६८,३

सत्रा

३३४ सत्रा [illegible] ६,६६,२

सत्वम्

३१० वि सत्वानि नरः [illegible] ५,६१,३

सत्वन्

२१८ [illegible] । सत्वानः [illegible] ५,५७,५

१८६ [illegible] । [illegible] सत्वानः [illegible] ८,२०,२३

२९२ [illegible] सत्वानः [illegible] १,६४,१२ [illegible]

२९३ [illegible] [illegible] १,६४,१३ [illegible]

३३१ [illegible] ३,४८,११

३२९ [illegible] १०,७८,१३

३४५ [illegible] ८,१०३,१४ [illegible]

[illegible]

७३ [illegible] ५,३३

[illegible]

१७८ [illegible] १,६६,३

१३३ [illegible]

२५७ [illegible]

१० ४६,८

२९२ [illegible]

[illegible]

स-गणः

४४७ उरुक्षयाः सगणाः मानुषासः । अथर्व० ७,८२,३

सच्

१३१ दाना सचेत सूरिभिः यामश्रुतेभिः अञ्जिभिः ५,५३,११

१९८ सनीरं नशामहे । अपत्यसाचं श्रुत्यं दिवेदिवे ९,१०,११

११३ गणश्रियः सुसाचः शूराः तवसा अहिमन्यवः १,६४,९

सचाधिः

१७३ जोषत् यत् ईं असुर्या सचध्यै १,१६७,५

सचा

१७८ सचा यत् ईं वृषमणाः अहंयुः १,१६७,७

३८१ आ यस्मिन् तस्थौ । सचा मरुत्सु रोदसी ५,६१,८

३८३ शुभ्रा महीयते । सचा मरुत्सु मीळ्हुषी ५,५६,८

३८५ अस्माकं अद्य मरुतः सुते सचा । विश्वे ७,५९,३

सजात्यम्

२०९ सजात्येन मरुतः सबन्धवः रिहते ककुभः मिथः ८,२०,२१

सजुस्

४७७ सजूः गणेन तृम्पतु २,७३,७ [[illegible] ३०५७]

७५३ सोमं पिब वैश्वानरः सविता सजूः ५,६०,८

सजोषस्

७०० [illegible] अव्यति सजोषसः । [illegible] ५,५६,३

७८४ आ [illegible] सजोषसः [illegible]

७०३ मरुतः न [illegible] सजोषसः ।
[illegible] ३,४२

सं-चक्ष्

४२२ [illegible] मरुतः [illegible] १,१७०,१०
[[illegible] ३०३१]

सं-ज्ञान

४३२ संज्ञानानाः [illegible] १,१,१ [illegible] ३०३१

[illegible]

३५८ [illegible] १,९३,१४

३५९ [illegible] १,२३,९

सत्पतिः

३८३ [illegible] १,११०,३
[illegible] ३०४५

सत्य
१४८ असि सत्यः ऋणयावा अनेद्यः । [illegible] १,८७,४
१७८ यः एषां । मरुतां महिमा सत्यः अस्ति १,१६७,७
४२४.३ ऋतः च सत्यः च ध्रुवः च । वा० य० १७,८२
२७ सत्यं त्वेषाः अमवन्तः मिहं कृण्वन्ति अवाताम् १,३८,७
३५६ ऋतेन सत्यं ऋतसापः आयन् शुचिजन्मानः ७,५६,१२

सत्य-जित्
४२४.४ सत्यजित् च सेनजित् च । वा० य० १७,८३

सत्य-ज्योतिः
४२४.१ सत्यज्योतिः च ज्योतिष्मान् च । वा०य० १७,८०

सत्य-शवस्
१८२ स्वेदस्य सत्यशवसः विद कामस्य वेनतः १,८६,८
१८३ यूयं तत् सत्यशवसः । आविः कर्त १,८६,९
२२४ मारुतं गणं [illegible] । सत्यशवसं ऋभ्वसम् ५,५२,८

सत्य-श्रुतः
२९१;२९९ सत्यश्रुतः कवयः युवानः ५,५७,८;५८,८

सत्रा
३५२ तवसः । सत्रा महांसि चक्रिरे तनूषु ५,६०,४

सत्राच्
४१० प्रयस्वन्तः न सत्राचः आ गत १०,७७,२
३६२ जोषवीति सम सत्राची रातिः मरुतः गृणानः ७,५६,१८

सत्वन्
१०९ सूर्यःइव । सत्वानः न द्रप्सिनः घोरवर्पसः १,६४,२

सद्
३८९ विश्वं शर्धः अभितः मा नि सेद ७,५९,७
१२९ वयः न सीदन् अधि बर्हिषि प्रिये १,८५,७
३७१ बर्हिः । आ वीतये सदत पिप्रियाणाः ७,५७,२
३८८ आ च नः बर्हिः सदत अविड्ढि च ७,५९,६
१२८ सीदत आ बर्हिः उरु वः सदः कृतम् १,८५,६
१०२ अनवभ्रराधसः [illegible] सुष्टुताः [illegible]

सदनम्
२११ [illegible] सदनेषु [illegible]

सदम्
२८२ [illegible] सदं [illegible]

सदस्
१२८ सीदत आ बर्हिः उरु वः सदः कृतम् १,८५,६
३०९ कथा यय पृष्ठे सदः नसोः यमः ५,६१,२
१२४ दिवि रुद्रासः अधि चक्रिरे सदः १,८५,२
१२९ महित्वना आ । नाकं तस्थुः उरु चक्रिरे सदः १,८५,७
२२१ समानस्मात् सदसः एवयामरुत् यदा अयुक्त त्मना
५,८७,४

सदा
३३९;३७३;३८२ यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ७,५६,२५;
५७,७;५८,६
१०३ सदा हि वः । आपित्वं अस्ति निध्रुवि ८,२०,२२
३९७ सदा गृणन्ति कारवः । मरुतः सोमपीतये ८,९४,३
४४१ उत्सं अक्षितं व्यचन्ति ये सदा । आर्वे० ४,२७,२

सदृक्
४२४.२ सदृङ् च प्रतिसदृङ् च । वा० य० १७,८१

सदृक्षः
४२५ सदृक्षासः प्रतिसदृक्षासः आ इतन । वा०य० १७,८४

सदृश्
२८७ [illegible] । [illegible] सुसदृशः [illegible] ५,५७,४

समन्
३० [illegible] १,३८,१०
३३४ [illegible] ५,८७,७

सधः
३४६ [illegible] सधः [illegible] ५,५४,१०
३३३ सधः [illegible]

सध-ज्ञातिः
[illegible]
[illegible]

सधस्
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]

३३७ अया नु अन्तरिति **सन्तः** अवद्यानि पुनानाः ६,६६,४

सना

६५७ अभि तानि पौंस्या । **सना** भूवन् द्युम्नानि १,१३९,८

सनात्

३४९ सा विट् । **सनात्** सहन्ती पुष्यन्ती नृम्णम् ७,५६,५
४२२ कृणुत सुरत्नान् । **सनात्** हि वः रत्नधेयानि सन्ति
१०,७८,८

स-नाभिः

४१८ रथानां न ये अराः **सनाभयः** जीगीवांसः १०,७८,४

सनिः

२०५ दात मरुतः । **सनिं** मेधां अरिष्टं दुस्तरं सहः २,३४,७

सनितृ

७३६ मरुद्भिः इत् **सनिता** वाजं अर्वा ७,५६,२३

स-नीळः

४८० कया शुभा सवयसः **सनीळाः** १,१६५,१ [इन्द्रः ३२५०]
३४५ के ईं व्यक्ताः नरः **सनीळाः** । मर्याः ७,५६,१

सनुतस्

३२५ स्मत् रश्म्यः न दंसना । अप द्वेषांसि **सनुतः** ५,८७,८
४१२ वसवः । आरात् चित् द्वेषः **सनुतः** युयोत १०,७७,६

सनेमि

३५३ **सनेमि** अस्मत् युयोत दिद्युं । दुर्मतिः ७,५६,९

संदृश्

३२३ स्थातारः हि प्रसितौ **संदृशि** स्थन । शुशुक्वांसः
५,८७,६

१२० शुनन्तासु येमिरे राजानः इव त्वेषसंदृशः नरः १,८५,८
२८८ अनिमन्नाः सुदानवः त्वेषसंदृशः अनवभ्रराधसः
५,५७,५

२५६ हवनानि आगमत् । तान् वर्धे भीमसंदृशः ५,५६,२
४१५ राजानः न चित्राः सुसंदृशः मर्याः अरेपसः १०,७८,१

सप्

३५६ ऋतेन सत्यं ऋतसापः आयन् शुचिजन्मानः ७,५६,१२

सपर्यति [नामधातु]

६७ स्तवे सुन्वद्भिः ऋता कः व. **सपर्यति** ८,७,२०

सम:

९३३ सुजात सुजनवः त्रि-**समासः** मरुतः स्वादुसंमुदः
अथर्व० १३,१,३

सप्तन्

२३३ **सप्त** मे **सप्त** शाकिनः एकमेका शता ददुः ५,५२,१७

सप्तिः

११३ प्र ये शुम्भन्ते जनयः न **सप्तयः** १,८५,१
१२८ आ वः वहन्तु **सप्तयः** रघुस्यदः रघुपत्वानः १,८५,६
६०४ भेषजस्य वहत सुदानवः यूयं सखायः **सप्तयः** ८,२०,२३

स-प्रथः

९४ यथां अर्णः न **सप्रथः** । नाम त्वेषम् ८,२०,१३
४३० मरुतः सूर्यत्वचसः । शर्म यच्छाथ **सप्रथाः**
अथर्व० १,२६,३

सप्सरः

१९१ ते **सप्सरासः** अजनयन्त अभ्वं । स्वधां इषिराम्
१,१६८,९

स-बन्धुः

३०४ अश्वाः इव इत् अरुषासः **सबन्धवः** शूराः इव ५,५९,५
६०२ सजात्येन मरुतः **सबन्धवः** रिहते ककुभः मिथः ८,२०,२१

सबर्दुघा

३२७ आ सखायः **सबर्दुघां** धेनुं अजध्वम् ६,४८,११

स-बाधः

११५ ऋष्टिभिः सं इत् **सबाधः** शवसा अहिमन्यवः १,६४,८

सभरस्

४२४.२ संमितः च **सभराः** । वा० य० १७,८१
२५९ यत् मरुतः **सभरसः** स्वर्णरः । मदथ ५,५४,१०
४९५ आ इतन **सभरसः** मरुतः यज्ञे अस्मिन् । वा० य० १७,८१

सभा-वती

१७४ **सभावती** विदथ्या इव सं वाक् १,१६७,३

सम्

(४७६.४) १,६,७ [इन्द्रः ३६४६]; (१८) १,३७,१३; (१०८;११५) १,६४,१.८; (१५०) १,८७,६; (१६०;१६९) १,१६५,१.३ [इन्द्रः ३२५०;३२५१]; (१७४) १,१६७,३; (१८८) १,१६८,३; (२५१;२६१) ५,५४,१.१०; (२९६) ५,५८,५; (३०७) ५,५९,८; (३५३) ५,६०,५; (३३१) ६,४८,१९ (द्विः); (३६६) ७,५६,२२; (३९४) ७,१०४,१८; (६३१) ८,७,२२ (चतुःकृत्वः); (४६०-६३) अथर्व० ४,२७,३-६

सम्-अराणः

४८२ सं पृच्छसे **समराणः** शुभानैः १,१६५,३
[इन्द्रः ३२५२]

सम्-धा
४८५ यत् मां एकं समधत्त अहिहत्ये १,१६५,६ [इन्द्रः३२५५]

समना
१८३ यज्ञायज्ञा वः समना तुतुर्वणिः देवयाः १,१६८,१

स-मन्यु:
२०१ दविध्वतः । पृक्षं याथ पृषतीभिः समन्यवः २,३४,३
२०३ स्वसराणि गन्तन मधोः मदाय मरुतः समन्यवः२,३४,५
२०४ आ नः ब्रह्माणि मरुतः समन्यवः । गन्तन २,३४,६
३२५ विष्णोः महः समन्यवः युयोतन । अप द्वेषांसि ५,८७,८
८२ मा अप स्थात समन्यवः । स्थिरा चित् नमयिष्णवः ८,२०,१
१०२ गावः चित् घ समन्यवः रिहते ककुभः मिथः८,२०,२१

समया
१६६ अक्षः वः चक्रा समया वि ववृते १,१६६,९

स-मर्यम्
१८१ इन्द्रस्य प्रेष्ठाः । वयं श्वः वोचेमहि समर्ये १,१६७,१०

समह
२४८ सुदेवः समह असति सुवीरः । नरः मरुतः ५,५३,१५

समान
३३४ समानं नाम धेनु पत्यमानं । दोहसे पीपाय ६,६६,१
३७२ विश्वपिशः । समानं अञ्जि अञ्जते शुभे कम् ७,५७,३
९२ समानं अञ्जि एषां । वि भ्राजन्ते रुक्मासः ८,२०,११
४८६ समानेभिः वृषभ पौंस्येभिः १,१६५,७ [इन्द्रः ३२५६]
३२१ समानस्मात् सदसः एवयामरुत् । यदा अयुक्त५,८७,४

समान-वर्चस्
४७६ मन्दू समानवर्चसा १,६,७; [इन्द्रः ३२४६]

समान्य
४८० समान्या मरुतः सं मिमिक्षुः १,१६५,१ [इन्द्रः ३२५०]

समिद्धः
२९४ अयं वः अग्निः मरुतः समिद्धः एतं जुषध्वम्५,५८,३

समुक्षितः
२७३ स्तोभैः समुक्षितानां मरुतां पुरुतमं अपूर्व्यम्५,५६,५

समुद्रः
४७१ तिरः समुद्रं अर्णवम् १,१९,७; [अग्निः २४४४]
४७२ तिरः समुद्रं ओजसा १,१९,८; [अग्निः २४४५]
१७३ मियुतः समुद्रस्य चित् धनयन्त पारे १,१६७,२
४४३ अपः समुद्रात् दिवं उत् वहन्ति । अथर्व० ४,२७,४
१०६ यत् समुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः । यत् पर्वतेषु भेषजम् ८,२०,२५

समुद्रतः
२६९ उत् ईरयथ मरुतः समुद्रतः । यूयं वृष्टिम् ५,५५,५
४५९ उत् ईरयत मरुतः समुद्रतः । अथर्व० ४,१५,५

समोकस्
११७ विश्ववेदसः रयिभिः समोकसः । संमिश्लासः १,६४,१०

सं-मित
४२४.२ संमितः च सभराः । वा० य० १७,८१
४२५ मितासः च संमितासः नः । वा० य० १७,८४

सं-मिश्ल
१६८ संमिश्लाः इन्द्रे मरुतः परिस्तुभः १,१६६,११
२१४ शुभे संमिश्लाः पृषतीः अयुक्षत विश्ववेदसः ३,२६,४
३५० शोभिष्ठाः श्रिया संमिश्लाः ओजोभिः उग्राः ७,५६,६
११७ समोकसः । संमिश्लासः तविषीभिः विरप्शिनः १,६४,१०

सं-मुद्
४३३ शृण्वत् सुदानवः । त्रिसप्तासः मरुतः स्वादुसंमुदः अथर्व० १३,१,३

सरम्
२०३ आ हंसासः न स्वसराणि गन्तन मरुतः समन्यवः २,३४,५
२०६ धेनुः न शिश्वे स्वसरेषु पिन्वते । महो दधन् २,३४,८

सरयुः
२४२ मा वः परि स्थात् सरयुः पुरीषिणी ५,५३,९

सरस्
५५ त्रीणि सरांसि पृश्नयः । दुदुह्रे वज्रिणे मधु ८,७,१०

सर्गः
४५८ सर्गाः वर्षस्य वर्षतः वर्षन्तु । अथर्व० ४,१५,४
२७६ पुरुतमं अपूर्व्यं । गवां सर्गं इव ह्वये ५,५६,५

सर्जनम्
३०२ स्वर्ण उत्तमं । सूर्यः न चक्षुः रजसः विसर्जने ५,५९,३

सर्व
४० मरुतः दुर्मदाः इव । देवासः सर्वया विशा १,३९,५

सर्व-तातिः
३७६ विश्वे ऊती । अच्छ सूरीन् **सर्वताता** जिगात ७,५७,७

सर्व-वीरः
१९८ यथा रयिं **सर्ववीरं** नशामहै। अपत्यसाचम् २,३०,११

सवनम्
२०४ समन्यवः । नरां न शंसः **सवनानि** गन्तन २,३४,६
३८९ नि सेद । नरः न रण्वाः **सवने** मदन्तः ७,५९,७

स-वयस्
४८० कया शुभा **सवयसः** सनीळाः १,१६५,१
[इन्द्रः ३२५०]

सश्च
११९ मारुतं गणं । ऋजीषिणं वृषणं **सश्चत** श्रिये १,६४,१२

ससहिः
४९७ सुप्रकेतेभिः **ससहिः** दधानः १,१७१,६
[इन्द्रः ३२६८]

सस्ज्
२८ विद्युत् मिमाति । वत्सं न माता **सिसक्ति** १,३८,८

सस्रुपी
१३९ विश्वाः यः चर्षणीः अभि मूरं चित् **सस्रुपीः** इषः
१,८६,५

सस्वर्तृ
३८६ वन् **सस्वर्ता** जिहीळिरे यत आविः अव ईमहे ७,५८,५

सस्वः
१५५ **सस्वः** ह यत् मरुतः गोतमः वः पश्यन् हिरण्यचक्रान्
१,८८,५
३८९ **सस्वः** चित् हि तन्वः शुम्भमानाः । आपप्तन् ७,५९,७

सह्
३४२ ये सहांसि सहसा **सहन्ते** । रेजते पृथिवी ६,६६,९
४३४ प्र अभि प्र इत नृणत **सहध्वम्** । अथर्व० ३,१,२
१२२ वीरवन्तं । ऋतीषहं रयिं अस्मासु धत्त १,६४,१५

सह
२६ निर्ऋतिः दुर्हणा वधीत् पदीष्ट तृष्णया **सह** १,३८,६
२३५ कस्मै सस्रुः सुदासे । इळाभिः वृष्टयः **सह** ५,५३,२
२४७ उस्रि भेषजं । स्याम मरुतः **सह** ५,५३,१४

सहः
१७६ [illegible] ८,२०,२०

सहत्
३२२ येन **सहन्तः** ऋञ्जत स्वरोचिषः स्थारश्मानः ५,८७,५
३४९ सा विट् । सनात् **सहन्ती** पुष्यन्ती नृम्णम् ७,५६,५

सहस्
२८९ अंसयोः अधि **सहः** ओजः बाह्वोः वः बलं हितम् ५,५७,६
९४ एकं इत् भुजे । वयः न पित्र्यं **सहः** ८,२०,१३
२०५ सनिं मेधां अरिष्टं दुस्तरं **सहः** २,३४,७
३६३ इमे **सहः सहसः** आ नमन्ति । नि पान्ति ७,५६,१९
४७९ इन्द्रेण **सहसा** युजा १,२३,९; [इन्द्रः ३२४९]
३४२ ये **सहांसि सहसा** सहन्ते । रेजते पृथिवी ६,६६,९

सहस्रम्
३३१ सं **सहस्रा** कारिषत् चर्षणिभ्यः आ ६,४८,१५

सहस्र-भृष्टिः
१३१ यत् वज्रं **सहस्रभृष्टिं** स्वपाः अवर्तयत् १,८५,९

सहस्रिन्
३८० मरुतः शतस्वी । युष्मोतः अर्वा सहुरिः **सहस्री** ७,५८,४
१२२ रयिं अस्मासु धत्त **सहस्रिणं** शतिनं शूशुवांसम् १,६४,१५
२६१ तिष्यः यथा अस्मे ररन्त मरुतः **सहस्रिणम्** ५,५४,१३

सहस्रिय
१८४ **सहस्रियासः** अपां न ऊर्मयः आसा गावः १,१६८,२
३५८ **सहस्रियं** दम्यं भागं एतं । जुषध्वम् ७,५६,१४

सहस्वत्
२ मखः **सहस्वत्** अर्चति । गणैः इन्द्रस्य काम्यैः १,६,८
४४६ तिग्मं अनीकं विदितं **सहस्वत्** । अथर्व० ४,२७,७

सहीयस्
४९७ त्वं पाहि इन्द्र **सहीयसः** नॄन् १,१७१,६ [इन्द्रः ३२६८]

सहुरिः
३८० मरुतः शतस्वी युष्मोतः अर्वा **सहुरिः** सहस्री ७,५८,४

सहो
७७ **सहो** षु णः वज्रहस्तैः । स्तुषे हिरण्यवाशीभिः ८,७,३२

सहो-दाः
४९६ उग्रः उग्रेभिः स्थविरः **सहोदाः** १,१७१,५
[इन्द्रः ३२६७]

साकम्
७ **साकं** वाशीभिः अञ्जिभिः । अजायन्त स्वभानवः
१,३७,२

साकम्

१११ मिमृक्षुः क्रन्दः । साकं जज्ञिरे स्वधया दिवः नरः १,६४,४
१७० श्रुधि आन्य । साकं नरः दंसनैः आ चिकित्रिरे १,१६६,१३
२६७ साकं जाताः सुभ्वः साकं उक्षिताः ५,५५,३
३३५ हिरण्ययासः साकं वृष्णैः पौंस्येभिः च भूवन् ६,६६,२

साकम्–उक्ष्

३७७ प्र साकमुक्षे अर्चत गणाय । यः तुविष्मान् ७,५८,१

सातम्

४४० प्र इमं वाजं वाजसाते अवन्तु । अथर्व० ४,२७,१

सातिः

१८९ सातिः न वः अमवती स्वर्वती । त्वेषा १,१६८,७
९७ अभि सः द्युम्नैः उत वाजसातिभिः । सुम्ना वः ८,२०,१६
३४१ मरुतः यं अवथ वाजसातौ । सः व्रजं दर्ता ६,६६,८

साधत्

३४० रजस्तुः । वि रोदसी पथ्याः याति साधन् ६,६६,७

साधारणी

१७५ अयासः साधारण्या इव मरुतः मिमिक्षुः १,१६७,४

सानु

४५१ दिवः चित् सानु रेजत स्वने वः । यत् क्रीळथ ५,६०,३
३०६ पन्तुः ओजसा । अन्तात् दिवः बृहतः सानुनः परि ५,५९,७

सान्तपनः

४२६ प्रघासी च सान्तपनः च । वा० य० १७,८५
४४७ सान्तपनाः मत्सराः मादयिष्णवः । अथर्व० ७,८२,३
३९१ सान्तपनाः इदं हविः । मरुतः तत् जुजुष्टन ७,५९,९

सामन्

४१९ त्रिगन्तवः त्रिष्टुभः अङ्गिरसः न सामभिः १०,७८,५

साम–विप्रः

२६३ स्तर्दिरं । यूयं ऋषि अवथ सामविप्रम् ५,५४,१४

सासह्वस्

४२६.२ धुनिः च सासह्वान् च । वा० य० ३९,७

साव्ह

३६७ मरुद्भिः उग्रः पृतनासु साव्हा । व दं अर्वा ७,५६,२३

सिंहः

११५ सिंहा इव नानदति

सिच्

४३८ यत्र नरः मरुतः सि
१३३ असिञ्चन् उत्सं गो
४४१ ये आसिञ्चन्ति र

सित

४११ शिशाकृतः । प्रकासः

सितिः

३३३ स्यातारः हि प्रसितौ

सिन्धुः

२४२ कुभा क्रुमुः । मा वः
१९० प्रति स्तोभन्ति सिन्

२४० तनृदानाः सिन्धवः
५० नि सिन्धवः विधर्मे
४२१ सिन्धवः न ययिय
१०५ याभिः सिन्धुं अव
१०३ यत् सिन्धौ यत् अ

सिन्धु–मातृ

४२० आव नः न शूरः सि

सिस्रत्

२५९ दिवः मर्तान पः अध्व

सीम्

११ सः च धूतयः । य
१४ स्थिरं हि जानं एषां ।

सु

(१९ । १,३७,१४; ; २६
(४९३ । १,१३५,१८ [
; २३४ । ५,५४,१५; ; ३
७७–७८ ; ८,७,१८,३३–
८,९४,३; (४२० । १०,

सु–अन्च्

३६० अयनः न ये मरु

४५३ युवा पिता स्वपाः रुद्रः एषां । सुदुघा पृश्निः ५,६०,५

सु-अप्नस्

४१५ स्वाध्यः । देवाव्यः न यज्ञैः स्वप्नसः १०,७८,१

सु-अर्कः

४४७ संवत्सरीणाः मरुतः स्वर्काः । अथर्व० ७,८२,३

१५१ आ विद्युन्मद्भिः मरुतः स्वर्कैः । रथेभिः यात १,८८,१

सु-अवस्

४४९ ईळे अग्निं स्ववसं नमोभिः ५,६०,१

सु-अश्वः

२८५ स्वश्वाः स्थ सुरथाः पृश्निमातरः । स्वायुधाः ५,५७,२

३४५ नरः सनीळाः । रुद्रस्य मर्याः अध स्वश्वाः ७,५६,१

सु-आध्यः

४१५ विप्रासः न मन्मभिः स्वाध्यः । देवाव्यः १०,७८,१

सु-आयुधः

२८५ पृश्निमातरः स्वायुधाः मरुतः याथन शुभम् ५,५७,२

३२२ स्वारेमाणः हिरण्ययाः । स्वायुधासः ५,८७,५

३५५ स्वायुधासः इष्मिणः सुनिष्काः । तन्वः शुम्भमानाः ७,५६,११

सु-उक्तम्

३८२ इदं सूक्तं मरुतः जुषन्त । द्वेषः युयोत ७,५८,६

१९३ नमसा अहं । सूक्तेन भिक्षे सुमतिं तुराणाम् १,१७१,१

सु-कृत्

१६९ वः दात्रं । जनाय यस्मै सुकृते अराध्वम् १,१६६,१२

१३१ त्वष्टा यत् वज्रं सुकृतं हिरण्ययं । अवर्तयत् १,८५,९

सु-क्रतुः

३३० तं वः इन्द्रं न सुक्रतुं । वरुणं इव ६,४८,१४

सु-क्षत्रः

४३९ सुक्षत्रासः रिशादसः १,१९,५; [अग्निः २४४२]

सु-क्षितिः

३६८ अभः देव सुक्षितये तरम अथ त्वं ओकः ७,५६,२४

सुखः

४५० पर्वताः चित् ... । सुखेषु रुद्राः मरुतः रथेषु ५,६०,२

सु-खादिः

१५० ये निमिश्लिरे । ये अञ्जिभिः ये रुक्मेभिः सुखादयः १,८७,६

३१८ प्र शर्धाय प्रयज्यवे सुखादये । तवसे ५,८७,१

सु-ग

२५५ सजोषसः । चक्षुः इव यन्तं अनु नेषथ सुगम् ५,५४,६

४८७ सुगाः अपः चकर वज्रबाहुः १,१६५,८ [इन्द्रः ३२५७]

सु-गोपातमः

१३५ यस्य हि क्षये । पाथ सः सुगोपातमः जनः १,८६,१

सु-चन्द्रः

२११ निमेघमानाः सुचन्द्रं वर्णं दधिरे सुपेशसम् २,३४,१३

सु-चेतु

१६३ यूयं नः उग्राः मरुतः सुचेतुना १,१६६,६

सु-जात

१५३ युष्मभ्यं कं मरुतः सुजाताः । तुविद्युम्नासः १,८८,३

१६९ तत् वः सुजाताः मरुतः महित्वनम् १,१६६,१२

२८८ सुजातासः जनुषा रुक्मवक्षसः दिवः अर्काः ५,५५,५

३०५ सुजातासः जनुषा पृश्निमातरः । नः अच्छ जिगातन ५,५९,६

८९ गोबन्धवः सुजातासः इषे भुजे । स्परसे नु ८,२०,८

२४५ कस्मै अद्य सुजाताय । रातहव्याय प्र ययुः ५,५३,१२

२८३ यस्मिन् सुजाता सुभगा महीयते । मीळ्हुषी ५,५६,९

३६५ भजतन । यत् ईं सुजातं वृषणः वः अस्ति ७,५६,२१

सु-जिह्वः

१३८ मन्द्राः सुजिह्वाः स्वरितारः आसभिः १,१६६,११

सुत

१३८ अस्य वीरस्य बर्हिषि । सुतः सोमः दिविष्टिषु १,८६,४

३९८ अन्ति सोमः अयं सुतः पिबन्ति अस्य मरुतः ८,९४,४

४८३ ब्रह्माणि मे मतयः शं सुतासः १,१६५,४ [इन्द्रः ३२४३]

१८५ सोमासः न ये सुताः तृप्तांशवः १,१६८,३

३८५ अस्माकं अद्य मरुतः सुते सचा । विश्वे ७,५९,३

४०० इन्द्रः सुतस्य गोमतः प्रातः होता इव मत्सति ८,९४,६

सुत-सोमः

१७७ अर्कः यत् वः । मरुत गाथं सुतसोमः दुवस्यन् १,१६७,३

सु-दंसस्

१२३ ये शुम्भन्ते । ... सुदंससः १,८५,१

सु-दानुः

३३० सु चित् सुदानुः अव ... ६,६६,५

५ यशं पुनीतन । यूयं हि स्थ सुदानवः १,१५,२
४७९ हत वृत्रं सुदानवः १,२३,९ [इन्द्रः ३२४९]
४५ असामि ओजः। बिभृथ सुदानवः असामि शवः १,३९,१०
११३ पिन्वन्ति अपः मरुतः सुदानवः पयः घृतवत् १,६४,६
१३२ धमन्तः वाणं मरुतः सुदानवः । रण्यानि चक्रिरे १,८५,१०
१९५ चित्रः ऊती सुदानवः । मरुतः अहिभानवः १,१७२,१
१९६ आरे सा वः सुदानवः । ऋञ्जती शरुः १,१७२,२
१९७ तृणस्कन्दस्य नु विशः परि वृङ्क्त सुदानवः १,१७२,३
२०६ यत् युञ्जते अश्वान् रथेषु भगे आ सुदानवः २,३४,८
२१५ वर्पनिर्णिजः । सिंहाः न हेषक्रतवः सुदानवः ३,२६,५
२२१ अर्हन्तः ये सुदानवः । नरः असामिशवसः ५,५२,५
२३९ आ यं नरः सुदानवः ददाशुषे । कोशं अचुच्यवुः ५,५३,६
२८८ पुरुद्रप्साः अञ्जिमन्तः सुदानवः । त्वेषसंदृशः ५,५७,५
५७ यूयं हि स्थ सुदानवः । रुद्राः ऋभुक्षणः दमे ८,७,१२
६४ इमा उ वः सुदानवः । पिप्युषीः इषः ८,७,१९
६५ क्व नूनं सुदानवः । मदथ वृक्तबर्हिषः ८,७,२०
९९ ये च अर्हन्ति मरुतः सुदानवः । स्मत् मीळ्हुषः ८,२०,१८
१०४ मारुतस्य नः । आ भेषजस्य वहत सुदानवः ८,२०,२३
३९२ गृहमेधासः आ गत । युष्माक ऊती सुदानवः ८,९४,१०
४१९ ज्येष्ठासः आशवः दिधिषवः न रथ्यः सुदानवः १०.७८,५
४६१-६२ सं वः अवन्तु सुदानवः । अथर्व० ४,१५,७-८
४३३ आ वः रोहितः शृणवत् सुदानवः । अथर्व० १३,१,३

सु-दास्

२३५ कस्मै ससुः सुदासे अनु आपयः । इळाभिः ५,५३,२

सु-दिनम्

४५३ पिता रुद्रः । सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः ५,६०,५

सु-दीतिः

८३ आ रुद्रासः सुदीतिभिः इषा नः अद्य आ गत ८,२०,२

सु-दुघा

४५३ पिता रुद्रः । सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः ५,६०,५

सु-देवः

२९८ सुदेवः समह असति सुवीरः । नरः मरुतः ५,५३,१५

सु-धन्वन्

२८९ मनीषिणः । सुधन्वानः इषुमन्तः निषङ्गिणः ५,५७,२

सु-धिता

१६३ रिणाति पश्वः सुधिता इव बर्हणा १,१६६,६
१७४ मिम्यक्ष येषु सुधिता घृताची १,१६७,३

सु-निष्कः

३५५ स्वायुधासः इष्मिणः सुनिष्काः । तन्वः शुम्भमानाः ७,५६,११

सु-नीतिः

४१६ प्रज्ञातारः न ज्येष्ठाः सुनीतयः । सुशर्माणः १०,७८,२

सुन्वत्

४५५ रिशादसः वामं धत्त यजमानाय सुन्वते ५,६०,७

सु-पिश्

११५ प्रचेतसः । पिशाः इव सुपिशः विश्ववेदसः १,६४,८

सु-पेशस्

२८७ वर्पनिर्णिजः । यमाः इव सुसदृशः सुपेशसः ५,५७,४
२११ निमेघमानाः । सुचन्द्रं वर्णं दधिरे सुपेशसम् २,३४,१३

सु-प्रकेत

४९७ सुप्रकेतेभिः सासहिः दधानः १,१७१,३

सु-बर्हिस्

१०६ यत् सनुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः पर्वतेषु भेषजम् ८,२०,२५

सु-भग

१४१ सुभगः सः प्रयज्यवः । मरुतः अस्तु १,८६,७
९६ सुभगः सः वः ऊतिषु । आस पूर्वासु मरुतः ८,२०,१५
४५४ मध्यमे वा । यत् वा अवमे सुभगासः दिवि स्थ ५,६०,६
२८३ यस्मिन् सुजाता सुभगा महीयते । सचा मरुत्सु ५,५६,९

सु-भाग

४२२ सुभागान् नः देवाः कृणुत सुरत्नान् १०,७८,८
१७८ स्थिरा चित् जनीः वहते सुभागाः १,१६७,७

सु-भूः

२६७ साकं जाताः सुभ्वः साकं उक्षिताः ५,५५,३
३०२ अश्वाः इव सुभ्वः चारवः स्थन श्रियसे चेतथ ५,५९,३
३२० शृण्विरे गिरा । सुशुक्वानः सुभ्वः एवयामरुत् ५,८७,३
३३६ स यत् पृश्निः सुभ्वे गर्भं आ अधात् ६,६६,३

सु-मखः

१२६ वि ये भ्राजन्ते सुमखासः ऋष्टिभिः १,८५,४
३२४ ते रुद्रासः सुमखाः अग्नयः यथा । तुविद्युम्नाः ५,८७,७
१०८ वृष्णे शर्धाय सुमखाय वेधसे । नोधः सुवृक्तिं प्र भर १,६४,१

४९० इन्द्राय वृष्णे सुमखाय मह्यम् १,१६५,११
[इन्द्रः ३२६०]

सु-मतिः

२१३ वः ऊतिः ओ सु वाश्रा इव सुमतिः जिगातु २,३४,१५
३७३ यजत्राः । अस्मे वः अस्तु सुमतिः चनिष्ठा ७,५७,४
३८६ अभि वः आ अवर्त् सुमतिः नवीयसी ७,५९,४
१६३ सुचेतुना । अरिष्टग्रामाः सुमतिं पिपर्तन १,१६६,६
१९३ सूक्तेन भिक्षे सुमतिं तुराणाम् १,१७१,१
४३८ ऊर्जं च तत्र सुमतिं च पिन्वत । अथर्व० ६,२२,२
३७४ प्र नः अवत सुमतिभिः यजत्रा प्र वाजेभिः ७,५७,५

सु-मातृ

४२० शिशूलाः न क्रीळयः सुमातरः । उत त्विषा १०,७८,६

सु-मायः

१५१ वर्षिष्ठया नः इषा । वयः न पप्तत सुमायाः १,८८,१
१७३ ज्येष्ठेभिः वा बृहद्दिवैः सुमायाः १,१६७,२

सु-मारुत

४०७ सुमारुतं न ब्रह्माणं अर्हसे गणं अस्तोषि १०,७७,१
४०८ सुमारुतं न पूर्वीः अति क्षपः दिवः पुत्रासः १० ७७,२

सुमेक

३२९ शवसा धृष्णुसेनाः उभे युजन्त रोदसी सुमेके ६,६६,६
३६१ नः मरुतः मृळन्तु । वरिवस्यन्तः रोदसी सुमेके
७,५६,१७

सुम्नम्

२४२ मा वः सिन्धुः । अस्मे इत् सुम्नं अस्तु वः ५,५३,९
६० एतावतः चित् एषां । सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ८,७,१५
२३ क्व वः सुम्ना नव्यांसि । मरुतः क्व सुविता १,३८,३
९७ उत वाजसातिभिः सुम्ना वः धूतयः नशत्८,२०,१६
३२८ या मृळीके मरुतां । या सुम्नैः एवयावरी ६,४८,१२
३६१ आरे । सुम्नेभिः अस्मे वसवः नमध्वम् ७,५६,१७
२३४ कः वा पुरा सुम्नेषु आस मरुताम् ५,५३,१

सुम्न-यत्

५६ मरुतः यत् ह वः दिवः सुम्नयन्तः हवामहे ८,७,११

सुम्न-युः

१९८ तं वः शर्धं मारुतं सुम्नयुः गिरा उप ब्रुवे २,३०,११

सु-यमः

४४० आशून् इव सुयमान् अह्वे ऊतये । अथर्व० ४,२७,१
२६५ रुक्मवक्षसः दृदन्ते अश्वैः सुयमेभिः आशुभिः ५,५५,१

सु-रणम्

२८२ आ यस्मिन् तस्थौ सुरणानि बिभ्रती । सचा मरुत्सु
५,५६,८

सु-रत्न

४२२ सुभागान् नः देवाः कृणुत सुरत्नान् १०,७८,८

सु-रथः

२८५ स्वश्वाः स्थ सुरथाः पृश्निमातरः । स्वायुधाः ५,५७,२

सु-रातिः

४१७ शिमीवन्तः । पितॄणां न शंसाः सुरातयः १०,७८,३

सुवानः

५९ अर्थीव यत् गिरीणां । सुवानैः मन्दध्वे इन्दुभिः
८,७,१४

सुवितम्

२३ क्व वः सुम्ना नव्यांसि मरुतः क्व सुविता १,३८,३
१८३ आ वः अर्वाचः सुविताय रोदस्योः । वव्रृत्याम्
१,१६८,१
२८४ सजोषसः हिरण्यरथाः सुविताय गन्तन ५,५७,१
३०० प्र वः स्पट् अक्रन् सुविताय दावने ५,५९,१
३०३ भूमिं रेजथ । प्र यत् भरध्वे सुविताय दावने ५,५९,४
७८ आ नव्यसे सुविताय ववृत्यां चित्रवाजान् ८,७,३३

सु-वीरः

१९५ बाहुजूतः । युष्मत् सदश्वः मरुतः सुवीरः १,१७१,४
२४८ सुदेवः समह असति सुवीरः । नरः मरुतः ५,५३,१५
१३४ मरुतः वि यन्त रयिं नः धत्त वृषणः सुवीरम्
१,८५,१२
२९० गोमत् अश्ववत् रथवत् सुवीरं । चन्द्रवत् ५,५७,७
४१३ रेवत् सः वयः दधते सुवीरं गोपीथे अस्तु १०,७७,७
३४९ सा विट् सुवीरा मरुद्भिः अस्तु सनात् सहन्ती७,५६,५

सु-वीर्यः

३५९ वाजिनः हवीमन् मक्षु रायः सुवीर्यस्य दात७,५६,१५

सु-वृक्तिः

१०८ सुमखाय वेधसे नोधः सुवृक्तिं प्र भर मरुद्भ्यः१,६४,१
१८३ महे ववृत्यां अवसे सुवृक्तिभिः १,१६८,१

सु-वृध्

३०४ शूराः इव प्रयुधः मर्याः इव सुवृधः ववृधुः नरः५,५९,५

सु-वेदम्

३३१ चर्षणिभ्यः आ सुवेदा नः वसु करन् ६,४८,१५

सु-शम्
३ यन्त नः शर्म सप्रथः सुशमि । धीत हवन् ५,८७,९

सु-शर्मन्
३ सुर्न तरः । सुशर्माणः न सोमाः ऋतं यते १०,७८,२

सु-शास्तिः
१३ क्रतुंक्रतुं गर्भंगर्भं सुशस्तिभिः अंजः इनंदे ३,२३,३
२४ क्रतुंक्रतुं गर्भंगर्भं सुशस्तिभिः अनु मानैत५,५३,११

सु-शुक्वन्
१० शुक्वने गिरा । सुशुक्वानः सुभ्वः एवमरुत् ५,८७,३

सु–श्रवस्तम
०१ सुम्नः चन्द्रर् न सुश्रवस्तमान् गिरा । वन्दस्व
८,१०,१०

सु–संस्कृतः
३२ रथाः अश्वासः एषां सुसंस्कृताः अभीशवः १,३८,१२

सु–सदृश्
१८७ वर्पोलितिः । यनाः इव सुसदृशः सुपेशसः ५,५७,४

सु-संदृश्
४१५ राजानः न चित्राः सुसंदृशः । क्षेपाः १०,७८,१

सु-सेनः
४१४.४ सेनजित् च सुसेनः च । वा० द० १७,८३

सु-सोमः
७४ सुसोमे शर्यणावति । आर्जीके पस्त्यावति ययुः८,७,२९

सु–स्तुतः
१६४ अनवभ्रराधसः । अलातृणासः विदथेषु सुस्तुताः
१,१६६,७

सु-स्तुतिः
३७१ सुशोभन् इत् मरुतः सुस्तुतिं नः कवितिभिः शिरेत
७,५८,३
३८१ प्र सं वाणि सुस्तुतिः मघोनां । इदं सूक्तम् ७,५८,६
४७४ सोमभिः वा सुस्तुतिं । मारुतः ८,१०३,१४
[अग्निः १४४७]

सु-स्तुभ्
४१८ सुस्तुभः । अभिस्वर्तारः अर्कं न सुस्तुभः १०,७८,४

सु-हस्त्यः
१०८ अजः न धीरः मनसा सुहस्त्यः गिरः सं अञ्जे १,६४,१

सू
१९१ अस्तृत शुभिः मह्यै राजन महतां अतीहन् १,१३८,९

सूद्
२५६ मरुतः शुचि या नं राजानं वा सुसूदथ ५,५४,७
४३१ सुसूदत मृळत मृळय नः । अथर्व० १,२६,४

सूनुः
१५ उत् उ त्ये सूनवः गिरः । काष्ठाः अज्मेषु अत्नत
१,३७,१०
१२३ ये शुम्भन्ते । यामन् रुद्रस्य सूनवः सुदंससः १,८५,१
९८ यथा रुद्रस्य सूनवः । दिवः वशन्ति ८,२०,१७
११९ विदथानि । रुद्रस्य सूनुं हवसा गृणीमसि १,६४,१२
१५९ शिशुं न सूनुं मधु बिभ्रतः उप । क्रीळन्ति १,१६६,२
३४४ भ्राजदृष्टि । रुद्रस्य सूनुं हवसा आ विवासे ६,६६,११

सूनृतम्
३३२ वाणी बाणस्य शुभनः प्रणीतिः अस्तु सूनृता ६,४८,२०
३७५ अस्मदस्य प्रजायै जिगृत रायः सूनृता मघानि ७,५७,६

सूरः
८१ अग्निः हि । इन्द्रः न सूरः अर्चिषा ८,७,३६
१३२ वर्पोभिः आनि सूरं चिद् अक्तुभिः इयः १,८६,५

सूर–चक्षस्
४२८ अग्निजिह्वाः मनवः सूरचक्षसः । वा० द० ३३,९०

सूरिः
२३१ प्र ये मे वन्ध्येषे । गां वोचन्त सूरयः ५,५२,१६
४०१ क्व अतिपन्त सूरयः । तिरः आपः इव ८,९४.७
४१० अश्वानः न सूरयः सिन्धुमातरः आदर्दिरासः १०,७८,६
३७३ विश्वे कवी ! अच्छ सूरीन् सर्वताता जिगात ७,५७,७
२३२ युग उचेत सूरिभिः यामश्रुतेभिः अञ्जिभिः ५,५२,१५

सूर्यः
२५४ महित्वनं । दीर्घं ततान सूर्यः न योजनम् ५,५४,५
३०१ शिवते शुभ्रं । सूर्यः न चक्षुः रजसः विसर्जने ५,५९,३
३३३ यस्य वर्तिः । परि द्यां देवः न एति सूर्यः ६,४८,२१
४०१ त्वना रिरिक्रे अभ्रात् न सूर्यः । पावकासः १०,७७,३
१०९ प्रवत्सः शुभ्य. सर्याः इव । सत्वानः न १,६४,२
६७ तं उ सूर्यं सं वज्रं पर्वतः ययुः ८,७,२२
५३ दधन्ति यज्ञिं ओजसा । पन्थां सूर्याय यातवे ८,७,८
२३७ वक्षुः नरः । विरोकिनः सूर्यस्य इव रश्मयः ५,५५,३
२६८ महित्वनं । विरोकिनं सूर्यस्य इव चक्षणम् ५,५५,४

सूर्यः

३०४ मर्याः इव सुवृधः । **सूर्यस्य** चक्षुः प्र मिनन्ति वृष्टिभिः ५,५९,५
१५९ सगरसः । **सूर्ये** उदिते मदथ दिवः नरः ५,५४,१०

सूर्य-त्वचस्

३९३ इहेह वः स्वतवसः । कवयः **सूर्यत्वचः** ८,९४,११
४३० मरुतः **सूर्यत्वचसः** शर्म यच्छाथ । अथर्व० १,२६,३

सूर्या

१७६ आ **सूर्या** इव विधतः रथं गात् १,१६७,५

सूर्या-मासौ

३९६ व्रता विश्वे धारयन्ते । **सूर्यामासा** दृशे कम् ८,९४,२

सृ

२३५ कर्णे **सस्रुः** सुदारो अनु आपयः । इळाभिः ५,५३,२
२४० ततृदानाः सिन्धवः । प्र **सस्रुः** धेनवः यथा ५,५३,७

सृज्

५३ **सृजन्ति** रश्मिं ओजसा । पन्थां सूर्याय यातवे ८,७,८
२३९ सुदानवः । वि पर्जन्यं **सृजन्ति** रोदसी अनु ५,५३,६
४४३ दिवः पृथिवीं आभि ये **सृजन्ति** । अथर्व० ४,२७,४
४७३ **सृजामि** सोम्यं मधु १,१९,९; [अग्निः २४४६]
४५ मरुतः परिमन्यवे । इषुं न **सृजत** द्विषम् १,३९,१०
३२७ आ सखायः सबर्दुघां । **सृजध्वं** अनपस्फुराम् ६,४८,११
२२२ आ युधा नरः । ऋष्वा ऋष्टीः **असृक्षत** ५,५२,६
९८वाश्रा इव विद्युत् मिमाति यत् एषां वृष्टिः**असर्जि** १,३८,८
४४४ ये वा वयः मेदसा **संसृजन्ति** । अथर्व० ४,२७,५

सृत्

४५७ अदार**सृत्** भवतु देव सोम । अथर्व०१,२०,१
१४८ सः हि स्व**सृत्** पृषदश्वः युवा गणः । अया ईशानः १,८७,४
११८ मखाः अयासः स्व**सृतः** ध्रुवच्युतः दुध्रकृतः १,६४,११

सृप्र-भोजस्

३३० अर्यमणं न मन्द्रं **सृप्रभोजसं** । विष्णुं न ६,४८,१४

सृष्टम्

४६० त्वया **सृष्टं** बहुलं आ एतु वर्षम् । अथर्व०४,१५,६

सेन-जित्

४२४.४ **सेनजित्** च सुषेणः च । वा० य०१७,८३

सेना

४३५ असौ या **सेना** मरुतः परेषाम् । अथर्व०३,२,६
४३४.१ इन्द्रः **सेनां** मोहयतु । अथर्व० ३,१,६
३३९ ते इत् उग्राः शवसा धृष्णु**सेनाः** युजन्त रोदसी ६,६६,६
४२४.४ सेनजित् च सु**सेनः** च । वा०य० १७,८३

सो

१२७ उत अरुषस्य वि **स्यन्ति** धाराः । चर्म इव उदभिः १,८५,५

सोभरिः

१०० वृष्णः पावकान् अभि **सोभरे** गिरा । गाय ८,२०,१९
४७४ **सोभर्याः** उप सुस्तुतिम् ८,१०३,१४[अग्निः२४४७]
८९ गोभिः वाणः अज्यते **सोभरीणां** । रथे कोशे ८,२०,८

सोभरी-युः

८३ आ गन्त पुरुस्पृहः । यज्ञं आ **सोभरीयवः** ८,२०,२

सोमः

१३८ अस्य वीरस्य बर्हिषि । सुतः **सोमः** दिविष्टिषु १,८६,४
१७७ मरुतः हविष्मान् । गायत् गाथं सुत**सोमः** दुवस्यन् १,१६७,६
३९८ अस्ति **सोमः** अयं सुतः । पिबन्ति अस्य मरुतः ८,९४,४
१८५ **सोमासः** न ये सुताः तृप्तांशवः १,१६८,३
४१६ सुनीतयः । सुशर्माणः न **सोमाः** ऋतं यते १०,७८,२
४५७ अदारसृत् भवतु देव **सोम** । अथर्व०१,२०,१
४५६ अग्ने मरुद्भिः । **सोमं** पिब मन्दसानः गणश्रिभिः ५,६०,८
१३२ मरुतः सुदानवः । मदे **सोमस्य** रण्यानि चक्रिरे १,८५,१०
१४९ वदामसि **सोमस्य** जिह्वा प्र जिगाति चक्षसा १,८७,५
४०४–६ अस्य **सोमस्य** पीतये ८,९४,१०–१२
७४ सु**सोमे** शर्यणावति । आर्जीके पस्त्यवति ययुः ८,७,२९

सोम-पीतिः

४७७ इन्द्रं आ **सोमपीतये** १,२३,७; [इन्द्रः ३२४७]
३९७;४०३ मरुतः **सोमपीतये** ८,९४,३.९
४७४ रुद्रेभिः **सोमपीतये** ८,१०३,१४; [अग्निः २४४७]

सोम्य

४७३ सृजामि **सोम्यं** मधु १,१९,९; [अग्निः २४४६]
३८८ अस्रेधन्तः मरुतः **सोम्ये** मधौ । मादयाध्वै ७,५९,६

सौभगम्

२४६ यत् वः ईमहे । राधः विश्वायु **सौभगम्** ५,५३,१३
२३ मरुतः क्व सुविता । क्वो विश्वानि **सौभगा** १,३८,३
४५३ अकनिष्ठासः एते सं भ्रातरः ववृधुः **सौभगाय** ५,६०,५

स्कन्द्

२१९ स्यन्द्रासः न उक्षणः। अति **स्कन्दन्ति** शर्वरीः ५,५२,३

स्कन्दः

१९७ तृणस्कन्दस्य नु विशः परि वृङ्क्त १,१७२,३

स्कम्भ-देष्णः

१६४ प्र **स्कम्भदेष्णाः** अनवभ्रराधसः। अलातृणासः १,१६६,७

स्कुवः

११४ मारुतः गणः। त्वेषरथः शुभंयावा अप्रतिस्कुतः ५,६१,१३

स्तन्

४६० अभि क्रन्द **स्तनय** अर्दय उदधिम्। अथर्व० ४,१५,६

स्तनयत्

११३ नयन्ति वाजिनं। उत्सं दुहन्ति **स्तनयन्तं** अक्षितम् १,६४,६

स्तनयत्-अमः

२५२ दाधृनिवृतः। **स्तनयदमाः** रभसा उदोजसः ५,५४,३

स्तम्भ्

४०५ रोदसी। तरस्तभुः मरुतः हुवे अद्य सोमस्य पीतये ८,९४,११

स्तु

२६२ तविषीमन्तं। **स्तुषे** गणं मारुतं नव्यसीनाम् ५,५८,१

३१० वृषभोजसे। विष्णुं न **स्तुषे** आदिशे ६,४८,१४

७७ यज्ञासः अभि मरुद्भिः **स्तुषे** हिरण्यवाशीभिः ८,७,३२

४४२ **स्तौमि** मरुतः नाधितः जोहवीमि। अथर्व० ४,२७,१

२६६ मर्ताः अरेपसः। इमान् पश्यन् इति **स्तुहि** ५,५३,३

२४९ **स्तुहि** भोजान् स्तुवतः अस्य यामनि। अनु [illegible] ५,५३,१६

९५ तान् वन्दस्व मरुतः तान् उप **स्तुहि** ८,२०,१६

४०७ [illegible] **अस्तोषि** [illegible] १०,७७,१

स्तुवः

१७६ [illegible]**स्तुवा** [illegible] १,१६७,५

स्तुव

१९४ [illegible] **स्तुत** [illegible] १,१६९,३

[[illegible]]

१६१ [illegible] १,१६६,७

२३० वृषणः ओजसा। **स्तुताः** धीभिः इषण्यत ५,५२,१४

४९४ **स्तुतासः** नः मरुतः मृळयन्तु १,१७१,३

[इन्द्रः ३२३५]

३७५ उत **स्तुतासः** मरुतः व्यन्तु विश्वेभिः नामभिः ५,५७,६

३७६ आ **स्तुतासः** मरुतः विश्वे ऊती। जिगात ७,५७,७

३५९ यदि **स्तुतस्य** मरुतः अधीथ इत्था विप्रस्य ७,५६,१५

स्तुतिः

३८१ प्र सा वाचि **सुस्तुतिः** मघोनां। मरुतः जुषन्त ७,५८,३

३७३ बृहत् दधात जुजोषन् इत् मरुतः **सुस्तुतिं** नः ७,५८,३

स्तुभ्

१५६ मरुतः अनु[illegible] प्रति **स्तोभति** वाघतः न वाणी १,८८,६

१९० प्रति **स्तोभन्ति** सिन्धवः पविभ्यः [illegible] १,१६८,८

१५३ वाघतः न वाणी **अस्तोभयत्** [illegible] १,८८,६

२५० पर्वतस्तुभे [illegible] ५,५४,१

२२८ छन्दःस्तुभः कुभन्यवः। [illegible] ५,५२,१२

१६८ [illegible] १,१६६,११

४१८ [illegible] **स्तुभः** १०,७८,४

स्तुवत्

८० [illegible] **स्तुवते** [illegible] ८,७,३५

२४९ [illegible] **स्तुवतः** [illegible] ५,५३,१६

स्तृ

१६० [illegible] **स्तृणीतः** १,८७,२

१६८ [illegible] **स्तृणीत** १,१६६,११

३०० [illegible] **स्तृणीत** [illegible] ६,६६,८

स्तोतृ

३६ [illegible] **स्तोतारः** [illegible] १,३८,५

१४४ [illegible] **स्तोतृन्** [illegible] १०,७७,८

३७५ [illegible] **स्तोतृभ्यः** [illegible]

स्तोत्रम्

२१३ [illegible] **स्तोत्रस्य** [illegible]

४४४ [illegible] **स्तोत्रस्य** [illegible] १०,७७,८

स्तोमः

४९० अमन्दत् मा मरुतः **स्तोमः** अत्र १,१६५,११
[इन्द्रः ३२६६]
१७२;१८२;१९२ एषः वः **स्तोमः** मरुतः इयं गीः
१,१६६,१५;१६७,११;१६८,१०
१९४ एषः वः **स्तोमः** मरुतः नमस्वान् १,१७१,२
२२० मरुत्सु वः दधीमहि । **स्तोमं** यज्ञं च ५,५२,४
४४९ भरे वाजयद्भिः । प्रदक्षिणित् मरुतां **स्तोमं** ऋध्याम्
५,६०,१
५४ इमं **स्तोमं** ऋभुक्षणः । इमं मे वनत हवम् ८,७,९
२७९ उत् तिष्ठ नूनं एषां । **स्तोमैः** समुक्षितानाम् ५,५६,५
६२ उत् उ स्वानेभिः ईरते । उत् **स्तोमैः** पृश्निमातरः
८,७,१७
६६ **स्तोमेभिः** वृक्तबर्हिषः शर्धान् ऋतस्य जिन्वथ८,७,२१

स्तौनः

३३८ न ये **स्तौनाः** अयासः मह्ना । अव यासत् ६,६६,५

स्थविरः

४०६ उग्रः उग्रेभिः **स्थविरः** सहोदाः १,१७१,५
[इन्द्रः ३२६७]

स्था

११६ अमतिः । विद्युत् न **तस्थौ** मरुतः रथेषु वः १,६४,९
१२० जनान् अति । **तस्थौ** वः ऊती मरुतः यं आवत
१,६४,१३
२८२ आ यस्मिन् **तस्थौ** सुरणानि बिभ्रती । रोदसी ५,५६,८
३३९ स्वशोचिः । आ अमवत्सु **तस्थौ** न रोकः ६,६६,६
१२९ महित्वना आ । नाकं **तस्थुः** उरु चक्रिरे सदः १,८५,७
४५० आ ये **तस्थुः** पृषतीषु श्रुतासु । वना जिहते ५,६०,२
५३;८१ ते भानुभिः वि **तस्थिरे** ८,७,८.३६
२७९ उत् **तिष्ठ** नूनं एषां । स्तोमैः समुक्षितानाम् ५,५६,५
२४१ आ यात मरुतः दिवः । मा अव **स्थात** परावतः
५,५३,८
८२ प्रस्थावानः मा अप **स्थात** समन्यवः । नमयिष्णवः
८,२०,१
३९४ वि **तिष्ठध्वं** मरुतः विक्षु इच्छत गृभायत ७,१०४,१८
१८० अर्णः न द्वेषः धृषता परि **स्थुः** १,१६७,९
१७७ आ **अस्थापयन्त** युवतिं युवानः १,१६७,६
२४२ मा वः रसा । मा वः परि **स्थात्** सरयुः पुरीषिणी
५,५३,९
४१३ यः ईवतः वृषणः अस्ति गोपाः स: अद्वयावी हवते वः उक्थैः ... [illegible] ४१३ यः दधाति यज्ञे अध्वरेष्ठाः मानुषः दशस्यन् १०,७८,७
३६० ते हर्म्येष्ठाः शिशवः न शुभ्राः । वत्सासः न ७,५६,१६
४०६ त्यं नु मारुतं गणं । गिरिस्थां वृषणं हुवे ८,९४,१२
४३६ ते मा अवन्तु । अस्यां प्रतिष्ठायाम् । अथर्व० ५,२४,६
३६९ शर्मन् स्याम मरुतां उपस्थे । यूयं पात ७,५६,२५
३९६ यस्याः देवाः उपस्थे । व्रता विश्वे धारयन्ते ८,९४,२
२२३ वृजने वा नदीनां । सधस्थे वा महः दिवः ५,५२,७
३२० न येषां इरी सधस्थे ईष्टे आ । अग्नयः न ५,८७,३

स्थातृ

३२३ वृद्धशवसः **स्थातारः** हि प्रसितौ संदृशि स्थन ५,८७,६

स्थाः-रश्मन्

३२२ स्वरोचिषः **स्थारश्मानः** हिरण्ययाः स्वायुधासः इष्मिणः
५,८७,५

स्थिर

१२२ नु **स्थिरं** मरुतः वीरवन्तं । रयिं धत्त १,६४,१५
१७८ **स्थिरा** चित् जनीः वहते सुभागाः १,१६७,७
३२ **स्थिराः** वः सन्तु नेमयः । रथाः अश्वासः १,३८,१२
१४ **स्थिरं** हि जानं एषां । वयः अनु द्विता शवः १,३७,९
३८ परा ह यत् **स्थिरं** हथ । नरः वर्तयथ १,३९,३
३७ **स्थिरा** वः सन्तु आयुधा परानुदे । तविषी पनीयसी
१,३९,२
३५१ उग्रं वः ओजः **स्थिरा** शवांसि गणः तुविष्मान्
७,५६,७
९३ उग्रबाहवः । **स्थिरा** धन्वानि आयुधा रथेषु वः
८,२०,१२
८२ मा अप स्थात समन्यवः । **स्थिरा** चित् नमयिष्णवः
८,२०,१
२१८ ते हि **स्थिरस्य** शवसः । सखायः सन्ति ५,५२,२

स्नम्

४८५ विश्वस्य शत्रोः अनमं वधस्नैः १,१६५,६
[इन्द्रः ३२५५]

स्नु

५२ चित्राः यामेभिः ईरते वाश्राः अधि **स्नुना** दिवः८,७,७
४५५ विश्ववेदसः । दिवः वहध्वे उत्तरात् अधि **स्नुभिः**
५,६०,७
३२१ यदा अयुक्त त्मना स्वात् अधि **स्नुभिः** । विष्पर्धसः
५,८७,४

स्पद्

३०० प्र वः **स्पट्** अक्रन् सुविताय दावने अर्च दिवे ५,५९,१

स्पन्द्रः

२१९ ते स्पन्द्रासः न उक्षणः । अति स्कन्दन्ति ५,५२,३
३९० अश्वासः न स्वविद्युतः प्र स्पन्द्रासः धुनीनाम् ५,८७,३
२२४ ते शुभे नरः । प्र स्पन्द्राः युजत त्मना ५,५२,८

स्परस्

८९ हये भुजे । महान्तः नः स्परसे नु ८,२०,८

स्पर्धमाना

४६५ अन्नात् ऐति अभि ओजसा स्पर्धमाना । अथर्व०३,२,६

स्पर्धस्

३९१ विस्पर्धसः विमहसः जिगाति शेवृधः नृभिः ५,८७,४

स्पार्ह

३७१ जुजोषन् सु-स्तुति । प्र नः स्पार्हाभिः ऊतिभिः तिरेत ७,५८,३
३८८ बर्हिः सदत अविते च नः । स्पार्हाणि दातवे वसु ७,५९,६
३६५ मा पश्चात् दघ्म आ नः स्पार्हे भजतन वसव्ये ७,५६,२१

स्पार्ह-वीरम्

२६३ यूयं रयिं मरुतः स्पार्हवीरं । यूयं ऋषिम् ५,५४,१४

स्पृध्

३४४ स्तुषे मनीषाः । गिरयः न आपः उग्राः अस्पृध्रन् ६,६६,११
३४७ शिवः [illegible] । वातस्वनसः श्येनाः अस्पृध्रन् ७,५६,३
२७० विश्वाः इत् स्पृधः मरुतः वि अस्यथ ५,५५,६

स्पृध्यम्

१६६ रथेषु वः । विश्वस्पृध्या [illegible] १,१६६,९

स्पृह्

८३ इध नः [illegible] पुरुस्पृहः । [illegible] ८,२०,३

स्फुरा

३०७ आ सन्तापः [illegible] अनवस्फुराम् ३,४८,१२

स्म

(२०) १,३७,१५; [illegible] २२४-२५ [illegible] ५,५२,८-९;
[illegible] २३८ [illegible] ५,५३,५; [illegible] २५५ [illegible] ५,५४,६; (२८२) ५,५३ [illegible]
(१२६) १,६६,६; [illegible] ३६६ [illegible] ७,५६,२२; [illegible] ८,७,३१

स्मत्

३३५ स्मत् [illegible] । [illegible] ५,८७,८
६९ [illegible] । स्मत् [illegible] ८,२०,१८

स्मसि

२० मदथ वः । स्मसि स्म वयं एषाम् १,३७,१५

स्मि

१९० प्रति स्तोभन्ति सिन्धवः अव स्मयन्त विद्युतः पृथिव्याम् १,१६८,८

स्यः [त्यद्]

२८१ उत स्यः वाजी अरुषः तुविस्वनिः इह धावि ५,५६,७
१५६ एषा स्या वः मरुतः अनुभर्त्री वाघतः न वाणी १,८८,६
४८५ क्व स्या वः मरुतः स्वधा आसीत् १,१६५,६ [इन्द्रः३१५५]

स्यद्

११४ सिंहा इव नानदतः । गिरयः न स्वतवसः रघुस्यदः १,६४,७
१२८ आ वः वहन्तु सप्तयः रघुस्यदः । रघुपत्वानः १,८५,६

स्यन्नः

२४०स्यन्नाः अश्वाः इव अध्वनः विमोचने वि वर्तन्ते५,५३,७

स्योनः

४४२ भवन्तु मरुतः नः स्योनाः । अथर्व० ४,२७,३

स्रज्

२३७ ये [illegible] स्वभानवः । स्रक्षु रुक्मेषु खादिषु ५,५३,४

स्रिध्

२५३ मरुतः [illegible] । न स्रेधति न व्यथते न रिष्यति ५,५४,७
४०१ [illegible] । [illegible] स्रिध ८,९४,७,

स्रिधन्

३८८ अस्रेधन्तः [illegible] । [illegible] ७,५९,६

स्रुच्

३०६ [illegible] स्रुचः । [illegible] ६,६४,११

स्व

२६८ [illegible] स्वं [illegible] । [illegible] ५,५८,१
३०० [illegible] । [illegible] स्वं [illegible] ५,७३,१
३६८ [illegible] स्वं [illegible] ७,५६,२४
३८९ स्वेन [illegible] १,१६५,८ [illegible]
३९२ [illegible] स्वात् [illegible] ५,८७,४
२६६ [illegible] । स्वया [illegible] ५,५८,५

स्व-क्षत्रः

४८४ **स्वक्षत्रेभिः** तन्वः शुम्भमानाः १,१६५,५
[इन्द्रः३२५४]

स्व-जः

१८४ वव्रासः न ये **स्वजाः** स्वतवसः १,१६८,२

स्व-तवस्

४२६ **स्वतवान्** च प्रघासी च । वा०य० १७,८५
११४ चित्रभानवः। गिरयः न **स्वतवसः** रघुस्यदः १,६४,७
११९ ते अवर्धन्त **स्वतवसः** महित्वना आ । नाकं तस्थुः १,८५,७
१५९ न मर्धन्ति **स्वतवसः** हविष्कृतम् १,१६६,२
१८४ वव्रासः न ये स्वजाः **स्वतवसः** १,१६८,२
३९३ दुदृह वः **स्वतवसः** । कवयः सूर्यत्वचः ८,९४,११
३४२ गृणते तुराय । मारुताय **स्वतवसे** भरध्वम् ६,६६,९

स्व-धा

४८५ क्व स्या वः मरुतः **स्वधा** आसीत् १,१६५,६
[इन्द्रः३२५५]

१ आत् अह **स्वधां** अनु । पुनः गर्भत्वं एरिरे १,६,४
१५६ अस्तोभयत् वृथा आसां। अनु **स्वधां** गभस्त्योः १,८८,६
४८४ इन्द्र **स्वधां** अनु हि नः बभूथ १,१६५,५
[इन्द्रः३२५४]

१९१ आत् इत् **स्वधां** इषिरां परि अपश्यन् १,१६८,९
३५७ वृष्टिभिः रुचानाः । अनु **स्वधां** आयुधैः यच्छमानाः ७,५६,१३
८८ **स्वधां** अनु श्रियं नरः । वहन्ते अहुतप्सवः ८,२०,७
१११ मिमृक्षुः ऋष्टयः । साकं जज्ञिरे **स्वधया** दिवः नरः १,६४,४
४५१ रैवतासः हिरण्यैः अभि **स्वधाभिः** तन्वः पिपिश्रे ५,६०,४
२१७ ये अद्रोघं अनु**स्वधं** । श्रवः मदन्ति यज्ञियाः ५,५२,१

स्वधिति-वत्

१५२ रुक्मः न चित्रः **स्वधितिवान्** जङ्घनन्त भूम १,८८,२

स्वनः

३२२ **स्वनः** न वः अमवान् रेजयत् वृषा । त्वेषः ५,८७,५
३० अध **स्वनात्** मरुतां अरेजन्त प्र मानुषाः १,३८,१०
४५१ पर्वतः चित् दिवः चित् सानु रेजत **स्वने** वः ५,६०,३
१५८ ऐधा इव यामन् मरुतः तुवि**स्वनः** युधा इव १,१६६,१
३४७ मिथः वपन्त वात**स्वनसः** श्येनाः अस्पृध्रन् ७,५६,३

स्वनि

२८१ उत स्मः वाजी अरुषः तुवि**स्वनिः** इह धायि ५,५६,७
३३१ त्वेषं शर्धः न मारुतं तुवि**स्वनि** अनर्वाणम् ६,४८,१५

स्व-पू

३४७ अभि **स्वपूभिः** मिथः वपन्त । वातस्वनसः ७,५६,३

स्व-भानुः

७ साकं वाशीभिः अञ्जिभिः अजायन्त **स्वभानवः** १,३७,२
२३७ ये अञ्जिषु ये वाशीषु **स्वभानवः** स्रक्षु । रथेषु धन्वसु ५,५३,४
८५ धन्वानि ऐरत शुभ्रखादयः । यत् एजथ **स्वभानवः** ८,२०,४
२५० प्र शर्धाय मारुताय **स्वभानवे** वाचं अनज ५,५४,१
३२८ शर्धाय मारुताय **स्वभानवे** । श्रवः अमृत्यु धुक्षत ६,४८,१२

स्व-यतः

१६१ तविषीभिः अव्यत । प्र वः एवासः **स्वयतासः** अध्रजन् १,१६६,४

स्वयम्

१४७ भ्राजदृष्टयः । **स्वयं** महित्वं पनयन्त धूतयः १,८७,३
२६३ **स्वयं** दधिध्वे तविषीं यथा विद । महान्तः ५,५५,२
३१९ प्र ये जाताः महिना ये च नु **स्वयम्** ५,८७,२
३५५ इष्मिणः सुनिष्काः उत **स्वयं** तन्वः शुम्भमानाः ७,५६,११

स्व-यशस्

४११ श्येनासः न **स्वयशसः** रिशादसः प्रवासः न १०,७७,५

स्व-युक्तः

१८६ अव **स्वयुक्ताः** दिवः आ वृथा ययुः अमर्त्याः १,१६८,४

स्व-युज्

४१६ रुक्मवक्षसः वातासः न **स्वयुजः** सद्यऊतयः १०,७८,२

स्वर्

१८४ स्वतवसः । इषं **स्वः** अभिजायन्त धूतयः १,१६८,२
२६४ सद्यऊतयः येन **स्वः** न ततनाम नॄन् अभि ५,५४,१५

स्व-राज्

२९२ अमवन् वहन्ते उत ईशिरे अमृतस्य **स्वराजः** ५,५८,१
३९८ पिबन्ति अस्य मरुतः उत **स्वराजः** अश्विना ८,९४,४

स्वरितृ

१९८ मन्द्राः सुजिह्वाः **स्वरितारः** आसभिः १,१६६,११

स्व-रोचिस्

[illegible] स्वरोचिषः [illegible] ५,८७,५

स्वर्

६१८ [illegible] । [illegible]स्वर्तारः [illegible] १०,७८,४

स्वर्दृश्

३७८ [illegible] स्वर्दृक् ७,५८,२

स्वर्नृ

[illegible] [illegible] स्वर्णरः । [illegible] ५,५४,१०

[illegible] [illegible] स्वर्णरे ८,१०३,१४ [[illegible]]

स्वर्यः

[illegible] [illegible] स्वर्यं [illegible] ५,५३,४

स्ववृत्

१८९ [illegible] स्ववृती । [illegible] १,१४८,७

स्व-विद्युत्

[illegible] [illegible] । [illegible] स्वविद्युतः [illegible]
[illegible] ५,८७,३

स्व-शोचिः

[illegible] [illegible] स्वशोचिः । [illegible]
६,६६,३

स्व-सरम्

३०१ [illegible] न स्वसराणि [illegible]
३,३४,५

३०६ [illegible] स्वसरेषु [illegible] । [illegible] ३,३४,८

स्व-सृत्

१४८ [illegible] स्वसृत् [illegible] । [illegible]
१,८७,४

११८ [illegible] स्वसृतः [illegible] । [illegible]
१,३४,११

स्वाति

[illegible] [illegible] स्वातिभिः [illegible]
[illegible] [illegible] स्वातिभिः [illegible]
[illegible]

स्वादु-संसद्

६३१ [illegible] । स्वादुसंसदः । [illegible]

स्वानः

[illegible] [illegible] स्वानेभिः [illegible] । [illegible]
८,७,१७

स्वानिन्

[illegible] [illegible] स्वानिनः [illegible] । [illegible] ३,२६,५

स्वाहा

३८८ [illegible] । स्वाहा [illegible] ७,५९,२

४११.१ [illegible] स्वाहा । [illegible] ११.७

४११ [illegible] स्वाहा
[illegible] ५,२४,२

४११ [illegible] स्वाहा । [illegible] ५,२६,५

स्वित्

१८८ [illegible] स्वित् [illegible] १,१६८,२

स्वृ

[illegible] [illegible] स्वरन्ति [illegible] ५,५४,२

[illegible] [illegible] । स्वरन्ति [illegible]
५,५४,१२

[illegible] [illegible] अस्वरन् ५,५४,८

स्वेदः

[illegible] [illegible] स्वेदं [illegible] ५,५८,७

[illegible] स्वेदस्य [illegible] १,८६,८

ह

[illegible]

हंसः

३०३ [illegible] हंसासः [illegible] ३,३४,५

[illegible] [illegible] । [illegible] हंसासः [illegible]
७,५९,७

हन्यम्

[illegible] [illegible] । [illegible] १,१६५,१
[[illegible]]

हन्

३८० [illegible] हन्ति [illegible] ७,५८,३

११८ [illegible] १,३४,११

३८ परा ह यत् स्थिरं हथ । नरः वर्तयथ गुरु १,३९,३
४३४.१ मरुतः घ्नन्तु ओजसा । अथर्व० ३,१,६
४७९ हत वृत्रं सुदानवः १,२३,९ [इन्द्रः ३२४९]
२०७ वर्तयत चक्रिया अव रुद्राः अशसः हन्तन वधः २,३४,९
३९० दुर्हणायुः । तपिष्ठेन हन्मना हन्तन तम् ७,५९,८
१५२ स्वधितिवान् । पव्या रथस्य जङ्घनन्त भूम १,८८,२
३६६ सं यत् हनन्त मन्युभिः जनासः शूराः यह्वीषु७,५६,२२
१३१ अहन् वृत्रं निः अपां औब्जत् अर्णवम् १,८५,९
३९० दुर्हणायुः । तिरः चित्तानि वसवः जिघांसति ७,५९,८
२५६ न सः जीयते मरुतः न हन्यते । न स्रेधति ५,५४,७
११० युवानः रुद्राः अजराः अभोग्घनः । अभ्रिगावः १,६४,३
३६१ आरे गोहा नृहा वधः वः अस्तु । सुम्नेभिः अस्मे ७,५६,१७
२९५ युष्मत् एति मुष्टिहा बाहुजूतः युष्मत् सदश्वः ५,५८,४
४२० सिन्धुमातरः । आदर्दिरासः अद्रयः न विश्वहा १०,७८,६
३३३ नाम यज्ञियं मरुतः वृत्रहं शवः ज्येष्ठं वृत्रहं शवः ६,४८,२१

हनूः

१८७ ऋष्टिविद्युतः रेजति त्मना हन्वा इव जिह्वया १,१६८,५

हन्मन्

३९० दुर्हणायुः । तपिष्ठेन हन्मना हन्तन तम् ७,५९,८

हन्यः

१८७ इषां न यामनि पुरुप्रैषाः अहन्यः न एतशः १,१६८,५

हये

२९१;२९९ हये नरः मरुतः मृळत नः ५,५७,८;५८,८

हरिः

४८३ इमा हरी वहतः ता नः अच्छ १,१६५,४ [इन्द्रः ३२५३]
२८० युङ्ग्ध्वं हरी अजिरा धुरि वोळ्हवे । वहिष्ठा ५,५६,६

हरि-वन्

४८२ वोचेः तत् नः हरिवः यत् ते अस्मे १,१६५,३ [इन्द्रः ३२५२]

हर्म्यम्

१६१ भयन्ते विश्वा भुवनानि हर्म्या चित्रः वः यामः १,१६६,४

हर्म्य-स्थ

३६० ते हर्म्येष्ठाः शिशवः न शुभ्राः वत्सासः न ७,५६,१६

हर्य्

२८४ इयं वः अस्मत् प्रति हर्यते मतिः । तृष्णजे न ५,५७,१
४८३ आ शासते प्रति हर्यन्ति उक्था १,१६५,४ [इन्द्रः ३२५३]

२६४ सद्यऊतयः । इदं सु मे मरुतः हर्यत वचः ५,५४,१५

हवनम्

२७६ ये ते नेदिष्ठं हवनानि आगमन् । तान् वर्ध ५,५६,२

हवमानः

७५ कदा गच्छाथ मरुतः । इत्था विप्रं हवमानम् ८,७,३०

हवः

४७८ विश्वे मम श्रुत हवम् १,२३,८ [इन्द्रः ३२४८]
१३६ यज्ञैः वा यज्ञवाहसः । मरुतः शृणुत हवम् १,८६,२
३२५ गातुं आ इतन । श्रोत हवं जरितुः एवयामरुत् ५,८७,८
३२६ यज्ञियाः सुशमि श्रोत हवं अरक्षः एवयामरुत् ५,८७,९
५४ इमां मे मरुतः गिरं । इमं मे वनत हवम् ८,७,९

हवस्

११९ वनिनं विचर्षणिं रुद्रस्य सूनुं हवसा गृणीमसि १,६४,१२
३४४ भ्राजदृष्टिं । रुद्रस्य सूनुं हवसा आ विवासे ६,६६,११

हविस्

३९१ सांतपनाः इदं हविः । मरुतः तत् जुजुष्टन ७,५९,९
३७५ मरुतः व्यन्तु विश्वेभिः नामभिः नरः हवींषि ७,५७,६
१६० अरासत । रायः पोषं च हविषा ददाशुषे १,१६६,३
४५४ रुद्राः अस्य । अग्ने वित्तात् हविषः यत् यजाम ५,६०,६
२०६ पिन्वते । जनाय रातहविषे महीं इषम् २,३४,८

हविष्कृत्

१५९ नमस्विनं न मर्धन्ति स्वतवसः हविष्कृतम् १,१६६,२

हविष्मत्

१७७ अर्कः यत् वः मरुतः हविष्मान् गायत् गाथम् १,१६७,६
४०७ पुरु वसु हविष्मन्तः न यज्ञाः विजानुषः १०,७७,१

हवी-मन्

३५९ मरुतः अधीथ । इत्था विप्रस्य वाजिनः हवीमन् ७,५६,१५

हव्यम्

४९५ युष्मभ्यं हव्या निशितानि आसन् १,१७१,४ [इन्द्रः ३२६६]
३५६ शुची वः हव्या मरुतः शुचीनां हिनोमि अध्वरम् ७,५६,१२
३८७ इमा वः हव्या मरुतः ररे हि कम् ७,५९,५
९० वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वं हव्या वृषप्रयाव्णे ८,२०,९
९१ रथेन वृषनाभिना । हव्या नः वीतये गत ८,२०,१०

१९८ हिरण्ययेभिः पविभिः पयोवृधः । उत् जिघ्नन्ते १,६४,११

८९ गोभिः वाणः अज्यते । रथे कोशे हिरण्यये ८,२०,८

२६० अग्निभ्राजसः । विद्युतः ऋष्टिषु वितताः हिरण्ययीः ५,५४,११

७० शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः । शुभ्राः वि अजत श्रिये ८,७,२५

१३१ त्वष्टा यत् वज्रं सुकृतं हिरण्ययं । अवर्तयत् १,८५,९

हिरण्य-रथः

२४४ [illegible] । हिरण्यरथाः सुविताय गन्तन ५,५७,१

हिरण्य-वर्णः

२०९, [illegible]वर्णान् [illegible] शंस्यम् १,३४,११

हिरण्य-वाशीः

७१ [illegible] । [illegible] हिरण्यवाशीभिः ८,७,३२

हिरण्य-शिप्रः

२०१ हिरण्यशिप्राः [illegible] । [illegible] २,३४,३

ह्रुतिः

[illegible] । [illegible] ह्रुत्यां [illegible] । अथर्व० ५,२४,६

[illegible] ह्रुतिषु ५,६१,१५

ह्रुणायुः

[illegible] ह्रुणायुः [illegible] ७,५९,८

[illegible]

[illegible] १,१९१,७

[illegible] ५,५३,७

[illegible] ८,२०,१८

[illegible] १,१६८,३

[illegible]

[illegible] ७,५६,५

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

होतृ

३६२ आ वः होता जोहवीति सत्तः । मरुतः गृणानः ७,५६,१८

४०० इन्द्रः सुतस्य गोमतः । प्रातः होता इव मत्सति ८,९४,६

२१२ त्रितः न यान् पञ्च होतॄन् अभिष्टये । आववर्तत् १,३४,१४

१०१ मुष्टिहा इव हव्यः । विश्वासु पृत्सु होतृषु ८,२०,२०

ह्रादुनि-वृत्

२५२ अब्दया चित् मुहुः आ ह्रादुनिवृतः । स्तनयदमाः ५,५४,३

हु

१६९ इन्द्रः चन त्यजसा वि ह्रुणाति तत् १,१६६,१२

हुतम्

१०७ मरुतः आतुरस्य नः । इष्कर्त विह्रुतं पुनः ८,२०,२६

हुतिः

१६५ शतभुजिभिः तं अभिह्रुतेः अघात् । रक्षत १,१६६,८

हे

३६१ मरुतः गृणानः । यः [illegible] हृवंत यः [illegible] ७,५६,१८

४४० [illegible] अर्हं [illegible] । अथर्व० ४,२७,१

२८३ [illegible] । [illegible] आ हुवे ५,५६,१

३५४ प्रिया वः नाम हुवे तुराणां । मरुतः [illegible] ७,५६,१०

४०४ त्यान् नु पूतदक्षसः । दिवः वः मरुतः हुवे ८,९४,१०

४०५ त्यान् नु ये वि रोदसी । तस्तभुः मरुतः हुवे ८,९४,११

४०६ [illegible] नु मारुतं गणं गिरिष्ठां वृषणं हुवे ८,९४,१२

२७५ [illegible] अव मरुतां अव ह्रुये । दिवः [illegible] ५,५५,१

२९२ [illegible] । [illegible] हवे ५,५६,५

४५७ [illegible] हवामहे [illegible] १,२३,७ [[illegible]]

२०२ मरुतः [illegible] । [illegible] हवामहे १,३४,११

[illegible] हवामहे । [illegible] ८,७,६

[illegible] हवामहे ८,७,११

२६३ [illegible] हवामहे [illegible]

[illegible] हवामहे [illegible]

[illegible]

[illegible] ७,५६,१४

[illegible] ४,४११

[illegible] हुवंत १,२३,९ [[illegible]]

आजिः । मरुतः आजौ अर्चन् । (इन्द्रः) ऋ. १,५२,१५
आदित्यैरिन्द्रः सगणो मरुद्भिरस्मभ्यं भेषजा करत् । (विश्वे देवाः) वा. य २५,४६
आदित्यान्मारुतं गणम् । [आह्वयामि] (विश्वे देवाः) वा. य. ३३,४५
ईशां वो मरुतां देव आदित्यो ब्रह्मणस्पतिः । (अर्बुदिः) अ. ११,९,२५
आदित्यान्मरुतो दिशः आप्नोति। (शतौदना) अ. १०,९,१०
आदित्या अन्नं मरुतोऽन्नम् । काठ. २१,२; श. ४,३,३,१२
आदित्याः पश्चान्मरुत उत्तरतः । श. ८,६,३,३
आयत् । मरुतां'आयतां' उपब्दिः शृण्वे ।(इन्द्रः)ऋ.१,१६९,७
आलभ् । अथ पृशतीं विचित्रगर्भां मरुद्भ्य आलभते । श. ५,५,२,९
[इष्] । वर्ष वनुष्वं पितरो मरुतां मन इच्छत । (पितरः) अ. ४,१५,१५
इन्द्र । मरुतां चिकित्वान् इन्द्रः । (इन्द्रः) ऋ. १,१६९.१
मरुत्वाँ इन्द्रः । (उषासानक्ता) ऋ. ३,४,६
मरुत्वान् इन्द्रः । (इन्द्रः) ऋ. ३,४७,१;३,५०,१;८,७६,७
मरुत्वान् इन्द्रः आ यतु । (इन्द्रः) ऋ. ४,२१,३
इन्द्रो मरुत्सखा । (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,२,३
मरुत्सखा इन्द्रः । (इन्द्रः) ऋ. १०,८६,९
मरुद्भिः इन्द्रः अस्माकं अविता भूतु । (विश्वे देवाः) ऋ. १०,१५७,३
इन्द्रश्च मरुतश्च कयायोपोत्थितः । (इन्द्रादयः) वा. य. ८,५५
इन्द्रः ऋभुक्ष मरुतः परिख्यन् । (अश्वः) वा. य. २५,२४
विश्वे देवा मरुत इन्द्रो अस्मान् न जह्युः । (विश्वे देवाः) अ. ६,४७,२
इन्द्रो मरुत्वानादानमित्रेभ्यः कृणोतु नः।(इन्द्राग्नी सोम इन्द्रश्च) अ. ६,१०४,३
इन्द्रो मरुत्वान् स ददातु तन्मे । (विश्वकर्मा)अ. ६,१२२,५
इन्द्रो मरुत्वान्स ददादिदं मे । (ओदनः) अ. ११,१,२७
इन्द्रो रक्षतु दक्षिणतो मरुत्वान् । (स्वर्गः, ओदनः अग्निः) अ. १२,३,२४
इन्द्रो मा मरुत्वान् प्राच्या दिशः पातु । (यमः) अ. १८,३,२५
इन्द्रो मा मरुत्वानेतस्या दिशः पातु । (इन्द्रः) अ. १९,१७,८
इन्द्रः सगणो मरुद्भिरस्माकं भूत्वविता । (इन्द्रः) अ.२०,६३,२
इन्द्रो मरुद्भिः । (उदक्रामत्) काठ. ११,५;२४,२३
इन्द्रो मरुद्भिर्ऋतुधा कृणोतु । काठ. १०,३३
स्वं मा इन्द्रो विश्वतः क्षत्रायैव विशमनुनियुनक्ति । काठ० १०,११,

इन्द्रो वृत्रमहन् मरुद्भिर्वीर्येण मरुत्वतीयाँ स्तोत्रं भवति। काठ.२३,३१
प्रसीदन्नेति च आग्निमारुतं शंसति इन्द्रोऽगस्त्यो मरुतस्ते समजानत । ऐ ५,१६
इन्द्रो वै मरुतः सान्तपनाः । गो. उ. १,२३
इन्द्रो वै मरुतः क्रीडिनः । गो.उ. १,२३
इन्द्रो मरुत उपामन्त्रयत । श. ५,३,५,२४
इन्द्र! त्वं मरुद्भिः संवदस्व । (इन्द्रः) ऋ. १,१७०,५
इन्द्र ! मरुतः ते ओजः अर्चन्ते । (अग्निः) ऋ. ३,३२,३
इन्द्र ! मरुतः आ भज । (इन्द्रः) ऋ. ३,३५,९
इन्द्र ! मरुद्भिः सोमं पिब । (इन्द्रः) ऋ.३,४७,२
इन्द्र ! मरुतः आ भज । (इन्द्रः) ऋ. ३,४७,३
इन्द्र ! मरुद्भिः सोमं पिब। (इन्द्र) ऋ ३,४७,४
मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते । (इन्द्रः) ऋ. ८,३६,१-६
मरुत्सखा इन्द्र पिब । (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,९
इन्द्र मरुत्व इह पाहि । (इन्द्रामरुतौ) काठ.४,३६;श.४,३,३,१३; वा० य० ७,३५
सजोषा इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमं पिब । (इन्द्रामरुतौ) वा०य०७,३७
मरुत्वाँ इन्द्र वृषभो रणाय पिवा सोमाम् । (इन्द्रामरुतौ) वा० य० ७,३८; काठ० ४,३८
देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे बृहद्भानो मरुद्गण । (इन्द्रः) वा० य. ३३,९५
मरुत्वाँ इन्द्र मीढ्व । ऐ. ५,६
मरुतः इंद्रं अर्चन्ति । (इन्द्रः) ऋ.५,२९,६
मरुतः इंद्रं आर्चन् । (इन्द्रः) ऋ. ५,२९.२
मरुत्वन्तं इंद्रं हुवेम । (इन्द्रः) ऋ. ३,४७,५
मरुत्वन्तं इन्द्रं हवामहे । (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,५-६
मरुतः इन्द्रं अवर्धन् । (इंद्रः) ऋ. १०,७३,१
मरुत्वन्तं वृषभं वावृधानं इंद्रं हुवेम । (मरुत्वान्)वा० य०७,३६

इंद्रं ते मरुत्वन्तमृच्छतु । (इन्द्रः) अ० १९,१८,८
इंद्रमेवानु मरुत अभिजाति । श. ४,३,३,१०
मरुत्वता इन्द्रेण सं अग्मत । (ऋभवः) ऋ. १,२०,५
मरुत्वता इंद्रेण जितं । (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,४
इंद्रेण दत्तं प्रयतं मरुद्भिः । काठ.११,१४
मरुत्वते इन्द्राय हव्यं करोत । (स्वहाकृतयः) ऋ. १,१४२,१२
मरुतः इंद्राय गायत । (इन्द्रः) ऋ. ८,८९,१
मरुत्वते इंद्राय पवस्व । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,६४,१२

चक्रिया । मरुद्भ्यः रोदसी चक्रिया इव । (इन्द्रः) ऋ. ५,३०,८

चरुः । सर्वोनित्वाय मारुतं मैरुद्भवं चरुं निर्वपेत् । काठ. १०,१८

मारुतं चरुं निर्वपेत् । काठ. ११,१

मारुतं चरुं सैर्दनैककपालम् । काठ. ११,३१

चिकित्वान् । मरुतां चिकित्वान् इन्द्रः । (इन्द्रः) ऋ. १,१३९,१

चि । मरुतः चियन्तु । (विश्वे देवाः) ऋ. १,९०,४

छन्दस् । मरुतश्च त्वाङ्गिरसश्च देवा अतिछन्दसा रोहन्तु । ऐ. ८,१२,१७

जन् । मरुतो भ्राजत् ऋष्टयः अजायन्त । (अग्निः) ऋ. १,३१,१

मरुतः वक्षणाभ्यः अजनयः । (वायुः) ऋ. १,१३४,४

जनिष्ठा उग्र इति मरुत्वतीयम् । ऐ. आ. ५,१,१

पृश्न्या वै मरुतो जातः वाचो वाश्या वा । काठ. १०,१८

जयंती । देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयंतीनां मरुतो यन्तु मध्ये (इन्द्रः) अ. १९,१३,९

जातवेदस् । मरुतो वक्षि जातवेदः । (विश्वे देवाः) ऋ. ५,४३,१०

जि । मरुत्वती शत्रून् जेषि । (सरस्वती) ऋ. ६,३०,८

मरुतां प्रसवेन जय । (रथादयः) वा० य० १०,२१

तदेतत्पृतनाजिदेव सूक्तं यन्मरुत्वतीयमेतेन ह्येन्द्रः पृतना अजयत् कौ. १५,३

मरुत्वता इन्द्रेण जितं । (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,४

जुन् । अन्वेनं मरुतो जुनन्ति । (इन्द्रः) ऋ. १,१६९,३

जुष् । अजुषन्त मरुतो यज्ञमेतम् । काठ. ४०,९८

मरुद्भ्यः स्तोमं जुषंत । (विश्वे देवाः) ऋ. ३,५२,१

तक्ष् । शर्धो वा यो मरुतां ततक्ष । (अग्निः) ऋ. ६,३,८

तिग्मायुधं मरुतामनीकं । (इन्द्रः) ऋ. ८,९६,९

सोऽग्नये मरुत्वते त्रयोदशकपालं पुरोडाशं निर्वपेत् । ऐ. ७,९

त्रै । त्रायतां मरुतां गणः । (विश्वे देवाः) ऋ. १०,१३७,५

दा । मरुतां प्रसूते ते भागं ददतु । काठ. ११,१३

दक्षिणतः । इन्द्रो रक्षतु दक्षिणतो मरुत्वान् । (स्वर्गः, ओदनः, अग्निः) अ. १२,३,२४

दिश् । आ दिग्भ्यो मरुतो दिशः आप्नोति । (शतौदना) अ. १०,९,१०

इन्द्रो मा मरुत्वान् एतस्या दिशः पातु । (इन्द्रः) अ. १

इन्द्रो मा मरुत्वानेतस्या दिशः पातु । (इन्द्रः) अ. १९,१७,८

अथैनं (इन्द्रं) ऊर्ध्वायां दिशि मरुतश्चाङ्गिरसश्च देवाः —— अभिषिञ्चन् —— पारमेष्ठ्याय माहाराज्यायाधिपत्याय स्वावश्यायाऽऽतिष्ठाय । ऐ. ८,१४

देयं । स मरुत्वतीयैरेव वृत्रमहंस्तस्मान्मरुत्वतेऽनुक्ते न देयम् । काठ. २८,६

देव । ईशां वो मरुतां देव आदित्यो ब्रह्मणस्पतिः । (अर्बुदिः) अ. ११,९,२५

मरुद्गण । देवास्ते सख्याय येमिरे । (इन्द्रः) ऋ. ८,८९,२

मरुतस्ते देवा अधिपतयः । (इष्टकाः) वा. य. १५,१३

देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे बृहद्भानो मरुद्गण । (इन्द्रः) वा. य. ३३,९५

विश्वे देवा मरुत ऊर्जमापः [धनः] अ. २,२९,५

विश्वे देवा मरुतस्त्वा ह्वयन्तु । (अश्विनौ) अ. ३,४,४

देवा इन्द्रज्येष्ठा मरुतो यन्तु सेनया । (विश्वे देवाः, चन्द्रमाः, इन्द्रः) अ. ३,१९,६

विश्वे देवा मरुत इन्द्रो अस्मान् न जह्युः । (विश्वे देवाः) अ. ६,४७,२

विश्वे देवा मरुतो विश्ववेदसः वधात् नो आत्मवम् । (विश्वे देवाः मरुतः) अ. ६,९३,३

विश्वे देवा मरुतो यत् स्वर्काः [असनन्] । (सविता) अ. ७,२५,१

उदेनं मरुतो देवा उदिन्द्राग्नी स्वस्तये । (आयुः) अ. ८,१,२

देवस्तेनतुना देवा मरुतस्त्रिणवे (स्तोमे) स्तुतं बलेन शक्वरीः सहः । हविरिन्द्रे वयो दधुः । तै. २,६,१९,२

विश्वे देवा अब्रुवन् मरुतो हैनं नाजहुः । ऐ. ३,२०

मरुतश्च त्वाङ्गिरसश्च देवा अतिछन्दसा छन्दसा रोहन्तु । ऐ. ८,१२,१७

मरुतश्चाङ्गिरसश्च देवाः षड्भिश्चैव पञ्चविंशैरहोभिरभ्यषिञ्चन् । ऐ. ८,१४,१९

मरुतस्ते देवा अधिपतयः । काठ. १७,८१; श. ८,६,१,८

विश्वे देवा मरुत इति । श. १४,४,२,२४; बृहदा. १,४,१२

मरुतो अग्न देवान् । (विश्वे देवाः) ऋ. ३,५०,४

मरुद्भिश्च वा देवेभ्य उग्रतरुद्भ्यः स्वाहा । (हविर्) वा. य. ९,३५

मरुतां स्कन्धा विश्वेषां देवानां प्रथमा कीकसा । (अश्वादयः) वा.य. २५,६

मरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः । तै. २,७,१०,१

मरुतो वै देवानां भूयिष्ठाः । ताण्ड्य. १२,१०,९; २१,१४,३

मरुतो वै देवानामपराजितमायतनम् । तै. १,४,३,२
मरुतो वै देवानां विशः । कठ. ८,८; ऐ. १,९:
ता.ब्रा. ६,१०,१०:१८,१,१४
अहुतादो वै देवानां मरुतो विट् । श. ४,५,२,१६
मरुतो देवता । (इन्द्रवर्मा, विश्वकर्मादयः) वा. य. १४,२०
मरुतो देवता । विट् । कठ. १५,६
मरुतो देवता । काठ. १७,१२.३९,४२
देवता । पङ्क्तिश्छन्दो मरुतो देवता श्रीवन्तौ । श. १०,३,२,१०
देवता । मरुतो देवताश्रीवन्तौ । श. १०,३,२,१०
मरुतो ह वै देवविशोऽन्तरिक्षभाजना ईश्वराः । कौ. ७,८
विशो वै मरुतो देवविशः । श. २,५,१,१२;३,९,१,१७-१८;
ऐ. १,१०
तं मरुद्भ्यो देवविड्भ्यः । ऐ. १,१०
यत् प्रायणीयं मरुतां देवविशा देवविशम् । काठ. २३,१०
यत् प्रायणीयं मरुतां देवविशा देवविशाम् । काठ. २३,१०
देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्तु मध्ये ।
(इन्द्रः) अ. १९,१३,९
द्यु । मरुतो दिवो वहध्वे । (मरुतः अग्नामरुतौ वा)
ऋ. ५,६०,७
मरुतो यद्ध वो दिवो यूयमस्मानिन्द्रं वः । काठ. ९,१८
द्रु । विश्वे देवा अद्रवन् मरुतो हैनं नाजहुः । ऐ. ३,२०
धिष्ण्या मरुत्तमा । (अश्विनौ) ऋ. १,१८२,२
धी । मरुद्गणे मन्म धीमहि । (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६६,२
धृष् । धृषिता मरुत्वः । (मन्युः) ऋ. १०,८४,१
धृष्णु । मरुतां एति धृष्णुया । (विश्वे देवाः) ऋ. १,२३,११
नतिः । मरुतामुग्रा नतिः । (मधु, अश्विनौ) अ. ९,१.३
मरुतामुग्रा नतिः (मधु, अश्विनौ) अ. ९,१,१०
नी । मरुतः सूग्रां वृष्टिं नयन्ति । काठ. ११,३१
नाम । मरुतां भद्रं नाम अमन्महि । (दधिक्राः) ऋ.४,३९,४
निर्वप् । मारुतं सप्तकपालं पुरोडाशं निर्वपति । श.५,३,१,६
सोऽग्नये मरुत्वते त्रयोदशकपालं पुरोळाशं निर्वपेत् । ऐ. ७,९
सयोनित्वाय मारुतं प्रैयङ्गवं चरुं निर्वपेत् । काठ. १०,१८
मारुतं चरुं निर्वपेत् । काठ. ११,१
निविदं दधातीति मरुत्वतीयम् । श. १३,५,१,९
मरुत्वतीयं प्रगाथं शंसति, मरुत्वतीयं सूक्तं शंसति, मरुत्वतीयां
निविदं दधाति, मरुतां सा भक्तिः, मरुत्वतीयमुक्थं
शस्त्वा मरुत्वतीयया यजति । ऐ. ३,२०
पङ्क्तिश्छंदो मरुतो देवता श्रीवन्तौ । श. १०,३,२,१०

पञ्चविंशैः । मरुतश्चाङ्गिरसश्च देवाः षड्भिश्चैव पञ्चविंशै-
रहोभिरभ्यषिञ्चन् । ऐ. ८,१४;१९
पति । मरुतो गणानां पतयः । तै ३,११,४,२
पद्ं । यन्मरुद्ब्राज्यायाः पदं भवति । काठ. २३,२०
पयस्या । अथै मारुत्यै पयस्यायै छिरवद्यति ।
श. २,५,२,३८
परमे । मरुतः परमे सधस्थे । (इन्द्रः) ऋ. १,१०१,८
पर्जन्यो धारा मरुत ऊधो अस्य । (अनड्वान्) अ.४,११,४
पर्येतृ । मरुतामेव तावदाधिपत्यं स्वाराज्यं पर्येता ।
छान्दोग्य. ३,९,१
परिदीर्णः । मरुतो ह वै सान्तपना मध्यन्दिने वृत्रं सन्तेपुः स
सन्तप्तोऽनन्नेव प्राणन् परिदीर्णः शिश्ये । श. २,५,३,३
परिभुवत् । त्वा मरुत्वती परिभुवत् । (इन्द्रः) ऋ.७,३१,८
परिवेष्टृ । मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्यावसन् गृहे ।
ऐ. ८,२१; श. १३,५,४
पवमानोक्थं वा एतद्यन्मरुत्वतीयम् । ऐ. ८,१; कौ. १५,२
पवमान । मरुतः पवमानस्य पिबन्ति । (पवमानः सोमः)
ऋ. ९,३४,२४
एतद्यन्मरुत्वतीयं पवमाने वा । ऐ. ८,१
पशु । पशवो वै मरुतः । ऐ. ३,१९; काठ. २१,३६;
३६,२,१६
मरुतः सप्ताक्षरेण सप्त ग्राम्यान् पशूनुदजयन् । (पूषादयः)
वा. य. ९,३२; काठ. १४,२४
मरुतां पिता पशूनामधिपतिः । (मरुतां पिता) अ.५,२४,१२
पश्चात्सद् । मरुतः पश्चात्सद्भ्यो रक्षोहभ्यः स्वाहा ।
काठ. १५,३
पा । यं मरुतः पान्ति । (इन्द्रः) ऋ. ८,४६,४
इन्द्रो मा मरुत्वानेतस्या दिशः पातु । (इन्द्रः) अ. १९,१७,८
इन्द्रो मा मरुत्वान् प्राच्या दिशः पातु । (यमः) अ. १८,३,२५
पातं न इन्द्रापूषणादितिः पान्तु मरुतः । (इन्द्रापूषणौ, अदितिः
मरुतः इत्यादयः) अ. ६,३,१
अदितिः पान्तु मरुतः । (अदितिः, मरुतः इत्यादयः)
अ. ६,४,२
पाहि । मरुद्भिः सोमं पाहि । (इन्द्रः) ऋ. ३,५१,८
मरुद्भिः पाहि । (ऋभवः) ऋ. ४,३४,७
मरुद्भिः पाहि । (इन्द्रः) ऋ. ६,४०,५
इन्द्र मरुत्व इह पाहि । (इन्द्रामरुतौ) वा.य. ७,३५;
काठ. ४,३६; श. ४,३,३,१३

पाप्मा । तद्वासां मरुतः **पाप्मानं** विमेथिरे । श. २,५,२,२४
प्रजानां मरुतः **पाप्मानं** विमथ्नते । श. २,५,२,२४
मरुतः पवमानस्य **पिबन्ति** । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,६४,२४
पा (पिब्) । इन्द्र ! मरुद्भिः सोमं **पिब** । (इन्द्रः) ऋ. ३,४७,२
मरुत्सखा इन्द्र **पिब** । (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,९
मरुतः पोत्रात्सुष्टुभः स्वर्कादृतुना सोमं **पिबतु** । (मरुतः) अ. २०,२,१
मरुद्भिः सोमं **पिब** वृत्रहन् । महानारा. २०,२
मरुत्वाँ इन्द्र वृषभो रणाय **पिबा** सोमम् । (इन्द्रामरुतौ) वा. य. ७,३८; काठ. ४,३८
पिबेन्द्र सोमं सगणो मरुद्भिः । (इन्द्रः) वा. य. ३३,६३; तै. आ. १,२७,१
यस्य मरुतः **पिबात्** । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,१०८,१४
पारमेष्ठ्य । अथैनं (इन्द्रं) ऊर्ध्वायां दिशि मरुतश्चाङ्गिरसश्च देवा ...... अभिषिञ्चन् ... **पारमेष्ठ्याय** माहाराज्याधिपत्याय स्वावश्यायाऽऽतिष्ठाय । ऐ. ८,१४
पार्जन्य । पड्भिः **पार्जन्यैर्वा** मारुतैर्वा वर्षाम्‌ ॥ श. १३,५,४,२८
पितृ । वर्षं वनुध्वं **पितरो** मरुतां मन इच्छत । (पितरः) अ. ४,१५,१५
मरुतां **पिता** पशूनामधिपतिः । (मरुतां पिता) अ. ५,२४,१२
मरुतां **पितस्त** तद् गृणीमः । काठ. १३,२८
पुरोडाश । मारुतं सप्तकपालं **पुरोडाशं** निर्वपति । श. ५,३,१,६
सोऽग्नये मरुत्वते त्रयोदशकपालं **पुरोळाशं** निर्वपेत् । ऐ. ७,९
पुष् । अथैष मरुत्स्तोम एतेन वै मरुतोऽपरिमितां पुष्टिमपुष्यन्नपरिमितां पुष्टिं **पुष्यति** य एवं वेद । तां. १९,१४,१
पूषा अस्मै वः **पूषा** मरुतश्च सर्वे सविता सुवाति । (आत्मा) अ. १४,१,३३
पुष्टिः । अथैष मरुत्स्तोम एतेन वै मरुतोऽपरिमितां पुष्टिमपुष्यन्नपरिमितां **पुष्टिं** पुष्यति य एवं वेद । तां. १९,१४,१
तदेतत्पृतनाजिदेव सूक्तं यन्मरुत्वतीयमेतेन हेन्द्रः **पृतना** अजयत् । कौ. १५,३
पृथिव्या मारुतास्सजाता एतन्मरुतौ स्वं पदः । काठ. १०,१८
अथ **पृशतीं** विचित्रगर्भां मरुद्भ्य आलभते । श. ५,५,२,९
पृश्निः । मरुद्भ्यः सुदुघा **पृश्निः** । (मरुतः अग्निमरुतौ वा) ऋ. ५,६०,५
पृश्निः तिरश्चीनपृश्निः ऊर्ध्वपृश्निः ते मारुताः । (प्रजापत्यादयः) वा. य. २४,४
मारुती **पृश्निर्वशा** । काठ. ३७,४
अगस्त्यो वै मरुद्भ्यश्शतमुक्ष्णः **पृश्नीन्** प्रौक्षत् । काठ. १०,१९
मरुतः **पृश्निमातरः** । ऋ. १,८९,७
किमभ्याऽर्चन्मरुतः **पृश्निमातरः** । (रोहितादित्यौ) अ. १३,३,२३
ऐन्द्रामारुतं **पृश्निसक्थमालभेत** । काठ. १३,७
पृश्न्या वै मरुतो जाताः वाचो वाऽस्या वा । काठ. १०,१८
पोतृ । मरुतो यस्य हि क्षय इति मारुतं **पोता** यजति । ऐ. ६,१०
मरुतः **पोत्रात्सुष्टुभः** स्वर्कादृतुना सोमं पिबतु । (मरुतः) अ. २०,२,१
प्रगाथः । मरुत्वतीयः **प्रगाथः** । ऐ. ४,२९
मरुत्वतीयं **प्रगाथं** शंसति, मरुत्वतीयं सूक्तं शंसति । मरुत्वतीयां निविदं दधाति, मरुतां सा भक्तिः । मरुत्वतीयमुक्थं शस्त्वा मरुत्वतीयया यजति ॥ ऐ. ३,२०
प्रजा । या निर्वा एव **प्रजानां** तं मरुतेऽभ्यकामयन्त । काठ. ३६,२
प्रजानां मरुतः पाप्मानं विमथ्नते । श. २,५,२,२४
प्रथमजः । सान्तपनेभ्यः मरुद्भ्यः गृहमेधिभ्यः मरुद्भ्यः क्रीडिभ्यः मरुद्भ्यः स्वतवद्भ्यः मरुद्भ्यः **प्रथमजा**नालभते । (प्रजापत्यादयः) वा. य. २४,१६
प्रथमा । मरुतां स्कन्धा विश्वेषां देवानां **प्रथमा** कीकसा । (शादादयः) वा. य. २५,६
प्रतिहृतिरेव **प्रथमो** मरुत्वतीयेऽसाय तिः । काठ. २८,६
वज्रेणैव **प्रथमेन** मरुत्वतीयेनोच्छियते । काठ. २८,६
प्रदक्षिणं मरुतां स्तोममृध्याम् । (इन्द्रः) अ. ७,५१,३
प्रयतं । इन्द्रेण दत्तं **प्रयतं** मरुद्भिः । काठ. ११,१४
शर्धः **प्रयन्त** मारुतोत विष्णो । (विश्वे देवाः) वा. य. ३३,४८
प्रया । उप **प्र यन्तु** मरुतः । (ब्रह्मणस्पतिः) ऋ. १,४०,१
उप **प्र यन्तु** मरुतः सुदानवः । (ब्रह्मणस्पतिः) वा. य. ३४,५६; काठ. १०,४७
प्रयः । मरुत्वन्तं विशो अभि **प्रयः** । (इन्द्रः) ऋ. ८,१३,२८
मरुतामिव **प्रयाः** । (अग्निः) ऋ. ३,२६,१५
प्रसवः । मरुतां **प्रसवेन** जय । (रथादयः) वा. य. १०,२१
प्रसीदन्नेति च अभिमरुतं शंसति इन्द्रोऽगस्त्ये मरुत्से समजानत । ऐ. ५,१६

मरुद्भिरुग्रः **प्रहितो** न आगन्। (द्यावापृथिवी, विश्वे देवाः, मरुतः, आपः) अ. २,२९,४
प्राची। इन्द्रो मा मरुत्वान् **प्राच्या** दिशः पातु। (यमः) अ. १८,३,२५
प्राणा वै मरुतः। श. ९,३,१,७
मरुतां **प्राण**स्ते ते प्राणं ददतु। काठ. ११,१३
प्राणो वै मरुतः स्वापयः। ऐ. ३,१६
मरुतो ह वै सान्तपना मध्यन्दिने वृत्रं सन्तेपुः स सन्तप्तोऽनन्नेव **प्राणन्** परिदीर्णः शिश्ये। श. २,५,३,३
मरुतः **प्राणैरिन्द्रं** बलेन। तै. आ. २,१८,१
प्रातः। मरुद्भ्यः क्रीडिभ्यः **प्रातस्**सप्तकपालः। काठ.९,१६; श. २,५,३,२०
यत् **प्रायणीयं** मरुतां देवविशा देवविशाम्। काठ. २३,२०
प्रैयङ्गवं। सयोनित्वाय मारुतं **प्रैयङ्गवं** चरुं निर्वपेत् काठ. १०,१८
बलं वै मरुतः। काठ. २९,२४
बलेन मरुतः। (प्रजापतिः) वा. य. ३९,९
हेमन्तेनर्तुना देवा मरुतस्त्रिणवे (स्तोमे) स्तुतं **बलेन** शक्करीः सहः। हविरिन्द्रे वयो दधुः। तै. २,६,१९,२
मरुतः प्राणैरिन्द्रं **बलेन**। तै. आ. २,१८,१
अग्ने। **बाधो** मरुतां न प्रयुक्ति। (अग्निः) ऋ. ६,११,१
बुध्। मरुतो **बुबोधथ**। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६४,१२
बृहद्भानुः। देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे **बृहद्भानो** मरुद्गण। (इन्द्रः) वा. य. ३३,९५
बृहस्पतिर्मरुतो ब्रह्म सोम इमां वर्धयन्तु। (आत्मा) अ. १४,१,५४
ब्रह्म। मरुतो **ब्रह्मा**र्चत। (इन्द्रः) ऋ. ८,८९,३
अतीव यो मरुतो मन्यते नो **ब्रह्म**। (मरुतः) अ. २,१२,६
बृहस्पतिर्मरुतो **ब्रह्म** सोम इमां वर्धयन्तु। (आत्मा) अ. १४,१,५४
ब्रह्मणस्पतिः। ईशां वो मरुतां देव आदित्यो **ब्रह्मणस्पतिः**। (अर्बुदिः) अ. ११,९,२५
भद्रा। मरुतां **भद्रा** उपस्तुतिः। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६४,११
मरुतां **भद्रं** नाम अमन्महि (दधिक्राः) ऋ. ४,३९,४
भागं। स एतं मरुद्भ्यो **भागं** निरवपन् तं मरुतो वीर्याय समतपन्। काठ. ३६,१५
मरुत्सु **भारती**। (तिस्रो देव्यः) ऋ. १,१४२,९
सरस्वती **भारती** मरुतो विशः वयः दधुः। (तिस्रो देव्यः) वा. य. २१,१९

मरुतो वै देवानां **भूयिष्ठाः**। ताण्ड्य. १४,१२,९;२१,१४
मरुतो हि देवानां **भूयिष्ठाः**। तै. २,७,१०,१
भेषजा। आदित्यैरिन्द्रः सगणो मरुद्भिरस्मभ्यं भेषजा करत् (विश्वे देवाः) वा. य. २५,
मरुतो **भ्राजद्-ऋष्टयः** अजायन्त। (अग्निः) ऋ. १,३१,
तव व्रते कवयो विद्मनापसोऽजायन्त मरुतो **भ्राजदृष्टयः**। (अग्निः) वा. य. ३४,
भ्रातृ। मरुतो **भ्रातरः** तव। (इन्द्रः) ऋ. १,१७०,२
मदः। मरुद्भ्यो वायवे **मदः**। (पवमानः सोमः) ऋ. ९,२५
मद्। त्वां शर्धो **मदत्य**नु मारुतम्। (इन्द्रः) अ. २०,१०६,
मद्। मरुद्भिः **मादयस्व**। (इन्द्रः) ऋ. १,१०१,९
मरुतो **मादयन्तां**। (विश्वे देवाः) ऋ. ७,३९,९
मद्। उन्मादयत मरुत उदन्तरिक्ष **मादय**। (स्मरः) अ. ६,१३०,
मधु। मरुतः **मधो**र्व्यश्नते। (पवमानः सोमः) ऋ. ९,५१,३
मध्यं। देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्तु मध्ये (इन्द्रः) अ. १९,१३,
मध्यंदिने यन्मरुत्वतीयस्त। ऐ. ३,२०
मरुतो ह वै सान्तपना **मध्यन्दिने** वृत्रं सन्तेपुः स सन्तप्तोऽनन्नेव प्राणन् परिदीर्णः शिश्ये। श. २,५,३,३
मनः। वर्षं वनुध्वं पितरो मरुतां **मन** इच्छत। (पितरः) अ. ४,१५,१
मन्द्। मरुत्सु **मन्दसे**। (इन्द्रः) ऋ. ८,१२,१६
मन्द्। यद्वा मरुत्सु **मन्दसे** समिन्दुभिः। (इन्द्रः) ऋ. २०,१११,१
मरुत्वान् रुद्रः मा उन्मा **ममन्द**। (रुद्रः) ऋ. २,३३,६
मन्म। मरुद्गणे **मन्म** धीमहि। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,३६,९
मन्। अतीव यो मरुतो **मन्यते** नो ब्रह्म। (मरुतः) अ. २,१२,६
मरुतः परिवेष्टारो **मरुत्त**स्यावसन् गृहे। ऐ. ८,२१; श. १३,५,४
धिष्ण्या **मरुत्तमा**। (अश्विनौ) ऋ. १,१८२,२
सा नो बोध्यवित्री **मरुत्सखा**। (सरस्वती) ऋ. ७,९६,२
इन्द्रो **मरुत्सखा**। (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,२-३
मरुत्सखा इन्द्र पिब। (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,९
मरुत्सखा इन्द्रः। (इन्द्रः) ऋ. १०,८६,९
मरुत्सखा विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः। (इन्द्रः) अ. २०,१२६,१
मरुत्स्तोत्रस्य वृजनस्य गोपाः। (इन्द्रः) ऋ. १,१०१,११
मरुत्स्तोमो वा एषः। ताण्ड्य. १७,१,३

अथैष **मरुत्स्तोम** एतेन वै मरुतोऽपरिमितां पुष्टिमपुष्यन्नपरिमितां पुष्टिं पुष्यति य एवं वेद । तां. १९,१४,१
तस्मै नमस्कृत्वा ... ... **मरुदुत्तरायणं** गतः । मैत्रा. ६,३०
मरुद्गणः स्तोत्रं जुषन्त । (विश्वे देवाः) ऋ. ६,५२,११
हरिश्चन्द्रो **मरुद्गणः** (पवमानः सोमः) ऋ. ९,६६,२६
मरुद्गण ! देवास्ते सख्याय येमिरे । (इन्द्रः) ऋ. ८,८९,२
देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे बृहद्भानो **मरुद्गण** । (इन्द्रः) वा. य. ३३,९५

मरुद्गणे मन्म धीमहि । (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६६,२
मरुद्गणा ! मम हवं श्रुत । (विश्वे देवाः) ऋ. २,४१,१५
वातवन्तो **मरुद्गणाः** । तै. आ. १,२
मरुद्वृधः अग्ने नः शं शोच । (अग्निः) ऋ. ३,१३,६
असिक्न्या **मरुद्वृधे** । (नद्यः) ऋ. १०,७५,५
मरुद्वृधोऽग्ने सहसातमः । श. ११,४,३,१९
शं नः शोचा **मरुद्वृधो**ऽग्ने । काठ. २,९७
यच्चिनोति दीपयति **मरुन्नामैः** । काठ. २१,३४
मरुन्नामेति विश्रुतोऽसि । मैत्रा. २,१
मरुन्नेत्रेभ्यः वा देवेभ्य उत्तरासद्भ्यः स्वाहा । (पृथिवी) वा. य. ९,३५

मरुन्नेत्रा वोत्तरासदस्तेभ्यः स्वाहा । (देवाः) वा. य. ९,३६
मरुत् । ये देवा **मरुन्नेत्राः** । काठ. १५,३
मरुतः सोमपीतये हवामहे । (विश्वे देवाः) ऋ. १,२३,१०
मरुतो मृळयन्तु नः । (विश्वे देवाः) ऋ. १,२३,१२
मरुतो भ्राजदृष्टयः अजायन्त (अग्निः) ऋ. १,३१,१
उप प्र यन्तु **मरुतः** । (ब्रह्मणस्पतिः) ऋ. १,४०,१
मरुतः सुवीर्यं आ दधीत । (ब्रह्मणस्पतिः) ऋ. १,४०,२
मरुतः स्तोमं शृण्वन्तु । (अग्निः) ऋ. १,४४,१४
मरुतः अनु अमदन् । (इंद्रः) ऋ. १,५२,९
मरुतः आजौ अर्चन् । (इंद्रः) ऋ. १,५२,१५
मरुतः पृश्निमातरः । (विश्वे देवाः) ऋ. १,८९,७
मरुतः पिबन्तु । (विश्वे देवाः) ऋ. १,९०,४
मरुतो मरुद्भिः शर्म यंसद् (विश्वे देवाः) ऋ. १,१०७,२
मरुतः सोमपीतये हुवे । (ऋभवः) ऋ. १,१११,४
रोदसी **मरुतो**ऽस्तोषि (विश्वे देवाः) ऋ. १,१२२, १
मरुतः वक्षणाभ्यः अजनयः । (वायुः) ऋ. १,१३४,४
मरुतः दिवा यान्ति । (ऋभवः) ऋ. १,१६१,१४
मरुतः परिख्यन् । (अश्वः) ऋ. १,१६२,१
मरुतः एष वः स्तोमः (मरुत्वान् इंद्रः) ऋ. १,१६५,१५
अन्वं **मरुतो** जुनन्ति । (इंद्रः) ऋ. १,१६६,२

मरुतो नो मृळयन्तु । (इंद्रः) ऋ. १,१६९,५
मरुतो भ्रातरः तव । (इंद्रः) ऋ. १,१७०,२
मरुतः । गीः वंदते । (इंद्रः) ऋ. १,१७३,१२
मरुतो वृद्धसेनाः । (विश्वे देवाः) ऋ. १,१८६,८
मरुतः ! या वः भेषजा । (रुद्रः) ऋ. २,३३,१३
मरुतः सुम्नमर्चन् । (अग्निः) ऋ. ३,१४,४
मरुतः वृधं सश्चत । (अग्निः) ऋ. ३,१६,२
इंद्र ! **मरुतः** ते ओजः अर्चन्ते । (अग्निः) ऋ. ३,३२,३
शर्धो **मरुतः** य आसन् । (अग्निः) ऋ. ३,३२,४
इंद्र ! **मरुतः** आ भज । (इन्द्रः) ऋ. ३,३५,९
इन्द्र ! **मरुतः** आ भज । (इंद्रः) ऋ. ३,४७,३
मरुतः अमन्दन् । (इंद्रः) ऋ. ३,५१,९
मरुतः ऋष्टिमंतः । (विश्वे देवाः) ऋ. ३,५४,१३
मरुतः शर्म यच्छन्तु । (विश्वे देवाः) ऋ. ३,५४,२०
अस्मे रयिं **मरुतः** । (इंद्रावरुणौ) ऋ. ३,६२,३
मरुतः अग्ने वह । (अग्निः) ऋ. ४,२,४
मरुतो विरप्शु । (श्येनः) ऋ. ४,२६,४
मरुतः सीदन्तु । (विश्वे देवाः) ऋ. ५,२६,९
मरुतः त्वा अर्चन्ति । (इन्द्रः) ऋ. ५,२९,१
मरुतः इन्द्रं आर्चन् । (इंद्रः) ऋ. ५,२९,२
मरुतो मे सुषुतस्य पेयाः । (इंद्रः) ऋ. ५,२९,३
मरुतः इन्द्रं अर्चन्ति । (इन्द्रः) ऋ. ५,२९,६
मरुतः अर्कं अर्चन्ति । (इन्द्रः) ऋ. ५,३०,६
मरुतः ते तविषीं अवर्धन् । (इन्द्रः) ऋ. ५,३१,१०
श्रुतरथाय **मरुतो** दुवोयाः । (इन्द्रः) ऋ. ५,३३,६
मरुतः राधः दधीत । (विश्वे देवाः) ऋ. ५,४१,५
मरुतो अच्छोक्तौ । (विश्वे देवाः) ऋ. ५,४१,१६
मरुतो वक्षि न तवेदः । (विश्वे देवाः) ऋ. ५,४३,१०
मरुतो यजन्ति । (विश्वे देवाः) ऋ. ५,४५,४
मरुतः हुवे । (विश्वे देवाः) ऋ. ५,४६,३
मरुतो रथेषु तस्थुः । (मरुतः अग्नामरुतौ वा) ऋ. ५,६०,२
मरुतः यद् क्रीळथ । (मरुतः अग्नामरुतौ वा) ऋ. ५,६०,३
मरुतः दिवि ष्ठ । (मरुतः अग्नामरुतौ वा) ऋ. ५,६०,६
मरुतो दिवो वहध्वे । (मरुतः अग्नामरुतौ वा) ऋ. ५,६०,७
मरुतः रथं युञ्जते । (मित्रावरुणौ) ऋ. ५,६३,५
मरुतः सुनाभ्या वसत । (मित्रावरुणौ) ऋ. ५,६३,६
मरुतः ! वृष्टिं ररीध्वं । (पर्जन्यः) ऋ. ५,८३,६
मरुतः यं वर्धान् । (इन्द्रः) ऋ. ६,१७,११
मरुतः इन्द्रवन्तो नो अव । (विश्वे देवाः) ऋ. ६,५२,९

मरुतः आ गन्त। (विश्वे देवाः) ऋ. ६,४९,११
मरुतो अद्यान देवान्। (विश्वे देवाः) ऋ. ६,५०,४
श्रुत्वा हवं मरुतो यद्ध याथ। (विश्वे देवाः) ऋ. ६,५०,५
मरुतः! यं नः अभिमन्यते। (विश्वे देवाः) ऋ. ६,५२,२
मरुतः यक्षि। (अग्निः) ऋ. ७,९,५
मरुतः इन्द्रं सख्यत। (इन्द्रः) ऋ. ७,१८,२५
यस्य मरुतः अविता। (इन्द्रः) ऋ. ७,३२,१०
अनु विश्वे मरुतो जिहीत। (विश्वे देवाः) ऋ. ७,३४,२४
शं नो भवन्तु मरुतः। (विश्वे देवाः) ऋ. ७,३५,९
मरुतः नो अवन्तु। (विश्वे देवाः) ऋ. ७,३६,७
मरुतः! अयं वः श्लोकः। (विश्वे देवाः ऋ ७,३६,९
मरुतो मादयन्तां। (विश्वे देवाः) ऋ. ७,३९,५
[illegible] यन्तु मरुतः। (विश्वे देवाः) ऋ ७,४०,३
मरुतः [illegible] नः पात। (आदित्याः) ऋ. ७,५१,३
मरुतः परि [illegible]। (इन्द्राग्नी) ऋ. ७,९३,८
[illegible] मरुतः! (त्र्यरुणः पौरुकुत्स्य) ऋ. ८,३,२१
[illegible] मरुतो यज्ञ वो दिवः। ऋ. ८,७,११;
काठ. ११,४४

मरुतो [illegible] नः छर्दिः। (आदित्याः) ऋ. ८,१८,२१
मरुतः [illegible]। (विश्वे देवाः) ऋ. ८,२५,१०
[illegible]। (मित्रावरुणौ) ऋ. ८,२५,१४
[illegible] मरुतः। (विश्वे देवाः) ऋ. ८,२७,१;
काठ. १०,४६

[illegible] मरुतः। (विश्वे देवाः) ऋ. ८,२७,५
[illegible] मरुतः। (विश्वे देवाः) ऋ. ८,२७,६
[illegible] मरुतः। (विश्वे देवाः) ऋ. ८,२७,८
[illegible] मरुतः [illegible] ऋ. ८,३३,४
[illegible] मरुतो [illegible] ऋ. ८,४८,३
[illegible] मरुतो [illegible] ऋ. ८,६३,१०
[illegible] मरुतो [illegible] ऋ. ८,८३,१
[illegible] ऋ. ८,८९,३
[illegible] ऋ. ८,८९,३
[illegible] ऋ. ८,९३,८
[illegible] ऋ. ९,८१,३
[illegible] ऋ. ९,९६,१७
[illegible] ऋ. ९,९७,३
[illegible] ऋ. ९,९७,१०
[illegible] ऋ. ९,१०८,१३
[illegible] ऋ. १०,३६,१

मरुतो हवं शृण्वन्तु। (सूर्यः) ऋ. १०,३७,६
मरुतो मा जुनन्ति। (विश्वे देवाः) ऋ.१०,५२,२
मरुतः स्वस्तये हवामहे। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६३,[illegible]
मरुतो यं अवथ। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६३,१४
मरुतो राये दधातन। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६३,[illegible]
मरुतः मेधिरं अददात। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६४,[illegible]
मरुतो बुबोधथ। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६४,१३
मरुतः महिमानमीरयन्। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६५,१
मरुतः अवसे हवामहे। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६६,४
अग्ने! अन्तरिक्षात् मरुतः आ वह। (स्वाहाकृतयः)
ऋ. १०,७०,[illegible]

मरुतः इन्द्रं अवर्धन्। (इन्द्रः) ऋ १०,७३,१
मरुतो रोदसी अनक्तन। (प्रावाण.) ऋ. १०.७६,१
मरुतो विश्वकृष्टयः। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,९२,६
मरुतो विष्णुरर्हिरे। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,९२,११
मरुतः। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,९३,४
मरुतो यन्तु अग्रं। (इन्द्रः) ऋ. १०,१०३,८
मरुतः इन्द्रियं अवर्धन्। (इन्द्रः) ऋ. १०,११३,३
मरुतः त्वां गर्जयन्। (अग्निः) ऋ. १०,१२२,५
मरुतः विह्वे यन्तु। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,१२८,२
हविष्मतो मरुतो वन्दते गीः। (इन्द्रामरुतौ) वा. य. ३,४६
श. २,५,२,[illegible]

इन्द्रश्च मरुतश्च क्रयायोपोत्थितः। (इन्द्रादयः) वा. य. ८,५[illegible]
शुन्धन्तु त्वा मरुतो विश्ववेदसः। (अश्वः) वा. य. ९,८
मरुतः [illegible]। ([illegible])
वा. य. ९,३२; [काठ. १४,[illegible]

मरुतो देवता। (इन्द्राग्नी, विश्वकर्मादयः) वा. य. १४,२०
मरुतस्त्वे देवा अभिपतयः। (इष्टकाः) वा. य. १५,१३
[illegible] मरुतः। (मरुतः) वा. य. १७,१;
काठ. १७,[illegible]

मरुतश्च मे [illegible]। (अग्निः) वा. य. १८,१७
विश्वे अद्य मरुतो [illegible]। (विश्वे देवाः)
ऋ. १०,३५,१३; वा. य. १८,३१; काठ. १८,[illegible]
[illegible] मरुतो [illegible]। ([illegible]) वा. य. २०,[illegible]
[illegible] मरुतो [illegible]। ([illegible])
वा. य. २१,[illegible]

मरुतः [illegible]। ([illegible]) वा. य. २१,[illegible]
[illegible] मरुतो [illegible]। ([illegible])
वा. य. २३,[illegible]
[illegible] मरुतः [illegible]। ([illegible]) वा. य. २४,[illegible]

ा **मरुतो** अश्विना। (विश्वे देवाः) वा. य. ३३,४७
रुत ऊतये हुवे। (विश्वे देवाः) वा. य. ३३,४९
वर्धमिन्द्रं **मरुतश्चिदत्र**। (इन्द्रः) वा. य. ३३.६४;
काठ. ४,३४

प इन्द्राय बृहते **मरुतो** ब्रह्मार्चत। (इन्द्रः) वा. य. ३३,९६
ा व्रते कवयो विद्मनापसेऽजायन्त **मरुतो** भ्राजदृष्टयः।
(अग्निः) वा. य. ३४,१२
र प्र यन्तु **मरुतः** सुदानवः। (ब्रह्मणस्पतिः) वा.य.३४,५६;
काठ. १०,४७

रुतः सप्तमे अहन्। (सवित्रादयः) वा. य. ३९,६
लेन **मरुतः**। (प्रजापतिः) वा. य. ३९,९
ंचेन्त्यर्कं **मरुतः** स्वर्काः। (इन्द्रः) साम. ४४५
ातीव यो **मरुतो** मन्यते नो ब्रह्म। (मरुतः) अ. २,१२,६
ंवे देवा **मरुत** ऊर्जमापः। [धन्त] अ. २,२९,५
अनु त्वा **मरुतो** विश्ववेदसः। (अग्निः) अ. ३,३,२
ंवे देवा **मरुतस्त्वा** ह्वयन्तु। (अश्विनौ) अ. ३,४,४
क्षन्त्वग्ना **मरुतो** घृतेन। (वास्तोष्पतिः) अ. ३,१२,४
वा इन्द्रज्येष्ठा **मरुतो** यन्तु सेनया। (विश्वे देवाः चन्द्रमाः,
इन्द्रः) अ. ३,१९,६
र्जस्यो धारा **मरुत** ऊधो अस्य। (अनड्वान्) अ. ४,११,४
न्द्रवन्तो **मरुतो** मम विश्वे सन्तु। (देवाः) अ. ५,३,३
ातं न इन्द्रापूषणादितिः पान्तु **मरुतः**। (इन्द्रापूषणौ, अदितिः
मरुतः इत्यादयः) अ. ६,३,१
अदितिः पान्तु **मरुतः**। (अदितिः, मरुतः इत्यादयः)
अ. ६,४,२
ांनाशा आसन् **मरुतः** सुदानवः। (दर्भः) अ. ६,३०,१
वेश्वे देवा **मरुत** [illegible] अस्मान् न जहुः। (विश्वे देवाः
अ. ६,६७,२
[illegible] त्वा **मरुतो** विश्ववेदसः। [illegible] अ. ६,९२,१
विश्वे देवा **मरुतो** विश्ववेदसः [illegible]।
(विश्वे देवाः, मरुतः) अ. ६,९३,३
[illegible] **मरुत** [illegible]। [illegible] अ. ६,११०,१
विश्वे देवा **मरुतो** [illegible] स्वर्काः। [illegible]
अ. ६,१२५,१
ं मा [illegible] **मरुतः** [illegible]
अ. ६,१२६,१
[illegible] **मरुतो** [illegible]। [illegible] अ. ८,१,३
[illegible] **मरुतो** [illegible]। [illegible] अ. ९,७,३

ईशां वो **मरुतो** देव आदित्यो ब्रह्मणस्पतिः। (अर्बुदिः)
अ. ११,९,२५
उत्तरान्**मरुतस्त्वा** गोप्स्यन्ति। (शतौदना) अ. १०,९,८
आदित्यान्**मरुतो** दिशः आप्नोति। (शतौदना) अ. १०,९,१०
अग्निमे गोप्ता **मरुतश्च** सर्वे। (ओदनः) अ. ११,१,३३
किमभ्यार्चन्**मरुतः** पृश्निमातरः। (रोहितादित्यौ)
अ. १३,३,२३
अस्मै वः पूषा **मरुतश्च** सर्वे सविता सुवाति। (आत्मा)
अ. १४,१,३३
बृहस्पतिर्**मरुतो** ब्रह्म सोम इमां वर्धयन्तु। (आत्मा)
अ. १४,१,५४
उन् त्वा वहन्तु **मरुत** उदवाहा उदप्रुतः। (यमः)अ.१८,२,२२
शं नो भवन्तु **मरुतः** स्वर्काः। (बहुदैवतम्) अ. १९,१०,९
देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां **मरुतो** यन्तु मध्ये।
(इन्द्रः) अ. १९,१३,९
मरुतो मा [illegible]। ([illegible], मरुतः।) अ. १९,४१,१०
मरुतः पि[illegible] स्वर्[illegible] सोमं पिबतु। (मरुतः)
अ. २०,२,१
मरुतः [illegible]। काठ. ८,५
[illegible]**मरुतः**। काठ. ९,३८
मरुतो [illegible]। काठ. ९,३८
[illegible] **मरुतो** [illegible]। काठ. १०,१८
[illegible] **मरुतः** [illegible]।
काठ. १०,११
[illegible] **मरुतो** [illegible]। काठ. १०,११
[illegible] **मरुतः** [illegible]।
काठ. १०,११
[illegible] **मरुतः** [illegible]। काठ. ११,१३ [illegible]
मरुतः [illegible]। काठ. ११,३१
[illegible] **मरुत**[illegible]। काठ. ११,[illegible]
मरुत[illegible]। काठ. १४,[illegible]
मरुतः [illegible]। काठ. १४,[illegible]
मरुतो [illegible]। काठ. १५,६
मरुतो [illegible]। काठ. १६,[illegible]
मरुतो [illegible]। काठ. १६,[illegible] [illegible] ८,३,१,८
[illegible] **मरुतो**[illegible]। [illegible]
[illegible] **मरुतो**[illegible]
[illegible] **मरुतो**[illegible]
[illegible] **मरुतो** [illegible]

विड् वै **मरुतः** । काठ. २९,९;३७,३; तै. १,८,३,३; २,७,२,२

बलं वै **मरुतः** । काठ. २९,२४

मरुतः द्वितीये सवने न जह्युः । काठ. ३०,२७

योनिर्वा एष प्रजानां तं **मरुतो**ऽभ्यकामयन्त । काठ. ३६,२

सप्त हि **मरुतो** निरवत्या एव मारुतोऽथो ग्राम्यमेवैतेनान्नाद्यमवरुन्धे । काठ. ३६,२;३७,४-६

तस्य **मरुतो** हव्यं व्यमथ्नत । काठ. ३६,९

तं **मरुत** ऐषीकैर्वातरथैरध्यैयन्त । काठ. ३६,१५

ते **मरुतः** क्रीडीन् क्रीडतोऽपश्यन् । काठ. ३६,१८

तं **मरुतः** परिक्रीडन्त । काठ. ३६,१८

तं **मरुतो**ऽध्यक्रीडन् । काठ. ३६,१९

विशो **मरुतः** । काठ.३८,११८; श.२,५,२,६,२७; ४,३,३,६

त्रिणवे **मरुत**स्स्तुतम् । काठ. ३८,१२६

अजुषन्त **मरुतो** यज्ञमेतम् । काठ. ४०,९८

मरुतो वै देवानां विशः । काठ.८,८; ऐ.१,९; तां. ६,१०,१०; १८,१,१४

पशवो वै **मरुतः** । ऐ. ३,१९; काठ. २१,३६; ३६,२,१६

प्राणो वै **मरुतः** स्वापयः । ऐ. ३,१६

विश्वे देवा अब्रुवन् **मरुतो** हैनं नाजहुः । ऐ. ३,२०

तन्**मरुतो** धून्वन् । ऐ. ३,३४

आपो वै **मरुतः** । ऐ. ६,३०; कौ. १२,८

मरुतश्च त्वाङ्गिरसश्च देवा अतिछन्दसा छन्दसा रोहन्तु । ऐ. ८,१२;१७

अथैनं (इन्द्रं) ऊर्ध्वायां दिशि **मरुत**श्चाङ्गिरसश्च देवा ... ... अभ्यषिञ्चन्......पारमेष्ठ्याय माहाराज्यायाधिपत्याय स्वावश्यायाऽऽतिष्ठाय । ऐ. ८,१४

मरुतश्चाङ्गिरसश्च देवाः षड्भिश्चैव पञ्चविंशैरहोभिरभ्यषिञ्चन् । ऐ. ८,१४;१९

मरुतोऽङ्गिरसमभितमयन् । तस्य तान्तस्य हृदयमाच्छिन्दन्, सा-ऽशनिरभवत् । तै. १,१,३,१२

मरुतो वै देवानामपराजितमायतनम् । तै. १,४,६,२

सप्त गणा वै **मरुतः** । तै. १,६,२,३; २,७,२,२

ते (**मरुतः**) एनं (इन्द्रं) अभ्यक्रीडन् । तै. १,६,७,५

अन्नं वै **मरुतः** । तै. १,७,३,५; १,७,५,२; १,७,७,३

हेमन्तेनर्तुना देवा **मरुत**स्त्रिणवे (स्तोमे) स्तुतं बलेन शक्वरीः सहः । हविरिन्द्रे वयो दधुः । तै. २,६,१९,२

मरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः । तै. २,७,१०,१

मरुतो गणानां पतयः । तै. ३,११,४,२

इहेव वः स्वतपसः । **मरुतः** सूर्यत्वचः । शर्म सप्रथा ... तै. आ. १,...

मरुतः प्राणैरिन्द्रं बलेन । तै. आ. २,१८,१

प्रति हास्मै **मरुतः** प्राणान् दधाति । तै. आ. २,१८,१

विशो वै **मरुतो** देवविशः । श. २,५,१,१२;३,९,१,१७; ऐ. १,...

तद्धास्यां **मरुतः** पाप्मानं विमेथिरे । श. २,५,२,२४

प्रजानां **मरुतः** पाप्मानं विमथ्नते । श. २,५,२,२४

मरुतो यजेति । श. २,५,२,२८

मरुतो ह वै सान्तपना मध्यन्दिने वृत्रं सन्तेपुः स ... ऽनन्नेव प्राणन् परिदीर्णः शिश्ये । श. २,५,३,३

मरुतो ह वै क्रीडिनो वृत्रं हनिष्यन्तमिन्द्रमागतं तमभितः परि चिक्रीडुर्महयन्तः । श. २,५,३,२०

विशो वै **मरुतः** । श. ३,९,१,१७

मरुतो वाऽइत्यश्वत्थेऽपक्रम्य तस्थुः । श. ४,३,३,६

इन्द्रमेवानु **मरुत** अभिजाति । श. ४,३,३,१०

अहुतादो वै देवानां **मरुतो** विट् । श. ४,५,२,१६

युञ्जन्तु त्वा **मरुतो** विश्ववेदस इति युञ्जन्तु त्वा देवा इत्येवैतदाह । (**मरुतः**=देवाः) अमरकोषे ३,३,५८; श. ५,१,४,९

इन्द्रो **मरुत** उपामन्त्रयत । श. ५,३,५,१४

आदित्याः पश्चान्**मरुत** उत्तरतः । श. ८,६,३,३

मरुतो वै वर्षस्येशते । काठ. ११,३२; श. ९,१,२,५

मरुतो देवताष्ठीवन्तौ । श. १०,३,२,१०

अन्वाध्या **मरुतः** । श. १३,४,२,१६

मरुतः परिवेष्टारो **मरुत**स्यावसन् गृहे । ऐ. ८,२१; श. १३,५,४,६

विश्वे देवा **मरुत** इति । श. १४,४,२,२४

अप्सु वै **मरुतः** शिताः । (श्रिताः) कौ. ५,४

इन्द्रस्य वै **मरुतः** क्रीडिनः । कौ. ५,५

मरुतो ह वै देवविशोऽन्तरिक्षभाजना ईश्वराः । कौ. ७,८

मरुतो रश्मयः । ताण्ड्य. १४,१२,९

मरुतो वै देवानां भूयिष्ठाः । ताण्ड्य. १४,१२,९;२१,१४,३

अथैष **मरुत्**स्तोम एतेन वै **मरुतो**ऽपरिमितां पुष्टिमपुष्यन्नपरिमितां पुष्टिं पुष्यति य एवं वेद । तां. १९,१४,१

गणशो हि **मरुतः** । तां. १९,१४,२

घोरा वै **मरुतः** स्वतवसः । कौ. ५,५; गो. उ. १,२०

अथ यन्मरुतः स्वतवसो यजति, घोरा वै **मरुतः** स्वतवसः । गो. उ. १,२१

आपो वै **मरुतः** शिवाः (श्रिताः) गो. उ. १,२२

[illegible] वै मरुतः [illegible] । तै. ब्रा. २,७,३
[illegible] वै मरुतः [illegible] । तै. ब्रा. २,७,२
[illegible] मरुत [illegible] । [illegible] ३,३,३१
[illegible] । [illegible] ३,३,३
मरुतः... [illegible] । [illegible] ३,३
[illegible] । [illegible] ३,३
[illegible] मरुत [illegible] । [illegible] ११,३
मरुद्भि [illegible] । [illegible] ११,१३
मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. १,१०१,३
मरुद्भिः [illegible] । (विश्वे देवाः) ऋ. १,१११,७
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. १,१११,८
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. १,१७०,२
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. ३,४७,१;
ऋ. ३,४७,३४,२२,७

मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. ३,२१,८
मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रामरुतौ) ऋ. ३,३२,२
मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. ४,३४,७
मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. ४,३४,११
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । (मरुतः [illegible]) ऋ. ५,६०,८

मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. ६,४०,५
मरुद्भिरग्ने [illegible] । (इन्द्रमरुतौ) ऋ. ७,८२,५
मरुद्भिः [illegible] । (अश्विनौ) ऋ. ८,३५,३
मरुद्भिरिन्द्र सख्यं ते अस्तु । (इन्द्रः) ऋ. ८,९६,७
मरुद्भी [illegible] । (विश्वे देवाः) ऋ. १०,१२६,५
मरुद्भिः [illegible] । (विश्वे देवाः)
ऋ. १०,१५७,३

[illegible] मरुद्भिः । (इन्द्रवायू) य. वे. ३,२२
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रमरुतौ)
य. वे. ७,३६
[illegible] मरुद्भिः । (अग्निः) य. वे. १२,७०;
का. १३,१९६; तै. आ. ४,४,१
[illegible] मरुद्भिरस्मिन् [illegible] ।
(विश्वे देवाः) य. वे. २५,४३
[illegible] मरुद्भिः । (इन्द्रः) य. वे. ३३,६३;
तै. आ. ४,५,५,४,४,६
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । (अग्निः) य. वे. ३३,१३;
तै. आ. ४,५,५,४,४,६

मरुद्भिरस्य [illegible] । (पवमानः सोमः, [illegible] देवाः,
[illegible]) ऋ. ९,९६,१
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । (अग्निः) ऋ. ३,१३,२
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. ३,३५,९
मरुद्भिः [illegible] । (अग्निः) ऋ. ४,३५,२
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रः विश्वे देवाः)
ऋ. ७,१०३,२
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. १०,७२,३
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । [illegible] ११,११
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । [illegible] १०,३३
[illegible] मरुद्भिः । ([illegible]) [illegible] ११,२,११,२२
[illegible] मरुद्भिर्वैश [illegible] ।
[illegible] २३,२७

मरुद्भिर्वैश [illegible] । [illegible] ३३,१४
[illegible] मरुद्भिः [illegible] । श. ५,३,३,१४
मरुद्भिः [illegible] । [illegible] २०,२
मरुद्भ्यः [illegible] । (अश्विनौ) ऋ. ५,५,११
मरुद्भ्यः [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. ५,६०,८
मरुद्भ्यः [illegible] । (मरुतः [illegible]) ऋ. ५,६०,४
मरुद्भ्यो [illegible] । (इन्द्रः) ऋ. ८,७१,२
मरुद्भ्यो [illegible] । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,२५,१
मरुद्भ्यः [illegible] । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,३३,३
मरुद्भ्यः [illegible] । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,३४,२;
९,६५,१०

मरुद्भ्यः [illegible] । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,६१,१२
मरुद्भ्यः [illegible] । (मरुतः) य. वे. २२,२८
[illegible] मरुद्भ्यः, [illegible] मरुद्भ्यः, [illegible]
मरुद्भ्यः, [illegible] मरुद्भ्यः, [illegible] ।
([illegible]) य. वे. २४,१६
[illegible] मरुद्भ्यः [illegible] । (सोमः) य. वे. २६,१७
मरुद्भ्यो [illegible] । ([illegible]) य. वे. ३०,५
मरुद्भ्यः [illegible] । [illegible] ९,१३;
श. ३,५,३,१०
[illegible] मरुद्भ्यः [illegible] । [illegible] १०,१९
मरुद्भ्यः [illegible] । [illegible] १५,३
[illegible] मरुद्भ्यो [illegible] । [illegible] ३६,५;
श. ३,५,३,४,९
[illegible] मरुद्भ्यो [illegible] मरुतो [illegible] ।
[illegible] ३६,१२

तं मरुद्भ्यो देवविड्भ्यः । ऐ. १,१०
मरुद्भ्योऽनुब्रूहीति । श. २,५,२,३८
अथ मरुद्भ्यः सान्तपनेभ्यः । श. २,५,३,३
अथ मरुद्भ्यः [illegible] मरुद्भ्यो गृहीयात् । श. ४,३,३,१०
अथ मरुद्भ्यः [illegible] । श. ५,१,३,३
अथ [illegible] मरुद्भ्य आलभते । श. ५,५,२,९
मरुतां [illegible] । ([illegible]) ऋ. १,२३,११
मरुतां [illegible] । ([illegible]) ऋ. १,९४,१२
मरुतां [illegible] । ([illegible]) ऋ. १,११४,६
मरुतां [illegible] । ([illegible]) ऋ. १,११५,९
मरुतां [illegible] । ([illegible]) ऋ. १,१२८,१
मरुतां [illegible] । ([illegible]) ऋ. १,१५२,९
मरुतां [illegible] । ([illegible]) ऋ. १,१६३,१
[illegible] ऋ. १,१६९,२
[illegible] ऋ. १,१६३,७
[illegible] ऋ. १,१६२,७
[illegible] ऋ. ३,३,३
[illegible] ऋ. ३,१६,१०
[illegible] ऋ. ३,३३,७
[illegible] ऋ. ४,३,८
[illegible] ऋ. ४,३२,४
[illegible] ऋ. ५,५४,१
[illegible] ऋ. ५,६०,१
[illegible] ऋ. ६,३,८
[illegible] ऋ. ६,११,७
[illegible] ऋ. ६,६१,१४
[illegible] ऋ. ७,३४,१०
[illegible] ऋ. ८,१८,१२
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

मरुतामाधिपत्यं (आसी) । (ऋतवः, इन्द्रः) वा.य.१४,२४; काठ. ११,
मरुतोऽसि मरुतां गणः । (वायुः) वा. य.१८,४५; काठ. १८,
मरुतां सप्तमी । (शारदय:) वा. य. २१,४
मरुतां स्कन्धा विश्वेषां देवानां प्रथमा कीकसाः । (अश्वाद्य) वा. य. २५,
इन्द्रस्य वज्रो मरुतामनीकम् । (रथः) वा. य. २९,५४
यां वनुष्यं पितरो मरुतां मन इच्छत । (पितरः) अ. ४,२५,११
मरुतां पिता पशूनामधिपतिः । (मरुतां पिता) अ. ५,२४,१२
उग्रश्चौजो मरुतामनीकम् । (वनस्पतिः) अ. ६,१२५,३
प्रदक्षिणं मरुतां स्तोममृध्याम् । (इन्द्रः) अ. ७,५१,२
मरुतामुग्रा नप्तिः । (मधु, अश्विनौ) अ. ९,१,३;१०
अश्विनोरंसौ मरुतामियं ककुत् । (ऋषभः) अ. ९,४,८
मरुतां शर्धमुग्रम् । (इन्द्रः) ऋ.१०,१०३,९; अ.१९,१३,१०; काठ. १८,१३
[illegible] मरुतां [illegible] मरुतां [illegible] । काठ. १०,१८
मरुतां प्राणेन ते प्राणं ददातु । म.स. ११,१३
[illegible] मरुतां [illegible] । काठ. १०,१४
मरुतां [illegible] । काठ. १३,१८
मरुतां [illegible] । काठ. २१,८
[illegible] मरुतां [illegible] । काठ. २१,३४
[illegible] मरुतां [illegible] । काठ. ३०,२३
[illegible] मरुतां [illegible] । काठ. ३४,१०
[illegible] मरुताम् । तै. आ. १,२५,३
[illegible] मरुताम् । तै. आ. १,२५,१
मरुतां [illegible] । तै. आ. १,२७,३
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] मरुतः [illegible] । ऋ. ४,२,४
मरुतः [illegible] । ऋ. ५,५४,१
मरुतः [illegible] । ऋ. ८,२४,१२
मरुतः [illegible] । ऋ. ८,२२,३
मरुतः [illegible] ऋ. ८,९१,३३
[illegible] मरुतः [illegible] । ऋ. [illegible]
[illegible] । ऋ. [illegible]

मरुत्व इह सोमं पाहि । (इन्द्रः) ऋ. ३,५१,७
शुषिता **मरुत्वः** । (मन्युः) ऋ. १०,८४,१
इन्द्र **मरुत्व** इह पाहि । (इन्द्रामरुतौ) वा. य. ७,३५;
कठ. ४,३६; श.४,३,३.१३
यन्मरुत्वद्याज्यायाः पदं भवति । कठ. २३,२०
मरुत्वाँ इन्द्रं अवर्धन् । (इन्द्रः) ऋ. १,८०,११
मरुत्वान् नो भवत्विन्द्र ऊती । (इन्द्रः) ऋ. १,१००,१-१५
मरुत्वान् रुद्रः नः हवं शृणोतु । (रुद्रः) ऋ. १,११४,११
मरुत्वान् रुद्रः मा उन्ना ममन्द । (रुद्रः) ऋ. २,३३,६
मरुत्वाँ इन्द्रः । (उषासानक्ता) ऋ. ३,४,६
मरुत्वान् इन्द्रः । (इन्द्रः) ऋ. ३,४७,१; ३,५०,१
मरुत्वान् इन्द्रः आ यातु । (इन्द्रः) ऋ. ४,२१,३
य मरुत्वाद् वृषभो **मरुत्वान्** । (सोमः) ऋ. ६,४७,५
मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते । (इन्द्रः) ऋ. ८,३६,१-६
मरुत्वाँ इन्द्रः । (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,७,
मरुत्वाँ इन्द्र वृषभो रणाय पिबा सोमम् । (इन्द्रमरुतौ)
वा. य. ७,३८; कठ. ४,३८
इन्द्रो **मरुत्वान्**त्स्वमानिन्द्रेन्द्रः तृप्यतु नः ।
(इन्द्राग्नी. सोम इन्द्रश्च) अ. ६,१०४,३
इन्द्रो **मरुत्वान्** स ददातु तन्मे । (विश्वकर्मा) अ. ६,१२२,५
इन्द्रो **मरुत्वान्**त्स ददादिदं मे । (ओदनः) अ. ११,१,२७
इन्द्रो रक्षतु दक्षिणतो **मरुत्वान्** । (स्वर्गः, ओदनः, अग्निः)
अ. १२,३,२४
इन्द्रो मा **मरुत्वान्** प्राच्या दिशः पातु । (यमः)
अ. १८,३,२५
इन्द्रो मा **मरुत्वान्**एतस्या दिशः पातु । (इन्द्रः)
अ. १९,१७,८
मरुत्वाँ इन्द्र मीढ्व । ऐ. ५,६
मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छता हवं । (अश्विनौ) ऋ. ८,३५,१३
मरुत्वन्तो मत्सराः । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,१०७,२५
मरुत्वन्तं सख्याय हवामहे । (इन्द्रः) ऋ. १,१०१,१-७
मरुत्वन्तं इन्द्रं हुवेम । (इन्द्रः) ऋ. ३,४७,५
मरुत्वन्तं न वृञ्जसे । (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,१
मरुत्वन्तं इन्द्रं हवामहे । (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,५-६
मरुत्वन्तं वृषभं वावृधानं इन्द्रं हुवेम । (मरुत्वन्)
वा. य. ७,३६; कठ. ४,४०
इन्द्रं ते **मरुत्वन्त**मृच्छतु । (इन्द्रः) अ. १९,१८,८
मरुत्वता इन्द्रेण जितं । (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,४
मरुत्वता इन्द्रेण सं अजन । (इन्द्रः) ऋ. १,२३,५

मरुत्वते इन्द्राय हव्यं वर्तन । (सहकृत्यः)
ऋ. १,१४२,१२
मरुत्वते तुभ्यं हवींषि रात । (इन्द्रः) ऋ. ३,३५,७
मरुत्वते हुवन्ते । (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,८
मरुत्वते इन्द्राय पवस्व । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,६४,२२
मरुत्वते पवस्व । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,६५,१०
मरुत्वते सोमः सुतः । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,१०७,१७
मरुत्वते सप्त क्षरन्ति । (हविर्धाने) ऋ. १०,१३,५
सप्त क्षरन्ति शिशवे **मरुत्वते** । (सरस्वती) अ. ७,५३,२
इन्द्राय **मरुत्वते** एकादशकपालम् । कठ. ११,५
सोऽग्नये **मरुत्वते** त्रयोदशकपालं पुरोडाशं निर्वपेत् । ऐ. ७,८
अग्नये **मरुत्वते** स्वाहा । ऐ. ७,९
इन्द्रायैव **मरुत्वते** गृह्णीयात् । श. ४,३,३,१०
इन्द्रस्य त्वा **मरुत्वतो** व्रतेनादधे । कठ. ८,८
मरुत्वती धृषती जेषि । (सरस्वती) ऋ. २,३०,८
त्वा **मरुत्वती** परिभुवन् । (इन्द्रः) ऋ. ७,३१,८
मरुत्वतीर्विशो अभि प्रयः । (इन्द्रः) ऋ. ८,१३,२८
मरुत्वतीर्विश्व मे यज्ञेन कल्पन्ताम् । (अग्निः)
वा. य. १८,२०
न एतामैन्द्रीं **मरुत्वती**मजनत् । श. २,५,२,२७
न्युच्य **मरुत्वती**रिव । (इन्द्रः) ऋ. १,८०,४
मरुत्वतीयः ग्रावः । ऐ. ४,२९
सवनमितिं **मरुत्वतीय**ग्रहः । मै. १५,१
मरुत्वतीयं उक्थं अव्यथायै स्तभ्नातु । (इन्द्रः)
वा. य. १५,१२
मरुत्वतीयमनुशंसस्य स स्तभ्नातु । कठ. १७,१२
मरुत्वतीयमनुक्थ मरुत्वतीय ग्रहः । कठ. २८,६
मरुत्वतीयमेव गृह्णीया । श. ४,३,३,३
निविदं दधाति **मरुत्वतीयम्** । श. ११,५,१,९
तद् सर्वं **मरुत्वतीयं** भवति । ऐ. ३,१६
मरुत्वतीयं शस्त्रं शंसति, **मरुत्वतीयं** शस्त्रं शंसति,
मरुत्वतीयां निविदं दधाति **मरुतां** न अग्निः ।
मरुत्वतीयमुक्थं शंसता **मरुत्वत**.य.न शंसति । ऐ. ३,२०
एतान्मरुत्वतीये शंसते वा । ऐ. ८,१
तस्मान्नैवं न प्रउगमरुत्वतीयम् । ऐ. ८,१; . १५,३
एतौ **मरुत्वतीये** मध्ये । ऐ. ८,२
... मरुत्वतीयमेवैतत् ... ।
. १५,३

[illegible] मरुत्वतीयमेव [illegible] अजात । तै. १०,३
[illegible] मरुत्वतीयम् । ऐ. आ. ५,१,१
[illegible] मरुत्वतीयं [illegible] । ऐ. आ. १२,२
मरुत्वतीयं [illegible] । गो. उ. ३,५
[illegible] मरुत्वतीयं [illegible] । गो. उ. ३,१२
[illegible] मरुत्वतीयोऽपाकृतः । काठ. २८,६
[illegible] मरुत्वतीयां [illegible] । काठ. १३,३७
[illegible] मरुत्वतीयां [illegible] । काठ. २८,६
[illegible] मरुत्वतीयान् [illegible] । श. ४,३,३,६,९।४.४,१,२
[illegible] मरुत्वतीया [illegible] । काठ. २८,६
स मरुत्वतीयेन [illegible] न [illegible] । काठ. २८,६

मरुत्वतीये [illegible] । गो. उ. ३,२३; ४,१८
[illegible] मरुत्वतीये होता । ऐ. आ. ५,१,१
[illegible] मरुत्वतीयेनो[illegible] । काठ २८,६
[illegible] मरुत्वतीयात् । गो. उ. ३,२२
[illegible] मरुत्वतीयस्य । ऐ. ३,१८
[illegible]मरुत्वतीयस्या ऽऽ तानः । ऐ. आ. ५,१,१
मरुत्वतीयस्य प्रतिपदनुचरौ । ऐ. ४,२९,३१;५,१
मरुत्वतीयस्य प्रतिपदीमह । ऐ. ५,४
मरुत्वतीयस्य प्रतिपदनुचरौ । ऐ. ५,६
मरुत्वतीयस्य प्रतिपदन्तः । ऐ. ५,१२
मरुतः महिमानमीरयन् । (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६५,२
अथैष मारुत एकविंशतिकपालः । काठ. ३७,६,८
मारुत॰ सप्तकपालं पुरोडाशं निर्वपति । श. ५,२,१,६
स यदेव मारुत॰ स्थस्य तदेवैतेन प्रीणाति । श. ५,४,३,१७
मारुतः कल्माषः । (पशवः) वा. य. २९,५८
मारुतः [illegible] । (प्रायश्चित्तदेवताः) वा. य. ३९,५
स उ मारुत आपो वै मारुतः । ऐ. ६,३०
पुरस्तान्मारुतस्याप्यस्याथ इति । ऐ. ६,३०
मारुतः सप्तकपालः । (पुरोडाशः) काठ. ९,४;२१,१०;
३७,३; ताण्ड्य. २१,१०,२३
मारुतस्तु सप्तकपालः । (पुरोडाशः) श. २,५,१,१२
मारुतोऽसि मरुतां गणः । (वायुः) वा. य. १८,४५;
काठ. १८,७५

शर्धः प्रयन्त मारुतोत विष्णो । (विश्वे देवाः) वा. य.३३,४८
तस्यैष मारुतो गणः । (रोहितादित्यौ) अ. १३,४,८

[illegible] हि मरुतो [illegible] मारुतोऽसौ [illegible]
[illegible] । काठ. ३६,२;३७,४-६

मारुतो हि वैश्यः । काठ.३७,४; तै. २,७,२,२
[illegible] हि मारुतो गणः । श. ५,४,३,१७
अन्तरिक्षलोको वै मारुतो मरुतां गणः । श. ९,४,२,६
[illegible] मारुतो [illegible] । तै. आ. ५,४,२
मारुतो [illegible] । ताण्ड्य. २१,१४,१२
[illegible] मारुताः (प्रजापत्यादय:)
वा. य. २४,[illegible]

आपो वै मारुताः । श. ९,३,१,७
ये ते मारुताः (पुरोडाशाः) रश्मयस्ते । श. ३,३,१,२५
पृथिव्या मारुतास्सजाता एतन्महतौ सो पयः । काठ. १०,१[illegible]
शतयश हि मारुता गणाः । काठ. २१,१०; श. ९,३,१,२५
यदेवानरं मारुता अनुहूयन्ते । काठ. २१,३३
उपांशु मारुताञ्जुहोति । काठ. २१,३३
मारुता वै ग्रावाणः । ताण्ड्य. ९,९,१४
ऊर्ध्वनभसं मारुतं गच्छतम् । (रक्षः) वा.य. ६,१६
आदित्यान्मारुतं गणम् । (आहृयामि) (विश्वे देवाः)
वा. य. ३३,४५

मारुतं शर्धो भुवनानुऽव्यचलत् । (व्रात्यः) अ. १५,१४,१
त्वां शर्धो मदत्यनु मारुतम् । (इन्द्रः) अ. २०,१०६,२
मारुतं चरुं निर्वपेत् । काठ. ११,१
मारुतं चरुं सौर्यमेककपालम् । काठ. ११,११
प्रयज्यवो मरुत इति मारुतं समानोदर्कम् । ऐ. आ. १,५,२
सयोनित्वाय मारुतं प्रैयङ्गवं चरुं निर्वपेत् । काठ. १०,१८
वृष्टिवनिपदं मरुत इति मारुतमत्यंनमिहे । ऐ. ३,१८
तस्माद्वैश्वानरीयेणाग्निमारुतं प्रतिपद्यते । ऐ. ३,३५
प्रसीदन्तेति य अग्निमारुतं शंसति । इन्द्रोऽगस्त्यो मरुतस्ते
समजानत । ऐ. ५,१६

मरुतो यस्य हि क्षय इति मारुतं क्षेतिवदन्तरूपम् । ऐ.५,२१
मरुतो यस्य हि क्षय इति मारुतं पोता यजति । ऐ. ६,१०
स उ मारुतमेव शंसिष्टेति । ऐ. ६,३०
मारुतस्य मारुतीमनूच्यैन्द्र्या यजेत् । काठ. १०,१९
वैश्वानराय धिषणामित्याग्निमारुतस्य । ऐ. आ. १,५,२
मारुत्यामिक्षा वारुण्यामिक्षा काय एककपालः । काठ. ९,८
मारुत्यां तं वारुण्यामवदधाति । श. २,५,२,३६
अस्यै मारुत्यै पयस्यायै द्विरवद्यति । श. २,५,२,३८
ये एव के च मारुत्यै सातम् । श. ५,१,३,३

[illegible] **मारुती** [illegible] । [illegible] ११.३
मारुती [illegible] । [illegible] ३७.४
मारुती [illegible] **मारुती** [illegible] । [illegible] ३.५.३,१०
[illegible] **मारुतीन्** [illegible] । [illegible] १०.२६
[illegible] **मारुतैर्** [illegible] । [illegible] १३.५.४,१८
[illegible] । [illegible] १७.११ [illegible] ८.३.१.८
[illegible] ... ...
[illegible]......[illegible] **माहाराज्याधिपत्याय**
[illegible] । [illegible] ८.१४
[illegible] **मीढ्व** । [illegible] ५,३
[illegible] **मुखेन** । [illegible] ३.९.१
[illegible] **मुञ्चन्तु** [illegible] । [illegible] १.३३,११
[illegible] । [illegible] १०.३४,११
[illegible] **मंसीमहि** । [illegible] १.१३३.७
[illegible] **मत्सराः** । [illegible] ६.१०७.१५
यंसन् । [illegible] **यंसन्** । [illegible]
[illegible] १.१०७.२

यज् । [illegible]
[illegible]
[illegible] **यजाति** । [illegible] ३.१०
[illegible] **यजाति** । [illegible] ३.१०
[illegible] **यजाति** [illegible] ।
[illegible] ३.१०
[illegible] **यजाति** । [illegible] ७.६५.६
[illegible] **यजेत्** । [illegible] १०,१९
[illegible] **यजेते** । [illegible] ३.५.३.१८
यत् । [illegible] **यतिरे** । [illegible] ८.८९.३
[illegible] **यतिरे** [illegible] । [illegible]
[illegible] ३३.९०
या । [illegible] **याति** [illegible] ८.३०१
[illegible] १०.६३
[illegible] **याति** । [illegible] १.१६१.१४
[illegible] । [illegible] १.५० ३
[illegible] । [illegible] १०.१०३.८
[illegible]

यक्षि । [illegible] **यजेन** । [illegible] ४०.१८
[illegible] **यान्याहुः** [illegible] । [illegible] ११.३
युज् । [illegible] **युङ्क्ते** । [illegible] ५.३३.२
युञ्जन्तु [illegible] । [illegible] ९ ८
युञ्जन्तु [illegible] । [illegible] ३.३.१
युञ्जन्तु [illegible] । [illegible] ३.९०.१
युञ्जन्तु [illegible]
[illegible] ३.३.७८ ।
[illegible] ५.१.३.६
योनिः । [illegible]
[illegible] ३३.२
[illegible] । [illegible]
[illegible] ७०.३.१४
[illegible]
[illegible]

रुह्। मरुतश्च त्वाङ्गिरसश्च देवा अतिछन्दसा छन्दसा **रोहन्तु**। ऐ. ८,१२;१७

मरुतः **वक्षणाभ्यः** अजनयः। (वायुः) ऋ. १,१३४,४

वचः। मरुतां उच्यते **वचः**। (रुद्रः) ऋ. १,११४,६

वज्र। इन्द्रस्य **वज्रो** मरुतामनीकम्। (रथः) वा.य. २९,५४

तानिन्द्र उपालभत तं मरुतः क्रुद्धा **वज्रमु**द्यत्याभ्यपतन्। काठ. १०,१९

वज्रमेव प्रथमेन मरुत्वतीयेनोच्छियते। काठ. २८,६

मारुतो **वत्सतर्यः**। ताण्ड्य. २१,१४,१२

वधः। विश्वे देवा मरुतो विश्ववेदसः **वधात्** नो त्रायध्वम्। (विश्वे देवाः, मरुतः) अ. ६,९३,३

वर्ष **वनुध्वं** पितरो मरुतां मन इच्छत। (पितरः) अ.४,१५,१५

वन्द्। मरुतः। गाः **वन्दते**। (इन्द्रः) ऋ. १,१७३,१२

हविष्मतो मरुतो **वन्दते** गीः। (इन्द्रामरुतौ) वा. य. ३,४६; श.२,५,२,२८

बर्हिः। मरुतः **बर्हि** शुम्भन्ति। (पवमानः सोमः) ऋ. ९,९६,१७

वयः। मरुतः स्तुताः इन्द्रे **वयः** दधुः। (इन्द्रः मरुतः) वा य. २१,२७

सरस्वती भारती मरुतो विशः **वयः** दधुः। (तिस्रो देव्यः) वा. य. २१,१९

हेमन्तेनर्तुना देवा मरुतस्त्रिणवे (स्तोमे) स्तुतं बलेन शक्वरीः महः। हविरिन्द्रे **वयो** दधुः। तै. २,६,१९,२

वर्ध्। मरुतः यं **वर्धान्**। (इन्द्रः) ऋ. ६,१७,११

बृहस्पतिर्मरुतो ब्रह्म सोम इमां **वर्धयन्तु**। (आत्मा) अ. १४,१,५४

वीर्यं वै मरुतो वीर्येणैवैनं **वर्धयन्ति**। काठ. २८,६

वर्ष वनुध्वं पितरो मरुतां मन इच्छत। (पितरः) अ.४,१५,१५

मरुतो वै **वर्षस्येशते**। काठ. ११,३२; श. ९,१,२,५

दिग्भिः पर्जन्यो मारुतो **वर्षतु**। श. १३,५,४,२८

वह्। मरुतो **वह्नि** जातवेदः। (विश्वे देवाः) ऋ. ५,४३,१०

मरुतः अग्ने **वह**। (अग्निः) ऋ. ४,२,४

मरुतो दिवो **वहध्वे**। (मरुतः अग्नामरुतौ वा) ऋ. ५,६०,७

उत् त्वा **वहन्तु** मरुत उदवाहा उदप्लुतः। (यमः) अ. १८,२,२२

वाच्। पृश्न्या वै मरुतो जाता **वाचो** वास्या वा। काठ. १०,१८

वातरशनो मरुतः। तै. आ. १,२

[illegible]। **वातवतां** मरुताम्। तै.आ.१,२४,१

वायुः। मरुद्भ्यो **वायवे** मदः। (पवमानः सोमः) ऋ.९,२५

वृध्। मरुतो **वावृधानाः**। (इन्द्रः) ऋ. ८,९६,८

मरुत्वन्तं वृषभं **वावृधानं** इन्द्रं हुवेम। (मरुत्वान्) वा. य. ७,३६; काठ. ४,

पृश्न्या वै मरुतो जाताः वाचो **वास्या** वा। काठ. १०,१८

अथ पृशतीं **विचित्रगर्भां** मरुद्भ्य आलभते। श. ५,५,२

विजयः। विशा मरुद्भिः स यथा **विजयस्य** कामाय। श. ४,३,३

विट्। मरुतो देवता **विट्**। काठ. १५,६

क्षत्रं वा एष मरुतां **विट्**। काठ. २१,३४

विड् वै मरुतो भागधेयेनैवैनाञ्छमयति। काठ. १०,११

विड् वै मरुतः। तै. १,८,३,३;२,७,२,२; काठ. ११,१; ३७,

क्षत्रं वा इन्द्रो **विण्मरुतः** क्षत्रायैव विशमनुनियुनक्ति। काठ. १०,१

अहुतादो वै देवानां मरुतो **विट्**। श. ४,५,२,१६

सरस्वती भारती मरुतो **विशः** वयः दधुः। (तिस्रो देव्यः) वा. य. २१,१९

मरुतो वै देवानां **विशः**। काठ ८,८; ऐ.१,९; तां.६,१०,१० १८,१,१४

विशो वै मरुतो देवविशः। श. २,५,१,१२;३,९,१,१७-१८ ऐ. १,१०

विशो वै मरुतः। श. ३,९,१,१७

विशो मरुतः। काठ.३८,११८;श. २,५,२,६;२७;४,३,३,

विशा मरुद्भिः स यथा विजयस्य कामाय। श. ४,३,३,१५

क्षत्रं वा इन्द्रो विण्मरुतः क्षत्रायैव **विशमनुनियुनक्ति**। काठ. १०,११

तव व्रते कवयो **विद्मनापसो**ऽजायन्त मरुतो भ्राजदृष्टयः। (अग्निः) वा. य. ३४,१२

विद्युज्जिह्वा मरुतो दन्ताः। (गौः) अ. ९,७,३

प्रजानां मरुतः पाप्मानं **विमथ्नते**। श. २,५,२,२४

तद्धास्यां मरुतः पाप्मानं **विमेथिरे**। श. २,५,२,२४

संवर्गोऽग्निर्मरुतो **विराट्**। बृ. पूर्व. २,१

अहोरात्राणि मरुतो **विलिष्टं** सूदयन्तु ते। (अश्वः) वा. य. २३,४१

विष्णुः। मरुतो **विष्णुरहिरे**। (विश्वे देवाः) ऋ.१०,९२,११

वधैः प्रयन्तु मरुतोत **विष्णो**। (विश्वे देवाः) वा.य. ३३,४८

अनु **विश्वे** मरुतो जिगीत। (विश्वे देवाः) ऋ. ७,३४,२४

मरुतश्च **विश्वे** नः पात। (आदित्याः) ऋ. ७,५१,३

विश्वे अद्य मरुतो विश्व ऊती आगमन्तु । (विश्वे देवाः)
ऋ. १०,३५,१३; वा. य. १८,३१; काठ. १८,३५
विश्वे देवा मरुत ऊर्जेन ऊः [भग] । ऋ. २,२९,५
विश्वे देवा मरुतस्त्वा हवन्तु । (अश्विनौ) ऋ. ३ ४,४
विश्वे देवा मरुत इन्द्रो अस्मान् न जह्युः । (विश्वे देवाः)
ऋ. ३,४७,३
विश्वे देवा मरुतो विश्ववेदसः वधर् नो अवन्तु ।
(विश्वे देवाः, मरुतः) ऋ. ३,९३,३
विश्वे देवा मरुतो यद् ससोः [अवन्तु] (सविता)
ऋ. ७,३५,१
विश्वे देवा मरुत इति । बृहद. ३,४.१२
विश्वैर्देवैरनुमत मरुद्भिः । (सीता) वा. य. १२.७०;
क.ठ. १६,१४१; तै. सं. ४,४,२
विश्वैर्देवैरनुमत मरुद्भिः । (सीता) ऋ. ३.१७,९
मरुतां स्कन्धा **विश्वेषां देवानां** प्रथम कीकसा । (अश्व दानः)
वा. य. २५.३
विश्वमानुषु मरुत्सु वेदः । (अश्विनौ) ऋ. ४,१.३
मरुत्सु **विश्वमानुषु** । (विश्वे देवाः) ऋ. ८,२७,३
मरुत्सु **विश्वमानुषु** । काठ. २३.३७
विश्वे अद्य मरुतो **विश्व** ऊती आगमन्तु । (विश्वे देवाः
ऋ. १०,३५,१३; वा. य. १८,३१; काठ. १८.३५
मरुतो **विश्वकृष्टयः** । (विश्वे देवाः) ऋ. १०.९२,३
युञ्जन्तु त्वा मरुतो **विश्ववेदसः** । (अग्निः) ऋ. ३,३.२
युञ्जन्तु त्वा मरुतो **विश्ववेदसः** । (इन्द्रः) ऋ. ३,९२,१
विश्वे देवा मरुतो **विश्ववेदसः** वधर् नो अवन्तु ।
(विश्वे देवाः, मरुतः) ऋ. ३,९३,३
युञ्जन्तु त्वा मरुतो **विश्ववेदसः** । (अश्वः) वा. य. ९,८
युञ्जन्तु त्वा मरुतो **विश्ववेदस** इति युञ्जन्तु त्वा देवा
इत्येवैतदाह (मरुतः = देवाः-शतपथे ३,१,४८):
श. ५,१,४.९
मरुतां नै विद्युतोऽपि । [illegible]
मरुतः **विदथे** सन्तु । (विश्वे देवाः) ऋ. १०,१२८,२
[illegible] मरुतो [illegible] **विदथे** [illegible] । (देवाः) ऋ. ५.३.३
विदापय । मरुतो न [illegible] । [illegible] १,२६,३
वीर्यं वै मरुतो [illegible] । [illegible] २८,३
स [illegible] मरुतो [illegible] मरुतो **वीर्येण** [illegible] ।
[illegible] ३३,१४
वृजनं । [illegible] **वृजनम्** [illegible] ऋ. १,१०२,११
वृत्रः । मरुतो **वृत्रं** [illegible] । [illegible] ऋ. १.८०.११

[illegible] इन्द्रो **वृत्रमहन्** ।
कौ. १५,२
इन्द्रो **वृत्रमहन्** [illegible] मरुत्वतीयं स्तोत्रं भवति ।
काठ. २२,३७
स [illegible] **वृत्रमहन्** [illegible] न [illegible] ।
काठ २८,३
मरुद्भि [illegible] **वृत्रमवधी** [illegible] । काठ.३३,१५
मरुतो ह वै [illegible] **वृत्रं** [illegible] मरुतो-
[illegible] । श. २,५,२.३
मरुतो ह वै [illegible] **वृत्रं** [illegible] परि
[illegible] । श. ३,५,३,२०
[illegible] मरुतो **वृत्रहन्तमम्** । (इन्द्रः) वा.य.२०.३०
वृध् । मरुतः ते [illegible] **अवर्धन्** । (इन्द्रः) ऋ. ५.३१,१०
मरुतः इन्द्रं **अवर्धन्** । (इन्द्रः) ऋ. १०,७३.१
मरुतः इन्द्रं **अवर्धन्** । (इन्द्रः) ऋ. १०.११३.३
अवर्धन्निन्द्रं मरुत [illegible] । (इन्द्रः वा. य. ३३,३४:
काठ. ४,३४
मरुतः **वृधं** [illegible] । (अग्निः) ऋ. ३,१३,=
[illegible] मरुतो **वृधे** । (इन्द्रः) ऋ. ८,३३,१०
मरुतो **वृद्धसेनाः** । (विश्वे देवाः) ऋ. १,८६,८
[illegible] **वृषभो** [illegible] । (वैश्वः) ऋ. ३,४७,५
मरुतः [illegible] **वृषभो** [illegible] । (इन्द्र मरुतौ)
वा. य. ७,३८; काठ. ३,३८
[illegible] **वृषभं** [illegible] । [illegible] वा.य.७,३६;
काठ. ४,४०
मरुतः [illegible] **वृष्टिं** [illegible] । [illegible] ऋ. ५,८३,६
[illegible] **वृष्टिं** [illegible] । [illegible] ११,११
वृष्टिपतिरिद् [illegible] । [illegible] ३,१८
वैराजं [illegible] । [illegible] १२,१४
[illegible] **वैश्वानर** [illegible]) वा. य. ३०,५
वैश्वानराय [illegible] । [illegible] १,५ ३
[illegible] ।
(अग्निः) वा. य. ३३,२३
[illegible] । [illegible] ८,८
शत्रुः [illegible]) [illegible]
[illegible] । [illegible] ३,३,१०,३
[illegible] **शत्रु** । [illegible] ११,११
[illegible] । ११,१४
शत्रुः । [illegible] ऋ. ३,३० ८

मरुतां **शर्ध** आ वह । (इळः) ऋ. २,३,३
शर्धो मरुतः य आसन् । (अग्निः) ऋ. ३,३२,४
शर्धो वा यो मरुतां ततक्ष । (अग्निः) ऋ. ६,३,८
मरुतां **शर्धः** उदस्थात् । (इन्द्रः) ऋ. १०,१०३,९
शर्धः प्रयन्त मारुतोत विष्णो । (विश्वे देवाः) वा.य.३३,४८
मारुतं **शर्धो** भूत्वानुव्यचलन् । (व्रात्यः) अ. १५,१४,१
मरुतां **शर्धमुग्रम्** । (इन्द्रः) ऋ.१०,१०३,९; अ.१९,१३,१०;
काठ. १८,५३

त्वां **शर्धो** मदत्यनु मारुतम् । (इन्द्रः) अ. २०,१०६,३
कथा मरुतां **शर्धाय** । (अग्निः) ऋ. ४,३,८
शर्म । मरुतो मरुद्भिः **शर्म** यंसन् । (विश्वे देवाः)
ऋ. १,१०७,२

मरुतः **शर्म** यच्छन्तु । (विश्वे देवाः) ऋ. ३,५४,२०
शर्मन्त्स्याम मरुतां उपस्थे । (विश्वे देवाः) ऋ.७,३४,२५
मरुतां **शर्म** अशीमहि । (विश्वे देवाः) ऋ. १०,३६,४
इहैव वः स्वतपसः । मरुतः सूर्यत्वचा । **शर्म** सप्रथा आवृणे ।
तै. आ. १,४,३

तस्यैप मारुतो गणः स एति **शिक्याकृतः** । (रोहितादित्यौ)
अ. १३,४,८

शिशुः । सप्त क्षरन्ति **शिशवे** मरुत्वते । (सरस्वती)
अ. ७,५९,२

मरुतो ह वै सान्तपना मध्यन्दिने वृत्रꣳसन्तेपुः स सन्तप्तो-
ऽनन्नेव प्राणन् परिदीर्णः **शिश्ये** । श. २,५,३,३
शुचिं नु स्तोमं मरुतो यद्ध वो दिवः । ऋ. ८,७,११;
काठ. २१,४४

मरुद्भिरुग्रः **शुभमन्य** ईयते । (इन्द्रावरुणौ) ऋ. ७,८२,५
मरुतः वह्नि **शुम्भान्ति** । (पवमानः सोमः)ऋ. ९.९६,१७
रदा मरुद्भिः **शुरुधः** । (इन्द्रः) ऋ. १, १६९,८
मरुद्भिः मे हवं **शृणुतं** । (इन्द्रावरुणौ) ऋ. ३,६२,२
मरुतां आयतां उपब्दिः **शृण्वे** । (इन्द्रः) ऋ. १,१६९,७
शृण्वन्तु मरुतो हवं । (विश्वे देवाः) ऋ. ८,५४,३
मरुतो हवं **शृण्वन्तु** । (सूर्यः) ऋ. १०,३७,६
शं नो भवन्तु मरुतः । (विश्वे देवाः) ऋ. ७,३५,९;
अ. १९,१०,९

शं नः **शोचा** मरुद्वृधोऽग्ने । काठ. २,९७
मरुत्वतीयं प्रगाथं **शंसति**, मरुत्वतीयं सूक्तं **शंसति** मरुत्व-
तीयां निविदं दधाति, मरुतां सा भक्तिः । मरुत्वतीयमुक्थं
शस्त्वा मरुत्वतीयया यजति । ऐ. ३,२०

प्रसीदन्नेति य अग्निमारुतं **शंसति**, इन्द्रोऽगस्त्यो मरुतस्ते
समजानत । ऐ. ५,१६
स उ मारुतमेव **शंसिष्येति** । ऐ. ६,३०
अप्सु वै मरुतः **श्रितः** । (श्रिताः) गो. उ. १,२२
स्वाहा मरुद्भिः परि **श्रीयस्व** । (घर्मः) वा. य. ३७,१३;
तै. आ. ४,५,५;५,४,
मरुद्गणा ! मम हवं **श्रुत** । (विश्वे देवाः) ऋ. २,४१,१५
श्रुतरथाय मरुतो दुवोया । (इन्द्रः) ऋ. ५,३६,६
श्रुत्वा हवं मरुतो यद्ध याथ । (विश्वे देवाः) ऋ. ६,५०,५
मरुत्वान् रुद्रः नः हवं **शृणोतु** । (रुद्रः) ऋ. १,११४,११
मरुतः स्तोमं **शृण्वन्तु** । (अग्निः) ऋ. १,४४,१४
मरुतश्चाङ्गिरसश्च देवाः **षड्भिश्चैव** पञ्चविंशैरहोभिरभ्यषि-
ञ्चन् । ऐ. ८,१४;१९
षड्भिः पार्जन्यैर्वा मारुतैर्वा वर्षासु । श. १३,५,४,२८
पङ्क्तिश्छन्दो मरुतो देवता **ष्ठीवन्तौ** । श. १०,३,२,१०
मरुत्वन्तं **सख्याय** हवामहे । (इन्द्रः) ऋ. १,१००,१–१५
मरुद्गण ! देवास्ते **सख्याय** येमिरे । (इन्द्रः) ऋ. ८,८९,२
सख्यं । मरुद्भिरिन्द्र **सख्यं** ते अस्तु । (इन्द्रः) ऋ.८,९६,७
देवास्त इन्द्र **सख्याय** येमिरे बृहद्भानो मरुद्गण । (इन्द्रः)
वा. य. ३३,९५
सजोपा इन्द्र **सगणो** मरुद्भिःसोमं पिव।(इन्द्रामरुतौ)वा.य.७,३७
आदित्यैरिन्द्रः **सगणो** मरुद्भिरस्मभ्यं भेपजा करत् ।
(विश्वे देवाः) वा. य. २५,४६
इन्द्रः **सगणो** मरुद्भिरस्माकं भूत्वविता । (इन्द्रः) अ.२०,६३,२
पिवेन्द्र सोमं **सगणो** मरुद्भिः । (इन्द्रः) तै. आ. १,२७,१
मरुद्भिः **सचा** भुवा । (अश्विनौ) ऋ. ८,३५,३
सजोपा इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमं पिव ।(इन्द्रामरुतौ)वा.य.७,३७
मरुत्वाँ इन्द्र **सत्पते** । (इन्द्रः) ऋ. ८,३६,१–६
मरुत्वः परमे **सधस्थे** । (इन्द्रः) ऋ. १,१०१,८
मरुतो ह वै सान्तपना मध्यन्दिने वृत्रꣳसन्तेपुः स **सन्तप्तो**
ऽनन्नेव प्राणन् परिदीर्णः शिश्ये । श. २,५,३,३
मरुत्वते **सप्त** क्षरन्ति । (हविर्धाने) ऋ. १०,१३,५
मरुतः **सप्ताक्षरेण सप्त** ग्राम्यान् पशूनुदजयन् । (पूषादयः)
वा. य. ९,३२; काठ. १४,२४

सप्त क्षरन्ति शिशवे मरुत्वते । (सरस्वती) अ. ७,५९.२
सप्त गणा वै मरुतः । तै. १,६,२,३;२,७,२,२
मारुतस्तु **सप्तकपालः** (पुरोडाशः) श. २,५,१,१२
मारुतꣳ **सप्तकपालं** पुरोडाशं निर्वपति । श. ५,३,१,६
मारुतः **सप्तकपालः** (पुरोडाशः) काठ.९,४;२१,१०:३७,३;
तां. २१,१०,२३

ससस हि मारुता गणाः । काठ. २१,१०; श. ९,३,१,२५
स हि मारुतो गणः । श. ५,४,३,१७
स हि मारुतो निरवत्या एव मरुतोऽपो ग्राम्यमेवैतेनावरुन्धे । काठ. ३६,२;३७,४-६
रुतः सप्ताक्षरया उष्णिहमुदजयन् । काठ. १४,२५
रुतः सप्ताक्षरया शक्वरीमुदजयन् । काठ. १४,२४
रुतः सप्ताक्षरेण सप्त ग्राम्यान् पशूनुदजयन् । (पूषादयः) वा. य. ९,३२; काठ. १४,२४
रुतां सप्तमी । (शादादयः) वा. य. २५.४
रुतः सप्तमे अहन् । (सवित्रादयः) वा. य. ३९.६
हैव वः स्वतपसः । मरुतः सूर्यत्वचा । शर्म सप्रथा आवृणे । तै. आ. १,४,३
सीदन्तेति च अग्निमारुतं शंसति । इन्द्रोऽगस्त्यो मरुतस्ते समजानत । ऐ. ५.१६
एतं मरुद्भ्यो भागं निरवपत् तं मरुतो वीर्याय समतपन् । काठ. ३६.१५
यज्यवो मरुत इति मारुतं समानोदर्कम् । ऐ. आ. १,५,३
रयोनित्वाय मारुतं प्रेयङ्गवं चरुं निर्वपेत् । काठ. १०,१८
सरस्वती भारती मरुतो विशः वयः दधुः । (तिस्रो देव्यः) वा. य. २१,१९
द्ध सर्वं मरुत्वतीयं भवति । ऐ. ३,१६
रुत्वतीये तृतीय सवने । गो. उ. ३,२३;४,१८
रुतः द्वितीये सवने न जग्मुः । क.ठ. ३०,२७
सवनततिं मरुत्वतीयग्रहः । कौ. १५.१
: पूषा मरुतश्च सर्वे सविता सुवाति । (आत्मा)अ.१४,१,३३
सहः । हेमन्तेनर्तुना देवा मरुतस्त्रिणवे (स्तोमे) स्तुतं बलेन शक्वरीः सहः । हविरिन्द्रे वयो दधुः । तै. २,६,१९.२
रुद्वृधोऽग्ने सहस्रसातमः । श. ११,४,३,१९
सान्तपनः । इन्द्रो वै मरुतः सान्तपनाः । गो.उ. १,२३
सान्तपनेभ्यः मरुद्भ्यः, गृहमेधिभ्यः मरुद्भ्यः, क्रीडिभ्यः मरुद्भ्यः, स्वतवद्भ्यः मरुद्भ्यः प्रथमजानालभते । (प्रजापत्यादयः) वा. य. २४,१६
अथ मरुद्भ्यः सान्तपनेभ्यः । श. २,५,३,३
सिच् (सिञ्च्)। सं मा सिञ्चन्तु मरुतः [इन्द्रा ग्नेन्द्रै] । (ईर्ष्यादिः) अ. ७,३३,१
सद् (सीद्) मरुतः सीदन्तु । (विश्वे देवाः) ऋ. ५,४६,९
मरुत्वते सोमः सुतः । (पवमानः सोमः) ऋ.९,१०३,१७
सुदानवः । उप प्र यन्तु मरुतः सुदानवः । (ब्रह्मणस्पतिः) वा. य. ३४,५६; काठ. १० ४७
मीनाम आसन् मरुतः सुदानवः । (रुद्रः) अ. ६,३०.१

मरुद्भ्यः सुदुघा पृश्निः (मरुतः अग्नामरुतौ वा) ऋ.५,६०,५
मरुतः सुमायया वसत । (मित्रावरुणौ) ऋ. ५,६३,६
मरुतां सुम्नं रास्व । (रुद्रः) ऋ. १,११४,९
मरुतां सुम्नं एतु । (रुद्रः) ऋ. २,३३,६
मरुतः सुम्नमर्चन् । (अग्निः) ऋ. ३,१४,४
मरुतः सुवीर्यं आ दधीत । (ब्रह्मणस्पतिः) ऋ. १,४०,२
मरुतो मे सुषुतस्य पेयाः । (इन्द्रः) ऋ. ५,२९,३
तदेतत्पृतनाजिदेव सूक्तं यन्मरुत्वतीयमेतेन हेन्द्रः पृतना अजयत । कौ. १५,३
मरुत्वतीयं प्रगाथं शंसति, मरुत्वतीयं सूक्तं शंसति । ऐ.३,२०
सूद् । मरुतो विलिङ्ग सूदयन्तु ते (अश्वः) वा. य. २३,४१
सूर्यत्वक् । इहैव वः स्वतपसः । मरुतः सूर्यत्वचा । शर्म सप्रथा आवृणे । तै. आ. १,४,३
सृजा मरुत्वतीरव । (इन्द्रः) ऋ. १,८०,४
मरुतः सृष्टां वृष्टिं नयन्ति । काठ. ११,३१
सेना । देवा इन्द्रज्येष्ठा मरुतो यन्तु सेनया । (विश्वे देवाः, चन्द्रमाः, इन्द्रः) अ. ३,१९,६
मरुद्भ्यः सोमा अर्षन्ति । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,३३,३
मरुद्भ्य सोमो अर्षति । (") ऋ. ९,३४,२;६५,२०
मरुत्वते सोमः सुतः । (पवमानः सोमः) ऋ. ९,१०७,१७
वृत्रस्य निर्मरुतो भ्य सोम इमां वर्धयन्तु । (आत्मा)अ.१४,१,५४
इन्द्र ! मरुद्भिः सोमं पिब । (इन्द्रः) ऋ. ३,४७,२.४
मरुद्भ इह सोमं पाहि । (इन्द्रः) ऋ. ३,५१,८
अग्ने ! मरुद्भिः सोमं पिब । (इन्द्रः मरुतः अग्नामरुतौ वा) ऋ. ३,५२,७;५,६०,८
मरुतः पोत्रात् स्वकृत्तुना सोमं पिबतु । (मरुतः)अ.२०,२,१
पिबेन्द्र सोमं [illegible] मरुद्भिः । (इन्द्रः) तै. आ. १,२७,१
मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहन् । मह नाग. २०,२
मरुत्वं इन्द्र वृषभो रणाय पिब सोमम् । (इन्द्रामरुतौ) वा. य. ७,३८; काठ. ४,३८
[illegible] सोमेन [illegible] । [illegible] ३,९,१
मरुतः सोमपीतये हवामहे । (विश्वे देवाः) ऋ. १,२३,१०
मरुतः सोमपीतये हुवे । (अग्नयः) ऋ. १,१११,४
सौर्य । [illegible] सौर्यम् [illegible] । काठ. ११,३१
मरुतां स्कन्धा [illegible] । [illegible] वा.य.२५,६
मरुतः स्तनयित्नुना [illegible] । काठ. ८,५
[illegible] स्तन्नानु । [illegible] वा.य.१५,१६
[illegible] स्तन्नानु । काठ. १७,६१
[illegible] ऋ.९,३९,१९; [illegible] ८,६६,१७

स्तुताः — हवन्तु

मरुतः स्तुताः इन्द्रे वयः दधुः। (इन्द्रः मरुतः) वा. य. २१,२७
स्तुतं हेमन्तेनर्तुना देवा मरुतस्त्रिणवे (स्तोमे) स्तुतं बलेन शक्वरीः सहः। हविरिन्द्रे वयो दधुः। तै. २,६,१९,२
मरुद्गणः स्तोत्रे [illegible]। (विश्वे देवाः) ऋ. ६,५२,११
[illegible] मरुद्भिः [illegible] स्तोत्रं [illegible]। काठ. २६,३७
मरुत्स्तोत्रस्य वृजनस्य गोपाः (इन्द्रः) ऋ. १,१०१,११
मरुतः एष वः स्तोमः। (मरुत्वान् इन्द्रः) ऋ. १,१६५,१५
मरुतः स्तोमं शृण्वन्तु। (अग्निः) ऋ. १,४४,१४
मरुतां स्तोमं ऋध्याम्। (मरुतः अग्नामरुतौ वा) ऋ. ५,६०,१
[illegible] नु स्तोमं मरुतो [illegible]। ऋ. ८,७,११; काठ. ११,४४
[illegible] मरुतां स्तोममृध्याम्। (इन्द्रः) ऋ. ७,५२,३
स्था। मरुतो रथेषु तस्थुः (मरुतः अग्नामरुतौ वा) ऋ. ५,६०,२
मरुतो [illegible] तस्थुः। श. ४,३,३,६
स्वतवद्भ्यः। सान्तपनेभ्यः मरुद्भ्यः, गृहमेधिभ्यः मरुद्भ्यः, क्रीडिभ्यः मरुद्भ्यः, स्वतवद्भ्यः मरुद्भ्यः [illegible]। (प्रजापत्यादयः) वा. य. २४,१६
इंद्र वः स्वतवसः। मरुतः सूर्यत्वचा। तै. आ. १,४,३
उप प्रेत मरुतः स्वतवसः। काठ. ११,१२;२०,४७
घोरा वै मरुतः स्वतवसः। कौ. ५,२; गो. उ. १,२०
अथ यन्मरुतः स्वतवसः। गो. उ. १,२०
मरुतामिव स्वनः। (अग्निः) ऋ. १,१४३,५
मरुतामिव स्वनः नानददेति। (पवमानः सोमः) ऋ. ९,७०,६
मरुद्भिः स्वयशसः मंसीमहि। (लिंगोक्ता) ऋ. १,१३६,७
विश्वे देवा मरुतो यत् स्वर्काः। [अञ्जन्] (सविता) अ. ७,२५,१
शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः। (बहुदेवत्यम्) अ. १९,१०,९
मरुतः पोत्रात् स्वर्कादृतुना सोमं पिबतु। (मरुतः) अ. २०,२,१
मरुतः स्वस्तये हवामहे। (विश्वे देवाः) ऋ. १० ६३,९
उदेनं मरुतो देवा उदिन्द्राग्नी स्वस्तये। (आयुः) अ. ८,१,२
स्वति राये मरुतो दधातन। काठ. २३,२०
प्राणो वै मरुतः स्वापयः। ऐ. ३,१६
अथैनं (इन्द्रं) ऊर्ध्वायां दिशि मरुतश्चाङ्गिरसश्च देवा... ... अभिषिञ्चन् ... ... पारमेष्ठ्याय माहाराज्यायाधिपत्याय स्वावश्यायाऽऽतिष्ठाय। ऐ. ८,१४
मरुतामेव तावदाधिपत्यं स्वाराज्यं पर्येता। छान्दोग्य.३,९,१
मरुद्भ्यः स्वाहा। (स्वाहाकृतयः) ऋ. ५.५,११
मरुन्नेत्रेभ्यः उत्तरासद्भ्यः स्वाहा। (पृथिवी) वा. य. ९,३५
मरुन्नेत्रा वोत्तरासदस्तेभ्यः स्वाहा। (देवाः) वा. य. ९,३६
मरुतामोजसे स्वाहा। (अग्न्यादयः) वा. य. १०,२३

मरुद्भ्यः स्वाहा। (मरुतः) वा. य. २२,२८
स्वाहा मरुद्भिः। (गर्भः) वा. य. ३७,१३; तै. आ. ४,५,५;५,४
मरुतः [illegible] स्वाहा। काठ. १५,३
[illegible] मरुतो [illegible] स्वाहा। ऐ. ७,९
[illegible] मरुत [illegible] स्वं पयः। काठ. १०,
हरिश्चन्द्रो मरुद्गणः। (पवमानः सोमः) ऋ. ९.६६,२६
मरुत्वान् रुद्रः नः हवं शृणोतु। (रुद्रः) ऋ. १,११४,११
मरुद्गणा। मम हवं श्रुत। (विश्वे देवाः) ऋ. २,४१,१५
मरुद्भिः मे हवं शृणुतं। (इन्द्रावरुणौ) ऋ. ३,६२,२
मरुतो हवं शृण्वन्तु। (सूर्यः) ऋ. १०,३७,६
श्रुता हवं मरुतो यद्ध याथ। (विश्वे देवाः) ऋ. ६,५०,५
मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवं। (अश्विनौ) ऋ. ८,३५,१३
शृण्वन्तु मरुतो हवं। (विश्वे देवाः) ऋ. ८,५४,३
मरुत्वते इन्द्राय हव्यं कर्तन। (स्वाहाकृतयः) ऋ.१,१४२,१
तस्य मरुतो हव्यं व्यमथ्नत। काठ. ३६,९
हविः। हेमन्तेनर्तुना देवा मरुतस्त्रिणवे (स्तोमे) स्तुतं बलेन शक्वरीः सहः। हविरिन्द्रे वयो दधुः। तै. २,६,१९,२
हविष्मतो मरुतो। (इन्द्रामरुतौ)वा.य.३,४६;श.२,५,२,२
मरुत्वते तुभ्यं हवींषि रात। (इन्द्रः) ऋ. ३.३५,७
हु। मरुतः सोमपीतये हुवे। (ऋभवः) ऋ. १,१११,४
मरुतः हुवे। (विश्वे देवाः) ऋ. ५,४६,३;१०,३६,१
मरुत ऊतये हुवे। (विश्वे देवाः) वा. य. ३३,४९
मरुत्वन्तं इन्द्रं हुवेम। (इन्द्रः) ऋ. ३,४७,५
मरुद्भी रुद्रं हुवेम। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,१२६,५
मरुत्वन्तं इन्द्रं हुवेम। (मरुत्वान्) वा.य. ७,३६; काठ.४,८
मरुत्वते ह्वयन्ते। (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,८
हु। मरुतः सोमपीतये हवामहे। (विश्वे देवाः) ऋ.१,२३,१०
मरुत्वन्तं सख्याय हवामहे। (इन्द्रः) ऋ. १,१०१,१-७
मरुत्वन्तं इन्द्रं हवामहे। (इन्द्रः) ऋ. ८,७६,५-६
मरुतः स्वस्तये हवामहे। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६३,९
मरुतः अवसे हवामहे। (विश्वे देवाः) ऋ. १०,६६,४
हृदयम्। मरुतः स्तनयित्नुना हृदयमाच्छिन्दन्। काठ. ८,
हेमन्तेनर्तुना देवा मरुतस्त्रिणवे (स्तोमे) स्तुतं बलेन शक्वरीः सहः। हविरिन्द्रे वयो दधुः। तै. २,६,१९,२
हेळः। मरुतां हेळो अद्भुतः। (अग्निः) ऋ. १,९४,१२
होतृ। संस्थिते मरुत्वतीये होता। तै. आ. ५,१,१
मरुत्वतीयं ह होतुर्बभूव। गो. पू. ३,५
विश्वे देवा मरुतस्त्वा ह्वयन्तु। (अश्विनौ) अ. ३,४,४

दैवत-संहितान्तर्गत–

मरुद्देवता-मन्त्राणां चरणसूची ।

३३०.१ अंसेषु व ऋष्टयः पत्सु खादयः ५,५४,११
३५७.१ अंसेष्वा मरुतः खादयो वः ७,५६,१३
१३३.३ अंसेष्वा वः प्रपथेषु खादयः १,१६६,९
१३७.३ अंसेष्वेताः पविषु क्षुरा अधि १,१६६,१०
१११.३ अंसेष्वेषां नि मिमृक्षुर्ऋष्टयः १,६४,४
१३३.४ अक्षो वश्चक्रा समया वि वावृते १,१६६,९
१९९.१ अग्नयो न शुशुचाना ऋजीषिणः २,३४,१
३२०.४ अग्नयो न स्वविद्युतः ५,८७,३
४२८.१ अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसः वा० य० २५,२०
३११.३ अग्नितपो यथासथ ५,६१,४
३३०.३ अग्निभ्राजसो विद्युतो गभस्त्योः ५,५४,११
३३.३ अग्निं मित्रं न दर्शतम् १,३८,१३
४११.१ अग्निर्न ये भ्राजसा रुक्मवक्षसः १०,७८,२
८१.१ अग्निर्हि जानि पूर्व्यः ८,७,३६
४३४.४ अग्निर्वां दूतः प्रत्येतु विद्वान् अथ० ३,१,२
४५५.१ अग्निश्च यन्मरुतो विश्ववेदसः ५,६०,७
२१५.१ अग्निश्रियो मरुतो विश्वकृष्टयः ३,२६,५
४१७.२ अग्नीनां न जिह्वा विरोकिणः १०,७८,३
४५६.१ अग्ने मरुद्भिः शुभयद्भिर्ऋक्वभिः ५,६०,८
२१६.२ अग्नेर्भामं मरुतामोज ईमहे ३,२६,६
४५२.४ अग्ने वि... पद्वसान ५,६०,३
२७५.१ अग्ने शर्धन्तमा गणम् ५,५६,१
३४३.२ अङ्ग विद्रे मिथो जनित्रम् ७,५६,२
३३०.१ अच्छ ऋषे मारुतं गणम् ५,५२,१४
४२१.४ अच्छान्त मे छदयाथ चा नूनम् १,१६५,१२;
[इन्द्रः ३३३१]
३३.१ अच्छा वदा तना गिरा १,३८,१३
२.२ अच्छा विदद्वसुं गिरः १,६,६
३७३.२ अच्छा सूरीन्त्सर्वताता जिगात ७,५७,७
८३.१ अच्युता चिद् वो अज्मन्ना ८,२०,५
७.३ अजयन्त स्वभानवः १,३७,२
४५३.१ अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते ५,६०,५
४.१ अतः परिज्मन्ना गहि १,६,९

९९.३ अतीयेव न ऊर्ध्वदतिहना ८,२०,१८
२२३.३ अति स्कन्दन्ति शर्वरीः ५,५२,३
२४७.१ अतीयाम निदस्तिरः स्वस्तिभिः ५,५३,१४
४५४.३ अतो नो रुद्रा उत वा न्वस्य ५,६०,६
४८४.१ अतो वयमन्तमेभिर्युजानाः १,१६५,५;
[इन्द्रः ३३५३]
११३.३ अत्यं न मिहे वि नयन्ति वाजिनम् १,६४,६
३०२.३ अत्या इव सुभ्वश्चारवः स्थन ५,५९,३
३६०.१ अत्यासो न ये मरुतः स्वञ्चः ७,५६,१६
३१२.३ अत्र श्रवांसि दधिरे ५,६१,११
६०.३ अदाभ्यस्य मन्मभिः ८,७,१५
४५७.१ अदारसृद् भवतु देव सोम अथ० १,२०,१
२२५.४ अद्रिं भिन्दन्त्योजसा ५,५२,९
३२५.१ अद्वेषो नो मरुतो गातुमेतन ५,८७,८
१७३.३ अध यदेषां नियुतः परमाः १,१६७,२
२५५.३ अध स्मा नो अरमतिं सजोषसः ५,५४,६
३६६.३ अध स्मा नो मरुतो रुद्रियासः ७,५६,२२
३३३.३ अध स्मैषु रोदसी स्वशोचिः ६,६६,६
३०.१ अध स्वनान्मरुताम् १,३८,१०
३६८.४ अध स्वनोचे अभि वः स्याम ७,५६,२४
२२७.१ अधा नरो न्योहते ५,५२,११
२२७.२ अधा नियुत ओहते ५,५२,११
२२७.३ अधा पारावता इति ५,५२,११
२२२.४ अधा नि...न् ५,५२,१३
३५१.३ अधा ... ७,५६,७
१०३.३ अधि नो गात मरुतः सदा हि वः ८,२०,२२
१२४.४ अधि श्रियो दधिरे पृश्निमातरः १,८५,२
२७३.३ अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गातन ५,५५,९
४२२.३ अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गात १०,७८,८
५३.१ अधीव यद् गिरीणाम् ८,७,१४
३१६.५ अ...नो ... ५,८७,३
२०३.२ अन... १,३३,५
११७.४ अनन्तशुष्मा वृषखादयो नरः १,६४,१०
३३१.३ अन...ं ... ६,३८,१४

६.२ अनर्वाणं रथेशुभम् १,३७.१
३७४.२ अनवद्यासः शुचयः पावकाः ७,५७,५
३.१ अनवद्यैरभिद्युभिः १,६,८
३४०.३ अनवसो अनभीशू रजस्तूः ६,६६,७
२५४.४ अनश्वदां यन्न्ययातना गिरिम् ५,५४,५
३४०.२ अनश्वश्चिद् यमजत्यरथीः ६,६६,७
४६७.२ अनाधृष्टास ओजसा १,१९.४; [अग्निः २४४१]
१४५.२ अनानता अविथुरा ऋजीषिणः १,८७,१
९३.४ अनोकेप्वधि श्रियः ८,२०,१२
२४४.३ अनु क्रामेम धीतिभिः ५,५३,११
४८८.१ अनुत्तमा ते मघवन्नकिर्नु १,१६५,९;
[इन्द्रः ३२५८]
६९.१ अनु त्रितस्य युध्यतः ८,७.२४
२४३.३ अनु प्र यन्ति वृष्टयः ५,५३,१०
१३७.२ अनु विप्रमतक्षत १,८६,३
३३७.४ अनु श्रिया तन्वमुक्षमाणाः ६,६६,४
१५६.४ अनु स्वधां गभस्त्योः १,८८,६
३५७.४ अनु स्वधामायुधैर्यच्छमानाः ७,५६,१३
३००.४ अनु स्वं भानुं श्रथयन्ते अर्णवैः ५,५९,१
४९१.२ अनेद्यः श्रव एषो दधानाः १,१६५, १२;
[इन्द्रः ३२६१]
३४०.१ अनेनो वो मरुतो यामो अस्तु ६,६६,७
८०.२ अन्तरिक्षेण पततः ८,७,३५
३०१.४ अन्तर्महे विदथे येतिरे नरः ५,५९,२
३३७.२ अन्तः सन्तोऽवद्यानि पुनानाः ६,६६,४
२२६.२ अन्तस्पथा अनुपथाः ५,५२,१०
३०६.२ अन्तान् दिवो बृहतः सानुनस्परि ५,५९,७
४२४(४).२ अन्तिामित्रश्च दूरेऽमित्रश्च गणः वा॰य॰ १७,८२
६९.३ अन्विन्द्रं वृत्रतूर्ये ८,७,२४
२२२.३ अन्वेनाँ अह विद्युतः ५,५२,६
१९८.४ अपत्यसाचं श्रुत्यं दिवेदिवे २,३०,११
३२५.५ अप द्वेषांसि सनुतः ५,८७,८
३६४.३ अप बाधध्वं वृषणस्तमांसि ७,५६,२०
४४३.१ अपः समुद्राद् दिवमुद्वहन्ति अथ॰ ४,२७,४
४६४.१ अपामग्निस्तनूभिः संविदानः अथ॰ ४,१५,१०
३२३.१ अपारो वो महिमा वृद्धशवसः ५,८७,६
१०८.३ अपो न धीरो मनसा सुहस्त्यः १,६४,१
३६८.३ अपो येन सुक्षितये तरेम ७,५६,२४
४१.४ अबीभयन्त मानुषाः १,३९,६
२५२.३ अब्दया चिन्मुहुरा ह्रादुनीवृतः ५,५४,३
४६०.१ अभि क्रन्द स्तनयार्दयोदधिम् अथ॰ ४,१५,६
४७२.१ अभि त्वा पूर्वपीतये १,१९,९; [अग्निः
३८६.३ अभि व आवर्त् सुमतिर्नवीयसी ७,५९,
९७.३ अभि व द्युम्नैरुत वाजसातिभिः ८,२०,
४५१.२ अभि स्वधाभिस्तन्वः पिपिश्रे ५,६०,४
३४७.१ अभि स्वपूभिर्मिथो वपन्त ७,५६,३
४१८.४ अभिस्वर्तारो अर्कं न सुष्टुमः १०, ७८,
४०७.१ अभ्रप्रुषो न वाचा प्रुष वसु १०,७७,१
२५५.१ अभ्राजि शर्धो मरुतो यदर्णसम् ५,५४,६
४९०.१ अमन्दन्मा मरुतः स्तोमो अत्र १,१६५,
[इन्
३०५.२ अमव्यमासो महसा वि वावृधुः ५,५९,६
१८६.२ अमर्त्याः कशया चोदत त्मना १,१६८,४
३०१.१ अमादेषां भियसा भूमिरेजति ५,५९,२
८७.१ अमाय वो मरुतो यातवे द्यौः ८,२०,६
४३४.३ अमीमृणन् वसवो नाथिता इमे अथ॰
२९४.३ अयं योऽग्निर्मरुतः समिद्धः ५,५८,३
१४८.२ अया ईशानस्तविषीभिरावृतः १,८७,४
१७०.३ अया धिया मनवे श्रुष्टिमाव्या १,१६६,१
२९६.१ अरा इवेदचरमा अहेव ५,५८.५
९५.३ अराणां न चरमस्तदेषाम् ८.२०,१४
१६३.२ अरिष्टग्रामाः सुमतिं पिपर्तन १.१६६,६
३०.३ अरेजन्त प्र मानुषाः १,३८,१०
१८६.३ अरेणवस्तुविजाता अचुच्यवुः १.१६८,४
३३५.२ अरेणवो हिरण्ययास एषाम् ६.६६,२
१७७.३ अर्को यद् वो मरुतो हविष्मान् १,१६७,६
३४३.३ अर्चत्रयो धुनयो न वीराः ६,६६,१०
४८०.४ अर्चन्ति शुष्मं वृषणो वसूया १,१६५,१;
[इन्द्रः
१२४.३ अर्चन्तो अर्कं जनयन्त इन्द्रियम् १,८५,२
१६४.३ अर्चन्त्यर्कं मदिरस्य पीतये १,१६६,७
३००.२ अर्चा दिवे प्र पृथिव्या ऋतं भरे ५,५९,१
२१७.२ अर्चा मरुद्भिर्ऋक्वभिः ५,५२,१
१८०.४ अर्णो न द्वेषो धृषता परि ष्ठुः १.१६७,९
१३०.३ अर्यमणं न मन्द्रं सृप्रभोजसम् ६,४८,१४
२५७.२ अर्यमणो न मरुतः कवन्धिनः ५,५४,८
१२०.३ अर्वद्भिर्वाजं भरते धना नृभिः १,६४,१३
२१३.३ अर्वाची सा मरुतो या व ऊतिः २,३४,१५
४०१.३ अर्यन्ति पूतदक्षसः ८,९४,७
२११.१ अर्हन्तो ये सुदानवः ५,५२,५
१६४.२ अलातृणासो विदथेषु सुष्टुताः १,१६६,७
३८१.४ गव तदेन ईमहे तुराणाम् ७,५८,५

२०७.४ अव रुद्रा अशसो हन्तना वधः २,३४,९
१९०.३ अव स्मयन्त विद्युतः पृथिव्याम् १,१६८,८
१८६.१ अव स्वयुक्ता दिव आ वृथा ययुः १,१६८,४
४७४.३ अविन्द उस्रिया अनु १,६,५; [इन्द्रः ३२४५]
१४०.३ अवोभिश्चर्षणीनाम् १,८६,६
२९७.४ अवोस्त्रियो वृषभः क्रन्दतु द्यौः ५,५८,६
२७८.३ अश्मानं चित् स्वर्यं पर्वतं गिरिम् ५,५६,४
३०४.१ अश्वा इवेदरुषासः सबन्धवः ५,५९,५
२०६.२ अश्वान् रथेषु भग आ सुदानवः २,३४,८
२०४ ३ अश्वामिव पिप्यत धेनुमूधनि २,३४,६
३०६.३ अश्वास एषामुभये यथा विदुः ५,५९,७
४१९.१ अश्वासो न ये ज्येष्ठास आशवः १०,७८,५
७२.२ अश्वैर्हिरण्यपाणिभिः ८,७,२७
४५.२ असामि धूतयः शवः १,३९,१०
४४.३ असामिभिर्मरुत आ न ऊतिभिः १,३९,९
४४.१ असामि हि प्रयज्यवः १,३९,९
४५.१ असाम्योजो बिभृथा सुदानवो १,३९,१०
१३३.२ असिञ्चन्नुत्सं गोतमाय तृष्णजे १,८५,११
१४८.३ असि सत्य ऋणयावानेद्यः १,८७,४
१९१.१ असूत पृश्निर्महते रणाय १,१६८,९
४३५.१ असौ या सेना मरुतः परेषाम् अथ० ३,२,६
११७.३ अस्तार इषुं दधिरे गभस्त्योः १,६४,१०
३९८.१ अस्ति सोमो अयं सुतः ८,९४,४,
२०.१ अस्ति हि ष्मा मदाय वः १,३७,१५
१५६.३ अस्तोभयद् वृथासाम् १,८८,६
१५७.३ अस्मत् पुरोत जारिषुः १,१३९,८
२४६.३ अस्मभ्यं तद् धत्तन यद् व ईमहे ५,५३,१३
१३४.३ अस्मभ्यं तानि मरुतो वि यन्त १,८५,१२
२७३.२ अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्तन ५,५५,९
३८५.३ अस्माकमद्य मरुतः सुते सचा ७,५९,३
३७१.३ अस्माकमद्य विदथेषु बर्हिः ७,५७,२
४९३.२ अस्मायक्के मान्दस्य मेधा १,१६५,१४;
[इन्द्रः ३२६३]
४९५.१ अस्मादहं तविषादीषमाणः १,१७१,४;
[इन्द्रः ३२६६]
४३५.२ अस्मानैत्यभ्योजसा स्पर्धमाना अथ० ३,२,६
४२२.२ अस्मान्त्स्तोतॄन् मरुतो वावृधानाः १०,७८,८
१५७.६ अस्मासु तन्मरुतो यच्च दुष्टरम् १,१३९,८
४३६.२ अस्मिन् ब्रह्मन्नस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायामस्यां प्रतिष्ठायामस्यां चित्त्यामस्यामाकूत्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहूत्यां स्वाहा अथ० ५,२४,६
४५७.२ अस्मिन् यज्ञे मरुतो मृडता नः अथ० १,२०,१
२४२.४ अस्मे इत् सुम्नमस्तु वः ५,५३,९
२६१.४ अस्मे रारन्त मरुतः सहस्रिणम् ५,५४,१३
३६८.१ अस्मे वीरो मरुतः शुष्म्यस्तु ७,५६,२४
३५.३ अस्मे वृद्धा असन्निह १,३८,१५
३७३.४ अस्मे वो अस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ७,५७,४
१३८.१ अस्य वीरस्य बर्हिषि १,८६,४
१३९.१ अस्य श्रोषन्त्वा भुवः १.८६,५
४०४.३ अस्य सोमस्य पीतये ८,९४,१०
४०५.३ अस्य सोमस्य पीतये ८,९४.११
४०६.३ अस्य सोमस्य पीतये ८,९४,१२
१४८.४ अस्या धियः प्राविताथा वृषा गणः १,८७,४
३८८.३ अस्रेधन्तो मरुतः सोम्ये मधौ ७,५९,६
४८५.३ अहं ह्युग्रस्तविषस्तुविष्मान् १,१६५.६;
[इन्द्रः ३२५५]
४८९.३ अहं ह्युग्रो मरुतो विदानः १,१६५,१०;
[इन्द्रः ३२५९]
१३१.४ अहन् वृत्रं निरपामौब्जदर्णवम् १,८५,९
४८७.३ अहमेता मनवे विश्वश्चन्द्राः १,१६५,८;
[इन्द्रः ३२५७]
१५४.३ अहानि गृध्राः पर्या व आगुः १,८८,४
४९४.४ अहानि विश्वा मरुतो जिगीषा १,१७१,३;
[इन्द्रः ३२६५]
८०.१ आक्ष्णयावानो वहन्ति ८,७,३५
१३३.३ आ गच्छन्तीमवसा चित्रभानवः १,८५,११
८२.१ आ गन्ता मा रिषण्यत ८,२०,१
४७३.१ अग्ने याहि मरुत्सखा ८,१०३,१४; [अग्निः २४४७]
३८८.१ आ च नो बर्हिः सदताविता च नः ७,५९,६
३०७.३ आच्युच्यवुर्दिव्यं कोशमेते ५,५९,८
५६.३ आ तू न उप गन्तन ८,७,११
८७.४ आ तक्षांसि पाक्षोमतः ८,२० ६
२१५.२ आ त्वेषमुग्रमव ईमहे वयम् २,३६,५
४२०.२ आदर्दिरासो अद्रयो न विश्वहा १०,७८,६
६.१ आदह स्वधामनु १,६,४
१९१.४ आदित् स्वधामिषिरां पर्यपश्यन् १,१६८,९
४०८ ४ आदित्यासस्ते अक्रा न वावृधुः १०.७७,२
४१४.२ आदित्येन नाम्ना शंभविष्ठाः १०,७७.८
१४९.४ आदिन्नामानि यज्ञियानि दधिरे १,८७,५
७८.२ आ नव्यसे सुविताय ८,७,३३

३६१.३ आ नः स्पार्हे भजतना वसव्ये ७,५६,२१
३३८.१ आ [illegible] ६,६६,११
२०२.१ आ नो [illegible] मरुतः समन्यवः २,३४,६
७२.१ आ नो [illegible] ८,७,२७
५८.१ आ नो रयिं मदच्युतं पुरुक्षुं ८,७,१३
१७३.१ आ [illegible] १,१६६,७
२५३.१ [illegible] ५,५३,८
४११.४ [illegible] १,६०,३
३६९.२ [illegible] ७,५६,११
२२२.१ [illegible] ५,५२,१०
१८१.२ [illegible] १,३४,७
१०३.४ [illegible] ८,२०,२२
१६०.४ [illegible] १,३४,१३
४१९.३ [illegible] १०,७८,५
२६३.१ [illegible] अथ० ४,१५,९
२६८.१ [illegible] ५,५५,४
२०४.३ आ [illegible] ८,२०,२३
३६९.४ [illegible] ६,६६,६
३१७.३ आ [illegible] ५,६१,१६
१७१.३ आ यत् [illegible] १,१६६,१४
३५८.२ आ यत् [illegible] ७,५६,१०
४९३.१ आ यद् दुवस्याद् दुवसे न कारुः १,१६५,१४;
[इन्द्रः ३२६३]

२२९.१ आ यं नरः सुदानवो ददाशुषे ५,५३,६
२८२.३ आ यस्मिन् तस्थौ सुरणानि बिभ्रती ५,५६,८
२४१.१ आ यात मरुतो दिवः ५,५३,८
४७१.१ आ ये तन्वन्ति रश्मिभिः १,१९,८; [अग्निः २४४५]
४५०.१ आ ये तस्थुः पृषतीषु श्रुतासु ५,६०,२
२६१.१ आ ये रजांसि तविषीभिरव्यत १,१६६,४
४०३.१ आ ये विश्वा पार्थिवानि ८,९४,९
४३.२ आ यो नो अभ्व ईषते १,३९,८
४१२.४ आराच्चिद् द्वेषः सनुतर्युयोत १०,७७,६
३८२.३ आराच्चिद् द्वेषो वृषणो युयोत ७,५८,६
१८०.२ आरात्ताच्चिच्छवसो अन्तमापुः १,१६७,९
२२२.१ आ रुक्मैरा युधा नरः ५,५२,६
२८४.१ आ रुद्रास इन्द्रवन्तः सजोषसः ५,५७,१
८३.२ आ रुद्रासः सुदीतिभिः ८,२०,२
१९६.३ आरे अश्मा यमस्यथ १,१७२,२
३६१.३ आरे गोहा नृहा वधो वो अस्तु ७,५६,१७
१९६.१ आरे सा वः सुदानवः १,१७२,२

३७७.३ आ [illegible] ७,५७,३
७५.२ आ [illegible] ८,७,११
११६.२ आ [illegible] १,६४,९
१११.३ आ [illegible] १,८८,१
२११.४ [illegible] २,३४,१४
१११.१ आ विद्युन्मद्भिर्मरुतः स्वर्कैः १,८८,१
३२१.४ आ [illegible] ६,४८,१५
१४३.१ आ [illegible] १,८६,९
३७१.४ आ [illegible] ७,५७,१
५२.१ आ [illegible] १,३७,७
२२४.१ आ [illegible] ५,५८,३
४१.३ आ वो यामाय पृथिवी चिदश्रोत् १,३९,६
४३३.३ आ वो रोहितः शृणवत् सुदानवः अथ० १३,[illegible]
१८३.३ आ वोऽर्वाचः सुविताय रोदस्योः १,१६८,९
१२८.१ आ वो वहन्तु सप्तयो रघुष्यदो १,८५,६
३६२.१ आ वो होता जोहवीति सत्तः ७,५६,१८
४६२.१ आशामाशां वि द्योतताम् अथ० ४,१५,८
४६०.४ आशारैषी कृशगुरेत्वस्तम् अथ० ४,१५,६
४८३.३ आ शासते प्रति हर्यन्त्युक्था १,१६५,४;
[इन्द्रः ३२५३]

४४०.३ आशूनिव सुयमान् ऊतये अथ० ४,२७,१
९१.३ आ श्येनासो न पक्षिणो वृथा नरः ८,२०,१०
३२७.१ आ सखायः सबर्दुघाम् ६,४८,११
९६.२ आसु पूर्वासु मरुतो व्युष्टिषु ८,२०,१५
१८४.४ आसा गावो वन्द्यासो नोक्षणः १,१६८,२
१७६.३ आ सूर्येव विधतो रथं गात् १,१६७,५
३७६.१ आ स्तुतासो मरुतो विश्व ऊती ७,५७,७
१७७.१ आस्थापयन्त युवतिं युवानः १,१६७,६
२०३.३ आ हंसासो न स्वसराणि गन्तन २,३४,५
३८९.१ आ हंसासो नीलपृष्ठा अपप्तन् ७,५९,७
९७.२ आ हव्या वीतये गथ ८,२०,१६
२३५.४ इळाभिर्वृष्टयः सह ५,५३,२
४२.४ इत्था कण्वाय बिभ्युषे १,३९,७
७५.१ इत्था विप्रं हवमानम् ८,७,३०
३५९.२ इत्था विप्रस्य वाजिनो हवीमन् ७,५६,१५
२६४.३ इदं सु मे मरुतो हर्यता वचः ५,५४,१५
३८२.१ इदं सूक्तं मरुतो जुषन्त ७,५८,६
४८६.४ इन्द्र क्रत्वा मरुतो यद् वशाम १,१६५,७;
[इन्द्रः ३२५६]

४७८.१ इन्द्रज्येष्ठा मरुद्गणाः १,२३,८; [इन्द्रः ३१४८]

२१७.१ इन्द्रं [illegible] मरुतो [illegible] मरुतोऽइन्द्र [illegible] वा० सं० १७,८६
२३३.२ इन्द्रा [illegible] १,३३,७: [इन्द्रः ३३२७]
३३६.३ इन्द्र [illegible] १,१६३, १२
८४.४ इन्द्र [illegible] १,१३५,५:
[इन्द्रः ३३५७]
१०.१ इन्द्रः [illegible] ८,११,३
५.१ इन्द्र [illegible] मरुतो [illegible] १,१७३,१२:
[इन्द्रः ३३३३]
.१ इन्द्र [illegible] १,१३५,११:
[इन्द्रः ३३३०]
.१ इन्द्रेण [illegible]
.१ इन्द्रेण [illegible] १,३३,६: [इन्द्रः ३३४३]
.१ इन्द्रेण [illegible] १,६,७: [इन्द्रः ३३६३]
[illegible] १,३२,५
[illegible] ८,७,९
[illegible] ८,७,६
[illegible] ५,५६,१
[illegible] ८,७,२६
[illegible] १,८८,१
[illegible] ५,५६,३
[illegible]

३३८.४ [illegible] ८,९३,१४:
[इन्द्रः ३३३६]
३३३.२ [illegible] ५,६०,६
२८१.२ [illegible] ५,५३,७
८.२ [illegible] १,३७,३
३९३.१ [illegible] ७,५६,११
२८२.२ [illegible] ७,५९,२
३३३.४ [illegible] १,८८,१०
३३३.१ [illegible] ५,६०,१
४२५.१ [illegible] वा० सं० १७,८४
३३२ [illegible]
[illegible] वा० सं० १७,८२
[illegible]

२६६.३ उतान्तरिक्षं ममिरे व्योजसा ५,५५,२
११७.३ उतारुपस्य वि प्यन्ति धाराः १.८५,५
२९२.४ उतेशिरे अमृतस्य स्वराजः ५,५८,१
२६८.३ उतो अस्माँ अमृतत्वे दधातन ५,५५,४
४००.१ उतो न्वस्य जोपमाँ ८,९४,६
२७९.१ उत् तिष्ठ नूनमेषाम् ५.५६,५
५५.३ उत्सं कवन्धमुद्रिणम् ८,७,१०
११३.४ उत्सं दुहन्ति स्तनयन्तमक्षितम् १,६४,६
६१.३ उत्सं दुहन्तो अक्षितम् ८,७,१६
४४१.१ उत्समक्षितं व्यचन्ति ये सदा अथर्व० ४,२७,२
२२८.२ उत्समा कीरिणो नृतुः ५,५२,१२
४६१.२ उत्सा अजगरा उत अथर्व० ४,१५,७
४६३.३ उत्सा अजगरा उत अथर्व० ४,१५,९
६२.३ उत् स्तोमैः पृश्निमातरः ८,७,१७
४३९.१ उदप्रुतो मरुतस्ताँ इयर्त अथर्व० ६,२२,३
४५९.१ उदीरयत मरुतः समुद्रतः अथर्व० ४,१५,५
२६९.१ उदीरयथा मरुतः समुद्रतः ५,५५,५
४८.१ उदीरयन्त वायुभिः ८.७,३
५१.१ उदु त्ये अरुणप्सवः ८,७,७
१५.१ उदु त्ये सूनवो गिरः १.३७,१०
६२.१ उदु स्वानेभिरीरते ८,७,१७
६२.२ उद् रथैरुदु वायुभिः ८,७,१७
२३३.४ उद् राधो गव्यं मृजे ५,५२,१७
२१२.२ उप घेदेना नमसा गृणीमसि २,३४,१४
२३६.२ उप द्युभिर्विभिर्मदे ५,५३,३
१९८.२ उप ब्रुवे नमसा दैव्यं जनम् २,३०,११
१०३.२ उप भ्रातृत्वमायति ८,२०,२२
४२४.४ उपयामगृहीतोऽसि मरुतां त्वौजसे वा० य० ७,३६
४२४.१ उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा मरुत्वत एष ते योनि-
रिन्द्राय त्वा मरुत्वते वा० य० ७,३६
४९८.२ उपह्वरे नद्यो अंशुमत्याः ८,९६,१४;
[इन्द्रः ३२६९]
१४६.१ उपह्वरेषु यदचिध्वं ययिम् १,८७,२
१९४.३ उपेमा यात मनसा जुषाणाः १,१७१,२
४१.१ उपो रथेषु पृषतीरयुग्ध्वम् १,३९,६
८५.२ उभे युजन्त रोदसी ८,२०,४
३३९.२ उभे युजन्त रोदसी सुमेके ६,६६,६
४४७.२ उरुक्षयाः सगणा मानुषासः अथर्व० ७,८२,३
७१.१ उशना यत् परावतः ८,७,२६
४११.१ उस्रां न केतवोऽध्वराश्रियः १०,७८,७
२१०.३ उषा न रामीररुणैरपोर्णुते २,३४,१२
२२८.४ ऊमा आसन् दृशि त्विषे ५,५२,१२
४३८.३ ऊर्जं च तत्र सुमतिं च पिन्वत अथर्व० ६,
२२५.२ ऊर्णा वसत शुन्ध्यवः ५,५२,९
१५४.४ ऊर्ध्वं नुनुद्र उत्साधिं पिबध्यै १,८८,४
१३२.१ ऊर्ध्वं नुनुद्रेऽवतं त ओजसा १,८५,१०
४९४.३ ऊर्ध्वा नः सन्तु कोम्या वनानि १,१७१,३;
[इन्द्रः
१९७.३ ऊर्ध्वान् नः कर्त जीवसे १,१७२,३
२७७.३ ऋक्षो न वो मरुतः शिमीवाँ अमः ५,५६,३
२०२.४ ऋजिप्यासो न वयुनेषु धूर्षदः २,३४,४
११९.४ ऋजीषिणं वृषणं सश्चत श्रिये १,६४,१२
३१५.३ ऋतजाता अरेपसः ५,६१,१४
४२४.(४)।१ ऋतजिच्च सत्यजिच्च सेनजिच्च सुषेणश्च
वा० य०
४२४(३)।१ ऋतश्च सत्यश्च ध्रुवश्च धरुणश्च वा० य०
१२२.२ ऋतीषाहं रयिमस्मासु धत्त १,६४,१५
३५६.३ ऋतेन सत्यमृतसाप आयन् ७,५६,१२
३७३.१ ऋधक् सा वो मरुतो दिद्युदस्तु ७,५७,४
२५६.४ ऋषिं वा यं राजानं वा सुषूदथ ५,५४,७
४५.३ ऋषिद्विषे मरुतः परिमन्यवः १,३९,१०
३०७.४ ऋषे रुद्रस्य मरुतो गृणानाः ५,५९,८
२८९.१ ऋष्टयो वो मरुतो अंसयोरधि ५,५७,६
२२१.२ ऋष्वा ऋष्टीरसृक्षत ५,५२,६
२३३.२ एकमेका शता ददुः ५,५२,१७
४८९.१ एकस्य चिन्मे विभ्वस्त्वोजः १,१६५,१०;
[इन्द्रः ३२५
४८२.२ एको यासि सत्पते किं त इत्था १,१६५,३;
[इन्द्रः ३२५
४३९.३ एजाति ग्लहा कन्येव तुन्ना अथर्व० ६,२२,३
२९४.४ एतं जुषध्वं कवयो युवानः ५,५८,३
१५५.१ एतत् त्यन्न योजनमचेति १,८८,५
२५४.३ एता न यामे अगृभीतशोचिषः ५,५४,५
३४८.१ एतानि धीरो निण्या चिकेत ७,५६,४
६०.१ एतावतश्चिदेषाम् ८,७,१५
२१६.३ एतेभिर्मह्यं नामभिः ५,५२.१०
२४५.३ एना यामेन मरुतः ५,५३,१२
१७१.४ एभिर्यज्ञेभिस्तदभीष्टिमश्याम् १,१६६,१४
४३९.४ एदं तुन्दाना पत्येव जाया अथर्व० ६,२२,३
४२७.२ एवमिमं यजमानं दैवीश्च विशो मानुषीश्चानुवर्त्म
वा० य० १७,
मभवन्तु

४९१.१ एवेदेते प्रति मा रोचमानाः १,१६५,१२;
[इन्द्रः ३२६१]
१७२.१ एष वः स्तोमो मरुत इयं गीः १,१६६,१५
१८२.१ एष वः स्तोमो मरुत इयं गीः १,१६७,११
१९२.१ एष वः स्तोमो मरुत इयं गीः १,१६८,१०
१९४.१ एष वः स्तोमो मरुतो नमस्वान् १,१७१,२
१८५.३ एषामंसेषु रम्भिणीव रारभे १,१६८,३
४९२.४ एषां भूत नवेदा म ऋतानाम् १,१६५,१३;
[इन्द्रः ३२६२]
१७२.३ एषा यासीष्ट तन्वे वयाम् १,१६६,१५
१८२.३ एषा यासीष्ट तन्वे वयाम् १,१६७,११
१९२.३ एषा यासीष्ट तन्वे वयाम् १,१६८,१०
१५६.१ एषा स्या वो मरुतोऽनुभर्त्री १,८८,६
२३५.१ ऐतान् रथेषु तस्थुषः ५,५३,२
१५८.३ ऐधेव यामन् मरुतस्तुविष्वणः १,१६६,१
३८७.१ ओ षु घृष्विराधसः ७,५९,५
४९३.१ ओ षु वर्त्त मरुतो विप्रमच्छ १,१६५,१४;
[इन्द्रः ३२६३]
२१३.४ ओ षु वाश्रेव सुमतिर्जिगातु २,३४,१५
७८.१ ओ षु वृष्णः प्रयज्यून् ८,७,३३
३६.४ कं याथ कं ह धूतयः १,३९,१
३४५.१ क ईं व्यक्ता नरः सनीळाः ७,५६,१
४४.२ कण्वं दद प्रचेतसः १,३९,९
६.२ कण्वा अभि प्र गायत १,३७,१
७७.२ कण्वासो अग्निं मरुद्भिः ८,७,३२
३०१.२ कथं शोक कथा यय ५,६१,२
४०१.१ कदत्विषन्त सूरयः ८,९४,७
७५.१ कद्ध गच्छाथ मरुतः ८,७,३०
२१.१ कद्ध नूनं कधप्रियः १,३८,१
७६.१ कद्ध नूनं कधप्रियः ८,७,३१
४०२.१ कद्वो अद्य महानाम् ८,९४,८
४८०.१ कया मती कुत एतास एते १,१६५,१;
[इन्द्रः ३२५०]
४८०.१ कया शुभा सवयसः सनीळाः १,१६५,१;
[इन्द्रः ३२५०]
४२२.१ [illegible] ऋ० खि० १,४२
१०४.४ [illegible] १,६४,३
२२९.२ ककुदः [illegible] ५,५२,१३
११३.१ [illegible] ७,५९,११
८.२ [illegible] १,३७,३
२६.३ कस्य क्रत्वा मरुतः कस्य वर्पसा १,३९,१
४८१.१ कस्य ब्रह्माणि जुजुषुर्युवानः १,१६५,२;
[इन्द्रः ३२५१]
२३५.२ कः शुश्राव कथा ययुः ५,५३,२
३०२.२ कस्काव्या मरुतः को ह पौंस्या ५,५९,४
२४१.१ कस्मा अद्य सुजाताय ५,५३,१२
२५५.३ कस्मै सस्रुः सुदासे अन्वापयः ५,५३,२
१२२.४ कामं विप्रस्य तर्पयन्त धामभिः १,८५,११
१५.२ काष्ठा अज्मेष्वत्नत १,३७,१०
४८१.१ कुतस्त्वमिन्द्र माहिनः सन् १,१६५,३;
[इन्द्रः ३२५२]
३८१.२ कुविदङ्गस्ते मरुतः पुनर्नः ७,५८,५,
३७४.१ कृते चिदत्र मरुतो रणन्त ७,५७,५
४८१.४ केन महा मनसा रीरमाम १,१६५,२;
[इन्द्रः ३२५१]
३०८.१ के ष्ठा नरः श्रेष्ठतमाः ५,६१,१
४८१.२ को अध्वरे मरुत आ ववर्त १,१६५,२;
[इन्द्रः ३२५१]
४९२.१ को न्वत्र मरुतो मामहे वः १,१६५,१३;
[इन्द्रः ३२६२]
२८६.३ कोऽवस्थ पृथिवीं पृश्निमातरः ५,५७,४
७६.३ को वः गच्छेप [illegible] ८,७,३१
२३४.२ को वा पुरा सुम्नेष्वास मरुताम् ५,५३,२
२३४.१ को वेद जानमेषाम् ५,५३,१
३१५.१ को वेद नूनमेषाम् ५,६१,१४
१८७.१ को वोऽन्तर्मरुत ऋष्टिविद्युतः १,१६८,५
३०३.१ को वो महान्ति महतामुदश्नवत् ५,५९,४
११.१ को वो वर्षिष्ठ आ नरो १,३७,६
३१९.३ क्रत्वा तद्वो मरुतो नाधृषे शवः ५,८७,६
४९६.२ [illegible] ऋ० खि० १,७,८
१०.१ क्रीळं यच्छर्धो मारुतम् १,३७,५
६.१ क्रीळं वः शर्धो मारुतम् १,३७,१
१५९.२ क्रीळन्ति क्रीळा विदथेषु घृष्वयः १,१६६,२
२२.१ क्व नूनं कद्वो अर्थं १,३८,२
६५.१ क्व नूनं सुदानवः ८,७,२०
२३.१ क्व वः सुम्ना नव्यांसि १,३८,३
२३.३ क्व वो विश्वानि सौभगा १,३८,३
३०१.१ क्व वोऽश्वाः क्वाभीशवः ५,६१,२
४८५.१ क्व स्या वो मरुतः स्वधासीत् १,१६५,६,
[इन्द्रः ३२५[illegible]

१८८.१ क्व स्विदस्य रजसो महस्परम् १,१६८,६
१८८.२ क्वावरं मरुतो यस्मिन्नायय १,१६८,६
२३.३ क्वो विश्वानि सौभगा १,३८,२
११५.३ क्षपो जिन्वन्तः पृषतीभिर्ऋष्टिभिः १,६४,८
१०७.३ क्षमा रपो मरुत आतुरस्य नः ८,२०,२६
४१५.४ क्षितीनां न मर्या अरेपसः १०,७८,१
२९७.३ क्षोदन्त आपो रिणते वनानि ५,५८,६
४०७.४ गणमस्तोष्येषां न शोभसे १०,७७,१
४५८.१ गणस्त्वोप गायन्तु मारुताः अथ० ४,१५,४
९.३ गणैरिन्द्रस्य काम्यैः १,६,८
३७९.३ गतो नाध्वा वि तिराति जन्तुम् ७,५८,३
२२.२ गन्ता दिवो न पृथिव्याः १,३८,२
४१.३ गन्ता नूनं नोऽवसा यथा पुरा १,३९,७
३२६.१ गन्ता नो यज्ञं यज्ञियाः सुशमि ५,८७,९
२१६.४ गन्तारो यज्ञं विदथेषु धीराः ३,२६,६
४४.४ गन्ता वृष्टिं न विद्युतः १,३९,९
२७९.४ गवां सर्गमिव ह्वये ५,५६,५
३०२.१ गवामिव श्रियसे शृङ्गमुत्तमम् ५,५९,३
२३२.२ गां वोचन्त सूरयः ५,५२,१६
१००.३ गाय गा इव चर्कृषत् ८,२०,१९
३४.३ गाय गायत्रमुक्थ्यम् १,३८,१४
१७७.४ गायद् गाथं सुतसोमो दुवस्यन् १,१६७,६
१०२.१ गावश्चिद् घा समन्यवः ८,२०,२१
७२.१ गिरयश्चिन्नि जिहते ८,७,३४
११४.२ गिरयो न स्वतवसो रघुष्यदः १,६४,७
३४४.४ गिरयो नाप उग्रा अस्पृध्रन् ६,६६,११
१०८.४ गिरः समञ्जे विदथेष्वाभुवः १,६४,१
२४९.४ गिरा गृणीहि कामिनः ५,५३,१६
४०६.२ गिरिष्ठां वृषणं हुवे ८,९४,१२
१७.३ गिरींरचुच्यवीतन १,३७,१२
३६३.४ गुरु द्वेषो अररुषे दधन्ति ७,५६,१९
१७४.३ गुहा चरन्ती मनुषो न योषा १,१६७,३
४७४.२ गुहा चिदिन्द्र वह्निभिः १,६,५; [इन्द्रः ३२४५]
१४४.१ गूहता गुह्यं तमः १,८६,१०
३९४.२ गृभायत रक्षसः सं पिनष्टन ७,१०४,१८
३९२.१ गृहमेधास आ गत ७,५९,१०
३५८.४ गृहमेधीयं मरुतो जुषध्वम् ७,५६,१४
४६५.२ गोपीथाय प्र हूयसे १,१९,१; [अग्निः २६
८३.३ गोबन्धवः सुजातास इषे भुजे ८,२०,८
८९.१ गोभिर्वाणो अज्यते सोभरीणाम् ८,२०,८
२९०.१ गोमदश्वावद् रथवत् सुवीरम् ५,५७,७
१२५.१ गोमातरो यच्छुभयन्ते अञ्जिभिः १,८५,३
३९५.१ गौर्धयति मरुताम् ८,९४,१
४२०.१ ग्रावाणो न सूरयः सिन्धुमातरः १०,७८,६
२५०.३ घर्मस्तुभे दिव आ पृष्ठयज्वने ५,५४,१
६४.२ घृतं न पिप्युषीरिषः ८,७,१९
१४६.४ घृतमुक्षता मधुवर्णमर्चते १,८७,२
११९.१ घृषुं पावकं वनिनं विचर्षणिम् १,६४,१२
६८.३ चक्राणा वृष्णि पौंस्यम् ८,७,२३
२५५.४ चक्षुरिव यन्तमनु नेषथा सुगम् ५,५४,६
२९०.२ चन्द्रवद् राधो मरुतो ददा नः ५,५७,७
१७९.२ चयत ईमर्यमो अप्रशस्तान् १,१६७,८
१२१.१ चर्कृत्यं मरुतः पृत्सु दुष्टरम् १,६४,१४
१२७.४ चर्मेवोदभिर्व्युन्दन्ति भूम १,८५,५
१९५.२ चित्र ऊती सुदानवः १,१७२,१
२०८.१ चित्रं तद् वो मरुतो याम चेकिते २,३४,१०
५२.२ चित्रा यामेभिरीरते ८,७,७
२२७.४ चित्रा रूपाणि दर्श्या ५,५२,११
३१.२ चित्रा रोधस्वतीरनु १,३८,११
१११.१ चित्रैरञ्जिभिर्वपुषे व्यञ्जते १,६४,४
१६१.४ चित्रो वो यामः प्रयतास्वृष्टिषु १,१६६,४
१९५.१ चित्रो वोऽस्तु यामः १,१७२,१
२२८.१ छन्दःस्तुभः कुभन्यवः ५,५२,१२
४३२.१ छन्दांसि यज्ञे मरुतः स्वाहा अथ० ५,२६,५
८१.२ छन्दो न सूरो अर्चिषा ८,७,३६
३१०.१ जघने चोद एषाम् ५,६१,३
१६५.३ जनं यमुग्रास्तवसो विरप्शिनः १,१६६,८
३६८.२ जनानां यो असुरो विधर्ता ७,५६,२४
१६९.४ जनाय यस्मै सुकृते अराध्वम् १,१६६,१२
२०६.४ जनाय रातहविषे महीमिषम् २,३४,८
१७.२ जनाँ अचुच्यवीतन १,३७.१२
३७८.१ जनूश्चिद् वो मरुतस्त्वेष्येण ७,५८,२
१०.३ जम्भे रसस्य वावृधे १,३७,५
३३.२ जराय ब्रह्मणस्पतिम् १,३८,१३

६५.२ जरिता भूदजोष्यः १,३८,५
४९२.२ जवमर्वतां कवयो य इन्वथ अथ० ४,२७,३
३२१.५ जिगाति शेवृधो नृभिः ५,८७,४
४१८.१ जिगीवांसो न शूरा अभिद्यवः १०,७८,४
३७१.४ जिगृत रायः सूनृता मघानि ७,५७,६
८७.२ जिहीत उत्तरा बृहत् ८,२०,६
१२.३ जिहीत पर्वतो गिरिः १,३७,७
१३३.१ जिह्मं नुनुद्रेऽवतं तया दिशा १,८५,११
१३.२ जुजुर्वां इव विश्पतिः १,३७,८
३७९.१ जुजोषन्निन्मरुतः सुष्टुतिं नः ७,५८,३
२७४.३ जुषध्वं नो हव्यदातिं यजत्राः ५,५५,१०
१७५.४ जुषन्त वृधं सख्याय देवाः १,१६७,४
१४५.३ जुष्टतमासो नृतमासो अञ्जिभिः १,८७,१
१७६.१ जोषद् यदीमसुर्या सचध्यै १,१६७,५
३३३.५ ज्येष्ठं वृन्हं शवः ६,४८,२१
३२६.३ ज्येष्ठासो न पर्वतासो व्योमनि ५,८७,९
१७३.२ ज्येष्ठेभिर्वा बृहद्दिवैः सुमायाः १,१६७,२
१४४.३ ज्योतिष्कर्ता यदुश्मसि १,८६,१०
४११.२ ज्योतिष्मन्तो न भासा व्युष्टिषु १०,७७,५
३३०.१ तं व इन्द्रं न सुक्रतुम् ६,४८,१४
१९८.१ तं वः शर्धं मारुतं सुम्नयुर्गिरा २,३०,११
२४३.१ तं वः शर्धं रथानां ५,५३,१०
२८३.१ तं वः शर्धं रथेशुभम् ५,५६,९
३३४.१ तं वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिम् ६,६६,११
३२९.१ त उग्रासः शवसा धृष्णुषेणा ६,६६,६
१२४.१ त उक्षितासो महिमानमाशत १,८५,२
९६.१ त उग्रासो वृषण उग्रबाहवः ८,२०,१२
२४०.१ ततृदानाः सिन्धवः क्षोदसा रजः ५,५३,७
४२९.४ तत्र श्रवांसि कृण्वते साम० ३५६
१९.३ तत्रो षु मादयाध्वै १,३७,१४
३९७.१ तद् सु नो विश्वे अर्य आ ८,९४,३
२७३.२ तदिन्ने जनुराशसः ५,५६,२
१६९.१ तद् वः सुजाता मरुतो महित्वनम् १,१६६,१२
२५४.१ तद् वीर्यं वो मरुतो महित्वनम् ५,५४,५
१७०.१ तद् वो जामित्वं मरुतः परे युगे १,१६६,१३
२६४.१ तद् वो यामि द्रविणं सद्यऊतयः ५,५४,१५
३९९.२ तना पूतस्य वरुण ८,९४,५
१२५.२ तनूषु शुभ्रा दधिरे विरुक्मतः १,८५,३
३६२.१ तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निः ७,५६,२५
१८१.४ तव ऋभुक्षा नरामनु ष्यात् १,१६७,१०
२६१.१ तं नाकमर्यो अगृभीतशोचिषम् ५,५४,१२
१५८.१ तन्नु वोचाम रभसाय जन्मने १,१६६,१
२०५.१ तं नो दात मरुतो वाजिनं रथे २,३४,७
३९०.४ तपिष्ठेन हन्मना हन्तना तम् ७,५९,८
२९२.१ तन्नु नूनं तविषीमन्तमेषाम् ५,५८,१
२२९.३ तमुष्वे मारुतं गणम् ५,५२,१३
४४८.१ तव श्रिये मरुतो मर्जयन्त ५,३,३
३१८.४ तवसे भन्ददिष्टये ५,८७,१
४०५.२ तस्तभुर्मरुतो हुवे ८,९४,११
१२०.२ तस्थौ व ऊती मरुतो यमावत १,६४,१३
३८३.३ तस्मा अग्ने वरुण मित्रार्यमन् ७,५९,१
४३५.३ तां विध्यत तमसापव्रतेन अथ० ३,२,६
३८१.१ तां आ रुद्रस्य मीळ्हुषो विवासे ७,५८,५
२१२.१ तां इयानो महि वरूथमूतये २,३४,१४
४९५.४ तान्यारे चक्रमा मृळता नः १,१७१,४; [इन्द्रः ३२६६]
९५.१ तान् वन्दस्व मरुतस्ताँ उप स्तुहि ८,२०,१४
२७६.४ तान् वर्ध भीमसंदृशः ५,५६,२
२०९.१ तान् वो महो मरुत एवयाव्नः २,३४,११
४४६.१ तिग्ममनीकं विदितं सहस्वत् अथ० ४,२७,७
४०१.२ तिर आप इव स्रिधः ८,९४,७
३९०.२ तिरश्चित्तानि वसवो जिघांसति ७,५९,८
४७०.२ तिरः समुद्रमर्णवम् १,१९,७; [अग्निः २४४८]
४७१.२ तिरः समुद्रमोजसा १,१९,८; [अग्निः २४४९]
३२४.२ तुविद्युम्ना अवन्त्वेवयामरुत् ५,८७,७
१५३.४ तुविद्युम्नासो धनयन्ते अद्रिम् १,८८,३
२९१.२ तुविमघासो अमृता ऋतज्ञाः ५,५७,८
२९९.२ तुविमघासो अमृता ऋतज्ञाः ५,५८,८
३८६.४ तुरं यात पिपीषवः ७,५९,४
१९७.१ तृणस्कन्दस्य नु विशः १,१७२,३
३२३.२ तृषुच्यवसो जुह्वो नाग्नेः ६,६६,१०
२८४.४ तृष्यवे न दिव उत्सा उदन्यवे ५,५७,१
३०५.१ ते अज्येष्ठा अकनिष्ठास उद्भिदः ५,५९,६
४८७.३ ते अस्मत् पाशान् प्र मुञ्चन्त्वेनसः अथ० ७,८२,३

१४७.३ ते क्रीळयो धुनयो भ्राजदृष्टयः १,८७,३
२११.१ ते क्षोणीभिररुणेभिर्नाञ्जिभिः २,३४,१३
१०९.१ ते जज्ञिरे दिव ऋष्वास उक्षणः १,६४,२
२१०.१ ते दशग्वाः प्रथमा यज्ञमूहिरे २,३४,१२
१८०.३ ते धृष्णुना शवसा शूशुवांसः १,१६७,९
३२३.४ ते न उरुष्यता निदः ५,८७,६
४४८.४ तेन पासि गुह्यं नाम गोनाम् ५,३,३
४६९.१ ते नाकस्याधि रोचने १,१९,६; [अग्निः २५४३]
१०७.२ तेना नो अधि वोचत ८,२०,२६
४४०.४ ते नो मुञ्चन्त्वंहसः अथ० ४,२७,१
४४१.४ ते नो मुञ्चन्त्वंहसः अथ० ४,२७,२
४४२.४ ते नो मुञ्चन्त्वंहसः अथ० ४,२७,३
४४३.४ ते नो मुञ्चन्त्वंहसः अथ० ४,२७,४
४४४.४ ते नो मुञ्चन्त्वंहसः अथ० ४,२७,५
४४५.४ ते नो मुञ्चन्त्वंहसः अथ० ४,२७,६
४४६.४ ते नो मुञ्चन्त्वंहसः अथ० ४,२७,७
४१४.३ ते नोऽवन्तु रथतूर्मनीषाम् १०,७७,८
३१७.१ ते नो वसूनि काम्या ५,६१,१६
२१०.२ ते नो हिन्वन्तूषसो व्युष्टिषु २,३४,१२
५३.३ ते भानुभिर्वि तस्थिरे ८,७,८
८१.३ ते भानुभिर्वि तस्थिरे ८,७,३६
२३६.१ ते म आहुर्य आययुः ५,५३,३
४५५.३ ते मन्दसाना धुनयो रिशादसः ५,६०,७
२२८.३ ते मे के चिन्न तायवः ५,५२,१२
२१८.३ ते यामन्ना धृषद्विनः ५,५२,२
१५०.२ ते रश्मिभिस्त ऋक्वभिः सुखादयः १,८७,६
१५२.१ तेऽरुणेभिर्वरमा पिशङ्गैः १,८८,२
३२४.१ ते रुद्रासः सुमखा अग्नयो यथा ५,८७,७
१२९.१ तेऽवर्धन्त स्वतवसो महित्वना १,८५,७
१५०.३ ते वाशीमन्त इष्मिणो अभीरवः १,८७,६
९५.२ तेषां हि धुनीनाम् ८,२०,१४
१९१.३ ते सप्सरासोऽजनयन्ताभ्वम् १,१६८,९
२१९.१ ते स्पन्द्रासो नोक्षणः ५,५२,३
२१५.३ ते स्वानिनो रुद्रिया वर्षनिर्णिजः ३,२६,५
२६०.३ ते हर्म्येष्ठाः शिशवो न शुभ्राः ७,५६,१६
?.१ ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमाः १०,७७,८
?८.१ ते हि स्थिरस्य शवसः ५,५२,२

१२१.४ तोकं पुष्येम तनयं शतं हिमाः १,६४,१४
३४१.३ तोके वा गोषु तनये यमप्सु ६,६६,८
४०२.३ त्मना च दस्मवर्चसाम् ८,९४,८
२१८.४ त्मना पान्ति शश्वतः ५,५२,२
४०९.२ त्मना रिरिच्रे अभ्रान्न सूर्यः १०,७७,३
६६.१ त्यं चिद् घा दीर्घं पृथुम् १,३७,११
४०६.१ त्यं नु मारुतं गणम् ८,९४,१२
४०४.१ त्यान् नु पूतदक्षसः ८,९४,१०
४०५.१ त्यान् नु ये वि रोदसी ८,९४,११
३६६.४ त्रातारो भूत पृतनास्वर्यः ७.५६,२२
४३७.३ त्रायन्तां विश्वा भूतानि अथ० ४,१३,४
४३७.१ त्रायन्तामिमं देवाः अथ० ४,१३,४
४३७.२ त्रायन्तां मरुतां गणाः अथ० ४,१३,४
२०८.४ त्रितं जराय जुरतामदाभ्याः २,३४,१०
२१२.३ त्रितो न यान् पञ्च होतॄनभीष्टये २,३४,१४
१३४.२ त्रिधातूनि दाशुषे यच्छताधि १,८५,१२
३९९.३ त्रिषधस्थस्य जावतः ८,९४,५
४३३.४ त्रिषप्तासो मरुतः स्वादुसंमुदः अथ० १३,१,३
५५.१ त्रीणि सरांसि पृश्नयः ८,७,१०
४९७.१ त्वं पाहीन्द्र सहीयसो नॄन् १,१७१,६;
[इन्द्रः ३२९८]
४६०.३ त्वया सृष्टं बहुलमैतु वर्षम् अथ० ४,१५,६
१३१.१ त्वष्टा यद् वज्रं सुकृतं हिरण्ययम् १,८५,९
३४३.१ त्विषीमन्तो अध्वरस्येव दिद्युत् ६,६६,१०
३३१.१ त्वेषं शर्धो न मारुतं तुविष्वणि ६,४८,१५
३३३.३ त्वेषं शवो दधिरे नाम यज्ञियम् ६,४८,२१
३२३.२ त्वेषं शवोऽवत्वेवयामरुत् ५.८७,६
२९३.१ त्वेषं गणं तवसं खादिहस्तम् ५.५८.२
२४३.२ त्वेषं गणं मारुतं नव्यसीनाम् ५,५३,१०
९.२ त्वेषद्युम्नाय शुष्मिणे १,३७,४
१७६.४ त्वेषप्रतीका नभसो नेत्या १,१६७,५
१९१.२ त्वेषमयासां मरुतामनीकम् १,१६८,९
३५.२ त्वेषं पनस्युमर्किणम् १,३८,१५
२८३.२ त्वेषं पनस्युमा हुवे ५.५६,९
३१४.२ त्वेषरथो अनेद्यः ५,६१,१३
२८८.२ त्वेषसंदृशो अनवभ्रराधसः ५.५७,५
१८९.२ त्वेषा विपाका मरुतः पिपिष्वती १,१६८,७
४५९.२ त्वेषो अर्को नभ उत्पातयाथ अथ० ४,१५,५
३२२.२ त्वेषो ययिस्तविष एवयामरुत् ५,८७,५

३७५.२ ददात नो अमृतस्य प्रजायै ७,५७,६
६.३ दधाना नाम यज्ञियम् १,६,४
११.३ दधिध्वे वृक्तबर्हिषः १,३८,१
१२.१ दध्र उग्राय मन्यवे १,३७,७
९१.३ दविद्युतत्यृष्टयः ८,२०,११
३६१.१ दशस्यन्तो नो मरुतो मृळन्तु ७,५६,१७
१३२.२ दादहाणं चिद् बिभिदुर्वि पर्वतम् १,८५,१०
९५.४ दाना महा तदेषाम् ८,२०,१४
३१९.४ दाना महा तदेषाम् ५,८७,२
२३०.१ दाना मित्रं न योषणा ५,५२,१४
२३१.३ दाना सचेत सूरिभिः ५,५२,१५
२६८.२ दिदृक्षेण्यं सूर्यस्येव चक्षणम् ५,५५,४
४१९.२ दिधिषवो न रथ्यः सुदानवः १०,७८,५
१५७.७ दिधृता यच्च दुष्टरम् १,१३९,८
२३९.१ दिवः कोशमचुच्यवुः ५,५३,६
११.१ दिवश्च ग्मश्च धूतयः १,३७,६
४५१.१ दिवश्चित् सानु रेजत स्वने वः ५,६०,३
२७५.४ दिवश्चिद् रोचनादधि ५,५६,१
३४४.३ दिवः शर्धाय शुचयो मनीषाः ६,६६,११
४०८.३ दिवस्पुत्रास एता न येतिरे १०,७७,२
४४३.२ दिवस्पृथिवीमभि ये सृजन्ति अथ० ४,२७,४
२९.१ दिवा चित् तमः कृण्वन्ति १,३८,९
२१९.४ दिवि क्षमा च मन्महे ५,५२,३
४६९.२ दिवि देवास आसते १,१९,६ [अग्निः २४४३]
३१३.३ दिवि रुक्म इवोपरि ५,६१,१२
१२४.१ दिवि रुद्रासो अधि चक्रिरे सदः १,८५,२
२८८.४ दिवो अर्का अमृतं नाम भेजिरे ५,५७,५
२२१.४ दिवो अर्चा मरुद्भ्यः ५,५२,५
३०५.४ दिवो मर्या आ नो अच्छा जिगातन ५,५९,६
९८.२ दिवो वशन्त्यसुरस्य वेधसः ८,२०,१७
४५५.२ दिवो वहध्वे उत्तरादधि ष्णुभिः ५,६०,७
२३०.३ दिवो वा धृष्णव ओजसा ५,५२,१४
१६२.१ दिवो वा पृष्ठं नर्या अचुच्यवुः १,१६६,५
४.१ दिवो वा रोचनादधि १,६,९
४०४.२ दिवो वो मरुतो हुवे ८,९४,१०
२५४.२ दीर्घं ततान सूर्यो न योजनम् ५,५४,५
३१४.३ दीर्घं पृथु पप्रथे सद्म पार्थिवम् ५,८७,७
१६९.२ दीर्घं वो दात्रमदितेरिव व्रतम् १,१६६,१२
५५.२ दुदुहे वज्रिणे मधु ८,७,१०
११८.४ दुध्रकृतो मरुतो भ्राजदृष्टयः १,६४,११
२७७.४ दुध्रो गौरिव भीमयुः ५,५६,३
३०१.३ दूरेदृशो ये चितयन्त एमभिः ५,५९,२
१६८.२ दूरेदृशो ये दिव्या इव स्तृभिः १,१६६,११
११२.३ दूहन्त्यूधर्दिव्यानि धूतयः १,६४,५
११०.३ दृळ्हा चिद् विश्वा भुवनानि पार्थिवा १,६४,३
१८६.४ दृळ्हानि चिन्मरुतो भ्राजदृष्टयः १,१६८,४
९.३ देवत्तं ब्रह्म गायत १,३७,४
२.१ देवयन्तो यथा मतिम् १,६,६
३३२.३ देवस्य वा मरुतो मर्त्यस्य वा ६,४८,२०
२३१.२ देवाँ अच्छा न वक्षणा ५,५२,१५
४०२.२ देवानामवो वृणे ८,९४,८
४१५.२ देवाव्यो न यज्ञैः स्वप्नसः १०,७८,१
७२.३ देवास उप गन्तन ८,७,२७
४७८.२ देवासः पूषरातयः १,२३,८; [इन्द्रः ३२४८]
४०.४ देवासः सर्वया विशा १,३९,५
३८३.२ देवासो यं च नयथ ७,५९,१
२००.१ द्यावो न स्तृभिश्चितयन्त खादिनः २,३४,२
१२१.२ द्युमन्तं शुष्मं मघवत्सु धत्तन १,६४,१४
२५०.४ द्युम्नश्रवसे महि नृम्णमर्चत ५,५४,१
७१.३ द्यौर्न चक्रदद् भिया ८,७,२६
४९८.१ द्रप्समपश्यं विषुणे चरन्तम् ८,९६,१४; [इन्द्रः ३२६९]
२९० ३ द्रुहः पाशान् प्रति स मुचीष्ट ७,५९,८
३३५.२ द्विर्यत् त्रिर्मरुतो वावृधन्त ६,६६,२
१३१.३ धत्त इन्द्रो नर्यपांसि कर्तवे १,८५,९
३६४.४ धत्त विश्वं तनयं तोकमस्मे ७,५६,२०
१२१.३ धनस्पृतमुक्थ्यं विश्वचर्षणिम् १,६४,१४
१८७.३ धन्वच्युत इषां न यामनि १,१६८,५
२७.२ धन्वञ्चिदा रुद्रियासः १,३८,७
२३९.४ धन्वना यन्ति वृष्टयः ५,५३,६
१३२.३ धमन्तो वाणं मरुतः सुदानवः १,८५,१०
६१.२ धमन्त्यनु वृष्टिभिः ८,७,१६
४२४(३).२ धर्ता च विधर्ता च विधारयः वा० सं० १७,८२
८०.३ धातारः स्तुवते वयः ८,७,३५

१९९.१ धारावरा मरुतो धृष्ण्वोजसः २,३४,१
१८३.२ धियंधियं वो देवया उ दधिध्वे १,१६८,१
४८.३ धुक्षन्त पिप्युषीमिषम् ८,७,३
३५२.२ धुनिर्मुनिरिव शर्धस्य धृष्णोः ७,५६,८
२९३.२ धुनिव्रतं मायिनं दातिवारम् ५,५८,२
३१८.५ धुनिव्रताय शवसे ५,८७,१
२८६.१ धूनुथ द्यां पर्वतान् दाशुषे वसु ५,५७,३
३२९.२ धेनुं च विश्वदोहसम् ६,४८,१३
३२७.२ धेनुमजध्वमुप नव्यसा वचः ६,४८,११
२०६.३ धेनुर्न शिश्वे स्वसरेषु पिन्वते २,३४,८
३४३.१ नकिर्ह्येषां जनूंषि वेद ते ७,५६,२
९३.२ नकिष्टनूषु येतिरे ८,२०,१२
१५९.३ नक्षन्ति रुद्रा अवसा नमस्विनम् १,१६६,२
३७७.४ नक्षन्ते नाकं निर्ऋतेरवंशात् ७,५८,१
४८८.३ न जायमानो नशते न जातः १,१६५,९;
[इन्द्रः ३२५८]
४८८.२ न त्वावाँ अस्ति देवता विदानः १,१६५,९
[इन्द्रः ३२५८]
२०१.२ नदस्य कर्णैस्तुरयन्त आशुभिः २,३४,३
२७१.१ न पर्वता न नद्यो वरन्त वः ५,५५,७
३९.२ न भूम्यां रिशादसः १,३९.४
४९८.३ नभो न कृष्णमवतस्थिवांसम् ८,९६,१४;
[इन्द्रः ३२६९]
१५९.४ न मर्धन्ति स्वतवसो हविष्कृतम् १,१६६,२
२२९.४ नमस्या रमया गिरा ५,५२,१३
३३७.१ न य ईषन्ते जनुषोऽया नु ६,६६,४
३२०.३ न येषामिरी सधस्थ ईष्ट आँ ५,८७,३
३३८.३ न ये स्तौना अयासो मह्ना ६,६६,५
२६२.३ न यो युच्छति तिष्यो यथा दिवः ५.५४,१३
२०४.२ नरां न शंसः सवनानि गन्तन २,३४,६
२२१.२ नरो असामिशवसः ५,५२,५
१७१.३ न रोदसी अप नुदन्त घोराः १,१६७,४
३८९.४ नरो न रण्वाः सवने मदन्तः ७,५९,७
२३६.३ नरो मर्या अरेपसः ५,५३,३
३८.२ नरो वर्नयथा गुरु १,३९,३
२६९.३ न वो दस्रा उप दस्यन्ति धेनवः ५,५५,५
२५९.३ न वोऽश्वाः श्रथयन्ताह सिस्रतः ५,५४,१०
१५७.५ नव्यं घोषादमर्त्यम् १,१३३,८
२५६.१ न स जीयते मरुतो न हन्यते ५,५४,७
४३१.२ नस्तनूभ्यो मयस्तोकेभ्यस्कृधि अथ० १,२६,४
२५६.२ न स्रेधति न व्यथते न रिष्यति ५,५४,७
४६६.१ नहि देवो न मर्त्यः १,१९,२; [अग्निः २४३
३८६.१ नहि व ऊतिः पृतनासु मर्धति ७,५९,४
३८५.१ नहि वश्चरमं चन ७,५९,३
३९.१ नहि वः शत्रुर्विविदे अधि द्यवि १,३९,४
६६.१ नहि ष्म यद्ध वः पुरा ८,७,२१
१८०.१ नही नु वो मरुतो अन्त्यस्मे १,१६७,९
१२९.२ नाकं तस्थुरुरु चक्रिरे सदः १,८५,७
८६.२ नानदति पर्वतासो वनस्पतिः ८,२०,५
९४.२ नाम त्वेषं शश्वतामेकमिद् भुजे ८,२०,१३
२५६.३ नास्य राय उप दस्यन्ति नोतयः ५,५४,७
३४१.१ नास्य वर्ता न तरुता न्वस्ति ६,६६,८
३७१.१ निचेतारो हि मरुतो गृणन्तम् ७,५७,२
१५९.१ नित्यं न सूनुं मधु बिभ्रत उप १,१६६,२
४७.३ नि पर्वता अहासत ८,७,२
२११.३ निमेघमाना अत्येन पाजसा २,३४,१३
५०.१ नि यद् यामाय वो गिरिः ८,७,५
८.३ नि यामश्चित्रमृञ्जते १,३७,३
२५७.१ नियुत्वन्तो ग्रामजितो यथा नरः ५,५४,८
२७८.१ नि ये रिणन्त्योजसा ५,५६,४
२७४.२ निरंहतिभ्यो मरुतो गृणानाः ५,५५,१०
२३३.५ नि राधो अश्व्यं मृजे ५,५२,१७
२६.२ निर्ऋतिर्दुर्हणा वधीत् १,३८,६
३३७.२ निर्यद् दुह्रे शुचयोऽनु जोषम् ६,६६,४
१२.१ नि वो यामाय मानुषो १,३७,७
२८६.२ नि वो वना जिहते यामनो भिया ५,५७,३
५०.२ नि सिन्धवो विधर्मणे ८,७,५
१९३.४ नि हेळो धत्त वि मुचध्वमश्वान् १,१७१,१
३३८.४ नू चित् सुदानुरव यासदुग्रान् ६,६६,५
३५९.४ नू चिद् यमन्य आदभद्रावा ७,५६,१५
२३१.१ नू मन्वान एषाम् ५,५२,१५
१२२.१ नू ष्ठिरं मरुतो वीरवन्तम् १,६४,१५
२८९.३ नृम्णा शीर्षस्वायुधा रथेषु वः ५,५७,६
११६.२ नृषाचः शूराः शवसाहिमन्यवः १,६४,९
३७२.१ नैतावदन्ये मरुतो यथेमे ७,५७,३
१०८.२ नोधः सुवृक्तिं प्र भरा मरुद्भ्यः १,६४,१
३०१.२ नौर्न पूर्णा क्षरति व्यथिर्यती ५,५९,२
२५.३ पथा यमस्य गादुप १,३८,५
४४८.३ पदं यद् विष्णोरुपमं निधायि ५,३,३

२६.२ पदीष्ट तृष्णया सह १,३८,६

५३.२ पन्थां सूर्याय यातवे ८,७,८

४०३.२ पश्यन् रोचना दिवः ८,९४,९

४२८.१ पयस्वतीः कृणुथाप ओषधीः शिवाः अथ० ३,२२,२

११३.२ पयो घृतवद् विदथेष्वाभुवः १,६४,६

४४२.१ पयो धेनूनां रसमोषधीनाम् अथ० ४,२७,३

३०८.३ परमस्याः परावतः ५,६१,१

४९१.४ परावतो न योजनानि ममिरे १०,७८,७

३११.२ परा वीरास एतन ५,६१,४

१७५.२ परा शुभ्रा अयासो यव्या १,१६७,४

१८.१ परा ह यत् स्थिरं हथ १,३९,३

६६३.२ परि द्यां देवो नैति सूर्यः ३,४८,११

१६७.२ परि वृङ्क्त सुदानवः १,१७२,३

३४.२ पर्जन्य इव ततनः १,३८,१४

४५८.२ पर्जन्य घोषिणः पृथक् अथ० ४,१५,४

२९.२ पर्जन्येनोदवाहेन १,३८,९

४५६.६ पर्वतश्चिन्महि वृद्धो बिभाय ५,६०,३

७६.२ पर्वतांश्चिन्नि येमिरे ८,७,३४

७१.२ पर्वतासो वनस्पतिः ८,७,३४

१५९.४ पव्या रथस्य [illegible] १,८८,२

१५५.३ पश्यन् हिरण्यचक्रानयोदंष्ट्रान् १,८८,५

४०९.१ पाजस्वन्तो न वीराः पनस्यवः १०,७७,३

१६५.४ [illegible] १,१६६,८

१६५.२ [illegible] १,८६,१

२६०.४ [illegible] ५,५३,[illegible]

[illegible]

३२०.३ पुरुकृथे न जनयः ५,६१,३

१.२ पुनर्गर्भत्वमेरिरे १,६,४

५८.२ पुरुक्षुं विश्वधायसम् ८,७,१३

२८८.१ पुरुद्रप्सा अञ्जिमन्तः सुदानवः ५,५७,५

१८७.४ पुरुप्रैषा अहन्यो नैतशः १,१६८,५

१७०.२ पुरु यच्छंसममृतास आवत १,१६६,१३

१६०.४ पुरु रजांसि पयसा मयोभुवः १,१६६,३

३१७.२ पुरुश्चन्द्रा रिशादसः ५,६१,१६

४४१.३ पुरो दधे मरुतः पृश्निमातॄन् अथ० ४,२७,१

१६४.२ [illegible] १,१६६,८

[illegible]

३८९.४ [illegible] ७,१८,४
४३४.१ [illegible] १,१६,३१ [[illegible]]
१६३.१ [illegible] १,१७३,१
९०.१ [illegible] ८,२०,६
३४६.२ [illegible] १,८८,१
१६७.१ [illegible] १,१६६,८
१४५.१ [illegible] १,८७,१
२८७.४ [illegible] १,१०७,४
२६८.१ [illegible] १,१६८,७
४४६.४ [illegible] १,६०,१
८१.१ [illegible] ८,२०,४
३१८.१ प्र [illegible] ७,१६,१४
१७०.१ [illegible] १,१६४,१३
३०६.४ प [illegible] १,११३,७
२८६.१ [illegible] १,१९८,१
३१८.२ प्र [illegible] ७,१६,१४
२९१.३ प्र [illegible] १,११९,१
३००.१ प्र [illegible] ७,१७,१
२६५.१ [illegible] १,१११,१
६६.१ प्र [illegible] १,३९,१
२०३.४ प्र यद् [illegible] दावने ५,५९,४
१२७.१ प्र यद् रथेषु पृषतीरयुग्ध्वम् १,८५,५
४६.१ प्र यद् वस्त्रिष्टुभमिषं ८,७,१
४२९.१ प्र यद् वहध्वे मरुतः पराकात् १०,७७,६
२१४.१ प्र यन्तु वाजास्तविषीभिरग्नयः ३,२६,४
४२०.४ प्रयज्यवो न [illegible] आ गत १०,७७,४
४०९.१ प्र यातन [illegible] १,१६५,१३;
[इन्द्रः ३१३१]
१९.१ प्र यात शीभमाशुभिः १,३७,१४
३६१.१ प्र ये जाता महिना ये च नु स्वयम् ५,८७,२
४०९.१ प्र ये दिवः पृथिव्या न बर्हणा १०,७७,३
३२०.१ प्र ये दिवो बृहतः शृण्विरे गिरा ५,८७ ३
३७८.३ प्र ये गृहेभिरोजसोत सन्ति ७,५८,१
२३१.१ प्र ये मे बन्ध्वेषे ५,५२,१६
१२३.१ प्र ये शुम्भन्ते जनयो न सप्तयः १,८५,१
१६१.२ प्र व एवासः स्वयतासो अध्रजन् १,१६६,४
२५८.२ प्रवत्वती द्यौर्भवति प्रयद्भ्यः ५,५४,९
२५८.१ प्रवत्वतीयं पृथिवी मरुद्भ्यः ५,५४,९
२५८.३ प्रवत्वतीः पथ्या अन्तरिक्ष्याः ५,५४,९
२१८.४ [illegible] १,१५४,९
२३.१ प्र व [illegible] १,३९,४
३२२.१ प्र [illegible] १,१२,१
३७५.४ प [illegible] ७,१७,१
४२१.४ [illegible] १०,७७,१
३२१.२ प [illegible] १,८७,२
४० १ प [illegible] १,३९,१
५९.२ प [illegible] ८,७,४
२१५ ५ प [illegible] ३,२३,४
२१२.१ प [illegible] १,५४,९
३१८.१ प [illegible] १,८७,१
१०.१ प [illegible] १,३७,१
२२८.१ प [illegible] १,८७,१
२१३ १ प [illegible] ५,५४,१
२२०.३ [illegible] ५,१०,७
२२७.१ प [illegible] ५,५२,१
४१.१ [illegible] २,२१,३
७१.१ [illegible] ८,७,२८
३८४.३ प्र वां [illegible] ७,५९,२
१४०.१ प्र [illegible] यथा ५,५३,७
३७७.१ प्र साकमुक्षे अर्चता गणाय ७,५८,१
३८१.१ प्र सा वाचि सुष्टुतिर्मघोनाम् ७,५८,६
१६४.१ प्र स्कम्भदेष्णा अनवभ्रराधसः १.१६६,७
८२ १ प्रस्थावानो माप स्थाता समन्यवः ८,२०,१
२२४.४ प्र स्यन्द्रा युजत रमना ५,५२,८
३२०.५ प्र स्यन्द्रासो धुनीनाम् ५,८७,३
४६४.४ प्राणं प्रजाभ्यो अमृतं दिवस्परि अथ० ४,१५,१०
१२२.४ प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् १,६४,१५
४००.३ प्रातर्होतेव मत्सति ८,९४,६
४६३.५ प्रावन्तु पृथिवीमनु अथ० ४.१५.९
३५४.१ प्रिया वो नाम हुवे तुराणाम् ७,५६,१०
४४०.२ प्रेमं वाजं वाजसाते अवन्तु अथ० ४,२७,१
१४७ १ प्रैषामज्मेषु विथुरेव रेजते १,८७.३
४०.३ प्रो आरत मरुतो दुर्मदा इव १,३९,५
१२५.३ बाधन्ते विश्वमभिमातिनमप १,८५,३
२४६.२ बीजं वहध्वे अक्षितम् ५.५३,१३
२१४ ३ बृहदुक्षो मरुतो विश्ववेदसः ३,२६,४
२९१ ४ बृहद्गिरयो बृहदुक्षमाणाः ५,५७,८
२९९.४ बृहद्गिरयो बृहदुक्षमाणाः ५.५८,८
२६५.१ बृहद् वयो दधिरे रुक्मवक्षसः ५,५५,१

३७३.१ बृहद् वयो मघवद्भ्यो दधात ७,५८,३
२६६.२ बृहन्महान्त उर्विया वि राजथ ५,५५,२
१५४.३ ब्रह्म कृण्वन्तो गोतमासो अर्कैः १,८८,४
२०९.४ ब्रह्मण्यन्तः शंस्यं राध ईमहे २,३४,११
६५.३ ब्रह्मा को वः सपर्यति ८,७,२०
४८३.१ ब्रह्माणि मे मतयः शं सुतासः १,१६५,४;
[इन्द्रः ३२५३]
२९०.४ भक्षीय वोऽवसो दैव्यस्य ५,५७,७
१८९.३ भद्रा वो रातिः पृणतो न दक्षिणा १,१६८,७
१६१.३ भयन्ते विश्वा भुवनानि हर्म्या १,१६६,४
१३०.३ भयन्ते विश्वा भुवना मरुद्भ्यः १,८५,८
३१९.१ भरद्वाजायाव धुक्षत द्विता ६,४८,१३
२९८.२ भर्तेव गर्भं स्वमिच्छवो धुः ५,५८,७
४८७.२ भवा मरुद्भिरवयातहेळाः १,१७१,६;
[इन्द्रः ३२५८]
२२२.५ भानुरर्त त्मना दिवः ५,५२,६
१३.३ भिया यामेषु रेजते १,३७,८
३७८.२ भीमासस्तुविमन्यवोऽयासः ७,५८,२
४६०.२ भूमिं पर्जन्य पयसा समङ्ग्धि अथ० ४,१५,६
११२.४ भूमिं पिन्वन्ति पयसा परिज्रयः १,६४,५
१४७.२ भूमिर्यामेषु यद्ध युञ्जते शुभे १,८७,३
८६.३ भूमिर्यामेषु रेजते ८,२०,५
४८६.१ भूरि चकर्थ युज्येभिरस्मे १,१६५,७;
[इन्द्रः ३२५६]
३६७.१ भूरि चक्र मरुतः पित्र्याणि ७,५६,२३
१६७.१ भूरीणि भद्रा नर्येषु बाहुषु १,१६६,१०
४८६.३ भूरीणि हि कृणवामा शविष्ठ १,१६५,७;
[इन्द्रः ३२५६]
३६४.२ भूमिं चिद् यथा वसवो जुषन्त ७,५६,२०
१९९.४ भूमिं धमन्तो अप गा अवृण्वत २,३४,१
३४३.४ भ्राजज्जन्मानो मरुतो अधृष्टाः ६,६६,१०
३७२.२ भ्राजन्ते रुक्मैरायुधैस्तनूभिः ७,५७,३
४२९.२ भ्राजन्ता रथेष्वा साम० ३५६
३३८.१ मक्षू न येषु दोहसे चिदया ६,६६,५
३५९.१ मक्षू रायः सुवीर्यस्य दात ७,५६,१५
३.२ मखः सहस्वदर्चति १,६,८
११८.३ मखा अयासः स्वसृतो ध्रुवच्युतः १,६४,११
६५.२ मदथा वृक्तबर्हिषः ८,७,२०
१२३.४ मदन्ति वीरा विदथेषु घृष्वयः १,८५,१
२७७.२ मदन्त्येत्यस्मदा ५,५६,३
१३२.४ मदे सोमस्य रण्यानि चक्रिरे १,८५,१०
२०३.४ मघोनेदाय मरुतः समन्यवः २,३४,५
३७०.१ मघ्वो वो नाम मारुतं यजत्राः ७,५७,१
१२६.३ मनोजुवो यन्मरुतो रथेष्वा १,८५,४
४७५.३ मन्दू समानवर्चसा १,६,७; [इन्द्रः ३२४६]
१६८.२ मन्द्राः सुजिह्वाः स्वरितार आसभिः १,१६६,११
४९२.३ मन्मानि चित्रा अपिवातयन्त १,१६५,१३;
[इन्द्रः ३२६२]
१०५.३ मयो नो भूतोतिभिर्मयोभुवः ८,२०,२४
२९३.३ मयोभुवो ये अमिता महित्वा ५,५८,२
१९६.२ मरुत ऋञ्जती शरः १,१७२,२
२३.२ मरुतः क्व सुविता १,३८,३
४३६.१ मरुतः पर्वतानामधिपतयस्ते मावन्तु
अथ० ५,२४,६
५.१ मरुतः पिबत ऋतुना १,१५,२
३८३.४ मरुतः शर्म यच्छत ७,५९,१
१३६.३ मरुतः शृणुता हवम् १,८६,२
४२३.२ मरुतश्च रिशादसः वा० य० ३,४४
४३०.२ मरुतः सूर्यत्वचसः अथ० १,२६,३
३९७.३ मरुतः सोमपीतये ८,९४,३
४०३.३ मरुतः सोमपीतये ८,९४,९
३९१.२ मरुतस्तज्जुजुष्टन ७,५९,९
२१९.३ मरुतामथा महो ५,५२,३
२७९.३ मरुतां पुरुतममपूर्व्यम् ५,५६,५
४४०.१ मरुतां मन्वे अधि मे ब्रुवन्तु अथ० ४,२७,१
१३८.३ मरुतां महिमा सत्यो अस्ति १,१६७,७
१४१.२ मरुतो अस्तु मर्त्यः १,८६,७
१९५.३ मरुतो अहिभानवः १,१७२,१
२२२.४ मरुतो जज्झतीरिव ५,५२,६
३९२.२ मरुतो माप भूतन ७,५९,१०
१०४.१ मरुतो मारुतस्य नः ८,२०,२३
५६.१ मरुतो यद्ध वो दिवः ८,७,११
६०.१ मरुतो यद्ध वो बलम् १,३७,१२
३४१.२ मरुतो यमवथ वाजसातौ ६,६६,८
१३५.१ मरुतो यस्य हि क्षये १,८६,१
४६.२ मरुतो विप्रो अक्षरत् ८,७,१
३१.१ मरुतो वीळुपाणिभिः १,३८,११

३३१.४ मरुतो वृत्रहं शवः ६,४८,२१
३१८.२ मरुत्वते गिरिजा एवयामरुत् ५,८७,१
४७६.१ मरुत्वन्तं हवामहे १,२३,७; [इन्द्रः ३२४७]
२२०.१ मरुत्सु वो दधीमहि ५,५२,४
४६१.३ मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः अथ० ४,१५,७
४६२.३ मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः अथ० ४,१५,८
४६३.४ मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः अथ० ४,१५,९
४६५.३ मरुद्भिरग्न आ गहि १,१९,१; [अग्निः २४३८]
४६६.३ मरुद्भिरग्न आ गहि १,१९,२; [अग्निः २४३९]
४६७.३ मरुद्भिरग्न आ गहि १,१९.३; [अग्निः २४४०]
४६८.३ मरुद्भिरग्न आ गहि १,१९,४; [अग्निः २४४१]
४६९.३ मरुद्भिरग्न आ गहि १,१९,५; [अग्निः २४४२]
४७०.३ मरुद्भिरग्न आ गहि १,१९,६; [अग्निः २४४३]
४७१.३ मरुद्भिरग्न आ गहि १,१९,७; [अग्निः २४४४]
४७२.३ मरुद्भिरग्न आ गहि १,१९,८; [अग्निः २४४५]
४७३.३ मरुद्भिरग्न आ गहि १,१९,९; [अग्निः २४४६]
३६७.४ मरुद्भिरित् सनिता वाजमर्वा ७,५६,२३
३६७.३ मरुद्भिरुग्रः पृतनासु साळ्हा ७,५६,२३
४१३.२ मरुद्भ्यो न मानुषो ददाशत् १०,७७,७
१०३.१ मर्तश्चिद् वो नृतवो रुक्मवक्षसः ८,२०,२२
२४.२ मर्तासः स्यातन १,३८,४
३३४.३ मर्तेष्वन्यद् दोहसे पीपाय ६,६६,१
३०२.४ मर्या इव श्रियसे चेतथा नरः ५,५९,३
३०४.३ मर्या इव सुवृधो वावृधुर्नरः ५,५९,५
३११.२ मर्यासो भद्रजानयः ५,६१,४
४५९.३ महऋषभस्य नदतो नभस्वतः अथ० ४,१५,५
४१४.४ महश्च यामन्नध्वरे चकानाः १०,७७,८
४६६.२ महस्तव क्रतुं परः १,१९,२; [अग्निः २४३९]
४२०.४ महाग्रामो न यामन्नुत त्विषा १०,७८,६
८९.४ महान्तो नः स्परसे नु ८,२०,८
१६८.१ महान्तो मह्ना विभ्वो विभूतयः १,१६६,११
२.३ महामनूषत श्रुतम् १,६,६
८८.२ महि त्वेषा अमवन्तो वृषप्सवः ८,२०,७
११४.१ महिषासो मायिनश्चित्रभानवः १,६४,७
१८३.४ महे ववृत्यामवसे सुवृक्तिभिः १,१६८,१
५०.३ महे शुष्माय येमिरे ८,७,५
२१०.४ महो ज्योतिषा शुचता गोअर्णसा २,३४,१२
४८४.३ महोभिरेताँ उप युज्महे नु १,१६५,५;
[इन्द्रः ३२५४]
४३२.२ मातेव पुत्रं पिपृतेह युक्ताः अथ० ५,२६,५
१९८.४ न दस्यर्थं मरुतो मन्त्रो अन्धसः १,८५,६
४७३.४ मादयस्व स्वर्णरे ८,१०३,१४; [अग्निः २९?
४७१.३ मा नो दुःशंस ईशत १,२३,९; [इन्द्रः ३२४९]
४४५.३ मा नो विददभिभा मो अशस्तिः अथ० १,२०,
४४७.४ मा नो विदद् वृजिना द्वेष्या या अथ० १,२०,१
१७२.२ मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः १,१६६,१५
१८२.२ मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः १,१६७,११
१९२.२ मान्दार्यस्य मान्यस्य कारोः १,१६८,१०
३६५.२ मा पश्चाद् दघ्म रथ्यो विभागे ७,५६,२१
३७.३ मा मर्त्यस्य मायिनः १,३९,२
४४६.२ मारुतं शर्धः पृतनासूग्रम् अथ० ४,२७,७
३४२.२ मारुताय स्वतवसे भरध्वम् ६,६६,९
७१.३ मार्डीकेभिर्नाधमानम् ८,७,३०
२४२.३ मा वः परि ष्ठात् सरयुः पुरीषिणी ५,५३,९
३७३.३ मा वस्तस्यामपि भूमा यजत्राः ७,५७,४
२४१.३ माव स्थात परावतः ५,५३,८
२४२.२ मा वः सिन्धुर्नि रीरमत् ५,५३,९
३६५.१ मा वो दात्रान्मरुतो निरराम ७,५६,२१
३५३.२ मा वो दुर्मतिरिह प्रणङ्नः ७,५३,९
२५.१ मा वो मृगो न यवसे १,३८,५
२८१.३ मा वो यामेषु मरुतश्चिरं करत् ५,५६,७
२४२.१ मा वो रसानितभा कुभा क्रुमुः ५,५३,९
४२४(२)।२ मितश्च सम्मितश्च सभराः वा० य० १७,८१
४२५.२ मिताश्च सम्मितासो नो अद्य सभरसो मरुतो यज्ञे
अस्मिन् वा० य० १७,८४
२०२.२ मित्राय वा सदमा जीरदानवः २,३४,४
१६६.२ मिथस्पृध्येव तविषाण्याहिता १,१६६,९
३०७.१ मिमातु द्यौरदितिर्वीतये नः ५,५९,८
-३४.१ मिमीहि श्लोकमास्ये १,३८,१४
१७४.१ मिम्यक्ष येषु सुधिता घृताची १,१६७,३
२७.३ मिहं कृण्वन्त्यवाताम् १,३८,७
१६.२ मिहो नपातममृध्रम् १,३७,११
२७७.१ मीळ्हुष्मतीव पृथिवी पराहता ५,५६,३
२३८.२ मुदे दधे मरुतो जीरदानवः ५,५३,५
११४.३ मृगा इव हस्तिनः खादथा वना १,६४,७
१९९.२ मृगा न भीमास्तविषीभिरर्चिनः २,३४,१
२७३.१ मृळत नो मरुतो मा वधिष्टन ५,५५,९
१५३.२ मेधा वना न कृणवन्त ऊर्ध्वा १,८८,३
२५५.२ मोषथा वृक्षं कपनेव वेधसः ५,५४,६
२६.१ मो षु णः परापरा १,३८,६

१५७.१ मो षु वो अस्मदभि तानि पौंस्या १,१३९,८
३८७.४ मो ष्वन्दस्य मरुत ७,५९,५

२९२.३ य आश्वश्वा अमवद् वहन्ते ५,५८,१
४४१.१ य आसिञ्चन्ति रसमोषधीषु अथ० ४,२७,२
४७०.१ य ईङ्खयन्ति पर्वतान् १,१९,७ [अग्निः २४४४]
३६२.३ य ईवतो वृषणो अस्ति गोपाः ७,५६,१८
३१२.१ य ईं वहन्त आशुभिः ५,६१,११
४१३.१ य उदृचि यज्ञे अध्वरेष्ठा १०,७७,७
२२३.२ य उरावन्तरिक्ष आ ५,५२,७
२२९.१ य ऋष्वा ऋष्टिविद्युतः ५,५२,१३
३०८.२ य एकएक आयय ५,६१,१
४३४.२ य ओषधीनामधिपा बभूव अथ० ४,१५,१०
३६०.२ यक्षदृशो न शुभयन्त मर्याः ७,५६,१६
१८८.३ यच्च्यावयथ विथुरेव संहितम् १,१६८,६
२२६.४ यज्ञं विष्टार ओहते ५,५२,१०
८३.४ यज्ञा सोभरीयवः ८,२०,२
३९३.३ यज्ञं मरुत आ वृणे ७,५९,११
१८३.१ यज्ञायज्ञा वः समना तुतुर्वणिः १,१६८,१
१३६.१ यज्ञैर्वा यज्ञवाहसः १,८६,२
२४९.३ यतः पूर्वाँ इव सखीँरनु ह्वय ५,५३,१६
४५१.३ यत् क्रीळथ मरुत ऋष्टिमन्तः ५,६०,३
१६२.१ यत् त्वेषयामा नदयन्त पर्वतान् १,१६६,५
१०६.३ यत् पर्वतेषु भेषजम् ८,२०,२५
२७२.१ यत् पूर्व्यं मरुतो यच्च नूतनम् ५,५५,८
२९.३ यत् पृथिव्यां व्युन्दन्ति १,३८,९
२९७.१ यत् प्रायासिष्ट पृषतीभिरश्वैः ५,५८,६
२७१.२ यत्राचिध्वं मरुतो गच्छथेदु तत् ५,५५,७
८७.३ यत्रा नरो देदिशते तनूषु ८,२०,६
४३८.२ यत्रा नरो मरुतः सिञ्चथा मधु अथ० ६,२२,२
३१५.२ यत्रा मदन्ति धूतयः ५,६१,१४
१६३.३ यत्रा वो दिद्युद् रदति क्रिविर्दती १,१६६,६
१०६.२ यत् समुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः ८,२०,२५
३८६.३ यत् सस्वर्ता जिहीळिरे यदाविः ७,५८,५
१०६.१ यत् सिन्धौ यदसिक्न्याम् ८,२०,२५
१४.३ यत् सीमनु द्विता शवः १,३७,९
११.३ यत् सीमन्तं न धूनुथ १,३७,६
२७६.१ यथा चिन्मन्यसे हृदा ५,५६,२
४३७.४ यथायमरपा असत् अथ० ४,१३,४
१९८.३ यथा रयिं सर्ववीरं नशामहै २,३०,११

९८.१ यथा रुद्रस्य सूनवः ८,२०,१७
४३५.४ यथैषामन्यो अन्यं न जानात् अथ० ३,२,६
४७.१ यदङ्ग तविषीयवः ८,७,२
१९०.१ यदभ्रियां वाचमुदीरयन्ति १,१६८,८
२७०.१ यदश्वान् धूर्षु पृषतीरयुग्ध्वम् ५,५५,६
३२१.३ यदायुक्त त्मना स्वादधि ष्णुभिः ५,८७,४
१२४.४ यदारुणीषु तविषीरयुग्ध्वम् १,६४,७
४४५.२ यदि देवा दैव्येनेदृगार अथ० ४,२७,६
७६.२ यदिन्द्रमजहातन ८,७,३१
३५९.१ यदि स्तुतस्य मरुतो अधीथ ७,५६,१५
३६५.४ यदीं सुजातं वृषणो वो अस्ति ७,५६,२१
१९०.३ यदी घृतं मरुतः प्रुष्णुवन्ति १,१६८,८
४४५.१ यदीदिदं मरुतो मारुतेन अथ० ४,२७,६
१४९.३ यदीमिन्द्रं शम्यृक्वाण आशत १,८७,५
४२९.१ यदी वहन्त्याशवः साम० ३५३
४५४.१ यदुत्तमे मरुतो मध्यमे वा ५,६०,६
२७२.२ यदुद्यते वसवो यच्च शस्यते ५,५५,८
८५.४ यदेजथ स्वभानवः ८,२०,४
४३८.१ यदेजथा मरुतो रुक्मवक्षसः अथ० ६,२२,२
७३.१ यदेषां पृषती रथे ८,७,२८
२८.३ यदेषां वृष्टिरसर्जि १,३८,८
१८.१ यद्ध यान्ति मरुतः १,३७,१३
४९.३ यद् यामं यान्ति वायुभिः ८,७,४
२०६.१ यद् युञ्जते मरुतो रुक्मवक्षसः २,३४,८
२३२.३ यद् युयुज्रे किलास्यः ५,५३,१
२४.१ यद् यूयं पृश्निमातरः १,३८,४
३७३.२ यद् व आगः पुरुषता कराम ७,५७,४
१५७.४ यद् वश्चित्रं युगेयुगे १,१३९,८
२०८.३ यद् वा निदे नवमानस्य रुद्रियाः २,३४,१०
४५४.३ यद् वावने सुभगासो दिवि ष्ठ ५,६०,६
३८३.१ यं त्रायध्व इदमिदम् ७,५९,१
२४८.३ यं त्रायध्वे स्याम ते ५,५३,१५
२५९.१ यन्मरुतः सभरसः स्वर्णरः ५,५४,१०
४८५.३ यन्मामेकं समधत्ताहिहत्ये १,१६५,६;
[इन्द्रः ३२५५]
४९०.२ यन्मे नरः श्रुत्यं ब्रह्म चक्र १,१६५,११
[इन्द्रः ३२६०]
२८७.२ यमा इव सुसदृशः सुपेशसः ५,५७,४
२६३.२ यमुनायामधि श्रुतम् ५,५२,१७
२१३.१ यया निदो मुञ्चथ वन्दितारम् २,३४,१५

२१३.१ यया रध्रं पारयथात्यंहः २,३४.१५
७४.३ यर्युनिचक्रया नरः ८,७,२९
३८६.२ यस्मा अराध्वं नरः ७,५९.४
१६०.१ यस्मा ऊमासो अमृता अरासत १,१६६,३
२८३.३ यस्मिन् सुजाता सुभगा महीयते ५,५६,९
२६४.४ यस्य तरेम तरसा शतं हिमाः ५,५४,१५
१४१.३ यस्य प्रयांसि पर्षथ १,८६,७
९७.१ यस्य वा यूयं प्रति वाजिनो नरः ८,२०,१६
३९६.१ यस्या देवा उपस्थे ८,९४,२
३३६.२ यांथो नु दाशुविर्भरध्यै ६,६६,३
३८७.२ यातनान्धांसि पीतये ७,५९,५
३१.३ यातेमखिद्रयामभिः १.३८,११
४८८.४ यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध १,१६५,९; [इन्द्रः ३२५८]
४८९.४ यानि च्यवमिन्द्र यदीश एषाम् १,१६५.१०; [इन्द्रः ३२५९]
४८९.२ या नु दधृष्वान् कृणवै मनीषा १,१६५,१०; [इन्द्रः ३२५९]
७३.३ यान्ति शुभ्रा रिणन्नपः ८,७,२८
१०५.२ याभिर्दशस्यथा क्रिविम् ८,२०,२४
१०५.१ याभिः सिन्धुमवथ याभिस्तूर्वथ ८,२०,२४
३५०.१ यामं येष्ठाः शुभा शोभिष्ठाः ७,५६,६
४७.२ यामं शुभ्रा अचिध्वम् ८,७.२
५९.२ यामं शुभ्रा अचिध्वम् ८.७,१४
१२३.२ यामन् रुद्रस्य सूनवः सुदंससः १,८५,१
२३१.४ यामश्रुतेभिरञ्जिभिः ५,५२,१५
३२८.३ या मृळीके मरुतां तुराणाम् ६,४८,१२
१३४.१ या वः शर्म शशमानाय सन्ति १,८५,१२
३२८.१ या शर्धाय मारुताय स्वभानवे ६,४८,१२
३२८.४ या सुम्नैरेवयावरी ६,४८,१२
३९५.३ युक्ता वह्नी रथानाम् ८,९४,१
२८०.२ युङ्ग्ध्वं रथेषु रोहितः ५,५६,६
२८०.३ युङ्ग्ध्वं हरी अजिरा धुरि वोळ्हवे ५,५६,६
२८०.१ युङ्ग्ध्वं ह्यरुषी रथे ५,५६,६
१५८.४ युधेव शक्रास्तविषाणि कर्तन १,१६६,१
९९.४ युवान आ ववृध्वम् ८.२०,१८
९८.३ युवानस्तथेदसत् ८,२०,१७
११०.१ युवानो रुद्रा अजरा अभोग्घनः १,६४,३
४५३.३ युवा पिता स्वपा रुद्र एषाम् ५,६०,५
३१४.१ युवा स मारुतो गणः ५,६१,१३

२९५.४ युष्मत् सदश्वो मरुतः सुवीरः ५,५८,४
२९५.३ युष्मदेति मुष्टिहा बाहुजूतः ५,५८,४
४९५.३ युष्मभ्यं हव्या निशितान्यासन् १,१७१.४; [इन्द्रः
१५३.३ युष्मभ्यं कं मरुतः सुजाताः १,८८,३
२३८.१ युष्माकं स्मा रथाँ अनु ५ ५३,५
३८४.१ युष्माकं देवा अवसाहनि प्रिये ७,५९,२
३९.३ युष्माकमस्तु तविषी तना युजा १,३९,४
३७.३ युष्माकमस्तु तविषी पनीयसी १,३९,२
४१०.१ युष्माकं बुध्ने अपां न यामनि १०,७७.४
१७१.२ युष्माकेन परीणसा तुरासः १,१६६,१४
३९१.३ युष्माकोती रिशादसः ७,५९,९
३९२.३ युष्माकोती सुदानवः ७,५९,१०
२६२.१ युष्मादत्तस्य मरुतो विचेतसः ५,५४,१३
५१.१ युष्माँ उ नक्तमूतये ८,७,६
५१.२ युष्मान् दिवा हवामहे ८,७,६,
५१.३ युष्मान् प्रयति अध्वरे ८,७,६,
४३.१ युष्मेषितो मरुतो मर्त्येषित १,३९,८
३८०.३ युष्मोतः सम्राळुत हन्ति वृत्रम् ७,५८,४
३८०.२ युष्मोतो अर्वा सहुरिः सहस्री ७.५८,४
३८०.१ युष्मोतो विप्रो मरुतः शतस्वी ७,५८,४
१००.१ यून ऊ षु नविष्ठया ८,२०,१९
२६३ १ यूयं रयिं मरुतः स्पार्हवीरम् ५,५४,१४
२९५.१ यूयं राजानमिर्यं जनाय ५,५८,४
२६९.२ यूयं वृष्टिं वर्षयथा पुरीषिणः ५,५५,५
१०४.३ यूयं सखायः सप्तयः ८,२०,२३
३०३.३ यूयं ह भूमिं किरणं न रेजथ ५,५९,४
१९४.४ यूयं हि ष्ठा नमस इद् वृधासः १,१७१,२
५.३ यूयं हि ष्ठा सुदानवः १,१५,२
५७.१ यूयं हि ष्ठा सुदानवः ८,७,१२
१४३.१ यूयं तत् सत्यशवसः १,८६,९
३२६.४ यूयं तस्य प्रचेतसः ५,८७.९
२६३.४ यूयं धत्त राजानं श्रुष्टिमन्तम् ५,५४,१४
४११.१ यूयं धूर्षु प्रयुजो न रश्मिभिः १०,७७,५
१६३.१ यूयं न उग्रा मरुतः सुचेतुना १,१६६,६
४३०.१ यूयं नः प्रवतो नपात् अथ० १,२६,३
२६३.३ यूयमर्वन्तं भरताय वाजम् ५,५४ १४
२७४.१ यूयमस्मान् नयत वस्यो अच्छ ५,५५,१०
४४५.३ यूयमीशिध्वे वसवस्तस्य निष्कृतेः अथ० ४,२७
४३४.१ यूयमुग्रा मरुत ईदृशे अथ ३,१,२

४१६.१ [illegible] अथ० १३,१,३
१६६.८ [illegible] ५,५६,१६
३६६.४ [illegible] ७,५६,२५
३६६.४ [illegible] ७,५७,७
३८१.४ [illegible] ७,५८,६
१६६.१ [illegible] ५,६१,१५
४११.१ [illegible] १० ७७,६
३३५.१ ये अग्नयो न शोशुचन्निधानाः ६,६६,२
२२७.१ ये अञ्जिषु ये वाशीषु स्वभानवः ५,५३,४
४४५.१ ये [illegible] अथ० ४,२७,४
४४४.१ ये [illegible] अथ० ४,२७,५
२६७.१ ये [illegible] ५,५६,१
४६७.१ ये उग्रा अर्कमानृचुः १,१९,४; [अग्निः २४३९]
४४४.१ ये कीलालेन तर्पयन्ति ये घृतेन अथ० ४,२७,५
९९.१ ये चार्हन्ति मरुतः सुदानवः ८,२०,१८
२७६.१ ये ते [illegible] ५,५२,९
६१.१ ये द्रप्सा इव रोदसी ८,७,१६
६९.१ येन शर्धं धनस्पृतम् ८,७,१८
२४६.१ येन तोकाय तनयाय धान्यम् ५,५३,१३
१७६.१ येन दीर्घं मरुतः शूशवाम १,१६६,१४
४९६.१ येन मानासश्चितयन्त उस्राः १,१७१,५
[इन्द्रः २२६७]
३७६.१ ये नरामना शमिनो वर्धयन्ति ७,५७,७
६९.१ येनाव तुर्वशं यदुम् ८,७,१८
३२२.१ येना सहन्त ऋञ्जत स्वरोचिषः ५,८७,५
२६४.२ येना स्वर्ण ततनाम नृंरभि ५,५४,१५
७.१ ये पृषतीभिर्ऋष्टिभिः १,३७,२
४६६.१ ये महो रजसो विदुः १,१९,३; [अग्निः २४४०]
३७०.३ ये रेजयन्ति रोदसी चिदुर्वी ७,५७,१
३९४.४ ये वा रिपो दधिरे देवे अध्वरे ७,१०४,१८
४४४.२ ये वा वयो मेदसा संसृजन्ति अथ० ४,२७.५
२२३.१ ये वावृधन्त पार्थिवाः ५,५२,७
४६८.१ ये शुभ्रा घोरवर्पसः १,१९.५; [अग्निः २४४२]
३१३.१ येषां श्रियाधि रोदसी ५ ६१,१२
१२.१ येषामज्मेषु पृथिवी १,३७,८
३२४.४ येषामज्मेष्वा महः ५,८७,७
९४.१ येषामर्णो न सप्रथः ८,२०,१३
३४२.३ ये सहांसि सहसा सहन्ते ६,६६.९
३७७.२ यो दैव्यस्य धाम्नस्तुविष्मान् ७,५८,१
३९०.१ यो नो मरुतो अभि दुर्हृणायुः ७,५९,८
२०७.१ यो नो मरुतो वृकताति मर्त्यः २,३४,९
९६.३ यो वा नूनमुतासति ८,२०,१५
३८२.४ यो वो [illegible] ७,५९,२
१५८.१ रघुष्यदः [illegible] १,८५,६
११०.३ [illegible] १,६४,१२
२६६.३ [illegible] ५,५३,१३
२८२.१ [illegible] ५,५३,८
३२.३ [illegible] १,३८,१२
४१८.१ [illegible] १०,७८,४
१६२.४ [illegible] १,१६३,५
८९.२ [illegible] ८,२०,८
९१.२ [illegible] ८,२०,१०
१५१.२ रथेभिर्न ऋष्टिभिः [illegible] १,८८,१
४४९.३ रथे[illegible] ५,६०,१
१३४.४ रयिं नो धत्त वृषणः सुवीरम् १,८५,१२
१९३.३ रराणता मरुतो वेद्याभिः १,१७१,१
१३०.४ राजान इव त्वेषसंदृशो नरः १,८५,८
४१५.३ राजानो न चित्राः सुसंदृशः १०,७८,१
२४५.२ रातहव्याय प्र ययुः ५,५३,१२
२४६.४ रायो विद्मा सौभगम् ५,५३,१३
१६०.२ रायस्पोषं च हविषा ददाशुषे १,१६६,३
२६२.२ रायः स्याम रथ्यो वयस्वतः ५,५४,१३
६३.३ राये सु तस्य धीमहि ८,७,१८
१६३.४ रिणाति पश्वः सुधितेव बर्हणा १,१६६,६
२०७.२ रिपुर्दधे वसवो रक्षता रिषः २,३४,९
४०९.४ रिशादसो न मर्या अभिद्यवः १०,७७,३
१०२.३ रिहते ककुभो मिथः ८,२०,२१
१५२.३ रुक्मो न चित्रः स्वधितीवान् १,८८,२
२२२.५ रुद्रं वोचन्त शिक्वसः ५,५२,१६
४४८.२ रुद्र यत् ते जनिम चारु चित्रम् ५,३,३
३४५.२ रुद्रस्य मर्या अधा स्वश्वाः ७,५६,१
१०९.२ रुद्रस्य मर्या असुरा अरेपसः १,६४,२
३३६.१ रुद्रस्य ये मीळ्हुषः सन्ति पुत्राः ६,६६,३
११९.२ रुद्रस्य सूनुं हवसा गृणीमसि १,६४,१२
३४४.२ रुद्रस्य सूनुं हवसा विवासे ६,६६,११
४२.२ रुद्रा अवो वृणीमहे १,३९,७
२११.२ रुद्रा ऋतस्य सदनेषु वावृधुः २,३४,१३
५७.२ रुद्रा ऋभुक्षणो दमे ८,७,१२
३९.४ रुद्रासो नू चिदाधृषे १,३९,४
४७३.२ रुद्रेभिः सोमपीतये ८,१०३,१४; [अग्निः २४४७]

२००.३ रुद्रो यद् वो मरुतो रुक्मवक्षसः २,३४,२
२६१.२ रुशत् पिप्पलं मरुतो वि धूनुथ ५,५४,१२
१८७.२ रेजति त्मना हन्वेव जिह्वया १,१६८,५
३४२.४ रेजते अग्ने पृथिवी मखेभ्यः ६,६६,९
४१३.३ रेवत् स वयो दधते सुवीरम् १०,७७,७
११६.१ रोदसी आ वदता गणश्रियः १,६४,९
१२३.३ रोदसी हि मरुतश्चक्रिरे वृधे १,८५,१

३५७.२ वक्षःसु रुक्मा उपशिश्रियाणाः ७,५६,१३
१११.२ वक्षःसु रुक्माँ अधि येतिरे शुभे १,६४,४
२६०.२ वक्षःसु रुक्मा मरुतो रथे शुभः ५,५४,११
१६७.२ वक्षःसु रुक्मा रभसासो अञ्जयः १,१६६,१०
२८.२ वत्सं न माता सिषक्ति १,३८,८
३६०.४ वत्सासो न प्रक्रीळिनः पयोधाः ७,५६,१६
४८७.१ वधीं वृत्रं मरुत इन्द्रियेण १,१६५,८; [इन्द्रः ३२५७]
४५०.३ वना चिदुग्रा जिहते नि वो भिया ५,६०,२
१०१.४ वन्दस्व मरुतो अह ८,२०,२०
३५.१ वन्दस्व मारुतम् गणम् १,३८,१५
२९३.४ वन्दस्व विप्र तुविराधसो नॄन् ५,५८,२
४९.१ वपन्ति मरुतो मिहम् ८,७,४
३३४.१ वपुर्नु तच्चिकितुषे चिदस्तु ६,६६,१
१८१.२ वयं श्वो वोचेमहि समर्ये १,१६७,१०
२७४.४ वयं स्याम पतयो रयीणाम् ५,५५,१०
१४६.२ वय इव मरुतः केन चित् पथा १,८७,२
१८१.१ वयमद्येन्द्रस्य प्रेष्ठाः १.१६७,१०
१८१.३ वयं पुरा महि च नो अनु द्यून् १,१६७.१०
१६७.४ वयो न पक्षान् व्यनु श्रियो धिरे १,१६६,१०
१५१.४ वयो न पप्तता सुमायाः १,८८,१
९४.३ वयो न पित्र्यं सहः ८.२०,१३
३०६.१ वयो न ये श्रेणीः पप्तुरोजसा ५,५९,७
१२९.४ वयो न सीदन्नधि बर्हिषि प्रिये १,८५,७
१४.२ वयो मातुर्निरेतवे १,३७,९
३९४.३ वयो ये भूत्वी पतयन्ति नक्तभिः ७.१०४,१८
२५१.२ वयोवृधो अश्वयुजः परिज्रयः ५,५४,२
४५२.१ वरा इवेद् रैवतासो हिरण्यैः ५,६०,४
३६१.२ वरिवस्यन्तो रोदसी सुमेके ७,५६,१७
३३०.२ वरुणमिव मायिनम् ६,४८,१४
४१८.३ वरेयवो न मर्या घृतप्रुषः १०,७८,४
२०७.३ वर्तयत तपुषा चक्रियाभि तम् २,३४,९
१२५.४ वर्मान्येषामनु रीयते घृतम् १,८५,३
६४.३ वर्मन् कण्वस्य मन्मभिः ८,७,१९
४१७.३ वर्मण्वन्तो न योधाः शिमीवन्तः १०,७८,३
४५८.४ वर्षन्तु पृथिवीमनु अथ० ४,१५,४
४६१.४ वर्षन्तु पृथिवीमनु अथ० ४,१५,७
२९८.४ वर्षं स्वेदं चक्रिरे रुद्रियासः ५,५८,७
११०.२ ववक्षुरध्रिगावः पर्वता इव १,६४,३
७८.३ वव्रत्यां चित्रवाजान् ८,७,३३
१८४.१ वव्रासो न ये स्वजाः स्वतवसः १,१६८,२
३८५.२ वसिष्ठः परिमंसते ७,५९,३
८८.३ वहन्ते अह्रुतप्सवः ८,२०,७
२८०.४ वहिष्ठा धुरि वोळ्हवे ५,५६,६
१२७.२ वाजे अद्रिं मरुतो रंहयन्तः १,८५,५
२५२.२ वातत्विषो मरुतः पर्वतच्युतः ५,५४,३
२८७.१ वातत्विषो मरुतो वर्षनिर्णिजः ५,५७,४
३४७.१ वातस्वनसः श्येना अस्पृध्रन् ७,५६,३
११२.२ वातान् विद्युतस्तविषीभिरक्रत १,६४,५
२९८.३ वातान् ह्यश्वान् धुर्यायुयुज्रे ५,५८,७
४६२.२ वाता वान्तु दिशोदिशः अथ० ४.१५,८
४१७.१ वातासो न ये धुनयो जिगत्नवः १०,७८,३
४१६.२ वातासो न स्वयुजः सद्यऊतयः १०,७८,२
४५५.४ वामं धत्त यजमानाय सुन्वते ५,६०,७
३३२.१ वामी वामस्य धूतयः ६,४८,२०
१७९.४ वावृध ईं मरुतो दातिवारः १,१६७,८
२८५.१ वाशीमन्त ऋष्टिमन्तो मनीषिणः ५,५७,२
५२.३ वाश्रा अधि ष्णुना दिवः ८,७,७
१५.३ वाश्रा अभिज्ञु यातवे १,३७,१०
४५९.४ वाश्रा आपः पृथिवीं तर्पयन्तु अथ० ४,१५,५
४८.२ वाश्रासः पृश्निमातरः ८,७,३
२८.१ वाश्रेव विद्युन्मिमाति १,३८,८
४३.३ वि तं युयोत शवसा व्योजसा १,३९,८
३९४.१ वि तिष्ठध्वं मरुतो विक्ष्विच्छत ७,१०४,१८
४१०.२ विथुर्यति न मही श्रथर्यति १०,७७,४
१४२.३ विद्मा कामस्य वेनतः १,८६,८
४१२.३ विदानासो वसवो राध्यस्य १०,७७,६
२५३.४ वि दुर्गाणि मरुतो नाह रिष्यथ ५,५४,४
१६४.४ विदुर्वीरस्य प्रथमानि पौंस्या १,१६६,७
३३६.३ विदे हि माता महो मही षा ६,६६,३
८४.१ विद्मा हि रुद्रियाणाम् ८,२०,३
१७२.४ विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् १.१६६,१५
१८१.४ विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् १,१६७,११

१९२.४ विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् १,१६८,१०

४६७.४ विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् १,१७१,६ [इन्द्रः ३२६८]

७०.१ विद्युद्धस्ता अभिद्यवः ८,७,२५

११६.४ विद्युन्न तस्थौ मरुतो रथेषु वः १,६४,९

२५२.१ विद्युन्महसो नरो अश्मदिद्यवः ५,५४,३

१५०.४ विद्रे प्रियस्य मारुतस्य धाम्नः १,८७,६

८५.१ वि द्वीपानि पापतन् तिष्ठद् दुच्छुना ८,२०,४

१५५.४ विधावतो वराहून् १,८८,५

१४३.३ विध्यता विद्युता रक्षः १,८६,९

२३९.३ वि पर्जन्यं सृजन्ति रोदसी अनु ५,५३,६

६८.२ वि पर्वताँ अराजिनः ८,७,२३

४६.३ वि पर्वतेषु राजथ ८,७,१

१३६.२ विप्रस्य वा मतीनाम् १,८६,२

४१५.१ विप्रासो न मन्मभिः स्वाध्यः १०,७८,१

९२.२ वि भ्राजन्ते रुक्मासो अधि बाहुषु ८,२०,११

३१३.२ विभ्राजन्ते रथेष्वा ५,६१,१२

२९५.२ विभ्वतष्टं जनयथा यजत्राः ५,५८,४

२५३.२ वि यदज्राँ अजथ नाव ईं यथा ५,५४,४

२४०.४ वि यद् वर्तन्त एन्यः ५,५३,७

१४४.२ वि यात विश्वमत्त्रिणम् १,८६,१०

३८.३ वि याथन वनिनः पृथिव्या १,३९,३

४३.४ वि युष्माकाभिरूतिभिः १,३९,८

१२६.१ वि ये भ्राजन्ते सुमखास ऋष्टिभिः १,८५,४

२६७.३ विरोकिणः सूर्यस्येव रश्मयः ५,५५,३

३६०.४ वि रोदसी पथ्या याति साधन् ६,६६,७

४०.२ वि विञ्चन्ति वनस्पतीन् १,३९,५

३५७.३ वि विद्युतो न वृष्टिभी रुचानाः ७,५६,१३

६८.१ वि वृत्रं पर्वशो ययुः ८,७,२३

२७५.३ विशो अद्य मरुतामव ह्वये ५,५६,१

३८९.३ विश्वं [illegible] ७,५९,७

२०.३ विश्वं चिदायुर्जीवसे १,३७,१५

४१०.३ [illegible] १०,७७,४

३०.३ विश्वमा सद्म पार्थिवम् १,३८,१०

१०७.१ विश्वं पश्यन्तो बिभृथा तनूष्वा ८,२०,२६

४१९.२ विश्वरूपा अङ्गिरसो न सामभिः १०,७८,५

११७.२ विश्ववेदसो रयिभिः समोकसः १,६४,१०

२७२.३ विश्वस्य तस्य भवथा नवेदसः ५,५५,८

४८५.४ विश्वस्य शत्रोरनमं वधस्नैः १,१६५,६ [इन्द्रः [illegible]]

२७०.३ विश्वा इत् स्पृधो मरुतो व्यस्यथ ५,५५,६

१६६.१ विश्वानि भद्रा मरुतो रथेषु वः १,१६६,९

१३९.२ विश्वा यश्चर्षणीरभि १,८६,५

२८९.४ विश्वा वः श्रीरधि तनूषु पिपिशे ५,५७,६

१०१.२ विश्वासु पृत्सु होतृषु ८,२०,२०

४६६.२ विश्वे देवासो अद्रुहः १,१९,३ [अग्निः २४४०]

४२८.४ विश्वे नो देवा अवसागमन्निह वा०य० २५,२०

३८५.४ विश्वे पिबत कामिनः ७,५९,३

३७५.२ विश्वेभिर्नामभिर्नरो हवींषि ७,५७,६

४७८.३ विश्वे मम श्रुता हवम् १,२३,८ [इन्द्रः ३२४८]

२२०.३ विश्वे ये मानुषा युगा ५,५२,४

१६२.३ विश्वो वो अज्मन् भयते वनस्पतिः १,१६६,५

३७८.४ विश्वो वो यामन् भयते स्वर्दृक् ७,५८,२

३३०.४ विष्णुं न स्तुष आदिशे ६,४८,१४

१२९.३ विष्णुर्यद्धावद् वृषणं मदच्युतम् १,८५,७

२०९.२ विष्णोरेषस्य प्रभृथे हवामहे २,३४,११

८४.३ विष्णोरेषस्य मीळ्हुषाम् ८,२०,३

३२५.३ विष्णोर्महः समन्यवो युयोतन ५,८७,८

३२१.४ विष्पर्धसो विमहसः ५,८७,४

३१०.३ वि सद्मानि नरो यमुः ५,६१,३

१७३.२ विसितस्तुका रोदसी नृमणाः १,१६७,५

४७४.१ वीळु चिदारुजत्नुभिः १,६,५ [इन्द्रः ३२४५]

८३.१ वीळुपविभिर्मरुत ऋभुक्षणः ८,२०,२

२९७.३ वीळुपविभिर्मरुतो रथेभिः ५,५८,६

३७.२ वीळू उत प्रतिष्कभे १,३९,२

२२३.३ वृजने वा नदीनाम् ५,५२,७

२७८.२ वृथा गावो न दुर्धुरः ५,५६,४

९१.१ वृषणश्वेन मरुतो वृषप्सुना ८,२०,१०

१२६.४ वृषव्रातासः पृषतीरयुग्ध्वम् १,८५,४

२००.४ वृषाजनि पृश्न्याः शुक्र ऊधनि २,३४,२

२९४.३ वृष्टिं ये विश्वे मरुतो जुनन्ति ५,५८,३

४३६.२ [illegible] अथ० ४,२७,४

२३८.३ वृष्टी द्यावो यतीरिव ५,५३,५

२२७.३ [illegible] ५,५२,११

१००.३ वृष्णः पावकाँ अभि सोभरे गिरा ८,२०,१९

१०१.३ वृष्णश्चन्द्रान्न सुश्रवस्तमान् गिरा ८,२०,२०

९०.३ वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वम् ८,२०,९

१०८.१ वृष्णे शर्धाय सुमखाय वेधसे १,६४,१

२९६.२ [illegible] ५,६०,८

४८०.३ वोचेस्तन्नो हरिवो यत्ते अस्मे १,१६५,३ [इन्द्रः ३२५०]

२५३.१ व्यक्तून् रुद्रा व्यहानि शिक्वसः ५,५४,४
१८८.४ व्यद्रिणा पतथ त्वेषमर्णवम् १,१६८,६
२५३.२ व्यन्तरिक्षं वि रजांसि धूतयः ५,५४,४
२००.२ व्यश्रिया न द्युतयन्त वृष्टयः २,३४,२
१४५.४ व्यानज्रे केचिदुस्रा इव स्तृभिः १,८७,१
३८.४ व्याशाः पर्वतानाम् १,३९,३
२५७.४ व्युन्दन्ति पृथिवीं मध्वो अन्धसा ५,५४,८
४९६.२ व्युष्टिषु शवसा शश्वतीनाम् १,१७१,५

[इन्द्रः ३२६७]

३९६.२ व्रता विश्वे धारयन्ते ८,९४,२
२१६.१ व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिः ३,२६,६
२४४.२ व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिः ५,५३,११
४४९.३ शग्मा भवन्तु मरुतो नः स्योनाः अथ० ४,२७,३
१६५.१ शतभुजिभिस्तमभिहुतेरघात् १,१६६,८
१४०.२ शरद्भिर्मरुतो वयम् १,८६,६
२४४.१ शर्धंशर्धं व एषाम् ५,५३,११
३३४.५ शर्धायमकृततनसाम् ५,८७,७
६६.३ शर्धाँ ऋतस्य जिन्वथ ८,७,२१
२२४.१ शर्धो मारुतमुच्छंस ५,५२,८
३६१.३ शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे ७,५६,२५
४३०.३ शर्म यच्छाथ सप्रथाः अथ० १,२६,३
१४९.१ शशमानस्य वा नरः १,८६,८
७०.२ शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः ८,७,२५
२६०.४ शिप्राः शीर्षसु वितताः हिरण्ययीः ५,५४,११
१०५.४ शिवाभिरसचद्विषः ८,२०,२४
४२०.३ शिशूला न क्रीळयः सुमातरः १०,७८,६
४२४(१).१ शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्मांश्च वा० य० १७,८०
४२४(१).२ शुक्रश्च ऋतपाश्चात्यंहाः वा० य० १७,८०
३४६.२ शुचिं हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः ७,५६,१२
३४६.४ शुचिजन्मानः शुचयः पावकाः ७,५६,१२
३४६.१ शुची वो हव्या मरुतः शुचीनाम् ७,५६,१२
४२१.३ शुभंयवो नाञ्जिभिर्व्यश्वितन् १०,७८,७
२६५.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,१
२६६.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,२
२६७.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,३
२६८.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,४
२६९.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,५
२७०.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,६
२७१.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,७
२७२.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,८
२७३.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,९
४२८.२ शुभंयावानो विदथेषु जग्मयः वा०य० २५,
३१४.३ शुभंयावाप्रतिष्कुतः ५,६१,१३
१५२.२ शुभे कं यान्ति रथतूर्भिरश्वैः १,८८,२
१७७.२ शुभे निमिश्लां विदथेषु पज्राम् १,१६७,६
२८६.४ शुभे यदुग्राः पृषतीरयुग्ध्वम् ५,५७,३
२१४.२ शुभे संमिश्लाः पृषतीरयुक्षत ३,२६,४
७०.३ शुभ्रा व्यञ्जत श्रिये ८,७,२५
३५२.१ शुभ्रो वः शुष्मः क्रुध्मी मनांसि ७,५६,८
३३३.५ शुशुक्वांसो नाग्नयः ५,८७,६
४८३.२ शुष्म इयर्ति प्रभृतो मे अद्रिः १,१६५,४

[इन्द्र• ३१५

६९.२ शुष्ममावन्नुत क्रतुम् ८,७,२४
८४.२ शुष्मसुग्रं मरुतां शिमीवताम् ८,२०,३
३०४.२ शूरा इव प्रयुधः प्रोत युयुधुः ५,५९,५
१३०.१ शूरा इवेद् युयुधयो न जग्मयः १,८५,८
३६६.२ शूरा यह्वीष्वोषधीषु विक्षु ७,५६,२२
१८.३ शृणोति कश्चिदेषाम् १,३७,१३
३६.२ शोचिर्न मानमस्यथ १,३९,१
१४६.३ श्चोतन्ति कोशा उप वो रथेष्वा १,८७,२
४८१.३ श्येनाँ इव ध्रजतो अन्तरिक्षे १,१६५,२

[इन्द्रः ३१५

४११.३ श्येनासो न स्वयशसो रिशादसः १०,७७,५
१३०.२ श्रवस्यवो न पृतनासु येतिरे १,८५,८
२८९.२ श्रवस्युमा हुवामहे ५,५६,८
३९५.२ श्रवस्युर्माता मघोनाम् ८,९४,१
२१७.४ श्रवो मदन्ति यज्ञियाः ५,५२,१
३१८.२ श्रवोऽमृत्यु धुक्षत ६,४८,१२
२३७.३ श्राया रथेषु धन्वसु ५,५३,४
१५०.१ श्रियसे कं भानुभिः सं मिमिक्षिरे १,८७,६
३५०.१ श्रिया संमिश्ला ओजोभिरुग्राः ७,५६,६
१५३.१ श्रियं कं वो अधि तनूषु वाशीः १,८८,३
२६७.२ श्रिये चिदा प्रतरं वावृधुर्नरः ५,५५,३
४०८.१ श्रिये मर्यासो अञ्जीँरकृण्वत १०,७७,२
४४२.३ श्रिये श्रेयांसस्तवसो रथेषु ५,६०,४
३२३.३ श्रेमाणः वामहृदिषु ५,६१,१५
३३५.२ श्रोता हवं जरितुरेवयामरुत् ५,८७,८
३३२.१ स्वनो न वोऽमवान्रेजयद्वृषा ५,८७,५

३३३.१ सं यद्धनन्त मन्युभिर्जनासः ७,५६,२२
४३२.४ सं यन्तु पृथिवीमनु अथ० ४,१५,८
६७.३ सं वज्रं पर्वशो दधुः ८,७,२२
४४७.१ संवत्सरीणा मरुतः स्वर्काः अथ० ७,८२,३
२२१.३ सं विद्युता दधति वाशति त्रितः ५,५४,२
४६१.१ सं वोऽवन्तु सुदानवः अथ० ४,१५,७
४६३.१ सं वोऽवन्तु सुदानवः अथ० ४,१५,९
३३१.३ सं सहसा कारिषच्चर्षणिभ्य आँ ६,४८,१५
१८.२ सं ह हुवतेऽध्वना १,३७,१३
३३४.४ सकृच्छुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः ६,६६,१
२६८.२ सखायः सन्ति धृष्णुया ५,५२,२
४९०.४ सख्ये सखायस्तन्वे तनूभिः १,१६५,११:
[छन्दः ३२६०]
१३७.३ स गन्ता गोमति व्रजे १,८६,३
६७.२ सं क्षोणी समु सूर्यम् ८,७,२२
३११.१ स चक्रमे महतो निरुरुक्रमः ५,८७,४
२८१.४ सचा मरुत्सु रोदसी ५,५६,८
२८३.४ सचा मरुत्सु मीळ्हुषी ५,५६,९
१७८.३ सचा यदी वृषमणा अहंयुः १,१६७,७
१०२.२ सजात्येन मरुतः सबन्धवः ८,२०,२१
४७७.३ सजूर्गणेन तृम्पतु १,२३,७: [छन्दः ३२४७]
४९१.२ संदृशा मरुतश्चन्द्रवर्णाः १,१६५,१२:
[छन्दः ३२६१]
४७५.२ संजग्मानो अबिभ्युषा १,६,७: [छन्दः ३२४६]
२७.१ सत्यं त्वेषा अमवन्तो १,३८,७
२२४.२ सत्यश्रवसमृभ्वसम् ५,५२,८
२९१.१ सत्यश्रुतः कवयो युवानः ५,५७,८
२९९.१ सत्यश्रुतः कवयो युवानः ५,५८,८
३६३.१ सत्राची रातिं मरुतो गृणाना ७,५६,१८
४५२.४ सद्यो महांसि चक्रिरे [illegible] ५,६०,४
१०९.४ सद्यो न [illegible] १,६४,३
३९७.३ [illegible] ८,९४,३
४११.४ स देव [illegible] १०,७७,५
३३३.१ [illegible] ६,४८,२१
२५९.४ [illegible] ५,५३,१०
२२३.४ [illegible] ५,५२,५
३४३.३ [illegible] ७,५६,५
४३३.४ [illegible] १०,७७,८
१५७.३ [illegible] १,१६९,८
२०५.४ सनिं मेधामरिष्टं दुष्टरं सहः २,३४,७
३५३.१ सनेम्यस्मद् युयोत दिद्युम् ७,५६,९
४९६.३ स नो मरुद्भिर्वृषभ श्रवो धाः १,१७१,५:
[छन्दः ३२६७]
४३४.३ स नो वर्ष वनुतां जातवेदाः अथ० ४,१५,१०
१९.२ सन्ति कण्वेषु वो दुवः १,३७,१४
२०७.२ सं दानुचित्रा उषसो यतन्ताम् ५,५९,८
२३३.१ सप्त मे सप्त शाकिनः ५,५२,१७
१७४.४ सभावती विदथ्येव सं वाक् १,१६७,३
२३१.३ समच्यन्त वृजनाति त्विषन्त यत् ५,५४,१२
४.३ समस्मिन्नृञ्जते गिरः १,६,९
३३४.२ समनं नाम धेनु पत्यमानम् ६,६६,१
३७२.४ समानमञ्ज्यञ्जते शुभे कम् ७,५७,३
९२.१ समानमञ्ज्येषाम् ८,२०,११
३२१.२ समानस्मात् सदस एवयामरुत् ५,८७,४
४८६.२ समाने भिर्वृषभ पौंस्येभिः १,१६५,७:
[छन्दः ३२५६]
४८०.२ समान्या मरुतः सं मिमिक्षुः १,१६५,१:
[छन्दः ३२५०]
११५.४ समित् सबाधः शवसाहिमन्यवः १,६४,८
६७.१ समु त्ये महतीरपः ८,७,२२
१७३.४ समुद्रस्य चिद् धनयन्त पारे १,१६७,२
४८२.३ सं पृच्छसे समराणः शुभानैः १,१६५,३
[छन्दः ३२५२]
४५३.२ सं भानवो [illegible] ५,६०,५
१३८.४ [illegible] मरुतः [illegible] १,१६६,११
११७.३ [illegible] १,६४,१०
४५८.३ [illegible] अथ० ४,१५,४
३४१.४ [illegible] ६,६६,८
१३५.३ स [illegible] १,८६,१
३८९.१ [illegible] ७,५९,७
१५५.२ [illegible] १,८८,५
२८९.३ [illegible] ५,५७,६
३३६.३ [illegible] १,८७,६
३३३.३ [illegible] १,६४,१५
३५८.३ [illegible] ७,५६,१४
१८८.३ [illegible] १,१६८,७
१६८.१ [illegible] १,८७,२
७७.१ [illegible] ८,७,३१
१११.२ [illegible] १,६४,५

२५३.१ व्यक्तून् रुद्रा व्यहानि शिक्वसः ५,५४,४
१८८.४ व्यद्रिणा पतथ त्वेषमर्णवम् १,१६८,६
२५३.२ व्यन्तरिक्षं वि रजांसि धूतयः ५,५४,४
२००.२ व्यश्रिया न द्युतयन्त वृष्टयः २,३४,२
१४५.४ व्यानज्रे केचिदुस्रा इव स्तृभिः १,८७,१
३८.४ व्याशाः पर्वतानाम् १,३९,३
२५७.४ व्युन्दन्ति पृथिवीं मध्वो अन्धसा ५,५४,८
४९६.२ व्युष्टिषु शवसा शश्वतीनाम् १,१७१,५
[इन्द्रः ३२६७]
३९६.२ व्रता विश्वे धारयन्ते ८,९४,२
२१६.१ व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिः ३,२६,६
२४४.२ व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिः ५,५३,११
४४२.३ शग्मा भवन्तु मरुतो नः स्योनाः अथ० ४,२७,३
१६५.१ शतभुजिभिस्तमभिहुतेरघात् १,१६६,८
१४०.२ शरद्भिर्मरुतो वयम् १,८६,६
२४४.१ शर्धंशर्धं व एषाम् ५,५३,११
३२४.५ शर्धायमकृतेनसाम् ५,८७,७
६६.३ शर्धाँ ऋतस्य जिन्वथ ८,७,२१
२२४.१ शर्धो मारुतमुच्छंस ५,५२,८
३६९.३ शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे ७,५६,२५
४३०.३ शर्म यच्छाथ सप्रथाः अथ० १,२६,३
१४१.१ शशमानस्य वा नरः १,८६,८
७०.२ शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः ८,७,२५
२६०.४ शिप्राः शीर्षसु वितता हिरण्ययीः ५,५४,११
१०५.४ शिवाभिरसचद्विषः ८,२०,२४
४२०.३ शिशूला न क्रीळयः सुमातरः १०,७८,६
४२२(१).१ शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्माँश्च वा० य० १७,८०
४२२(१).२ शुक्रश्च ऋतपाश्चात्यंहाः वा०य० १७,८०
३५३.१ शुचिं हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः ७,५६,१२
३५३.४ शुचिजन्मानः शुचयः पावकाः ७,५६,१२
३५३.२ शुची वो हव्या मरुतः शुचीनाम् ७,५६,१२
४२१.४ शुभंयवो नाञ्जिभिर्व्यश्वितन् १०,७८,७
२६५.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,१
२६६.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,२
२६७.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,३
२६८.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,४
२६९.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,५
२७०.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,६
२७१.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,७
२७२.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,८
२७३.४ शुभं यातामनु रथा अवृत्सत ५,५५,९
४२८.२ शुभंयावानो विदथेषु जग्मयः वा०य० २५,
३१४.३ शुभंयावाप्रतिष्कुतः ५,६१,१३
१५२.२ शुभे कं यान्ति रथतूर्भिरश्वैः १,८८,२
१७७.२ शुभे निमिश्लां विदथेषु पज्राम् १,१६७,६
२८६.४ शुभे यदुग्राः पृषतीरयुग्ध्वम् ५,५७,३
२१४.२ शुभे संमिश्लाः पृषतीरयुक्षत ३,२६,४
७०.३ शुभ्रा व्यञ्जत श्रिये ८,७,२५
३५२.१ शुभ्रो वः शुष्मः क्रुध्मी मनांसि ७,५६,८
३२१.५ शुशुक्वांसो नाग्नयः ५,८७,६
४८३.२ शुष्म इयर्ति प्रभृतो मे अद्रिः १,१६५,४
[इन्द्र० ३१५
६९.२ शुष्ममावन्नुत क्रतुम् ८,७,२४
८४.२ शुष्ममुग्रं मरुतां शिमीवताम् ८,२०,३
३०४.२ शूरा इव प्रयुधः प्रोत युयुधुः ५,५९,५
१३०.१ शूरा इवेद् युयुधयो न जग्मयः १,८५,८
३६६.२ शूरा यह्वीष्वोषधीषु विक्षु ७,५६,२२
१८.३ शृणोति कश्चिदेषाम् १,३७,१३
३६.१ शोचिर्न मानमस्यथ १,३९,१
१४६.३ श्चोतन्ति कोशा उप वो रथेष्वा १,८७,२
४८१.३ श्येनाँ इव ध्रजतो अन्तरिक्षे १,१६५,२
[इन्द्रः ३१५
४११.३ श्येनासो न स्वयशसो रिशादसः १०,७७,५
१३०.२ श्रवस्यवो न पृतनासु येतिरे १,८५,८
२८१.२ श्रवस्युमा हुवामहे ५,५६,८
३९५.२ श्रवस्युर्माता मघोनाम् ८,९४,१
२१७.४ श्रवो मदन्ति यज्ञियाः ५,५२,१
३१८.२ श्रवोऽमृत्यु धुक्षत ६,४८,१२
२३७.३ श्राया रथेषु धन्वसु ५,५३,४
१५०.१ श्रियसे कं भानुभिः सं मिमिक्षिरे १,८७,६
३५०.२ श्रिया संमिश्ला ओजोभिरुग्राः ७,५६,६
१५३.१ श्रिये कं वो अधि तनूषु वाशीः १,८८,३
२६७.२ श्रिये चिदा प्रतरं वावृधुर्नरः ५,५५,३
४०८.१ श्रिये मर्यासो अञ्जीँरकृण्वत १०,७७,२
[illegible].३ श्रिये श्रेयांसस्तवसो रथेषु ५,६०,४
३१६.३ श्रेणी[illegible] यामहूतिषु ५,६१,१५
[illegible] श्रे[illegible] ५,८७,८
[illegible] श्रे[illegible] ५,८७,१

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[[illegible]]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] [[illegible]]

[illegible]
[[illegible]]
[illegible] [[illegible]]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[[illegible]]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[[illegible]]
[illegible]
[[illegible]]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[[illegible]]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

२६७.१ साकं जाताः सुभ्वः साकमुक्षिताः ५,५५,३
१७०.४ साकं नरो दंसनैरा चिकित्रिरे १,१६६,१३
३३५.४ साकं नृम्णैः पौंस्येभिश्च भूतन ६,६६,९
७.२ साकं वाशीभिरञ्जिभिः १,३७,२
१८९.१ सातिर्न वोऽमवती स्वर्वती १,१६८,७
१७५.२ साधारण्येव मरुतो मिमिक्षुः १,१६७,४
३२१.१ सान्तपना इदं हविः ७,५९,९
४४७.४ सान्तपना मत्सरा मादयिष्णवः अथ० ७,८२,३
४२६(१)।२ सारङ्गौश्चाभिमुखा न विद्विषः स्वाहा
वा० य० ३९,७
२४९.१ सा विट् सुवीरा मरुद्भिरस्तु ७,५६,५
१०१.१ साहा ये सन्ति मुष्टिहेव हव्यः ८,२०,२०
११५.१ सिंहा इव नानदति प्रचेतसः १,६४,८
२१५.४ सिंहा न हेषक्रतवः सुदानवः ३,२६,५
४११.३ सिन्धवो न यथियो भ्राजदृष्टयः १०,७८,७
१२८.३ सीदता बर्हिरुरु वः सदस्कृतम् १,८५,६
४६८.२ सुक्षत्रासो रिशादसः १,१९,५; [अग्निः २४४२]
४५०.२ सुखेषु रुद्रा मरुतो रथेषु ५,६०,२
४८७.४ सुगा अपश्चकर वज्रबाहुः १,१६५,८;
[इन्द्रः ३२५७]
३०५.३ सुजातासो जनुषा पृश्निमातरः ५,५९,६
२८८.३ सुजातासो जनुषा रुक्मवक्षसः ५,५७,५
१३८.२ सुतः सोमः दिविष्टिषु १,८६,४
२४८.१ सुदेवः समहासति ५,५३,१५
४५३.४ सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः ५,६०,५
२८५.२ सुधन्वान इषुमन्तो निषङ्गिणः ५,५७,२
४९७.३ सुप्रकेतेभिः सासहिर्दधानः १,१७१,६;
[इन्द्रः ३२६८]
१४१.१ सुभगः स प्रयज्यवः १,८६,७
९६.१ सुभगः स व ऊतिषु ८,२०,१५
४२२.१ सुभागान्नो देवाः कृणुता सुरत्नान् १०,७८,८
४०८.२ सुमारुतं न पूर्वीरति क्षपः १०,७७,२
४०७.३ सुमारुतं न ब्रह्माणमर्हसे १०,७७,१
६०.२ सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ८,७,१५
५६.२ सुम्नायन्तो हवामहे ८,७,११
९७.४ सुम्ना वो धूतयो नशत् ८,२०,१६
६१.४ सुम्नेभिरस्मे वसवो नमध्वम् ७,५६,१७
३ सुवानैर्मन्दध्व इन्दुभिः ८,७,१४
. सुवीरो नरो मरुतः स मर्त्यः ५,५३,१५
..५ सुवेदा नो वसू करत् ६,४८,१५
४२६.३ सुशर्माणो न सोमा ऋतं यते १०,७८,२
३२०.२ सुशुक्वानः सुभ्व एवयामरुत् ५,८७,३
२११.४ सुश्चन्द्रं वर्णं दधिरे सुपेशसम् २,३४,१३
४३१.१ सुसूदत मृडत मृडया अथ० १,२६,४
७४.१ सुषोमे शर्यणावति ८,७,२९
३२.३ सुसंस्कृता अभीशवः १,३८,१२
१९३.२ सूक्तेन भिक्षे सुमतिं तुराणाम् १,१७१,१
१३९.३ सूरं चित् सस्रुषीरिषः १,८६,५
२५९.२ सूर्य उदिते मदथा दिवो नरः ५,५४,१०
३०४.४ सूर्यस्य चक्षुः प्र मिनन्ति वृष्टिभिः ५,५९,५
३९६.३ सूर्यामासा दृशे कम् ८,९४,२
३०१.२ सूर्यो न चक्षू रजसो विसर्जने ५,५९,३
३१७.३ सृजध्वमनपस्फुराम् १,४८,११
५३.१ सृजन्ति रश्मिमोजसा ८,७,८
४७१.२ सृजामि सोम्यं मधु १,१९,९; [अग्निः २४
३३६.४ सेत् पृश्निः सुभ्वे गर्भमाधात् ६,६६,३
३६२.४ सो अह्वार्यो हवते व उक्थैः ७,५६,१८
४७३.३ सोभर्या उप सुष्टुतिम् ८,१०३,१४; [अग्निः
४५६.२ सोमं पिब मन्दसानो गणश्रिभिः ५,६०,८
१४९.२ सोमस्य जिह्वा प्र जिगाति चक्षसा १,८७,५
१८५.१ सोमासो न ये सुतास्तृप्तांशवः १,१६८,३
२५२.४ स्तनयदमा रभसा उदोजसः ५,५४,३
२३०.४ स्तुता धीभिरिषण्यत ५,५२,१४
४९४.१ स्तुतासो नो मरुतो मृळयन्तु १,१७१,३;
[इन्द्रः ३२
२९१.१ स्तुषे गणं मारुतं नव्यसीनाम् ५,५८,१
७७.३ स्तुषे हिरण्यवाशीभिः ८,७,३२
२४९.१ स्तुहि भोजान्त्स्तुवतो अस्य यामनि ५,५३,१६
२४.३ स्तोता वो अमृतः स्यात् १,३८,४
२२०.२ स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया ५,५२,४
६६.२ स्तोमेभिर्वृक्तबर्हिषः ८,७,२१
२७९.२ स्तोमैः समुक्षितानाम् ५,५६,५
४४६.३ स्तौमि मरुतो नाथितो जोहवीमि अथ० ४,.
३२३.३ स्यातारो हि प्रसितौ संदृशि स्थन ५,८७,६
४३४.२ स्थाभि प्रेत मृणत सहध्वम् अथ० ३,१,२
३२१.४ स्थारश्मानो हिरण्ययाः ५,८७,५
१४.१ स्थिरं हि जानमेषाम् १,३७,९
१७८.४ स्थिरा चिज्जनीर्वहते सुभागाः १,१६७,७
८२.३ स्थिरा चिन्नमयिष्णवः ८,२०,१
९३.३ स्थिरा धन्वान्यायुधा रथेषु वः ८,२०,१२

३६.१ स्थिरा वः सन्तु नेमयः १,३८,१२
३७.१ स्थिरा वः सन्त्वायुधा पराणुदे १,३९,२
३८८.२ स्पार्हाणि दातवे वसु ७,५९,६
३२५.४ स्मद् रथ्यो न दंसना ५,८७,८
९९.२ स्यन्नाश्चिद्घुपरचरन्ति ये ८,२०,१८
९०.२ स्यामि ष्मा वदनेयान् १,३७,१५
२२०.३ स्यन्ना अश्वा इवाध्वनो विमोचने ५,५३,७
३२३.५ स्यात दुर्धर्तवो निदः ५,८७,९
२२७.४ स्याम मरुतः सह ५,५३,१४
२१७.२ स्रक्षु रुक्मेषु खादिषु ५,५३,४
४८४.२ स्वक्षत्रेभिस्तन्वः शुम्भमानाः १,१६५,५;

[इन्द्रः ३२५४]

४९३.१ स्वतवांश्च प्रघासी च सान्तपनश्च गृहमेधी च
वा० स० १७,८५

८८.१ स्वधामनु श्रियं नरः ८,२०,७
३२२.१ स्वनो न वोऽमवान् रेजयद् वृषा ५,८७,५
२३३.१ स्वयं दधिध्वे तविषीं यथा विद ५,५५,२
१४७.४ स्वयं महित्वं पनयन्त धूतयः १,८७,३
२६३.४ स्वया मत्या मरुतः सं मिमिक्षुः ५,५८,५
२२१.४ स्वरन्ति घोषं विततमृतायवः ५,५४,१२
२५१.४ स्वरन्त्येऽश्वानां परिज्रयः ५,५४,२
२८५.३ स्वश्वाः स्थ सुरथाः पृश्निमातरः ५,५७,२
२८५.४ स्वायुधा मरुतो याथना शुभम् ५,५७,२

३२२.५ स्वायुधास इष्मिणः ५,८७,५
३५५.१ स्वायुधास इष्मिणः सुनिष्काः ७,५६,११
३८८.४ स्वाहेह मादयाध्वै ७,५९,३
१४२.२ स्वेदस्य सत्यशवसः १,८६,८
४८७.२ स्वेन भामेन तविषो बभूवान् १,१६५,८;

[इन्द्रः ३२५७]

४७९.१ हत वृत्रं सुदानवः १,२३,९; [इन्द्रः ३२४९]
२९१.१ हये नरो मरुतो मृळता नः ५,५७,८
२९९.१ हये नरो मरुतो मृळता नः ५,५८,८
४०७.२ हविष्मन्तो न यज्ञा विजानुषः १०,७७,१
९१.४ हव्या नो वीतये गत ८,२०,१०
९०.३ हव्या वृषप्रयाव्णे ८,२०,९
१८५.४ हस्तेषु खादिश्च कृतिश्च सं दधे १,१६८,३
२४७.२ हित्वावद्यमरातीः ५,५३,१४
१७४.२ हिरण्यनिर्णिगुपरा न ऋष्टिः १,१६७,३
२७०.२ हिरण्ययान् प्रत्यत्काँ अमुग्ध्वम् ५,५५,६
११८.१ हिरण्ययेभिः पविभिः पयोवृधः १,६४,११
२८४.२ हिरण्यरथाः सुविताय गन्तन ५,५७,१
२०९.३ हिरण्यवर्णान् ककुहान् यतस्रुचः ३,२६,४
२०१.३ हिरण्यशिप्रा मरुतो दविध्वतः २,३४,३
१८५.२ हृत्सु पीतासो दुवसो नासते १,१६८,३
१९४.१ [illegible] १,१७१,२